आर. पी. सराफ

द्वारा सम्पादित

नेचर-ह्यूमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट

(नवम्बर-दिसम्बर, 2002 से जून, 2009 तक)

का संकलन

सम्पादक मण्डल :

सज्जनकुमार

घनश्याम डेमोक्रेट

सुखदेवसिंह भूपाल

रूपचन्द मखनोत्रा

जवाहरलाल

प्रकाशक :

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन, भारत

❑ प्रकाशक :

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन

23/864, चौपासनी हाउसिंग बोर्ड,

जोधपुर - 342 008 (राजस्थान) भारत

फोन : 0291-2715471, 94148-64548

E-mail: sajjan_nhcpm@rediffmail.com

ghan_demo@yahoo.co.in

209, अशोक विहार, जानीपुर,

जम्मू सिटी (जम्मू-कश्मीर) भारत

फोन : 0191-2535354, 09419116969

E-mail: rcmakhnotra@yahoo.co.in

गाँव-भूपाल, डाक-मत्ति,

जिला-मानसा, पंजाब (भारत)

फोन : 01652-274551, 09915342232

❑ प्रथम संस्करण : 2010

❑ सहयोग राशि : 200/- (दो सौ) रुपये मात्र

❑ मुद्रक :

जांगिड़ कम्प्यूटर्स, जोधपुर

फोन : 0291-2700581

R P SARAF DWARA SAMPADIT NATURE-HUMAN CENTRIC VIEWPOINT KA SANKALAN

Published by : Prakriti-Manav Kendrit Jan Andolan, Bharat

First Edition : 2010 Price : Rs. 200/-

भूमिका

प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम (नेचर-ह्यूमन सेन्ट्रिक एजेण्डा) के जनक राम प्यारा सराफ द्वारा नवम्बर, 2002 से 24 जून, 2009 तक लिखित, सम्पादित एवं प्रकाशित पत्रिकाओं का संकलन प्रस्तुत पुस्तक में किया गया है। इस संकलन में आर.पी. सराफ द्वारा खोज किये गए प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल से सम्बन्धित लेख हैं, जो लेखक द्वारा सम्पादित 'नेचर-ह्यूमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट' पत्रिका में प्रकाशित हुए हैं। इस मॉडल के क्रमिक विकसित होने की प्रक्रिया को इससे (यानि नवम्बर, 2002 से) पहले के लेखों में देखा जा सकता है।

आर.पी. सराफ के मार्गदर्शन में दिसम्बर, 2002 को प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन (नेचर-ह्यूमन सेन्ट्रिक पीपल्य मूवमेंट) का गठन हुआ। इस मूवमेंट के गठन की पृष्ठभूमि एडम स्मिथ एवं मार्क्सवादी समाजशास्त्र के सिद्धान्त और व्यवहार का लेखक द्वारा मूल्यांकन तथा विश्व की नई उभर रही ग्लोबल वार्मिंग या जलवायु परिवर्तन की चुनौती के साथ-साथ चल रही कॉरपोरेट व्यवस्था द्वारा प्राकृतिक संसाधनों की बर्बादी एवं मानवीय समाज में तेज हो रही अमानवीयकरण की प्रक्रिया के कारण को समझना रही।

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन का सिद्धान्त राष्ट्र राज्यों की अन्तरनिर्भरता की नई उभरी सामाजिक प्रक्रिया से सामाजिक विकास का नया सिद्धान्त (यानि, प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त) विश्व परिदृश्य पर सामने आया है। जबकि पूँजीवादी या उदारवादी सिद्धान्त तथा साम्यवादी या मार्क्सवादी सिद्धान्त राष्ट्र राज्य आधारित व्यवस्था के दौर में विद्यमान सामाजिक हालात की उपज है।

नेचर-ह्यून सेन्ट्रिक व्यूपाइंट से पहले आर.पी. सराफ द्वारा लिखित-सम्पादित एवं प्रकाशित–'इन्टरनेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक व्यूपाइंट' (अप्रेल, 1986 से दिसम्बर, 2002 तक); 'प्रोलीटेरियन व्यूपाइंट' (जनवरी, 1983 से मार्च, 1986 तक); 'ए रिवोल्यूशनरी व्यूपाइंट' (जनवरी, 1978 से दिसम्बर, 1982 तक) प्रकृति एवं मानव

समाज के बारे में उनकी (यानि आर.पी. सराफ की) समकालीन समझ को अभिव्यक्त करती हैं। उदाहरण के लिए 'ए रिवोल्यूशनरी व्यूपाइंट' मार्क्सवाद-लेनिनवाद, माओत्सेतुंग विचारधारा को भारत में लागू करने का नजरिया लिए हुए थी, जबकि 'प्रोलीटेरियन व्यूपाइंट' के वक्त यह समझ बनी कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद को अन्तर्राष्ट्रीय स्तरपर लागू किया जाना है। आगे 'इन्टरनेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक व्यूपाइंट' के दौरान एक ऐसे डेमोक्रेटिक विश्व व्यापी मॉडल की समझ विकसित हुई जिसमें पूँजीवादी और समाजवादी विचारधाराओं के सकारात्मक पक्ष भी शामिल थे।

इन नजरियों और समझ के अनुरूप एक ग्रुप के रूप में संगठनात्मक एवं व्यवहारिक काम करते हुए मानव जाति के समक्ष उत्पन्न ग्लोबल वार्मिंग या मौसम परिवर्तन की समस्या के कारण का गहराई से अध्ययन करने की ओर बढ़े यहाँ इस प्रश्न पर विचार किया गया कि क्या कारण है कि लाखों सालों की मानव सभ्यता इस पृथ्वी ग्रह पर से सम्पूर्ण जैव-जीवन के साथ समाप्त होने की ओर बढ़ रही है? इस प्रश्न पर अध्ययन के दौरान आर.पी. सराफ इस नतीजे पर पहुँचे कि वर्तमान कॉरपोरेट व्यवस्था का चरित्र प्रकृति एवं मानव सहित सम्पूर्ण जैव-जगत के खिलाफ है। यह व्यवस्था केवल पूँजी (धन-दौलत, मुद्रा) के प्रबंध की व्यवस्था है। पूँजी का प्रबंध चाहे कॉरपोरेट व्यवस्था के जरिए प्रबंधित किया जाए या राज्य के नेतृत्व में 'समाजवादी' प्रबंध के जरिए प्रबंधित किया जाए। चूँकि राज्य आधारित 'समाजवादी' मॉडल पूँजी के प्रबंध की प्रतियोगिता में कॉरपोरेट प्रबंध से पीछे रह गया, इसलिए यह उसका कनिष्ठ भागीदार या सहयोगी बन गया है। जबकि ग्लोबल वार्मिंग या मौसम परिवर्तन की चुनौती ने मानव समाज के सामने प्राकृतिक संसाधन और मानवीय संसाधनों को प्रबंधित, संरक्षित एवं विकसित करने की अभूतपूर्व चुनौती प्रस्तुत कर दी है, चूँकि पूँजी के प्रबंध का बाजार आधारित कॉरपोरेट और राज्य आधारित समाजवादी मॉडल केवल और केवल पूँजी का ही प्रबंध कर सकते हैं अत: ये अपनी प्रासंगिकता खो चुके हैं। इस प्रक्रिया में आर.पी. सराफ वास्तविकता के और नजदीक पहुँचे कि मानव समाज को आज नए मॉडल की जरूरत है, एक ऐसा मॉडल जो पूँजी के प्रबंध की जगह प्रकृति और मानव के प्रबंध को प्रथम प्राथमिकता दे। दिसम्बर, 2002 से पूर्व की सभी कोशिशें कॉरपोरेट व्यवस्था के दायरे में ही समाज परिवर्तन की कोशिशें साबित हुईं, हालांकि 'नेचर-ह्यूमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट' का दार्शनिक एवं वैचारिक आधार दिसम्बर, 2002 से पहले के 'इन्टरनेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक व्यूपाइंट' प्रकाशनों में प्रकट हो रहा था, जिसका सांगठनिक रूपान्तरण दिसम्बर, 2002 को नेचर-ह्यूमन सेन्ट्रिक पीपल्य मूवमेंट के गठन में तथा प्रकाशन का रूपान्तरण 'नेचर-ह्यूमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट' के रूप में हुआ।

नेचर-ह्यूमन सेन्ट्रिक पीपल्य मूवमेंट को संगठित करने के दौरान आर.पी. सराफ ने एक नए समाजशास्त्र की खोज की है, जो ग्लोबल वार्मिंग या मौसम परिवर्तन के संकट के हल का रास्ता प्रदान करके मानव जाति सहित सम्पूर्ण जैव-जगत के पृथ्वी ग्रह पर जिन्दा रहने की गारन्टी सुनिश्चित करता है। प्रकृति-मानव केन्द्रित एजेण्डे की महत्त्वपूर्ण समाजशास्त्रीय धारणाएँ कॉरपोरेट समाजशास्त्रीय धारणाओं से भिन्न है। उदाहरण के लिए–

1. पूँजीवादी दार्शनिक एडम स्मिथ एवं साम्यवादी चिन्तक मार्क्स के अनुसार मानव समाज के अस्तित्व, विकास एवं परिवर्तन की प्रक्रिया में मानव की प्रमुख भूमिका है, यानि, पूँजीवादी एवं साम्यवादी दोनों समाजशास्त्र मानव केन्द्रित है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल की मान्यता के अनुसार मानव समाज के अस्तित्व, विकास एवं परिवर्तन के लिए प्रकृति एवं मानव दो समान महत्त्वपूर्ण कारक है।

2. एडम स्मिथ एवं मार्क्सवाद के अनुसार समाज का आधार पूँजी है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल के अनुसार समाज का आधार प्राकृतिक संसाधन और मानव स्वयं है।

3. एडम स्मिथ की प्रस्तावना के अनुसार 'मनुष्य स्वभाव से स्वार्थी है' जबकि मार्क्स के अनुसार 'मनुष्य सामाजिक प्राणी है'। इन दोनों एकतरफा धारणाओं से अलग प्रकृति-मानव केन्द्रित विचारधारा के अनुसार मनुष्य का स्वभाव जैव-सामाजिक, यानि इसका व्यक्तिगत अस्तित्व एक तरफ जैविक चरित्र लिए है तो दूसरी ओर इसका जीने का ढंग, कार्यशैली एवं संगठन (परिवार, शहरी या ग्रामीण इकाई से लेकर संयुक्त राष्ट्र संघ तक) सामाजिक है।

4. एडम स्मिथ का पूँजीवादी विचार बाजार (मार्केट) को पूँजी निर्धारित करने वाला कारक घोषित करता है जबकि मार्क्सवादी विचार पूँजी को संचालित करने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी नियंत्रित राष्ट्रीयकरण या समाजवाद की अवधारणा आगे लाता है। ये दोनों अवधारणाएँ मानव के जैव-सामाजिक चरित्र और पर्यावरण के साथ मानव के सहजीवन की वर्तमान विश्वव्यापी वास्तविकता से मेल नहीं खाती है।

यही दोनों प्रस्तापनाएँ विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था के बाजार चलित स्वार्थी (या व्यक्तिगत) दिशा के बुनियादी परिप्रेक्ष्य के जनक है एवं पूँजी के बल पर व्यक्तिगत सुरक्षा की मृग मरीचिका में फँसाकर पर्यावरणीय असुरक्षा के साथ-साथ विश्व की राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक एकता एवं सुरक्षा को छिन्न-भिन्न करने वाले नेतृत्वकारी सिद्धान्त है।

इनके उलट प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन का दृष्टिकोण है कि चल रहे घातक संकट का बुनियादी हल मौजूदा बाजार आधारित कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था के स्थान पर प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था लाने में निहित है, जिसका उद्देश्य, सिद्धान्त, तरीकाकार और संगठन दो उच्च प्राथमिकताओं–यानि, पर्यावरण और मनुष्य–लिए हुए हैं और जो पाँच बुनियादी उसूलों–यानि, पर्यावरणीय संवर्द्धन, उचित समानता (यानि, प्रत्येक वंचित एवं जरूरतमंद व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा तथा अतर्कसंगत आय के अन्तर को 1:5 के आय का अन्तर कायम कर इसे तर्कसंगत बनाना), उत्पादकता (या वृद्धि दर), लोक-नेतृत्व जनवाद (यानि, कॉरपोरेट समर्थित राजनीतिक पार्टियों एवं व्यापारिक घरानों की वनिस्पत लोगों का सशक्तिकरण करना) तथा चहुँमुखी पारदर्शिता का पालन करता है।

5. आज की अन्तरनिर्भर दुनिया में 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' का सिद्धान्त अनुपयोगी और जैव-जीवन के लिए आत्मघाती बन चुका है। आज इस ग्रह पर जीवन सुरक्षित करने के लिए समस्त विश्व के लोगों के बीच एक अविभाजित मजबूत मानवीय एकता की जरूरत है। विश्व शांति आज की दुनिया की प्रथम जरूरत है।

6. हमारे ग्रह की प्रकृति तथा 21वीं सदी के राष्ट्र-राज्यों की अन्तरनिर्भर सामाजिक वास्तविकता, हमें प्रकृति-मानव केन्द्रित एक विश्व की दृष्टि प्रदान करते हैं। इस नजरिये से हमारी पहचान का प्रधान रूप वैश्विक नागरिकता है, क्योंकि हमारे जिन्दा रहने या मरने का सबब विश्व के समस्त नागरिकों और ग्रह के पर्यावरण से सीधा जुड़ गया है। यही कारण है कि आज ग्रह के प्राकृतिक संसाधनों एवं मानव संसाधनों के विश्व स्तरीय प्रबंध की जरूरत है।

7. प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम (एजेण्डा) दुनिया के लोगों के सशक्तिकरण की प्रक्रिया सुनिश्चित करता है–यानि, प्रकृति-मानव समर्थक फैसले लेने के निर्णायक अधिकार सम्बन्धित लोगों के पास हों और उन्हें लागू करने में लोगों का पूर्ण नियंत्रण हो, जबकि किसी भी संगठन या व्यक्ति को अपनी राय देने, उस पर लोगों से विचार-विमर्श करवाने और लोगों के फैसले व नियंत्रण में काम करने का अधिकार प्राप्त हो, यही प्रकृति-मानव केन्द्रित अगुवाई का स्वरूप हो सकता है।

8. लोक-नेतृत्व आधारित डेमोक्रेसी का प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल मानता है कि सभी सामाजिक प्रक्रियाओं–राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक–का मानव जीवन में समान महत्व है और इनमें से किसी एक पहलू (राजनीति, आर्थिक अथवा सांस्कृतिक) को निर्णायक बनाना पर्यावरणीय और मानवीय एकजुटता को छिन्न-भिन्न करने और लोगों के सशक्तिकरण के खिलाफ की व्यवस्था है।

अत: प्रकृति-मानव समर्थक, लोक-नेतृत्व आधारित जनवादी प्रबंध व्यवस्था के लिए गाँव/वार्ड से लेकर ब्लॉक, जिला, राज्य, देश और विश्व स्तर तक राजनीतिक, आर्थिक विकास और सांस्कृतिक सभाओं की स्थापना की जाए, जिसमें राजनीतिक सभा–कानून और व्यवस्था, अपराध रोकथाम, न्यायिक कार्यवाही के सम्बन्ध में कार्यक्रम और नीतियां बनाए; आर्थिक विकास सभा आर्थिक, वित्तीय मसलों, जैसे विकास योजना, कृषि उद्योग, सेवाएँ, वित्त और बजट से सम्बन्धित कार्यक्रम और नीतियां बनाए जबकि सांस्कृतिक सभा–शिक्षा, स्वास्थ्य, नैतिम मूल्यों, भाषा, संगीत, नृत्य, सिनेमा, मीडिया आदि से सम्बन्धित कार्यक्रम और नीतियां बनाए और उन्हें लागू करने के लिए लोक-कल्याणकारी इदारे गठित करे, इत्यादि-इत्यादि।

प्रकृति-मानव केन्द्रित एजेण्डे का एकीकृत स्वरूप प्रस्तुत संकलन में विभिन्न जगहों पर आर.पी. सराफ के सम्पूर्ण लेखन में दर्ज है। पाठक महोदय स्वयं ही गहन अध्ययन से अवलोकन करें।

धन्यवाद

– सम्पादक मण्डल

अनुक्रमणिका

	भूमिका		1
क्र.	अंक सं./अवधि	विषय वस्तु	पृष्ठ सं.
1.	177-178 नव.-दिस. 2002	1) वर्तमान विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था सभी बुराइयों की जड़ एक प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम के आधार पर पुनर्गठन की आवश्यकता	101-202
2.	179 जन. 2003	1) इन्टरनेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक व्यूपाइंट से नेचर-हुमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट 2) प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम के आधार पर दूसरी दुनिया बिल्कुल सम्भव है परन्तु अप्रासंगिक मसलों और असंगत विषय-वस्तु को अपनाया जाए तो यह हकीकतन असंभव है	21-25 101-110
3.	180 फरवरी 2003	1) प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन (एनएचसीपीएम) का प्रोग्राम एवं संविधान	21-33
4.	181, मार्च 2003	1) भारत की गैरटिकाऊ राष्ट्रीय प्रक्रिया	33-40
5.	182 अक्टू. 2003	1) हड़ताल के अधिकार को कामगारों से छिनने का उच्चतम न्यायालय का निर्णय कानूनन एवं तथ्यात्मक दोनों आधार पर दोषपूर्ण कामगारों को हड़ताल के अधिकार की समस्या का न्यायिक हल सभी क्षेत्रों में कामगारों को प्रबंध में एक तिहाई प्रतिनिधित्व देने में निहित 2) मजदूर वर्ग के समक्ष चुनौतियाँ	44-50 55-60
6.	183 नव. 2003	1) यही समय है कि जम्मू-कश्मीर की दीवार की लिखावट पर नजर डाली जाए	61-65
7.	184 दिस. 2003	1) सामाजिक विकास के 3 मौलिक सिद्धान्त कॉरपोरेट पूँजीवादी, साम्यवादी, प्रकृति-मानव केन्द्रित	66-69
8.	185 जन. 2004	1) विश्व सामाजिक मंच के कार्यक्रम पर टिप्पणी प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम की बुनियाद पर न्याय आधारित दुनिया सम्भव	70-75

9.	186-187 जून 2004	1) वर्तमान लोकतंत्र की अस्पष्ट और भ्रांत धारणाओं ने धनवानों और भ्रष्ट तथा अपराधी प्रवृत्ति के राजनीतिज्ञों को हमारे ग्रह के प्राकृतिक पर्यावरण को बर्बाद करने एवं जैविक संसाधनों को नुकसान पहुँचाने का अवसर प्रदान किया 2) भारत, पाक व जम्मू-कश्मीर के लोगों का साझा भविष्य 3) विश्व सामाजिक मंच में सार्क देशों के कार्यक्रम तैयारी की लोक तदर्थ समिति द्वारा जारी प्रेस नोट 4) मजदूरों की मूलभूत एवं दिन-प्रतिदिन की समस्याओं का मूल कारण 5) बन्धुआ मजदूरी व्यवस्था का उन्मूलन 6) नई दिल्ली की दो तरफा नई पहल	75-77 78-80 81-82 83-85 85-87 87-88
10.	188 सित.-अक्टू. 2004	1) भाजपा नेतृत्व वाली एन डी ए को सत्ता से हटाना स्वागत योग्य कदम सोनिया का पदत्याग प्रशंसनीय फिर भी संयुक्त प्रगतिशील गठजोड़ (यूपीए) का कॉरपोरेट-समर्थक कार्यक्रम कहीं नहीं पहुँचायेगा क्योंकि ऐतिहासिक अनुभव 'कारपोरेट पूँजी के मानवीय चेहरे वाले सिद्धान्त' को रद्द करता है	89-90
11.	189-190 सित.-दिस. 2004	1) पानी के सवाल पर हमारा व्यापक दृष्टिकोण 2) पूँजी के तीन मुख्य सिद्धान्त 3) जम्मू-कश्मीर समस्या के हल का खाका 4) गलत व सही में भेद करने का सवाल 5) वैश्विक बेरोजगारी : कारण एवं निवारण 6) कांग्रेस-नेतृत्व वाले संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन का कॉरपोरेट पूँजी का मानवीय चेहरे वाला सिद्धान्त केवल मिथ्या	90-92 93-95 95-97 97-98 98-99 99-100
12.	191 जनवरी 2005	1) कृषि का संकट खासकर पंजाब के संदर्भ में संकट के पैदा होने के कारण और इससे बाहर निकलने का रास्ता	101-104
13.	192 फरवरी 2005	1) हमारे ग्रह पृथ्वी पर घातक पारिस्थितिकी- जैविक संकट मंडरा रहा है दीवार पर साफ लिखा है–सुधार करो या मिट जाओ 2) आधुनिक सभ्यता के संकट का सिद्धान्त महज एक भटकाव	104-111
14.	193 मार्च 2005	1) जनसंख्या वृद्धि के विस्फोट की समस्या घातक पर्यावरणीय संकट को शीघ्र ही पीछे छोड़ सकती	105-108

		है और मानव समुदाय को सन् 2050 तक अस्थिर कर सकती है	
		2) ट्रेड-यूनियनवाद पर प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण की आम अवधारणा	109-111
15.	194 अप्रेल 2005	1) मानव समाज में आज विद्युत शक्ति ऊर्जा तथा प्रदूषण का सबसे बड़ा स्रोत	111-112
16.	195 मई 2005	1) जनतांत्रिक आन्दोलन के ध्रुवीकरण की प्रक्रिया के समक्ष चुनौतियाँ	111-115
17.	196, जून 2005	1) विश्व-कृषि : इसके संकट, कारण और समाधान	115-117
18.	196-198 जुलाई-अग. 2005	1) जम्मू-कश्मीर के भविष्य की संभावनाओं पर वाशिंगटन सम्मेलन के लिए विचार हेतु एक संक्षिप्त टिप्पणी	118-120
		2) कश्मीर संघर्ष आतंकवाद नहीं सर्राफ का सुझाव विवाद का तीन सूत्री हल	121-122
		3) जम्मू-कश्मीर समस्या का त्रिपक्षीय हल के लिए मोर्चे द्वारा जम्मू-कश्मीर मुद्दे पर पाकिस्तान के राष्ट्रपति और भारत के प्रधानमंत्री से अपील	122-125
19.	199-202 सित.-दिस. 2005	1) मानव जाति का भविष्य वर्तमान वास्तविकता के अनुसार दोतरफा संभावना लिए है जीवन या मौत अन्य तीसरी संभावना नहीं	126-130
		2) खुले और स्वतंत्र कॉरपोरेट पूँजीवादी समाज में असमानता की स्थिति	131-133
		3) सार्क (दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन) के सम्मुख सवाल पहले मानवीय एवं पर्यावरणीय मुद्दे या व्यापारिक एवं आर्थिक मुद्दे	133-145
		4) मानव प्रजाति में लिंग समानता–एक निष्पक्ष एवं न्यायपूर्ण समाज की पहली आवश्यकता	145-147
		5) मानवाधिकारों पर आम अवधारणा मानवाधिकारों को सुनिश्चित करने की मुख्य गारण्टी–जन जागृति	148-150
		6) ट्रेड यूनियनवाद पर आम अवधारणा	151-155
		7) आज का आतंकवाद–कॉरपोरेट पूंजीवाद की एक बुरी पैदावार	156-157
		8) अपूर्व ढंग से बढ़ रही मानव जनसंख्या और घट रहे पर्यावरणीय संसाधन–मानव समुदाय को तत्काल चुनौती पेश कर रहे हैं	158-160
		9) अमेरीकी महाशक्तिवाद–मानवता और पर्यावरण के विरुद्ध अपराध के अद्वितीय रिकार्ड का एक घटनाक्रम	161-166

		10) प्रकृति-मानव केन्द्रित जन-आन्दोलन (NHCPM) का 'मानव जाति का भविष्य' विषय पर जयपुर सम्मेलन 25-27 नवम्बर, 2005 की संक्षिप्त कार्यवाही रिपोर्ट	167-170
20.	203-205 जन.-मार्च 2006	1) भारतीय कृषि गहरे संकट में–इसका कारण नई दिल्ली की कॉरपोरेट पूंजीवादी कृषि नीति में निहित लोक-पर्यावरण नेतृत्व में सहकारी आधार पर कृषि को संगठित करके किसानों का सशक्तिकरण करना ही आज का एकमात्र रास्ता (1) भारत के कृषि संकट के मुख्य पहलू (2) भारत के कृषि संकट पर सरकारी बयान (3) भारत में कृषि संकट का समाधान (4) भारतीय कृषि संकट के कारण (5) वर्तमान कार्य (6) वर्तमान कॉरपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था को बदलने की सामाजिक आवश्यकता	171-177
		2) पंजाब के सामने विकराल कृषि संकट–इसका कारण राज्य और केन्द्र सरकारों की किसान विरोधी नीतियों में निहित है इसका एकमात्र हल–लोक-पर्यावरण नेतृत्व में सहकारी खेती के आधार पर किसानों के सशक्तिकरण में अन्तर्निहित	175-180
		3) विश्व कृषि और आगे का कार्य	181-185
		4) इतिहास में कृषि का क्रमिक विकास	186-190
		5) सन् 1995-2005 के दौरान भारत के दस हजार किसानों ने आत्महत्याएँ क्यों की तथा भारत के 40 प्रतिशत किसान खेती क्यों छोड़ना चाहते हैं	191-195
		6) आनुवांशिक परिवर्तित (जी एम) खाद्य अजन्मे बच्चों को क्षति पहुँचा सकते हैं	196-200
		7) मिट्टी के कटाव पर विशेषज्ञ चिन्तित	201-205
		8) पंजाब में जंगल क्षेत्र देश में सबसे कम	206-210
		9) अधिक जनसंख्या 'क्या ग्रह के लिए मुख्य चुनौती है'	
21.	206 अप्रेल 2006	1) नेचर-ह्यूमन सेन्ट्रिक पीपल्स मूवमेंट पाकिस्तान द्वारा उठाए गए कुछ सवाल	211-215
		2) नेचर-ह्यूमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट द्वारा उनका प्रत्युत्तर	216-220
22.	207 मई 2006	1) कामगारों के आन्दोलन को दरपेश चुनौतियां और उनका समाधान	221-225

23.	208 जून 2006	1) अमेरिकी महाशक्ति आतंकवाद–दुनिया के लोगों को तात्कालिक चुनौती पेश कर रहा है	226-230
24.	209 सित.-नव. 2006	1) विश्व सामाजिक मंच का अवास्तविक और हानिकारक एजेण्डा विश्व की समस्याओं को और अधिक खराब कर देगा	231-235
		2) मौजूदा विश्व समस्याओं से उभरने का रास्ता प्रकृति-मानव केन्द्रित एजेण्डा में निहित है	235-240
25.	210 मार्च 2007	1) दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन के प्रत्येक सदस्य देश में प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आंदोलन के विचार-विमर्श के लिए प्रोग्राम का मसौदा	241-250
26.	211 मई-जून 2007	1) वैश्विक उष्माकरण या मौसम परिवर्तन की चुनौती	251-260
		2) जम्मू-कश्मीर समस्या के सम्बन्ध में एक वास्तविक, टिकाऊ एवं तर्कसंग नजरिया	261-270
27.	212 जुलाई-अक्टू. 2007	1) वैश्विक उष्माकरण या मौसम परिवर्तन की चुनौती को प्रत्युत्तर देने के प्रश्न पर राष्ट्रीय सरकारों के राष्ट्राध्यक्षों को संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन-2007 में यू एन के महासचिव के जरिए प्रस्तुत की गई अपील	271-280
		2) वैश्विक उष्माकरण या मौसम परिवर्तन (पर्यावरण ह्रास)का मुद्दा	281-290
		3) आम तौर पर वर्तमान मानव समाज और खास तौर पर इसके प्रत्येक सामाजिक पहलू में अमानवीयकरण की चुनौती	291-300
		4) प्रकृति-मानव केन्द्रित नजरिए के आधारभूत सिद्धांत	301-310
		5) प्रकृति-मानव केन्द्रित फौरी कार्यक्रम	311-320
		6) प्रकृति-मानव केन्द्रित अल्पकालीन कार्यक्रम	321-330
		7) प्रकृति-मानव केन्द्रित दीर्घकालीन कार्यक्रम	331-340
28.	213-214 नव.-दिस. 2007 जन.-फर. 2008	1) कामगारों के आन्दोलन को दरपेश चुनौतियां और आगे का रास्ता	341-350
		2) राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक तौर पर विभाजित विश्व मानव की झूठी एकता बनाकर बाली रोडमेप ने खतरनाक भविष्य का रास्ता तैयार किया आज हमें एक अविभाजित मजबूत मानव एकता की आवश्यकता है, जो शुरू से ही सभी विद्यमान और पुरानी वैश्विक चुनौतियों की जनक विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था के बाजार चलित स्वार्थी (या व्यक्तिगत) दिशा के बुनियादी परिप्रेक्ष्य के कारण खंडित है	351-360

		इसने पहले से ही काफी जीव-प्रजातियों को समाप्त कर दिया है और अब इस ग्रह पर मौजूद सम्पूर्ण जीव-जगत को पूर्ण खात्मे की ओर धकेल रही है अभी भी ग्रह पृथ्वी और इसके जीव-जगत को बचाने की संभावना है बशर्ते मानव समुदाय तुरन्त ही एक वास्तविक और प्रासंगिक प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम अपनाए	
		2) मौसम परिवर्तन एवं कृषि	361-370
		3) 23 से 25 फरवरी, 2008 को बरनाला (पंजाब) में कृषि सम्मेलन सम्पन्न	371-380
29.	215 अगस्त 2008	1) आज जम्मू-कश्मीर जिस समस्या से सामना कर रहा है उसका तात्कालिक और दीर्घकालीन समाधान	381-390
30.	216-219 मार्च-अक्टू. 2008	1) मानव समुदाय सन् 2050 तक पाँच घातक चुनौतियों का सामना करेगा हमारी दुनिया–हमारे ग्रह पृथ्वी के आज के हालात मानव समुदाय को आज एक अभूतपर्व चुनौती से सामना है मानव समुदाय के निरन्तर कायम रहने से ज्यादा इसके नष्ट होने की संभावना अधिक प्रबल है	391-400
31.	220 नवंबर 2008 से मार्च 2009	1) आर पी सराफ को राईजिंग कश्मीर समाचार-पत्र के शब्बीर दार द्वारा भेजी गई जी-मेल प्रश्नावली तथा इसका आर पी सराफ द्वारा दिया गया प्रत्युत्तर	401-410
		2) जम्मू-कश्मीर समस्या का एक न्यायपूर्ण, वास्तविक, टिकाऊ तथा तर्कसंगत समाधान	411-420
32.	221 अप्रेल-सित. 2009	1) दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन के प्रत्येक सदस्य देश में प्रकृति-मानव केन्द्रित जन-आंदोलन के विचार-विमर्श के लिए प्रोग्राम का मसौदा पर आर पी सराफ द्वारा हस्तलिखित टिप्पणियाँ	421-430
33.	222 अक्टूबर 2009	1) 15 से 17 सितम्बर, 2005 को आयोजित प्रथम लोक शिक्षण कांग्रेस द्वारा विज्ञान संचार के सम्बन्ध में तैयार किये गये नोट पर आर पी सराफ द्वारा प्रस्तुत संक्षिप्त टिप्पणी	431-440 441-450

हनुमानगढ़ (राजस्थान, भारत) सम्मेलन के लिए प्रस्तावित परिपत्र

वर्तमान विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था सभी बुराइयों की जड़ 'एक प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम' के आधार पर पुनर्गठन की आवश्यकता

I. विचार वस्तु

हनुमानगढ़ सम्मेलन ऐसे समय (27 दिसम्बर से 30 दिसम्बर, 2002) हो रहा है जब अपने अस्तित्वपूर्ण इतिहास से मानव समुदाय को अत्यधिक गम्भीर संकट से सामना है। संकट इतना गहरा है कि या तो मानवता समय रहते इसका कोई हल निकाल लेगी या यह संकट हमको (यानि मानव) को उलट पुलट कर देगा।

अपने उद्‌भव के समय से मानवता को अनगिनत संकटों का सामना रहा है और यह हमेशा अपनी मानवीय तर्क संगतता तथा व्यावहारिक सहज एवं खोजी बुद्धि के जरिए उन संकटों से निजात पाने में सफल रहा है, फिर भी, इस समय संकट इतना गम्भीर है कि कई मानवीय-प्रयासों के बावजूद यह संकट थोड़ा भी कम नहीं हो पाया है।

यह सर्वविदित है कि प्रत्येक संकट जहां एक तरफ खतरा पैदा करता है तो वहीं अवसर भी प्रदान करता है। मानवता ने हमेशा खतरे का सामना किया है और उसे अवसर में बदलकर सभी संकटों से निजात पाई है।

क्या कारण है कि मानवता सभी पुराने संकटों से उबरने में तथा प्रत्येक संकट को अवसर में बदलने के सक्षम रही है, यह इस तथ्य में निहित है कि मानवता ने हमेशा पुराने सभी संकटों का प्रबन्ध करने में इस वैज्ञानिक सूत्र का अनुसरण किया है कि उसने सबसे पहले सम्बन्धित प्रत्येक संकट के चरित्र और कारण का विश्लेषण किया है। प्रत्येक समस्या के सन्दर्भ में सम्पूर्ण मानवीय ऐतिहासिक अनुभव यह दर्शाता है कि केवल मात्र इसकी (यानि, संकट की) प्रकृति और आधार की पहचान करने के बाद ही कोई उससे उचित तौर पर निपट सकता है।

II हमारा ग्रह पृथ्वी एक चहुँमुखी पर्यावरणीय-जैविक संकट से ग्रसित

प्रकृति और सामाजिक विज्ञान बताते हैं कि मानव समाज के दो बुनियादी कारक (पहलू) हैं यानि, प्रकृति (या पर्यावरण) और मानव। अत: मानव समाज में किसी भी संकट का अर्थ है इनमें से किसी एक या दूसरे अथवा दोनों में ही कोई गड़बड़ है।

पर्यावरणीय पहलू में इसके सभी घटक (यानि हवा, पानी, जमीन, जंगल, मौसम परिवर्तन, जैव विविधता, खनिज एवं अन्य प्राकृतिक उत्पाद आदि) शामिल है, जबकि मानवीय पहलू सभी मानवीय मसलों (यानि एक निश्चित समय के मानवीय विकास मॉडल से सम्बन्धित सभी समस्याएँ तथा इसकी राजनीति, अर्थनीति, संस्कृति और सुरक्षा) को इंगित करता है।

मानव समाज में अब तक उत्पन्न हो रहे सभी संकटों का संबंध या तो एक या कुछ पर्यावरणीय घटकों से है या कोई एक या बहुत सारे मानवीय मसलों से सम्बन्धित है। परन्तु इस बार यह संकट चहुँमुखी है जिसमें मानव जीवन के दो बुनियादी पहलुओं का सम्पूर्ण क्षेत्र समाहित है। इसका अर्थ है कि आज जिस संकट का हमें सामने है उसने तमाम पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों को ग्रसित कर दिया है। पर्यावरणीय तौर पर वायु का प्रदुषित होना, पानी की गुणात्मक और मात्रा का घटना, भूमि-क्षरण और उसमें गिरावट, थोक में जंगल विनाश, बहुत-सी जैविक प्रजातियों का लुप्त होना, खनिज और अन्य प्राकृतिक उत्पादों का अत्याधिक उपयोग और दुरुपयोग बिना रूकावट के दशाब्दियों से जारी है। इसी तरह से, तमाम मानवीय मसले सभी तरह से विकृत होते गए हैं। मानवीय दायरे में एक पर्यावरण विरोधी, असमान, अन्यायपूर्ण, युद्धखोर एवं सैनिक हल आधारित विकास मॉडल और इसकी भ्रष्टाचार व अपराधिक राजनीति, आत्म-केन्द्रित आर्थिकता जो नग्न व्यक्तिगत लालच आधारित, रूढ़िवादी सांस्कृतिक मूल्य जो हिंसा, संकीर्ण, टकराहट और अलोकतान्त्रित पहलुओं से चिह्नित है, यह प्रक्रिया तेज गति से बढ़ रही है।

यह सब समाहित (या पर्यावरणीय-जैविक) संकट अब एक सामान्य घटनाक्रम हो गया है। इसकी संवेदनशीलता अब किसी भी एक या सबमें देखी जा सकती है। सर्वोच्च स्तर पर, संयुक्त राष्ट्र संघ और अन्य विश्व संस्थाए तथा 190 राष्ट्रीय राज्य लगातार इन बढ़ रही चुनौतियों का उचित प्रत्युत्तर ढूंढने के लिए अपने शिखर सम्मेलन कर रहे हैं। मध्यम स्तर पर, अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर (गैर-सरकारी संगठनों सहित) सभी पर्यावरणीय समूह, सामाजिक विकास के विचारक और योजनाकार, मानव अधिकार कार्यकर्त्ताओं, राजनीतिक पार्टियों, अर्थशास्त्रियों तथा सांस्कृतिक समूह इस खतरे से मुकाबला करने के लिए विभिन्न कार्यक्रमों और प्रस्तावों पर जोर दे रहे हैं। प्राकृतिक और सामाजिक आपदाओं (यानि प्राकृतिक आपदाएँ जैस सूखा, बाढ़, तूफान, अल नीनो घटनाक्रम और अनिश्चित मौसम आदि एवं सामाजिक अन्याय जैसे असमानता, वंचितपन, बीमारियां, मानव अधिकारों का उल्लघंन आदि) से लगातार पीड़ित सामान्य आदमी भी मसलों को ठीक करने की बात कह रहा है, यद्यपि इस गम्भीर संकट के असर के बारे में जागरूक नहीं है।

वैज्ञानिक समुदाय पर्यावरणीय पहलू की खराब हो रही अवस्था को शुरू से उजागर कर रहा है। विभिन्न पर्यावणीय मुद्दों पर विभिन्न ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिकों ने पहले से ही बहुत बड़ी संख्या में अपनी रिपोर्टें प्रकाशित की हैं। इन बहुत-सी रिपोर्टों में से जिन्होंने इस संकट के परिपक्व होने के समय-काल की गणना की है उसमें से विशेष तौर पर दो रिपोर्टों का उल्लेख करना उचित है। उनमें से सन् 2000 की एक रिपोर्ट में जो दुनिया के 6000 विख्यात वैज्ञानिकों द्वारा चेतवनी भरी रिपोर्ट दी गई है, जिसमें जोर दिया गया है कि यदि मानव समुदाय ने आने वाले थोड़े से समय मे ग्रीन हाउस गैसों का उत्पादन नहीं रोका तो 21 वीं सदी के अन्त तक वैश्विक उष्माकरण की प्रक्रिया पृथ्वी पर जैव-जीवन के अस्तित्व को नहीं रहने देगी। दूसरी रिपोर्ट 2002 डब्ल्यू. डब्ल्यू.एफ. का अध्ययन है जिसमें यह चेतावनी दी गई है कि यदि मानव समुदाय (विशेष तौर पर धनी राष्ट्र व धनी लोग) अपने असंयमित और बर्बाद करने वाली जीवन-शैली को नहीं बदलते तो पचास सालों में हमारा ग्रह पृथ्वी मानवीय-जीवन के लिए उपयुक्त स्थान नहीं रहेगा। अन्य वैज्ञानिक विशेषज्ञ जो

अपने आपको समय-काल की गणना में नहीं बांधते हैं वे भी स्वीकार करते हैं कि पर्यावरणीय स्थिति अत्यधिक चेतावनी भरी है।

सामाजिक स्तर पर करीब-करीब सभी वैश्विक संस्थाएँ जिनका सम्बन्ध मानवीय विकास से है, यानि, संयुक्त राष्ट्र संघ, विश्व बैंक, अन्तराष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संघ इत्यादि अब हमारे विद्यमान विकास मॉडल की गैर-टिकाऊ पद्धति को चालू रखने पर जोर दे रहे हैं। यह विकास मॉडल मुख्य तौर पर आर्थिक असमानता, पक्षपात एवं अन्यायपूर्ण, राजनीतिक भ्रष्टाचार और अपराधीकरण, सभी सांस्कृतिक मूल्यों का ह्रास; विभिन्न रूढ़िवादी दृष्टिकोणों की पकड़ बढ़ना, हिंसा, टकराहट और झगड़ो की संख्या में बढ़ोत्तरी तथा मानव अधिकारों पर हमला एवं मानव जीवन का उद्देश्य धन व सत्ता प्राप्त करने से चरित्रित है।

संयुक्त राष्ट्र 2002 की मानव विकास रिपोर्ट जाहिर करती है : दुनिया के अत्यधिक धनी 1 प्रतिशत की आय दुनिया के निर्धनतम 75 प्रतिशत से अधिक है। और विकासशील देशों के एक औसत गरीब व्यक्ति को विश्व बाजार से काम प्राप्त करने में एक औद्योगिक देश के विशिष्ट मजदूर की तुलना में दुगुनी बाधाओं का सामना करना पड़ता है। अभी तक यह बेहद अनुचित दुनिया है।

गरीबी हटाने में वैश्विक विकास की मन्थर गति और 2015 तक एक डालर प्रतिदिन से कम आय पर जीवन बसर करने वाली दुनिया की आबादी का हिस्सा बढ़ाने का अन्तरराष्ट्रीय उद्देश्य पूरा होता नजर नहीं आता है।

अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक पर धनवान देशों का नियत्रंण कम किया जाए। संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के पांच स्थायी सदस्यों के वीटों अधिकार को समाप्त करने की सलाह के साथ यह रिपोर्ट कहती है कि विश्व व्यापार संगठन में गरीब देशों की आवाज भी मजबूत की जाए।

2001 यू.एन. मानव विकास रिपोर्ट में लिखा है : 21 वीं सदी के प्रारम्भ में मानव विकास की चुनौतियां काफी मात्रा में विद्यमान है। विकासशील देशों में 4.6 बिलियन लोगों में 850 मिलियन से अधिक लोगों को बुनियादी शौच सुविधाएं हासिल नहीं है। करीब 325 मिलियन लड़के लड़किया स्कूल नहीं जाते हैं और पांच साल से कम उम्र के 11 मिलियन बच्चे हर साल इलाज के अभाव में मर जाते हैं, यह संख्या प्रतिदिन 30 हजार से अधिक बैठती है। 1.2 बिलियन लोग प्रतिदिन 1 डॉलर से कम पर गुजारा करते है। (1993 पी.पी.पी.यू. एस.)और 2.8 बिलियन लोग प्रतिदिन 2 डालर से कम पर गुजारा करते हैं। यह वंचितपन विकासशील देशों तक ही सीमित नहीं है। ओ.इ.सी.डी. (आर्थिक सहकारिता और विकास संगठन) देशों में 130 मिलियन लोग गरीब हैं, 34 मिलियन बेरोजगार हैं तथा प्रौढ़ों में औसतन अशिक्षा की दर 15 प्रतिशत है। वैश्विक स्तर पर आय में समानता भी भारी है। 1993 में दुनिया के सबसे अधिक धनवानों के 10 प्रतिशत लोगों की आय का 1.6 प्रतिशत भाग दुनिया के सबसे गरीब 10 प्रतिशत लोगों की आय के बराबर था। प्रतिशत सबसे धनी लोगों की आय 57 प्रतिशत गरीब लोगों की आय के बराबर है। अमेरिका में सबसे धनी 10 प्रतिशत लोगों (करीब 25 मिलियन लोग) की संयुक्त आय दुनिया के 43 प्रतिशत गरीब लोगों (करीब 2 बिलियन लोग) की आय के बराबर थी।

यह रिपोर्ट स्वीकार करती है कि तकनीकी प्रगति–अनुसन्धान, डिजाइन, उत्पादन, प्रचार-प्रसार–के मामले प्रत्येक क्षेत्र में आज सामाजिक लाभ के उद्देश्य से संचालित नहीं

होते, बल्कि आर्थिक तौर पर शक्तिशाली निजी संस्थाओं के लाभ की गणना से संचालित होते हैं।

सन् 2000 में, ब्राजील में 9 अरबपति थे, जिनकी संयुक्त सम्पदा 20 अरब डालर थी, भारत में 9 अरबपतियों की सम्पत्ति 23 अरब डॉलर थी, मलेशिया में 5 अरबपतियों की सम्पत्ति 12 अरब डॉलर थी, मैक्सिको में 13 अरबपतियों की सम्पत्ति 25 अरब डॉलर थी और सउद्री अरब के 5 अरबपतियों की सम्पत्ति 31 अरब डॉलर थी।

रिपोर्ट में अंकित है कि वित्त और विकास की दुनिया बचत और निवेश के रचनातंत्र के जरिए जुड़ी हुई है। एक अनुमान के अनुसार पिछले वर्ष 7.5 ट्रिलियन डालर की बचत या निवेश हुआ था जिसमें से 1.7 बिलियन डालर विकासशील देशों में निवेश हुआ था। परन्तु धनी देशों के कुल हस्तान्तरित राशि 450 बिलियन डालर रही, जिसका तीन-चौथाई भाग अमेरिका द्वारा हस्तगत किया गया।

रिपोर्ट के अनुसार बहुत-से गरीब देशों द्वारा विदेशी कर्ज चढ़ा लिया गया है, उससे उनकी गरीबी कम करने और अपने विकास लक्ष्यों को पूरा करने की क्षमता में भारी रूकावट पैदा हुई है। जबकि कर्ज माफी विभिन्न वित्तीय सहायताओं में से एक औजार है, फिर भी यह समझा जाना चाहिए के कुछ मामलों में कर्ज का बोझ अत्यधिक बाधाओं का प्रतिनिधित्व करता है और इसका हल तुरन्त निकाला जाना चाहिए।

लाभ का असमान वितरण तथा वैश्विक स्तर पर नियम बनाने का असन्तुलन, जो आज के वैश्विकरण का चरित्र है, अवश्यम्भावी तौर पर समस्याओं के ढेर और संरक्षणवाद को पैदा करेगा।

उपर्युक्त वर्णित यू.एन.डी.पी. की रिपोर्ट के अलावा वर्तमान मानव समुदाय को अत्यधिक चिन्तिन करने वाले पहलू यह है कि आज मानव अनुचित और अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के तहत जी रहा है जहां कमजोर पर ताकतवर का प्रभुत्व है और अमीर धन, बल तथा विशेषाधिकार के जरिए गरीब की छाती पर सवार है और वैश्विक एवं राष्ट्रीय दोनों स्तर पर न्याय व सत्य के ये स्वीकार्य मानदण्ड बने हुए हैं।

यह तथ्य, प्रथमतया, सभी विश्व संस्थाओं के सिद्धान्त और कार्यशैली से स्पष्ट है। मसलन, संयुक्त राष्ट्र संघ और उसकी संस्थाए 1945 चार्टर से नियंत्रित है जो दुनिया की पाँच सबसे अधिक सैनिक शक्तियों-यानि अमेरिका, चीन, ब्रिटेन, फ्रांस और रूस-को चुनी हुई सुरक्षा परिषद में वीटो का अधिकार और स्थायी सदस्यता प्रदान करता है, स्पष्टतया ऐसी विशेषाधिकार आधारित व्यवस्था पूर्णतया भेदभावपूर्ण और अन्यायपूर्ण है क्योंकि बचे हुए 180 यू.एन. सदस्यों की भूमिका को घटाकर यह शून्य बना देता है। नैतिक और कानूनी तौर पर यह राजनीतिक समानता के विश्व स्वीकार्य सिद्धान्त, एक इकाई का एक वोट का सार्वत्रिक मानदण्ड और प्रत्येक राष्ट्रीय राज्य के मानवाधिकार को नजर अन्दाज करता है। संयुक्त राष्ट्र संघ मानवाधिकारों के उल्लघंन के आधार पर विभिन्न राष्ट्रीय राज्यों (देशों) के मामलों में दखलन्दाजी करता है तो इसे ऐसा क्यों नहीं करना चाहिए कि नये युग के लिए अपने आपको प्रासंगिक बनाने हेतु यह अपना तर्कसंगत आधार पर पुनगर्ठन करे।

द्वितीयत:, यही अतर्कसंगत और अलोकतान्त्रिक शैली दो अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं–अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा विश्व बैंक में चल रही है–इन दोनों संस्थाओं में प्रत्येक सदस्य की मताधिकार की ताकत आर्थिक शक्ति निर्धारित करती है। इस प्रकार

निश्चित तौर पर ये संस्थाएं वित्तीय विकसित देशों, खासकर अमेरिका–जो कुल मताधिकार की ताकत का 26 प्रतिशत पर नियंत्रण करता रखता है–द्वारा संचालित होती है।

तृतीयत:, नव सृजित अन्यायपूर्ण सीटीबीटी व्यवस्था वास्तव में पांच बड़ी परमाणु शक्तियों को परमाणु हथियारों का एकाधिकार प्रदान करती है–इस प्रकार यह उनको दुनिया के अजेय शासक बनाती है।

चतुर्थ, कुछ विकसित देश जिनकी आबादी मुश्किल से दुनिया की आबादी की 15 प्रतिशत है आज दुनिया के भौतिक और वित्तीय स्त्रोतों के 80 प्रतिशत को नियंत्रित करते है जबकि 130 विकासशील देशों में निवास करने वाली दुनिया के 85 प्रतिशत लोगों के लिए 20 प्रतिशत से भी कम स्त्रोतों को छोड़ा है।

पंचम, दुनिया की आधी आबादी जो मानव समुदाय के महिला भाग से बनी हैं, दुनियाभर में बुरे बर्ताव और अभद्र व्यवहार की लगातार शिकार हैं।

षष्टम, राष्ट्रीय स्तर पर प्रत्येक देश की स्थिति चल रही विश्व व्यवस्था से भिन्न नहीं है। 190 से अधिक देशों में उनकी भौतिक स्थिति, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तथा सामाजिक-आर्थिक हालात के कारण भिन्नताएं होने के बावजूद उनकी सामाजिक जिन्दगी की गुणवत्ता में, विशेष तौर पर विकासशील देशों के बीच भारी समानता है। मसलन, प्राय: सभी देशों (विकसित या विकासशील) की राजनीतिक प्रक्रिया में धन शक्ति का प्रभुत्व है, विकासशील देशों के मामले में भुजबल एवं आदिम मानदण्ड भी साथ जुड़े हैं। आम तौर पर आर्थिक प्रक्रिया गलाकाट प्रतियोगिता, सट्टेबाजी और काले धन के जरिए संचालित है। बेइमानी भरे मानदण्ड ही कहीं सामान्य व्यवहार बने हुए हैं।

सप्तम, लगभग सभी देशों में बहुमत के बनिस्पत कुछ ही लोगों को विशेषाधिकार प्राप्त हैं। हर कहीं सांसदों को कानून के तहत विशेष संसदीय विशेषाधिकार के जरिए आम कानूनों से छूट मिली हुई है। विकासशील देशों में शासकीय धड़ा प्राय: कानून की खुल्लम-खुल्ला अवहेलना करता है। दुनिया में कहीं भी न्यायपालिका लोगों के प्रति जवाबदेह नहीं है। इसके बजाए न्यायालय की अवमानना का कानून सर्वत्र मौजूद है जो हर आलोचक को चुप्प करने की शक्ति न्यायपालिका को प्रदान करता है।

सरकारी गुप्तता का कानून सभी देशों में मौजूद है जो अफसरशाही के सभी सौदों को छुपाने का अधिकार प्रदान करता है और इस प्रकार अफसरशाही लोगों के सिर पर सवार है। दुनिया भर में कानून लागू करने वाली संस्थाएं अधिक विस्तृत अधिकारों का उपभोग करती है। तीसरी दुनिया में वे ऐसा व्यवहार करते हैं कि जैसे वे ही कानून हैं। सभी जगह कानून अमीरों और कानून तोड़ने वालों का पक्ष लेता है और गरीबों व वंचितों के विरूद्ध पक्षतापूर्ण व्यवहार करता है।

अष्ठम, आज अमेरिका दुनिया का एकछत्र पुलिसमेन बना हुआ है। अफगानिस्तान में अकेले ही सैनिक सफलता हासिल करने के बाद यह और अधिक एकलवादी व युद्धखोर हो गया है। अब इसने अपने ही द्वारा घोषित आतंकवादियों के विरुद्ध लगातार चलने वाले युद्ध की घोषणा कर दी है। अभी तक न तो संयुक्त राष्ट्र में और न ही यू.एन. के किसी अन्य सदस्य ने आतंकवाद को परिभाषित किया है। इसके आक्रमण में इसके द्वारा घोषित बुरे राज्य- यानि, इराक, ईरान, उत्तरी कोरिया आदि इसके प्रथम लक्ष्य में शामिल हैं, जो संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य हैं और किसी भी तर्क के जरिए उन्हें आतंकवादी चरित्रित नहीं

किया जा सकता। अमेरिका द्वारा घोषित नई आक्रमण योजना को दुनियाभर में अस्वीकृत किया गया है जिसमें चीन, रूस और यूरोपियन समुदाय शामिल है। परन्तु अमेरिका अपनी नई युद्ध योजना लागू करने में अभी तक नरम नहीं पड़ा है।

नवम्, अमेरिका के नेतृत्व वाला विश्व कारपोरेट क्षेत्र गम्भीर कठिनाई में है। कारपोरेट लाभ गिर रहा है। बहुत-सी चोटी की कम्पनियां विशेष तौर पर अमेरिका में बड़ी-बड़ी धोखाधड़ी और घोटालों में लिप्त पाई गई है। कारपोरेट क्षेत्र का यह दावा कि वे धन निर्माण, सम्पन्नता एवं प्रगति वाहक सामाजिक संस्था हैं, इस झूठ का पर्दाफाश हो चुका है।

दशम्, कारपोरेट आधारित विश्व विकास प्रक्रिया को अद्वितीय संकट से सामना है, जिसने मानवता के सामने एक गम्भीर चुनौती पैदा कर दी है। अमीरी-गरीबी का भेद दिन-दुना-रात चौगुना बढ़ रहा है। गरीबी और बेरोजगारी तेजी से फैल रही है। सैनिक बजट-जो टिकाऊ विकास को सोख लेता है-तीव्रता से बढ़ रहा है। जबकि सामाजिक विकास पर खर्च घटता जा रहा है। दुनिया में भ्रष्टाचार, अपराध, हिंसा एवं आत्महत्याएँ व्यापक तौर पर बढ़ गई हैं और इन्होंने राजनीतिक व आर्थिक क्षेत्रों और उनके उच्च प्रबन्धकों तक को अपने दायरे में समेट लिया है। मानवाधिकार उल्लंघन, अल्पसंख्यकों और अन्य कमजोर तबकों के विरूद्ध भेदभाव तथा महिलाओं के विरूद्ध अत्याचार बढ़ोत्तरी की ओर है। नस्ली तनाव बढ़ रहे हैं। विभिन्न प्रकार की रूढ़िवादी धारणाएं, नई-पुरानी दोनों, लोगों को गुमराह कर रही है और फूट डाल रही है।

आज हम एक ऐसी दुनिया में हैं जहां बेईमान राजनीति, काला धन और जी–हुजूरी का व्यवहार सबसे लाभदायक धन्धा हो गया है। यह मौजूदा भेदभावपूर्ण व्यवस्था के मानदण्डों को इंगित करता है।

उपर्युक्त वर्णित सभी गम्भीर चुनौतियां और खतरनाक धमकियाँ मानव समाज में असन्तुलन एवं मानव समाज व प्रकृति के बीच असन्तुलन को प्रतिबम्बित करती हैं। निश्चय ही ये मानव समुदाय की असन्तुलित स्थिति की ओर इशारा है।

उपर्युक्त कथित तथ्य सभी लोगों के कन्धों पर भारी जिम्मेदारी डालते हैं कि वे मौजूदा संकट के खतरनाक असर के बारे में अपनी समझ को गहरी बनाएँ और इसके वास्तविक कारणों को खोज निकालने की कोशिश करें और अपनी ताकत के मुताबिक वह सब कुछ करें जिसमें एक वास्तविक कार्यक्रम के जरिए इसका जवाब दिया जा सके।

III पर्यावरण-जैविक संकट का कारण विश्व कारपोरेट व्यवस्था में निहित है

दुनिया (यू.एन., विश्व बैंक, आई.एम.एफ., विश्व व्यापार संगठन इत्यादि से गठित), राष्ट्रीय राज्य, प्राकृतिक और सामाजिक वैज्ञानिक, विचारक और योजनाकार, करीब-करीब सभी इस बिन्दु पर एकमत हैं कि मौजूदा वैश्विक संकट मानव की कारगुजारी की देन है। वर्तमान संकट की खतरनाक प्रकृति के विचार के सबसे कट्टर आलोचक कार्यरत अमेरिकी राष्ट्रपति जार्ज बुश ने भी अब सार्वजनिक तौर पर इस तथ्य को स्वीकार कर लिया है। परन्तु उपर्युक्त वर्णित प्रतिष्ठित लोगों में से किसी ने भी लोक गतिविधि की धारणा को परिभाषित नहीं किया है और ना ही विश्व शिखर सम्मेलनों-यानि, 1972 का स्टाकहोम में पर्यावरण और विकास पर विश्व सम्मेलन, 1992-रियो यू.एन. शिखर सम्मेलन

तथा टिकाऊ विकास पर 2002 का जोहान्सबर्ग यू.एन. शिखर सम्मेलन-ने इस प्रश्न को छुआ है। यद्यपि उन्होंने टिकाऊ विकास के कार्यक्रम को तो स्वीकार किया लेकिन मानव के गैर-टिकाऊ तरीकों और जीवन-शैली के संबंध में उन्होंने केवल छुट-पुट टिप्पणियाँ ही की हैं और यह इंगित करने से अपने आपको बचाया है कि मानवता किस विशिष्ट ढांचागत आकार में एक निश्चित हालात में विभिन्न तरीकों, रूपों या मर्यादाओं से संचालित है। स्पष्टतया, उपर्युक्त वर्णित मुख्य सामाजिक अगुवाओं ने प्रत्येक मनुष्य को समान दोषी बताकर इस आवश्यक बिन्दु को बिल्कुल अस्पष्ट छोड़ दिया है। इस भरपूर प्रचलित सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक मनुष्य प्रदूषणकारी है। परन्तु इस तथ्य को प्रत्येक जानता है कि प्रदूषण उत्पन्न करने की जिम्मेदारी उन पर है जो प्रदूषण उत्पादक फैक्ट्रियों या साधनों के मालिक हैं न कि उन प्रतिष्ठानों में लगे हुए मजदूरों पर।

ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि मानवता, उसकी जीवन शैली या जीवन पद्धति या अन्य गतिविधि हमेशा एक संगठित सामाजिक रूप, यानि, समाज में क्रियान्वित होती है। मानव इतिहास में समाज का स्वरूप भिन्न-भिन्न-गण, कबीला, सामन्ती राज्य तथा औद्योगिक-रहा है। प्रत्येक सामाजिक स्वरूप अपनी सामाजिक व्यवस्था (संवैधानिक और कानूनी सिद्धान्तों से गठित) की वजह से भिन्नता रखता है, यह स्वरूप ही उस समाज का आधार या भिन्नता का पहलू बनता है।

आज मानव समुदाय विश्व कारपोरेट व्यवस्था में रह रहा है जो बहुत सारे राष्ट्रीय राज्यों के संगठन के माध्यम से संचालित है। ये सभी अपने सोच, कार्यप्रणाली और संगठन में उन्हीं कारपोरेट सिद्धान्तों को मानते हैं। इनमें जो अन्तर है वह केवल क्षेत्रीय और जनसंख्याओं की भिन्नताओं से सम्बन्धित है। सामाजिक स्तर पर ये कारपोरेट व्यवस्था के विचार, राजनीति, आर्थिकता, संस्कृति और सुरक्षा के तरीकों का अनुसरण करते हैं। कोई भी ऐसी मानव गतिविधि, जीवन शैली या जीवन पद्धति नहीं होती जो सम्बन्धित सामाजिक व्यवस्था से स्वतंत्र या अलग हो।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मौजूदा कारपोरेट व्यवस्था वर्तमान भयानक संकट का आधार है जिसने दुनिया को हिला रखा है। इस आधार की खामी आवश्यकता है कि इसे उपर्युक्त व्यवस्था के चहुंमुखी आयामों–यानि समाजशास्त्रीय धारणाओं, व्यवस्थागत उसूलों, संचालक मानदण्डों और ऐतिहासिक अनुभव–की रोशनी में समुचित विवेचित किया जाए।

समाजशास्त्रीय दोष

बुनियादी समाजशास्त्रीय दोष एडम स्मिथवादी तथा मार्क्सवादी विकास मॉडलों (ये दोनों ही मॉडल विश्व के विभिन्न भागों में चल रही राष्ट्रीय राज्य व्यवस्था, जो अब पीछे हट रही है के दो प्रामाणिक विकास पद्धतियों के रूप में कार्यरत रही है) की एक तरफा दार्शनिक समझ में निहित है। यह एकतरफा समझ है कि अपने उपग्रह पर और यहाँ तक कि ब्रह्माण्ड में प्रकृति की व्यवस्था में मनुष्य सर्वश्रेष्ठ घटनाक्रम है। स्पष्टत: यह लोगों को मानव समाज और इसकी प्रत्येक वस्तु का एकमात्र निर्माणकर्त्ता पेश करता है। यह इस सामाजिक सच्चाई को दरकिनार करता है कि मानव समाज में परिवर्तन और विकास दो तरफा अन्तरक्रिया–एक तरफ प्रकृति और मानव समाज के बीच और दूसरी तरफ मानव समाज के अन्दर–अन्तरक्रिया से होता है।

दूसरी मूल समाजशास्त्रीय गलती मानव प्रकृति के संबंध में एडम स्मिथ और मार्क्सवादी विकास मॉडल की एक तरफा समझ में निहित है। एडम स्मिथ का आर्थिक सिद्धान्त मनुष्य की प्रकृति के प्रश्न पर दिग्भ्रमित धारणा रखता है। प्रथम, मनुष्य की प्रकृति सामाजिक है इस पर जोर देता है और अगले ही क्षण निरपेक्ष सामाजिक होने के गुण को औद्योगिक सर्वहारा (जो इस सिद्धान्त के अनुसार मानव समाज का मुक्तिदाता है) में तब्दील कर देता है और अन्तिम तौर पर सामाजिक चरित्रता के समस्त एकाधिकार को कम्युनिस्ट पार्टी में निहित कर देता है। इस दृष्टिकोण के तहत मानव समाज को सामाजिक तौर पर तब्दील करने की क्षमता अकेली कम्युनिस्ट पार्टी में ही समझता है।

वास्तव में, तथापि मानव समुदाय का दुतरफा चरित्र है, एक तरफ जैविक चरित्र और दूसरी तरफ सामाजिक चरित्र। जैविक चरित्र का पहलू मानव समुदाय के व्यक्तिगत अस्तित्व को प्रतिबिम्बित करता है, जबकि सामाजिक चरित्र का पहलू उसके सामाजिक जीवन, कार्यशैली और संगठन को इंगित करता है।

व्यवस्थागत दरार

इस समस्या की बुनियादी व्यवस्थागत दरार कॉरपोरेट व्यवस्था के विकास मॉडल की अधिकतम लाभ की अधिकतम वृद्धि दर को हासिल करने के एकमात्र उद्देश्य से पैदा होती है। उदारवादी और मार्क्सवादी दोनों धारणाएँ यह स्वीकार करती हें कि सामाजिक सम्पन्नता और प्रगति को जाँचने का एकमात्र मापदण्ड वृद्धि दर है। अधिकतम वृद्धि दर पाने की अपनी खोज में इन दोनों ने पर्यावरण और मानव इतिहास के पहलुओं को बर्बादी के कगार पर ला खड़ा किया है।

द्वितीय, सामाजिक सम्पन्नता और प्रगति को मापने का एकमात्र मापदण्ड मौद्रिक वृद्धि को मानने का सार्वभौम स्वीकृत नियम सबसे अधिक नुकसानदेह व्यवस्थागत दरार है। सामाजिक उन्नति के पहलू को रुपया-पैसा के रूप में परिभाषित करने से धन बटोरने की मुनष्य की महत्त्वकांक्षा को अत्यधिक प्रज्वलित किया है। यह आज के तथ्यों के मद्देनजर स्पष्ट है कि लगभग प्रत्येक मनुष्य की मुख्य प्रेरणा रुपया-पैसा बन गया है जो उसके परिप्रेक्ष्य, मानसिकता, उद्देश्य, प्राथमिकता तथा साधन और तरीके को तय करता है।

तब धन और सत्ता अधिकतम स्वहित का प्रतिनिधित्व करती है, पूरी दुनिया अब इन दो 'जीवनदायी अमृत' के पीछे भाग रही है। धन और सत्ता पाने का यह व्यापार (अधिकतम गैर-टिकाऊ, पर्यावरण व्यवस्था और उच्चतम असमान व अन्यायपूर्ण मानव व्यवस्था लाकर) अब दुनिया को गम्भीरतम पर्यावरणीय और मानवीय बर्बादी के कगार पर ला खड़ा किया है।

वास्तव में, स्व-हित पशु जगत का बुनियादी स्वभाव है, जबकि मनुष्य जबसे होमोसेपियन के रूप में प्रादुर्भाव हुआ, तब से उसकी प्रकृति जैव-सामाजिक है। अर्द्ध सामाजिक होने का उसका एकमात्र गुण मनुष्य प्रजाति को पशु प्रजाति से भिन्नता प्रदान करता है। जब मनुष्य में सामाजिक पहलू नहीं रहता, तब उसकी जीवन शैली एक पशु के रूप में बदल जाती है।

परिचालन दोष

प्रमुख परिचालन दोष का सम्बन्ध कॉरपोरेट व्यवस्था की संचालन एजेन्सी या सरकार से है। एकमात्र निजी हित की स्थायी धारणा के निर्देशन के तहत राष्ट्रीय सरकारों

(प्रत्येक देश में पार्टी व्यवस्था पर आधारित) के नेतागणों का मुख्य ध्यान अपने लिए सही या गलत किसी भी तरीके से धन बटोरने और लगातार सत्ता अपने हाथों में रखने में लगा रहता है और जनहित या अन्य पर्यावरणीय जैविक मुद्दों पर कोई गौर नहीं करता है। उनकी खास जीवन शैली कहना कुछ और कहना कुछ की है। वे हमेशा गरीबों और वंचितों के लिए आँसू बहाते हैं, परन्तु हर समय अमीर और प्रभुत्वशाली लोगों का हित साधते हैं।

उपर्युक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि जब तक वर्तमान कॉरपोरेट व्यवस्था और इसके विकास के पैमाने के स्थान पर टिकाऊ, न्यायपूर्ण और समता के मॉडल को न लाया जाए, तब तब असमानता और गरीबी की अत्यधिक खतरनाक सामाजिक चुनौती को प्रभावी उत्तर देने की क्षीण सम्भावना रहती है।

विश्व कारपोरेट व्यवस्था का ऐतिहासिक अनुभव

मौजूदा पर्यावरणीय जैविक संकट की जड़ विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था कैसे है, यह इसके 200 वर्ष पुराने और वर्तमान इतिहास (जो औद्योगिक क्रांति के शुरू होते हुए विकास के विभिन्न दौरों से गुजरते हुए–औद्योगिक, प्रतियोगी, उपनिवेश, उपनिवेश के बाद का काल–अब वैश्विकरण के दौर में प्रवेश कर चुका है) से जाना जा सकता है।

प्रथमतया, यह (यानि कारपोरेट इतिहास) कारपोरेट विकास मॉडल की गैर-टिकाऊ कार्यविधि को दर्शाता है–यह एकतरफ पर्यावरणीय स्रोतों को दुरुपयोग और बर्बाद करता है और दूसरी तरफ मानव संसाधनों के साथ अमानवीय व्यवहार करता है। आज इसका परिणाम पर्यावरणीय संसाधनों के क्षीण होने और मानव संसाधनों के दरिद्र होने में निकला है–इस प्रकार हमारे ग्रह के अति गम्भीर पर्यावरणीय-जैविक संकट का कारपोरेट व्यवस्था कारण है।

द्वितीय, यह मानव समाज में प्रेरक शक्ति के तौर पर निजी हित के समाजशास्त्र को आगे लाता है। इसने चारों और निजी हित की प्रेरणा को उत्पन्न किया है-इस प्रकार व्यक्तिगत लालच और लाभ के रूझान को अधिकतम हद तक बढ़ाया है तथा सामाजिक हितों की अन्य मानवीय सहज स्वभाव को नकारा है।

तृतीय, यह हर समय और हर जगह समाज में स्थायित्व, सुरक्षा और व्यवस्था को बनाए रखने के लिए 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाले एकमात्र सामाजिक सिद्धान्त को अपनी राजनीति के रूप में पेश करता है। इस प्रकार यह सही या गलत हर कीमत पर सत्ता प्राप्त करने की मानसिकता पैदा करती है जो राजनीतिक प्रक्रिया को अपराधीकरण की ओर ले जाती है। आगे, 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' की राजनीति व्यक्ति और समाज में टकराहट, झगड़े और युद्ध की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करती है। यह कमजोर पर ताकतवर के प्रभुत्व के सामाजिक वातावरण का निर्माणक करती है–इस प्रकार अपने विश्व प्रभुत्व स्थापित करने का आधार तैयार किया जाता है।

चतुर्थ, यह सामाजिक विकास का केवल मात्र निर्धारक अधिकतम मुनाफे का मूलभूत आर्थिक सिद्धान्त को प्रतिपादित करता है, इस प्रकार सभी सामाजिक हितों और समबन्धित विषयों, जिसमें पर्यावरणीय, सामाजिक न्याय, निष्पक्षता, गुणवत्ता, उदारता आदि शामिल हैं-की उपेक्षा करता है। आगे निजी हित के समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के साथ एकमात्र अधिकतम लाभ पाने के साथ जुड़कर दुनिया में मुख्यतौर पर भ्रष्टाचार और चरित्र बिगाड़ने के साधनों के जरिए सभी जगह धन हथियाने की होड़ को गति प्रदान की

है। धन हथियाने के व्यापार में कारपोरेट क्षेत्र की भूमिका दुनिया की चोटी की बहुराष्ट्रीय कम्पनियों, विशेष तौर पर अमेरिका आधारित कम्पनियों के हाल ही उजागर हुए मामलों में देखा जा सकता है।

पंचम, यह सभी दोगले व्यवहार के मूल्यों, 'जैसे कहना कुछ और करना कुछ' को स्वीकृति प्रदान करता है तथा बाजार के नियमों और सत्ता के ढाँचे की जरूरतों के नाम पर इनको उचित ठहराता है।

षष्टम, यह सभी प्रकार की रूढ़िवादी धारणाओं और तकनीक उपयोग लेता है जो यद्यपि इसके राजनीतिक और आर्थिक उद्देश्यों को बल प्रदान करने में सहयोग करते हैं तथापि संकीर्ण एवं अतिवादी धाराओं से लोगों में फूट डालते हैं।

अन्त में, परन्तु बहुत महत्वपूर्ण, कारपोरेट आधारित टिकाऊ विकास मॉडल टिकाऊ विकास की बहुआयामी प्रक्रिया को नजरअंदाज करता है। कारपोरेशन्स को दुनिया के पर्यावरणीय व मानवीय संसाधनों को छलयोजित और शोषित करने का रास्ता मुहैया करता है–इस प्रकार पर्यावरणीय-जैविक संकट खतरनाक बिन्दु पर पहुँच गया है।

IV पर्यावरणीय-जैविक संकट का एक हकीकी प्रत्युत्तर

एक प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यकम के आधार पर इसे पुनर्गठित करने में निहित

वर्तमान पर्यावरणीय-जैविक संकट का कारण विश्व कारपोरेट व्यवस्था को बताते हुए इसका (यानि संकट का) वास्तविक प्रत्युत्तर यह है व हो सकता है कि इसे एक प्रकृति मानव केन्द्रित कार्यक्रम के आधार पर विश्व कारपोरेट व्यवस्था को पुनर्गठित (या आधुनिक) किया जाए, जिसके निम्न बिन्दु हैं–

दृष्टि : हमारे ग्रह की अखण्ड एवं अन्तरनिर्भर प्रकृति तथा 21 वीं सदी की राष्ट्र-राज्य की अन्तरनिर्भर सामाजिक वास्तविकता, प्रकृति-मानव केन्द्रित प्रतिमान एक विश्व की दृष्टि प्रदान करता है। जबकि 1945 का संयुक्त राष्ट्र चार्टर सम्प्रभुता व स्वतंत्र राष्ट्र की ऐसी दृष्टि देता है जो वर्तमान वास्तविकता के उलट है।

मूलभूत सिद्धान्त : ऊपर वर्णित दृष्टि के मूलभूत सिद्धान्त में सर्वप्रथम लोगों एवं पर्यावरण को ग्लोबल क्रियाकलापों के केन्द्र में रखा जाना चाहिये यानि एक तरफ लोगों के हितों की सेवा करना तथा दूसरी तरफ पर्यावरण को संरक्षित करना।

विश्व व्यवस्था : प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टि के मूलभूत सिद्धान्त तथा पर्यावरण-मानव प्राथमिकता मांग करती है कि संयुक्त राष्ट्र एक जनवादी आधारित तरीके एवं संगठन के रूप में पुर्नगठित हो। लेकिन संयुक्त राष्ट्र जैसा आज है, इस गुण की कमी रखता है। संयुक्त राष्ट्र की साधारण सभा का ढांचा व कार्यप्रणाली बिल्कुल लोकतांत्रिक है। लेकिन इसकी शीर्ष निर्णयकारी इकाई अर्थात् सुरक्षा परिषद जो अत्यधिक अनुचित तथा पूर्णरूपेण अप्रजातांत्रिक कायदों–जैसे सैनिक दृष्टि से सबसे ताकतवर देशों के लिए स्थायी सदस्यता व विशेष वीटो पावर–से चरित्रित है।

स्पष्ट तौर से, इस वक्त, इस संगठन के पूर्ण लोकतांत्रिकरण की किसी भी तरह की कोशिश को पांच सदस्यीय सुविधा क्लब के भारी विरोध का सामना करना पड़ेगा। इसलिए वर्तमान ग्लोबल शक्तिसंतुलन को ध्यान में रखते हुए यह दिखता है कि सुरक्षा परिषद का पूर्ण जनवादीकरण में कुछ और समय लगेगा। थोड़े समय के लिए जब तक चल रहे शक्ति संतुलन में परिवर्तन हो तब तक स्थायी सदस्यता का नियम रखते हुए

विशेष वीटो-पावर का नियम हटा लेना चाहिए। सुरक्षा परिषद की बाकी सभी सीटें साधारण सभा द्वारा चुनाव के जरिए भरी जानी चाहिये।

धनवान देशों का अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष व विश्व-बैंक के ऊपर से नियंत्रण कम हो तथा सबसे गरीब देशों को विश्व व्यापार संगठन में अधिक अधिकार दिये जाय।

विकास मॉडल : जन-पर्यावरण प्राथमिकता का मूलभूत सिद्धान्त (जो मानव विकास के लिए अनिवार्य है) एक नये प्रकार का विकास मॉडल की मांग करता है। जो पांच स्तरीय बुनियादी सिद्धान्तों यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता (1:5 की आय भिन्नता के साथ), उत्पादकता, लोकतांत्रिक और पारदर्शिता पर टिका है। ये पांच स्तरीय बुनियादी सिद्धान्त मानव के जैव-सामाजिक चरित्र से मेल खाते हैं, अर्थात यह मनुष्य के स्वहित को सामाजिक हित से जोड़ता है।

जन-पर्यावरण आधारित विकास मॉडल दो रूढ़ीवादी राष्ट्रीय विकास मॉडलों यानि निगम चलित और सरकार निर्देशित की तुलना में विकास की समयानुकूल धारणा प्रस्तुत करता है। निगम चलित विकास मॉडल केवल लाभ या उत्पादकता (जो केवल धन के स्वामियों का हित सुरक्षित करता है) को एक मात्र लक्ष्य बनाता है जबकि सरकार निर्देशित मॉडल उत्पादन के साधनों का एक मात्र उद्देश्य समाजीकरण (या राष्ट्रीयकरण) को चुनता हैं। (जो शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के हितों की सेवा करती है।) ये दोनों पारम्परिक राष्ट्रीय मॉडल मनुष्य के जैव-सामाजिक चरित्र के उलट केवल स्वहित को ही पूरा करते हैं, जैव-सामाजिक चरित्र स्वहित और सामाजिक हित दोनों को जोड़ता है। फिर, वे पर्यावरण को कोई प्राथमिकता नहीं देते और आर्थिकता अथवा विकास प्रक्रिया में लोकतंत्र और पारदर्शिता के मानदण्डों के पालन को कोई स्थान नहीं देते हैं, आगे जबकि कारपोरेट (निगमित) मॉडल समता (अथवा सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया अस्वीकार करता है वही सरकार निर्देशित मॉडल राजनीतिक समानता और उत्पादकता को पूर्णतया नकारता है।

यह मॉडल कॉरपोरेट चलित और राज्य आधारित दोनों विकास मॉडलों से उनके उद्देश्यों, प्रबंध और शैली के मामलों में भिन्नता रखता है।

जबकि कॉरपोरेट मॉडल पूंजी एवं पूंजी के मालिकों को विकसित करने के लिए और राज्य मॉडल इसके शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के साथ मजदूर कुलीनता के हितों को आगे बढ़ाता हैं, प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आमतौर पर लोगों और पर्यावरण के हितों की तथा खासतौर पर गरीबों और वंचित तबकों की सेवा पर आधारित हैं।

प्रबंध में जबकि कॉरपोरेट सेक्टर एकाधिकारवादी कॉरपोरेट प्रबंध एवं नियंत्रण का पक्षपोषण करता है और राजकीय क्षेत्र एकाधिकारवादी अफसरशाही प्रबंध एवं नियंत्रण का समर्थन करते हैं, प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल में स्थायी कॉरपोरेटरों की जगह संयुक्त कमेटियों द्वारा चुनी गयी पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों द्वारा लोकतांत्रिक प्रबंध एवं नियंत्रण की मान्यता है। प्रत्येक संयुक्त कमेटी के 2/3 सदस्य साधारण शेयर धारियों द्वारा चुने हुए तथा 1/3 सदस्य मजदूरों द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि आधारित है।

शैली में, अधिकनायकवादी और गोपनीय कॉरपोरेट एवं राजकीय शैली के उलट प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल लोकतांत्रिक पारदर्शिता और जवाबदेही की शैली पर आधारित है।

विश्व शांति और सुरक्षा : एक प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल को सर्वप्रथम स्थायी और टिकाऊ शांति एवं सुरक्षा की आवश्यकता है। इस प्रकार की शांति की स्थापना के लिए यह जरूरी है कि प्रभुत्व, विशेषाधिकार एवं विशेष शक्तियों की राजनीति को छोड़ा जाये, परमाणु शस्त्रों पर पूरा नियंत्रण संयुक्त राष्ट्र का करके पूर्ण निशस्त्रीकरण द्वारा टकराव और सैनिक समाधान की नीति को समाप्त किया जाये, राजनीतिक, आर्थिक तथा विकसित एवं विकासशील देशों के बीच विकास का फर्क एवं अमीर और गरीब के बीच खाई को हटाया जाये।

राजनीति : प्रकृति-मानव केन्द्रित राजनीति को एक ऐसी राजनीति की आवश्यकता है जो पूर्ण लोकतांत्रिक सिद्धान्तों, गतिविधियों और ढांचे पर आधारित हो। इस प्रकार की राजनीति संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था में विशेष वीटों शक्तियों के कानून को समाप्त करे और निर्णय लेने में लोगों का अधिकतम् संभव शक्तिकरण को सुनिश्चित करे तथा पार्टी-केन्द्रित शक्ति का आवश्यक मात्रा में कमी करे।

आर्थिकता : प्रकृति-मानव केन्द्रित आर्थिकता एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता की मांग करती है, जिसकी धारणाएं, कानून और नियम पहले बताये गये 2 उच्च प्राथमिकताओं (यानि मानव और पर्यावरण) तथा 5 सिद्धान्तों (यानि पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, लोकतंत्र तथा पारदर्शिता) की रोशनी में बनाये जाने की आवश्यकता है। मानव की जैव-सामाजिक प्रकृति के मध्यनजर, दोनों, एडम स्मिथ का 'स्वहित' मूलभूत आर्थिक सिद्धान्त और मार्क्स का प्रत्येक चीज का राज्य राष्ट्रीयकरण का बुनियादी आर्थिक नियम, एकतरफा है। लेकिन विडम्बना है कि दोनों मॉडल विकास, समृद्धि और उन्नति को मौद्रिक वृद्धि के रूप में मापते हैं न कि मानव और पर्यावरण विकास के सन्दर्भ में।

मूल्य व्यवस्था : प्रकृति-मानव केन्द्रित मूल्य व्यवस्था एक ऐसे जीवन के तरीके (या जीवन शैली) की मांग करती है जो बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों में समाहित करे और लोगों में तर्क संगत मानवतावादी एवं पर्यावरणवादी सोच, व्यवहार व संगठन को बढ़ावा दे।

अवधारणा : प्रकृति-मानव केन्द्रित अवधारणा को वैज्ञानिक वास्तविकतावाद पर आधारित होना चाहिये जो प्रकृति के घटनाक्रम का अध्ययन एवं व्याख्या वैज्ञानिक तथ्यों की रोशनी में तथा सामाजिक घटनाक्रमों का अध्ययन एवं व्याख्या मान्यता प्राप्त सूचना एवं आकड़ों के आधार पर करता है।

उपर्युक्त कार्यक्रम हमें न केवल इस योग्य बनाएगा कि पर्यावरण और मानव संसाधनों के मामलों में कारपोरेट बदइन्तजामी से पैदा हुई चुनौतियों से निपट सकें, बल्कि भविष्य में उनके उचित उपयोग का रास्ता भी दिखाता है।

V भारत के गैर टिकाऊ सामाजिक व्यवस्था को प्रकृति–मानव हितैषी आधार पर पुनर्गठित करने की आवश्यकता

21 वीं सदी के पहले दशक में भारत जैसे-जैसे आगे बढ़ रहा है लोगों का मिजाज पहले की तरह उदासी और हताशा लिए हुए है। स्पष्टतया, इस प्रकार का मिजाज हमेशा लोगों की इस अवधारणा में निकलता है कि भविष्य अनिश्चित है जो (यानि, भविष्य के बारे में अवधारणा) चल रहे मामलों में अव्यवस्था से उभरती है।

भारत के चल रहे मामलों की एक गड़बड़ अवस्था

यह प्रथमतया, दिन-प्रतिदिन की जन समस्याओं (या ढाँचागत सुविधाओं) के कुप्रबन्ध से स्पष्ट है–ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में पीने के पानी की गुणवत्ता और मात्रा का घटते जाना, गाँवों और कस्बों में सफाई का विकराल परिदृश्य, बिजली कटौती और इसकी अनियमित आपूर्ति और कभी-कभी इसकी गैर उपलब्धता का होना, सड़कों के जीर्ण-शीर्ण हालात, यातायात जाम होना, गाड़ियों का लेट होना और यहाँ तक कि वायु सेवाओं का देरी से चलना, पैसा बनाने, सत्ता हड़पने और निजी स्वार्थ की एकमात्र प्रेरणा पैदा करती शिक्षा की विकृति, स्वास्थ्य सेवाओं की बढ़ती कीमतें, गरीबों और वंचितों को स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध नहीं होना, संचार और डाक व्यवस्थाओं की खराब हालत होना, रोजाना बढ़ रहे प्रदूषण से लोगों का स्वास्थ्य खराब होना, अस्वच्छता, खाद्य-मिलावट, घटिया दवाइयाँ, गैर-कानूनी दारू आदि।

द्वितीय, इसे जिन्दगी के हर पहलू में सब जगह भ्रष्टाचार के रूप–यानि, राशन कार्ड या गैस सुविधा पाने में, पानी, बिजली और टेलीफोन कनेक्शन, हॉस्पीटल, स्कूल, कॉलेज और व्यावसायिक संस्थाओं में भर्ती, दुकान या घर किराये पर लेना, रेलवे में आरक्षण, महत्वपूर्ण विचार गोष्ठी, प्रदर्शनी, टेस्ट मैच, सिनेमा, संगीत या नृत्य-प्रदर्शन इत्यादि के लिए टिकट खरीदना केवल मात्र गैर कानूनी (या ब्लैक) तरीके से ही सम्भव हो सकता है–में देखा जा सकता है। घटिया माल, कम तौल और कीमतों का जारी रहना, अनियत्रित झूठे रोजगार दफ्तर, मिथ्या विश्वविद्यालय, नकली नोटों का व्यापार, हवाला, प्रतिष्ठान तथा झूठी पासपोर्ट और वीजा एजेन्सियां, चिट फण्ड कमपनियां बेरोकटोक चल रही हैं। कर चोरी, धन हथियाना, तस्करी, नशीली दवाओं का व्यापार, विदेशी व्यापार की छल योजना, काले धन का विदेशी बैंको में हस्तान्तरण, बैंकों में धोखाधड़ी, प्रतिभूति घोटाले, शेयर बाजार जालसाजी, हथियार, हेरोईन और सोने की तरस्करी, सीमा और हवाई अड्डो पर सुरक्षाकर्मियों की मिलीभगत से घुसपैठ, आदि धड़ल्लै से चल रहे हैं। भ्रष्टाचार भारत के शासन का आम तरीका बन चुका है। गैर कानूनी पारितोषण (तुष्टीकरण) के बिना देश में कुछ भी आगे चलता नहीं है।

तृतीय, भारतीय अर्थव्यवस्था में काले धन का पैदा होना भी भ्रष्टाचार का सबूत है। यह सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 60 प्रतिशत भाग बनता है और यह भारत की जनसंख्या के लगभग 3 प्रतिशत लोगों के हाथ में संकेन्द्रित है जिससे वह भारतीय लोगों की खरीद शक्ति को निचोड़ते हुए उन पर एक भारी बोझ बन गया है।

चतुर्थ, भारत का मानव विकास रिकार्ड वंचितपन के भारी स्तर और जीवन के अवमानवीय स्तर को दर्शाता है। विश्व बैंक, यू.एन.डी.पी. और भारत सरकार द्वारा प्रसारित आंकड़ों के आधार पर संकलित मानव विकास की अवस्था निम्न रूप से उभरती है, 62 प्रतिशत लोग गरीब की श्रेणी में आते हैं। लगभग 40 प्रतिशत लोग निहायत गरीबी का जीवन बसर कर रहे हैं। 40 प्रतिशत लोगों को आधारभूत स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध नहीं है। 75 प्रतिशत लोगों के लिए समुचित शौच व्यवस्था नहीं है। 10 प्रतिशत लोग शहरी झुग्गी झोपड़ियों में रहते हैं। 48 प्रतिशत लोग पूर्णतया अनपढ़ हैं। 5 प्रतिशत लोग बेरोजगार और 33 प्रतिशत लोग अर्द्ध रोजगार शुदा हैं। लगभग 12 प्रतिशत भूमिहीन हैं जो सबसे गरीब तबका है। 53 प्रतिशत से अधिक बच्चे, बुनियादी और गुणात्मक शिक्षा

के अधिकार से वंचित रहते हैं। करीब 75 प्रतिशत महिलाएं किसी न किसी रूप में दमन से पीड़ित हैं।

पंचम, यू.एन.डी.पी. रिपोर्ट (1999) के अनुसार भारत की पर्यावरणीय कारगुजारी बहुत खराब है। इसके अनुसार भारत अपने विकास की प्रक्रिया के लिए शायद भारी कीमत चुका रहा है। यह प्रक्रिया पर्यावरणीय बर्बादी और बहुत सी स्वास्थ्य की समस्याएँ पैदा कर रही हैं। पर्यावरण के नुकसान का एक अनुदार अनुमान 10 बिलियन डालर से अधिक प्रतिवर्ष या 1992 में सकल घरेलू उत्पाद का 4.5 प्रतिशत का आंकड़ा प्रस्तुत करता है। यदि उदार अनुमान काम में लिया जाए, तो भारत का विकास मॉडल 13.8 बिलियन डॉलर या सकल घरेलू उत्पाद का 6 प्रतिशत नुकसान का कारण बन रहा है।

उक्त रिपोर्ट आगे जोड़ती है कि शहरी वायु प्रदूषण की वजह से स्वास्थ्य पर लगने वाला खर्चा 5.7 डालर प्रतिवर्ष है, जो लगभग सम्पूर्ण पर्यावरणीय नुकसान का 3/5 भाग है।

भारतीय सरकारी आंकड़ों के अनुसार कुल 143 मिलियन हेक्टेयर जोती जाने वाली भूमि में से करीब 60 प्रतिशत भूमि रक्षण, सेम और लवणता से ग्रसित है। अन्य 16 मिलियन हेक्टेयर भूमि खड्ड, दर्रों और नदी-नालों वाली है।

षष्टम, भारत की आर्थिक कार्यविधि इतनी खराब है कि दुनिया की आबादी का 1/6 भाग होते हुए भी यह अपनी अपर्याप्त कारगुजारी के आधार पर सभी अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं और विकसित राष्ट्रों द्वारा एक निम्नतम विकासशील देश माना जाता है।

सप्तम, भारत की राजनीतिक-प्रक्रिया का उद्देश्य पैसा बनाना और सत्ता हासिल करना है जिसे मानव जीवन के एकमात्र लक्ष्य के रूप में देखा जाता है। यह लक्ष्य हर कीमत पर हासिल करना और कायम रखना चाहे इसके लिए जैसे-तैसे करना पड़े। सभी भारतीय राजनीतिक इकाइयां–यानि, राजनीतिक पार्टियां, कार्यपालिका और विधायिका–अपनी-अपनी निर्णय प्रक्रियाओं और कार्य-योजनाओं में इस लक्ष्य के प्रति निष्ठापूर्वक चिपकी हुई है। जबकि इस लक्ष्य को सभी अनुचित साधनों–यानि, भ्रष्टाचार, दोगलापन (यानि कहना कुछ करना कुछ) और बाहुबल (जो माफिया के रूप में गठित है)–से हासिल करना।

अष्टम, व्यवहार में भारत के व्यवस्थागत मानदण्ड निर्णयकारी प्रक्रिया में पैसा और धन पर जोर देने वाली कारपोरेट संस्कृति से प्रेरणा पाते हैं, इन्हें बुनियादी आधार मानते हैं तथा इनको हासिल करने के लिए बेईमान तरीकों को बढ़ावा देते हैं।

नवम, भारत की रक्षा और कूटनीति, यद्यपि गांधीवादी अहिंसा का झण्डा लहराती है जबकि हमेशा अपने विदेशी मामलों में बन्दूक की राजनीति का अनुसरण करती है। बन्दूक का दृष्टिकोण तर्कसंगत तौर पर सैनिकीकरण और प्रभुत्व के अपने सारतत्त्व को अख्तियार करता है। यह इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि पिछले 5 दशकों में सुरक्षा खर्च देश की उच्चतम प्राथमिकता रही है।

दशम, भारत का न्यायिक प्रशासन पुरातन कानूनों पर आधारित है जो अमीरों के पक्ष में है और गरीबों के खिलाफ है। न्याय के उचित प्रशासन के लिए पहली शर्त है कि सामाजिक तौर पर न्यायिक और प्रासंगिक कानूनों की रोशनी में न्याय दिया जाए। परन्तु भारतीय विधि निर्माण इस गुण में कमजोर है जो खामियों से भरा पड़ा है। इसने उन

अवांछित तत्वों को माकूल हालात प्रदान किए हैं जो पुलिस और न्यायपालिका के पदों में घुसपैठ करके अपनी सुविधा के मुताबिक कानूनों को तोड़-मरोड़ कर लेते हैं। यह परिस्थिति अपराधियों और उनके सलाहकारों को अपने पक्ष में बचाव के रास्ते ढूँढने में कामयाब करके न्याय की प्रक्रिया को कमजोर करती है।

त्रुटिपूर्ण कानूनों के अलावा हजारों पुरातन और अप्रचलित नियमों-कानूनों और प्रक्रियाओं ने इस क्षेत्र को एक जटिल जंगल बना दिया है। कुल 2500 केन्द्रीय कानूनों में से पुराने पड़ चुके 1300 कानून और कुल 25000 राज्य कानूनों में से करीब 15000 राज्य कानून गैर उपयोगी हैं जो केन्द्र और राज्य के ऑफिसों में भ्रष्टाचार का स्त्रोत बन चुके हैं– इस प्रकार ये कानून लोगों के मामलों का निपटारा करने में भारी बाधा बने हुए हैं।

न्याय प्रदान करने की धीमी न्यायिक प्रक्रिया जिसमें न्यायालय के सामने 3 करोड़ मामले विचारधीन पड़े हैं। यह लोगों को न्याय से वंचित रखने का एक दूसरा तरीका मात्र है।

न्याय की लम्बी प्रक्रिया जिसमें अन्तहीन थका देने वाली अपीलों की प्रक्रिया में मुकदमा लड़ने वाला (खासकर पीड़ित) पक्ष अत्यधिक महँगी प्रक्रिया के कारण न्याय से वंचित रहता है।

त्रुटिपूर्ण विधि निर्माण, देरी से प्राप्त न्याय तथा मँहगे न्याय की समस्या उतनी ही पुरानी है जितनी भारत की आजादी। बहुत से आयोगों और समीतियों ने बहुत सी सिफारिशें की हैं और उपचार के तरीके बताए हैं, परन्तु समस्या और बढ़ी ही है।

मामले गलत क्यों होते गए

पहला कारण भारतीय राष्ट्रवाद के गलत दृष्टिकोण में निहित है जो देश के अन्दर बहुसंख्यक राष्ट्रवाद अपनाता है और बाहर प्रभुत्ववाद लगाता है।

द्वितीय कारण भारत की सामाजिक व्यवस्था का केन्द्रीकृत और जवाबदेह नहीं होने में है।

तीसरा कारण भारत के कारपोरेट आधारित विकास मॉडल में निहित है जो अमीरों का पक्ष लेता है तथा गरीबों और वंचितों का दमन करता है।

चौथा कारण राजनीतिक पार्टियों और जनता का प्रेरणा स्रोत धन और सत्ता पाने के दृष्टिकोण में निहित है।

पांचवा कारण राजनीतिज्ञों की बेईमानी जीवन शैली है जो अपने चुनावी खर्च का झूठा हिसाब पेश करते हैं और माफिया सरदारों से छिपकर सौदेबाजी करते हैं। अपने पक्ष में नतीजे पाने के लिए धर्म, जाति की भावनाओं को उभारते हैं, लोगों से झूठे वायदे करते हैं, आया राम गया राम की राजनीति का अनुसरण करते हैं तथा आज कुछ और कल कुछ कहते हैं।

छठा कारण भारत की साम्प्रदायिक एवं जातीय नीतियों में निहित है जो लोगों में धर्म और जाति के नाम पर फूट डालती है।

सातवें कारण का आधार भारत की बन्दूक की राजनीति है जो सब जगह झगड़ा-फसाद पैदा करती है।

आठवां कारण भारत का पाकिस्तान से चिरस्थायी टकराहट विशेष तौर से जम्मू-कश्मीर के प्रश्न में निहित है।

नवां कारण विभिन्न प्रकार के रूढ़िवादों–हिन्दुत्व, जातिवाद, मुक्त-बाजार विचारधारा, वर्ग आधारित क्रांति का सिद्धान्त, आदि–में निहित है।

हकीकत आधारित मामलों का प्रबन्धन

हकीकत आधारित मामलों के प्रबन्धन की समस्या मांग करती है कि भारत की कारपोरेट व्यवस्था को प्रकृति-मानव हितैषी आधार पर पुनर्गठित किया जाए। इसके लिए निम्न कदम उठाने की जरूरत हैं।

राष्ट्रवाद का नया दृष्टिकोण अपनाया जाए जो अन्तरनिर्भर राष्ट्रों की वर्तमान मूलभूत सामाजिक वास्तविकता पर आधारित हो तथा सभी पुरातन राष्ट्रीय दृष्टिकोणों यानि, गाँधीवादी, हिन्दुत्व और मण्डलवाद–को नकारती हो। इनमें से पहली दो धर्म निर्देशित है और तीसरी जाति आधारित है।

राष्ट्रीय कार्यक्रम में लोग एवं पर्यावरण दोनों को उच्चतम प्राथमिकता देने की मान्यता दी जाए।

सभी मामलों में विश्व शान्ति को अपनाया जाए तथा महाशक्तिवाद और टकराहट की राजनीति को नकारा जाए। सभी झगड़ों को सम्बन्धित पक्षकारों के हितों में मेल बैठाते हुए शान्तिपूर्ण तरीके से हल किया जाए, क्षेत्रीय तनाव बिन्दुओं को समाप्त किया जाए, सम्पूर्ण नि:शस्त्रीकरण किया जाए, परमाणु हथियारों का नियंत्रण संयुक्त राष्ट्र संघ को सौंपा जाए, अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं में कुछ देशों के विशेषाधिकार (या वीटो) समाप्त किया जाए, विभिन्न देशों के बीच समानता के सम्बन्ध स्थापित किए जाएं और कदम-ब-कदम विकासशील व विकसित देशों के बीच विकास की चौड़ी खाई को पाटा जाए।

जम्मू-कश्मीर समस्या को त्रिपक्षीय समझौते (भारत, पाकिस्तान और जेके के लोगों के मध्य) से हल किया जाए जिसमें जेके राज्य की सुरक्षा और विदेशी मामलों का प्रबन्धन भारत-पाक (या सार्क) सहराज्य को सौंपा जाए, जम्मू-कश्मीर को स्वतंत्र दर्जा (सुरक्षा और विदेशी मामलों के अलावा) दिया जाए तथा राज्य के नस्ली क्षेत्रों को अधिकतम सम्भव स्वायत्तता दी जाए। इसी प्रकार सार्क देशों के बीच अन्य तनाव बिन्दुओं को या तो द्विपक्षीय या सार्क रचनातंत्र के तहत हल किया जाए।

भारत में जन आधारित राजनीतिक व्यवस्था कायम करने के लिए निम्न कदम उठाए जाएं। भारत को संघीय-महासंघीय आधार पर राज्यों को संघीय दर्जा देकर और पंजाब को विशेष दर्जा देकर संगठित किया जाए। यह भारत में नस्ली, साम्प्रदायिक, जातीय और भाषायी तनावों को हल करने में मदद करेगा। मौजूदा झगड़ों को चाहे वे शान्तिपूर्ण हो या अशान्तिपूर्ण सभी को बातचीत के जरिए हल किया जाए। सभी संस्थाओं का पूर्ण लोकतान्त्रिकरण किया जाए। कानून की व्यवस्था को माना जाए तथा इसे लोक सशक्तिकरण के जरिए लागू किया जाए जो कदम ब कदम गांव स्तर से केन्द्रीय स्तर तक विकसित होगा। लोगों को सूचना का अधिकार हो और साथ ही राष्ट्रीय या प्रान्तीय मुद्दों पर जनमत संग्रह करवाने का अधिकार हो। कानून की व्याख्या करने का अधिकार न्यायपालिका में निहित हो। न्यायपालिका और विधायिका के बीच किसी कानून के बारे में कोई विवाद हो तो उसे जनमत संग्रह के जरिए तय किया जाए। वे सभी कानून जो विशेष अधिकार या विशिष्ट सुविधाएं लोगों के समूह या व्यक्ति (चाहे उसका दर्जा कुछ भी हो)

को दिए गए हैं, इन सबको हटाया जाए, सिवाय कमजोर और वंचित तबकों को दिए गए अधिकारों को छोड़कर। सभी सामाजिक और आर्थिक भेदभाव समाप्त किये जाएं। सभी स्तर के चुनावों पर खर्च राज्य द्वारा किया जाए। काला धन और बाहुबल से चुनावों को मुक्त रखा जाए।

विकास का उद्देश्य लोक हितैषी व पर्यावरण हितैषी होना चाहिए, यानि एक तरफ लोगों के हितों को बढ़ावा दिया जाए और दूसरी तरफ पर्यावरण की सुरक्षा की जाए। जनसंख्या नियंत्रण और पर्यावरण संरक्षण के कामों में लोगों को, विशेष तौर पर महिलाओं को शामिल किया जाय। यह विकास मॉडल पांच तरफा मूल सिद्धान्तों पर आधारित है यानि टिकाऊपर्यावरण, समता (आय में 1:5 के फर्क के साथ), उत्पादकता, लोकतंत्र एवं पारदर्शिता। यह पांच तरफा मूल सिद्धान्त मानवता के जैव-सामाजिक स्वभाव से मेल खाते हैं, यानि यह मनुष्य के निजी हित को उसके सामाजिक हित से जोड़ते हैं।

जन पर्यावरण आधारित विकास मॉडल दो परम्परागत राष्ट्रीय विकास मॉडलों-यानि, कारपोरेट नेतृत्व वाला एवं राज्य निर्देशित–के मुकाबले में विकास की आधुनिक धारणा का प्रतिनिधित्व करता है। कारपोरेट नेतृत्व वाला विकास मॉडल जहां लाभ या उत्पादकता (जो केवल धनाढ्य लोगों के हितों को सुनिश्चित करता है) को एकमात्र उद्देश्य के रूप में चुनता है, राज्य निर्देशित मॉडल अपना एकमात्र उद्देश्य उत्पादन साधनों का समाजीकरण (या राष्ट्रीयकरण) के रूप में चुनता है (जो मुख्यत: शासकीय राजनीतिज्ञों और अफरसरशाहों के हितों की सेवा करता है) ये दोनों परम्परागत राष्ट्रीय मॉडल मनुष्य जाति के केवल मात्र निजी हितों की सेवा करते हैं जबकि इसके विपरीत मानव का चरित्र जैव-सामाजिक है, यानि निजी हित और सामाजिक हित दोनों के मेल से बना है। पुन: ये पर्यावरण को कोई प्राथमिकता नहीं देते तथा आर्थिक प्रक्रिया या इसकी वृद्धि प्रक्रिया में लोकतांत्रिक या पारदर्शिता के मानदण्डों को कोई जगह नहीं देते। आगे, कारपोरेट मॉडल जहां पूर्णतया समता के सिद्धान्त (या सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया खारिज करता है वहां पर राज्य निर्देशित मॉडल राजनीतिक समता और उत्पादकता को पूर्णतया खारिज करता है वहां राज्य निर्देशित मॉडल राजनीतिक समता और उत्पादकता को पूर्णतया नजरअन्दाज करता है। यह मॉडल कारपोरेट नेतृत्व वाले और राज्य आधारित विकास मॉडल दोनों से उनके उद्देश्य, प्रबन्ध और शैली के बिन्दु पर भिन्न है।

जहां कारपोरेट मॉडल पूंजी और पूंजीपति के विकास का प्रतिनिधित्व करता है, वहां राज्य मॉडल उसके शासकीय राजनीतिज्ञों, अफसरशाहों व कुलीन श्रमिकों के हितों को बढ़ावा देते हैं, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आम तौर पर लोगों व पर्यावरण की तथा खास तौर पर गरीबों और वंचित तबकों की सेवा पर आधारित है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित मूल्य व्यवस्था ऐसी जीवन पद्धति (या जीवन शैली) की मांग करता है जिसमें बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्य समाहित हों तथा तर्कसंगत मानवता एवं पर्यावरणवादी सोच, व्यवहार और संगठन को लोगों के बीच बढ़ावा देता हो।

दुनिया में प्रत्येक देश के साथ शान्ति, सहयोग एवं मित्रता के आधार पर विदेशी सह-सुरक्षा नीति अपनाई जाए। दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सुरक्षा संगठित की जाए तथा जम्मू-कश्मीर समस्या के समाधान के बाद सुरक्षा खर्च में 50 प्रतिशत कटौती की जाए।

VI प्रत्येक बुनियादी सामाजिक परिवर्तन जन चेतना और भागीदारी पर आधारित जन आन्दोलन की मांग करता है

उपर्युक्त शीर्षक को एक पुरानी कहावत में सही तरीके से सार रूप में कहा गया है कि 'जैसी जनता वैसी सरकार।' इतिहास और समाज शास्त्र दोनों दर्शाते हैं कि कोई परिवर्तन या सामाजिक न्याय या निष्पक्षता किसी संविधान, संस्था, पार्टी या नेता के जरिए नहीं प्राप्त किया जा सकता तब तक कि ऐसे परिवर्तन की आवश्कता की चेतना सम्बन्धित लोगों में न हो। इस प्रकार किसी सामाजिक समस्या को हल करने का एकमात्र रास्ता लोगों के एक निश्चित स्तर तक जागृत होने में है। जहाँ यह लोगों की मानसिकता को सक्रिय व संगठित होने के लिए विकसित करती है।

वांछित स्तर तक जन जागृति बढ़ाने में आन्दोलनकारियों के लिए दो चीजें अत्यधिक आवश्यक हैं, यानि (क) अपने प्रकृति-मानव हितैषी कार्यक्रम के बारे में पर्याप्त समझ रखना (किसी भी प्रश्न का जवाब देने लायक) तथा (ब) सामाजिक चेतना, विशिष्ठ समस्याओं, राजनीतिक प्रतिबद्धताओं, सांस्कृतिक मूल्यों एवं हमारे निश्चित श्रोताओं, लक्षित सामाजिक समूह या व्यक्ति की प्रचलित मन:स्थिति के बारे में काफी ज्ञान होना।

यहाँ, दृढ़तापूर्वक दिमाग में रखना आवश्यक है कि वर्तमान जन चेतना का स्तर, आम तौर पर सामाजिक तौर पर सही और गलत का निर्णय लेने के लिए एक तीन तरफा गलत मापदंड अपनाता है, यानि धन, सत्ता एवं ताकत (मुख्य तीन आयामी कारपोरेट उद्देश्य)। इस संबंध में हमारा मुख्य कार्य उपर्युक्त अर्द्ध सत्य को प्रकृति-मानव हितैषी, मसलन, पर्यावरणीय टिकाऊपन,समता (आय में 1:5 के फर्क के साथ), उत्पादकता, लोकतंत्र एवं पारदर्शिता के 5 स्तरीय वास्तविक सिद्धान्तों से तुलना करके नकारना चाहिए। लेकिन यह लोगों से हमारी शृंखलाबद्ध अन्तरक्रिया करने के बाद हो पाएगा, उसमें कुछ समय लगेगा।

जहां तक जन जागृति की मुहिम का सवाल है, इसे उन सामाजिक समूहों के बीच शुरूआत करने की आवश्यकता है जो मौजूदा व्यवस्था द्वारा नजरअन्दाज किए गए हैं तथा जिनके हित प्रकृति मानव हितैषी कार्यक्रम से मेल खाते हैं। ये समूह मुख्य तौर पर है: गांव और शहर के गरीब, बेघर, बेरोजगार, विधवाएं, महिलाएं (जो गरीब तबके की हों), कामकाजी बालक, लड़कियां, अपंग, सफाई कर्मचारी, खेत मजदूर, बन्धक मजदूर, असंगठित मजदूर (जैसे निर्माण में लगे मजदूर, रिक्शा चालक आदि), जनजाति, कैदी, विचाराधीन कैदी, बूढ़े लोग (जिनकी देखभाल करने वाला कोई न हो), लंपट तत्त्व (जैसे कि भीखमंगे आदि), फैक्ट्री मजदूर, कार्यालय कर्मचारी, विद्यार्थी अल्पसंख्यक आदि। इन समूहों को मोटे तौर पर चार किस्मों में वर्गीकृत किया जा सकता है–(i) समूह-विशेष (ii) क्षेत्र-विशेष (iii) समस्या-विशेष और (iv) ट्रेड यूनियन विशेष।

किसी उपेक्षित लक्षित समूह का कार्यक्रम तैयार करते समय यह ध्यान रखना समान रूप से वांछित है कि इसके अन्य सम्बन्धित लक्षणों–यानि, राजनीतिक प्रतिबद्धता, सांस्कृतिक मूल्य, प्रचलित मन:स्थिति, आदि–पर ध्यान रखा जाए।

प्रत्येक लक्षित समूह की सामाजिक चेतना को जगाने के लिए यह आवश्क है कि हमारी उनसे बातचीत सरल एवं आसानी से समझ में आने वाली हो जो इन तीन पहलुओं–यानि, समूह-विशेष की समस्याओं की उपेक्षित स्थिति, प्रत्येक क्षेत्र और राज्य के लोगों

से सम्बन्धित मुख्य समस्याओं की बदइन्तजामी तथा आम तौर पर आम लोगों को एवं खास तौर पर लक्षित समूहों को राजनीति, विकास, संस्कृति व सुरक्षा के क्षेत्र में प्रकृति-मानव हितैषी कार्यक्रम कैसे सकारात्मक तरीके से प्रभावित करेगा–को जोड़े।

निर्धारित लक्षित समूहों के साथ कुछ अवसरों पर थोड़ी मुलाकातों के बाद अगला तार्किक कदम उनकी अपनी अगुवा टीम का चुनाव कराया जाना चाहिए, जिससे इन समूहों के बाकी बचे सदस्यों को और आगे लामबन्द करने का कार्य पूरा किया जा सके।

निश्चित स्तर पर सामाजिक जागृति और संगठन विकसित होने पर प्रत्येक लक्ष्य समूह से सम्बन्धित समस्याओं को सम्बन्धित अधिकारियों के समक्ष रखा जाना चाहिए तथा जनमत के दबाव का इस्तेमाल करते हुए उन समस्याओं को हल करवाया जाए। मुद्दों को उजागर करने के लिए तथा उनको हल करवाने के लिए हमारा रास्ता तर्कसंगत, शान्तिपूर्ण एवं सहयोगात्मक होना चाहिए।

जन आन्दोलन की कार्यशैली एवं संगठनात्मक ढाँचा इस कार्यक्रम के मूलभूत सिद्धान्तों एवं इसकी (यानि कार्यक्रम की) राजनीति, विकास मॉडल, संस्कृति एवं सुरक्षा क्षेत्र के पैमानों के आधार पर चुना जाना चाहिए।

प्रत्येक व्यक्ति को चाहे वह किसी भी पार्टी या संगठन का सदस्य हो, प्रकृति-मानव हितैषी कार्यक्रम से अपने लगाव के तहत इस कार्यक्रम आधारित जन आन्दोलन का सदस्य बनने का अधिकार होना चाहिए।

चूँकि प्रकृति-मानव हितैषी कार्यक्रम यह मानता है कि वर्तमान में चल रही कारपोरेट व्यवस्था को पुनर्गठित किया जाना चाहिए, इससे सम्बन्धित जन आन्दोलन की दो तरफा भूमिका होनी चाहिए–एक तरफ वर्तमान व्यवस्था को पुनर्गठित (आधुनिक करना और दूसरी तरफ वर्तमान व्यवस्था में लोगों की उनकी समस्याओं को हल करने के लिए संगठित करना। फिर भी, ऐसे किसी भी आन्दोलन को शुरू किये जाने से पहले उन सभी समूहों से उचित विचार-विमर्श करने का हर प्रयास किया जाना चाहिए–जो पर्यावरणीय क्षेत्र या इसके किसी भी भाग (यानि, हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता आदि) या कोई भी सम्बन्धित मानव विकास कार्यक्रम (समता, सामाजिक न्याय, मानव अधिकार, महिला एवं अल्पसंख्यक अधिकार, आदि) जैसे समतुल्य कार्यक्रमों पर पहले से लोगों की सेवा और उन्हें संगठनबद्ध कर रहे हैं–ताकि जन आन्दोलन के लिए एक सांझा मंच या ऐसे सभी आन्दोलन का कम से कम एक संयुक्त मोर्चा–चाहे वे किसी भी व्यवस्थागत परिवर्तन के कार्यक्रम में शामिल न हो बनाया जा सके।

प्रकृति-मानव हितैषी कार्यक्रम वाले जन आन्दोलन को पहले से चले आ रहे जन आन्दोलनों के संयुक्त मोर्चे में शामिल होने को भी तैयार रहना चाहिए।

दिनांक 29-11-2002

* * * * *

इण्टरनेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक व्यूप्वाइण्ट से प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यूप्वाइण्ट क्यों

1. इस अंक से (यानि, अंक नं. 179, जनवरी 2003), इण्टरनेशलिस्ट डेमोक्रेटिक व्यूप्वाण्ट अपने आपको प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यूप्वाइण्ट के रूप में तब्दील करता है। यह तब्दीली हमारी वर्तमान इस अवधारणा से निकली है कि दुनिया की मौजूदा मूलभूत वास्तविकता को प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण उचित जवाब देता है। वह अवधारणा यह है कि जबकि एक अत्यन्त गम्भीर पर्यावरणीय जैविक संकट (मानवीय नस्ल सहित) सम्पूर्ण प्राणी प्रजातियों के अस्तित्व को खतरा पैदा कर रहा है, सभी प्रकार के निहित स्वार्थी एवं उनके समर्थक, स्वतंत्र शैली के चिन्तक, आदि, वैचारिक भ्रम पैदा कर रहे हैं जो लोगों को कई तरह के गुटबाजियों में बांट रहे हैं।

2. वर्तमान वैचारिक भ्रम इस तथ्य से स्पष्ट है कि यद्यपि सम्पूर्ण मानव समुदाय उपर्युक्त वर्णित जीवन-मरण के संकट के घातक चरित्र पर आम तौर से सहमत है परन्तु इसके उद्भव के कारण पर बुरी तरह विभाजित है और स्पष्टत:, किसी भी समस्या का कोई हल तब तक सम्भव नहीं है जब तक कि उसके कारण का पता न लगा लिया जाए। विभिन्न विचारधाराओं के बीच हमारी अत्यधिक गम्भीर समस्या के उचित निदान पर इतना तीव्र विभाजन जानलेवा पर्यावरण-जैविक संकट को एक तरफ और अधिक खतरनाक बनाता है और दूसरी तरफ मानव समुदाय में विभिन्न प्रकार के नये विवादों (राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक) को पैदा करता है।

3. विभिन्न निहित स्वार्थी (जिसमें शामिल हैं वे सभी सरकारें, संगठन और व्यक्ति जो मौजूद विश्व कारपोरेट व्यवस्था को समस्त राष्ट्र-राज्यों के लिए एक मानक मॉडल के रूप में मानते है) सिद्धान्तो का एक पुलिन्दा पेश कर रहे हैं, विभिन्न रूढिवादी (यानि, स्वतंत्र बाजार दर्शन एवं राज्य-नेतृत्व कारी विकास सिद्धान्त से जुड़े हुए अतिवादी तथा विभिन्न धर्मों व आध्यात्मिक आस्थाओं के मतान्ध भक्तगण) अपने-अपने निश्चयवादी सिद्धान्तों को प्रस्तुत कर रहे हैं और स्वतंत्र शैली के विचारक एवं सक्रिय कार्यकर्त्ता मौजूदा धरातलीय वास्तविकता तथा उसके प्रारम्भिक बिन्दु का उत्तर देने की बजाए अपने स्वयं की सोच को व्यावहारिक मार्ग के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं। यह स्थिति आगे इस तथ्य से और भी भ्रमित करने वाली बन जाती है, जब लोग यह जानते हुए भी कि कुछ गड़बड़ हो रहा है, परन्तु इसके कारण को जानने के लायक नहीं बन पाते हैं।

4. विभिन्न निहित स्वार्थों के बीच वर्तमान संयुक्त राज्य अमेरिका का प्रशासन जो विश्व कारपोरेट व्यवस्था के मुखिया के स्थान पर है, दुनिया के सारे झगड़ों की प्रमुख जड़ है। आज उसने अपने-आपको दुनिया का पुलिसमैन बना लिया है और दुनिया से अपनी जीवन शैली, यानि, उसकी सोच, उसका व्यवहार और विभिन्न चीजों को उसके अनुसार संगठित किये जाने का अनुसरण करवाना चाहता है। दुनिया के लोगों के हितों के खिलाफ तथा सभी अन्तराष्ट्रीय कानूनों व परम्पराओं की धज्जियां उड़ाते हुए यह (यानि, अमेरिका) आज भी सभी समस्याओं को सैनिक ताकत से हल कर सकने, ग्रीन हाउस गैसों को कम करने वाली क्योटो सन्धि दुनिया की सरकारों द्वारा अभिपुष्ट न किये जाने की अमरीकी चाहत क्यों कि यह अमेरिका में तापीय ऊर्जा को प्रभावित करती है जिससे अमेरिकी लोगों की आरामदायक जिन्दगी में दखल पड़ती है, अमेरिकी नागरिकों को संयुक्त राष्ट्र

अनुमोदित अन्तरराष्ट्रीय दण्ड-न्यायालय के दायरे से बाहर रखने एवं परमाणु हथियारों पर हुई पुरानी सभी शस्त्र परिसीमन सन्धियों को रद्द करवाना ताकि अमेरिका को अपनी मिसाइल-विरोधी व्यवस्था निर्मित करने का खुला अधिकार मिल सके तथा कि सद्दाम हुसैन को मिटाने की अमेरिकी मांग का सुरक्षा परिषद समर्थन करे, इन सभी प्रस्तावों को मनवाने के लिए अमेरिका हर एक पर दबाव डालता है।

5. उपर्युक्त वर्णित अमेरिकी मान्यता का कारण प्रभुत्ववाद या महाशक्तिवाद के अमेरिकी कारपोरेट दर्शन में निहित है। जिसकी प्रथमत:, मान्यता है कि स्वतंत्र बाजार आर्थिकता का सिद्धान्त मानव समाज की प्राकृतिक व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करता है और इसीलिए अमेरिकी नेतृत्व वाला पश्चिमी कारपोरेट विकास मॉडल प्राकृतिक न्याय की पराकाष्ठा का प्रतिनिधित्व करता है और यह उभर रही विश्व व्यवस्था के लिए अत्यधिक उपयुक्त मॉडल है। द्वितीयत: यह मानता है कि मानव समाज में निजी हित प्रेरणादायक ताकत है अत: धन और धनी, राजनीतिक सत्ता एवं इसके नियंत्रणकर्त्ता तथा सैनिक ताकत व इसके कमाण्डर विकास, उन्नति और सम्पन्नता की चाबी हाथ में लिए हुए हैं। जबकि इस प्रक्रिया में लोगों का कोई हाथ नहीं है और इसमें उनकी भूमिका बहुत थोड़ी है। तृतीयत:, यह समझता है कि वर्तमान आत्मनिर्भर राष्ट्र-राज्यों से उभर रही विश्व व्यवस्था को एक अन्तरराष्ट्रीय सरदार की आवश्यकता है जो उनको हांक सके। चतुर्थ, यह विश्वास करता है कि संयुक्त राष्ट्र की वर्तमान कमजोर आर्थिक और सैनिक स्थिति के चलते हुए अमेरिका वर्तमान विश्व का अजेय सैनिक और आर्थिक महाशक्ति है और उसका प्राकृतिक अधिकार है कि चीजों को व्यवस्थित करने में विश्व की अगुवाई करे। पंचम, इसकी मान्यता है कि अमेरिका की सैनिक और आर्थिक ताकत को मजबूत करने एवं अमेरिकी वैश्विक नेतृत्व को स्थायीत्व प्रदान करने का यही सबसे उपर्युक्त समय है, जब यूरोपीय समुदाय, चीन, रूस, जापान इत्यादि तुलनात्मक तौर पर कमजोर हैं और अमेरिका को आगे बढ़ने से रोक नहीं सकते।

6. तथापि, नई उभर रही वास्तविकताएँ अमेरिका की सैनिक और आर्थिक अजेयता के झूठ का पर्दाफाश कर रही है। ये संक्षेप में है, मनोवैज्ञानिक तौर पर अमेरिका दुनिया का अत्यधिक परेशान राज्य (देश) है जहां अमेरिका की समस्त जनता आतंकवादियों के परमाणु, रासायनिक और जैविक हमले के भय से उत्पन्न दु:स्वप्न में जी रही है। राजनीतिक तौर पर, संदिग्ध आतंकवादियों को ढूंढने के नाम पर सम्पूर्ण अमेरिका में आम आदमी और खास करके अल्पसंख्यकों के खिलाफ सन्देह की कार्रवाई जारी है। आर्थिक तौर पर, अमेरिकी आर्थिकता दिन-ब-दिन डूब रही है, इसकी वृद्धि दर गिर रही है, बेरोजगारी लगातार नई ऊँचाइयाँ छू रही है, निर्यात गिर रहा है, डालर का अन्तरराष्ट्रीय मूल्य दुनिया की बड़ी यूरो जैसी मुद्राओं के मुकाबले गिर रहा है और स्टाक व मुद्रा बाजार की खराब स्थिति बनी हुई है। सांस्कृतिक तौर पर, कुछ विशिष्ट नस्ली समुदायों को निशाना बनाने की वजह से अमेरिका की सामाजिक एकता कमजोर हुई है।

7. आतंकवाद को मुख्य अन्तरराष्ट्रीय चुनौती की अपनी स्वीकृति के बावजूद क्षेत्रीय महाशक्तियां अमेरिका के एकपक्षीय विश्व प्रभुत्ववाद का विरोध करती हैं। नई उभर रही विश्व व्यवस्था के प्रबन्ध के बारे में ये अपने-अपने कारणों से संयुक्त राष्ट्र जैसे बहुपक्षीय प्रबन्ध का पक्ष लेती है।

8. हालांकि, अन्तरराष्ट्रीय कारपोरेट राजनीतिक मुखिया आपस में विभाजत हैं परन्तु वे अपनी साझी व्यवस्था को आम तौर पर कायम और कार्यरत रखने में एक हैं।

9. कुछ अपवादों को छोड़कर बाकी माध्यम और छोटे राष्ट्र-राज्य प्रशासन सुरक्षित पक्ष में खड़े रहना पसन्द करते हैं।

10. कुछ समय के लिए, यह कारपोरेट एजेण्डा है जिसका दावा समस्त विश्व में दनदना रहा है। इसका कारण है कि इसके विकल्प में कोई एजेण्डा मौजूद नहीं है जबकि राज्य-संचालित मॉडल पहले से ही वर्तमान प्रबन्ध के अन्दर अपनी गौण भूमिका स्वीकार कर चुका है।

11. विभिन्न रूढ़िवादी रुझानों की तरफ ध्यान दिया जाये तो आज स्वतंत्र बाजार दर्शन के प्रचारकों में बुश प्रशासक उसका मुखिया है, जिसके अतिवादी कदमों को एक के बाद एक तथाकथित कई आतंकवादी देशों (जैसा कि अमेरिका के वर्तमान रक्षामंत्री ने परिभाषित किया) के विरुद्ध निरन्तर युद्ध से आतंकवाद को समाप्त करने की अमेरिकी नीति, इसकी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को अरबों डालर की टैक्स कटौती छूट (जिसकी प्रथम किश्त में 6 बिलियन डालर यानि 6 अरब डालर से अधिक देने का प्रस्ताव है) देने की पहल के जरिये आर्थिक बहाली का सिद्धान्त एवं इसका राजनीतिक पार्टियों को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा दिये जाने वाले चन्दे की बढ़ोतरी के जरिए राजनीतिक व्यवहार में स्वच्छता का दावा करने में देखी जा सकती है, जबकि आज दुनिया के स्तर पर स्वतंत्र बाजार दर्शन केन्द्रीय स्थान पर है परन्तु इसके रूढ़िवादी गुट (जैसे बुश प्रशासन) को अधिक समर्थन नहीं है।

12. जहां तक राज्य-नेतृत्व विकास सिद्धान्त को मानने वालों का संबंध है वे पहले से ही कम्युनिस्ट ब्लॉक (खास करके भूतपूर्व सोवियत यूनियन और चीन) के पतन के कारण अपूरणीय नुकसान खो चुके हैं। अब, कुछ कट्टरपंथी विश्व की वास्तविकताओं के उलट नेपाल, भारम, पेरू, कोलम्बिया इत्यादी कुछ हिस्सों में छापामार युद्धों में अपनी कीमती जाने गँवा रहे हैं। बहुत-से बलिदानों के बावजूद राज्य-नेतृत्व सिद्धान्त वर्तमान विश्व कार्यक्रम (एजेण्डा) में कोई वजन नहीं रखता है।

13. धार्मिक एवं आध्यात्मिक आस्थाओं के प्रवर्त्तकों के संबंध में तीन किस्में अधिक कुख्यात है, यानि भारत में हिन्दुत्व, कुछ इस्लामी देशों में मुस्लिम खाड़कूपन और इजरायल में यहूदीवाद। हिन्दुत्व अपनी कहने कुछ और करने कुछ के व्यवहार की दोगली शैली लिए हुए है। यही कारण है कि हिन्दुत्व एजेण्डा का भारत में थोड़ा महत्व है और भारत के बाहर इसका महत्व नहीं है। मुस्लिम खाड़कूपन का कई जगहों पर असर है परन्तु मुस्लिम दुनिया में कहीं भी यह प्रभुत्वशाली रुझान लिए हुए नहीं है। यहूदीवाद इजरायल के दायरे में ही सीमित है और बाहर इसका कोई असर नहीं है। कुल मिलाकर रूढ़िवादी रुझानों का विश्व एजेण्डा पर कोई प्रभुत्वकारी असर नहीं है।

14. स्वतंत्र शैली के विचारकों पर नजर डालें तो उनके रुचिकर विषय एक असम्बद्ध प्रसंगों का जंजाल है। वैश्वीकरण (ग्लोबेलाईजेशन) के कारण को परिभाषित किए बिना या उसका विकल्प दिये बिना वे सब केवल वैश्वीकरण के विरोध पर एकमत हैं।

15. इनमें से कई महानुभवों का वामपन्थी झुकाव है, जबकि एक खासी तादाद पश्चिमी उदारवाद से प्रभावित है, कुछ बीच का रास्त लिए हुए हैं जो दोनों के बीच समन्वय बैठाने की कोशिश करते हैं। यहां कोई अकेला नेतृत्वकारी नहीं है ।

16. संगठनात्मक तौर पर ये कई मतों–राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, मानव विकास, पर्यावरणीय, स्वयंसेवी एवं गैर सरकारी संगठनों (एन जी ओ)–से गठित हैं।

17. कुल मिलाकर ये काफी लोगों को आकर्षित करते हैं परन्तु यह एक विभाजित समुदाय है जिसमें प्रत्येक हिस्सेदार का अपना अलग कार्यक्रम है।

18. इनका कार्यक्रम विभिन्न धाराओं का एक घालमेल है जैसे ऋण और विकास, पेटेण्ट अधिकार, विदेशी निवेश, मानव अधिकार, महिला सशक्तिकरण, वैश्वीकरण का श्रमिकों पर प्रभाव, शान्ति और सुरक्षा, वैश्वीकरण का शिक्षा पर नकारात्मक प्रभाव, असंगठित श्रमिकों के लिए उचित कानून बनाने, पर्यावरणीय मुद्दे जैसे पानी, मौसम परिवर्तन, वनीकरण, आदि, अमेरिका के नेतृत्व में आतंकवाद के विरुद्ध छोड़े गए विश्व युद्ध के विरूद्ध कार्रवाई करना, महिला और बच्चों की खरीद-फरोख्त के खिलाफ कार्यवाही, टिकाऊ विकास, दलित सशक्तिकरण, आदि।

19. स्पष्टतया, ऐसे छितराए हुए प्रसंग वर्तमान व्यवस्था के दायरे में ही प्रबन्धित किये जा सकते हैं, इन्हें प्राय: कारपोरेट एजेण्डे से अलग नहीं किया जा सकता तथा इनसे कारपोरेट एजेण्डे की मूल खामियां उजागर नहीं हो सकती।

20. मानव संसार के उपर्युक्त उल्लिखित दृष्टिकोण की मांग का यह पत्रिका क्या प्रत्युत्तर देती है। यह हमारे वर्तमान सन्दर्भ में क्या सही है और क्या गलत है, को स्पष्ट करने की मांग करती है।

21. किसी भी प्रक्रिया में क्या सही है और क्या गलत है, इसको जांचने के लिए विज्ञान और तर्क यह सुझाव देते हैं कि मनोगत समझ वस्तुगत वास्तविकता से मेल खाती है या नहीं तथा इसका सिद्धान्त (यानि, इसका साध्य) इसके व्यवहार (यानि, इसके साधन) के अनुकूल है या नहीं तथा इसी तरह इसके उलट प्रक्रिया को परखा जाए, एवं संगठन के कार्यकारी मानदण्डों के तौर पर सभी परिस्थितियों में निष्पक्षता, लोकतान्त्रिक शैली, शान्तिपूर्ण तरीका एवं निर्णय लेने के लिए मुख्य रूप में आम सहमति, नियमित चुनाव, निर्धारित समयावधि में पदाधिकारियों का बदलना, स्वतंत्र एवं खुला विचार-विमर्श, आम दिशा को तय करने एवं लागू करने में सभी सदस्यों को शामिल करना आदि–अपनाता है या नहीं, यह देखना जरूरी है। यह सब अपने-अपने अहम के उचित प्रबन्ध में मदद करता है तथा किसी भी संगठन में विनम्रता पैदा करता है।

22. उपर्युक्त वर्णित आम असूलों पर चलते हुए, यह मानता है कि वर्तमान विश्व की मूल वास्तविकता (यानि, अत्यधिक गम्भीर पर्यावरणीय-जैविक संकट की मौजूदगी) की समझ एवं इसका उचित प्रत्युत्तर (यानि, प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण) की मांग है कि हमारे समय की सामाजिक सच्चाई के रूप में प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण के आधार पर वर्तमान कारपोरेट व्यवस्था को पुनर्गठित (या आधुनिक) किए जाने का लक्ष्य अपनाया जाए। इसका मतलब है कि पर्यावरणीय और मानवता इसकी सर्वोत्तम प्राथमिकता बनती है तथा यह सभी मसलों को पर्यावरण-मानव नजरिए से देखता है।

23. प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण 5 बिन्दुओं पर विशेष जोर देता है–(क) पर्यावरणीय टिकाऊपन, अर्थात् केवल पर्यावरण को संरक्षित रखना ही नहीं बल्कि इसको विकसित भी करना (ख) समता: यह उचित समानता को इंगित करती है। इसको तीन कदमों से सुनिश्चित किया जाए (i) आय में अधिकतम अन्तर 1:5 के स्तर पर रखा जाए (ii) सभी वंचित, गरीब, बेरोजगार आदि की सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के

जरिए सुनिश्चित किया जाए (iii) 1:5 के स्तर से ऊपर बची समस्त आमदनी को संयुक्त राष्ट्र संघ से नियंत्रित विश्व कोष में जमा करवाया जाए जो इस राशि को आर्थिक विकास के लिए उचित उद्यमो को उधार देगा (ग) उत्पादकता: जो वृद्धि दर या धनोत्पादन दर को अभिव्यक्त करती है। यह मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के अत्यधिक विकसित होने के कारण कारपोरेट उत्पादकता से दुगुनी होगी, ऐसा प्रत्येक व्यक्ति को समतावादी आय व सामाजिक सुरक्षा के मूल अधिकार मिल जाने, वैश्विक शान्ति और सुरक्षा गांव से लेकर संयुक्त राष्ट्र के स्तर तक और अन्य सभी आर्थिक, वित्तीय व व्यापारिक वैश्विक संस्थाओं में लोगों (खास करके महिलाओं, मजदूरों और वैज्ञानिकों-तकनीकीविदों) के सशक्तिकरणा की राजनीति के द्वारा वास्तविक और तर्कसंगत आर्थिकता एवं मानवीय व पर्यावरण मूल्यों वाली संस्कृति के माध्यम से कर पाना सम्भव होगा। (घ) लोकतंत्र: लोकशक्तिकरण और मानवतावादी व पर्यावरणीय मूल्य पर आधारित राजनीतिक पुनर्गठन के द्वारा अधिकतम सम्भव लोकतांत्रित ढांचा बनाये जाने को सुनिश्चित करेगा (ड़) पारदर्शिता: प्रशासन के लिए इसे मूल सिद्धान्त बनाकर स्थापित किया जाएगा।

24. अन्तत:, प्रकृति मानव केन्द्रित दृष्टिकोण की मांग है कि लोगों में इसके बारे में चेतना जगाने पर ध्यान केन्द्रित कर, लोगों की प्रेरणा को लोगों के तर्कसंगत स्तर में बदलकर पूरा किया जाए, इस प्रकार नतीजतन एक तर्कसंगत मानव एवं विवेकपूर्ण व संवेदनशील मानव समुदाय विकसित होगा। इस दिशा में एक कदम आगे बढ़ाने के लिए यह पत्रिका अपने आपको इण्टरनेशलिस्ट डेमोक्रेटिक व्यूपाइंट से प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यूपाइंट में तब्दील करती है। (1.1.2003)

* * * * *

(2 से 6 जनवरी, 2003 की विश्व सामाजिक मंच, भारतीय चेप्टर, हैदराबाद मिटिंग पर इन्टरनेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक व्यूपाइंट के सम्पादक आर.पी.सराफ की टिप्पणी)

प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम के आधार पर दूसरी दुनिया (Another World) बिल्कुल सम्भव है परन्तु अप्रासंगिक मसलों और असंगत विषय-वस्तु को अपनाया जाए तो हकीकतन असम्भव है

1. विश्व सामाजिक मंच (WSF) के भारतीय अध्याय का पहला अधिवेशन 2 से 6 जनवरी, 2003 को हैदराबाद में होने जा रहा है। अधिवेशन का कार्यक्रम इस मुहावरे 'भिन्न दुनिया सम्भव है' और 'भिन्न एशिया सम्भव' वाले शीर्षक में दर्ज है। अधिवेशन से अपेक्षा है कि वह 'भिन्न दुनिया' और 'भिन्न एशिया' का खाका तैयार करे।

I. विद्यमान वास्तविकताओं और विश्व सामाजिक मंच के कार्यक्रम के बीच काफी दूरी

2. पहले के दो बड़े अन्तरराष्ट्रीय जमावड़ों (पहला जनवरी, 2001 में पोर्टो अलेग्रे, ब्राजील में और दूसरा उसी जगह 1 से 5 फरवरी, 2002 में) की तरह ही विश्व सामाजिक मंच का हैदराबाद प्रयास भी काफी बड़ी संख्या में ऐसे प्रतिनिधियों को आकर्षित करेगा

जो वर्तमान में चौतरफा फैले हुए दिग्भ्रम से निकलने का रास्ता खोजने के इच्छुक हैं, परन्तु हैदराबाद कार्यक्रम दर्शाता है कि मंच की पहले वाली पहल-कदमियों की तरह ही इस हालिया कोशिश का अन्तिम नतीजा भी भिन्न नहीं होगा। यानि, असंगत विषय-वस्तु पर जोर देते हुए यह विद्यमान विश्व वास्तविकताओं के साथ कोई प्रासंगिकता नहीं रखता है।

3. संक्षेप में कहें तो आज मानव संसार को ऐसी अत्यधिक गम्भीर चुनौतियों से वास्ता पड़ा है जैसा अपने इतिहास में उसे पहले कभी नहीं पड़ा। यानि, एक घातक पर्यावरणीय चुनौती, अद्वितीय गरीबी और असमानता से चिह्नित एक विस्फोटक मानव विकास संकट, उभर रही वैश्विक व्यवस्था के नियंत्रण और प्रभुत्व के लिए अमेरिका की आक्रामक गतिविधियाँ, हालिया नये रूप में पेश आ रहे रूढिवादी रूझाणों जैसे हिन्दुत्व, पान-इस्लामवाद, पश्चिमी स्वतंत्र बाजार दर्शन, मार्क्सवादी राज्य प्रबन्धित सर्वहारा स्वप्न इत्यादि से नये उभर रहे जोखिम, उपर्युक्त वर्णित जीवन और मौत के सवालों के अलावा दिन-प्रतिदिन बढ़ रही हिंसा, आदिवासी और स्थानीय देशज निवासियों का उन्मूलन, भिन्न-भिन्न किस्म के असंगठित मजदूरों (जो कुल मिलाकर मानवीय संसार का 50 प्रतिशत से अधिक हिस्सा बनता है)की दिन दुनी रात चौगुनी दयनीय बन रही हालात, बढ़ रहा आतंकवाद (दोनों किस्म का-धार्मिक निर्देशित और राष्ट्रीय राज्य संवर्धित), परम्परागत तौर पर माने जा रहे लोकतांत्रिक देशों, जैसे अमेरिका और ब्रिटेन में मानव अधिकारों व नागरिक स्वतंत्रताओं पर हो रहे हमले। यहाँ तक कि हमारे संसार पर एक सरसरी नजर भी दर्शाती है कि कैसे ऊपर वर्णित मूलभूत खतरों, गम्भीर चुनौतियों और दिन-प्रतिदिन के जोखिमों से 21 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही मानव-जीवन नर्क बन गया है।

4. पर्यावरणीय मोर्चे पर, ग्रीन हाउस गैसों की निन्तर बढ़ रही मात्रा, घट रहे वैश्विक जल संसाधन, बड़े स्तर पर जंगलों का विनाश, 60 प्रतिशत से अधिक कृषि योग्य भूमि की गिरावट, बहुत-सी जैव प्रजातियों के लुप्त होने और अन्य प्राकृतिक उत्पादकों के गैर-टिकाऊ उपयोग ने मानव जाति सहित समस्त जैव-जगत के सामने अस्तित्व का संकट पैदा कर दिया है। वैज्ञानिक समुदाय हमारे पर्यावरणीय पहलू की बिगड़ती अवस्था को काफी समय से उजागर कर रहा है। विभिन्न मसलों पर कई जाने-माने वैज्ञानिकों ने बड़ी संख्या में रिपोर्टें प्रसारित की है। इनमें से कई रिपोर्टें ऐसी हैं जो इस संकट के परिपक्व होने की समय सीमा की गणाना पेश करती है, जिनमें से दो का विशेष उल्लेख करना आवश्यक है। इसमें से एक सन् 2000 में विश्व के सुप्रसिद्ध 6000 वैज्ञानिकों की दी गई चेतावनी है जिसमें जोर दिया गया है कि अगर मानव समुदाय ने ग्रीन हाउस गैसों का उत्पादन जल्द से जल्द नहीं रोका तो 21 वीं सदी के अन्त तक वैश्विक उष्माकरण (ग्लोबल वार्मिंग) की वजह से यह पृथ्वी जैव-जीवन के लायक नहीं रहेगी। दूसरी रिपोर्ट सन् 2002 की संयुक्त राष्ट्र के विश्व वन्य-जीवन संस्थान का अध्ययन है जिसमें चेतावनी दी गई कि अगर मानव समुदाय (खासकर धनवान देशों और धनवान लोगों ने) अपनी असंयमी और अपव्ययी जीवन-शैली को नहीं बदला तो 50 वर्षों में हमारा ग्रह पृथ्वी मानव जीवन के लिए गैर-टिकाऊ जगह बन जाएगी। अन्य वैज्ञानिक विशेषज्ञ तो इस संकट की समय-सीमा तो तय नहीं करते, परन्तु यह स्वीकार करते हैं कि पर्यावरणीय हालात अत्यधिक चुनौती भरे हैं।

5. मानव विकास के धरातल पर मानवीय विकास से सम्बन्धित लगभग सभी वैश्विक संस्थान, यानि संयुक्त राष्ट्र संघ, विश्व बैंक, अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन इत्यादि अब हमारे विद्यमान विकास मॉडल की गैर टिकाऊ पद्धति पर जोर दे रहे हैं, जो मुख्यत: असहनीय असमानता, गैर-समता, गरीबी और अन्याय से परिलक्षित होती है। संयुक्त राष्ट्र 2002 की मानव विकास रिपोर्ट जाहिर करती है कि दुनिया के अत्यधिक धनी 1 प्रतिशत की आय दुनिया के निर्धनतम 75 प्रतिशत से अधिक है। सन् 2001 यू एन मानव विकास रिपोर्ट में लिखा है कि विकासशील देशों के 4.6 बिलियन (460 करोड़) लोगों में से 850 मिलियन (85 करोड़) से अधिक लोग अनपढ़ हैं, 1 बिलियन (100 करोड़) के आसपास शुद्ध पानी के स्त्रोतों से वंचित हैं और 2.4 बिलियन (240 करोड़) लोगों को बुनियादी शौच सुविधाएँ हासिल नहीं हैं। करीब 325 मिलियन (32.5 करोड़) लड़के लड़कियाँ स्कूल नहीं जाते हैं और पाँच साल से कम उम्र के 11 मिलियन (1 करोड़ 10 लाख) बच्चे हर साल संक्रामक रोग से मर जाते हैं, यह संख्या प्रतिदिन 30 हजार से अधिक बैठती है। 1.2 बिलियन (120 करोड़) लोग प्रतिदिन 1 डालर से कम पर गुजारा करते हैं (1993 पी पी पी यू एस डालर) और 2.8 बिलियन (280 करोड़) लोग प्रतिदिन 2 डालर से कम पर गुजारा करते हैं। यह वंचितपन विकासशील देशों तक सीमित नहीं है। ओ ई सी डी (आर्थिक सहयोग और विकास संगठन) देशों में 130 मिलियन (13 करोड़) लोग गरीब हैं, 34 मिलियन (3 करोड़ 40 लाख) बेरोजगार हैं तथा प्रौढ़ो में औसतन अशिक्षा की दर 15 प्रतिशत है। यह रिपोर्ट आगे कहती है कि अमेरिका में सबसे धनी 10 प्रतिशत लोगों (करीब 2.5 करोड़) की संयुक्त आय दुनिया के 43 प्रतिशत गरीब लोगों (करीब 200 करोड़) की आय के बराबर थी। 1999 की मानव विकास रिपोर्ट कहती है कि 1990 के दशक के अन्त में अधिकतम आय वाले देशों में रहने वाली विश्व की 20 प्रतिशत आबादी विश्व की जी डी पी (कुल आय) के 86 प्रतिशत की मालिक है, जबकि विश्व की सबसे निचली (गरीब) 20 प्रतिशत आबादी केवल मात्र 1 प्रतिशत आय की मालिक है, इसी तरह विश्व निर्यात बाजार के 82 प्रतिशत पर 20 प्रतिशत अमीर आबादी का कब्जा है, जबकि निचली 20 प्रतिशत आबादी के नियंत्रण में 1 प्रतिशत हिस्सा है, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश में उपर्युक्त अमीर आबादी का हिस्सा 68 प्रतिशत के मुकाबले गरीब आबादी का हिस्सा 1 प्रतिशत है और आज संसार के आधारभूत साधन विश्व की टेलिफोन लाइन के 74 प्रतिशत हिस्से का उपयोग उपर्युक्त अमीर आबादी करती है, जबकि निचली 20 प्रतिशत आबादी मात्र 1.5 प्रतिशत लाइन का उपयोग करती हैं। 1996 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट कहती है कि विश्व के अधिकतम धनी केवल 3 लोगों की कुल सम्पत्ति अल्पतम विकासशील 48 देशों की संयुक्त जी डी पी (सम्पत्ति) के बराबर है। विश्व के अधिकतम धनी 225 लोगों की संयुक्त सम्पत्ति 1 ट्रिलियन (1000 अरब) डालर है जो 47 प्रतिशत गरीब लोगों (जिनकी संख्या 250 करोड़ बनती है) की कुल आय के बराबर है। विश्व के अधिकतम धनी 32 लोगों की सम्पत्ति दक्षिण एशिया (भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान और मालदीव) तथा ईरान व अफगानिस्तान की जी डी पी (सकल घरेलू उत्पाद) से अधिकहै।

रूचिकर बात यह है कि एक विशेषज्ञ के अनुमान के अनुसार नई दिल्ली के मुगल बादशाहों (जैसे जहांगीर, शाहजहाँ आदि) की आय अपनी सत्ता के उच्चतम काल में वर्तमान कीमतों के अनुसार 15000 रुपये वार्षिक हुआ करती थी।

6. उभर रही विश्व व्यवस्था पर प्रभुत्व व नियंत्रण के लिए अमेरिकी आक्रमक गतिविधियों के संबंध में स्थिति यह है कि अमेरिका विश्व का सार्वभौमिक सिपाही बनने की कोशिश कर रहा है। अफनागिस्तान में इसकी अकेले सैनिक सफलता से यह और अधिक युद्धकारी और एकलवादी बन गया है। अब इसने अपने ही द्वारा आरोपित विश्व आतंकवाद के खिलाफ सतत युद्ध की घोषणा कर दी है जबकि आतंकवाद को न तो संयुक्त राष्ट्र ने और ना ही इसके किसी सदस्य ने परिभाषित किया है। इसकी आक्रमक गतिविधि के पहले निशाने में तथाकथित 'बुरे राज्य'-यानि ईराक, ईरान, उत्तर कोरिया शामिल हैं, जो संयुक्त राष्ट्र के सदस्य देश हैं और जिन्हें किसी भी तर्क से आतंकवादी नहीं ठहराया जा सकता। हालिया घोषित अमेरिकी आक्रामक योजना को चीन, रूस और यूरोपीय समुदाय सहित विश्व ने नकारा है। परन्तु अमेरिका विश्व पर अपनी हुक्मरानी स्थापित करने के लिए नई युद्ध परियोजना शुरू करने के अपने इरादे के प्रति नरम नहीं पड़ा है।

7. रूढ़िवादी रूझानों की तरफ नजर डालें तो भिन्न-भिन्न किस्मों के धार्मिक रूढ़िवादी विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच घृणा पैदा कर रहे हैं और लोगों की मानसिकता की धर्मोन्मादी बना रहे हैं। स्वतंत्र बाजार दर्शन गरीब और अमीर के बीच न पाटे जा सकने वाली खाई पैदा कर रहा है। राज्य-नेतृत्व वाली कम्युनिस्ट कल्पना मजदूरों को पिछड़ा और मजदूरी-अभिमुख रख रही है।

8. दिन-प्रतिदिन बढ़ रहे अपराध, हिंसा, भ्रष्टाचार और महिलाओं, बच्चों, आदिवासियों, असंगठित मजदूरों इत्यादि को अधिकारों से वंचित रखने की वजह से बढ़ रहे खतरे आम विश्वव्यापी घटनाक्रम बन गये हैं। कोई भी देश इन खतरों से अछूता नहीं हैं।

9. सन् 2001 में विश्व सामाजिक मंच (डब्ल्यू एस एफ) के उद्भव से लेकर अब तक हुए इसके अन्तरराष्ट्रीय अधिवेशनों और कार्यक्रम में उपर्युक्त विद्यमान मूलभूत वास्तविकताओं को शामिल न करना इसकी जीवन्त वास्तविकताओं से दूरी को दर्शाता है।

II. विश्व सामाजिक मंच का हैदराबाद कार्यक्रम

10. विश्व सामाजिक मंच के हैदराबाद कार्यक्रम का केन्द्रीय प्रस्तावित उद्देश्य 'एशिया में वैश्विकरण (ग्लोबेलाइजेशन) के विकल्प को समझना और तैयार करना' है। परन्तु दु:ख की बात यह है कि मंच ने कहीं भी (न तो इस कार्यक्रम में और न ही किसी अन्य दस्तावेजों में) और किसी भी समय वैश्वीकरण की धारणा को परिभाषित नहीं किया है। फिर भी वैश्वीकरण पर इसके कई अस्पष्ट और बिखरे विचारों पर नजदीकी से दृष्टिपात करने पर पता लगता है कि विश्व सामाजिक मंच वैश्विकरण को किसी तरह की सामाजिक व्यवस्था मानता है। यह नये उभरे घटनाक्रम की एक विकृत समझ के अलावा कुछ नहीं है।

11. वैश्वीकरण क्या है और इसकी मांगे क्या हैं ? तथ्य दर्शाते हैं कि वैश्वीकरण हालिया उभरी एक प्रक्रिया है जिसने सम्पूर्ण विश्व को सम्मिलित कर लिया है। मानव के सम्बन्ध में यह दर्शाता है कि मानवीय गतिविधि वैश्विक (ग्लोबल) बन चुकी है। चूँकि गतिविधि में समय और स्थान निहित होता है, अत: इसका निहितार्थ है कि मानवीय समय और स्थान की स्थितियां में परिवर्तन आ गया है।

12. मानव के स्थान में पवितर्न की स्थिति इस तथ्य से स्पष्ट हो जाती है कि मनुष्य

आज एक स्थान से दूसरे स्थान पर ध्वानि से तेज गति से यात्रा कर सकता है जबकि कुछ समय पहले तक ऐसा करना असम्भव था।

13. समय में परिवर्तन की स्थिति नई संचार व्यवस्था (टेलि-कम्युनिकेशन) इण्टरनेट और इलेक्ट्रॉनिक माध्यम की युक्ति से स्पष्ट से है जिसने मानवीय अन्तरक्रिया का प्रकाश की गति से कर पाना सम्भव कर दिया है। यह सुविधा आजकल आम बन गई है। कुछ समय पहले तक ऐसा मानसिक सम्पर्क कायम करने के लिए महीनों लगते थे।

14. स्पष्टतया, उपर्युक्त वर्णित परिवर्तन नई वैज्ञानिक तकनीकी खोजों का सीधा परिणाम है, अत: वैश्वीकरण एक वस्तुगत प्रक्रिया है और यह किसी मनोगत सोच की पैदावार नहीं है।

15. ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि सभी महत्वपूर्ण वैज्ञानिक-तकनीकी परिवर्तनों के साथ ही हमेशा संगत सामाजिक बदलाव होता है-जो मानव जीवन के सम्पूर्ण तरीकों, यानि इसके सोच, कार्य करने और संगठित होने के तरीकों को बदल देता है। यह सम्पूर्ण ऐतिहासिक तथ्यों की श्रृंखला से देखा जा सकता है मसलन, औद्योगिक-वैज्ञानिक तकनीकी क्रान्ति के साथ-साथ राष्ट्रीय राज्य का उभरना तथा इसके अनुरूप ही दलगत राजनीति का लोकतंत्र, मुक्त बाजार आर्थिकता तथा उपभोक्ता संस्कृति सामने आई, इसी प्रकार कृषिकारी-वैज्ञानिक तकनीकी परिवर्तन के साथ-साथ सामन्ती राज्य उभरा तथा इसके साथ सामन्ती राजनीति 'राजा के शासन का दैविक अधिकार', सामन्ती आर्थिकता एवं सामन्ती संस्कृति सामने आई।

16. आज वैश्वीकरण भी भौतिक और मानवीय विकास की एक मंजिल विशेष का प्रतिनिधित्व करता है जो प्रकृति की कुछ नई प्रक्रियाओं से चरित्रित है, जैसे ऊर्जा, पदार्थ, अन्तरक्षि, सूचना, जीव-विज्ञान तथा इसी तरह अन्य प्रक्रियाएँ। वैज्ञानिक-तकनीकी प्रक्रिया और इसका मानवीय समझ और जिन्दगी पर प्रभाव का यह नया स्तर भी लगातार पुरानी चल रही राष्ट्रीय-राज्य व्यवस्था और इसके कारपोरेट विकास मॉडल को नई सामाजिक वैश्विक व्यवस्था में तब्दील करने की मांग करता है। परन्तु अमेरिका के नेतृत्व में राष्ट्रीय राज्य इस नई उभरी वैश्विक प्रक्रिया की मांग को बाधित कर रहे हैं तथा वे सभी जो वैश्वीकरण को एक व्यवस्था मानने की गलती करते हुए उसका विरोध कर रहे हैं, वे नव उदारवाद एवं पूंजी के प्रभुत्व (अथवा साम्राज्यवाद) का प्रतिनिधित्व कर रहे हें एवं अमेरिकी नेतृत्व वाले राष्ट्रीय राज्यों की मदद कर रहे हैं ताकि अपने-अपने राष्ट्रीय हितों में वैश्वीकरण की प्रक्रिया का शोषण किया जा सके। इस प्रकार, तथ्य यह मांग करते हैं कि विश्व सामाजिक मंच वैश्वीकरण के वस्तुगत घटनाक्रम पर वास्तविक दृष्टिकोण अपनाए, जो राष्ट्रीय राज्य व्यवस्था को नये वैश्विक प्रबन्ध में पुनर्गठित करने की तब्दीली चाहता है।

17. पुरानी राष्ट्रीय राज्य व्यवस्था के पुनर्गठन के निम्न बिन्दु हैं–

(क) वर्तमान विश्व वास्तविकता की एक स्पष्ट समझ होना–यानि यह अन्तरनिर्भर राष्ट्रों का एक विश्व है या अर्द्ध-राष्ट्रीय एवं अर्द्ध-अन्तरराष्ट्रीय राज्यों का एक विश्व है।

(ख) एक स्पष्ट दृष्टिकोण की आवश्यकता–यानि, एक विश्व का दृष्टिकोण।

(ग) एक विश्व के दृष्टिकोण का मूलभूत सिद्धान्त–वैश्विक गतिविधि के केन्द्र में लोगों व पर्यावरण को रखना। लोगों और पर्यावरण के प्रति नजरिया वैज्ञानिक वास्तविकतावाद पर आधारित होना चाहिए।

(घ) एक लोकतांत्रिक वैश्विक व्यवस्था–'एक राष्ट्र एक मत' के लोकतांत्रिक सिद्धान्त पर आधारित संयुक्त राष्ट्र संघ, सभी प्रकार के विशेषाधिकारों को समाप्त करना, जैसे वीटों अधिकार, महाशक्तिवाद या प्रभुत्ववाद की राजनीति को नकारते हुए स्थायी शान्ति को सुनिश्चित करना तथा सभी विवादों को बातचीत के जरिए हल करना।

(ड) राजनीति–लोकसशक्तिकरण पर आधारित होना।

(च) जन और पर्यावरण हितैषी विकास–दो तरफा प्राथमिकताओं यानि एक तरफ लोग व दूसरी तरफ पर्यावरण से चारित्रित हों तथा पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, जनवाद और पारदर्शिता के पाँच उसूलों पर आधारित हो।

(छ) अर्थशास्त्र–इसे कारपोट-रूढ़िवाद और राज्य-निश्चयवाद के अनुरूप बनाने के बजाय जन विकास और पर्यावरण संवर्धन की दिशा में विकसित करना।

(ज) संस्कृति–तर्कसंगत मानतावादी सोच और जनवादी व्यवहार को इसका आधार बनाना।

(झ) सुरक्षा–जीवन के सभी क्षेत्रों में और खासकर जीवन निर्वाह की सुरक्षा को सुनिश्चित करना।

18. फिर भी, राष्ट्रीय राज्य, कारपोरेट मॉडल के समर्थक तथा वैश्वीकरण के विरोधी ही वे लोग हैं जो उपर्युक्त सिद्धान्तों को व्यवहार में लागू करने में रूकावट पैदा कर रहे हैं और इस प्रकार समुदाय के विकास के बढ़ते कदमों को रोक रहे हैं।

19. विश्व सामाजिक मंच के छह सूत्री कार्यक्रम (यानि) (क) शान्ति व सुरक्षा (ख) ऋण, विकास, व्यापार, वित्त एवं निवेश (ग) राष्ट्र-राज्य, लोकतंत्र एवं बहिष्करण (घ) सामाजिक बुनियादी ढाँचा (ड) पारिस्थितिक, संस्कृति एवं ज्ञान (च)विकल्प एवं जन आन्दोलन की उपर्युक्त वर्णित वैश्वीकरण की मांगों (पैरा 17) से तुलना की जाए तो कोई भी देख सकता है कि विश्व सामाजिक मंच का छह सूत्री कार्यक्रम एक अस्पष्ट और असम्बद्धित (असंगत) मुद्दों के घालमेल से निर्मित है जिसका लोगों के तात्कालिक और दीर्घकालिक हितों से कोई संबंध नहीं है।

20. वैश्वीकरण की प्रक्रिया के संबंध में विश्व सामाजिक मंच की अस्पष्टता और भ्रामक समझ इसकी अति प्राचीन पारम्परिक समाजशास्त्र में निहित है जो एकतरफा मानव-केन्द्रित नजरिये एवं आत्मनिर्भर प्रगति पर जोर देता है। यह धारणा मानव उद्भव और विकास की प्रक्रिया में प्रकृति की भूमिका को नकारती है तथा सामाजिक प्रगति (चाहे वह परिवार या राष्ट्रीय राज्य से सम्बन्धित हो) के उत्पन्न होने में आपसी मानवीय अन्तरक्रिया को नजरअन्दाज करता है। द्वितीय, विश्व सामाजिक मंच की वैश्वीकरण की प्रक्रिया के बारे में इस गलत समझ की उपज है जिसमें वैश्वीकरण को विश्व स्तर पर मानवीय अन्तरक्रिया की प्रक्रिया की बनिस्पत इसे विश्व व्यवस्था के रूप में गलत अर्थ लगाया गया है। सामाजिक व्यवस्था अभी भी मौजूद राष्ट्र आधारित कारपोरेट व्यवस्था है जो दुनिया के हर देश में लागू है। तृतीय, यह समझ वर्तमान समस्याओं का मूल कारण कॉरपोरेट व्यवस्था के मूलभूत सिद्धान्तों में न देख कर अनावश्यक पहलुओं में देखने से निकलती है। चतुर्थ, गलत समझ विश्व सामाजिक मंच द्वारा वर्तमान पूँजीवाद को नव-उदारवाद चरित्रित करने में निहित है। नव-उदारवाद दर्शाता है कि पूँजी उन देशों को जिन्हें इसकी आवश्यकता है, उन्हें मुफ्त या दरियादिली या दान में मुहैया करवाई जाती है,

जबकि वास्तविकता यह है कि वर्तमान कारपोरेट पूँजी अधिक-से-अधिक संरक्षणवादी हो गई है। विकसित देशों में कृषि क्षेत्र में पहले से ही संरक्षणवाद मौजूद है। शीघ्र ही यह संरक्षणवाद कारपोरेट पूँजी के औद्योगिक उत्पादन के क्षेत्र पर प्रभाव डाल सकती है। कारपोरेट संरक्षणवाद नये उभर रहे व्यापारिक क्षेत्रों में फैल सकता है, जैसे नाफ्टा, एशियान, यूरोपियन, यूनियन आदि। पंचम, गलत समझ अन्तरनिर्भर कारपोरेट पूँजी को साम्राज्यवादी पूँजी के रूप में व्याख्या करने में निहित है, जिसका अर्थ है कि पूँजी का विजयी युग (यानि, विजयी पूँजी) जिसमें यह राष्ट्र के एक औजार के रूप में कार्यरत रही है जबकि दूसरी तरफ वर्तमान अन्तरनिर्भर कारपोरेट पूँजी केवल मात्र अपने ही प्रतिष्ठान में दिलचस्पी रखती है जो आजकल प्राय: किसी विशेष देश की बजाए एक से अधिक देशों में अवस्थित है।

III. विद्यमान विश्व विपदाओं का कारण

21. विद्यमान विश्व विपदाओं का दीर्घकालीन कारण कारपोरेट व्यवस्था में निहित है जिसका उद्देश्य अधिकतम लाभ या अधिकतम वृद्धि हासिल करना है। उदारवादी और मार्क्सवादी दोनों धारणाएँ यह स्वीकार करती हैं कि सामाजिक सम्पन्नता और प्रगति को जाँचने का एकमात्र मापदण्ड वृद्धि दर है। अधिकतम वृद्धि दर पाने की अपनी खोज में इन दोनों ने पर्यावरणीय एवं मानवीय विकास के पहलुओं को बर्बादी के कगार पर ला खड़ा किया है। चूँकि धन और सत्ता पाना अधिकतम स्व-हित का प्रतिनिधित्व करता है, सम्पूर्ण दुनिया अब इन दो 'जीवनदायी अमृत' के पीछे भाग रही है।

22. विद्यमान विश्व विपदाओं का तात्कालिक कारण कारपोरेट व्यवस्था को लागू करने वाली संस्था (या सरकार) में निहित है। केवल मात्र आत्म-श्लाघा (या स्व-हित) की दिशा लिए राष्ट्र सरकारों के नेता (जो प्रत्येक देश में पार्टी व्यवस्था पर आधारित है) अपने लिए जायज या नाजायज तौर पर अथाह धन बटारने एवं सत्ता पर अन्तहीन कब्जा जमाए रखने में लगे हैं, उनको लोगों के हितों अथवा किसी भी पर्यावरणीय-जैविक संकट से कोई लेना-देना नहीं है। उनकी विशिष्ट जीवन-शैली 'कहना कुछ और करना कुछ' है। वे हमेशा गरीबों और वंचितों के लिए आँसू बहाते हैं, लेकिन हर वक्त अमीर और प्रभुत्वशाली लोगों की सेवा करते हैं।

23. कॉरपोरेट व्यवस्था एवं इसको लागू करने वाली संस्था का प्रथम समाजशास्त्रीय दोष एडम स्मिथवादी तथा मार्क्सवादी विकास मॉडलों (ये दोनों ही मॉडल विश्व के विभिन्न भागों में चल रही राष्ट्रीय राज्य व्यवस्था, जो अब पीछे हट रही है, के दो प्रामाणिक विकास पद्धतियों के रूप में कार्यरत रही है) की एक तरफा दार्शनिक समझ में निहित है। यह एकतरफा समझ है कि प्रकृति की व्यवस्था में अपने ग्रह पर और यहाँ तक कि ब्रह्माण्ड में मनुष्य सर्वश्रेष्ठ घटनाक्रम है। स्पष्टत: यह लोगों को मानव समाज और इसकी प्रत्येक वस्तु का एकमात्र निर्माणकर्त्ता पेश करता है। यह इस सामाजिक सच्चाई को दरकिनार करता है कि मानव समाज में परिवर्तन और विकास दो तरफा अन्तरक्रिया-एक तरफ प्रकृति और मानव समाज के बीच और दूसरी तरफ मानव समाज के अन्दर अन्तरक्रिया-से होता है।

24. दूसरी समाजशास्त्रीय गलती मानव स्वभाव के संबंध में एडम स्मिथ और मार्क्सवादी विकास मॉडल की एक तरफा समझ में निहित है। एडम स्मिथ का आर्थिक मॉडल यह मानता है कि मानव समुदाय की प्रकृति निजी स्वार्थ की है। मार्क्सवादी

आर्थिक सिद्धान्त मनुष्य की प्रकृति के प्रश्न पर दिग्भ्रमित धारणा रखता है। प्रथम, मनुष्य की प्रकृति सामाजिक है इस पर जोर देता है और अगले ही क्षण निरपेक्ष सामाजिक होने के गुण को औद्योगिक सर्वहारा (जो इस सिद्धान्त के अनुसार मानव समाज का मुक्तिदाता है) में तब्दील कर देता है और अन्तिम तौर पर सामाजिकता के समस्त एकाधिकार को कम्युनिस्ट पार्टी में निहित कर देता है। इस दृष्टिकोण के तहत मानव समाज को सामाजिक तौर पर बदलने की क्षमता अकेली कम्युनिस्ट पार्टी में ही समझता है।

25. वास्तव में, बहरहाल, मानव समुदाय का दुतरफा चरित्र है, एक तरफ जैविक चरित्र और दूसरी तरफ सामाजिक चरित्र। जैविक चरित्र का पहलू मानव समुदाय के व्यक्तिगत अस्तित्व को प्रतिबिम्बित करता है, जबकि सामाजिक चरित्र का पहलू उसके सामाजिक जीवन, कार्यशैली और संगठन को इंगित करता है।

IV. विश्व-विपदाओं का एक हकीकी प्रत्युत्तर एक प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम के आधार पर इसे पुनर्गठित करने में निहित

26. वर्तमान पर्यावरणीय-जैविक संकट का कारण विश्व कारपोरेट व्यवस्था को बताते हुए इसका (यानि संकट का) वास्तवविक प्रत्युत्तर यह है व हो सकता है कि एक प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम के आधार पर विश्व कारपोरेट व्यवस्था को पुनर्गठित (या आधुनिक) किया जाए, जिसके निम्न बिन्दु हैं-

दृष्टि : हमारे ग्रह की अखण्ड एवं अन्तरनिर्भर प्रकृति तथा **21 वीं सदी के राष्ट्र–राज्य की अन्तरनिर्भर सामाजिक वास्तविकता** प्रकृति-मानव केन्द्रित प्रतिमान **एक विश्व की दृष्टि प्रदान करता है।** जबकि 1945 का संयुक्त राष्ट्र चार्टर सम्प्रभुता व स्वतंत्र राष्ट्र की एक ऐसी दृष्टि देता है जो वर्तमान वास्तविकता के उलट है।

मूलभूत सिद्धान्त : ऊपर वर्णित दृष्टि के मूलभूत सिद्धान्त तथा पर्यावरण मानव प्राथमिकता मांग करती है कि संयुक्त राष्ट्र एक जनवादी आधारित तरीके एवं संगठन के रूप में पुर्नगठित हो। लेकिन संयुक्त राष्ट्र जैसा आज है, इस गुण की कमी रखता है। संयुक्त राष्ट्र की साधारण सभा का ढांचा व कार्यप्रणाली बिल्कुल लोकतांत्रिक है। लेकिन इसकी शीर्ष निर्णयकारी इकाई अर्थात सुरक्षा परिषद जो अत्यधिक अनुचित तथा पूर्णरूपेण अप्रजांत्रिक कायदों- जैसे सैनिक दृष्टि से सबसे ताकतवर देशों के लिए स्थायी सदस्यता व विशेष वीटो पावर से चरित्रित है।

स्पष्ट तौर से, इस वक्त, इस संगठन के पूर्ण लोकतांत्रिकरण की किसी भी तरह की कोशिश को पांच सदस्यीय सुविधा क्लब के भारी विरोध का सामना करना पड़ेगा। इसलिए वर्तमान ग्लोबल शक्ति संतुलन को ध्यान रखते हुए यह दिखता है कि सुरक्षा परिषद का पूर्ण जनवादीकरण में कुछ और समय लगेगा। थोड़े समय के लिए जब तक चल रहे शक्ति संतुलन में परिवर्तन हो तब तक स्थायी सदस्यता का नियम रखते हुए विशेष वीटो-पावर का नियम हटा लेना चाहिए। सुरक्षा परिषद की बाकी सभी सीटे साधारण सभा द्वारा चुनाव के जरिए भरी जानी चाहिये।

धनवान देशों का अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष व विश्व-बैंक के ऊपर से नियंत्रण कम हो तथा सबसे गरीब देशों को विश्व व्यापार संगठन में अधिक अधिकार दिये जाय।

विकास मॉडल : जन-पर्यावरण प्राथमिकता का मूलभूत सिद्धान्त (जो मानव विकास के लिए अनिवार्य है) एक नये प्रकार का विकास मॉडल की मांग करता है। जो पांच स्तरीय

बुनियादी सिद्धान्तों यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता (1:5 की आय भिन्नता एवं उन सभी को जो गरीबी की रेखा के नीचे हो या पूर्ण बेरोजगार हो, जिन्हें किसी ओर से कोई मदद नहीं हो, को सामाजिक सुरक्षा* का मौलिक अधिकार सुनिश्चित हो), उत्पादकता, लोकतांत्रिक और पारदर्शिता पर टिका है। ये पांच स्तरीय बुनियादी सिद्धान्त मानव के जैव-सामाजिक चरित्र से मेल खाते है, अर्थात यह मनुष्य के स्वहित को सामाजिक हित से जोड़ता है।

जन-पर्यावरण आधारित विकास मॉडल दो रूढ़िवादी राष्ट्रीय विकास मॉडलों यानि निगम चलित और सरकार निर्देशित की तुलना में विकास की समयानुकूल धारणा प्रस्तुत करता है। निगम चलित विकास मॉडल केवल लाभ या उत्पादकता (जो केवल धन के स्वामियों का हित सुरक्षित करता है) को एक मात्र लक्ष्य बनाता है जबकि सरकार निर्देशित मॉडल उत्पादन के साधनों का एक मात्र उद्देश्य सामाजीकरण (या राष्ट्रीयकरण) को चुनता हैं। (जो शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के हितों की सेवा करता है।) ये दोनों पारम्परिक राष्ट्रीय मॉडल मनुष्य के जैव-सामाजिक चरित्र के उलट केवल स्वहित को ही पूरा करते हैं, जैव-सामाजिक चरित्र स्वहित और सामाजिक हित दोनों को जोड़ता है। फिर, वे पर्यावरण को कोई प्राथमिकता नहीं देते और आर्थिकता अथवा विकास प्रक्रिया में लोकतंत्र और पारदर्शिता के मानदण्डों के पालन को कोई स्थान नहीं देते हैं, आगे जबकि कारपोरेट (निगमित) मॉडल समता (अथवा सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया अस्वीकार करता है वही सरकार निर्देशित मॉडल राजनीतिक समानता और उत्पादकता को पूर्णतया नकारता है।

यह मॉडल कॉरपोरेट चलित और राज्य आधारित दोनों विकास मॉडलों से उनके उद्देश्यों, प्रबंध और शैली के मामलों में भिन्नता रखता है।

जबकि कॉरपोरेट मॉडल पूंजी एवं पूंजी मालिकों को विकसित करने के लिए और राज्य मॉडल इसके शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के साथ मजदूर कुलीनता के हितों को आगे बढ़ाता है, प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आमतौर पर लोगों और पर्यावरण के हितों तथा खासतौर पर गरीबों और वंचित तबकों की सेवा पर आधारित है।

** सामाजिक सुरक्षा का मूल अधिकार संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रतिज्ञा-पत्र द्वारा सुनिश्चित हो, जो सभी देशों के लिए अनिवार्य तौर पर मान्य हो। सामाजिक सुरक्षा पर संयुक्त राष्ट्र प्रतिज्ञा-पत्र को लागू करने के लिए होने वाले खर्च का 50 प्रतिशत हिस्सा संबंधित राज्य द्वारा तथा 50 प्रतिशत हिस्सा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा खर्च किया जावे। संयुक्त राष्ट्र महासभा तुरन्त उच्च अधिकार प्राप्त संयुक्त राष्ट्र टिकाऊ विकास परिषद का गठन करे जो एक तरफ पर्यावरणीय स्रोतों के संरक्षण एवं संवर्धन तथा दूसरी तरफ मानव संसाधनों का विकास के लिए ग्लोबल ऑथिरिटी की तरह कार्य करे। यह परिषद पर्यावरणीय एवं मानवीय उन्नति के संदर्भ में मूलभूत अन्तर्राष्ट्रीय सुधार लागू करेगी, इस परिषद का वित्तीय प्रबंध (क) प्रत्येक देश के सैनिक बजट का 30 प्रतिशत अनिवार्य बचत से (ख)ग्लोबल टैक्स, जैसे विश्व व्यापार, तेल, कोयला, संचार उपग्रह, वायु यातायात, अंटार्टिका खनन, समुद्र तल खनन, महासागरीय यातायात पर टैक्स आदि से आयेगा। संयुक्त राष्ट्र महासभा इस राजस्व को संयुक्त राष्ट्र तथा संबंधित देशों में बांटने की प्रणाली तय करेगी जहां अल्प विकसित देशों का विशेष ध्यान रखा जायेगा।*

प्रबंध में जबकि कॉरपोरेट सेक्टर एकाधिकारवादी कॉरपोरेट प्रबंध एवं नियंत्रण का पक्षपोषण करता है और राजकीय क्षेत्र एकाधिकारवादी अफसरशाही प्रबंध एवं नियंत्रण का समर्थन करता है, प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल में स्थायी कॉरपोरेटरों की जगह संयुक्त कमेटियों द्वारा चुनी गयी पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों द्वारा लोकतांत्रिक प्रबंध एवं नियंत्रण की मान्यता है। प्रत्येक संयुक्त कमेटी 2/3 सदस्य साधारण शेयर धारियों द्वारा चुने हुए तथा 1/3 सदस्य मजदूरों द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि आधारित है।

शैली में, अधिकनायकवादी और गोपनीय कॉरपोरेट एवं राजकीय शैली के उलट प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल लोकतांत्रिक पारदर्शिता और जवाबदेही की शैली पर आधारित है।

विश्व शांति और सुरक्षा : प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल को सर्वप्रथम स्थायी और टिकाऊ शांति एवं सुरक्षा की आवश्यकता है। इस प्रकार की शांति की स्थापना के लिए यह जरूरी है कि प्रभुत्व, विशेषाधिकार एवं विशेष शक्तियों की राजनीति को छोड़ा जाये, परमाणु शस्त्रों पर पूरा नियंत्रण संयुक्त राष्ट्र का करके पूर्ण निशस्त्रीकरण द्वारा टकराव और सैनिक समाधान की नीति को समाप्त किया जाये, राजनीतिक, आर्थिक तथा विकसित एवं विकासशील देशों के बीच विकास का फर्क एवं अमीर और गरीब के बीच खाई को हटाया जाये।

राजनीति : प्रकृति-मानव केन्द्रित राजनीति को एक ऐसी राजनीति की आवश्यकता है जो पूर्ण लोकतांत्रिक सिद्धान्तों, गतिविधियों और ढांचे पर आधारित हो। इस प्रकार की राजनीति संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था में विशेष वीटो शक्तियों के कानून को समाप्त करे और निर्णय लेने में लोगों का अधिकतम संभव सशक्तिकरण को सुनिश्चित करे तथा पार्टी-केन्द्रित शक्ति की आवश्यक मात्रा में कमी करे।

आर्थिकता : प्रकृति-मानव केन्द्रित आर्थिकता एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता की मांग करती है, जिसकी धारणाएं, कानून और नियम पहले बताये गये 2 उच्च प्राथमिकताओं (यानि, मानव और पर्यावरण) तथा 5 सिद्धान्तों (यानि पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, लोकतंत्र तथा पारदर्शिता) की रोशनी में बनाये जाने की आवश्यकता है। मानव की जैव-सामाजिक प्रकृति के मध्यनजर, दोनों, एडम स्मिथ का 'स्वहित' मूलभूत आर्थिक सिद्धान्त और मार्क्स का प्रत्येक चीज का राज्य राष्ट्रीयकरण का बुनियाद आर्थिक नियम, एकतरफा है। लेकिन विडम्बना है कि दोनों मॉडल विकास, समृद्धि और उन्नति को मौद्रिक वृद्धि के रूप में मापते है न कि मानव और पर्यावरण विकास के सन्दर्भ में।

मूल्य व्यवस्था : प्रकृति-मानव केन्द्रित मूल्य व्यवस्था एक ऐसे जीवन के तरीके (या जीवन शैली) की मांग करती है जो बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों में समाहित करे और लोगों में तर्क संगत मानवतावादी एवं पर्यावरणवादी सोच, व्यवहार व संगठन को बढ़ावा दे।

अवधारणा : प्रकृति-मानव केन्द्रित अवधारणा को वैज्ञानिक वास्तविकतावाद पर आधारित होना चाहिये जो प्रकृति के घटनाक्रम का अध्ययन एवं व्याख्या वैज्ञानिक तथ्यों की रोशनी में तथा सामाजिक घटनाक्रमों का अध्ययन एवं व्याख्या मान्यता प्राप्त सूचना एवं आकड़ों के आधार पर करता है।

उपर्युक्त कार्यक्रम न केवल हमें पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों के कारपोरेट कुप्रबन्ध से उत्पन्न चुनौतियों का सामना करने योग्य बनाता है बल्कि भविष्य में इनके न्यायिक उपयोग का रास्ता भी दिखाता है। इन सबसे महत्वपूर्ण यह कि इस कार्यक्रम को लागू करने से एक तर्कसंगत मानव तथा एक वाजिब एवं संवदेनशील मानव समुदाय के क्रमबद्ध सर्जन के लिए अत्यधिक माकूल हालात का निर्माण होगा। 1-1-2003

* * * * *

प्रकृति–मानव केन्द्रित जन आन्दोलन का प्रोग्राम व संविधान

I. प्रकृति–मानव केन्द्रित जन–आन्दोलन (एन एच सी पी एम) क्यों?

1. उपर्युक्त जन-आन्दोलन की आवश्यकता वर्तमान मूलभूत विश्व वास्तविकता से पैदा होती है जहाँ मानव जाति को (अन्य जैव-घटनाक्रम की तरह) एक तरफ संगीन पर्यावरणीय जोखिम और दूसरी तरफ अति गम्भीर सामाजिक संकट द्वारा चुनौती दरपेश है। जीवन-मरण का ऐसा मुद्दा हम पर ऐसे जन-आन्दोलन के निर्माण की जिम्मेदारी डालता है। यह जन आन्दोलन पर्यावरणीय-जैविक संकट को एक वास्तविक प्रत्युत्तर देकर इसे समाप्त करने के लिए प्रतिबद्ध है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन एक स्वयंसेवी (स्वैछिक) संगठन है जो अपनी गतिविधियों के लिए किसी भी सरकारी या कोई अन्य बाहरी व आन्तरिक एजेन्सी से किसी तरह के अनुदान या वित्तीय सहायता पर निर्भर नहीं है। यह सम्पूर्ण जरूरी धनराशि को अपने सदस्यों, हमदर्दों और जीवन के सभी क्षेत्रों में न्यायप्रिय व तर्कसंगत लोगों से इकट्ठा करता हैं।

यह बड़ी प्रचार गतिविधियों या सम्मेलनों जैसी विशिष्ट पहलकदमियों के लिए जनता से चन्दा करता है।

II. प्रकृति–मानव केन्द्रित जन आन्दोलन का प्रोग्राम

(क) विद्यमान मूलभूत विश्व वास्तविकता

2. विद्यमान मूलभूत विश्व वास्तविकता को प्रारम्भिक बिन्दु मानते हुए यह प्रोग्राम मानता है कि आज मानव समुदाय अपने इतिहास के अति गम्भीर चौराहे पर खड़ा है। अति गम्भीर पर्यावरणीय-जैविक (मानव सहित) संकट से समाना करते हुए मानव को निर्णय करना है कि वह किस मार्ग पर जाए। यह चौराहा इसे केवल दो विकल्प देता है- जीवित रहना या विलुप्त होना। यहाँ तीसरा कोई रास्ता नहीं है।

3. पर्यावरणीय मोर्चे पर, ग्रीन हाउस गैसों की निरन्तर बढ़ रही मात्रा, घट रहे वैश्विक जल संसाधन, बड़े स्तर पर जंगलों का विनाश, 60 प्रतिशत से अधिक कृषि योग्य भूमि की गिरावट, बहुत-सी जैव प्रजातियों के लुप्त होने और अन्य प्राकृतिक उत्पादों के गैर-टिकाऊ उपयोग ने मानव जाति सहित समस्त जैव-जगत के सामने अस्तित्व का संकट पैदा कर दिया है। वैज्ञानिक समुदाय हमारे पर्यावरणीय पहलू की बिगड़ती अवस्था को काफी समय से उजागर कर रहा है। विभिन्न पर्यावरणीय मसलों पर कई जाने-माने वैज्ञानिकों ने बड़ी संख्या में रिपोर्टें प्रसारित की हैं। इनमें से कई रिपोर्टें ऐसी हैं जो इस संकट के परिपक्व होने की समय-सीमा की गणना पेश करती हैं, जिनमें से दो का विशेष उल्लेख करना आवश्यक है। इसमें से एक सन् 2000 में विश्व के सुप्रसिद्ध 6000 वैज्ञानिकों

की दी गई चेतावनी है जिसमें जोर दिया गया कि अगर मानव समुदाय ने ग्रीन हाउस गैसों का उत्पादन जल्द से जल्द नहीं रोका तो 21 वीं सदी के अन्त तक वैश्विक उष्माकरण (ग्लोबल वार्मिंग) की वजह से यह पृथ्वी जैव-जीवन के लायक नहीं रहेगी। दूसरी रिपोर्ट सन् 2002 की संयुक्त राष्ट्र के विश्व वन्य जीवन संस्थान का अध्ययन है जिसमें चेतावनी दी गई है कि अगर मानव समुदाय (खासकर धनवान देशों और धनवान लोगों ने) अपनी असंयमी और अपव्ययी जीवन-शैली को नहीं बदला तो 50 वर्षों में हमारा ग्रह पृथ्वी मानव जीवन के लिए गैर-टिकाऊ जगह बन जाएगी। अन्य वैज्ञानिक विशेषज्ञ जो इस संकट की समय-सीमा तो तय नहीं करते, परन्तु यह स्वीकार करते हैं कि पर्यावरणीय हालात अत्यधिक चुनौती भरे हैं।

4. मानव विकास के धरातल पर मानवीय विकास से सम्बन्धित लगभग सभी वैश्विक संस्थान, यानि संयुक्त राष्ट्र संघ, विश्व बैंक, अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन इत्यादि अब हमारे विद्यमान विकास मॉडल की गैर-टिकाऊ पद्धति पर जोर दे रहे हैं जो मुख्यत: असहनीय असमानता, गैर-समता, गरीबी और अन्याय से परिलक्षित होती है। **संयुक्त राष्ट्र 2002 की मानव विकास रिपोर्ट** जाहिर करती है दुनिया के अत्यधिक धनी 1 प्रतिशत की आय दुनिया के निर्धनतम 75 प्रतिशत से अधिक है। **सन् 2001 यू एन मानव विकास रिपोर्ट** में लिखा है कि विकासशीन देशों में 4.6 बिलियन (460 करोड़) लोगों में से 850 मिलियन (85 करोड़) से अधिक लोग अनपढ़ हैं, 1 बिलियन (100 करोड़) के आसपास शुद्ध पानी के स्त्रोतों से वंचित है और 2.4 बिलियन (240 करोड़) लोगों को बुनियादी शौच सुविधाएँ हासिल नहीं है। करीब 325 मिलियन (32.5 करोड़) लड़के लड़कियाँ स्कूल नहीं जाते हैं और पाँच साल से कम उम्र के 11 मिलियन (1 करोड़ 10 लाख) बच्चे हर साल संक्रामक रोग से मर जाते हैं, यह संख्या प्रतिदिन 30 हजार से अधिक बैठती है। 1.2 बिलियन (120 करोड़) लोग प्रतिदिन 1 डालर से कम पर गुजारा करते हैं। (1993 पी पी पी यू एस डालर) और 2.8 बिलियन (280 करोड़) लोग प्रतिदिन 2 डालर से कम पर गुजारा करते हैं। यह वंचित पर विकासशील देशों तक सीमित नहीं है। ओ ई सी डी (आर्थिक सहयोग और विकास संगठन) देशों में 130 मिलियन (13 करोड़) लोग गरीब हैं, 34 मिलियन (3 करोड़ 40 लाख) बेरोजगार हैं तथा प्रौढ़ों में औसतन अशिक्षा की दर 15 प्रतिशत है। यह रिपोर्ट आगे कहती है कि अमेरिका में सबसे धनी 10 प्रतिशत लोगों (करीब 2.5 करोड़) की संयुक्त आय दुनिया के 43 प्रतिशत गरीब लोगों (करीब 200 करोड़) की आय के बराबर थी। **1999 की मानव विकास रिपोर्ट** कहती है कि 1990 के दशक के अन्त में अधिकतम आय वाले दशों में रहने वाली विश्व की 20 प्रतिशत आबादी विश्व जी डी पी के 86 प्रतिशत की मालिक है, जबकि विश्व की सबसे निचली (गरीब) 20 प्रतिशत आबादी केवल मात्र 1 प्रतिशत आय की मालिक है, इसी तरह विश्व निर्यात बाजार के 82 प्रतिशत पर 20 प्रतिशत अमीर आबादी का कब्जा है, जबकि निचली 20 प्रतिशत आबादी के नियंत्रण में 1 प्रतिशत हिस्सा है, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश में उपर्युक्त अमीर आबादी का हिस्सा 68 प्रतिशत के मुकाबले गरीब आबादी का हिस्सा 1 प्रतिशत है और आज संचार के आधारभूत साधन विश्व की टेलिफोन लाइन के 74 प्रतिशत हिस्से का उपयोग उपर्युक्त अमीर आबादी करती है जबकि निचली 20 प्रतिशत आबादी मात्र 1.5 प्रतिशत लाइन का उपयोग करती है। **1996 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट** कहती है कि विश्व के अधिकतम धनी केवल 3 लोगों की कुल

सम्पत्ति अल्पतम विकासशीन 48 देशों की संयुक्त जी डी पी (सम्पत्ति) के बराबर है। विश्व के अधिकतम धनी 225 लोगों की संयुक्त सम्पत्ति 1 ट्रिलियन (1000 अरब) डालर है जो 47 प्रतिशत गरीब लोगों (जिनकी संख्या 250 करोड़ बनती है) की कुल आय के बराबर है। विश्व के अधिकतम धनी 32 लोगों की सम्पत्ति दक्षिण एशिया (भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान और मालदीव) तथा ईरान व अफगानिस्तान की जी डी पी (सकल घरेलू उत्पाद) से अधिक है।

रुचिकर बात यह है कि एक विशेषज्ञ के अनुमान के अनुसार नई दिल्ली के मुगल बादशाहों (जैसे जहांगीर, शाहजहाँ आदि) की आय अपनी सत्ता के उच्चतम काल में वर्तमान कीमतों के अनुसार 15000 रुपये वार्षिक हुआ करती थी।

5. उभर रही विश्व व्यवस्था पर प्रभुत्व व नियंत्रण के लिए अमेरिकी आक्रामक गतिविधियों के संबंध में स्थिति यह है कि अमेरिका विश्व का सार्वभौमिक सिपाही बनने की कोशिश कर रहा है। अफगानिस्तान में इसकी अकेले सैनिक सफलता से यह और अधिक युद्धकारी और एकलवादी बन गया है। अब इसने अपने ही द्वारा आरोपित विश्व आतंकवाद के खिलाफ सतत युद्ध की घोषणा कर दी है जबकि आतंकवाद को न तो संयुक्त राष्ट्र ने और ना ही इसके किसी सदस्य ने परिभाषित किया है। इसकी आक्रामक गतिविधि के पहले निशाने में तथाकथित 'दुष्ट-राज्य' यानि ईराक, ईरान, उत्तर कोरिया शामिल हैं, जो संयुक्त राष्ट्र के सदस्य देश हैं और जिन्हें किसी भी तर्क के आतंकवादी नहीं ठहराया जा सकता। हालिया घोषित अमेरिकी अक्रामक योजना को चीन, रूस और यूरोपीय समुदाय सहित समस्त विश्व ने नकारा है। परन्तु अमेरिका विश्व पर अपनी हुक्मरानी स्थापित करने के लिए नई युद्ध परियोजना शुरू करने के अपने इरादे के प्रति नरम नहीं पड़ा है।

6. रूढ़िवादी रूझानों की तरफ नजर डालें तो भिन्न-भिन्न किस्मों के धार्मिक रूढ़िवाद विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच घृणा पैदा कर रहे हैं और लोगों की मानसिकता को धर्मोन्मादी बना रहे हैं। स्वतंत्र बाजार दर्शन गरीब और अमीर के बीच न पाटे जा सकने वाली खाई पैदा कर रहा है। राज्य-नेतृत्व वाली कम्युनिस्ट कल्पना मजदूरों को पिछड़ा और मजदूरी-अभिमुख रख रही है।

7. दिन-प्रतिदिन बढ़ रहे अपराध, हिंसा, भ्रष्टाचार और महिलाओं, बच्चों, आदिवासियों, असंगठित मजदूरों इत्यादि को अधिकारों से वंचित रखने से बढ़ रहे खतरे विश्वव्यापी घटनाक्रम बन गये हैं। कोई भी देश इन खतरों से अछूता नहीं है।

(ख) पर्यावरणीय-जैविक संकट के कारण

8. विद्यमान पर्यावरणीय-जैविक संकट का दीर्घकालीन कारण कारपोरेट व्यवस्था में निहित है जिसका उद्देश्य अधिकतम लाभ या अधिकतम वृद्धि दर हासिल करना है। उदारवादी और मार्क्सवादी दोनों धारणाएँ यह स्वीकार करती हैं कि सामाजिक सम्पन्नता और प्रगति को जाँचने का एकमात्र मापदण्ड वृद्धि दर है। अधिकतम वृद्धि दर पाने की अपनी खोज में इन दोनों ने पर्यावरणीय एवं मानवीय विकास के पहलुओं को बर्बादी के कगार पर ला खड़ा किया है। चूँकि धन और सत्ता पाना अधिकतम स्व-हित का प्रतिनिधित्व करता है, सम्पूर्ण दुनिया अब इन दो 'जीवन दायी अमृत' के पीछे भाग रही है।

9. विद्यमान पर्यावरणीय-जैविक संकट का तात्कालिक कारण कारपोरेट व्यवस्था को लागू करने वाली संस्था (या सरकार) में निहित है। केवल मात्र आत्मा-श्लाघा (या

स्व-हित) की दिशा लिए राष्ट्र-सरकारों के नेता (जो प्रत्येक देश में पार्टी व्यवस्था पर आधारित है) अपने लिए जायज या नाजायज तौर पर अथाह धन बटारने एवं सत्ता पर अन्तहीन कब्जा जमाए रखने में लगे हैं, उनको लोगों के हितों अथवा किसी भी पर्यावरणीय-जैविक संकट से कोई लेना-देना नहीं है। उनकी विशिष्ट जीवन-शैली 'कहना कुछ और करना कुछ' है। वे हमेशा गरीबों और वंचितों के लिए आँसू बहाते हैं, लेकिन हर वक्त अमीर और प्रभुत्वशाली लोगों की सेवा करते हैं।

10. कॉरपोरेट व्यवस्था एवं इसको लागू करने वाली संस्था का प्रथम समाजशास्त्रीय दोष एडम स्मिथवादी तथा मार्क्सवादी विकास मॉडलों (ये दोनों ही मॉडल विश्व के विभिन्न भागों में चल रही राष्ट्रीय राज्य व्यवस्था, जो अब पीछे हट रही है, के दो प्रामाणिक विकास पद्धतियों के रूप में कार्यरत रही है) की एक तरफा दार्शनिक समझ में निहित है। यह एकतरफा समझ है कि प्रकृति की व्यवस्था में अपने ग्रह पर और यहाँ तक कि ब्रह्माण्ड में मनुष्य सर्वश्रेष्ठ घटनाक्रम है। स्पष्टत: यह लोगों को मानव समाज और इसकी प्रत्येक वस्तु का एकमात्र निर्माणकर्त्ता पेश करता है। यह इस सामाजिक सच्चाई को दरकिनार करता है कि मानव समाज में परिवर्तन और विकास दो तरफा अन्तरक्रिया–एक तरफ प्रकृति और मानव समाज के बीच और दूसरी तरफ मानव समाज के अन्दर अन्तरक्रिया–से होता है।

11. दूसरी समाजशास्त्रीय गलती मानव प्रकृति के संबंध में एडम स्मिथ और मार्क्सवादी विकास मॉडल की एक तरफा समझ में निहित है। एडम स्मिथ का आर्थिक मॉडल यह मानता है कि मानव समुदाय की प्रकृति निजी स्वार्थ की है। मार्क्सवादी आर्थिक सिद्धान्त मनुष्य की प्रकृति के प्रश्न पर दिग्भ्रमित धारणा रखता है। प्रथम, मनुष्य की प्रकृति सामाजिक है इस पर जोर देता है और अगले ही क्षण निरपेक्ष सामाजिक होने के गुण को औद्योगिक सर्वहारा (जो इस सिद्धान्त के अनुसार मानव समाज का मुक्ति दाता है) में तब्दील कर देता है और अन्तिम तौर पर सामाजिकता के समस्त एकाधिकार को कम्युनिस्ट पार्टी में निहित कर देता है। इस दृष्टिकोण के तहत मानव समाज को सामाजिक तौर पर बदलने की क्षमता अकेली कम्युनिस्ट पार्टी में ही समझता है।

12. वास्तव में, बरहाल, मानव समुदाय का दुरतरफा चरित्र है, एक तरफ जैविक चरित्र और दूसरी तरफ सामाजिक चरित्र। जैविक चरित्र का पहलू मानव समुदाय के व्यक्तिगत अस्तित्व को प्रतिबिम्बित करता है, जबकि सामाजिक चरित्र का पहलू उसके सामाजिक जीवन, कार्यशैली और संगठन को इंगित करता है।

(ग) विद्यमान पर्यावरणीय-जैविक संकट का वास्तविक जवाब एक प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम के आधार पर कॉरपोरेट व्यवस्था का पुनर्गठन करने में

लक्ष्य : वर्तमान पर्यावरणीय- जैविक संकट का कारण विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था को बताते हुए इसका (यानि संकट का) वास्तविक प्रत्युत्तर यह है व हो सकता है कि विश्व कारपोरेट व्यवस्था को एक प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम के आधार पर पुनर्गठित (या आधुनिक) किया जाए, जिसके निम्न बिन्दु हैं–

दृष्टि : हमारे ग्रह की अखण्ड एवं अन्तरनिर्भर प्रकृति तथा 21वीं सदी की राष्ट्र-राज्य की अन्तरनिर्भर सामाजिक वास्तविकता, प्रकृति-मानव केन्द्रित प्रतिमान एक विश्व

की दृष्टि प्रदान करता है। जबकि 1945 का संयुक्त राष्ट्र चार्टर सम्प्रभुता व स्वतंत्र राष्ट्र की एक ऐसी दृष्टि देता है जो वर्तमान वास्तविकता के उलट है।

मूलभूत सिद्धान्त : ऊपर वर्णित दृष्टि के मूलभूत सिद्धान्त में सर्वप्रथम लोगों एवं पर्यावरण को ग्लोबल क्रियाकलापों के केन्द्र में रखा जाना चाहिये यानि एक तरफ लोगों के हितों की सेवा करना तथा दूसरी तरफ पर्यावरण को संरक्षित करना।

विश्वव्यवस्था : प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टि के मूलभूत सिद्धान्त तथा पर्यावरण-मानव प्राथमिकता मांग करती है कि संयुक्त राष्ट्र एक जनवादी आधारित तरीके एवं संगठन के रूप में पुर्नगठित हो। लेकिन संयुक्त राष्ट्र जैसा आज है, इस गुण की कमी रखता है। संयुक्त राष्ट्र की साधारण सभा का ढांचा व कार्यप्रणाली बिल्कुल लोकतांत्रिक है। लेकिन इसकी शीर्ष निर्णयकारी इकाई अर्थात सुरक्षा परिषद जो अत्यधिक अनुचित तथा पूर्ण रूपेण अप्रजातांत्रिक कायदों–जैसे सैनिक दृष्टि से सबसे ताकतवर देशों के लिए स्थायी सदस्यता व विशेष वीटो पावर–से चरित्रित है।

स्पष्ट तौर से, इस वक्त, इस संगठन के पूर्ण लोकतांत्रिकरण की किसी भी तरह की कोशिश को पांच सदस्यीय सुविधा क्लब के भारी विरोध का सामना करना पड़ेगा। इसलिए वर्तमान ग्लोबल शक्तिसंतुलन को ध्यान में रखते हुए यह दिखता है कि सुरक्षा परिषद का पूर्ण जनवादीकरण में कुछ और समय लगेगा। थोड़े समय के लिए जब तक चल रहे शक्ति संतुलन में परिवर्तन हो तब तक स्थायी सदस्यता का नियम रखते हुए विशेष वीटो-पावर का नियम हटा लेना चाहिए। सुरक्षा परिषद की बाकी सभी सीटें साधारण सभा द्वारा चुनाव के जरिए भरी जानी चाहिये।

धनवान देशों का अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष व विश्व-बैंक के ऊपर से नियंत्रण कम हो तथा सबसे गरीब देशों को विश्व व्यापार संगठन में अधिक अधिकार दिये जाय।

विकास मॉडल : जन-पर्यावरण प्राथमिकता का मूलभूत सिद्धान्त (जो मानव विकास के लिए अनिवार्य है) एक नये प्रकार का विकास मॉडल की मांग करता है। जो पांच स्तरीय बुनियादी सिद्धान्तों यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन (पर्यावरण को बढ़ावा देने वाली योजनाओं सहित), समता (1:5 की आय भिन्नता एवं उन सभी को जो गरीबी की रेखा के नीचे हो या पूर्ण बेरोजगार हो, जिन्हें किसी ओर से कोई मदद नहीं हो, को सामाजिक सुरक्षा* का मौलिक अधिकार, उत्पादकता, लोकतांत्रिक और पारदर्शिता पर टिका है। ये

---

* *सामाजिक सुरक्षा का मूल अधिकार संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रतिज्ञा-पत्र द्वारा सुनिश्चित हो, जो सभी देशों के लिए अनिवार्य तौर पर मान्य हो। सामाजिक सुरक्षा पर संयुक्त राष्ट्र प्रतिज्ञा-पत्र को लागू करने के लिए होने वाले खर्च का 50 प्रतिशत हिस्सा संबंधित राज्य द्वारा तथा 50 प्रतिशत हिस्सा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा खर्च किया जावे। संयुक्त राष्ट्र महासभा तुरन्त उच्च अधिकार प्राप्त संयुक्त राष्ट्र टिकाऊ विकास परिषद का गठन करे जो एक तरफ पर्यावरणीय स्रोतों के संरक्षण एवं संवर्धन तथा दूसरी तरफ मान संसाधनों का विकास के लिए ग्लाबल ऑथिरीटी की तरह कार्य करे। यह परिषद पर्यावरणीय एवं मानवीय उन्नति के संदर्भ में मूलभूत अन्तर्राष्ट्रीय सुधार लागू करेगी, इस परिषद का वित्तीय प्रबंध (क) प्रत्येक देश के सैनिक बजट का 30 प्रतिशत अनिवार्य बचत से (ख) ग्लोबल टैक्स जैसे विश्व व्यापार, तेल, कोयला, संचार उपग्रह, वायु यातायात, अंटार्टिका खनन, समुद्र तल खनन, महासागरीय यातायात पर टैक्स आदि से आयेगा। संयुक्त राष्ट्र महासभा इस राजस्व को संयुक्त राष्ट्र तथा संबंधित देशों में बांटने की प्रणाली तय करेगी जहां अल्प विकसित देशों का विशेष ध्यान रखा जायेगा।*

पांच स्तरीय बुनियादी सिद्धान्त मानव के जैव-सामाजिक चरित्र से मेल खाते हैं, अर्थात यह मनुष्य के स्वहित को सामाजिक हित से जोड़ता है।

जन-पर्यावरण आधारित विकास मॉडल दो रूढ़ीवादी राष्ट्रीय विकास मॉडलों यानि निगम चलित और सरकार निर्देशित की तुलना में विकास की समायानुकूल धारणा प्रस्तुत करता है। निगम चलित विकास मॉडल केवल लाभ या उत्पादकता (जो केवल धन के स्वामियों का हित सुरक्षित करता है) को एक मात्र लक्ष्य बनाता है जबकि सरकार निर्देशित मॉडल उत्पादन के साधनों का एक मात्र उद्देश्य सामाजिकरण (या राष्ट्रीयकरण) को चुनता हैं। (जो शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के हितों की सेवा करता है) ये दोनों पारम्परिक राष्ट्रीय मॉडल मनुष्य के जैव-सामाजिक चरित्र के उलट केवल स्वहित को ही पूरा करते हैं, जैव-सामाजिक चरित्र स्वहित और सामाजिक हित दोनों को जोड़ता है। फिर, वे पर्यावरण को कोई प्राथमिकता नहीं देते और आर्थिकता अथवा विकास प्रक्रिया में लोकतंत्र और पारदर्शिता के मानदण्डों के पालन को कोई स्थान नहीं देते हैं, आगे जबकि कारपोरेट (निगमित) मॉडल समता (अथवा सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया अस्वीकार करता है वही सरकार निर्देशित मॉडल राजनीतिक समानता और उत्पादकता को पूर्णतया नकारता है।

यह मॉडल कॉरपोरेट चलित और राज्य आधारित दोनों विकास मॉडलों से उनके उद्देश्यों, प्रबंध और शैली के मामलों में भिन्नता रखता है।

प्रबंध में जबकि कॉरपोरेट सेक्टर एकाधिकारवादी कॉरपोरेट प्रबंध एवं नियंत्रण का पक्षपोषण करता है और राजकीय क्षेत्र एकाधिकारवादी अफसरशाही प्रबंध एवं नियंत्रण का समर्थन करता है, प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल के स्थायी कॉरपोरेटरों की जगह संयुक्त कमेटियों द्वारा चुनी गयी पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों द्वारा लोकतांत्रिक प्रबंध एवं नियंत्रण की मान्यता है। प्रत्येक संयुक्त कमेटी में 2/3 सदस्य साधारण शेयर धारियों द्वारा चुने हुए तथा 1/3 सदस्य मजदूरों द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि होते हैं।

शैली में, अधिकनायकवादी और गोपनीय कॉरपोरेट एवं राजकीय शैली के उलट प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल लोकतांत्रिक, पारदर्शिता और जवाबदेही की शैली पर आधारित है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल इस पर दृढ़ है कि कारपोरेट एवं सरकारी नेतृत्व वाले मॉडलों की इजारेदारी तोड़ने के लिए निम्नलिखित कदम रखे जाएं।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों में सभी शेयरों को साधारण शेयर करार दिया जाए। इन शेयरों के 5 प्रतिशत से अधिक शेयर रखने की किसी को स्वीकृति न दी जाए। यद्यपि, किन्हीं विशेष मामलों में सरकार को एक-तिहाई साधारण शेयर रखने की स्वीकृति दी जा सकती है। प्रोमोटर्स (प्रोत्साहक) शेयरों (कारपोरेट क्षेत्र में अब छाये हुए) को पूर्णतया रद्द किया जाए।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के प्रबन्ध को पूर्णतया लोकतांत्रिक बनाया जाए। इस मामले में साधारण शेयरधारकों को प्रबंध मण्डल में दो तिहाई प्रतिनिधित्व दिया जाए। बाकी बचा एक-तिहाई प्रतिनिधित्व उस कम्पनी के सम्बन्धित मजदूरों के लिए आरक्षित रखा जाए। मजदूर प्रतिनिधियों का चुनाव आम मजदूरों और कर्मचारियों दोनों से किया जाए, जिन्हें साधारण शेयर धारकों के समान सभी अधिकार होंगे।

ऐसे उद्यम जिनमें साधारण शेयरों के एक-तिहाई भाग पर सरकार का नियंत्रण हो, उनके प्रबन्ध मण्डल में सभी शेयरधारकों का प्रतिनिधित्व निम्न क्रम में रखा जाए- साधारण शेयर धारकों को 50 प्रतिशत, मजदूरों को 33 प्रतिशत सरकार को 17 प्रतिशत। प्रबन्ध मण्डल को तीन साल के काल के लिए चुना जाए।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल का उपर्युक्त वर्णित जनवादी क्षेत्र इजारेदारी वाले कॉरपोरेट और सरकार संचालित दोनों क्षेत्रों की तुलना में कहीं अधिक उत्पादक (संभवत: दोगुना) होगा। पहले वाले (यानि जनवादी क्षेत्र) की वृद्धि दर (या सम्पदा उत्पादन की दर) अधिक होने का कारण इसके (यानि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल के) अत्यधिक विकसित मानवीय और पर्यावरणीय संसाधनों में निहित है। इस मॉडल में मानवीय और पर्यावरणीय संसाधनों के अति विकास का कारण इसके द्वारा 1:5 के अन्तर के साथ समतावादी आय सुनिश्चित करने और जीवन के सभी क्षेत्रों में सब लोगों के लिए सामाजिक सुरक्षा को मूलभूत अधिकार बनाने, इसके द्वारा लोगों व पर्यावरण को मुख्य प्राथमिकताओं में रखने के मूलभूत सिद्धान्त, विश्व शान्ति और सुरक्षा के प्रति इसकी वचनबद्धता, इसके द्वारा गांव से लेकर विश्व स्तर तक और अन्य सभी आर्थिक, वित्तीय और व्यापारिक वैश्विक संगठनों में लोगों (खासकर महिलाओं, मजदूरों और वैज्ञानिकों, तकनीकीविदों) के सशक्तिकरण करने, इसकी वास्तविक और तर्कसंगत आर्थिकता तथा इसके मानवीय व पर्यावरणीय सांस्कृतिक मूल्यों में निहित है।

सरकार-नियंत्रित क्षेत्र की अव्यावहारिकता को पहले के सोवियत संघ के पतन में और इस मॉडल को विश्व के भूतपूर्व समाजवादी देशों द्वारा नकारने में देखा जा सकता है। कारपोरेट क्षेत्र के गैर-प्रभावित होने को भी लगातार बढ़ रही असमानता, गरीबी, भूखमरी, बेरोजगारी, बेघरबारता और सबसे ऊपर संसार भर में कॉरपोरेट मॉडल के निरन्तर गैर-टिकाऊसंकट (कभी यहाँ और कभी वहाँ घटित होने वाले संकट) में देखा जा सकता है।

पर्यावरणीय और मानवीय मसलों पर मानव समूह (या लोगों) के नियंत्रण या प्रबन्ध की बढ़ती मांग और भूमिका दर्शाती है कि मानव समाज किस दिशा में बढ़ रहा है।

कारपोरेट क्षेत्र के हालिया अख्तियार किये सामाजिक जवाबदेही और नैतिक व्यवहार के दर्शन से भी जाहिर होता है कि कारपोरेट क्षेत्र के लोक कल्याण के मूलभूत सिद्धान्त कारगर नहीं रहे हैं, जिससे आर्थिक विकास प्रक्रिया (जिसका एकमात्र उद्देश्य अधिकतम लाभ है) में प्रत्येक सामाजिक क्षतिपूर्ति की उपेक्षा की जाती है।

विश्व शांति और सुरक्षा : एक प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल को सर्वप्रथम स्थायी और टिकाऊ शांति एवं सुरक्षा की आवश्यकता है। इस प्रकार की शांति की स्थापना के लिए यह जरूरी है कि प्रभुत्व, विशेषाधिकार एवं विशेष शक्तियों की राजनीति को छोड़ा जाये, परमाणु शस्त्रों पर पूरा नियंत्रण संयुक्त राष्ट्र का करके पूर्ण निशस्त्रीकरण द्वारा टकराव और सैनिक समाधान की नीति को समाप्त किया जाये, राजनीतिक, आर्थिक तथा विकसित एवं विकासशील देशों के बीच विकास का फर्क एवं अमीर और गरीब के बीच खाई को हटाया जाये।

राजनीति : प्रकृति-मानव केन्द्रित राजनीति को एक ऐसी राजनीति की आवश्यकता है जो पूर्ण लोकतांत्रिक सिद्धान्तों, गतिविधियों और ढांचे पर आधारित हो। इस प्रकार की

राजनीति संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था में विशेष वीटो शक्तियों के कानून को समाप्त करे और निर्णय लेने में लोगों का अधिकतम संभव सशक्तिकरण को सुनिश्चित करे तथा पार्टी-केन्द्रित शक्ति का आवश्यक मात्रा में कमी करे।

आर्थिकता : प्रकृति-मानव केन्द्रित आर्थिकता एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता की मांग करती है, जिसकी धारणाएं, कानून और नियम पहले बताये गये 2 उच्च प्राथमिकताओं (यानि, मानव और पर्यावरण) तथा 5 सिद्धान्तों (यानि पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, लोकतंत्र तथा पारदर्शिता) की रोशनी में बनाये जाने की आवश्यकता है। मानव की जैव-सामाजिक प्रकृति के मध्यनजर, दोनों, एडम स्मिथ का 'स्वहित' मूलभूत आर्थिक सिद्धान्त और मार्क्स का प्रत्येक चीज का राज्य राष्ट्रीयकरण का बुनियादी आर्थिक नियम, एकतरफा है। लेकिन विडम्बना है कि दोनों मॉडल विकास, समृद्धि और उन्नति को मौद्रिक वृद्धि के रूप में मापते हैं न कि मानव और पर्यावरण विकास के सन्दर्भ में।

मूल्य व्यवस्था : प्रकृति-मानव केन्द्रित मूल्य व्यवस्था एक ऐसे जीवन के तरीके (या जीवन शैली) की मांग करती है जो बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों में समाहित करे और लोगों में तर्क संगत मानवतावादी एवं पर्यावरणीय सोच, व्यवहार व संगठन को बढ़ावा दे।

अवधारणा : प्रकृति-मानव केन्द्रित अवधारणा को वैज्ञानिक वास्तविकतावाद पर आधारित होना चाहिये जो प्रकृति के घटनाक्रम का अध्ययन एवं व्याख्या वैज्ञानिक तथ्यों की रोशनी में तथा सामाजिक घटनाक्रमों का अध्ययन एवं व्याख्या मान्यता प्राप्त सूचना एवं आकड़ों के आधार पर करता है।

सार–संक्षेप में उपर्युक्त कार्यक्रम न केवल पर्यावरण एवं मानव संसाधनों के कारपोरेअ कुप्रबन्ध द्वारा पैदा की गई चुनौतियों का सामना करने के योग्य बनाता है, बल्कि उनका (यानि, प्रकृति एवं मानव संसाधनों का) भविष्य में न्यायपूर्ण उपयोग करने की राह भी दिखाता है। इस सब से उम्पर, इस कार्यक्रम को लागू करना नई उभर रही प्रकृति–मानव केन्द्रित व्यवस्था में तर्कसंगत मानव एवं एक विवेकपूर्ण और संवेदनशील मानव समाज के क्रमिक विकास के लिए अत्यधिक समुचित हालात पैदा करता है।

प्रकृति–मानव केन्द्रित व्यवस्था पर्यावरणीय हितों के साथ मानवीय मसलों को जोड़ने वाली एक विश्व व्यवस्था होगी, एक विश्व जो पर्यावरणीय मानवीय आवश्यकता के अनुकूल होगा न कि मानवीय लालच अभिमुख, एक विश्व जो युद्धविहीन और सीमाविहीन होगा, एक विश्व जो टिकाऊ, समता, उत्पादकता, लोकतंत्र एवं पारदर्शिता के विकास मॉडल पर आधरित होगा जो आय में केवल मात्र 1:5 के अन्तर को स्वीकृति देगा तथा सभी वंचित, गरीब, बेरोजगार आदि के लिए सामाजिक सुरक्षा एक मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित करेगा तथा एक विश्व जो पर्यावरणीय एवं मानवीय मूल्यों द्वारा पहचाना जाएगा। व्यवस्थागत परिवर्तन का समय आ चुका है। आइए, हम इस अवसर को हाथ से जाने न दें।

III. प्रकृति–मानव केन्द्रित जन आन्दोलन (एनएचसीपीएम) का परिप्रेक्ष्य

सभी चीजों पर पर्यावरणीय-मानवीय नजरियें से दृष्टिपात करना।

IV. प्रकृति–मानव केन्द्रित जन आन्दोलन के चार–स्तरीय मुख्य कार्य

1. लोगों में प्रकृति-मानव केन्द्रित जागृति को तीव्रता से फैलाने पर ध्यान केन्द्रित किया जाए। जनजागृति के स्तर को जनप्रेरणा के स्तर तक बढ़ाया जाए और इस जनप्रेरणा को लोगों के तर्कसंगत सोच के स्तर में परिवर्तित किया जाए तथा अन्ततः एक तर्कसंगत मानव एवं प्रकृति मानव केन्द्रित मानवीय समुदाय के स्तर पर विकसित करने की कोशिश की जाए। यह प्रक्रिया सर्वप्रथम स्वयं से शुरू की जाए।

2. विशेषतौर पर लोगों में प्रकृति मानव केन्द्रित कार्यक्रम की धारणा को लोकप्रिय बनाया जाए जिससे लोग सही व गलत का फर्क करने के योग्य बन सकें।

3. आम तौर पर उन असूलों पर चला जाए ताकि हम जो कुछ भी करें, वह हमें लक्ष्य प्राप्ति की ओर ले जाए।

4. जनता में आशावाद की भावना को विकसित किया जाए एवं इस भावना को उस स्तर तक बढ़ाया जाए, जिससे लोगों में यह आत्मविश्वास बने कि वे मौजूदा गैर टिकाऊ विश्व को बदल सकते हैं और एक बेहतर भविष्य का निर्माण कर सकते हैं।

V. प्रकृति–मानव केन्द्रित जन आन्दोलन का संगठनात्मक ढाँचा

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन का सात स्तरीय ढाँचा है- (क) सदस्यता : जो कोई भी इसके कार्यक्रम, संगठनात्मक शैली एवं नियमों को स्वीकार करता है वह इसका सदस्य बन सकता है। यहाँ, वंचित, गरीब, बेरोजगार, नेक और समझदार लोगों को सदस्य बनाने की आवश्यकता है। (ख) गाँव/शहर के वार्ड स्तर की इकाइयाँ (ग) पंचायत स्तर की इकाइयाँ एवं (घ) तहसील (या ब्लॉक) (ड) जिला (च) राज्य व (छ) राष्ट्रीय स्तर की इकाइयाँ गठित करना। प्रत्येक इकाई निम्न पदाधिकारियों से गठित है- अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, सचिव एवं कोषाध्यक्ष।

VI. प्रकृति–मानव केन्द्रितत जन आन्दोलन की संगठनात्मक शैली

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन की शैली निम्न सिद्धान्तों पर आधारित होगी-

1. सिद्धान्त को व्यावहार से जोड़ा जाए एवं इसके विपरीत व्यवहार को सिद्धान्त से जोड़ा जाए।

2. साधनों को साध्य से जोड़ा जाए एवं इसके विपरीत साध्य को साधनों से जोड़ा जाए।

3. सचेत रहकर अपने अहम को प्रबन्धित किया जाए जिससे हर जगह शालीनतापूर्ण व्यवहार हो।

4. हर परिस्थिति में न्यायसंगत रहा जाए।

5. सभी किस्म की गतिविधियों में लोकतांत्रिक शैली अपनाई जाए।

6. सभी प्रकार की गतिविधियों में शान्तिपूर्ण तरीके लागू करने के सिद्धान्त को अपनाया जाए, विवादों को बातचीत और विचार-विमर्श के तरीके से सुलझाया जाए।

7. निर्णय लेने में मुख्य तरीका आम सहमति का रखा जाए।

8. ऊपर से नीचे लेकर तक सभी संगठनात्मक, इकाइयों का चुनाव किया जाए। हर वर्ष चुनाव करवाए जाएं। कोई भी व्यक्ति किसी भी पद पर एक बार से अधिक नहीं रह सकता।

9. सभी स्तर पर स्वतंत्र एवं खुलकर बहस की जाए।

10. आम दिशा तय करने एवं उसे लागू करने में सभी सदस्यों को शामिल करना सुनिश्चित किया जाए।

VII. प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन के मुख्य कार्य को लागू करने की गतिविधि

ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि जन आन्दोलन को अपना लक्ष्य प्राप्त करने के लिए एक विशिष्ट जनजागृति, प्रेरणा एवं चेतना की आवश्यकता होती है। हमारे इस आन्दोलन ने भी उपर्युक्त ऐतिहासिक स्वीकृत मांग को किसी भी जन आन्दोलन की सफलता के लिए अति महत्वपूर्ण कार्य के तौर पर अपनाया है।

(अ)

हमारी राय में आज के समय में जनजागृति को बढ़ाने के लिए दो चीजें अति आवश्यक हैं-

(क) अपने प्रकृति-मानव हितैषी कार्यक्रम के बारे में पर्याप्त समझ रखना (किसी भी प्रश्न का जवाब देने लायक) तथा (ख) सामाजिक चेतना, विशिष्ट समस्याओं, राजनीतिक, राजनीतिक प्रतिबद्धताओं, सांस्कृतिक मूल्यों एवं हमारे निश्चित श्रोताओं, लक्षित सामाजिक समूह या व्यक्ति की प्रचलित मन: स्थिति के बारे में काफी ज्ञान होना।

यहाँ, दृढ़ता पूर्वक दिमाग में रखना आवश्यक है कि वर्तमान में जन चेतना का स्तर, सामाजिक सही और सामाजिक गलत का निर्णय लेने के लिए आम तौर पर, एक तीन तरफा गलत मापदण्ड, यानि धन, सत्ता एवं ताकत (मुख्य तीन आयामी कारपोरेट उद्देश्य) को अपनाता है। इस संबंध में हमारा मुख्य कार्य उपर्युक्त अर्द्ध सत्य को प्रकृति-मानव हितैषी, मसलन, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता (आय में 1:5 के फर्क के साथ), उत्पादकता, लोकतंत्र एवं पारदर्शिता के 5 स्तरीय वास्तविक सिद्धान्तों से तुलना करके नकारना चाहिए। लेकिन यह लोगों से हमारी शृंखलाबद्ध अन्तरक्रिया करने के बाद हो पाएगा, उसमें कुछ समय लगेगा।

जहां तक जन जागृति की मुहिम का सवाल है, इसे इन सामाजिक समूहों के बीच शुरूआत करने की आवश्यकता है जो मौजूदा व्यवस्था द्वारा नजरअन्दाज किए गए हैं तथा जिनके हित प्रकृति मानव हितैषी कार्यक्रम से मेल खाते हैं। ये समूह मुख्य तौर पर है, गांव और शहर के गरीब, बेघर, बेरोजगार, विधवाएं, महिलाएँ, (जो गरीब तबके की हों), कामकाजी बालक, लड़कियां, अपंग, सफाई कर्मचारी, खेत मजदूर, बन्धक मजदूर, असंगठित मजदूर (जैसे निर्माण में लगे मजदूर, रिक्शा चालक आदि), जनजाति, कैदी, विचाराधीन कैदी, बूढ़े लोग (जिनकी देखभाल करने वाला कोई भी न हो), लंपट तत्त्व (जैसे कि भिखमंगे आदि), फैक्ट्री मजदूर, कार्यालय कर्मचारी, विद्यार्थी अल्पसंख्यक आदि। इन समूहों को मोटे तौर पर चार किस्मों में वर्गीकृत किया जा सकता है (i) समूह-विशेष (ii) क्षेत्र-विशेष (iii) समस्या-विशेष और (iv) टेड्र यूनियन विशेष।

किसी उपेक्षित लक्षित समूह का कार्यक्रम तैयार करते समय यह ध्यान रखना समान रूप से वांछित है कि इसके अन्य सम्बन्धित लक्षणों–यानि, राजनीतिक प्रतिबद्धता, सांस्कृतिक मूल्य, प्रचलित मन:स्थिति, आदि–पर ध्यान रखा जाए।

प्रत्येक लक्षित समूह की सामाजिक चेतना को जगाने के लिए यह आवश्यक है कि हमारी उनसे बातचीत सरल एवं आसानी से समझ में आने वाली हो जो इन तीन पहलुओं–यानि, समूह-विशेष की समस्याओं की उपेक्षित सिथति, प्रत्येक क्षेत्र और राज्य के लोगों से सम्बन्धित मुख्य समस्याओं की बदइन्तजामी तथा आम तौर पर आम लोगों को एवं खास तौर पर लक्षित समूहों को राजनीति, विकास, संस्कति व सुरक्षा के क्षेत्र में प्रकृति-मानव हितैषी कार्यक्रम कैसे सकारात्मक तरीके से प्रभावित करेगा–को जोड़े।

निर्धारित लक्षित समूहों के साथ कुछ अवसरों पर थोड़ी मुलाकात के बाद अगला तार्किक कदम उनकी अपनी अगुवा टीम का चुनाव कराया जाना चाहिए, जिससे इन समूहों के बाकी बचे सदस्यों को और आगे लामबन्द करने का कार्य पूरा किया जा सके।

निश्चित स्तर पर सामाजिक जागृति और संगठन विकसित होने पर प्रत्येक लक्ष्य समूह से सम्बन्धित समस्याओं को सम्बन्धित अधिकारियों के समक्ष रखा जाना चाहिए तथा जनमत के दबाव का इस्तेमाल करते हुए उन समस्याओं को हल करवाया जाए। मुद्दों को उजागर करने के लिए तथा उनको हल करवाने के लिए हमारा रास्ता तर्कसंगत, शान्तिपूर्ण एवं सहयोगात्मक होना चाहिए।

(ब)

आम जनता को गोलबन्द करने के लिए प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन (एन एच सी पी एम) निम्न मुद्दों को हाथ में लेगा–

प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल के साथ अन्य धारणाओं की तुलना एवं भेद करके देखा जाए तथा लोगों को उनके बीच का अन्तर को समझने योग्य बनाना।

वंचित एवं पीड़ित जनता को प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम के यथार्थवादी एवं तर्क आधारित सिद्धान्तों से लैस करने का प्रयास करना।

प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम की राजनीति, आर्थिकता, संस्कृति एवं सुरक्षा के सिद्धान्तों की रोशनी में विभिन्न समस्याओं का विश्लेषण करके जनता की समझ को बढ़ाना।

विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं–जैसे ग्रीन हाउस गैसों की खतरनाक मात्रा को कम करने, बढ़ते प्रदूषण और घटते जल संसाधनों, खेती योग्य भूमि के स्तर में गिरावट और भूमि-क्षरण, बड़े स्तर पर वनों के कटाव, बहुत-सी जैव-प्रजातियों के विलुप्त होने, खनिजों व अन्य प्राकृतिक उत्पादों के अति उपभोग और बर्बादी जैसी समस्याओं के उचित प्रबन्धन और उन्हें विकसित करने के प्रभावी कदम उठाने के लिए जनता को सरकार पर दबाव डालने के लिए गोलबन्द करना।

सरकार जनता को न्याय प्रदान करे, इस हेतु सरकार पर दबाव डालने के लिए जनता को तैयार करना ताकि तेजी से बढ़ती हुई सामाजिक बुराइयों, जैसे असमानता और गरीबी, विभिन्न प्रकार के राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक मानव अधिकारों के उल्लंघन, पर्यावरणीय और मानवीय विकास पर धन के विषयों, सत्ता और बल जैसे

कारपोरेट अभिमुख प्रेरणादायक फार्मूलों और प्रोत्साहक प्रमेयों के नकारात्मक प्रभावों से जनता को बचाया जा सके।

सीमित पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों का टिकाऊ तरीके से उपयोग करना।

नीचे से ऊपर तक और ऊपर से नीचे तक या व्यक्ति मानव समुदाय तक और मानव समुदाय से व्यक्ति तक एक टिकाऊ सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करना।

अनुसूचित जाति एवं जनजाति के मौजूदा (या पारम्परिक) जीविकोपार्जन की सुरक्षा करना और रोजगार के नये और अधिक अवसर प्रदान करना।

लिंग समानता के लिए महिला अधिकारों को मानव अधिकारों की तरह समझने और महिलाओं को वैचारिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से शक्ति शाली बनाने के लिए समाज को सवंदेनशील व जागरूक करना।

सामाजिक आन्दोलनों में लगे सभी संगठनों (स्वयंसेवी या गैरी-सरकारी संगठनों) और भारत या दुनिया के किसी भी देश में जनता के बीच काम करने वाले लोगों से भाईचारे के संबंध बनाना।

लोगों को मानसिक और सामाजिक रूप से स्वतंत्र बनाना।

विभिन्न तौर-तरीकों से पर्यावरणीय एवं मानवीय समस्याओं पर शान्तिपूर्ण आन्दोलनों को शुरू करना जैसे जुलूसों और जनसभाओं को संगठित करना, संगोष्ठियों और वर्कशॉपों का आयोजन, भिन्न-भिन्न विषयों पर विभिन्न प्रकार की प्रशिक्षण कक्षाएं आयोजिक करना, सांस्कृतिक कार्यक्रमों को प्रस्तावित करना, विभिन्न जन समस्याओं के समाधान के लिए सरकार के समक्ष प्रतिवेदन प्रस्तुत करना।

विभिन्न राष्ट्रों की जनता के बीच, विभिन्न राष्ट्रीयताओं, सांस्कृतिक पहचानों, सामाजिक वर्गों, व्यवसायों इत्यादि के बीच भाईचारा, दोस्ती, सदाशयता, सहयोग, आपसी सम्मान के संबंधों को मजबूत करना।

विश्व के समस्त जन आन्दोलनों के साथ पक्की एकता को अभिव्यक्त करना।

सभी प्रकार के अंधविश्वास और प्रतिक्रियावादी विचारों और व्यवहार को मानने से इंकार करना।

विश्व के संसाधनों को पर्यावरणीय प्रोत्साहन एवं मानवीय विकास के लिए उपयोग करना।

शिक्षा एवं स्वास्थ्य के लिए जनता और पर्यावरण समर्थक दृष्टिकोण अख्तियार करना और कारपोरेट व्यवसाय की प्रचलित खुदगर्जी आधारित शिक्षा एवं खराब स्वास्थ्य की नकारात्मक भूमिका को उजागर करना।

VIII. यही कार्य करने का समय है

आप प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन के सदस्य बनकर, अपनी टिप्पणियां और राय भेजकर तथा अपनी विशेषज्ञता का लाभ देकर इसमें भागीदार बन सकते हैं।

प्रकृति-मानव केन्द्रित राह अपनाओ। प्रकृति-मानव केन्द्रित जन-आन्दोलन की पहलकदमियों से जुड़ो, क्योंकि वे पर्यावरण और जनता के हित में हैं।

* * * * *

भारत की गैर टिकाऊ राष्ट्रीय प्रक्रिया

I स्वतंत्रता के 55 वर्षों बाद भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन, इसके नेताओं, इसके संविधान और प्रशासन ने किस प्रकार के भारत की रचना की है।

(1) सरकारी और गैर सरकारी दोनों तथ्य से शुरू करते हैं जो बताते हैं कि हमारी राजनीतिक, प्रक्रिया अपराधी, भ्रष्ट और हिसंक बन गई हे। यह प्रक्रिया राजनैतिक जीवन का केवल एक लक्ष्य धन कमाना और सत्ता हथियाने पर केन्द्रित करती है और यह लक्ष्य किसी भी कीमत पर जैसे-तैसे हासिल करती है। सभी भारतीय राजनैतिक ईकाइयाँ–यानि, राजनैतिक पार्टियाँ, कार्यपालिका एवं विधायिका–अपनी अपनी निर्णय प्रक्रियाओं और कार्य योजनाओं में इस लक्ष्य के प्रति निष्ठा पूर्वक चिपकी हुई है। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए सभी अनुचित तरीकों–भ्रष्टाचार, दोगला व्यवहार यानि कहना कुछ करना कुछ एवं गुंडा शक्ति (जो माफिया में संगठित है)–को अपनाती है। हर कोई जानता है कि प्रत्येक सांसद को 2 करोड़ तथा 25 से 50 लाख रुपये हर विधायक को प्रतिवर्ष दी जाने वाली राशि में से 50 प्रतिशत से ज्यादा सांसद और विधायक और उनकी पार्टी चुरा लेती हैं। 20 प्रतिशत प्रशासनिक मशीनगरी निगल जाती है, बची हुई राशि एम.पी. और एम.एल.ए के समर्थक क्षेत्रों में खर्च की जाती है। हिंसा हमारे राजनैतिक जीवन का आम लक्ष्ण बन गया है। इस तथ्य को सम्पूर्ण मीडिया-रेडियो, टेलीविजन एवं अखबार-साबित करता है।

(2) भ्रष्ट राजनैतिक प्रक्रिया ने सबको भ्रष्ट बना दिया है। जो जीवन के हर पहलू में दिखाई देती है उदाहरण के लिए, राशन कार्ड या गैस सुविधा पाने में, पानी, बिजनी और टेलीफोन कनेक्शन, हॉस्पीटल, स्कूल, कॉलेज और व्यावसायिक संस्थाओं में भर्ती, दुकान या घर किराए पर लेना, रेल्वे में आरक्षण, महत्वपूर्ण विचार गोष्ठी, प्रदर्शनी, टैस्ट मैच, सिनेमा, संगीत या नृत्य प्रदर्शन इत्यादि के लिए टिकट खरीदना केवल मात्र गैरकानूनी (या ब्लैक) तरीके से ही सम्भव हो सकता है। घटिया माल, कम तोल और कीमतों का बढ़ना जारी रहना, अनियंत्रित झूठे रोजगार दफ्तर, मिथ्या विश्वविद्यालय, नकली नोटों का कारोबार, हवाला प्रतिष्ठान तथा झूठी पासपोर्ट और वीजा एजेन्सियाँ, चिट फंड कम्पनियाँ बेरोकटोक चल रही है। कर चोरी, धन हथियाना, तस्करी, नशीली दवाओं का व्यापार, विदेशी व्यापार की छल योजना, काले धन का विदेशी बैंकों में हस्तान्तरण, बैंकों में धोखाधड़ी, प्रतिभूति घोटाले, शेयर बाजार जालसाजी, हथियार, हेरोईन, और सोने की तस्करी, सीमा और हवाई अड्डों पर सुरक्षा कर्मियों की मिली भगत से घुसपैठ आदि धड़ल्ले से चल रहे हैं। भ्रष्टाचार भारत के शासन का आम तरिका बन चुका है। गैरकानूनी पारितोषण (तुष्टीकरण) के बिना देश में कुछ भी आगे चलता नहीं है।

(3) सभी जगह व्याप्त भ्रष्टाचार का परिणाम दिन-प्रतिदिन की जनसमस्याओं के कुप्रबन्ध में निकला हैं, जैसे-ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में पीने के पानी की गुणवता और मात्रा का घटते जाना, गाँवों और कस्बों में सफाई का विकराल परिदृश्य, बिजली कटौती और इसकी अनियमित आपूर्ति और यहाँ तक की कभी कभी आपूर्ति ही नहीं होना, सड़कों के जीर्ण-शीर्ण हालात, यातायात जाम होना, पैसा बनाने, सत्ता हड़पने और निजी स्वार्थ की एक मात्र प्रेरणा पैदा करती शिक्षा की विकृति, स्वास्थ्य सेवाओं की बढ़ती कीमतें, गरीबों, वंचितों को स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध नहीं होना, संचार और डाक व्यवस्थाओं की

खराब हालात होना, रोजाना बढ़ रहे प्रदूषण से लोगों का स्वास्थ्य खराब होना, अस्वच्छता, खाद्य-मिलावट, घटिया दवाईयाँ, गैर कानूनी दारू आदि।

(4) भारत का मानव विकास रिकार्ड वंचितपन के भारी स्तर और जीवन के अव-मानवीय स्तर को दर्शाता है। विश्व बैंक, यू.एन.डी.पी. और भारत सरकार द्वारा प्रसारित आंकड़ों के आधार पर संकलित 'मानव विकास की अवस्था निम्न रूप में उभरती है, 62 प्रतिशत लोग गरीब की श्रेणी में आते हैं लगभग 40 प्रतिशत लोग निहायत गरीब का जीवन बसर कर रहे हैं, 40 प्रतिशत लोगों को आधारभूत स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध नहीं है, 75 प्रतिशत लोगों के लिए समुचित शौच व्यवस्था नहीं हैं, 10 प्रतिशत लोग झुग्गी झोंपड़ियों में रहते हैं, 48 प्रतिशत लोग पूर्णत: अनपढ़ हैं, पाँच प्रतिशत लोग बेरोजगार, 33 प्रतिशत लोग अर्द्धरोजगार शुदा है। 33 प्रतिशत लोगों के पास अपना खुद का घर नहीं है। 10 प्रतिशत अशक्त है। लगभग 12 प्रतिशत भूमिहीन है जो सबसे गरीब तबका है। 53 प्रतिशत से अधिक बच्चे बुनियादी और गुणात्मक शिक्षा के अधिकार से वंचित रहते है। करीब 75 प्रतिशत महिलाएं किसी न किसी रूप में दमन से पीड़ित है।

(5) यू.एन.डी.पी रिपोर्ट (1999) के अनुसार भारत की पर्यावरणीय कारगुजारी बहुत खराब है। इसके अनुसार भारत अपने विकास की प्रक्रिया के लिए शायद भारी कीमत चुका रहा है। यह प्रक्रिया पर्यावरणीय बर्बादी और बहुत सी स्वास्थ्य की समस्याएं पैदा कर रही है। पर्यावरण के नुकसान का एक अनुदार अनुमान 10 अरब डालर से अधिक प्रतिवर्ष या 1992 में सकल घरेलु उत्पाद का 4.5 प्रतिशत का आंकड़ा प्रस्तुत करता है। यदि उदार अनुमान काम में लिया जाए तो भारत का विकास मॉडल 13.8 अरब डॉलर या सकल घरेलू उत्पाद का 6 प्रतिशत नुकसान का कारण बन रहा है।

(6) उक्त रिपोर्ट आगे जोड़ती है कि शहरी वायु प्रदुषण की भारत को प्रतिवर्ष 1.3 अरब डॉलर की कीमत चुकानी पड़ती है जबकि जल प्रदूषण की वजह से स्वास्थ्य पर लगने वाला खर्चा 5.7 अरब डॉलर प्रतिवर्ष है, जो लगभग सम्पूर्ण पर्यावरणीय नुकसान का 3/5 भाग है।

(7) भारतीय सरकारी आंकडों के अनुसार कुल 14 करोड़ 30 लाख हैक्टेयर जोती जाने वाली भूमि में से करीब 60 प्रतिशत भूमि रक्षण, सेम और लवणता से ग्रसित है। अन्य 1 करोड़ 60 लाख हैक्टेयर भूमि खड्ड, दर्रो और नदी नालों वाली है।

भारत की रक्षा और कुटनीति यद्यपि गांधीवादी अहिंसा का झण्डा लहराती है जबकि हमेशा अपने विदेशी मामलों में बंदूक की राजनीति का अनुसरण करती है। बंदूक का दृष्टिकोण तर्कसंगत तौर पर सैनिकीकरण और प्रभुत्व के अपने सारतत्व को अख्तियार करता है। यह इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि पिछले पाँच दशकों में सुरक्षा खर्च देश की उच्चतम प्राथमिकता रही है।

(8) भारत का न्यायिक प्रशासन पुराने कानूनों पर आधारित है जो अमीरों के पक्ष में है और गरीबों के खिलाफ है।

(9) न्याय प्रदान करने की धीमी न्यायिक प्रक्रिया जिसमें न्यायालय के सामने तीन करोड़ मामले विचारधीन पड़े हैं यह लोगों को न्याय से वंचित रखने का एक दूसरा तरीका मात्र है। न्याय की लम्बी प्रक्रिया जिसमें अन्तहीन थका देने वाली अपीलों की प्रक्रिया में मुकदमा लड़ने वाला (खासकर पीड़ित पक्ष) अत्यधिक मंहगी प्रक्रिया के कारण न्याय से वंचित रहता है।

(10) त्रुटिपूर्ण कानूनों के अलावा हजारों पुरातन और अप्रचलित नियमों-कानूनों और प्रक्रियाओं ने इस क्षेत्र को एक जटिल जंगन बना दिया है। कुल 2500 केन्द्रीय कानूनों में से 1300 केन्द्रीय कानून पुराने पड़ चुके हैं, और कुल 25000 राज्य कानूनों में से करीब 15000 राज्य कानून अनुपयोगी हैं जो केन्द्र और राज्यो के ऑफिसों में भ्रष्टाचार का स्रोत बन चुके है–इस प्रकार ये कानून लोगों के मामलों का निपटारा करने में भारी बाधा बने हुए हैं।

उक्त तथ्य स्वयं स्पष्ट है। वे 55 वर्षों में हमारे राष्ट्रीय जीवन के पतन का स्तर दर्शाते हैं।

II हमारे राष्ट्रीय जीवन के पतन का कारण कहाँ निहित है?

(11) क्या यह पतन डब्लूटीओ और इससे सम्बन्धित कानून जैसे पेटेन्ट, ट्रिम्स, (TRIMS) ट्रिप्स (TRIPS) आदि के कारण हुआ है क्या यह वैश्वीकरण की प्रक्रिया के उभरने से हुआ है। क्या आधुनिक तकनीक के आने में इसका कारण निहीत है? क्या यह भारतीय सम्प्रभुता के क्षरण के कारण है?

(12) जहाँ तक डब्लूटीओ का सम्बन्ध है यह 1995 में अस्तित्व में आया है। इसके अस्तित्व में आने के पहले क्या भारत ठीक हालत में था? 1994 में संसद में प्रस्तुत वोहरा कमेटी (जिसको नरसिंह राव की कांग्रेस सरकार ने नियुक्त किया था) रिपोर्ट स्पष्ट कथन करती है कि भारत की राजनैतिक प्रक्रिया अपराध और भ्रष्टाचार से ग्रसित है तथा माफिया ग्रुपों के प्रभुत्व में है उस समय डब्लूटीओं संस्था थी ही नहीं। भारत की विकास प्रक्रिया जो 10 योजनाओं से चरित्रित है, 1970 एवं 1980 के दशक से लगातार यह ध्यान दिला रही है कि भारत की आबादी के 40 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा के नीचे जीवन व्यतीत कर रहे हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के काल में अपने पडोसियों से चार युद्ध (तीन पाकिस्तान से तथा एक चीन से) लड़े है जो अमेरिका को छोड़ कर किसी भी राष्ट्र में युद्ध का रिकोर्ड स्थापित करता है। 1947 से भारत के पर्यावरण संसाधनों के विनाश की प्रक्रिया शुरू हो गई थी। और जो बिना रोकटोक जारी है। जिसने अधिकतम सम्भावित सीमा तक इन संसाधनों को नष्ट कर दिया है।

(13) वैश्वीकरण के तर्क के सम्बन्ध में भी ऐसी ही स्थिति है। 1990 के दशक में ही वैश्वीकरण की धारणा प्रचलन में आई, जबकि उससे पहले से ही हमारे राष्ट्रीय पतन की प्रक्रिया अव्वल दर्जे तक पहुँच चुकी थी।

(14) वैश्वीकरण की धारणा पर सभी प्रकार के निहित स्वार्थियों, मुख्यता प्रभुत्वकारी कॉरपोरेट व्यवस्था के वर्तमान नेतृत्व द्वारा भ्रम पैदा किया गया है। वे वैश्वीकरण को एक नई उभर रही वैश्विक व्यवस्था के रूप में प्रस्तुत करते हैं जिसमें वर्तमान राष्ट्रीय कॉरपोरेट राजनीति, आर्थिकता, एवं संस्कृति शामिल है। इस चालाकी के सहारे वे अपने देश आधारित कॉरपोरेट व्यवस्था को अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था के तौर पर बिना किसी भी तरह के विरोध के सामने आए वैधता प्रदान करना चाहते हैं। इस रूपान्तरण की प्रक्रिया में विश्व कॉरपोरेट नेतृत्व विशेष तौर पर अमेरिका विश्व की मौजूदा वित्तीय और व्यापारिक संस्थाओं का इस्तेमाल विकासशील और अल्पविकसित देशों को इस रूपान्तरण के लिए तैयार करने के लिए कर रहा है, और इस बदलाव को यह बता कर कर रहा है कि यह किसी एजेन्सी की मनोगत नीति नहीं हैं बल्कि एक वस्तुगत आवश्यकता है। वामपंथी

और सभी अतिवादी किस्में इस कॉरपोरेट चालाकी में फंस गए हैं तथा कॉरपोरेट व्यवस्था की बनिस्पत वैश्वीकरण के विरोध में व्यस्त हैं। इन ग्रुपों के सामने समस्या यह है कि उनके पास कॉरपोरेट व्यवस्था का कोई विकल्प नहीं है उनका विकल्प असफल राज्य नेतृत्वकारी मॉडल है जो डेढ दशक पहले ही ध्वस्त हो चुका है और जो अब लोगों को कोई रूचिकर नहीं लगता। वैश्वीकरण के तथ्य को समझने के लिए यह आवश्यक है कि इसकी वास्तविक प्रकृति और सामाजिक मांग की और ध्यान दिया जाए।

(15) वैश्वीकरण की सामान्य परिभाषा है कि यह किसी घटनाक्रम की एक विश्वव्यापी प्रक्रिया का द्योतक है। मानव समाज के सन्दर्भ में यह बताती है कि मानव की अन्तरक्रिया स्थान और समय में ग्लोबल बन गई है। नई वैज्ञानिक-तकनीकी ज्ञान ने मानव की मानसिक अन्तर क्रिया (संचार व्यवस्था) को प्रकाश के वेग तक संभव बना दिया है और मानव की भौतिक अन्तरक्रिया (सम्पर्क) को ध्वनि की गति से तेज (पराध्वनिक) बना दिया है।

(16) यह वैश्विक मानव अन्तरक्रिया मांग करती है मानव समाज के वर्तमान कॉरपोरेट प्रबंध को मानव-समर्थक एवं प्रकृति-हितैषी (जो मानव अस्तित्व के लिए अनिवार्य है) विकास मॉडल पर पुर्नगठित किया जाए। यह विकास मॉडल पाँच बुनियादी सिद्धान्तों यानि पर्यावरणीय टिकाऊपन, समानता या सामाजिक न्याय, उत्पादकता, लोकतंत्र और पारदर्शिता पर आधारित हो। इसे दो सर्वोच्च प्राथमिकताओं यानि मानवता और पर्यावरण का पक्षपोषण करना चाहिये। इसकी प्राथमिक सामाजिक आवश्यकता शांति स्थापित करने की हो जिसमें सभी प्रकार के सामाजिक विवादों को बातचीत और समझौता वार्ता के जरिए हल किया जाए। इसकी राजनीति निर्णय लेने में लोगों की अधिकतम् संभव भागीदारी (सशक्तिकरण) के सिद्धान्त को थामने की होनी चाहिये और पार्टी आधारित शक्ति को कमजोर करने से मेल खाती हो। इसकी आर्थिकता पर्यावरणीय टिकाऊपन, उत्पादकता, समानता, लोकतंत्र और पारदर्शी मॉडल से संबंधित हो। इसकी संस्कृति मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों से (ओतप्रोत) मजबूती से जुड़ी होनी चाहिये, जबकि इसकी विचारधारा वैज्ञानिक वास्तविकतावाद की ओर अभिमुख हो।

(17) जहां तक आधुनिक तकनीकी के इस्तेमाल का संबंध है यह शुरू से ही काम में ली जाने लगी है। पहले यह ब्रिटिश राज में और फिर राष्ट्रीय राज्यों में। यह प्रक्रिया अभी तक बेरोकटोक जारी है। हरेक यह जानता है कि आधुनिक युग में कोई भी मानव समूह आधुनिक तकनीक और उसके साथ परम्परागत तकनीक का विकास और निरन्तरता को बिना अपनाए जी नहीं सकता। आधुनिक तकनीक को नकारने की धारणा या परम्परागत तकनीक को कम आँकने की धारणा दोनों ही एक तरफा है।

(18) जहां तक भारत की सम्प्रभुता के राज की धारणा का संबंध है, तथ्य बताते है और इतिहास पुष्ट करता है कि भारत के पतन की प्रक्रिया स्वतंत्रता, आन्दोलन के समय से ही शुरू हो गई थी। और इसलिए सन् 1947 में स्वतंत्रता आन्दोलन की प्रक्रिया का अन्त भारत के विभाजन में हुआ। भारत के बंटवारे के बाद स्वयं गांधी जी ने यह स्वीकार किया कि उनके जीवन का मकसद असफल रहा।

(19) यह पतन की प्रक्रिया विभाजन के साथ समाप्त नहीं हुई बल्कि यह और आगे बढ़ी जब आजादी के बाद भारत ने अपनी राष्ट्रीय नीति पाकिस्तान-केन्द्रित बनाई, पाकिस्तान को अपना मुख्य दुश्मन माना और उसका विनाश मुख्य उद्देश्य बनाया। इस

दृष्टिकोण ने देश के प्रथम राष्ट्रीय उद्देश्य भारत की सैनिक शक्ति को ताकतवर बनाने का रखा। मानवीय और पर्यावरणीय संसाधनों के विकास पर वित्तीय खर्च करने की बनिस्पत भारत ने सैन्य शक्ति को और ताकतवर बनाने पर लगातार खर्च किया। 1971 में पाकिस्तान के दो भांगों में बंट जाने के बाद भी भारत पाकिस्तान के साथ इसी पुराने तरीके से बर्ताव करता रहा।

(20) पाकिस्तान-केन्द्रित नीति के कारण भारत को शक्ति गुटों में शामिल होने की तरफ धकेला। 1953 में जबकि पाकिस्तान अमेरीकी कैम्प में शामिल हुआ भारत जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में गुट निरपेक्ष आन्दोलन का झण्डा लहराते हुए वास्तव में सोवियत यूनियन के गुट का समर्थक बना और यह स्थिति इन्द्रागांधी के शासन तक जारी रही। अब वाजपेयी सरकार ने भारत की नीति को अमेरिका के पक्ष में मोड़ा है। राष्ट्रीय सम्प्रभुता के ह्रास के संबंध में यह तथ्य आम है कि द्वितीय विश्व युद्ध के बाद यह प्रक्रिया शुरू हुई और यू एन ओ के गठन के समय युद्ध और शांति के मुद्दे के संबंध में प्रत्येक देश ने अपनी सम्प्रभुता का कुछ भाग यूएनओ को समर्पित किया।

(21) भारत और पाकिस्तान दोनों की जैसे को तैसा वाली सैनिकनीति ने दोनों के लिए आत्मघाती परिणाम पैदा किया, जैसे-राजनीति का अपराधीकरण, कानून के राज का उल्लघंन, न्याय मिलने में गड़बड़, बढ़ते अपराध, अराजकता और हिंसा, कमरतोड़ भ्रष्टाचार, असमानता, गरीबी, बेरोजगारी, बेघरबारता, सांस्कृतिक मूल्यों का पतन, पर्यावरणीय संसाधनों का बहुत बुरा हाल जैसे हवां और पानी का प्रदूषित होना, पीने की पानी की सुलभता में कमी बढ़ते जाना, भूमि क्षरण, वनों का विनाश, जैव-विविधता आदि। जहां तक कि इस वैज्ञानिक युग में, भारत और पाकिस्तान विश्व के सबसे गरीब राष्ट्रों में सम्मिलित है। वित्तीय रूप से दोनों बर्बादी में है, जिनका वित्तीय घाटा बहुत ही ऊँचे स्तर पर पहुँच गया है।

(22) संक्षेप में रखते हुए भारत की राष्ट्रीय प्रक्रिया के पतन के मुख्य कारणों में निम्नलिखित को सम्मिलित किये जा सकते हैं–

1. भारतीय राष्ट्रवाद का गलत दृष्टिकोण जो देश के अन्दर बहुसंख्यक राष्ट्रवाद अपनाता है और बाहर प्रभुत्वाद लगाता है।
2. भारत की केन्द्रीकृत और गैरजवाबदेह सामाजिक व्यवस्था।
3. भारत का कॉरपोरेट आधारित विकास मॉडल जो अमीरों का पक्ष लेता है और गरीबों और वंचितों का दमन करता है।
4. राजनीतिक पार्टियों और जनता की धन और सत्ता पाने की प्रेरणा।
5. राजनीतिज्ञों की बेईमानी जीवन शैली जो अपने चुनावी खर्च का झूठा हिसाब पेश करते हैं और माफिया सरदारों से छिपकर सौदेबाजी करते हैं। अपना उद्देश्य पूरा करने के लिए धर्म और जाति की भावनाओं को उभारते हैं। लोगों को झूठे वायदे करते हैं। आया राम गया राम की राजनीति का अनुसरण करते हैं तथा आज कुछ और कल कुछ और कहते हैं।
6. भारत की साम्प्रदायिक जातिवादी नीतियां जो लोगों में धर्म और जाति के नाम पर फूट डालती है।
7. भारत की बन्दूक की राजनीति जो सब जगह झगड़ा फसाद पैदा करती है।

8. भारत का पाकिस्तान के साथ चिरस्थायी टकराहट विशेषतौर से जम्मू-कश्मीर के प्रश्न पर।
9. विभिन्न प्रकार के रूढियों–हिन्दुत्व, जातिवाद, मुक्त व्यापार विचारधारा, वर्ग आधारित क्रांति का सिद्धान्त आदि।

III. राष्ट्रीय स्थिति को कैसे ठीक किया जाना चाहिये

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि भारत की वर्तमान व्यवस्था गैरटिकाऊ बन चुकी है, यह स्थिति मांग करती है कि भारत की व्यवस्था को प्रकृति-मानव हितैषी आधार पर पुनर्गठित किया जाए। इसके लिए निम्न कदम उठाने की जरूरत हैं।

राष्ट्रवाद का नया दृष्टिकोण अपनाया जाए तो अन्तरनिर्भर राष्ट्रों की वर्तमान मूलभूत सामाजिक वास्तविकता पर आधारित हो तथा सभी पुरातन राष्ट्रीय दृष्टिकोणों यानि, गांधीवाद, हिन्दुत्व और मण्डलवाद को नकारती हों। इनमें से पहली दो धर्म निर्देशित है और तीसरी जाति आधारित हैं।

राष्ट्रीय कार्यक्रम में लोगों एवं पर्यावरण दोनों को उच्चतम प्राथमिकता देने को मान्यता दी जायें।

सभी मामलों में विश्व शान्ति को अपनाया जाए तथा महाशक्तिवाद और टकराहट की राजनीति को नकारा जाए। सभी झगड़ों को सम्बन्धित पक्षकारों के हितों में मेल बैठाते हुए शान्तिपूर्ण तरीके से हल किया जाए, क्षेत्रीय तनाव बिन्दुओं को समाप्त किया जाए, सम्पूर्ण नि:शस्त्रीकरण किया जाए, परमाणु हथियारों का नियंत्रण संयुक्त राष्ट्र संघ को सौंपा जाए, अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं में कुछ देशों के विशेषाधिकार (या वीटो) समाप्त किया जाए, विभिन्न देशों के बीच समानता के सम्बन्ध स्थापित किए जाएं और कदम-ब कदम विकासशील व विकसित देशों के बीच विकास की चौड़ी खाई को पाटा जाए।

जम्मू-कश्मीर समस्या को त्रिपक्षीय (भारत, पाकिस्तान और जेके के लोगों के मध्य समझौते से हल किया जाए जिसमें जेके राज्य की सुरक्षा और विदेशी मामलों का प्रबन्धन भारत-पाक (या सार्क) सहराज्य को सौंपा जाए, जम्मू-कश्मीर को स्वतंत्र दर्जा (सुरक्षा और विदेशी मामलों के अलावा) दिया जाए तथा राज्य के नस्ली क्षेत्रों को अधिकतम सम्भव स्वायत्ता दी जाए। इसी प्रकार सार्क देशों के बीच अन्य तनाव बिन्दुओं को या तो द्विपक्षीय या सार्क रचनातंत्र के तहत हल किया जाए।

भारत में जन आधारित राजनीतिक व्यवस्था कायम करने के लिए निम्न कदम उठाए जाएं भारत को संघी-महासंघी आधार पर राज्यों को संघीय दर्जा देकर और पंजाब को विशेष दर्जा देकर संगठित किया जाऐं यह भारत में नस्ली, साम्प्रदायिक, जातीय और भाषायी तनावों को हल करने में मदद करेगा। मौजूदा झगड़ों को चाहे वे शान्तिपूर्ण हो या अशान्तिपूर्ण सभी को बातचीत के जरिए हल किया जाए। सभी संस्थाओं का पूर्ण लोकतांत्रिकरण किया जाए। कानून की व्यवस्था को माना जाए तथा इसके लोक सशक्तिकरण के जरिए लागू किया जाए जो कदम व कदम गांव स्तर से केन्द्रीय स्तर पर विकसित होगा। लोगों को सूचना का अधिकार हो साथ ही राष्ट्रीय या प्रान्तीय मुद्दों पर जनमत संग्रह करवाने का अधिकार हो। कानून की व्याख्या करने का अधिकार न्यायपालिका में निहित हो। न्यायपालिका और विधायिका के बीच किसी कानून के बारे में कोई विवाद हो तो उसे जनमत संग्रह के जरिए तय किया जाए। वे सभी कानून जो विशेष

अधिकार या विशिष्ट सुविधाएं लोगों के समूह या व्यक्ति (चाहे उसका दर्जा कुछ भी हो) को दिए गए हैं, उन सबको हटाया जाए, सिवाय कमजोर और वंचित तबकों को दिए गए अधिकारों को छोड़कर। सभी सामाजिक और आर्थिक भेदभाव समाप्त किये जाएं। सभी स्तर के चुनावों पर खर्च राज्य द्वारा किया जाए। काला धन और बाहुबल से चुनावों को मुक्त रखा जाए।

विकास का उद्देश्य लोक-हितैषी व पर्यावरण-हितैषी होना चाहिए, यानि एक तरफ लोगों के हितों को बढ़ावा दिया जाए और दूसरी तरफ पर्यावरण की सुरक्षा की जाए। जनसंख्या नियंत्रण और पर्यावरण संरक्षण के कामों में लोगों को, विशेष तौर पर महिलाओं को शामिल किया जाए। यह विकास मॉडल पांच तरफा मूल सिद्धान्तों पर आधारित है यानि पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता (आय में 1:5 के फर्क के साथ), उत्पादकता, लोकतंत्र एवं पारदर्शिता। यह पांच तरफा मूल सिद्धान्त मानवता के जैव-सामाजिक स्वभाव से मेल खाते हैं, यानि यह मनुष्य के निजी हित को उसके सामाजिक हित से जोड़ते हैं।

जन-पर्यावरण आधारित विकास मॉडल दो परम्परागत राष्ट्रीय विकास मॉडलों- यानि कारपोरेट नेतृत्व वाला एवं राज्य निर्देशित- के मुकाबले में विकास की आधुनिक धारणा का प्रतिनिधित्व करता है। कारपोरेट नेतृत्व वाला विकास मॉडल जहाँ लाभ या उत्पादकता (जो केवल धनाढ्य लोगों के हितों को सुनिश्चित करता है) को एक मात्र उद्देश्य के रूप में चुनता है, राज्य निर्देशित अपना एकमात्र उद्देश्य उत्पादन के साधनों का समाजीकरण (या राष्ट्रीयकरण) के रूप में चुनता है (जो मुख्यत: शासकीय राजनीतिज्ञों और अफसरशाहों के हितों की सेवा करता है।) ये दोनों परम्परागत राष्ट्रीय मॉडल मनुष्य जाति के केवल मात्र निजी हितों की सेवा करते हैं, जबकि इसके विपरीत मानव का चरित्र जैव-सामाजिक है, यानि निजी हित और सामाजिक हित दोनों के मूल से बना है। पुन: ये पर्यावरण को कोई प्राथमिकता नहीं देते तथा आर्थिक प्रक्रिया या इसकी वृद्धि प्रक्रिया में लोकतान्त्रिक या पारदर्शिता के मानदण्डों को कोई जगह नहीं देते। आगे, कारपोरेट मॉडल जहां समता के सिद्धान्त (या सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया खारिज करता है वहां राज्य निर्देशित मॉडल राजनीतिक समता और उत्पादकता को पूर्णतया नजर अन्दाज करता है। यह मॉडल कारपोरेट नेतृत्व वाले और राज्य आधारित विकास मॉडल दोनों से उनके उद्देश्य, प्रबन्ध और शैली के बिन्दु पर भिन्न है।

जहां कारपोरेट मॉडल पूंजी और पूंजीपति के विकास का प्रतिनिधित्व करता है, वहां राज्य मॉडल उसके शासकीय राजनीतिज्ञों, अफरसशाहों व कुलीन श्रमिकों के हितों को बढ़ावा देते हैं, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आम तौर पर लोगों को पर्यावरण की तथा खासतौर पर गरीबों और वंचित तबकों की सेवा पर आधारित है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित मूल्य व्यवस्था ऐसी जीवन पद्धति (या जीवन शैली) की मांग करता है जिसमें बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्य समाहित हों तथा तर्कसंगत मानवता एवं पर्यावरणीय सोच, व्यवहार और संगठन को लोगों के बीच बढ़ावा देता हो।

दुनिया में प्रत्येक देश के साथ शान्ति, सहयोग एवं मित्रता के आधार पर विदेशी सह-सुरक्षा नीति अपनाई जाए। दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सुरक्षा संगठित की जाए तथा जम्मू-कश्मीर समस्या के समाधान के बाद सुरक्षा खर्च में 50 प्रतिशत कटौती की जाए।

* * * * *

(कामगारों की हड़तालों पर प्रतिबन्ध के हालिया उच्चतम न्यायालय के फैसले पर एक टिप्पणी)

हड़ताल के अधिकार को कामगारों से छिनने का उच्चतम न्यायालय का निर्णय कानूनन एवं तथ्यात्मक दोनों आधार पर दोषपूर्ण कामगारों को हड़ताल के अधिकार की समस्या का न्यायिक हल सभी क्षेत्रों में कामगारों को प्रबन्ध में एक तिहाई प्रतिनिधित्व देने में निहित

I

''सरकारी कर्मचारियों को हड़ताल पर जाने का कोई मूलभूत, कानूनी, नैतिक या समतावादी अधिकार नहीं है और वर्तमान हालात में उनके द्वारा की गई हड़ताल को सही नहीं ठहराया जा सकता चाहे उनका (यानि कर्मचारियों का) उद्देश्य उचित हो या अनुचित।'' यह मूल्यांकन (एक निर्णय का आंकलन करते हुए) भारत के उच्चतम न्यायालय की एक डिविजन बैंच ने हाल ही में किया है। इस निर्णय ने मजदूरों के सभी तबकों (मानसिक या शारीरिक और संगठित व गैर-संगठित) में खलबली मचा दी है क्यों कि इससे (यानि निर्णय से) औद्योगिक मजूदर वर्ग को पिछली दो सदियों पुराने इतिहास में की गई भारी कुर्बानियों के बदौलत मिले अधिकारों पर बहुत ही हानिकारक प्रभाव पड़ने जा रहा है। इससे एक तरफ भारत में रहने वाले सभी प्रकार के मजदूरों पर हानिकारक प्रभाव पड़ेगा और दूसरी तरफ दुनियों भर में रहने वाले मजदूर वर्ग (जो मानवता के आधे हिस्से से अधिक है) के लिए खतरनाक श्रृंखला की कड़ी के रूप में हानिकारक साबित होगा।

स्वाभाविकतया इस निर्णय ने भारत सहित दुनिया भर में मजदूर वर्ग में विरोधी प्रतिक्रिया को उभारा है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आई.एल.ओ.) ने भारत सरकार को देश में सभी टेड्र युनियल अधिकारों को पुन: सुनिश्चित करने और तमिलनाडु में औद्योगिक संबंधों को पुनर्स्थापित करने के लिए तत्काल सभी आवश्यक कदम उठाने को कहा है।

सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय आवश्यक तौर पर दो बड़े तर्कों-कानूनी और तथ्यात्मक-पर आधारित है।

कानूनी स्थिति के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय का मूलभूत कानूनी नुक्ता है कि भारत में कामगारों को हड़ताल का अधिकार न तो भारतीय संविधान में दिया है, ना ही भारतीय कानून द्वारा लागू किया गया है और ना उच्चतम न्यायालय द्वारा स्वीकृत किया गया है।

भारतीय संविधान के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय इजहार करता है कि आर्टिकल 19 (1) के तहत भाषण करने, विचार अभिव्यक्त करने व इकट्ठे होने और संघ या संस्था, बनाने की स्वतंत्रता के संवैधानिक अधिकार में हड़ताल करने के अधिकार की गारण्टी नहीं दी है।

हमारी राय में उपरोक्त टिप्पणी में गंभीर खामी है।

भाषण करने, विचार अभिव्यक्ति, इकट्ठे होने और संघ या संस्था बनाने की स्वतंत्रता के अधिकार की आवश्यकता है कि कुछ गतिविधियों के माध्यम से इन्हें लागू किया जाए, जिनके बगैर इस अधिकार के विभिन्न आयामों को व्यवहार में लागू नहीं किया जा सकता।

उदाहरण के लिए संघ या संस्था बनाने के अधिकार को काम में लेने के लिए आवश्यक है कि सबसे पहले संघ या संस्था के सभी सदस्यों को स्वीकृत आम उद्देश्य की

छंटनी करना और उसके बाद इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कार्ययोजना या रणीनीति बनाना। बिना किसी उद्देश्य और उसे हासिल करने के तरीकाकार के बगैर संघ या संस्था बनाने के अधिकार को व्यवहार में लागू नहीं किया जा सकता। स्पष्टतया, संघ या संस्था बनाने के अधिकार में इसके उद्देश्य तय करने और उन्हें हासिल करने की कार्य योजना (जिसमें उद्देश्य प्राप्त करने के लिए अन्तिम हथियार के तौर पर हड़ताल करने का अधिकार शामिल है) युनियन बनाने के मूल अधिकार से जुड़े सुसंगत अधिकार हैं।

एक ऐसे अधिकार को कोई अर्थ नहीं है जिसकी लागू करने से संबंधित गतिविधियों पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाए। विश्वास और अभिव्यक्ति के मूल अधिकार का क्या उपयोग है अगर इसको व्यवहार में लाने वाले किसी विभिन्न समूह पर इसकी सच्चाई के बारे में विशिष्ट विचारों और व्यवहार (उदाहरणतया, एक धाम्रिक समुदाय के प्रार्थना करने के विशिष्ट तरीके) को लागू करने पर रोक लगा दी जाए? क्या सर्वोच्च न्यायालय अपने संवैधानिक अधिकारों को व्यवहार में लागू कर सकता है अगर कार्यपालिका इनको लागू करने की आवश्यक प्रक्रिया में बाधक बन जाए?

निर्णय में उठाये गये दूसरे कानूनी बिन्दु के अनुसार भारतीय कानून में कामगारों को हड़ताल के अधिकार का प्रावधान नहीं है। इस बिन्दु के लिए इतना ही कहना काफी है कि भारतीय औद्योगिक विवाद अधिनियम (1947) आई.डी.ए., हड़ताल के अधिकार को मान्यता देता है- जिसमें वार्तालाप और निर्णयादेश के दौरान की जाने वाली हड़ताल को गैर कानूनी माना गया है। वास्तव में आई.डी.ए. के अनुभाग 22 में हड़ताल की कानूनी अनुमति सार्वजनिक तौर पर उपयोगी सेवाओं तक के क्षेत्र में भी दी गई है बशर्ते कि उसकी अग्रिम सूचना दी जाए। केवल तत्काल ''अनाधिकृत (जोखिम भरी)'' हड़तालों को गैर कानूनी माना गया है।

कामगारों को हड़ताल के अधिकार के सवाल पर सर्वोच्च न्यायालय के खुद के विधिशास्त्र को लें, न्यायाधिपति वी.आर.कृष्णा अय्यर ने गुजरात स्टील ट्यूब केस (1980) में निर्देश दिया है कि गैरकानूनी हड़तालों तक को भी उचित ठहराया जा सकता है ताकि कामगारों की बर्खास्तगी को रोका जा सके। बी.आर.सिंह के केस में तीन न्यायाधिपतियों की बैंच की ओर से न्यायाधिपति अहमदी ने हड़ताल के अधिकार को कामगारों के हाथों में एक महत्वपूर्ण हथियार करार दिया और इसे लगभग सभी जनवादी देशों से मान्यता प्राप्त बताया।

स्पष्टतया, फैसले का यह निष्कर्ष कि हड़ताल किसी भी कानूनी, नैतिक और समता के आधार पर किसी के लिए व कहीं पर उचित नहीं ठहराई जा सकती है। उपर्युक्त निष्कर्ष भारतीय संविधान, कानून, नैतिकता और समता की विद्यमान वास्तविकता के उलट (अन्तर्विरोधी) निर्णय है।

हड़ताल के बारे में इस फैसले में सुप्रीम कोर्ट के पिछले फैसलों सहित कानून के सार और रूख (भाव) के उलट अतिवादी दृष्टिकोण अपनाया गया है।

उपर्युक्त कमियों के अलावा न्यायालय ने राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के मसले पर कानूनी घोषणा में अत्यधिक असंतुष्टीदायक तरीके को अख्तियार किया है। फैसले में सन्दर्भ सामग्री तो दी है परन्तु हड़तालों पर वास्तविक उद्धरण वाले केसो का उल्लेख नहीं किया। ऐसे महत्वपूर्ण मसले पर किसी कानून के पूर्ण पुनर्मूल्यांकन के लिए जरूरी है कि संदर्भित दोनों पक्षों (एक प्राकृतिक न्याय की आवश्यकतानुसार) को सुनने के बाद निर्णय

दिया जाए। लेकिन न्यायालय साधारणता अपना सलाहकारी फैसला (कि कामगारों को किसी हालात में हड़ताल पर जाने का कोई मूलभूत, कानूनी, नैतिक या समतावादी अधिकार नहीं है) दोहराता है, जैसे कि अपने फैसलों में न्यायालय कहता रहता है कि भारत सरकार समान सिविल प्रक्रिया संहिता लागू करें।

II

फैसले की वास्तविक स्थिति के अवलोकन में पहला तथ्य जो उच्चतम न्यायालय ने उल्लेखित किया है कि ''हड़ताल के हथियार का अधिकतर दुरुपयोग होता है जिसका परिणाम अराजकता और चौतरफा कुप्रशासन में निकलता है।'' यह उल्लेख वास्तविक तथ्यों को उलट-पुलट कर देता है। इसमें वास्तविक सवाल है यह है कि हड़तालों से नुकसान किसको पहुँचता है। इसमें कारपोरेट धड़ा (बड़े राजनीतिज्ञ, बड़े व्यापारी, मीडिया, और धड़े के अन्य सहयोगी और अनुसरणकर्ता) प्रचार करता है कि हड़तालों से लोगों और अकेले उनका (उद्योगपतियों का) नुकसान होता है। लेकिन यह तथ्य का बहुत ही छोटा सा भाग है। इसमें बड़ी सच्चाई यह है कि हड़ताल खुद कामगारों पर अत्यधिक कठिनाइयों का बोझ डालती है जिसमें उनको मजदूरी का नुकसान होता है, कई बार वह अन्य लाभों से वंचित हो जाता है और कई-कई बार तो नौकरी से निकाले जाने के साथ-साथ पुलिस दमन और अन्य प्रताड़नाओं से गुजरना पड़ता है। कामगार हड़ताल तभी करते हैं जब उन्हें किनारे लगा दिया जाता है। कामगारों पर यह इल्जाम कि वे प्राय: मामूली बातों पर हड़ताल में चले जाते है, केवल निहित स्वार्थों द्वारा फैलाया हुआ और बुना हुआ झूठा प्रचार है।

आगे, यह तर्क कि हड़तालें अराजकता व कुप्रशासन पैदा करती हैं पुन: एक सफेद झूठ है। यह इसलिए है क्योंकि अराजकता व कुप्रशासन हमारे सामाजिक जीवन का स्थायी पहलू है। यह पहलू प्रतिदिन बढ़ रही अराजकता, हिंसा, अपराध, नैतिक पतन, भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद, नौकरशाही, असमानता, गरीबी और बेरोजगारी से दृष्टिगोचर होता है जो हमारे लोगों के लिए स्थायी तकलीफ का स्रोत बने हुए हैं।

अगर प्रतिभूति में, यू.टी.आई में, सेबी में, आई.एफ.सी.आई में और प्रवर्तन निदेशालय इत्यादि में घोटालों से लेकर हजारों छोटें घोटालों की एक साथ गिनती करें तो पता चलता है कैसे इन घोटालों में करोड़ों लोगों की जमा पूंजी चूरा कर लोगों को बर्बादी और तकलीफ में धकेला गया है। हालियां, केन्द्रीय भविष्य निधि आयुक्त के कार्यालय ने रिपोर्ट की है कि उसके यहाँ 400 करोड़ रुपये का गबन हुआ है। महालेखा नियंत्रक, सार्वजनिक लेखा समिति और केन्द्रीय निगरानी समिति की रिपोर्ट अपने-अपने क्षेत्र में हमारे शासकों के कुप्रशासन और उनके हाथों राष्ट्रीय सम्पत्ति की अति बर्बादी की कहानियां कहती है। यहाँ तक कि भारतीय न्यायपालिका को भी न्यायिक अराजकता और कुप्रशासन से छुटकारा नहीं मिलता है। न्यायालयों के सामने वर्षों से 3 करोड़ से अधिक मामले लम्बित पड़े है। न्यायालय में जवाबदेही और पारदर्शिता की कमी है और कुछ मामलों में तो उनकी ईमानदारी पर भी सवालिया निशान लगते रहते हैं, न्यायालय की अवमानना वाला तानाशाही कानून लोगों के लिए निरन्तर तकलीफदेह बना हुआ है। ऐसी परिस्थिति में कामगारों की मुश्किल से कुछ हड़तालें जो साल में कुछ दिनों के लिए की जाती है लोगों के लिए निरन्तर तकलीफदेह कैसे बन सकती हैं।

फैसले में उल्लेख करने लायक एक अन्य तथ्य यह है कि ''वर्तमान हालात में कर्मचारियों की हड़ताल को उचित नहीं ठहराया जा सकता है चाहे कामगारों का उद्देश्य न्यायपूर्ण हो या गैर न्यायपूर्ण।'' निरीक्षण दर्शाता है कि सर्वोच्च न्यायालय को खुद को भी अपने फैसले के सही होने पर सन्देह है, यानि कि कर्मचारियों को जैसा कि फैसले में कहा गया है-किसी भी हालात में हड़ताल करने पर मूलभूम, कानूनी, नैतिक या समता का अधिकार नहीं है। अगर कर्मचारियों को हड़ताल करने का अधिकार नहीं है, तब यह सवाल कहाँ से उठ गया कि वर्तमान हालात में हड़ताल को उचित नहीं ठहराया जा सकता है, चाहे कामगारों का उद्देश्य न्यायपूर्ण हो या गैर न्यायपूर्ण। यह दर्शाता है कि न्यायालय खुद को भी अपने फैसले की न्यायोचितता पर भरोसा नहीं है।

इस फैसले में एक अन्य उल्लेख करने लायक तथ्य है जिसमें कहा गया है कि ''अगर कुछ हद तक अन्याय भी हुआ हो तब कर्मचारियों को हड़ताल के अलावा अन्य तरीकों से इसकी भरपाई करने की कोशिश करनी चाहिए।'' यहाँ ध्यान देने लायक शब्द है ''कुछ हद तक अन्याय।'' इसका अर्थ है कि उस हद से आगे वाली किसी घटना पर हड़ताल करना उचित कदम हो सकता है–पुन: यह न्यायालय खुद अपने फैसले पर विश्वास की कमी को दर्शाता है। अत: तर्कसंगत कानूनों का आधार बेतरतीब घटनाओं और कभी-कभार होने वाले वाकयातों को नहीं बनाया जा सकता है।

आखिरकार, फैसले में जोर दिया गया है कि दुखी कामगारों को दूसरे मौजूद विकल्पों का सहारा लेकर अपनी समस्याओं को हल करवाना चाहिए, जैसे श्रम न्यायालय, संयुक्त सलाहकारी संस्थाओं, समझौताकारी परिषदों, मध्ययस्थ अदालतों इत्यादि का उपयोग करना चाहिए। श्रम न्यायालय के साथ समस्या यह है कि उसकी सिफारिश वाली रिपोर्ट सालों तक बिना किसी फैसले के सरकारी दफ्तरों में धूल चाटती रहती हैं और जब उस पर सरकार का अन्तिम फैसला आता है तब संबंधित मजदूर या तो अपना रोजगार छोड़ चुका होता है या रिटायरमेंट के किनारे पहुँच चुका होता है। इसके अलावा दूसरी समझौताकारी मशीनरी जो प्राय: दिन प्रतिदिन या साधारण समस्याओं से निपटती हैं परन्तु वे किसी भी कठिन मसलों, जैसे मजदूरी में वृद्धि, बोनस और वित्तीय मामलों से संबंधित मसलों को हल नहीं कर पाती है। विशेष अदालतों द्वारा दिये गये अवार्ड पर सरकार जानबूझकर देरी करती है और उस अर्वाड के प्रभाव को शून्य कर देती है।

III

फैसले के बारे में एक उल्लेख करने योग्य तथ्य है कि एक तरफ यह मजदूरों की हड़तालों की भर्त्सना करता है, मजदूरों को फटकार लगाता है और उन्हें सामाजिक अराजकता और कुप्रबन्ध का कारण बताता है और दूसरी तरफ यह कारपोरेट-पूंजी निर्देशित तालाबन्दियों और बन्दियों पर पूरी तरह चुपी साधे हुए है, जिनमें हड़तालों से अधिक कार्य दिवसों का नुकसान होता है और अधिक आर्थिकता की हानि होती हैं और जो अधिक प्रशासनिक अराजकता व सामाजिक बिखराव को पैदा करती है। केवल पिछले दशक (1991-2000) का रिकॉर्ड दर्शाता है कि तालाबन्दी और बन्दियों में 129 मिलियन कार्य दिवसों की हानि हुई जबकि हड़तालों में केवल 80.2 मिलियन कार्य दिवसों की हानि हुई (श्रम पर द्वितीय राष्ट्रीय आयोग की रिपोर्ट)।

आगे, भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा किया गया सर्वे दर्शाता है कि भारतीय उद्योग में अकुशलता का मुख्य कारण प्रबन्धकों का कुप्रबन्ध है जिसके कारण 63 प्रतिशत हानि

होती है, जबकि 34 प्रतिशत हानि दूसरे पहलुओं जैसे बिजली की कमी, आवश्यक तकनीकी की कमी, इत्यादि से होती है। कामगारों की गलती से केवल 3 प्रतिशत हानि होती है।

किसी भी राष्ट्रीय व्यक्ति के लिए हड़ताल विशेष पसन्द नहीं होती है। यही बात कामगारों पर लागू होती है। हड़ताल कामगारों के लिए दमनकारी कॉरपोरेट व्यवस्था से संघर्ष के हथियार के रूप में उभरी। जहाँ तक कामगारों का सवाल है उन्होंने इसे अपने वाजिब अधिकारों की पूंजी-मालिक से रक्षा के लिए आखिरी उपाय के रूप में इस्तेमाल किया। जब तक गैर-न्यायिक कॉरपोरेट व्यवस्था चलती रहेगी तब तब हड़तालों को पूरी तरह न तो किसी सरकार द्वारा रोका जा सकता है ना ही किसी फैसले से उन्हें समाप्त किया जा सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि कॉपरपोरेट वाइरस के खिलाफ कामगारों के अधिकारों की रक्षा के लिए यह एक एन्टी सेपटिक दवा बन गई है। केवल मात्र कॉरपोरेट व्यवस्था को प्रकृति मानव केन्द्रित व्यवस्था में पुनर्गठित करके ही इस युगों पुराने संघर्ष के तरीके के उपयोग को रोकने लायक बना जा सकता है।

कामगारों को जहाँ उजरती मजदूर काम करते हैं उन सभी क्षेत्रों की प्रबन्ध व्यवस्था में एक तिहाई प्रतिनिधित्व देकर उनका सशक्तिकरण किया जाए। कामगारों को आवश्यक छूट प्रदान करते हुए एक ऐसे रचनातंत्र की स्थापना करनी चाहिए जहाँ कामगारों के प्रतिनिधि अपना कार्यक्रम पेश कर सकें और सभी मजदूरों के मसले हल करने लायक बन सके। कामगारों का सशक्तिकरण कुछ बड़े निगमों में तो वर्तमान में चल रही कॉरपोरेट व्यवस्था में भी कुछ हद तक सम्भव हो सकता है। कामगारों के सशक्तिकरण का निश्चित ही परिणाम निकलेगा कि उत्पादकता अधिक होगी तथा अधिक वृद्धि दर भी कायम होगी।

विद्यमान कॉरपोरेट शासन से अपनी दिशा लेते हुए और कॉरपोरेट अर्थशास्त्र की रोशनी में चल रहे सामाजिक और कानूनी तथ्यों की व्याख्या फैसले में की गई है, जिसमें पूंजी को मानव समाज में सर्वोच्च घटनाक्रम स्वीकार किया गया है, पूँजी के मालिकों को सामाजिक विकास का इंजिन (अगुवा) माना गया है, श्रम को माल चरित्रित किया गया है। जिसे किसी भी समय और कहीं भी खरीदा जा सकता है, लोगों और पर्यावरण को आर्थिक स्त्रोंतों की नजर से देखा गया है जिनका उपयोग पूंजी की वृद्धि और सेवा में किया जा सकता है और किया जाना चाहिए। यही फैसले का नजरिया है।

जन विरोधी और पर्यावरण-विरोधी उपरोक्त कॉरपोरेट कार्यक्रम के उलट-प्रकृति-मानव केन्द्रित अर्थशास्त्र एक विकल्प में कार्यक्रम पेश करता है जिसका मानना है कि पूँजी एक दो तरफा घटनाक्रम है, यानि एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन और दूसरी तरफ मानवीय संसाधन। इसका मानना है कि मनुष्य एक जैव-सामाजिक घटनाक्रम है जो अपने आप में दो एकीकृत गुणों-निजी और सामाजिक-को संजाये हुए है जिनमें से प्रत्येक की अपनी उपयोगिता है।

इसका मानना है कि मानव समाज में सम्पन्नता और विकास को मापने का पैमाना केवल मात्र पर्यावरणीय संरक्षण और संवर्द्धन तथा मानव का निरन्तर बढ़ता मानसिक और भौतिक कल्याण का स्तर ही हो सकता है। इस उद्देश्य को एक ऐसे विकास मॉडल को अपनाकर हासिल किया जा सकता है। जिसमें 5 मुख्य उसूलों का कड़ाई से व्यवहार में

पालन किया जाए यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता (उचित समानता), उत्पादकता (वृद्धि या उच्च लाभ), पारदर्शिता और सभी तरह की सामाजिक गतिविधियों में जनवाद लागू करते हुए किसी भी प्रक्रिया में विद्यमान सभी विशेष अधिकारों और अतिरिक्त सुविधाओं को समाप्त किया जाए। इससे विश्व के 40 प्रतिशत वित्तीय संसाधनों को राजनीतिक और व्यापारिक भ्रष्टाचार के माध्यम से बर्बादी और गलत हाथों में जाने से रोका जा सकेगा, मानव अधिकरों और कानून के राज की अवहेलना तथा अपराधिकरण इत्यादि को समाप्त किया जा सकेगा। यह अनुमान है कि विशेष अधिकरों, एकाधिकार, भ्रष्टाचार, हिंसा और अपराध को समाप्त करके इतना धन बचाया जा सकता है जो दुनियां के 50 प्रतिशत वंचित लोगों (गरीबी की रेखा के नीचे लोगों, गरीब और सीमान्त किसानों, मध्यम वर्गीय बेरोजगारों और ऐसे ही अन्य हिस्सों के लोगों सहित) के लिए आवश्यक और वाजिब सामाजिक सुरक्षा के मूल अधिकार के रूप में गारण्टी देने के लिए काफी साबित हो सकता है। एक समतावादी व्यवस्था की स्थापना के लिए इसका मानना है कि मानव समाज के आय का अन्तर 1:5 के अनुपात में होना चाहिए। यह सारे विश्व में एक ऐसे न्यायिक और समानतावादी कानून को लागू करना चाहते है जिसमें मानवजाति और पर्यावरण दोनों को उच्च प्राथमिकता में रखा जाए। (25.8.2003)

* * * * *

6 अगस्त, 03 को नेशनल फेडरेशन टेलिकॉम एम्पाईलज (बी.एस.एन.एल.) की सेमीनार में प्रस्तुत पर्चा

कामगारों की तीन बुनियादी माँगे (सभी देशों में)

(क) प्रबंध में मजदूरों को एक तिहाई प्रतिनिधित्व का अधिकार

(ख) प्रत्येक वंचित और बेरोजगार को सामाजिक सुरक्षा

(ग) प्रत्येक देश में अधिकतम व्यक्तिगत आय भिन्नता 1:5

आमतौर पर भारत में तथा विशेष तौर पर जम्मू–कश्मीर में मजदूर वर्ग के समक्ष चुनौतियाँ –आर.पी.सराफ

I मजदूर आन्दोलन की पृष्ठभूमि

मजदूर वर्ग की ऐतिहासिक उत्पत्ति और इसका ट्रेड यूनियन आन्दोलन

मजूदर वर्ग शब्द आमतौर पर उन सभी को अभिव्यक्त करता है जो मजदूरी अथवा वेतन के बदले अपना भौतिक या मानसिक शक्ति को बेचते हैं और इस प्रकार अपनी जिन्दगी चलाते हैं। विश्व में सभी प्रकार के मजदूरों की कुल श्रेणियों की संख्या का सही-सही अनुमान विद्यमान नहीं है, लेकिन मोटी गणना के अनुसार यह संख्या 50 प्रतिशत से ज्यादा है।

सरल रूप में, मजूदर शब्द मानव इतिहास की शुरूआत से ही चलन में रहा है। श्रम के विभिन्न व्यवस्थागत ऐतिहासिक रूपों को गण, कबिला, सामंती और पूँजीवादी श्रम में वर्णित किया जा सकता है। श्रम की विभिन्न सामाजिक-आर्थिक श्रेणियों को अधिकतर दास, भूदास (कृषक) और उजरती श्रम (औद्योगिक, ठेका मजदूर, अस्थायी श्रम आदि) के रूप में वर्णित किया जाता है।

आधुनिक उजरती श्रम और इसका ट्रेड यूनियन आन्दोलन

आधुनिक उजरती श्रम के ऐतिहासिक विकास को ले, यह 18 वीं सदी के अन्तिम भाग में प्रकट होना शुरू हुआ। इस प्रकार मजदूरों का ट्रेड यूनियन आन्दोलन 19 वीं सदी के शुरू में आकार लेने लगा। ट्रेड यूनियन शब्द का आमतौर पर अर्थ एक व्यवसाय के सदस्यों (अथवा मजदूरों) के संगठन से है जो अपने अधिकारों (जिसे ट्रेड यूनियनों द्वारा सामन्यतया बेहतर जिन्दगी और अच्छे काम के हालात के लिए संघर्ष वर्णित किया जाता है) की रक्षा और वृद्धि के लिए बनाया जाता है।

ट्रेड यूनियन आन्दोलन की ऐतिहासिक भूमिका इसके सकारात्मक एवं नकारात्मक पहलू

इसकी उत्पत्ति से ही ट्रेड यूनियन आन्दोलन ने विशेष तौर पर मजदूर वर्ग के लिए तथा आमतौर पर कामगार लोगों के लिए सकारात्मक भूमिका निभाई है। इसकी सकारात्मक भूमिका संक्षेप में ये है–

● विभिन्न नस्लों, धर्मो, राष्ट्रों, राष्ट्रीयताओं, सांस्कृतिक ग्रुपों इत्यादि के मजदूरों को एक यूनियन में संगठित करके उसकी मानवीय दृष्टि को व्यापक बनाया है।

● कामगारों को बहुत से अधिकार हासिल करने के समर्थ बनाया है, जैसे (1) मजदूरों को एक यूनियन में संगठित होने का अधिकार (2) हड़ताल करने एवं सामुहिक समझौता का अधिकार (3) मजदूरी एवं वेतन में बढ़ोत्तरी (4) काम में घण्टों में कमी (5) बाल-श्रम एवं अल्पव्यस्क को काम पर लगाने में प्रतिबन्ध (6) कामगार महिलाओं के लिए प्रसूति अवकाश (7) मकान सुविधा, बीमारी भत्ता, बच्चों की देखरेख केन्द्र, फैक्ट्री-केन्टीन, ताजा हवा व्यवस्था, सुरक्षा उपायों, बीमा लाभ, होलीडे होम, स्वास्थ्य लाभ केन्द्रों, श्रम कल्याण योजना इत्यादि मामलों में मजदूरों को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार।

आज ट्रेड यूनियनवाद सभी व्यवसायों एवं उद्योगों जैसे किसान, मध्यम तबका, व्यापारी यहाँ तक कि बड़े पूँजीपति और एकाधिकारवादियों की कार्यप्रणाली और संगठन की एक आम पहुँच बन गया है–इस प्रकार ट्रेड यूनियन की भूमिका और इसका स्थान समाज में सर्वव्यापी हो गया है।

इसकी बहुत सारी उपलब्धियों के बावजूद ट्रेड युनियन आदोलन कुछ कमजोरियों से ग्रसित हैं, ये हैं–

● ट्रेड यूनियन नेता और सक्रिय कार्यकर्त्ता आमतौर पर सुस्थापित राजनीतिक पार्टियों से संबद्ध है जो मजदूरों का उपयोग अपने राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए करते हैं।

● राजनीतिक प्रभुत्ववाली ट्रेड यूनियनें आमतौर पर मजदूरों की सामाजिक चेतना बढ़ाने के अधिक महत्वपूर्ण कार्य तथा विशेष तौर पर प्रत्येक देश के मजदूरों से संबंधित कानून एवं नियमों की कानूनी शिक्षा देने के बजाए अपने सदस्यों की व्यक्तिगत समस्याओं पर अधिक जोर देती है।

● राजनीतिक प्रभुत्ववाली ट्रेड यूनियनें कुछ निश्चित वामपंथी एवं दक्षिणपंथी एकतफापन से चरित्रित है अथवा प्रभाव में है, जैसे–

❊ वामपंथी अवधारणा कि मजदूर वर्ग मानवता का एकमात्र उद्धारक हैं, श्रम और पूंजी एक दूसरे की विरोधी शक्तियाँ है, प्रबंध हमेशा श्रमविरोधी होता है, मजदूरों का

संबंध केवल अपनी मांगों से हैं न कि उत्पादकता से, नेताओं के अतर्कसंगत व्यवहार को दरकिनार करके उत्तेजक भाषण देने वाले नेताओं की जरूरत समझना।

❊ ट्रेड यूनियनों को जातिवादी, साम्प्रदायिक और संकीर्णता के आधार पर संगठित करने का दक्षिणपंथी व्यवहार ट्रेड यूनियनों को प्रबंधकों का पिछलग्गू बनाने की धारणा देता है।

II. एक नए वैश्विक युग का उदय, मजदूर वर्ग की स्थिति और इसके समक्ष दरपेश चुनौतियाँ

एक नए वैश्विक युग का उदय

हाल ही की अवधि में, हमारे ग्रह पृथ्वी पर मानवीय मानसिक अन्तरक्रिया प्रकाश के वेग से और भौतिक सम्पर्क ध्वनि के वेग से होने के कारण मानवीय दुनियां (मजदूर वर्ग सहित) मानसिक और भौतिक दोनों रूपों से एक इकाई बन गई है। अभूतपूर्व मानवीय मानसिक एवं भौतिक क्रिया-प्रतिक्रिया ने विभिन्न राष्ट्रीय राज्यों को एक ढीले-ढाले एकीकृत तथा अस्पष्ट प्रकार की एकल रचना में तब्दील कर दिया है। विश्व मानवीय और भौतिक पर्यावरणीय साधनों पर अपने विस्तार और पकड़ मजबूत करने के लिए इस नये परिवर्तन को तुरन्त ही वर्तमान विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था के नेताओं द्वारा (जो अधिकतर विकसित देशों से सामान्यत: तथा विशेषतौर पर अमेरिका द्वारा गठित है) अपने पक्ष में मोड़ा जा रहा है। वे अपनी वित्तीय दौलत को अधिकतम संभव दर पर अतिउपभोग और दुरूपयोग द्वारा बढ़ाना चाह रहे है। पर्यावरणीय और मानवीय दोनों संसाधन; जो कि पहले से ही 200 वर्षों के कॉरपोरेट (पूर्व में औद्योगिक या पूँजीवादी) व्यवस्था के दुरूपयोग के कारण रसातल पर है। इस प्रकार जब मानव समुदाय ग्लोबेलाईजेशन के नए घटनाक्रम के असर को झेल रहा था, एक बहुत खतरनाक और घातक पर्यावरणीय-मानव संकट ने इसे झकड़ लिया है।

मजदूर वर्ग की वर्तमान दशा

कॉरपोरेट नेताओं ने मानव संसाधनों पर हाल ही का आक्रमण प्रथमत: और मुख्यत: मजदूर वर्ग के खिलाफ शुरू किया है, लेकिन मजदूर वर्ग की मनोदशा में आत्म-विश्वास की कमी है। संयुक्त राष्ट्र से संबंधित आई.एल.ओ. (2000) की रिपोर्ट के अनुसार मजदूरों में चिन्ता, क्रोध और अवसाद का स्तर नियंत्रण के बाहर है। मंदी, छटनी, छोटे उद्योगों का बड़े में एकीकरण, छोटी अवधि के ठेके और उच्च उत्पादकता की मांग ने पिछले 10 वर्षों में उनकी बर्दाश्त सीमा को समाप्त कर दिया है, कई मजदूरों को चिड़चिड़ा बना दिया है और कई मानसिक संतलुन खोने की सीमा पर है।

दुनिया के मजदूर इतने हताश क्यों है जो अपना मानसिक संतुलन खोने के किनारे हैं? यह सामान्य ज्ञान की बात है कि जब कोई अपने जीवन को चुनौती देने वाली समस्या की सही प्रकृति को समझ नहीं पाता है और इसके कारण और हल को खोज नहीं पाता तो स्वभावत: वह अपना कोई भविष्य नहीं देख पाता और अनिवार्यत: अवसाद का शिकार हो जाता है तथा अपने आपको मानसिक संतुलन खोने के किनारे पाता है। संक्षेप में, इसका अर्थ है कि मजदूर वर्ग, खासकर ट्रेड यूनियन आन्दोलन और श्रम संबंधी आई.एल.ओ. जैसी नई ग्लोबल संस्थाओं के पास चुनौतियों का कोई उत्तर नहीं है। जिससे मजदूर

परेशान है और वे पुराने फारमूलों का ही अंधा अनुसरण कर रहे हैं उनमें नई वास्तविकता और इसकी मांग से तालमेल का अभाव है।

भारत में मजदूर वर्ग के समक्ष चुनौतियाँ (दूसरे देशों के मजदूरों की तरह)

भारत के मजदूरों के समक्ष प्रथम बुनियादी समस्या भारतीय सामाजिक व्यवस्था के सभी (आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक) क्षेत्रों में पूँजी (या पूँजी मालिक) की तुलना में श्रम की ताबेदार (आम लोगों को निम्न प्राथमिकता में रखना) स्थिति का सवाल है। यह समस्या विश्वव्यापी रूप से विद्यमान है और इस प्रकार इसके एक ग्लोबल उत्तर की आवश्यकता है। अन्य ग्लोबल समस्याओं में शामिल है उदारीकरण, निजीकरण, डब्लू.टी.ओ., आई.एम.एफ. वर्ल्ड बैंक आदि की प्रतिक्रियाएँ।

अन्य बुनियादी समस्याए : पर्यावरण की खराब हो रही गैर टिकाऊ स्थिति, बढ़ रही मानव असमानता, गरीबी, बेरोजगारी, हिंसा, अपराधीकरण, राजनीतिक भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिक और जातिवादी टकराव, महिलाओं का उत्पीड़न आदि है।

भारतीय श्रमिकों के सामने दिन प्रतिदिन की समस्याएँ (नई और पुरानी) ये है: काम के सभी क्षेत्रों में कम मजदूरी, असंगठित श्रमिक, कृषि श्रमिक, अस्थायी मजदूर या दैनिक मजदूर, बंधुआ श्रमिक, श्रम कानूनों में संशोधन, बाल श्रम का होना, मुकद्दमेबाजी, मजदूरी के मामले में लिंग भेद, मुफ्त कानूनी सहायता का प्रावधान और मजदूरों का कमजोर स्वास्थ्य और बीमारियों से संबंधित समस्याओं का सामना है।

जम्मू–कश्मीर के मजदूरों के समक्ष मुख्य समस्याएँ

जम्मू-कश्मीर के मजदूरों के समक्ष मुख्य समस्याएँ बढ़ रहा उग्रवाद, सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों में गड़बड़, पूँजी निवेश में कमी, बढ़ रही बेरोजगारी और गरीबी, अस्थायी और दैनिक मजदूरों में अनिश्चितता, असंगठित (ग्रामीण और शहरी दोनों) मजदूरों के लिए बढ़ रही कठिनाइयाँ आदि है।

मजदूरों की बुनियादी व दिन-प्रतिदिन की समस्याओं का मूलभूत कारण

ऊपर बताया कारण पूँजी की चल रही दो दोषपूर्ण अवधारणाओं में निहित है–(क) स्वतंत्र बाजार आधारित पश्चिमी उदार अर्थशास्त्र और (ख) राज्य निर्देशित मार्क्सवादी अर्थशास्त्र। ऊपर बताए 2 सिद्धान्तों की मुख्य प्रस्तावनाएँ इस प्रकार है:

दोनों उदारवादी और मार्क्सवादी सिद्धान्त पूंजी को समाज में अति बहुमूल्य वस्तु मानते है। यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि ये दोनों सिद्धान्त सामाजिक समृद्धि और प्रगति को पूँजी की वृद्धि दर और प्रतिव्यक्ति पूँजी तथा पूँजी की कुल वृद्धि से मापते है। दुनियाँ की प्रत्येक उदारवादी और मार्क्सवादी सरकार (यानि सभी देशों की सरकारे) उपर्युक्त सिद्धान्त का अनुसरण करती है। इन दो सिद्धान्तों का ग्लोबल चरित्र वैचारिक और प्रशासनिक दोनों तरह से प्रत्येक मानव को पूँजी (अथवा धन) के अधिकतम् संकेन्द्रण के लिए प्रेरित करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति का दौलत इकट्ठी करने का विश्वव्यापी चरित्र मानव समुदाय के सामाजिक पहलू को पूर्णतया नकारता है और इस प्रकार इसे एक अमानवीय झुण्ड में बदल देता है जहाँ प्रत्येक अपने लिए जीता है और सभी के लिए कोई नहीं है।

दोनों सिद्धान्त मानवजाति की प्रकृति की एकतरफा परिभाषा प्रस्तुत करते हैं। कॉरपोरेट अवधारणा के अनुसार 'मानव प्रकृति से स्वार्थी है' (जैसा कि मुक्त-बाजार अर्थशास्त्र के जन्मदाता एडमस्मिथ ने प्रतिपादित किया) जबकि मार्क्सवादी धारणा

कहती है कि मानव की प्रकृति सामाजिक है। दोनों मानव की वास्तविक प्रकृति को नकारते हैं, मानव की वास्तविक प्रकृति जैव-सामाजिक है जो दो तरफा मूलभूत लक्षण रखती है यानि सामाजिक के साथ ही नीजि।

दोनों सिद्धान्त पूँजी के वास्तविक उत्पादनकर्ता को गलत पेश करते हैं। मार्क्सवादी अवधारणा मजदूरों के अतिरिक्त मूल्य को पूँजी परिभाषित करती है, यानि मजदूरों द्वारा पैदा किया गया अतिरिक्त मूल्य जो उसको दी जाने वाली मजदूरी से अलग होता है जिसे काम के दौरान पैदा किया जाता है (जिसे पूँजीपति हड़प जाता है), दूसरे शब्दों में मजदूर अपनी निश्चित कार्यावधि में उसे दी जाने वाली मजदूरी से अधिक मूल्य पैदा करता है जिसे (यानि मजदूरों द्वारा पैदा किया गया अतिरिक्त मूल्य) पूँजीपति हथिया लेता है। इसके उलट, उदारवादी सिद्धान्त चतुराई से चिह्नित करता है कि पूँजी, तकनीकी, श्रम और कच्चे माल का उत्पादन प्रक्रिया में योगदान अपने-आप नहीं हो सकता जब तक कि उत्पादन प्रक्रिया के दौरान इनका उपयोग पूँजीपति द्वारा संगठित नहीं किया जाता। इस प्रकार मार्क्सवादी अवधारणा मजदूर को एकमात्र पूँजी का निर्माता बताती है जबकि पूँजीवादी धारणा पूँजीपति को ही इसका पैदा करने वाला पेश करती है।

दोनों सिद्धान्त पूँजी के प्रबंध प्रक्रिया को विकृत करते हैं। पूँजीवादी सिद्धांत पूँजीपति को पूँजी पैदा करने की प्रक्रिया का एकमात्र प्रशासक और नियंत्रक प्राधिकारी बनाता है जबकि मार्क्सवादी सिद्धांत इस कार्य को राज्य (यानि, राजनीतिज्ञों और अफसरशाहों का समिश्रण) को सुपुर्द करता है, पूँजी को पैदा करने की प्रक्रिया के प्रबंध और नियंत्रण में मजदूरों और आम लोगों के अधिकार की किसी भी भूमिका को नकारता है।

दोनों सिद्धान्त पूँजी के नियंत्रण में श्रम की भूमिका को ताबेदार स्थिति में पहुँचाते हैं।

दोनों सिद्धान्त अपने तात्कालिक और स्थाई कार्यों के लिए राजनैतिक सत्ता हासिल करने के पक्षधर हैं, क्यों कि अधिकतम धन कमाने की प्रक्रिया में राजनीतिक सत्ता एक मुख्य हथियार की तरह काम करती है।

श्रम समस्याओं के पूरक कारण

विभिन्न पूरक कारणों में, भिन्न-भिन्न तरह के राजनीतिज्ञों, ट्रेड यूनियन नेताओं, नए और पुराने रूढ़ीवादी विचारों को आगे लाने वालों और कॉरपोरेट संचालकों की बहुतसारी विकृत और एकतरफा अवधारणाएँ और व्यवहार सम्मिलित हैं। ये संक्षेप में हैं: 'वर्तमान समय में मजदूर वर्ग मानवता का एक मात्र कल्याण करने वाला है', 'श्रम और पूंजी एक दूसरे की विरोधी शक्तियाँ है', 'प्रबंध हमेशा श्रम-विरोधी होता है, 'मजदूरों को अपनी मांगों से मतलब है, उत्पादकता से नहीं,' 'मजदूरों को बहादुर नेताओं की जरूरत है जो बड़ी कम्पनियों के मालिकों पर बरसते हों,' 'ट्रेड यूनियन व्यक्तिगत समस्याओं पर अधिक ध्यान दें, 'ट्रेड यूनियन राजनीतिक पार्टियों से संबंधित हो, ट्रेड यूनियनों को धार्मिक और जातिवादी कार्यक्रम पर बनायी जावें' आदि धारणाएं।

पूँजी के गलत सिद्धान्त एक भ्रामक श्रमिक अथवा ट्रेड यूनियन रणनीति प्रदान करते हैं

पूँजी के दो बुनियादी सिद्धान्त इसके पूरक कारणों के साथ पूँजी की एक गलत समझ देते हैं, यानि मानव समाज में धन (या वित्त) की सर्वोच्च स्थिति। यह आधार श्रम

आन्दोलन को पूर्णतया भटका देता है, ये ट्रेड यूनियनों को एक गलत रणनीति बनाने की तरफ से ले जाते हैं, जो आमतौर पर जोर देती है (क) एक गलत परिप्रेक्ष्य जो पूंजी को मानव संसार का उच्चतम घटनाक्रम स्वीकार करती है, (ख) एक गलत मुख्य विषय जो पूँजी की तुलना में श्रम की द्वितीयक स्थिति मानती है (ग) एक गलत मुख्य कार्य जो पूँजी को प्रभुत्वकारी प्रस्तुत करता है, (घ) एक गलत कार्यशैली जो मजदूरों को ट्रेड यूनियन नेताओं के अन्धभक्त बनाती हैं और (ड) एक ऐसा संगठनात्मक ढाँचा जो यूनियन प्रतिद्वन्दिता को राजनीतिक या व्यक्तिगत आधार पर बढ़ावा देता है और मजदूरों में फूट पैदा करता है।

स्पष्टतया, ऊपर बताए गए पूँजी के दो गलत सिद्धान्त विशेषतौर पर उनका मानव प्रेरक प्रभाव और ऊपर वर्णित अनुपयुक्त श्रमिक या ट्रेड यूनियन रणनीति अनिवार्यतया मानव समाज को कुछ गंभीर विपदा में ले गई। यह विपदा अब एक तरफ दुनियां में एक पर्यावरणीय-मानव संकट के रूप में प्रकट हुई है तथा दूसरी तरफ अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक अथवा ट्रेड यूनियन आन्दोलन में अवसाद एवं हताशा के रूप में प्रकट हुई है।

III. पूँजी के एक वास्तविक सिद्धान्त को परिभाषित करना और एक उचित श्रम या ट्रेड यूनियन रणनीति तैयार करने के सवाल का सही हल निकालना

अन्तिम बिन्दु, परन्तु सबसे महत्वपूर्ण सवाल अब हमारे सामने यह है कि पूँजी के एक वास्तविक सिद्धान्त को परिभाषित करना और एक उचित श्रम या ट्रेड यूनियन रणनीति तैयार करने के सवाल का सही हल निकालना। हमारी विनम्र राय है कि प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त पूँजी के सभी आवश्यक पहलूओं पर सच्चा आईना प्रस्तुत करता है और यह हमें श्रम या ट्रेड यूनियन आन्दोलन के संबंध में उचित रणनीति तय करने की चाबी प्रदान करता है।

पूँजी का प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त

उपर्युक्त वर्णित सिद्धान्त का पक्के तौर पर मानना है कि पूँजी में दो तरफा घटनाक्रम समाविष्ट हैं, यानि, एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन और दूसरी तरफ मानवीय संसाधन। ऐसा इसलिए है क्योंकि पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों से ही मानव समुदाय बनता है और उनके बिना मानवजाति के लिए किसी भी चीज का कोई मूल्य नहीं है। इस प्रकार यह पैसे (या वित्त) को पूँजी मानने की धारणा को पक्के तौर पर रद्द करती है और यहाँ तक कि पैसे (या वित्त) वाली पूँजी भी इन दो संसाधनों से ही पैदा होती है, जो मानव के मानसिक और शारीरिक श्रम के साथ प्राकृतिक कच्चे-माल और तकनीकी औजारों के एकीकृत होने का एक रूप है। स्पष्टतया, पूँजी के सभी अवयव–श्रम, तकनीकी और कच्चा माल–पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों द्वारा प्रदान किये जाते हैं। पैसा केवल विनिमय के माध्यम का प्रतिनिधित्व करता है या बाजार का एक औजार है। फिर भी इस अति महत्वपूर्ण कार्यवाही को भी समाज में सर्वोच्च घटनाक्रम (यानि, पूंजी) का दर्जा नहीं दिया जा सकता है।

इसका मानना है कि मनुष्य एक जैव-सामाजिक घटनाक्रम है जो अपने-आप में दो जुड़े हुए गुणों-निजी और सामाजिक को समाएँ हुए हैं जिनमें से प्रत्येक की अपनी उपयोगिता है। इन दोनों गुणों को तोड़ना मानवजाति की तर्कसंगत वास्तविकता को विकृत करना है, जिसका परिणाम हमेशा बर्बादी में निकलता है। इस वक्त चल रहा पर्यावरणीय-मानवीय संकट भी प्रचलित एक तरफा मानवीय सोच और प्रेरणा का परिणाम है।

इसका मानना है कि मानव समाज में सम्पन्नता और विकास को मापने का पैमाना केवल मात्र पर्यावरणीय संरक्षण और संवर्द्धन तथा मानव का निरन्तर बढ़ता मानसिक और भौतिक कल्याण का स्तर ही हो सकता है। इस उद्देश्य को एक ऐसे विकास मॉडल को अपनाकर हासिल किया जा सकता है। जिसमें 5 मुख्य उसूलों का कड़ाई से व्यवहार में पालन किया जाए यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता (उचित समानता), उत्पादकता (वृद्धि या उच्च लाभ), पारदर्शिता और सभी तरह की सामाजिक गतिविधियों में जनवाद लागू करते हुए किसी भी प्रक्रिया में विद्यमान सभी विशेष अधिकारों और अतिरिक्त सुविधाओं को समाप्त किया जावे। इससे विश्व के 40 प्रतिशत वित्तीय संसाधनों की राजनीतिक और व्यापारिक भ्रष्टाचार के माध्यम से बर्बादी और गलत हाथों में जाने से रोका जा सकेगा, मानव अधिकारों और कानून के राज की अवहेलना तथा अपराधीकरण को समाप्त किया जा सकेगा। यह अनुमान है कि विशेष अधिकारों, एकाधिकार, भ्रष्टाचार, हिंसा और अपराध को समाप्त करके इतना धन बचाया जा सकता है जो दुनियां के 50 प्रतिशत वंचित लोगों (गरीबी रेखा के नीचे लोगों, गरीब और सीमान्त किसानों, मध्यम वर्गीय बेरोजगारों और ऐसे ही अन्य हिस्सों के लोगों सहित) के लिए आवश्यक और वाजिब सामाजिक सुरक्षा के मूल अधिकारों के रूप में गारण्टी देने के लिए काफी साबित हो सकता है। एक समतावादी व्यवस्था की स्थापना के लिए इसका मानना है कि मानव समाज के आय का अन्तर 1:5 के अनुपात में होना चाहिए।

पूँजी के प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त का मानना है कि कॉरपोरेट और सरकारी-नेतृत्व वाले दोनों मॉडलों का गैर इजारेदारीकरण और पुनर्गठित करने के लिए निम्नलिखित कदम उठाए जाएँ:

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के सभी शेयरों को साधारण शेयर बनाया जाए। किसी को भी इसके 2 प्रतिशत से अधिक शेयर रखने की इजाजत नहीं दी जाए। हालांकि राज्य को किन्ही विशेष मामलों में साधारण शेयर का एक चौथाई हिस्से का मालिक बनने की इजाजत दी जाए। प्रोत्साहक शेयरों (या ब्लॉक शेयरों) के नियमों (जो कॉरपोरेट क्षेत्र में अब प्रचलित है) को पूर्णतया रद्द कर दिया जाए।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के प्रबन्ध को पूरी तरह जनवादी बनाया जाए। इस संबंध में साधारण शेयर धारकों को प्रबन्ध मण्डल में दो तिहाई प्रतिनिधित्व दिया जाए। बाकी बचा एक तिहाई प्रतिनिधित्व उसी कम्पनी के संबंधित श्रमिकों के लिए आरक्षित रखा जाए। श्रमिकों के प्रतिनिधियों का चुनाव दोनों तरह के श्रमिकों (यानि मानसिक या शारीरिक श्रम करने वालों) में से किया जाए और उन्हें साधारण शेयरधारियों से आने वाले प्रतिनिधियों के समान ही अधिकार प्रदान हों।

ऐसा उद्यम जिसमें सरकार के एक चौथाई शेयर हों उसके प्रबन्ध मण्डल के सभी शेयरधारियों के प्रतिनिधित्व की निम्नलिखित हिस्सेदारी हो–साधारण शेयरधारी 50 प्रतिशत, श्रमिकों की भागीदारी 33 प्रतिशत और सरकारी भागीदारी 17 प्रतिशत हो।

प्रबन्ध मण्डल का चुनाव 3 वर्ष के लिए हो।

प्रकृति मानव केन्द्रित विकास मॉडल का उपरोक्त वर्णित जनवादी क्षेत्र वर्तमान में चल रहे एकाधिकारवादी कॉरपोरेट और राज्य-निर्देशित क्षेत्रों की तुलना में कहीं अधिक उत्पादक (दुगुना हो सकता है) होगा। इस पहले वाले क्षेत्र के (यानि क्षेत्र के) उच्च वृद्धि दर (या सम्पत्ति के उत्पादन की दर) का कारण इसके (यानि प्रकृति मानव केन्द्रित मॉडल

के) अत्यधिक विकसित मानवीय और पर्यावरणीय संसाधनों में निहित होगा और जीवन के सभी क्षेत्रों में प्रत्येक व्यक्ति के लिए सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार देने में निहित होगा, जनता और पर्यावरण इसकी मुख्य प्राथमिकताएँ बनाने का मूलभूत सिद्धान्त अख्तियार करने में निहित होगा, इसके द्वारा विश्व शान्ति और सुरक्षा को अपनाने में निहित होगा; जीवन के सभी, स्थानीय से लेकर विश्वस्तरीय तक के आर्थिक, वित्तीय और व्यापारिक संस्थानों के क्षेत्रों और गाँव से लेकर संयुक्त राष्ट्र संघ के स्तर तक जनता के सशक्तिकरण (खास करके महिलाओं, मजदूरों एवं वैज्ञानिकों-तकनीशियनों) की राजनीति में निहित हैं, इसके वास्तविक और तर्कसंगत अर्थशास्त्र और इसकी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों से ओतप्रोत संस्कृति में निहित है।

सरकारी नेतृत्व वाले क्षेत्र की अव्यवहारिकता को भूतपूर्व सोवियत संघ के पतन से और विश्व में भूतपूर्व समाजवादी देशों द्वारा इस मॉडल को रद्द करने से देखा जा सकता है। कॉरपोरेट क्षेत्र का अप्रभावी होना निरन्तर बढ़ रही असमानता, गरीबी, भूखमरी, बेरोजगारी, बेघरबारता और इन सबसे ऊपर विश्व भर में निरन्तर बढ़ रहे गैरटिकाऊ (अब यहाँ और तब वहाँ) पर्यावरणीय संकट से देखा जा सकता है।

पर्यावरणीय और मानवीय मसलों पर मानव समुदाय (या जनता) की बढ़ती भूमिका और मांग दर्शाती है कि मानव समाज किस दिशा में जा रहा है।

कॉरपोरेट क्षेत्र द्वारा हालिया अख्तियार किया सामाजिक जवाबदेही और नैतिक व्यवहार के दर्शन का उदाहरण भी कॉरपोरेट क्षेत्र के मुक्त व्यापार के मूलभूत सिद्धान्त के गैर-कारगर होने को दर्शाता है जो सिद्धान्त प्रत्येक आर्थिक विकास प्रक्रिया (जिसका एकमात्र उद्देश्य व्यक्तिगत लाभ को उच्चतम सीमा तक बढ़ाना है) में सामाजिक न्याय की उपेक्षा करता है।

उदारीकरण, निजीकरण और पुनरसंरचना की चौतरफा ज्ञात धारणाओं पर नजर डालें जो कि आवश्यक तौर पर कॉरपोरेट क्षेत्र की सेवा करती हैं, इनको भी टिकाऊ विकास के मॉडल से संबंधित जनता की सहकारी पहलकदमियों से प्रत्युत्तर दिया जा सकता है।

वैश्विक व्यापारिक और वित्तीय संस्थाओं (यानि, विश्व व्यापार संगठन, आई.एम.एफ. और विश्व बैंक) के संबंध में उनकों बंद करने की अतिवादी मांग के बजाए हमें तर्कसंगत मांग रखनी चाहिए कि ये संस्थान अपने वर्तमान कॉरपोरेट विकास के उद्देश्य की जगह टिकाऊ विकास के उद्देश्य को अपनाएँ।

जम्मू-कश्मीर के मजदूर वर्ग के सामने दर-पेश चुनौती के सवाल के संबंध में एक वास्तविक रास्ता, भारत, पाकिस्तान और जेके के लोगों के बीच जम्मू-कश्मीर के विवाद को हल करने में निहित है। यहाँ एक समन्वयकारी फार्मूले की जरूरत है जो भारत, पाकिस्तान और जेके के लोगों के हितों में मेल बैठाकर न केवल तीनों संबंधित पक्षों के हितों की ही सेवा करे बल्कि जम्मू-कश्मीर के मजदूरों के मसलों को भी हल करने में सहायक हो।

प्रकृति-मानव केन्द्रित श्रमिक या ट्रेड यूनियन रणनीति

पूँजी का प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त श्रमिक या ट्रेड यूनियन आन्दोलन को एक सही रणनीति तैयार करने के योग्य बनाता है–

* एक सही परिप्रेक्ष्य, जनता और पर्यावरण को इसकी उच्चतम प्राथमिकता में रखना।

* एक वास्तविक मुख्य मसला, श्रम की अधीनता को समाप्त करने की माँग करते हुए श्रमिक ताकत और प्रबन्धन के बीच समानता के संबंधों को स्थापित करना।

* एक सही मुख्य कार्य, इसमें तीन तरफा एकीकृत गतिविधि शामिल है : (क) मजदूरों की सामाजिक चेतना को उनके राजनीतिक, आर्थिक, कानूनी (श्रम कानूनों के संबंध में) और सांस्कृतिक स्तर को ऊँचा उठाकर विकसित करना। (ख) ट्रेड यूनियन को जनवादी कार्यप्रणाली के लिए प्रतिबद्ध करना और (ग) एक संगठन (जैसे कि बी.एस.एन.एल. उद्यम में एन.एफ.टी.ई. बी.एस.एन.एल.) में एक यूनियन के मानदण्ड पर चलते हुए मजदूरों की तात्कालिक और दीर्घकालीन माँगों के आधार पर उन्हें एकता के सूत्र में पिरोना।

एक जनवादी कार्य-प्रणाली अपनाना, सोच और व्यवहार में, नेतृत्व द्वारा मजदूरों के प्रति जवाबदेही पर जोर देना, मजदूरों और प्रबंधकों की लोगों के प्रति जवाबदेही होना, उचित माँग पत्र बनाना और उसे लोगों के साथ विचार विमर्श करके तैयार करना, प्रतिदिन ट्रेड यूनियन कार्य को इस तरह चलाना ताकि मजदूरों के साथ निरन्तर नजदीक सम्पर्क बना रहे, ट्रेड यूनियन की कार्य-प्रणाली में जनवादी मानदण्डों को अपनाना, प्रत्येक मजदूर को धैर्यपूर्वक सुनना और उसकी व्यक्तिगत, पारिवारिक और ऑफिस की समस्याओं को जानने की कोशिश करना तथा सदस्यों की नियमित आम-सभाएँ बुलाना।

और सांगठनिक तौर पर मजदूरों में अधिकतम सम्भव एकता की आवश्यकता पर जोर देते हुए एक उद्यम में एक यूनियन के उसूल का पालन करना। जहाँ कहीं भी एक यूनियन के उसूल का तत्काल पालन व्यवहारिक नहीं है वहाँ सभी विद्यमान यूनियनों को एक न्यूनतम साझा कार्यक्रम के आधार पर संयुक्त मोर्चे में एकताबद्ध करने की कोशिश करनी चाहिए। (1.8.2003)

* * * * *

यही समय है कि जम्मू-कश्मीर की दीवार की लिखावट पर नजर डाली जाए

I. जम्मू-कश्मीर की समस्या का न्यायपूर्ण समाधान निश्चय ही सम्भव है

जम्मू-कश्मीर समस्या के सम्बन्ध में हालात क्या हैं। आज जम्मू-कश्मीर की समस्या नये उभर रहे तीन मुख्य अन्तरसम्बन्धित तथ्यों से चरित्रित है।

प्रथम, हुर्रियत कान्फ्रेंस जो कश्मीरियों का एकीकृत मंच है, दो भागों में विभाजित हो गया है जबकि दोनों का एजेण्डा एक जैसा ही है।

इसके मायने हैं कि अब तक दोनों धड़ों के बीच कोई बुनियादी अन्तर नहीं है सिवाय इसके कि राजनीतिक सम्मेलन में गिलानी गुट द्वारा उठाये गये मुद्दे पर कि जिन लोगों ने सन् 2002 के जम्मू-कश्मीर विधानसभा के चुनाव में गुप-चुप भाग लिया है उन्हें हुर्रियत कान्फ्रेंस से बाहर निकाल दिया जाए, जबकि अब्बास अंसारी गुट ने यह कहते हुए इस आरोप को निरस्त कर दिया कि उचित जाँच करने पर यह इल्जाम गलत पाया गया है।

जम्मू-कश्मीर समस्या का न्यायपूर्ण समाधान चाहने वाले सभी शांतिप्रिय लोगों

के लिए हुर्रियत में विभाजन वास्तव में दुखद है। जम्मू-कश्मीर के हित की माँग तो यह है कि हुर्रियत के दोनों विभाजित गुट पुन: एक मंच पर एकीकृत हो जाएं, बनिस्पत इसके कि इसको झूठी प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाएं। पाकिस्तान और इस्लामिक देशों के संगठन के लिए यह उचित नहीं था कि वे किसी एक गुट को तुरन्त मान्यता का प्रमाण पत्र दें, जबकि जम्मू-कश्मीर के लोगों के हित में वे अपील करते कि दोनों गुट पुन: एकता कायम करें।

फिर भी हमारे विचार से हुर्रियत में विभाजन का बुनियादी कारण हुर्रियत के मूलभूत कार्यक्रम में समाहित है जिसका कोई एक लक्ष्य या भविष्य का दृष्टिकोण नहीं है। जबकि हुर्रियत का एजेण्डा (कार्यक्रम) तीन लक्ष्य लिये हुए हैं–(a) 1948-49 के यू एन प्रस्तावों के आधार पर कश्मीरियों का आत्मनिर्णय का अधिकार, (b) इसके भविष्य के निर्धारण के लिए जम्मू-कश्मीर में जनमत संग्रह करवाय जाए या (c) भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों के बीच में त्रिपक्षीय वार्ता के जरिए जम्मू-कश्मीर समस्या का समाधान किया जाए। स्पष्टतया, उपरोक्त सभी तीनों लक्ष्य तीन तरीकाकार (न कि किसी लक्ष्य या उद्देश्य को) को इंगित करते हैं जो जम्मू-कश्मीर के लोगों के लक्ष्य या उद्देश्य को परिभाषित करने वाले हैं।

फिर भी वास्तविक व्यवहार में हुर्रियत सात लक्ष्य लिए हुए था जो हुर्रियत के सात सदस्यों वाली कार्यकारिणी का प्रत्येक सदस्य अपने-अपने संगठनों के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए बेतहाशा लगे हुए थे। जबकि हुर्रियत कान्फ्रेंस की कार्यकारिणी का प्रत्येक सदस्य अपने अलावा अन्य 6 ग्रुपों के लक्ष्यों को नजरअन्दाज करता था।

द्वितीय, यू एन महासभा के न्यूयार्क में हुए हालिया सत्र में भारत-पाकिस्तान द्वारा सख्त रवैया अपनाए जाने में यह निहित है कि 55 साल के लम्बे दौर में आपसी टकराहट और शीत युद्ध के रास्ते पर चलने के कड़वे अनुभव से कुछ भी सबक नहीं सीखते हुए हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनों अभी भी 1947 के अपने-अपने धार्मिक कट्टरवाद तथा गैर-मानवीय बर्बरता की मानसिकता पर आज भी खड़े हैं और अन्तरनिर्भर देशों की नई उभरती वास्तविकता की माँग की अभी भी अनदेखी कर रहे हैं तथा लोगों के एक मानवीय विश्व के प्रादुर्भाव की ओर बढ़ रहे रुझान को विघटित कर रहे हैं।

तृतीय, कश्मीरी खाड़कू आन्दोलन के सम्बन्ध में यू एस एवं यूरोप की बड़ी शक्तियों, जैसे फ्रांस, जर्मनी, ब्रिटेन आदि के असंगत वक्तव्यों के जरिए धारणाओं में परिवर्तन यह जाहिर करता है कि अब ये देश कश्मीरी खाड़कुओं को एक आतंकवादी ग्रुप समझते हैं (जबकि पहले वे इन्हें कभी अलगाववादी और कभी आजादी के आन्दोलन वाले कहते थे)। अब वर्तमान में जम्मू-कश्मीर पर उनकी स्थिति यह है कि भारत और पाकिस्तान के बीच यह मुद्दा विवादास्पद है तथा इसका समाधान दोनों देशों के बीच बातचीत के जरिए किया जाए जिसमें जम्मू-कश्मीर के लोगों को शामिल किया जाए।

उपरोक्त वर्णित सभी तथ्य अपने-अपने महत्व के साथ जम्मू-कश्मीर की समस्या के समाधान की प्रक्रिया को और जटिल बनाते हैं।

II. इस संकट के कारण क्या हैं

प्रारम्भिक कारण जो अभी भी जारी है वह नई दिल्ली में निहित है, जिसके बहुसंख्यकवादी दृष्टिकोण (सभी धार्मिक अल्पसंख्यकों और नस्ली समुदायों के प्रति भेदभावपूर्ण नजरिया), अमीरपक्षीय नीतियों, दमनकारी तरीकों विशेष तौर पर मानवीय

अधिकारों के उल्लंघन के तरीकों, जम्मू-कश्मीर के लोगों को पूर्ण स्वायत्तता दिये जाने की इसकी (यानि भारत की) लिखित प्रतिज्ञा के विपरीत रवैये ने कश्मीरियों को पूर्ण अलगाव की स्थिति में डाल दिया तथा 40 साल से अधिक समय तक भारत-पक्षीय विभिन्न नेताओं के शासन के नीचे इस प्रकार के अमानवीय व्यवहार को झेलने के बाद कश्मीरी खाड़कू रास्ता अपनाने को मजबूर हुए हैं।

अगला कारण हुर्रियत कान्फ्रेंस में निहित है जो जम्मू-कश्मीर के लोगों के बुनियादी लक्ष्य के बारे में भिन्न-भिन्न तथा मतान्ध दृष्टिकोण रखने तथा साथ ही रोजमर्रा की समस्याओं के सम्बन्ध में (जिनके समाधान के लिए जन समूह स्थानीय शासकों के दरबार में जाते हैं) अल्पकालीन कार्यक्रम के अभाव में जनता को व्यवहार में जागृत करने एवं एकबद्ध करने में नाकामयाब रहे हैं।

आगे, संकट का कारण इस्लामाबाद में निहित है जिसके सुन्नी रूढ़िवाद ने न केवल विभिन्न धर्मों में बल्कि नस्ली समूहों में भी फूट पैदा की है।

और आगे, संकट का कारण यू एन की पाँच वीटो अधिकार वाली बड़ी शक्तियों, खासकर अमेरिका से सम्बन्धित है जिन्होंने जम्मू-कश्मीर समस्या के न्यायपूर्ण आधार पर समाधान करने के बजाए व्यक्तिगत तौर पर अपने-अपने हित में इस मुद्दे का लाभ उठाने की कोशिश की है।

III. वास्तविकता के मद्देनजर मसले का समाधान किया जाए

जम्मू-कश्मीर की दीवार पर लिखावट बहुत साफ है जो कह रही है कि जम्मू-कश्मीर राज्य की तीन प्रतिद्वन्द्वी ताकतों में से कोई भी इस स्थिति में नहीं है कि वह अपनी ताकत के जोर पर अपने विरोधी से विजय प्राप्त कर सके। जबकि मौजूदा वैश्विक अव्यवस्था की स्थिति में विश्व की कोई भी अन्य ताकत इन प्रतिद्वन्द्वी पक्षों में से किसी एक का पक्ष लेने को तैयार नहीं है।

भारत का आकलन कि भारत के मुकाबले में पाकिस्तान की कमजोर आर्थिकता और कमजोर सैनिक आधार तथा इसके साथ ही दुनिया के दबाव के नतीजतन इसको सरहद पार के 'आतंकवाद' (यानि खाड़कूवाद) के समर्थन को रोकना पड़ेगा तथा दीर्घकालीन समय तक यह छद्म युद्ध को वहन नहीं कर सकेगा और अन्ततोगत्वा आपसी सहमति के समाधान को अपनाना होगा। और इसी प्रकार पाकिस्तान की गणना है कि पाकिस्तान की तुलना में खाड़कू विरोधी युद्ध पर पाकिस्तान की बनिस्पत भारत को 10 गुना अधिक मानवीय एवं आर्थिक बोझ के कारण भारत लम्बे समय तक टिक नहीं पायेगा और पाकिस्तान एवं खाड़कुओं के साथ जम्मू-कश्मीर समस्या के समाधान के लिए मजबूर हो जायेगा। परन्तु ये दोनों आकलन भारत और पाकिस्तान के बीच अत्यधिक पारस्परिक आपसी घृणा और शत्रुता की वास्तविक स्थिति को नजरअन्दाज करते हैं जो एक दूसरे को बर्बाद करने की स्थिति तक पहुँच सकते हैं, यहाँ तक कि इनके बीच परमाणु युद्ध भी हो सकता है।

स्पष्टतया, भारत और पाकिस्तान की इस प्रकार की मानसिक स्थिति यू एन, इसकी सुरक्षा परिषद, इसके साथ ही भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों से यह अपेक्षा करती है कि भारत-पाकिस्तान पर पुरजोर दबाव डालें ताकि ये दोनों आर-पार के आत्मघाती युद्ध के रास्ते को छोड़कर बातचीत के त्रिपक्षीय रास्ते को अपनाए।

बातचीत से समझौता आम तौर पर दो किस्म अख्तियार कर सकता है, उदाहरणतया, (क) प्रतिद्वन्द्वी पक्षकारों के बीच लेन-देन के आधार पर विवादास्पद क्षेत्र का बँटवारा करना, या (ख) एक साझा एकता का फार्मूला अपनाया जाए जो ऐतिहासिक आकांक्षाओं और इच्छाओं तथा सम्बन्धित पक्षकारों के वर्तमान हितों से मेल खाता हो।

वर्तमान वैश्विक अव्यवस्था की वास्तविकता तथा 1947 का एकीकृत भारत के साम्प्रदायिक बँटवारे के कड़वे पिछले अनुभव तथा 1947 के बाद की भारत-पाक की दुश्मनी (जिसके कारण तीन युद्ध हुए तथा दोनों देशों के बीच लगातार शीत युद्ध की स्थिति बने रहने) को ध्यान में रखते हुए यह सबसे अधिक उचित रहेगा कि पहले विकल्प के मुकाबले में (जो भारत-पाक को पुन: और आगे टकराहट की तरफ ले जा सकती है क्योंकि पिछले 55 वर्ष का लम्बा टकराहट का इतिहास रहा है), दूसरा विकल्प (जो भारत और पाकिस्तान के बीच भाईचारे के सम्बन्ध स्थापित करेगा), भारत-पाकिस्तान के बीच समान आनुवंशिकता का जुड़ाव कायम करेगा।

निश्चय ही भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोग न केवल खुशी-खुशी इस दूसरे विकल्प को अपनायेंगे बल्कि उसका स्वागत भी करेंगे क्योंकि यह तीनों पक्षों, यानि भारत, पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के सम्बन्ध में एकता और अखण्डता को सुनिश्चित बनायेगा। जम्मू-कश्मीर के लोग विशेष तौर पर खुश होंगे क्योंकि यह जम्मू-कश्मीर के सभी हिस्सों को एकीकृत करेगा जबकि पहला विकल्प अपनाने के मामले में यह संभावना काफी अधिक है कि सैद्धान्तिक सहमति के आधार पर जम्मू-कश्मीर क्षेत्र का विभाजन कर दिया जाए, क्योंकि जम्मू-कश्मीर का मुद्दा दोनों देशों के लिए जीवन-मरण का प्रश्न बना रहा है। भारत जबकि यह मानता है कि यह मसला भारत के अस्तित्व से जुड़ा हुआ है तथापि पाकिस्तान का यह नजरिया है कि जम्मू-कश्मीर का मसला उसकी श्वास नली है।

मामले की उपरोक्त वर्णित स्थिति में हमारी राय में जेके समस्या यह अपेक्षा करती है कि एक समझौते का फार्मूला तीन चरणबद्ध तरीके से लागू किया जाए, (क) दोनों देशों के बलों को तत्काल सीमाओं से पीछे लाया जाए, (ख) जम्मू-कश्मीर समस्या के समाधान के लिए तरीकाकार निर्धारित किये जाएं तथा (ग) जम्मू-कश्मीर समस्या से सम्बन्धित वास्तविक और न्यायपूर्ण समाधान छांटा जाए।

प्रथम चरण में नियंत्रण रेखा या अन्तर्राष्ट्रीय सीमा (जैसी भी स्थिति हो) से प्रत्येक देश के बलों को 2 किलोमीटर पीछे हटाया जाए। सीमा पर गश्त दोनों देशों के सेना अधिकारियों के संयुक्त कमान द्वारा निर्मित संयुक्त टुकड़ियों द्वारा की जाए।

द्वितीय चरण में हमारे मामले में (यानि जम्मू-कश्मीर समस्या के) भूतपूर्व और वर्तमान तथ्य तथा अन्य समान मसलों का ऐतिहासिक अनुभव हमें यह सुझाव देता है कि सभी रूढ़िवादी और अतिवादी नजरियों को नकारा जाए तथा मानवीय दृष्टिकोण और उसके तरीकाकारों को अपनाया जाए, यानि (क) सैनिक समाधान को रद्द किया जाए, (ख) शांतिपूर्ण रास्ते को अपनाया जाए, (ग) दोनों देशों के बीच युद्ध-वर्जन संधि पर हस्ताक्षर किए जाएं, (घ) प्रत्येक देश की एकता और अखण्डता को कायम रखने का वादा किया जाए, (ड़) अपने-अपने प्रिय पक्षों को वरीयता देने का आग्रह न करें (यानि जेके भारत का अभिन्न अंग है या जेके पाकिस्तान की श्वास नली है), (च) जम्मू-कश्मीर में

हिंसा के स्तर को कम किया जाए तथा मानव अधिकारों के उल्लंघन को समाप्त किया जाए, (छ) जम्मू-कश्मीर से सम्बन्धित सभी साम्प्रदायिक समाधानों को रद्द किया जाए, (ज) तीनों पक्षों (भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों) के हितों का मेल बैठाते हुए जम्मू-कश्मीर की समस्या का समाधान किया जाए, (झ) भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों का साझा भविष्य है, इस दृष्टिकोण को अपनाया जाए।

तृतीय चरण में उपरोक्त वर्णित मानवीय तरीकाकार की माँग है कि एक मेल-मिलाप वाला समाधान निकाला जाए जो तीनों पक्षों (यानि, भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोग) के सम्बन्ध में अधिकतम सम्भव सीमा तक उनकी आकांक्षाओं और हितों को संतुष्ट करता हो।

IV. जम्मू–कशमीर समस्या के समाधान के लिए एक न्यायपूर्ण मानवीय प्रस्ताव

हमारी राय में निम्न तीन बिन्दुओं का प्रस्ताव एक न्यायपूर्ण समाधान प्रदान करता है जो तीनों सम्बन्धित पक्षों में (यानि, भारत-पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोग) तथा साथ ही विश्व समुदाय की आकांक्षाओं और हितों की सेवा करता है।

(क) जम्मू-कश्मीर की सुरक्षा और विदेशी मामले की हद तक भारत-पाक सहराज्य के संवैधानिक ढाँचे के तहत जम्मू-कश्मीर की सम्प्रभुता को संयुक्त रूप से सौंपकर भारत-पाकिस्तान के अपने-अपने राष्ट्रीय हितों को संतुलित किया जा सकता है।

(ख) जम्मू-कश्मीर को संवैधानिक तौर पर स्वतंत्र राज्य की मान्यता देकर, जिसे सुरक्षा और विदेशी मामलों को छोड़कर सभी मामलों में सम्प्रभु शक्तियां हासिल हो, जम्मू-कश्मीर के लोगों, विशेष तौर पर कश्मीरियों की क्षेत्रीय आकांक्षाओं और हितों को पूरा किया जा सकता है।

(ग) जम्मू-कश्मीर की विभिन्न नस्लीय क्षेत्रीय समुदायों में प्रत्येक को अधिकतम सम्भव संवैधानिक स्वायत्तता देकर उनकी नस्लीय आकांक्षाओं और हितों को पूरा किया जा सकता है। जम्मू-कश्मीर के राज्य स्तर के मामलों में निम्न को शामिल किया जा सकता है–राज्याध्यक्ष, उच्च न्यायालय, चुनाव आयोग, मानव विकास आयोग, पर्यावरण आयोग, योजना आयोग आदि।

तीन सम्बन्धित पक्षकारों की नस्ली, क्षेत्रीय और वैश्विक इच्छाओं की संतुष्टि के अलावा उपरोक्त फार्मूला तीनों पक्षों तथा विश्व मानव समुदाय को आगे और नई विकास संभावनाओं के द्वार खोलता है। यह फार्मूला उन्हें कई अन्य तरीकों से भी लाभ पहुँचाता है। यह फार्मूला विश्व समुदाय के भी माफिक है क्योंकि यह विश्व की सबसे खतरनाक ज्वलन्त समस्याओं में एक समस्या को समाप्त करता है। यह फार्मूला दक्षिण एशिया समुदाय के हित में भी है क्योंकि यह इसके सामाजिक-आर्थिक विकास, साझा बाजार, संयुक्त सुरक्षा आदि मामले में उत्पन्न बाधाओं को दूर करता है।

आर्थिक विकास में समान रूप से साझीदार बनाकर जिसमें भारत व पाकिस्तान प्रत्येक वित्त की समान राशि उपलब्ध करवाकर, जबकि जम्मू-कश्मीर राज्य प्राकृतिक संसाधनों के रूप में अपने हितों का योगदान देकर, यह फार्मूला भारत-पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोगों की और सेवा करता है। इसके अलावा जम्मू-कश्मीर के लोगों को दोनों देशों की नागरिकता हासिल होने से तथा उनसे व्यापार की सुविधा प्राप्त होने के कारण अतिरिक्त फायदा भी प्राप्त होता है।

V. जम्मू-कश्मीर की समस्या के समाधान की प्रक्रिया को जारी रखा जाए

बातचीत के आधार पर जम्मू-कश्मीर समस्या के समाधान की प्रक्रिया को सुगम बनाते हुए एवं जारी रखते हुए नियंत्रण रेखा के दोनों तरफ से जम्मू-कश्मीर के लोग महत्वपूर्ण एवं प्रभावी भूमिका निभा सकते हैं। वर्तमान स्थान और समय में इस प्रकार के काम के लिए जम्मू-कश्मीर के लोग पूर्णतया माफिक एवं सामाजिक तौर पर अत्यधिक माकूल है। इस प्रकार की गतिविधि राज्य में विभिन्न नस्ली-क्षेत्रीय, सामाजिक एवं राजनैतिक गुपों के बीच में बातचीत के आधार पर जम्मू-कश्मीर समस्या समाधान हेतु आम सर्वसम्मति पैदा करने के लिए हमसे माँग करती है कि कठिन और वहनीय परिश्रम किया जाए। इसकी पूर्ति करने के लिए तीन पक्षीय बुनियादी काम और सात पक्षीय तात्कालिक काम करने की जरूरत है।

बुनियादी काम में शामिल है–(क) पृष्ठ 6 पर वर्णित तीन सूत्री मानवतावादी फार्मूले के आधार पर जम्मू-कश्मीर के लोगों को जागृत, गतिशील एवं संगठित किया जाए तथा जम्मू-कश्मीर समस्या के त्रिपक्षीय समाधान के लिए मंच में लोगों को संगठित किया जाए।

(ख) उपरोक्त वर्णित फार्मूले पर आम जनता की सर्वसम्मति बनाए जाने की कोशिश की जाए।

(ग) सामाजिक चेतना और एक मूल्य आधारित शैली विकसित की जाए तथा जम्मू-कश्मीर समस्या के समाधान के लिए मंच का लोकतांत्रिक सांगठनिक ढाँचा खड़ा किया जाए।

तात्कालिक काम में शामिल हैं–

(क) नियंत्रण रेखा के उस पार जिसे 'आजाद कश्मीर' कहते हैं, उसके सभी मानवतावादी, शांतिप्रिय और लोकतांत्रिक ताकतों के साथ तात्कालिक तौर पर सौहार्द एवं मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किये जाए तथा उनके साथ उपरोक्त वर्णित प्रस्ताव पर विचार-विमर्श किया जाए ताकि एक साझा समझ बनाई जा सके।

(ख) राज्य के इस तरफ उपरोक्त प्रस्ताव पर जिला स्तरीय सम्मेलन किये जाएं।

(ग) उपरोक्त वर्णित तीन सूत्री फार्मूले के पक्ष में हस्ताक्षर अभियान चलाया जाए।

(घ) सभी स्थानों पर तीन सूत्रीय फार्मूले के आधार पर जनता में जन संवाद किये जाएं।

(ड़) उपरोक्त प्रस्ताव पर सर्वसम्मति हासिल करने के लिए अन्तर-नस्ली तथा अन्तर-दलीय बातचीत को आगे बढ़ाया जाए।

(च) विभिन्न संवेदनशील स्थानों पर साम्प्रदायिक सद्भाव सम्मेलन आयोजित किये जाएं।

(छ) उपरोक्त प्रस्तावों के पक्ष में भारत-पाकिस्तान और विश्व के शांतिपूर्ण एवं विवेकशील लोगों की हमदर्दी और सहायता हासिल करने की प्रक्रिया को गतिशील किया जाए।

निश्चय ही मानवतावादी लक्ष्य मनुष्य के भविष्य का द्योतक है।

(डैली ग्रेटर कश्मीर में प्रकाशित, 21-22 अक्टूबर, 2003)

* * * * *

न्यूयार्क में 'कश्मीर शांति सम्मेलन' के विचार-विमर्श के लिए एक संक्षिप्त टिप्पणी

कश्मीर : एक आगे की राह तथा भविष्य के लिए प्रत्याशा

1. न्यूयार्क में 24 एवं 25 जुलाई को होने वाले 'कश्मीर शांति सम्मेलन' का प्रत्येक शांतिप्रिय व्यक्ति स्वागत करेगा। यह इसलिए है क्योंकि आज मानव समाज में शांति मानवता की प्रथम आवश्यकता है और इसलिए इस दिशा में हर एक पहल स्वागत योग्य है।

2. हमारे युग में शांति के कार्यक्रम की अद्वितीय उच्च हैसियत इस तथ्य में निहित है कि केवल शांति के वातावरण में ही आज मानव समुदाय एक तरफ मौजूदा घातक पर्यावरणीय-जैविक संकट (यानि पर्यावरणीय ह्रास) तथा दूसरी तरफ अवहनीय (गैर टिकाऊ) अन्यायपूर्ण मानव अस्तित्व की स्थिति का उचित उत्तर दे सकता है।

3. अब तक के सभी मौजूद अन्दरूनी और बाहरी मानवीय झगड़ों और टकराहटों का आधार हमेशा चल रही अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था में विद्यमान रहता है, जिनमें से प्रत्येक इस उक्ति कि 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' तथा न्याय प्राप्त करने का अन्तिम अस्त्र ताकत है–पर आधारित है। फिर भी, वर्तमान सामाजिक व्यवस्था सबसे अधिक खतरनाक रूप में उभरी है जिसमें सभी जैव-घटनाक्रमों को पर्यावरणीय रूप में घातक चुनौती का समाना है तथा मानवीय सम्बन्धों ने उच्चतम असमानता और अमानवीय रूप अख्तियार कर लिया है जो पूर्णतया स्वहित की प्रेरणा पर आधारित है जिसका मकसद येन-केन प्रकारेण केवल अत्यधिक धन प्राप्त करना है, जैसे-तैसे सत्ता हड़पनी है तथा खाओ-पिओ और मौज करो की जीवन शैली अपनाने पर आधारित है।

4. सैनिक समाधान का कार्यक्रम आज इतना घृणित और अनुपयोगी हो गया है कि वर्तमान वैश्विक कॉरपोरेट व्यवस्था के मुख्य नेता जार्ज डब्ल्यू बुश द्वारा चलाई जा रही स्थायी युद्ध की दिशा भी पूर्णतया बेकार सिद्ध हो चुकी है तथा यह दिशा एक ओर अधिक खतरनाक, असुरक्षित एवं अस्थिर दुनिया रचने की तरफ धकेल रही है।

5. स्पष्टतया, नये उभर रहे विश्व परिदृश्य में प्रत्येक झगड़े (जम्मू-कश्मीर सहित) में से बाहर निकलने का एकमात्र रास्ता शांतिपूर्ण तथा भले के लिए टकराहट वाले रास्ते को छोड़ देने में निहित है। अत: वर्तमान संयोग जम्मू-कश्मीर मुद्दे पर तीन सम्बन्धित पक्षों (यानि भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों) के बीच बातचीत शुरू करने का अनुकूल समय है। शुरू में वार्तालाप द्विपक्षीय किया जाय या त्रिपक्षीय, यह निर्णय दो बड़े पक्षकारों, भारत व पाकिस्तान द्वारा लिया जा सकता है।

6. शांति प्रक्रिया के पहल की जिम्मेदारी नैतिक तौर पर नई दिल्ली पर है, क्योंकि वह इस विवाद का मुख्य पक्षकार है। यहाँ नई दिल्ली द्वारा तीन स्तरीय पहल करने की जरूरत है, यानि, कुछ महीनों के लिए एक पक्षीय तौर पर युद्ध बन्दी की घोषणा की जाए; राज्य में हिंसा का स्तर और मानव अधिकारों के उल्लंघन को कम किया जाए; जम्मू-कश्मीर के विकास के लिए अतिरिक्त धन स्वीकृत किया जाए, ये तीनों कदम सम्बन्धित पक्षकारों के बीच में रुके पड़े मार्ग को खोलने में मदद कर सकता है।

7. जम्मू-कश्मीर शांति सम्मेलन से अनुरोध किया जाता है कि वे सभी पक्षकारों से अपील करे कि वे अपने-अपने दृष्टिकोण एवं नीतियों पर कृपया गम्भीरता से पुनरावलोकन करें जिन्होंने उन्हें भारी नुकसान पहुँचाया है तथा जम्मू-कश्मीर के लोगों, विशेष तौर पर कश्मीरियों को भयंकर यंत्रणाओं में से गुजरना पड़ा है। सम्पूर्ण जम्मू-कश्मीर को अपनी-अपनी इकाइयों में शामिल करने के 1947 के परिप्रेक्ष्य को छोड़कर अब उन्हें प्रकृति-मानव केन्द्रित नजरिए को अपनाना चाहिए, जो भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों पर यह दायित्व डालती है कि वे अपने बीच साझेदारी स्थापित करें, भारत जो यह मानता है कि जम्मू-कश्मीर उसका अभिन्न अंग है, उसको अपने इस कठोर रुख को छोड़ने के लिए तैयार रहना चाहिए जबकि पाकिस्तान को सन् 1948-49 के यू एन प्रस्ताव के आधार पर समस्या के समाधान के अपने पारम्परिक नारे को छोड़ने की तैयारी दिखानी चाहिए। जम्मू-कश्मीर के लोगों को अपने आपको इस वास्तविकता के अनुकूल बनाना चाहिए कि जम्मू-कश्मीर एक बहुनस्लीय इकाई है जिसमें कोई एक नस्ली समुदाय पूर्ण बहुमत प्राप्त नहीं कर सकता और इसलिए आत्मनिर्णय और जनमतसंग्रह का नारा इस मामले में कोई प्रासंगिकता नहीं रखता है। जम्मू-कश्मीर विवाद को सामूहिक जवाब देने के लिए सब पक्षों को तैयार करना चाहिए। तीनों सम्बन्धित पक्षकारों की अपनी-अपनी मानसिकता में बदलाव दक्षिण एशिया एवं उसके साथ-साथ दुनिया के लिए आश्चर्यजनक परिणाम ला सकता है।

8. कश्मीर शांति सम्मेलन आगे तीन तरफा सामाजिक सच्चाई पर कृपया ध्यान दे, (a) भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोग ऐतिहासिक तौर पर एक ही हैं, पुश्तैनी और आनुवंशिक तौर पर साझे हैं तथा समान भाषा बोलते हैं एवं समान संस्कृत, आदतें, मानदण्ड और रूप लिए हुए हैं; (b) वर्तमान युग में दो राष्ट्र होते हुए भी वे समान समस्याओं से दो-चार हैं, यानि राजनीति में अपराधीकरण, कानूनी व्यवस्था का उल्लंघन, न्याय-हत्या, अपराध में बढ़ोतरी, अराजकता एवं हिंसा, कमरतोड़ भ्रष्टाचार, असमानता, गरीबी, बेरोजगारी, बेघरबारता, सांस्कृतिक मानदंडों का ह्रास, पर्यावरणीय संसाधनों के खराब होते हालात, जैसे हवा और पानी में प्रदूषण, पीने के पानी की उपलब्धता में कमी, भूमि क्षय, जंगल कटाव, जैव-विविधता को खतरा आदि। इस वैज्ञानक युग में भी भारत और पाकिस्तान दोनों विनाश के कगार पर हैं, जिनका वित्तीय घाटा बड़े भारी अनुपात में बढ़ गया है। (c) अब वे अपनी नई उभरती सामाजिक पहचान के तौर पर सार्क के साथ साझे भविष्य के चरण में प्रवेश कर गये हैं।

9. उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए यह देखा जा सकता है कि जम्मू-कश्मीर समस्या का एक न्यायपूर्ण एवं वास्तविक समाधान एक ऐसे फार्मूले में निहित है जो सम्बन्धित सभी पक्षकारों के हितों से मेल खाता है। हमारी राय में निम्न तीन सूत्री प्रस्ताव सम्बन्धित तीनों पक्षों, यानि, भारत, पाकिस्तान, जम्मू-कश्मीर तथा साथ ही विश्व समुदाय की आकांक्षाओं और हितों की पूर्ति करता है।

हमारी राय में निम्न तीन बिन्दुओं का प्रस्ताव एक न्यायपूर्ण समाधान प्रदान करता है जो तीनों सम्बन्धित पक्षों में (यानि, भारत-पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोग) तथा साथ ही विश्व समुदाय की आकांक्षाओं और हितों की सेवा करता है।

(क) जम्मू-कश्मीर की सुरक्षा और विदेशी मामले की हद तक भारत-पाक सहराज्य के संवैधानिक ढाँचे के तहत जम्मू-कश्मीर की सम्प्रभुता को संयुक्त रूप से सौंपकर

भारत-पाकिस्तान के अपने-अपने राष्ट्रीय हितों को संतुलित किया जा सकता है।

(ख) जम्मू-कश्मीर को संवैधानिक तौर पर स्वतंत्र राज्य की मान्यता देकर, जिसे सुरक्षा और विदेशी मामलों को छोड़कर सभी मामलों में सम्प्रभु शक्तियां हासिल हो, जम्मू-कश्मीर के लोगों, विशेष तौर पर कश्मीरियों की क्षेत्रीय आकांक्षाओं और हितों को पूरा किया जा सकता है।

(ग) जम्मू-कश्मीर की विभिन्न नस्लीय क्षेत्रीय समुदायों में प्रत्येक को अधिकतम सम्भव संवैधानिक स्वायत्तता देकर उनकी नस्लीय आकांक्षाओं और हितों को पूरा किया जा सकता है। जम्मू-कश्मीर के राज्य स्तर के मामलों में निम्न को शामिल किया जा सकता है–राज्याध्यक्ष, उच्च न्यायालय, चुनाव आयोग, मानव विकास आयोग, पर्यावरण आयोग, योजना आयोग आदि।

10. तीन सम्बन्धित पक्षकारों की नस्ली, क्षेत्रीय और वैश्विक इच्छाओं की संतुष्टि के अलावा उपरोक्त फार्मूला तीनों पक्षों तथा विश्व मानव समुदाय को आगे और नई विकास संभावनाओं के द्वार खोलता है। यह फार्मूला उन्हें कई अन्य तरीकों से भी लाभ पहुँचाता है। यह फार्मूला विश्व समुदाय के भी माफिक है क्योंकि यह विश्व की सबसे खतरनाक ज्वलन्त समस्याओं में एक समस्या को समाप्त करता है। यह फार्मूला दक्षिण एशिया समुदाय के हित में भी है क्योंकि यह इसके सामाजिक-आर्थिक विकास, साझा बाजार, संयुक्त सुरक्षा आदि मामले में उत्पन्न बाधाओं को दूर करता है।

11. आर्थिक विकास में समान रूप से साझीदार बनाकर जिसमें भारत व पाकिस्तान प्रत्येक वित्त की समान राशि उपलब्ध करवाकर, जबकि जम्मू-कश्मीर राज्य प्राकृतिक संसाधनों के रूप में अपने हितों का योगदान देकर, यह फार्मूला भारत-पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोगों की और सेवा करता है। इसके अलावा जम्मू-कश्मीर के लोगों को दोनों देशों की नागरिकता हासिल होने से तथा उनसे व्यापार की सुविधा प्राप्त होने के कारण अतिरिक्त फायदा भी प्राप्त होता है।

कश्मीर शांति सम्मेलन में भाग ले रहे सभी भागीदारों को बहुत-बहुत शुभकामनाओं के साथ पहले से ही धन्यवाद।

जुलाई, 2003 (ई-मेल से सम्मेलन को भेजा गया)

* * * * *

जम्मू–कश्मीर समस्या पर त्रिपक्षीय समाधान मंच द्वारा जम्मू–कश्मीर मुद्दे पर भारत के प्रधानमंत्री से अपील

1. जम्मू-कश्मीर समस्या पर त्रिपक्षीय समाधान मंच आपकी हालिया (अप्रेल 18, 2003) यात्रा पर हार्दिक शुभकामनएँ प्रेषित करता है।

2. मंच का यह सोचना है कि आपकी यह यात्रा उचित समय पर हुई है जब विश्व में एक नई सामाजिक वास्तविकता उभर रही है, यानि, विश्व में अमेरिका का महाशक्ति के रूप में उभरना, जिसका एक सूत्री कार्यक्रम दुनिया का अकेला पुलिस मैन बनना है। इस नये अन्तर्राष्ट्रीय सन्दर्भ ने स्वाभाविक तौर पर अमेरिका पर यह जिम्मेदारी डाल दी है कि वह विश्व की सभी समस्याओं (जिसमें जम्मू-कश्मीर भी शामिल है) पर नये तरीके से सोचे व कार्य करे।

3. मंच का यह विश्वास है कि अमेरिका के विदेश मंत्री के हालिया वक्तव्य पर सभी पक्षकारों ने ध्यान दिया होगा, जिसमें उन्होंने कहा है कि जम्मू-कश्मीर एक विवादास्पद मुद्दा है तथा इराक में सैनिक लक्ष्य पूर्ण होने के तुरन्त बाद विवादग्रस्त पक्षकारों के बीच विवाद को निपटाने में वे मदद करेंगे। पूर्व प्रभावी रूप में, जम्मू-कश्मीर मसले पर पहले अमेरिका का यह कथन था कि वह (यानि अमेरिका) इस मसले में तभी हाथ डालेगा जब विवादग्रस्त पक्षकार उसमें हाथ डालने का कहेंगे।

4. मंच की मान्यता है कि, अमेरिका की युद्धकारिता और एकपक्षीयता को ध्यान में रखा जाए तो किसी के लिए (भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों सहित) भी पूर्णतया अवास्तविक होगा कि वे भूतकाल में अमेरिका द्वारा दिये गये आश्वासनों या कथनों पर भरोसा करें। ताजा घटनाएँ (नाटो एवं अमेरिका तथा यूरोपियन यूनियन के बीच फूट) पूर्णतया इस बात की पुष्टि करती हैं कि अमेरिका केवल अपने स्वयं के कॉरपोरेट हितों के प्रति समर्पित है और नजदीक और प्रिय मित्र भी उसके लिए कुछ नहीं है।

5. मंच की यह धारणा है कि नये उभर रहे विश्व परिदृश्य में भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों के लिए यही सबसे अच्छा रास्ता है कि जम्मू-कश्मीर की समस्या के समाधान के लिए दृढ़ता से बातचीत का रास्ता अपनाएँ तथा भले के लिए सैनिक हल के रास्ते को ठुकरा दें।

6. उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए मंच यह मानता है कि वर्तमान अवसर सम्बन्धित पक्षकारों के बीच बातचीत शुरू करने का सही समय है। शुरू में बातचीत द्विपक्षीय की जाए या त्रिपक्षीय की जाए, यह निर्णय दोनों बड़े पक्षकारों (भारत व पाकिस्तान) द्वारा लिया जा सकता है।

7. विवाद का मुख्य पक्षकार होने के नाते शांति प्रक्रिया की पहल करने की नैतिक जिम्मेदारी नई दिल्ली पर आयत होती है, यहां तीन सूत्रीय पहल नई दिल्ली द्वारा की जा सकती है, यानि, एक माह के लिए एकपक्षीय युद्ध बन्दी की घोषणा करना; राज्य में हिंसा का स्तर एवं मानवाधिकारों के उल्लंघन को घटाना; तथा जम्मू-कश्मीर के विकास के लिए अतिरिक्त धन मुहैया करवाया जाए, ये तीनों कदम सम्बन्धित पक्षकारों के बीच में रुके पड़े मार्ग को खोलने में मदद कर सकते हैं।

8. मंच सभी पक्षकारों को अपील करता है कि वे अपने-अपने दृष्टिकोण एवं नीतियों पर कृपया गंभीरता से पुनरावलोकन करें जिन्होंने उन्हें भारी नुकसान पहुँचाया है तथा जम्मू-कश्मीर के लोगों, विशेष तौर पर कश्मीरियों को भयंकर यंत्रणाओं में से गुजरना पड़ा है। सम्पूर्ण जम्मू-कश्मीर को अपनी-अपनी इकाइयों में शामिल करने के 1947 के परिप्रेक्ष्य को छोड़कर अब उन्हें प्रकृति-मानव केन्द्रित नजरिए को अपनाना चाहिए जो भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों पर यह दायित्व डालती है कि वे अपने बीच साझेदारी स्थापित करें, भारत जो यह मानता है कि जम्मू-कश्मीर उसका अभिन्न अंग है, उसको अपने इस कठोर रुख को छोड़ने के लिए तैयार रहना चाहिए जबकि पाकिस्तान को सन् 1948-49 के यू एन प्रस्ताव के आधार पर समस्या के समाधान के अपने पारम्परिक नारे को छोड़ने की तैयारी दिखानी चाहिए। जम्मू-कश्मीर के लोगों को अपने आपको इस वास्तविकता के अनुकूल बनाना चाहिए कि जम्मू-कश्मीर एक बहुनस्लीय इकाई है जिसमें कोई एक नस्ली समुदाय पूर्ण बहुमत प्राप्त नहीं कर सकता और इसलिए आत्मनिर्णय और जनमत संग्रह का नारा इस मामले में कोई प्रासंगिकता नहीं रखता है।

जम्मू-कश्मीर विवाद को सामूहिक जवाब देने के लिए सब पक्षों को तैयार करना चाहिए। तीनों सम्बन्धित पक्षकारों की अपनी-अपनी मानसिकता में बदलाव दक्षिण एशिया एवं उसके साथ-साथ दुनिया के लिए आश्चर्यजनक परिणाम ला सकता है।

9. मंच और आगे तीन तरफा सामाजिक सच्चाई को रेखांकित करता है, यानि (a) भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोग ऐतिहासिक तौर पर एक ही हैं, पुश्तैनी और आनुवंशिक तौर पर साझे हैं तथा समान भाषा बोलते हैं एवं समान संस्कृत, आदतें, मानदण्ड और रूप लिए हुए हैं; (b) वर्तमान युग में दो राष्ट्र होते हुए भी वे समान समस्याओं से दो-चार हैं, यानि राजनीति में अपराधीकरण, कानूनी व्यवस्था का उल्लंघन, न्याय-हत्या, अपराध में बढ़ोतरी, अराजकता एवं हिंसा, कमरतोड़ भ्रष्टाचार, असमानता, गरीबी, बेरोजगारी, बेघरबारता, सांस्कृतिक मानदंडों का ह्रास, पर्यावरणीय संसाधनों के खराब होते हालात, जैसे हवा और पानी में प्रदूषण, पीने के पानी की उपलब्धता में कमी, भूमि क्षय, जंगल कटाव, जैव-विविधता को खतरा आदि। इस वैज्ञानक युग में भी भारत और पाकिस्तान दोनों विनाश के कगार पर हैं, जिनका वित्तीय घाटा बड़े भारी अनुपात में बढ़ गया है। (c) अब वे अपनी नई उभरती सामाजिक पहचान के तौर पर सार्क के साथ साझे भविष्य के चरण में प्रवेश कर गये हैं।

10. उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए मंच का मानना है कि जम्मू-कश्मीर समस्या का एक न्यायपूर्ण एवं वास्तविक समाधान एक ऐसे फार्मूले में निहित है जो सम्बन्धित सभी पक्षकारों के हितों से मेल खाता है। इसकी राय में निम्न तीन सूत्री प्रस्ताव सम्बन्धित तीनों पक्षों, यानि, भारत, पाकिस्तान, जम्मू-कश्मीर तथा साथ ही विश्व समुदाय की आकांक्षाओं और हितों की पूर्ति करता है।

(क) जम्मू-कश्मीर की सुरक्षा और विदेशी मामले की हद तक भारत-पाक सहराज्य के संवैधानिक ढाँचे के तहत जम्मू-कश्मीर की सम्प्रभुता को संयुक्त रूप से सौंपकर भारत-पाकिस्तान के अपने-अपने राष्ट्रीय हितों को संतुलित किया जा सकता है।

(ख) जम्मू-कश्मीर को संवैधानिक तौर पर स्वतंत्र राज्य की मान्यता देकर, जिसे सुरक्षा और विदेशी मामलों को छोड़कर सभी मामलों में सम्प्रभु शक्तियां हासिल हो, जम्मू-कश्मीर के लोगों, विशेष तौर पर कश्मीरियों की क्षेत्रीय आकांक्षाओं और हितों को पूरा किया जा सकता है।

(ग) जम्मू-कश्मीर की विभिन्न नस्लीय क्षेत्रीय समुदायों में प्रत्येक को अधिकतम सम्भव संवैधानिक स्वायत्तता देकर उनकी नस्लीय आकांक्षाओं और हितों को पूरा किया जा सकता है। जम्मू-कश्मीर के राज्य स्तर के मामलों में निम्न को शामिल किया जा सकता है–राज्याध्यक्ष, उच्च न्यायालय, चुनाव आयोग, मानव विकास आयोग, पर्यावरण आयोग, योजना आयोग आदि।

11. तीन सम्बन्धित पक्षकारों की नस्ली, क्षेत्रीय और वैश्विक इच्छाओं की संतुष्टि के अलावा उपरोक्त फार्मूला तीनों पक्षों तथा विश्व मानव समुदाय को आगे और नई विकास संभावनाओं के द्वार खोलता है। यह फार्मूला उन्हें कई अन्य तरीकों से भी लाभ पहुँचाता है। यह फार्मूला विश्व समुदाय के भी माफिक है क्योंकि यह विश्व की सबसे खतरनाक ज्वलन्त समस्याओं में एक समस्या को समाप्त करता है। यह फार्मूला दक्षिण एशिया समुदाय के हित में भी है क्योंकि यह इसके सामाजिक-आर्थिक विकास, साझा बाजार, संयुक्त सुरक्षा आदि मामले में उत्पन्न बाधाओं को दूर करता है।

12. आर्थिक विकास में समान रूप से साझीदार बनाकर जिसमें भारत व पाकिस्तान प्रत्येक वित्त की समान राशि उपलब्ध करवाकर, जबकि जम्मू-कश्मीर राज्य प्राकृतिक संसाधनों के रूप में अपने हितों का योगदान देकर, यह फार्मूला भारत-पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोगों की और सेवा करता है। इसके अलावा जम्मू-कश्मीर के लोगों को दोनों देशों की नागरिकता हासिल होने से तथा उनसे व्यापार की सुविधा प्राप्त होने के कारण अतिरिक्त फायदा भी प्राप्त होता है।

अत्यधिक सम्मान और प्रत्याशा में मंच की तरफ से धन्यवाद। (अप्रेल, 2003)

* * * * *

जम्मू-कश्मीर समस्या का बातचीत से वास्तविक एवं न्यायपूर्ण समाधान निकालने के लिए जम्मू-कश्मीर के लोग महत्वपूर्ण एवं प्रभावी भूमिका निभा सकते हैं

I

दुनिया भर में मानव समुदाय ने यह देखकर राहत की ठंडी श्वांस ली है कि नई दिल्ली और इस्लामाबाद दोनों ने दीवार पर लिखित इबारत को पढ़ लिया है, यानि, आणविक भिड़न्त में किसी की भी जीत नहीं होने वाली है, उसमें हार ही हार है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि कमजोर पक्ष के पास मात्र थोड़े से परमाणु हथियार हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि एक साधारण से परमाणु बम से लाखों जीवों की मृत्यु हो सकती (जैसे हिरोशिमा) है तथा साथ ही चारों ओर बर्बादी हो सकती है जिसका असर हजारों वर्ष तक रहेगा। विशेषज्ञों का अध्ययन यह बताता है कि एक अकेला मामूली सा परमाणु बम भी बड़े शहरों जैसे दिल्ली और लाहौर में 8 लाख लोगों की जान ले सकता है तथा इससे निकलने वाले 200 से अधिक रेडियोएक्टिव जीव–विष से बहुत बड़े भू–भाग, पानी और वनस्पति विषैले हो जायेंगे। प्लुटोनियम–239 रडियोएक्टिव जहर की आधी उम्र 24000 वर्ष है जबकि यूरेनियम–235 की आधी उम्र 71 करोड़ वर्ष है।

नई दिल्ली द्वारा पाकिस्तान को भारत की भूमि के ऊपर से नागरिक उड्डयन को पुन: स्थापित करना, पाकिस्तान में अपना उच्चायुक्त नियुक्त करना तथा उत्तरी अरब सागर में संघर्ष के मोर्चे से युद्ध-पोतों को पीछे लौटाने वाले, तनाव को कम करने वाले कदम स्वागत योग्य हैं। ये कदम–यद्यपि भारत-पाक के बीच पिछले 6 माह से चली आ रही दूरियों को समाप्त करने के लिए तो काफी नहीं है–परन्तु भारत-पाक की आडम्बरपूर्ण अन्धराष्ट्रवादी वैमनस्यता को सूत भर कम करने की ओर निश्चय ही ले जायेगा। फिर भी यह भरोसा करने के कारण हैं कि ये कदम निश्चय ही प्रतिफल देंगे। संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि यद्यपि बर्फ ने पिघलना तो शुरू कर दिया है परन्तु संकट से अभी पीछा नहीं छूटा है या कट्टरवाद में कमी आई परन्तु टकराववादी मुद्रा अभी जारी है।

अब, तार्किक तौर पर यह आशा की जा सकती है कि आने वाले दिनों में न केवल टूटे हुए भारत-पाक राजनयिक रिश्ते बहाल होंगे तथा दोनों की सीमाओं एवं नियंत्रण रेखा पर तनाव कम होगा, बल्कि दोनों देशों के बीच आम तौर पर उनके सभी पारस्परिक खिंचाव

बिन्दुओं तथा विशेष तौर पर मुख्य तनाव बिन्दु (यानि जम्मू-कश्मीर) पर सार्थक बातचीत भी शुरू होगी।

अमेरिका के राज्य उप सचिव आर. आर्मीटेज ने बी बी सी को दिए एक साक्षात्कार में यह इंगित किया है कि आगे का उपयोगी कदम यह हो सकता है कि अग्रिम क्षेत्रों में तैनात लड़ाकू हवाई जहाजों को पीछे लौटाया जाए, उन्होंने यह भी कहा है कि पाकिस्तान को भी इसी तरह के तनाव कम करने वाले कदम उठाने होंगे।

यह स्वागत योग्य परिवर्तन स्वाभाविक तौर पर यह प्रश्न प्रस्तुत करते हैं कि इन सब घटनाक्रमों के पीछे कारण क्या हैं। सभी दृष्टि से देखा जाए तो भारत और पाकिस्तान की अपनी-अपनी स्व अनुभूति की वजह से यह पैदा नहीं हुआ है, स्पष्टतया यह आम तौर पर विश्व जनमत और विशेष तौर पर महाशक्तियों (अमेरिका सहित) का दबाव ही था जिसके कारण यह संभव हुआ।

II

तनाव कम करने के बिन्दु को लिया जाए। यह अपेक्षा की जाती है कि हालिया तनाव कम करने की शुरू की गई प्रक्रिया आधे रास्ते में नहीं रुकेगी बल्कि आगे बढ़ने की ही संभावना है। इस अपेक्षा की तार्किकता यह है कि आज सामाजिक शांति और मेल-मिलाप मानव समुदाय की पहली आवश्यक माँग हो गई है। ऐसा इसलिए है क्योंकि नया उभर रहा वैश्विकरण का सामाजिक घटनाक्रम, सामाजिक हिंसा, दुनिया के किसी भी भाग में युद्ध या संघर्ष के वातावरण में आगे नहीं बढ़ सकता है। सामाजिक हिंसा या युद्ध मानव आवश्यकताओं–यानि, व्यापार, पूँजी, तकनीक, श्रम, पर्यापरणीय संसाधनों (पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता) का संरक्षण, मानवीय समस्याओं (गरीबी, बेरोजगारी, असमानता, अपराध, प्राकृतिक विपदाएँ, बिमारियां आदि) का सामान्य गतिविधियों के रास्ते में रुकावट है और इस प्रकार विद्यमान सामाजिक व्यवस्था की कार्य प्रणाली को छिन्न-भिन्न करने वाली है।

आगे, तनाव कम करने की प्रक्रिया के दो अन्य पूरक पहलू है। जिसका एक पहलू अमेरिका है, जिसकी आवश्यकता है कि चल रहे 'आतंकवाद के विरुद्ध विश्व युद्ध' में भारत और पाकिस्तान दोनों का सहयोग मिले और चाहत है कि इस मोड़ पर भारत-पाक के बीच कुछ हद तक मेल-मिलाप हो। इसका दूसरा पहलू है कि भारत और पाकिस्तान दोनों देशों के लोग युद्ध के विरुद्ध हैं तथा दोनों देशों की सम्बन्धित आर्थिक स्थिति निश्चित ही एक लघु या दीर्घ युद्ध का बोझ नहीं उठा सकती।

भारत और इस्लामाबाद में अमेरिका के रक्षा सचिव रम्सफील्ड के अलकायदा के सम्बन्ध में हालिया दिये गए विरोधाभासी वक्तव्य ने कुछ भ्रम पैदा किया है, परन्तु यह वक्तव्य आवश्यक तौर पर अमेरिकी प्रशासन के अस्त-व्यस्त सोच और व्यवहार को प्रतिबिम्बित करता है जिसका तनाव कम करने की प्रक्रिया पर कोई प्रभाव नहीं है।

आज आम लोगों की अवधारणा यह है कि दो-तीन महिनों के अन्दर-अन्दर दोनों देश अपने-अपने बुनियादी सैन्य बलों को शांतिकाल की अपनी मूल स्थिति में ले आयेंगे। जबकि सीमा सुरक्षा प्रहरी पहले की तरह से सीमा पर तैनात रहेंगे। यहाँ हमारा सुझाव यह है कि दोनों देशों की सेनाओं को नियंत्रण रेखा के अपने-अपने क्षेत्र के 1 किलोमीटर भीतर तक आपसी सहमति से पीछे हट जाना चाहिए तथा इस प्रकार खाली किये गए क्षेत्रों में भारत के प्रधानमंत्री के सुझाव के अनुसार दोनों देशों की संयुक्त गश्त होनी चाहिए,

जिसका कार्यक्रम आपसी सहमति से तय किया जाए। जम्मू-कश्मीर में घुसपैठ के स्तर पर नियंत्रण और सत्यापित करने के लिए यह संरचना उचित रहेगी तथा दोनों देशों के सशस्त्र बलों और लोगों के बीच यह संरचना सद्भावना और मित्रता उत्पन्न करेगी।

III

भारत और पाकिस्तान के बीच आम तौर पर पारस्परिक तनाव तनाव बिन्दुओं तथा विशेष तौर पर मुख्य तनाव बिन्दु (यानि, जम्मू-कश्मीर) पर सार्थक बातचीत का प्रश्न लिया जाए, इस प्रश्न पर हम यह मानते हैं कि भारत और पाकिस्तान के बीच वैमनस्यता के मर्म बिन्दु जम्मू-कश्मीर समस्या पर एक बार संतोषजनक हल निकाल दिया जाए तो हर चीज व्यवस्थित हो जायेगी।

भारत-पाकिस्तान के बीच 53 वर्ष का लम्बा अनुभव यह दर्शाता है कि जम्मू-कश्मीर समस्या का सैनिक या एकतरफा समाधान नहीं हो सकता। केवल एक सुलहकारी फार्मूला ही इसका एक वास्तविक उत्तर हो सकता है। ऐसा विकल्प चार बुनियादी मापदण्ड की पूर्ति चाहता है। पहला, यह सुलह भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर की विद्यमान क्षेत्रीय सीमाओं (जो अगस्त 1947 से पहले मौजूद थी) तथा विद्यमान मानवीय सामाजिक इकाइयों में कोई परिवर्तन नहीं करेगी। दूसरा, यह सुलह तीन सम्बन्धित पक्षकारों में से हर एक की अधिकतम संभव हद तक मुख्य आकांक्षाओं और हितों की पूर्ति करेगा और तीसरा, यह सुलह दोनों देशों के भूतकाल और वर्तमान काल की विशाल समानताओं पर ध्यान देगी तथा साझे भविष्य की वास्तविकता को प्रकट करेगी। अन्त में इन सबसे ऊपर यह सुलह सभी तरह की समस्याओं के बारे में एक मानवतावादी नजरिया अपनायेगी।

निम्नलिखित तीन बिन्दुओं का प्रस्ताव उपरोक्त वर्णित मापदण्डों के पूर्णतया अनुकूल है–

(क) जम्मू-कश्मीर की सुरक्षा और विदेशी मामले की हद तक भारत-पाक सहराज्य के संवैधानिक ढाँचे के तहत जम्मू-कश्मीर की सम्प्रभुता को संयुक्त रूप से सौंपकर भारत-पाकिस्तान के अपने-अपने राष्ट्रीय हितों को संतुलित किया जा सकता है।

(ख) जम्मू-कश्मीर को संवैधानिक तौर पर स्वतंत्र राज्य की मान्यता देकर, जिसे सुरक्षा और विदेशी मामलों को छोड़कर सभी मामलों में सम्प्रभु शक्तियां हासिल हो, जम्मू-कश्मीर के लोगों, विशेष तौर पर कश्मीरियों की क्षेत्रीय आकांक्षाओं और हितों को पूरा किया जा सकता है।

(ग) जम्मू-कश्मीर की विभिन्न नस्लीय क्षेत्रीय समुदायों में प्रत्येक को अधिकतम सम्भव संवैधानिक स्वायत्तता देकर उनकी नस्लीय आकांक्षाओं और हितों को पूरा किया जा सकता है। जम्मू-कश्मीर के राज्य स्तर के मामलों में निम्न को शामिल किया जा सकता है–राज्याध्यक्ष, उच्च न्यायालय, चुनाव आयोग, मानव विकास आयोग, पर्यावरण आयोग, योजना आयोग आदि।

इस तरह का हल दक्षिण एशिया (भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर सहित) और दुनिया के लोगों के लिए फायदेमंद होगा।

IV

बातचीत के आधार पर जम्मू-कश्मीर समस्या के समाधान की प्रक्रिया को सुगम बनाते हुए एवं जारी रखते हुए नियंत्रण रेखा के दोनों तरफ से जम्मू-कश्मीर के लोग महत्वपूर्ण एवं प्रभावी भूमिका निभा सकते हैं। वर्तमान स्थान और समय में इस प्रकार के काम के लिए जम्मू-कश्मीर के लोग पूर्णतया माफिक एवं सामाजिक तौर पर अत्यधिक माकूल है। इस प्रकार की गतिविधि राज्य में विभिन्न नस्ली-क्षेत्रीय, सामाजिक एवं राजनैतिक ग्रुपों के बीच में बातचीत के आधार पर जम्मू-कश्मीर समस्या समाधान हेतु आम सर्वसम्मति पैदा करने के लिए हमसे माँग करती है कि कठिन और वहनीय परिश्रम किया जाए। इसकी पूर्ति करने के लिए तीन पक्षीय बुनियादी काम और सात पक्षीय तात्कालिक काम करने की जरूरत है।

बुनियादी काम में शामिल है–(क) मंच की घोषणा और अन्य सम्बन्धित दस्तावेजों के आधार पर जम्मू-कश्मीर के लोगों को जागृत, गतिशील एवं संगठित किया जाए।

(ख) जम्मू-कश्मीर समस्या के वास्तविक, न्यायिक और त्रिपक्षीय समाधान के लिए आम जनता की सर्वसम्मति बनाए जाने की कोशिश की जाए।

(ग) सामाजिक चेतना और एक मूल्य आधारित शैली विकसित की जाए तथा जम्मू-कश्मीर समस्या के समाधान के लिए मंच का लोकतांत्रिक सांगठनिक ढाँचा खड़ा किया जाए।

तात्कालिक काम में शामिल हैं–

(क) नियंत्रण रेखा के उस पार जिसे 'आजाद कश्मीर' कहते हैं, उसके सभी मानवतावादी, शांतिप्रिय और लोकतांत्रिक ताकतों के साथ तात्कालिक तौर पर सौहार्द एवं मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किये जाए तथा उनके साथ उपरोक्त वर्णित प्रस्ताव पर विचार-विमर्श किया जाए ताकि एक साझा समझ बनाई जा सके।

(ख) राज्य के जम्मू संभाग में उपरोक्त प्रस्ताव पर जिला स्तरीय सम्मेलन किये जाए।

(ग) उपरोक्त वर्णित तीन सूत्री फार्मूले के पक्ष में हस्ताक्षर अभियान चलाया जाए।

(घ) सभी स्थानों पर तीन सूत्रीय फार्मूले के आधार पर जनता में जन संवाद किये जाएं।

(ड़) उपरोक्त प्रस्ताव पर सर्वसम्मति हासिल करने के लिए अन्तर-नस्ली तथा अन्तर-दलीय बातचीत को आगे बढ़ाया जाए।

(च) विभिन्न संवेदनशील स्थानों पर साम्प्रदायिक सद्भाव सम्मेलन आयोजित किये जाएं।

उपरोक्त प्रस्तावों के पक्ष में भारत-पाकिस्तान और विश्व के शांतिपूर्ण एवं विवेकशील लोगों की हमदर्दी और सहायता हासिल करने की प्रक्रिया को गतिशील किया जाए।

* * * * *

सामाजिक विकास के तीन मौलिक सिद्धान्त
कॉरपोरेट पूंजीवादी, साम्यवादी एवं प्रकृति–मानव केन्द्रित
(एक तुलनात्मक अध्ययन)

200 साल से भी अधिक समय से (18वीं सदी के अंत से 20वीं सदी के अंत तक) सामाजिक विकास के दो मौलिक सिद्धान्त यानि, पूँजीवादी या उदारवादी सिद्धान्त तथा साम्यवादी या मार्क्सवादी सिद्धान्तों (1848 के बाद) का राष्ट्र राज्य आधारित पूँजीवादी व्यवस्था पर प्रभुत्व रहा है। राष्ट्र राज्यों की अन्तरनिर्भरता की नई उभरी सामाजिक प्रक्रिया (जिसे वैश्वीकरण की सामाजिक प्रक्रिया भी कहा जाता है) से सामाजिक विकास का नया सिद्धान्त (यानि, प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त) विश्व परिदृश्य पर सामने आया है। इस प्रकार, जबकि पहले दो सिद्धान्त राष्ट्र राज्य आधारित व्यवस्था के दौर में विद्यमान सामाजिक हालात की उपज हैं, बाद का तीसरा प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त देशों की अन्तरनिर्भरता की नई उभरी प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न सामाजिक हालात की देन है। उपरोक्त वर्णित तीन सिद्धान्तों की तुलनात्मक स्थिति देखने के लिए हम नीचे उनमें से प्रत्येक का सारांश प्रस्तुत कर रहे हैं।

पूँजीवादी युग से पहले, राजशाही राज्य आधारित व्यवस्था के दौर में सामाजिक विकास के कई सामन्ती सिद्धान्त, कबीला आधारित चरागाही समाज के दौर में सामाजिक विकास के कई चरागाही (पशुपालन) सिद्धान्त, गण आधारित भोजन इकट्ठा करने एवम् शिकार करने वाले समाज के दौर में सामाजिक विकास के विभिन्न भोजन इकट्ठा करने और शिकार करने के सिद्धान्त मनुष्य की सामाजिक जिन्दगी पर प्रभुत्वशाली रहे हैं।

कारपोरेट पूँजीवादी (यानि, उदारवादी) सिद्धान्त

समाजशास्त्र (यानि, मानव समाज का अध्ययन) : कारपोरेट समाजशास्त्र मानवजाति को हमारे ग्रह और कई मामलों में ब्रह्माण्ड तक में केन्द्रिय घटनाक्रम समझता है। यह धारणा जनता को मानव समाज और उसकी प्रत्येक चीज के एकमात्र निर्माता के तौर पर पेश करती है। प्राकृतिक व्यवस्था में मनुष्य को एक अद्वितीय घटनाक्रम समझते हुए उसे प्रकृति के दूसरे घटनाक्रमों को अपनी सुविधानुसार शोषित करने की तरफ धकेलती है। इस धारणा में पर्यावरणीय आयाम शामिल नहीं है और यह सामाजिक समता की मानवीय इच्छा से कोई सरोकार नहीं रखती है।

इस सोच के मुताबिक मानवजाति का स्वभाव स्वार्थी है, इस प्रकार यह मनुष्य के दो तरफा चरित्र की सामाजिक वास्तविकता को नकारती है। प्रत्येक मनुष्य के अकेले स्व-हित की आधारभूत स्वभाव की समझ के तहत प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तिगत हित को दूसरे किसी भी व्यक्ति अथवा समुदाय की कीमत पर पूरा करने की तरफ निर्देशित होता है और प्रकृति को अपनी इच्छानुसार शोषित करने की दिशा पाता है।

यह सामाजिक विकास को केवल आर्थिक रूप में देखता है, दूसरे शब्दों में मानवीय भौतिक आश्यकताओं के सन्दर्भ में देखता है। सामाजिक विकास जब आर्थिक परिप्रेक्ष्य की रोशनी में तय किया जाता है तथा मुनाफे (या आर्थिक वृद्धि दर) को सामाजिक विकास के एकमात्र सूचक के रूप में पहचाना जाता है और इस प्रकार इसने पैसे को मानव समुदाय का एकमात्र आदर्श बना दिया है। अधिकतम मुनाफे को मानवीय तरक्की और

सम्पन्नता का आधारभूत असूल समझने से प्रत्येक व्यक्ति पैसे को जैसे-तैसे और हर समय व हर जगह हासिल करने के लिए प्रेरित है।

यह धारणा परम्परागत सामाजिक सिद्धान्त (यानि ''जिसकी लाटी उसकी भैंस'') की शाश्वतता में विश्वास करती है और इस मूलभूत वैज्ञानिक सच्चाई को भूला देती है कि प्रत्येक चीज निश्चित समय और स्थान के सापेक्ष ही होती है। सत्ता-पूजा के शाश्वत सिद्धान्त की समझ ने सभी सामाजिक विवादों और अपने उद्देश्य को हासिल करने के लिए हिंसा के तरीके को न्यायिक बना दिया है और मानव अस्तित्व के लिए राजनीतिक सत्ता हासिल करना ही राजनीतिक पार्टियों का एकमात्र उद्देश्य बन गया है।

लक्ष्य को ही साधन का उचित आधार मानने की कारपोरेट समाजशास्त्रीय धारणा सभी धोखाधड़ी वाले साधनों यानि, भ्रष्टाचार, काला-बाजारी, दोगलापन (यानि कहना कुछ और करना कुछ, आदि) को मान्यता देता है।

दृष्टिकोण : कारपोरेट पूँजीवाद के भविष्य का दृष्टिकोण कारपोरेट पूँजी तथा पूँजी मालिकों के प्रभुत्व वाला एक विश्व है।

मूलभूत सिद्धान्त : कारपोरेट पूँजीवाद की प्रमुख प्राथमिकता कारपोरेट पूँजी एवम् उसके मालिकों का विकास करना है।

वैश्विक व्यवस्था : राष्ट्र राज्यों की मौजूदा अन्यायपूर्ण व असमान कारपोरेट विश्व व्यवस्था अब संयुक्त राष्ट्र संघ की व्यवस्था (कई संस्थाओं द्वारा गठित जैसे अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक, विश्व व्यापार संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन, युनेस्को, यू एन डी पी, पर्यावरण आयोग आदि) तथा पाँच वीटो पावर रखने वाली बड़ी कारपोरेट शक्तियों, मुख्यता अमेरिका के प्रभुत्व के तहत क्रियाशील है।

पूँजी की अवधारणा : कारपोरेट पूँजीवादी सिद्धान्त पूँजी को तकनीक, श्रम, कच्चा माल और निवेश से उत्पन्न उत्पाद को पूँजी परिभाषित करता है परन्तु वास्तव में यह मुद्रा के रूप में पूँजी को पहचानता है क्योंकि यह विकास, तरक्की और सम्पन्नता को पैसे और आर्थिक वृद्धि दर के तौर पर नापता है।

विकास मॉडल : बाजार अगुवाई वाले कारपोरेट विकास मॉडल में वे योजनाएं और परियोजनाएं शामिल हैं जो बड़े पूँजीपतियों के तात्कालिक व दीर्घकालिक हितों की सेवा करती हैं तथा उच्च, मध्यम तथा निम्न मध्यम वर्ग को भी कुछ लाभ पहुँचाती हैं।

पर्यावरणीय समस्याओं और गरीब एवम् वंचित वर्गों से संबंधित मानव विकास के मुद्दों को इसकी कार्यसूची में कोई स्थान नहीं है।

आर्थिकता : कारपोरेट आर्थिकता का मानना है कि सभी आर्थिक गतिविधियों का दिशा निर्देश व निर्णय लेने के सिद्धान्त का प्रतिनिधित्व मुक्त बाजार करता है तथा मुक्त व्यापार और खुली प्रतियोगिता कीमतें तय करने का न्यायिक तरीका है।

राजनीति : कारपोरेट राजनीति व्यक्ति की स्वतंत्रता वाले बाजार-आधारित लोकतंत्र पर टिकी हुई है। इसकी मान्यता है कि मानव समाज में लाभ या धन सर्वोच्च वस्तु हैं तथा पूँजी की व्यवस्था बनाए रखने और चलाए रखने के लिए राजसत्ता को प्राप्त करना और बनाए रखना अत्यन्त आवश्यक है। यह अपनी राजनीतिक व्यवस्था, जो सार्वत्रिक मताधिकार (यानि, एक व्यक्ति एक मत) पर आधारित है, एक बहुदलीय रचनातंत्र के जरिए कायम रखती है, जिसमें प्रत्येक राजनीतिक पार्टी का नजरिया पूँजी के राज को

सुरक्षित रखने व चलाये रखने में निहित होता है। हमारे समय में सम्पूर्ण कारपोरेट पार्टी-रचनातंत्र भ्रष्ट व अपराधिक हो गया है जिसमें प्रत्येक पार्टी के सर्वोच्च नेतागण जैसे-तैसे धन और सत्ता हथियाने की दौड़ में लगे हुए हैं। कारपोरेट राजनीति सामाजिक समता या सामाजिक न्याय के सिद्धान्त को पूर्णतया रद्द करती है।

मूल्य प्रणाली : कारपोरेट मूल्य प्रणाली खेलों, फिल्म प्रदर्शनों, सौन्दर्य प्रतियोगिताओं इत्यादि सभी तरह की गतिविधियों के वाणिज्यकरण को गौरवान्वित करता है। हालांकि शाब्दिक तौर पर यह महिला असमानता को समाप्त करने की दुहाई देते हुए पुरूषों के समान महिला अधिकार प्रदान करने का शौर मचाता है जबकि यह चालाकी से सामाजिक और पारिवारिक जीवन में पारम्परिक पैतृक प्रभुत्व को बढ़ावा देता है और महिलाओं के साथ दूसरे दर्जे के नागरिक जैसा व्यवहार करता है।

सुरक्षा : इसका विश्वास है कि अत्यंत खतरनाक जनसंहारक परमाणु हथियारों से लैस सैन्य-शक्ति के जरिए ही शांति व सुरक्षा कायम रखी जा सकती है।

पहचान : मनुष्य की पहचान को तय करने में यह राष्ट्रीय पहचान को प्रथम स्थान देती है जबकि नस्ली पहचान को द्वितीय स्थान पर रखती है।

लोक प्रेरक पहलू : कारपोरेट सिद्धान्त पैसे को लोक प्रेरक पहलू के तौर पर प्रथम स्थान रखता है तथा द्वितीय स्थान राजसत्ता का है।

नजरिया : कारपोरेट नजरिया चीजों को व्यक्तिवादी दृष्टिकोण से जाँचता और व्याख्या करता है।

कारपोरेट पूँजीवादी सिद्धान्त और इसकी व्यवस्था के पिछले 200 वर्ष से अधिक लम्बे समय के व्यवहार को देखा जाए तो यह निश्चय रूप से कहा जा सकता है कि इसके सकारात्मक पक्ष में सभी वैज्ञानिक और सामाजिक क्षेत्रों में कई योगदान हैं जबकि इसका नकारात्मक पक्ष अत्यन्त खतरनाक चुनौतियों से गठित है, मुख्यतौर पर ये चुनौतियां पर्यावरण और मानव अस्तित्व के क्षेत्र में है।

साम्यवादी (यानि, मार्क्सवादी) सिद्धान्त

समाजशास्त्र (यानि, मानव समाज का अध्ययन) : कारपोरेट समाजशास्त्र की तरह ही साम्यवादी समाजशास्त्र का प्रथम मौलिक सिद्धान्त है कि हमारे इस ग्रह पर तथा कुछ मामलों में ब्रह्मांड में भी मानव जाति एक प्रमुख घटनाक्रम है। यह धारणा मानव समाज और उसकी हर चीज का एक मात्र निर्माता लोगों को मानती है। मनुष्य की भूमिका की ऐसी समझ अपनी सुविधा के लिए अन्य सभी प्राकृतिक घटनाक्रमों का दोहन करने की तरफ अभिमुख करती है। इसमें पर्यावरणीय आयाम की कमी है तथा मनुष्य के सोच और कार्यवाही करने की स्वतंत्रता की इच्छा को नजरअंदाज किया गया है।

यह सिद्धान्त जोर देता है कि मानवजाति की प्रकृति सामाजिक है। सामाजिक होने के निरपेक्ष गुण को यह औद्योगिक सर्वहारा (जो कि इसके अनुसार हमारे युग में मानवजाति के लिए मुक्तिदाता है) में बदल देता है । और अन्त में यह सामाजिक चरित्र के तमाम एकाधिकार को साम्यवादी पार्टी को सौंप देता है, जो अकेली ही इसकी नजर में मानव समाज में सामाजिक परिवर्तन लाने की क्षमता रखती है।

यह सामाजिक विकास को आर्थिकता के तौर पर देखता है जैसा कि कॉरपोरेट समाजशास्त्र भी देखता है और यह सामाजिक विकास का एकमात्र सूचक आर्थिक वृद्धि

या लाभ को दर्शाता है, इस प्रकार मानव समुदाय का एकमात्र आदर्श पैसे को बना देता है। यह समझ कि मनुष्य की उन्नति और सम्पन्नता का बुनियादी सिद्धान्त अधिकतम लाभ कमाना है, प्रत्येक को येन-केन प्रकारेण हर समय और हर जगह धन प्राप्त करने को प्रेरित करता है।

यह विश्वास करता है कि राजनीतिक सत्ता वह बुनियादी औजार है जिससे समाज को बदला जा सकता है तथा राजनीतिक सत्ता केवल मात्र ताकत से प्राप्त की जा सकती हैं क्योंकि सत्ताधारी वर्ग इसके मुताबिक शान्तिपूर्ण तरीके से सत्ता नहीं सौंपते हैं, इसके अनुसार 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' का सिद्धान्त शाश्वत रहने वाला है। परन्तु यह सिद्धान्त इस मूलभूत वैज्ञानिक सत्य को भूल जाता है कि हर चीज एक निश्चित समय और स्थान के सापेक्ष होती है। शक्ति पूजा के शाश्वत सिद्धान्त की समझ अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए तथा सभी राजनीतिक सत्ता मानव अस्तित्व हेतु राजनीतिक पार्टीयों के लिए एकमात्र उद्देश्य और लक्ष्य सब कुछ बन जाता है।

कारपोरेट समाजशास्त्र की तरह ही साधन और साध्य के बीच ऐतिहासिक एकता को साम्यवादी अलग कर देते हैं तथा साध्य को पाने के लिए सभी साधनों को (चाहे वे सही या गलत हों) उचित ठहराते हैं।

दृष्टिकोण : कुछ शीर्षस्थ साम्यवादी नेताओं की अगुवाई में कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल के नेतृत्व द्वारा राज्य-चलित व्यवस्था के जरिए एक विश्व प्रबन्धित होगा।

मूलभूत सिद्धान्त : साम्यवादी पार्टियों की प्रथम प्राथमिकता सभी उत्पादन के साधनों तथा तमाम सामाजिक जिन्दगी के राष्ट्रीयकरण व समाजीकरण की है।

वैश्विक व्यवस्था : वर्तमान कॉरपोरेट वैश्विक व्यवस्था को कम्यूनिस्ट वैश्विक व्यवस्था से स्थानापन्न करना जिसका नेतृत्व कम्युनिस्ट इंटरनेशलन करेगा और जो राष्ट्रीय कम्युनिस्ट पार्टियों के शीर्षस्थ नेताओं द्वारा गठित होगा।

पूँजी की अवधारणा : साम्यवादी सिद्धान्त पूँजी को मजदूरों के अतिरिक्त मूल्य के तौर पर मान्यता देता है यानि, अपने काम के दौरान मजदूर अतिरिक्त मूल्य पैदा करते है जो उनके वेतन से अधिक होता है या दूसरे शब्दों में निश्चित कार्य समय में मजदूर पूँजीपति द्वारा उसके दिये गये वेतन से अधिक उत्पादन करता है जिसे पूँजीपति हड़प लेता है। इस प्रकार यह सिद्धान्त भी पैसे को पूँजी ही मानता है, जो इस तथ्य से स्पष्ट है कि विकास, उन्नति और सम्पन्नता को पैसे या आर्थिक वृद्धि दर के रूप में नापता है।

विकास मॉडल : राज्य-नेतृत्वकारी कम्युनिस्ट विकास मॉडल अपने उद्देश्य के तौर पर उत्पादन के साधनों के राष्ट्रीयकरण या समाजीकरण को मान्यता देता है। यह तमाम विकास का प्राधिकार कम्युनिस्ट पार्टी के राजनीतिज्ञों और अफसरशाहों के हाथों में केन्द्रित करता है। जबकि यह आर्थिक समानता की दुहाई देता है तथापि यह कम्युनिस्ट पार्टी के कैडर के साथ-साथ सरकारी अफसरशाही को तथा श्रमिक अभिजात वर्ग को विशेष आर्थिक अधिकार प्रदान करता है।

आर्थिकता : कम्युनिस्ट अर्थशास्त्र का मानना है कि एक पार्टी द्वारा चलित राज्य ही वह एकमात्र संस्था है जो तमाम आर्थिक गतिविधियों–जिसमें उत्पादन, वितरण तथा कीमतें तय करना आदि शामिल है, के लिए लाभदायक और सही निर्णय कर सकता है।

राजनीति : साम्यवादी राजनीति कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा निर्देशित राज्य-अगुवाई वाले लोकतंत्र पर आधारित है। यह समाज में प्रथम स्थान राजनीतिक सत्ता को देती है जबकि धन को राजनीतिक सत्ता की पूरक शक्ति मानती है। सभी प्रकार की प्रतियोगिता को रद्द करते हुए इसके लिए कम्युनिस्ट सामाजिक व्यवस्था को सहजता से चलाए रखने और आगे बढ़ाने हेतु अकेली कम्युनिस्ट पार्टी का राजसत्ता पर एकाधिकार होना आवश्यक मानती है। एकल पार्टी-आधारित साम्यवादी राज का प्राथमिक सिद्धान्त राजनीतिक एकता का है जिसमें किसी प्रकार के मतभेद को यह साम्यवादी राज अपराध मानता है। एक पार्टी का राज लोगों को अपनी पसन्द के अनुसार मत देने के अधिकार से वंचित करता है।

मूल्य प्रणाली : साम्यवादी व्यवस्था बुनियादी तौर पर साम्यवादी पार्टी एवम् उसके राज्य द्वारा संचालित होती है। लोग आम तौर पर सरकार नियंत्रित प्रेस और मीडिया के जरिए अनुकूलित होते हैं कि सत्ताधारी कम्युनिस्ट पार्टी और उसके नेता सामाजिक सच्चाई के वास्तविक अनुयायी हैं और हर मौके पर वे जनता का समर्थन हासिल करने के अधिकारी हैं।

सुरक्षा : इसका विश्वास है कि अत्यन्त खतरनाक जनसंहारक परमाणु हथियारों से लैस सैन्य शक्ति के जरिए ही शान्ति व सुरक्षा कायम रखी जा सकती है।

पहचान : मनुष्य की पहचान को तय करने में यह राष्ट्रीय पहचान को प्रथम स्थान देती है जबकि नस्ली पहचान को द्वितीय स्थान पर रखती है।

लोक प्रेरक पहलू : साम्यवादी सिद्धान्त राजनीतिक सत्ता को लोक प्रेरक पहलू के तौर पर प्रथम स्थान पर रखता है जबकि पैसे को दूसरे स्थान पर रखता है।

नजरिया : साम्यवादी सिद्धान्त प्रकृति और समाज में अन्तरविरोध या संघर्ष को परिवर्तन और विकास के आम नियम के तौर पर देखता है जबकि एकता के पहलू को सदा के लिए द्वितीय स्थान पर ही सीमित रखता है।

साम्यवादी पार्टी और इसकी व्यवस्था के 70 वर्ष से अधिक के व्यवहार पर दृष्टिपात करें तो कोई भी कह सकता है कि इसका सकारात्मक पक्ष बहुत सी उपायोगी और लाभदायक उपलब्धियों से भरा है जबकि नकारात्मक पक्ष में बहुत सी गंभीर असफलताएँ हैं, जिससे मानव विकास और कल्याण के क्षेत्र में इसके विरोधी कारपोरेट सिद्धान्त और उसकी व्यवस्था ने प्रतियोगिता में इसे मात दे दी।

प्रकृति–मानव केन्द्रित सिद्धान्त

समाजशास्त्र (यानि, मानव समाज का अध्ययन) : प्रकृति-मानव केन्द्रित समाजशास्त्र की मान्यता है कि मनुष्य प्रकृति के वृहद दायरे में अन्य असंख्य घटनाक्रमों जो प्रत्येक अपने गुण और मात्रा लिए हुए हैं, की तरह ही एक खास प्रकार की प्रजाति है। इसका अस्तित्व अन्य प्राकृतिक घटनाक्रमों के साथ अन्तरसंबंधित व अन्तरक्रिया के तहत है। मानव समाज में परिवर्तन और विकास दो तरफा अन्तरक्रिया यानि एक तरफ प्रकृति और मानव समाज के बीच तथा दूसरी तरफ खुद मानव समाज के अन्दर की वजह से है। ये दो अन्तरक्रियाएँ दर्शाती हैं कि समाज के विकास के दो मुख्य कारक प्रकृति और मानवजाति है।

इसका विश्वास है कि मनुष्य जैव-सामाजिक है तथा इसका दो तरफा चरित्र है, एक तरफ जैविक तो दूसरी तरफ सामाजिक। जैविक चरित्र का पहलू मानव समुदाय के व्यक्तिगत अस्तित्व को प्रतिबिम्बित करता है, जो निजी हित से चिन्हित है जबकि सामाजिक पक्ष का पहलू उसके सामाजिक जीवन को दर्शाता है, जिसका चरित्र सामाजिक हित का है। कारपोरेट पूँजीवाद का यह सिद्धान्त कि मनुष्य केवल आत्म केन्द्रित प्राणी है, उसके जैविक पहलू को ढक देता है। पशु जगत का मूल स्वभाव निजी हित का है जबकि क्रमिक विकास से होमोसेपियन के रूप में मनुष्य का उद्भव हुआ तबसे उसकी प्रकृति जैव-सामाजिक है। अर्द्ध सामाजिक चरित्र ही वह एकमात्र गुण है जो मनुष्य प्रजाति और पशुओं के बीच अन्तर को दर्शाता है। यदि मनुष्य सामाजिक पहलू से वंचित हो जाए तो वह अपने नजरिए व शैली में पशु के समान रह जाता है।

यह सामाजिक जीवन को एक प्रक्रिया का दर्जा देता है जो मानवीय प्रकृति के तीन बराबर के महत्वपूर्ण आयामों; जैसे अस्तित्वात्मक (यानि जीवन की सुरक्षा की प्रकृति), मनोवैज्ञानिक (यानि विचार करने और कार्य करने की स्वतंत्रता की उत्कंठा) तथा सामाजिकता (यानि सभी भौतिक और मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं में समानता व न्याय की मजबूत अन्त: प्रेरणा) से गठित है।

इसका सोचना है कि 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' का सिद्धान्त आज के समय में अनुपयोगी (गैर उत्पादक) हो गया है क्यों कि मौजूदा सामाजिक वास्तविकता विभिन्न देशों तथा विभिन्न सामाजिक नस्ली समुदायों के बीच सहयोग की मांग करती है ताकि उनके एक वैश्विक मानवीय इकाई में एकीकृत होने का रास्ता हमवार हो सके।

इसका मानना है कि साधन और साध्य दोनों समान रूप से महत्वपूर्ण है तथा इन दोनों की पवित्रता हर समय और हर जगह कायम रखनी चाहिए।

दृष्टि : हमारे ग्रह की तथा 21 वीं सदी के राष्ट्र-राज्यों की अन्तरनिर्भर सामाजिक वास्तविकता, हमें प्रकृति-मानव केन्द्रित एक विश्व की दृष्टि प्रदान करते हैं। जबकि 1945 का संयुक्त राष्ट्र चार्टर सम्प्रभुता व स्वतंत्र राष्ट्र की एक ऐसी दृष्टि देता है जो विद्यमान वास्तविकता के उलट है।

मूलभूत सिद्धान्त : ऊपर वर्णित दृष्टि के मूलभूत सिद्धान्त में सर्वप्रथम लोगों एवम् पर्यावरण को ग्लोबल क्रियाकलापों के केन्द्र में रखा जाना चाहिए यानि एक तरफ लोगों के हितों की सेवा करना तथा दूसरी तरफ पर्यावरण का उन्नयन और संरक्षण करना।

पर्यावरणीय उन्नयन व संरक्षण के इस मूलभूत सिद्धान्त को सभी प्रकार की प्रक्रियाओं में ध्यान में रखना एवं अमल में लाना होगा। यानि मानव समाज में इसकी सार्वत्रिक प्रासंगिकता रहेगी।

वैश्विक व्यवस्था : प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टि के मूलभूत सिद्धान्त तथा पर्यावरण-मानव प्राथमिकता माँग करती है कि संयुक्त राष्ट्र एक जनवादी आधारित तरीके एवम् संगठन के रूप में पुनरगठित हो। लेकिन संयुक्त राष्ट्र जैसा आज है, इस गुण की कमी रखता है। संयुक्त राष्ट्र की साधारण सभा का ढाँचा व कार्यप्रणाली बिल्कुल लोकतांत्रिक है। लेकिन दूसरी शीर्ष निर्णयकारी इकाई अर्थात सुरक्षा परिषद जो अत्यधिक अनुचित तथा पूर्णरूपेण अप्रजातांत्रिक कायदों-जैसे सैनिक दृष्टि से सबसे ताकतवर देशों के लिए स्थायी सदस्यता व विशेष वीटो-पावर से चरित्रित है।

स्पष्ट तौर से, इस वक्त, इस संगठन के पूर्ण लोकतांत्रिकरण की किसी भी तरह की कोशिश को पाँच सदस्यीय विशेषाधिकार क्लब के भारी विरोध का सामना करना पड़ेगा। इसलिए वर्तमान ग्लोबल शक्ति संतुलन को ध्यान में रखते हुए यह दिखता है कि सुरक्षा परिषद के पूर्ण जनवादीकरण में कुछ और समय लगेगा। थोड़े समय के लिए जब तक चल रहे शक्ति संतुलन में परिवर्तन हो तब तक स्थायी सदस्यता का नियम रखते हुए शक्ति संतुलन में परिवर्तन हो तब तक स्थायी सदस्यता का नियम रखते हुए विशेष वीटो-पावर का नियम हटा लेना चाहिए। सुरक्षा परिषद की बाकी सभी सीटे साधारण सभा द्वारा चुनाव के जरिए भरी जानी चाहिए।

धनवान देशों का अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष व विश्व-बैंक के ऊपर से नियंत्रण कम हो तथा सबसे गरीब देशों को विश्व व्यापार संगठन में अधिक अधिकार दिये जाएं।

पूंजी की अवधारणा : प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त का मानना है कि पूँजी दो तरफा घटनाक्रमों से गठित है, यानि एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन तथा दूसरी तरफ मानव संसाधन। ऐसा इसिलए है क्योंकि पर्यावरणीय एवम् मानव संसाधन ही मानव समुदाय के जीवनदाता हैं तथा इनके बिना मानवजाति के लिए किसी भी चीज का कोई मूल्य नहीं है। इस प्रकार यह पैसे (या वित्त) को पूँजी मानने की धारणा को दृढ़ता से अस्वीकार करती है। आगे, पैसा या वित्त (कारपोरेट या कम्युनिस्ट सिद्धान्तों द्वारा जिसे पूँजी कहा जाता है) भी इन्हीं दो संसाधनों जो मानसिक व शारीरिक श्रम, प्राकृतिक कच्चा माल व तकनिकी औजारों के रूप में एकबद्ध है, की उपज है। स्पष्टतया, वित्त के सभी संघटक-श्रम, तकनीक एवम् कच्चा माल पर्यावरणीय एवम् मानवीय संसाधनों द्वारा उपलब्ध होता हैं। पैसा केवल विनिमय के माध्यम से बाजार के एक औजार का प्रतिनिधित्व करता है, फिर भी यह अतिमहत्वपूर्ण गतिविधि समाज में सर्वोच्चता (यानि पूंजी) के दर्जे के योग्य नहीं है।

विकास मॉडल : जन-पर्यावरण प्राथमिकता का मूलभूत सिद्धान्त (जो मानव विकास के लिए अति आवश्यक है) एक नये प्रकार के विकास मॉडल की माँग करता है, जो पाँच स्तरीय बुनियादी सिद्धान्तों–यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता (आय में 1:5 की भिन्नता के साथ सभी के लिए सामाजिक सुरक्षा का मूलभूत अधिकार सुनिश्चित करके), उत्पादकता, जन-नेतृत्व वाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता पर टिके हैं। ये पांच स्तरीय बुनियादी सिद्धान्त मानव के जैव-सामाजिक चरित्र से मेल खाते है, अर्थात यह मनुष्य के निजी हित को सामाजिक हित से जोड़ते हैं।

जन-पर्यावरण आधारित विकास मॉडल दो रूढ़िवादी राष्ट्रीय विकास मॉडलों, यानि कारपोरेट-नेतृत्व वाले मॉडल और सरकार निर्देशित मॉडल की तुलना में विकास की समायानुकूल धारणा प्रस्तुत करता है। कारपोरेट-नेतृत्व वाला विकास मॉडल केवल लाभ या उत्पादकता (जो केवल धन के स्वामियों का हित सुरक्षित करता है) को एक मात्र लक्ष्य बनाता है जबकि सरकार निर्देशित मॉडल उत्पादन के साधनों का एक मात्र उद्देश्य समाजीकरण (या राष्ट्रीयकरण) को चुनता है (जो शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के हितों की सेवा करता है) ये दोनों पारम्परिक राष्ट्रीय मॉडल मनुष्य के जैव-सामाजिक चरित्र के उलट केवल निजी हित को ही पूरा करते हैं, जैव-सामाजिक चरित्र निजी हित और सामाजिक हित दोनों को जोड़ता है। फिर, वे दोनों पर्यावरण को कोई प्राथमिकता नहीं देते और आर्थिकता या विकास प्रक्रिया में लोकतंत्र और पारदर्शिता के मानदंडों के

पालन को कोई स्थान नहीं देते है, आगे जबकि कारपोरेट मॉडल समता (अथवा सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया अस्वीकार करता हैं वहीं सरकार निर्देशित मॉडल राजनीतिक समानता और उत्पादकता को पूर्णतया नकारता है।

यह मॉडल कारपोरेट नेतृत्व वाले मॉडल और राज्य आधारित मॉडल, दोनों से उनके उद्देश्य, प्रंबध और शैली के मामलों में भिन्नता रखता है।

कारपोरेट मॉडल पूँजी के मालिकों का विकास करता है और राज्य मॉडल इसके शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के साथ मजदूर कुलीनता के हितों को आगे बढ़ाता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आम तौर पर लोगों और पर्यावरण के हितों की तथा खासतौर पर गरीबों और वंचित तबकों की सेवा पर आधारित है।

प्रबन्ध में, कारपोरेट सेक्टर एकाधिकारवादी कारपोरेट प्रबन्ध एवं नियंत्रण का पक्षपोषण करता है और राजकीय क्षेत्र एकाधिकारवादी अफसरशाही प्रबंध एवम् नियंत्रण का समर्थन करता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल में स्थायी कारपोरेटरों की जगह संयुक्त कमेटियों द्वारा चुनी गई पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों द्वारा लोकतांत्रिक प्रबंध एवं नियंत्रण की मान्यता है। जहाँ स्थायी कारपोरेटरों की जगह प्रत्येक चुनी गई संयुक्त कमेटी 2/3 सदस्य साधारण शेयरधारियों द्वारा चुने हुए होंगे तथा 1/3 सदस्य मजदूरों द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि होंगे।

शैली में, अधिनायकवादी और गोपनीय कारपोरेट एवम् राजकीय शैली के उलट प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल लोकतांत्रिक पारदर्शिता और जवाबदेही की शैली पर आधारित है।

वैश्विक शांति और सुरक्षा : प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल को सर्वप्रथम स्थायी और टिकाऊ शांति एवं सुरक्षा की आवश्यकता है। इस प्रकार की शांति की स्थापना के लिए यह जरूरी है कि प्रभुत्व, विशेषाधिकार एवम् विशेष शक्तियों की राजनीति को छोड़ा जाये, परमाणु शस्त्रों पर पूरा नियंत्रण संयुक्त राष्ट्र का करके पूर्ण निशस्त्रीकरण द्वारा टकराव और सैनिक समाधान की नीति को समाप्त किया जाये, राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक असमानताओं को मिटाया जाये, विकसित एवं विकासशील देशों के बीच विकास का फर्क एवं अमीर और गरीब के बीच खाई को हटाया जाये।

राजनीति : प्रकृति-मानव केन्द्रित राजनीति को एक ऐसी राजनीति की आवश्यकता है जो पूर्ण लोकतांत्रिक सिद्धान्तों, गतिविधियेां और ढांचे पर आधारित हो। इस प्रकार की राजनीति संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था में विशेष वीटों शक्तियों के कानून को समाप्त करे और निर्णय लेने में लोगों का अधिकतम् संभव शक्तिकरण को सुनिश्चित करे तथा पार्टी-केन्द्रित शक्ति का आवश्यक मात्रा में कमी करें।

अर्थशास्त्र : प्रकृति-मानव केन्द्रित आर्थिकता एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता की मांग करती है, जिसकी धारणाएं, कानून और नियम पहले बताई गई दो उच्च प्राथमिकताओं (यानि मानव और पर्यावरण) तथा पाँच उसूलों (यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, लोकतंत्र तथा पारदर्शिता) की रोशनी में बनाये जाने की आवश्यकता है। एडम स्मिथ का 'स्वहित' वाला मूलभूत आर्थिक सिद्धान्त और मार्क्स का प्रत्येक चीज का राज्य राष्ट्रीयकरण का बुनियादी आर्थिक नियम, ये दोनों मानव की जैव-सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एकतरफा हैं। लेकिन विडम्बना है कि दोनों मॉडल

विकास, समृद्धि और उन्नति को मौद्रिक वृद्धि के रूप में मापते हैं न कि मानव और पर्यावरणीय विकास के सन्दर्भ में।

मूल्य प्रणाली : प्रकृति-मानव केन्द्रित मूल्य प्रणाली एक ऐसे जीवन के तरीके (या जीवन शैली) की माँग करती है जो बुनियादी मानवीय एवम् पर्यावरणीय मूल्यों को समाहित करे और लोगों में तर्कसंगत मानवतावादी एवम् पर्यावरणीय सोच, व्यवहार एवं संगठन को बढ़ावा दे।

पहचान : पहचान का प्रधान रूप अन्तर्राष्ट्रीयवाद बनता है जिसमें राष्ट्रीयता और नस्ली पहचान उपप्रधान हैं।

लोक प्रेरक पहलू : पर्यावरणीय-मानवतावाद मुख्य लोक प्रेरक पहलू है जिसके साथ कुछ मानवतावादी रुझान शामिल हैं।

अवधारणा : प्रकृति-मानव केन्द्रित अवधारणा वैज्ञानिक वास्तविकतावाद पर आधारित है जो प्रकृति के घटनाक्रम का अध्ययन एवं व्याख्या वैज्ञानिक तथ्यों की रोशनी में तथा सामाजिक घटनाक्रमों का अध्ययन एवं व्याख्या मान्यता प्राप्त सूचना एवम् आंकड़ो के आधार पर करता है। इसकी मान्यता है कि प्रकृति और समाज में परिवर्तन लाने में एकता और संघर्ष दोनों उत्प्रेरक का काम करते हैं, इनमें से प्रत्येक निश्चित हालात में कभी पहले और कभी दूसरे स्थान पर होता है।

प्रकृति–मानव केन्द्रित सिद्धान्त न केवल कारपोरेट एवम् उसके सिद्धान्तों तथा उनसे संबंधित व्यवस्थाओं द्वारा पर्यावरणीय एवं मानक संसाधनों के लिए पैदा की गई चुनौतियों से मुकाबला करने के योग्य बनाता है बल्कि उनका (यानि प्रकृति एवम् मानव संसाधनों का) भविष्य में न्यायपूर्ण उपयोग करने की राह भी दिखाता है।

2.12.2003

* * * * *

विश्व सामाजिक मंच के कार्यक्रम पर टिप्पणी

प्रकृति–मानव केन्द्रित कार्यक्रम की बुनियाद पर न्याय आधारित दुनिया सम्भव

I. हमारे समक्ष मुद्दे

उपरोक्त मंच, इसका कार्यक्रम और कार्यवाही ऐसे वक्त में सामने आई है जबकि मानव समुदाय को इतिहास में बहुत ही गंभीर चुनौतियों का सामना है। चुनौती इतनी गंभीर है कि या तो समय रहते मानव समुदाय इसका हल निकाल ले अथवा इन चुनौतियों का ग्रास बन जाए।

स्पष्टतया, ऐसी गम्भीर परिस्थिति में वर्तमान चुनौतियों से मुकाबला करने के लिए विभिन्न संस्थाओं का उनके प्रस्तावों सहित प्रकट होना एक सामान्य मानवीय गतिविधि ही है। और नये उभरे घटनाक्रमों में क्या सही है और क्या गलत है, इसकी छंटनी करना भी प्रचलित मानव स्वभाव है। फिर भी व्यवहार में उन बहुत से घटनाक्रमों में से कोई भी केवल उन पर ही विचार कर सकता है जिनमे कुछ नवीनता और वास्तविकता हो या जो बहुत से लोगों का ध्यान आकर्षित करते हो।

इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि सन् 2001 में पोर्टो ऐलेग्रे (ब्राजील) में जन्मे विश्व सामाजिक मंच ने दुनिया के लोगों के काफी बड़े हिस्से को आकर्षित किया है, इसलिए हमने इस पर अपना मत व्यक्त करने का निर्णय लिया। विश्व सामाजिक मंच में विभिन्न तरह के बहुत से लोगों की भागीदारी इसके प्रथम तीन सम्मेलनों में उपस्थिति से देखी जा सकती है।

	वि.सा.मं. प्रथम	वि.सा.मं. द्वितीय	वि.सा.मं. तृतीय
कहाँ	पोर्टो ऐलेग्रे, ब्राजील	पोर्टो ऐलेग्रे, ब्राजील	पोर्टो ऐलेग्रे, ब्राजील
कब	जनवरी 2001	जन./फरवरी 2002	जनवरी 2003
अधिकृत पत्रकार	11870	3054	4094
प्रतिनिधि	14700	12274	20763
भागीदार	20000	50000	100000
देश	17	123	130
कार्यशाला	420	622	1286
युवा शिविर	2000	15000	25000

विश्व सामाजिक मंच के विस्तृत दायरे की कुछ लोग इस प्रकार व्याख्या करते हैं कि यह मंच शासक समूहों की उपज है। वे यह आरोप लगाते हैं कि इस मंच को धन और सहायता वर्तमान शासक शक्तियों से मिलती है।

हमारे लिए, हमारी प्राथमिक दिलचस्पी मानव संसार को दरपेश मौजूदा समस्याओं के सन्दर्भ में इस मंच के कार्यक्रम और गतिविधियों की प्रासंगिकता और औचित्य जानने की है।

II. विश्व के वर्तमान मुद्दे तथा विश्व सामाजिक मंच का दृष्टिकोण

आज जैसी मरणान्तक और परेशान करने वाली समस्याओं का सामना मानव समुदाय को इतिहास में पहले कभी नहीं रहा है और आज मनुष्य जितना मानसिक रूप से व्याकुल है उतना पहले कभी नहीं रहा है। अपने भौतिक जगत के क्षेत्र में भी भविष्य के बारे में मनुष्य जितनी इन दिनों अनिश्चितता महसूस कर रहा है उतनी अनिश्चितता उसने पहले कभी महसूस नहीं की है।

यह सही है कि इतिहास में मानव समाज को विभिन्न प्रकार के अनगिनत संकटों का सामना रहा है, परन्तु वर्तमान संकट अपनी प्रकृति, गति और मात्रा में बेमिसाल है। बीते समय के संकटों की पहचान रही है कि वे कष्ट कभी एक क्षेत्र में रहे तो कभी दूसरे क्षेत्र में। सामान्यतया, वे संकट किसी समय तो पर्यावरण क्षेत्र में आये और कभी मानवीय क्षेत्र में। उन संकटों ने हमारे पर्यावरण के कभी किसी एक तत्व को या कभी दूसरे तत्व को प्रभावित किया है, परन्तु हमारा प्राकृतिक पर्यावरण पहले कभी भी चहुंमुखी संकट से नहीं घिरा है। उनका (यानि, प्राकृतिक पर्यावरण संकट का) जन्म अधिकांश प्राकृतिक कारणों से हुआ है और यदा-कदा ही यह संकट मानवीय गतिविधियों से पैदा हुआ है।

मानवीय समस्याएं मुख्यत: विशेष मुद्दों तक सीमित रही हैं और ज्यादातर खास समुदायों, भागों या ग्रुपों तक सीमित रही हैं तथा यदा-कदा ही इन समस्याओं ने सम्पूर्ण मानवता को प्रभावित किया है। ये समस्याएँ कभी तो पर्यावरणीय पहलुओं (यानि, प्राकृतिक विनाश) से उत्पन्न होती हैं और कभी मनुष्य की गलत गतिविधियों से पैदा हुई है।

परन्तु मौजूदा संकट इतना गंभीर है कि मानव इतिहास में इसका कोई सानी नहीं है। इसकी गंभीर प्रकृति और इसका विराट विस्तार तथा विश्व सामाजिक मंच का इसके प्रति दृष्टिकोण निम्नलिखित तथ्यों से देखा जा सकता है–

(क) पर्यावरणीय गिरावट

आम तौर पर पर्यावरणीय गिरावट के सम्बन्ध में जाने-माने विशेषज्ञों की एक के बाद एक रिपोर्टें यह चेतावनी दे रही हैं कि हमारे प्राकृतिक पर्यावरण की स्थिति दिन-ब-दिन खराब होती जा रही है, यदि समय रहते उचित कदम नहीं उठाये गए तो सम्पूर्ण जैव-जीवन (मानव प्रजाति सहित) हमारे ग्रह से समाप्त हो जाएगा।

सन् 1972 के स्टॉकहोम पर्यावरण मानव सम्मेलन (जिसमें 113 देशों ने भाग लिया) ने एक जोरदार आवाज उठाई कि अगर मानव ने अपनी गैर टिकाऊ जीवन पद्धति में सुधार नहीं किया तो हमें इस ग्रह पर पर्यावरणीय क्षति और असहनीय मानवीय कष्ट झेलने पड़ेंगे। इसी तरह की चेतावनी 1992 में रियो पृथ्वी सम्मेलन में चेतावनी भरा बया प्रेषित किया और जोर दिया कि यदि मानव समुदाय ने आने वाले थोड़े से समय में ग्रीन हाउस गैसों का उत्पादन नहीं रोका तो 21वीं सदी के अन्त तक वैश्विक उष्माकरण की प्रक्रिया पृथ्वी पर जैव-जीवन के अस्तित्व को नहीं रहने देगी। उसके बाद सन् 2002 में संयुक्त राष्ट्र के डब्ल्यू डब्ल्यू एफ के एक अध्ययन में चेतावनी दी गई है कि यदि मानव समुदाय (विशेष तौर पर धनी राष्ट्र व धनी लोग) अपने असंयमित और बर्बाद करने वाली जीवन शैली को नहीं बदलते तो सन् 2050 तक हमारा ग्रह पृथ्वी मानवीय जीवन के लिए उपयुक्त स्थान नहीं रहेगा। हालिया, विश्व के जाने-माने वैज्ञानिकों के रोम सम्मेलन-2003 ने सावधान किया है कि अगर पर्यावरणीय गिरावट की बदतर प्रक्रिया को थोड़े ही समय में उल्ट नहीं दिया गया तो पृथ्वी निकट भविष्य में ही जैव-जीवन के लिए पूरी तरह अनुपयुक्त बन जायेगी। जनवरी 2004 की विज्ञान मैगजीन 'नेचर' ने अपने एक लेख में कहा है कि 'अगले 50 सालों में होने वाले मौसम परिवर्तन से जमीन के एक चौथाई जीवन और पौधे समाप्त हो सकते हैं।' अन्य वैज्ञानिक विशेषज्ञ जो अपने आपको समय-काल की गणना में नहीं बांधते हैं वे भी स्वीकार करते हैं कि पर्यावरणीय स्थिति अत्यधिक चेतावनी भरी है।

विभिन्न प्रकार के पर्यावरणीय तत्वों (यानि, हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता आदि) के प्रश्न को लेते हैं तो इस तथ्य को रेखांकित करना आवश्यक है कि यदि इनमें से एक अकेला तत्व भी नष्ट हो जाए तो जैव-जीवन के लिए सम्पूर्ण प्राकृतिक पर्यावरण अवहनीय एवं अनुपयुक्त हो जाएगा। परन्तु इस क्षण पर्यावरणीय तत्वों का सम्पूर्ण परिवार संकट में है। ग्रीन हाउस गैसों का लगातार बढ़ता आयतन, विश्व स्तर पर जल स्रोतों में कमी, बड़े पैमाने पर जंगल कटाई, 60 प्रतिशत खेती योग्य भूमि का क्षय होना, बहुत सी जैव प्रजातियों का समाप्त होना तथा अन्य प्राकृतिक उत्पादों के गैर टिकाऊ उपयोग ने मानव जाति की नस्ल के साथ-साथ अन्य जैव घटनाक्रमों के अस्तित्व का संकट पैदा कर दिया है।

(ख) पर्यावरणीय गिरावट के सम्बन्ध में विश्व सामाजिक मंच का दृष्टिकोण

विश्व सामाजिक मंच के समस्त दस्तावेजों में वर्णित दृष्टिकोण से स्पष्ट होता है कि प्राकृतिक पर्यावरण की जोखिम भरी स्थिति के मुद्दे को यह मंच कोई महत्व नहीं देता है। प्राकृतिक पर्यावरणीय खतरे को इसके कार्यक्रम का केन्द्रीय मुद्दा बनाना तो कहीं रहा

बल्कि इसने तो अपने पिछले चार सम्मेलनों (एशियन सामाजिक मंच, हैदराबाद सम्मेलन सहित) में तीन दर्जन केन्द्रित मुद्दों के विचार-विमर्श में इस मुद्दे (प्राकृतिक-पर्यावरणीय खतरे) को शामिल करना भी मुनासिब नहीं समझा है। इसके बड़ी संख्या में मूल विषयों तथा उप विषयों में भी इस विषय को नजरअन्दाज किया गया है और कहीं-कहीं एक या दूसरे पर्यावरणीय पहलू का उल्लेख है परन्तु वह भी निजीकरण या व्यापार के सन्दर्भ में ही उल्लेखित है। विश्व सामाजिक मंच का इस तरह का व्यवहार इसके उद्देश्य–'पृथ्वी और मानव जाति के बीच लाभदायक सम्बन्ध स्थापित करने'–से क्या विरोधाभासी नहीं है!

(ग) मानवीय कष्टों के बिगड़ते हालात

मौजूदा समस्याओं के मानवीय पक्ष पर नजर डालें तो आर्थिक वृद्धि से जुड़ी विश्व कॉरपोरेट समर्थक संस्थाएँ यानि, संयुक्त राष्ट्र संघ, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन आदि भी अब यह जोर देने लगी हैं कि वर्तमान कॉरपोरेट विकास मॉडल–जो असमानता, गरीबी, बेरोजगारी, सामाजिक अन्याय जैसे असह्य कष्टों से चरित्रित है–गैर टिकाऊ हो गया है। यह निम्नलिखित तथ्यों से देखा जा सकता है।

सन् 2003 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार गरीब और अमीर तथा उच्च व निम्न के बीच असमानता का रुझान निरन्तर बढ़ रहा है और कहीं भी आकार में या किसी बिन्दु पर कम होने का कोई चिह्न दिखाई नहीं देता। संयुक्त राष्ट्र 2002 की मानव विकास रिपोर्ट जाहिर करती है कि दुनिया के अत्यधिक धनी 1 प्रतिशत की आय दुनिया के निर्धनतम 75 प्रतिशत से अधिक है। सन् 2001 यू एन मानव विकास रिपोर्ट में लिखा है कि विकासशील देशों के 4.6 बिलियन (460 करोड़) लोगों में से 850 मिलियन (85 करोड़) से अधिक लोग अनपढ़ हैं, 1 बिलियन (100 करोड़) के आसपास शुद्ध पीने के पानी से वंचित हैं और 2.4 बिलियन (240 करोड़) लोगों को बुनियादी शौच सुविधाएँ हासिल नहीं है। करीब 325 मिलियन (32.5 करोड़) लड़के व लड़कियाँ स्कूल नहीं जाते हैं और पांच साल से कम उम्र के 11 मिलियन (1 करोड़ 10 लाख) बच्चे हर साल संक्रामक रोग से मर जाते हैं, यह संख्या प्रतिदिन 30 हजार से अधिक बैठती है। 1.2 बिलियन (120 करोड़) लोग प्रतिदिन 1 डालर से कम पर गुजारा करते हैं (1990 पी पी पी यू एस डालर) और 2.8 बिलियन (280 करोड़) लोग प्रतिदिन 2 डालर से कम पर गुजारा करते हैं। यह वंचितपन विकासशील देशों तक सीमित नहीं है। ओ ई सी डी (आर्थिक सहयोग और विकास संगठन) देशों में 130 मिलियन (13 करोड़) लोग गरीब हैं, 34 मिलियन (3 करोड़ 40 लाख) बेरोजगार हैं तथा प्रौढ़ों में औसतन अशिक्षा की दर 15 प्रतिशत है। यह रिपोर्ट आगे कहती है कि अमेरिका में सबसे धनी 10 प्रतिशत लोगों (करीब 2.5 करोड़) की संयुक्त आय दुनिया के 43 प्रतिशत गरीब लोगों (करीब 200 करोड़) की आय के बराबर थी। 1999 की मानव विकास रिपोर्ट कहती है कि 1990 के दशक के अन्त में अधिकतम आय वाले देशों में रहने वाली विश्व की 20 प्रतिशत आबादी विश्व जी डी पी के 86 प्रतिशत की मालिक है, जबकि विश्व की सबसे निचली (गरीब) 20 प्रतिशत आबादी केवल मात्र 1 प्रतिशत आय की मालिक है, इसी तरह विश्व निर्यात बाजार के 82 प्रतिशत पर 20 प्रतिशत अमीर आबादी का कब्जा है, जबकि निचली 20 प्रतिशत आबादी के नियंत्रण में 1 प्रतिशत हिस्सा है, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश में उपर्युक्त अमीर आबादी का हिस्सा 68 प्रतिशत के मुकाबले गरीब आबादी का हिस्सा 1 प्रतिशत है और आज संचार के आधारभूत साधन विश्व की टेलीफोन लाइन के 74 प्रतिशत हिस्से का उपयोग उपर्युक्त अमीर आबादी

करती है, जबकि निचली 20 प्रतिशत आबादी मात्र 1.5 प्रतिशत लाइन का उपयोग करती है। 1996 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट कहती है कि विश्व के अधिकतम धनी केवल 3 लोगों की कुल सम्पत्ति अल्पतम विकासशील 48 देशों की संयुक्त जी पी डी (सम्पत्ति) के बराबर है। विश्व के अधिकतम धनी 225 लोगों की संयुक्त सम्पत्ति 1 ट्रिलियन (1000 अरब) डालर है जो 47 प्रतिशत गरीब लोगों (जिनकी संख्या 250 करोड़ बनती है) की कुल आय के बराबर है। विश्व के अधिकतम धनी 32 लोगों की सम्पत्ति दक्षिण एशिया (भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान और मालदीव) तथा ईरान व अफगानिस्तान की जी डी पी (सकल घरेलु उत्पाद) से अधिक है।

एक जाने-माने आर्थिक इतिहासकार एंगुस मैडिसन का कथन है कि सन् 1820 में सबसे अधिक धनी देश और निर्धनतम देश के बीच अन्तर 3 और 1 का था, जो सन् 1913 में 11 और 1 हो गया, 1950 में 35 और 1 हुआ, 1973 में 44 और 1 तक बढ़ा तथा 1992 में 72 और 1 हो गया। इसने सन् 1997 में मोटे तौर पर 74 और 1 का मर्मभेदी आकार ग्रहण कर लिया है। आज दुनिया में अधिकतम धनवान और निर्धनतम व्यक्ति के बीच विद्यमान विषमता धरती हिला देने वाली है। एक तरफ जहाँ हमारी दुनिया के सबसे अधिक धनवान अमेरिकी बिल गेट्स कुल 80 अरब डालर की सम्पत्ति का मालिक है और भारत का आजीम प्रेमजी 6 अरब डालर के संसाधन रखता है, वहीं दूसरी ओर एक भूखा इंसान जिसकी जेब खाली है और रोटी के एक टुकड़े को प्राप्त करने वाले हर तरह के स्रोत से वंचित है और किसी विकल्प के बगैर भीख मांगता है, वह कुछ समय के लिए भिक्षा से जीवन चलाता है और उसके बाद अगली दुनिया के लिए प्रस्थान कर जाता है। ऐसी मौतों पर चिकित्सा विशेषज्ञ इन्हें पेट की खराबी या अन्य किसी शारीरिक बिमारी का परिणाम घोषित कर देते हैं। सार संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि उपर्युक्त वर्णित अमानवीय विपदाएँ विद्यमान कॉरपोरेट पूँजीवादी समाज के मुख्य पहलू हैं।

जनवरी 2004 की वाशिंगटन आधारित वर्ल्ड वाच की रिपोर्ट में कहा गया है कि विश्व के धनवान और उच्च मध्यम वर्ग (जो विश्व की आबादी का लगभग 1 चौथाई भाग है) की फिजूलखर्ची और गैर टिकाऊ जीवन पद्धति मानव समुदाय को एक खतरनाक संकट में धकेल रही है।

वर्तमान समाज का अगला चिन्ताजनक पहलू है कि यह आज पक्षपातपूर्ण एवं अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था है जहां पैसा, ताकत और विशेषाधिकार–जो वैश्विक और राष्ट्रीय दोनों स्तर पर सत्य और न्याय के स्वीकृत मापदण्ड बने हुए हैं–के जरिए शक्तिशाली कमजोर पर हावी है तथा अमीर गरीब की पीठ पर सवार है।

विश्व स्तर पर, मसलन, संयुक्त राष्ट्र संघ और उसकी संस्थाएँ 1945 के चार्टर से नियंत्रित है जो दुनिया की पाँच सबसे अधिक सैनिक शक्तियों–यानि, अमेरिका, चीन, ब्रिटेन, फ्रांस और रूस–को चुनी हुई सुरक्षा परिषद में वीटो का अधिकार और स्थायी सदस्यता प्रदान करता है, स्पष्टतया ऐसी विशेषाधिकार आधारित व्यवस्था पूर्णतया भेदभावपूर्ण और अन्यायपूर्ण है क्योंकि बचे हुए 180 यू एन सदस्यों की भूमिका को घटाकर यह शून्य बना देती है। नैतिक और कानूनी तौर पर यह राजनीतिक समानता के विश्व स्वीकार्य सिद्धान्त, एक इकाई का एक वोट का सार्वत्रिक मानदण्ड और प्रत्येक राष्ट्रीय राज्य के मानवाधिकार को नजरअन्दाज करता है। जब संयुक्त राष्ट्र संघ मानवाधिकारों के उल्लंघन के आधार पर विभिन्न राष्ट्रीय राज्यों (देशों) के मामलों में दखलन्दाजी करता है

तो इसे ऐसा क्यों नहीं करना चाहिए कि नये युग के लिए अपने आपको प्रासंगिक बनाने हेतु यह अपना तर्कसंगत आधार पर पुनर्गठन करे।

यही अतर्कसंगत और अलोकतांत्रिक शैली अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं–अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा विश्व बैंक में चल रही है–इन संस्थाओं में प्रत्येक सदस्य की मताधिकार की ताकत आर्थिक शक्ति निर्धारित करती है। इस प्रकार निश्चित तौर पर ये संस्थाएँ वित्तीय विकसित देशों, खासकर अमेरिका–जो कुल मताधिकार की ताकत का 26 प्रतिशत पर नियंत्रण रखता है–द्वारा संचालित होती है।

नव सृजित अन्यायपूर्ण सीटीबीटी व्यवस्था वास्तव में पांच बड़ी परमाणु शक्तियों को परमाणु हथियारों का एकाधिकार प्रदान करती है–इस प्रकार यह उनको दुनिया के अजेय शासक बनाती है।

कुछ विकसित देश जिनकी आबादी मुश्किल से दुनिया की आबादी की 15 प्रतिशत है आज दुनिया के भौतिक और वित्तीय स्रोतों के 80 प्रतिशत को नियंत्रित करते हैं जबकि 130 विकासशील देशों में निवास करने वाले दुनिया के 85 प्रतिशत लोगों के लिए 20 प्रतिशत से भी कम स्रोतों को छोड़ा है।

दुनिया की आधी आबादी जो मानव समुदाय के महिला भाग से बनी है, दुनियाभर में बुरे बर्ताव और अभद्र व्यवहार की लगातार शिकार हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर प्रत्येक देश की स्थिति चल रही विश्व व्यवस्था से भिन्न नहीं है। 190 से अधिक देशों में उनकी भौतिक स्थिति, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तथा सामाजिक-आर्थिक हालात के कारण भिन्नताएँ होने के बावजूद उनकी सामाजिक जिन्दगी की गुणवत्ता में, विशेष तौर पर विकासशील देशों के बीच भारी समानता है। मसलन, प्राय: सभी देशों (विकसित या विकासशील) की राजनीतिक प्रक्रिया में धन शक्ति का प्रभुत्व है, विकासशील देशों के मामले में भुजबल एवं आदिम मानदण्ड भी साथ जुड़े हुए हैं। आम तौर पर आर्थिक प्रक्रिया गलाकाट प्रतियोगिता, सट्टेबाजी और काले धन के जरिए संचालित है। बेईमानी भरे मानदण्ड हर कहीं सामान्य व्यवहार बने हुए हैं।

लगभग सभी देशों में बहुमत के बनिस्पत कुछ ही लोगों को विशेषाधिकार प्राप्त हैं। हर कहीं सांसदों को कानून के तहत विशेष संसदीय विशेषाधिकार के जरिए आम कानूनों से छूट मिली हुई है। विकासशील देशों में शासकीय धड़ा प्राय: कानून की खुल्लम-खुल्ला अवहेलना करता है। दुनिया में कहीं भी न्यायपालिका लोगों के प्रति जवाबदेह नहीं है। इसके बजाए न्यायालय की अवमानना का कानून सर्वत्र मौजूद है जो हर आलोचक को चुप करने की शक्ति न्यापालिका को प्रदान करता है। सरकारी गुप्तता का कानून सभी देशों में मौजूद है जो अफसरशाही के सभी सौदों को छुपाने का अधिकार प्रदान करता है और इस प्रकार अफसरशाही लोगों के सिर पर सवार है। दुनिया भर में कानून लागू करने वाली संस्थाएँ अधिक विस्तृत अधिकारों का उपभोग करती है। तीसरी दुनिया में वे ऐसा व्यवहार करते हैं कि जैसे वे ही कानून हैं। सभी जगह कानून अमीरों और कानून तोड़ने वालों का पक्ष लेता है और गरीबों व वंचितों के विरुद्ध पक्षपातपूर्ण व्यवहार करता है।

विद्यमान व्यवस्था का तीसरा चिन्ताजनक पहलू है कि आज अमेरिका सम्पूर्ण विश्व पर अपना प्रभुत्वकारी नियंत्रण स्थापित करने की कोशिश कर रहा है, क्योंकि अमेरिका के नेतृत्व वाला विश्व कॉरपोरेट क्षेत्र गम्भीर कठिनाई में है। कॉरपोरेट लाभ गिर रहा है। बहुत-सी चोटी की कम्पनियां विशेष तौर पर अमेरिका में बड़ी-बड़ी धोखाधड़ी

और घोटालों में लिप्त पाई गई हैं। कॉरपोरेट क्षेत्र का यह दावा कि वे धन निर्माण, सम्पन्नता एवं प्रगति वाहक सामाजिक संस्था हैं, इस झूठ का पर्दाफाश हो चुका है। कॉरपोरेट आधारित विश्व विकास प्रक्रिया को अद्वितीय संकट से सामना है, जिसने मानवता के सामने एक गम्भीर चुनौती पैदा कर दी है। अमीरी-गरीबी का भेद दिन दुना-रात चौगुना बढ़ रहा है। गरीबी और बेरोजगारी तेजी से फैल रही है। दुनिया के लोगों की विपरीत प्रतिक्रिया का आभास करते हुए अमेरिका के राष्ट्रपति बुश ने दुनिया के लोगों को आतंकित करने के लिए अपने जाने-माने दुस्साहिक स्व-अधिकृत युद्ध को पहले अफगानिस्तान और बाद में इराक पर थोप दिया। यद्यपि, यह खतरनाक गतिविधि अफगानिस्तान और विशेष तौर पर इराकी लोगों के कठोर प्रतिरोध के कारण बीच में ही लटक गई है। बुश की इस खतरनाक कार्यवाही को अन्य क्षेत्रीय कॉरपोरेट महाशक्तियों (जैसे, फ्रांस, जर्मनी, चीन, रूस इत्यादि) ने भी समर्थन नहीं दिया और इनमें से कुछ (मसलन, फ्रांस, जर्मनी) ने इसका विरोध भी किया।

वर्तमान समाज को परेशान करने वाला चौथा पहलू दुनिया के लोगों में प्रमुख रूढ़िवादी रुझानों द्वारा विभिन्न वैचारिक भ्रांतियां पैदा करने में निहित है। उनमें से मुख्य कॉरपोरेट पूंजीवादी सिद्धात है जो खुले बाजार आर्थिकता को वृद्धि का इंजन होना पेश करती है तथा पैसा कमाने को मानव की सम्पूर्ण जिन्दगी का एकमात्र उद्देश्य करार देती है। अगली धारणा साम्यवादी या मार्क्सवादी है जो राज्य संचालित आर्थिकता को विकास की चालक शक्ति के तौर पर पेश करती है तथा राज्य शक्ति हासिल करने को मनुष्य का अन्तिम लक्ष्य होना करार देती है। अन्य सभी रूढ़िवादी किस्में मसलन, साम्प्रदायिक, नस्ली, जातिवादी, पितृसत्तात्मक इत्यादि लोगों पर अपना वर्चस्व कायम रखने के लिए हालांकि अपने-अपने प्रतिक्रियावादी विचारों का उपदेश देती हैं परन्तु वास्तव में वे या तो कॉरपोरेट पूंजीवादी रूढ़िवादी पक्ष का समर्थन करती है अथवा मार्क्सवादी पक्ष का समर्थन करती है।

वर्तमान समाज के लिए पांचवां कष्टकारक पहलू रोजाना बढ़ती हिंसा, अपराध, भ्रष्टाचार तथा महिला, बच्चों, आदिवासियों, असंगठित मजदूरों, मूल निवासियों, लिंग, वंश व कार्य के आधार पर भेदभाव, नस्ली, धार्मिक, भाषाई अल्पसंख्यों, इत्यादि को वंचित करने में निहित है जो आम तौर पर एक वैश्विक घटनाक्रम है जिसे प्रत्येक राष्ट्र और समुदाय में देखा जा सकता है।

(घ) बदत्तर होती मानवीय विपदाओं के प्रति विश्व सामाजिक मंच का दृष्टिकोण

विश्व सामाजिक मंच के चार सम्मेलनों (भारत में हैदराबाद सम्मेलन सहित) में विचार किये गये मुख्य केन्द्रित विषयों तथा हो रहे मुम्बई सम्मेलन में लिये गये केन्द्रित विषयों से जाहिर होता है कि इसने उपरोक्त बदत्तर होती मानवीय विपदाओं को कोई प्राथमिकता नहीं दी है। यह इन तथ्यों को नजरअन्दाज करता है कि ऐसे सामाजिक वातावरण में जहाँ सामाजिक जिन्दगी में असमानता, गरीबी, बेरोजगारी, सामाजिक अन्याय हावी हैं; पांच वीटो अधिकार प्राप्त सैनिक शक्तियों तथा दुनिया के संसाधनों पर धनी देशों और व्यक्तियों के नियंत्रण वाली अन्यायपूर्ण व्यवस्था (अन्तर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय दोनों स्तर पर); एक महाशक्ति द्वारा ताकत के बल पर थोपा हुआ सैन्य वर्चस्व; एक बहु रूढ़िवादी नजरिए वाला ढांचा; तथा हिंसा, अपराध व भ्रष्टाचार निर्देशित राजनीति,

आर्थिकता व संस्कृति मानव समुदाय को वैसी ही चुनौती पेश कर रहे हैं जैसी खतरनाक चुनौती प्राकृतिक पर्यावरण के क्षीण होने ने प्रस्तुत की है।

III. विश्व सामाजिक मंच की अप्रासंगिक धारणा

उपरोक्त विवरण दो बिन्दुओं पर जोर देता है, एक हमारे ग्रह का प्राकृतिक पर्यावरण प्रदूषित हो गया है तथा दूसरा सामाजिक वातावरण सामाजिक तौर पर अनुपयुक्त हो गया है। दोनों चुनौतियां इतनी अधिक खतरनाक हैं कि वे मानव जाति के अस्तित्व को खतरा पैदा कर रही हैं। पर्यावरणीय मूल्यांकन वैज्ञानिक समुदाय द्वारा दी गई रिपोर्टों जिनका मुश्किल से ही कोई अपवाद है तथा साथ ही साथ पर्यावरण के उल्टे प्रभाव के बारे में लोगों के व्यवहारिक अनुभव पर आधारित है। सामाजिक मूल्यांकन विश्व के राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक नेतृत्वकारी विशेषज्ञों तथा लोगों के इस अनुभव पर आधारित है कि मानव जीवन अत्यधिक व्यक्तिवादी हो गया है। इन दो अंतरसम्बन्धित चुनौतियों का उचित जवाब देना दुनिया के लोगों की आवश्यकता है, ऐसा लोगों को अब लगने लगा है। लोगों की इस प्रकार की भावना मांग करती है कि प्रत्येक विचार को जांचा जाना चाहिए कि यह विचार इन दो चुनौतियों का सामना करने के लिए कोई समुचित राह दिखाता है या नहीं।

विश्व सामाजिक मंच की विषय वस्तु पर हम जाते हैं तो यह प्रकट होता है कि उपर्युक्त वर्णनानुसार इस मंच की कोई धारणा नहीं है। इस मंच के मैग्ना कार्टा (यानि इसके सिद्धान्तों का घोषणापत्र) से जो थोड़ा बहुत सार निकाला जा सकता है वह संक्षेप में निम्न है–

पहले सिद्धान्त के कथनानुसार विश्व सामाजिक मंच नव-उदारवाद एवं पूँजी व साम्राज्यवाद के किसी भी किस्म के दुनिया पर प्रभुत्व के खिलाफ है और मानव जाति के अन्दर तथा मानव जाति और पृथ्वी के बीच में लाभदायक सम्बन्ध बनाने की दिशा में सम्पूर्ण ग्रह को एक समाज बनाने के लिए प्रतिबद्ध है।

हमारे दृष्टिकोण से उपर्युक्त समझ वर्तमान वास्तविकता के बारे में एक भ्रमित धारणा है। प्रथम, आज की दुनिया में साम्राज्यवाद की धारणा पुरानी हो चुकी है। पूंजीवादी समाज के उपनिवेशी व अर्द्ध-उपनिवेशी चरण में साम्राज्यवाद का अस्तित्व था परन्तु 1945 के बाद के काल में पूंजीवाद कॉरपोरेट पूंजीवाद के चरण में विकसित हो गया तो साम्राज्यवाद ने अपनी प्रासंगिकता खो दी है। कॉरपोरेट पूंजी से पहले की पूंजी राष्ट्र आधारित थी और वह अपनी राज्य शक्ति को दूसरे देशों में उपनिवेश या अर्द्ध-उपनिवेश के तौर पर नियंत्रित करने के लिए इस्तमोल करती थी। परन्तु अब कॉरपोरेट पूंजी बहुराष्ट्रीय शक्ति के रूप में संचालित है, जिसका अस्तित्व बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के रूप में है तथा एक राष्ट्र के बनिस्पत जिसका साझा हित कई राष्ट्र राज्यों के साथ जुड़ा हुआ है।

इस मंच की अन्य अवधारणा नव-उदारवाद की तरफ आते हैं तो केवल यह इंगित करती है कि पूंजीवाद की स्वतंत्र बाजार आर्थिकता इसके क्षेत्रीय या राष्ट्रीय दायरे की बनिस्पत अब वैश्विक दायरे में विकसित हो गई है जबकि सार रूप में कोई परिवर्तन नहीं है।

पूंजी की अन्य धारणाओं की तरह विश्व सामाजिक मंच की पूंजी की धारणा भी उतनी ही भ्रामक है। पूंजी को पैसा एवं वित्त के तौर पर परिभाषित करना बुनियादी तौर पर गलत है। वास्तव में पूंजी मानव एवं पर्यावरणीय संसाधनों की वृद्धि तथा उनके और आगे

विकास का प्रतिनिधित्व करती है (विस्तृत जानकारी के लिए नेचर ह्यूमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट के अन्य प्रकाशनों का अध्ययन करें)।

इस मंच का लाभदायक सम्बन्धों का विचार भी एक अस्पष्ट धारणा है जो यह स्पष्ट नहीं करती कि लाभदायक धारणा का अर्थ क्या है तथा यह भी उद्घाटित नहीं करती कि मानव जाति के अन्दर एवं मानव जाति व पृथ्वी के बीच में सम्बन्ध किन मूल सिद्धान्तों पर आधारित है। मनुष्य की अस्पष्टता प्राय: अपनी सुविधानुसार अवसर को उपयोग करने की मंशा को इंगित करती है।

दूसरा सिद्धान्त 'अन्य दुनिया संभव है' के नारे के इर्द-गिर्द विकल्प पाने और बनाने की स्थायी प्रक्रिया के तौर पर विश्व सामाजिक मंच को पेश करता है। यह नारा अव्यवहारिक है जिसका किसी भी वास्तविकता में कोई आधार नहीं है। ठोस वास्तविकताओं के आधार पर विकल्प पाया और बनाया जाता है न कि अव्यवहारिक (अमूर्त) नारों के आधार पर।

आगे, 'अन्य दुनिया संभव है' का वैकल्पिक नारा दोषपूर्ण है। पुरानी दुनिया लोगों द्वारा नई में पुनर्गठित की जाती है। यह कभी भी जड़ से नहीं उखाड़ी जाती है। नया हमेशा पुरानी प्रासंगिकताओं तथा उभरती नवीनताओं से गठित होता है। नये का उभरना और पुराने का समाप्त होना पल दर पल होता है।

तीसरा सिद्धान्त अन्तर्राष्ट्रीय आयाम को विश्व सामाजिक मंच का प्राथमिक आयाम नहीं बताता बल्कि एक आयाम होना करार देता है। इसका अर्थ है कि यह वास्तविक हालात से अलग हट कर किसी भी स्थिति में किसी भी दृष्टिकोण को अपना बुनियादी दृष्टिकोण बना सकता है।

चौथा सिद्धान्त एक नये भ्रम से परिचित करवाता है कि साम्राज्यवाद व नव-उदारवाद की बनिस्पत विश्व सामाजिक मंच वैश्वीकरण का विरोधी है। जबकि वह यह स्पष्ट नहीं करता कि क्या साम्राज्यवाद, नव-उदारवाद, वैश्वीकरण के पर्याय (समान अर्थ वाले) हैं और क्या इसके उलट भी ऐसा ही है। वैश्वीकरण किसी भी घटनाक्रम के केवल वैश्विक चरित्र को ही इंगित करता है। यह किसी भी वस्तु के आकार और विस्तार को छोड़कर और किसी भी अन्य बात को नहीं दर्शाता है। वैश्वीकरण, साम्राज्यवाद या नव-उदारवाद का स्थान नहीं ले सकता।

पांचवां सिद्धान्त भी एक भ्रम पैदा करने वाला विचार है। नागरिक समाज में विभिन्न गुपों और आन्दोलनों को एक केन्द्र के जरिए ही जोड़ा जा सकता है जिसका प्रतिनिधित्व या तो एक व्यक्ति करता है या कोई संगठित समूह करता है।

छठा सिद्धान्त भी एक भ्रान्त प्रस्ताव है, जब कभी भी समान नजरिए वाले व्यक्ति किसी निश्चित कार्यक्रम पर विचार-विमर्श करने के लिए इकट्ठे होते हैं तो वे कुछ बातों पर या तो सहमत होते हैं या असहमत होते हैं। वे बहुमत की सहमति को निर्णय के तौर पर परिभाषित नहीं कर सकते परन्तु यह सहमति या असहमति इसी भावना से पैदा होती है। और व्यवहारिक तौर पर विश्व सामाजिक मंच की प्रक्रिया में यही हो रहा है। ब्राजीलियन संगठन समिति पहले से ही विश्व सामाजिक मंच के एक उच्चतम केन्द्र के तौर पर कार्यशील है तथा दो अन्य नये केन्द्र अन्तर्राष्ट्रीय परिषद एव विश्व सामाजिक मंच का सचिवालय, दृश्यपटल पर सामने आये हैं।

सातवां सिद्धान्त कोई नई बात नहीं है, आम तौर पर सभी लोकतांत्रिक संगठन ऐसा करते हैं। कुछ लोकतांत्रिक संगठन सम्मेलन में विचार-विमर्श किये गए विरोधी विचारों को भी प्रकाशित करते हैं।

आठवां सिद्धान्त भी अयथार्थ है, जब कभी विश्व सामाजिक मंच विभिन्न ग्रुपों या हस्तियों को मिलाता है या साथ जोड़ता है तो यह एक कोर ग्रुप या बुनियादी ग्रुप (किसी वस्तु का अतिमहत्वपूर्ण भाग) के रूप में क्रियाशील होता है।

नवां सिद्धांत एक दोगली धारणा को प्रस्तुत करता है। एक तरफ यद्यपि यह घोषणा करता है कि मंच बहुलवाद तथा विभिन्न ग्रुपों और आन्दोलनों के सोच और व्यवहार की अनेकता के लिए खुला है परन्तु यह सिद्धान्तों के घोषणापत्र को सभी के लिए बाध्यकारी बनाकर सोच और व्यवहार की आजादी को शर्तों में बांध देता है। और इस प्रकार इस सिद्धान्त के पूर्व भाग (यानि इसका खुला मंच होने) को मिथ्या बना देता है।

दसवां सिद्धान्त प्रशंसा करने लायक है बशर्ते कि इस पर अमल किया जाए।

ग्यारहवां सिद्धान्त यद्यपि साम्राज्यवाद और नव-उदारतावाद की धारणाओं–जिन पर सिद्धान्त नं. 1 में जोर दिया गया है–को नजरअन्दाज करता है तथापि पूंजी प्रभुत्व एवं पूंजीवादी वैश्वीकरण की धारणा को मानव विकास के लिए मुख्य खतरे के रूप में सामने लाता है, जबकि स्पष्ट नहीं करता कि पूंजीवादी वैश्वीकरण की धारणा साम्राज्यवाद व नव-उदारता की धारणा के समानार्थी है या इनसे अलग धारणा है।

शेष सिद्धान्त नं. 12, 13 और 14 प्रक्रियात्मक मामलों और पहले दिये गये कुछ सिद्धान्तों का पुन: वर्णन मात्र है।

विश्व सामाजिक मंच के कुछ अन्य बेमेल विचार जिसका उल्लेख इसके सिद्धान्तों के घोषणापत्र में नहीं किया गया है–

1. समाज के सम्बन्ध में इसका एक तरफा मानव केन्द्रित दृष्टिकोण जो पर्यावरण को नजरअन्दाज करता है।

2. इसकी पूंजी के सम्बन्ध मे दोषपूर्ण धारणा जो पैसे को ही पूंजी मानती है।

3. वर्तमान कॉरपोरेट विश्व व्यवस्था तथा राज्य संस्था–विधायिका, न्यायपालिका, प्रशासन–की मुख्य संस्थाओं (मसलन, संयुक्त राष्ट्र संघ, यूनेस्को, आई एम एफ, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन) के मौजूदा असमान नियमों पर इसकी चुप्पी।

4. इसने अपने आपको विश्व आर्थिक मंच के मुकाबले में होना प्रस्तुत किया है परन्तु इसके पिछले सभी सम्मेलनों में इसकी मुख्य केन्द्रित विषय-वस्तुओं से विश्व आर्थिक मंच पूरी तरह नदारद है।

5. इसने बिगड़ते जा रहे प्राकृतिक पर्यावरण के विषय को अपने मुख्य केन्द्रित विषय में शामिल ही नहीं किया है।

6. सामाजिक सुरक्षा–1:5 से अधिक आय में फर्क न हो, सुरक्षा खर्च घटे, महिला सशक्तिकरण हो–लोगों का मूल अधिकार हो इस पर मंच की दिलचस्पी कम है।

7. वर्तमान कॉरपोरेट विकास मॉडल के प्रति इसकी प्रतिबद्धता है।

8. इसके कार्यक्रम में विश्व के ज्वलंत बिन्दुओं जैसे, जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन आदि का उल्लेख नहीं है।

9. भ्रष्टाचार, अपराध, हिंसा के विरुद्ध अभियान चलाने में इसकी दिलचस्पी कम है।

10. सुरक्षा परिषद में वीटो पावर वाले अत्यधिक शक्तिशाली कॉरपोरेट पूंजीवादी देशों के विशेषाधिकार को समाप्त कर विश्व व्यवस्था में परिवर्तन लाने में इसकी दिलचस्पी कम है।

IV. विश्व-विपदाओं का एक हकीकी प्रत्युत्तर एक प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम के आधार पर इसे पुनर्गठित करने में निहित

वर्तमान पर्यावरणीय-जैविक संकट का कारण विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था को बताते हुए इसका (यानि संकट का) वास्तविक प्रत्युत्तर यह है व हो सकता है कि इसे एक प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम के आधार पर विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था को पुनर्गठित (या आधुनिक) किया जाए, जिसके निम्नलिखित बिन्दु हैं–

प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त

समाजशास्त्र (यानि मानव समाज का अध्ययन) : प्रकृति-मानव केन्द्रित समाजशास्त्र की मान्यता है कि मनुष्य के वृहद् दायरे में अन्य असंख्य घटनाक्रमों जो प्रत्येक अपने गुण और मात्रा लिए हुए हैं, की तरह ही एक खास प्रकार की प्रजाति है। इसका अस्तित्व अन्य प्राकृतिक घटनाक्रमों के साथ अन्तरसम्बन्धित व अन्तरक्रिया के तहत है। मानव समाज में परिवर्तन और विकास दो तरफा अन्तरक्रिया यानि एक तरफ प्रकृति और मानव समाज के बीच तथा दूसरी तरफ खुद मानव समाज के अन्दर की वजह से है। ये दो अन्तरक्रियाएँ दर्शाती हैं कि समाज के विकास के दो मुख्य कारक प्रकृति और मानव जाति है।

इसका यह विश्वास है कि मनुष्य जैव-सामाजिक है तथा इसका दो तरफा चरित्र है, एक तरफ जैविक तो दूसरी तरफ सामाजिक। जैविक चरित्र का पहलू मानव समुदाय के व्यक्तिगत अस्तित्व को प्रतिबिम्बित करता है, जो निजी हित से चिह्नित है जबकि सामाजिक पक्ष का पहलू उसके सामाजिक जीवन को दर्शाता है, जिसका चरित्र सामाजिक हित का है। कॉरपोरेट पूंजीवाद का यह सिद्धान्त कि मनुष्य केवल आत्मकेन्द्रित प्राणी है, एक एकतरफा धारणा है। इसी प्रकार कम्युनिस्टों का यह सिद्धान्त कि मनुष्य केवल सामाजिक प्राणी है, इसके जैविक पहलू को ढक देता है। पशु जगत का मूल स्वभाव निजी हित का है जबकि क्रमिक विकास से होमोसेपियन के रूप में मनुष्य का उद्भव हुआ तब से उसकी प्रकृति जैव-सामाजिक है। अर्द्ध सामाजिक चरित्र ही वह एकमात्र गुण है जो मनुष्य प्रजाति और पशुओं के बीच अन्तर को दर्शाता है। यदि मनुष्य सामाजिक पहलू से वंचित हो जाए तो वह अपने नजरिए व शैली में पशु के समान रह जाता है।

यह सामाजिक जीवन को एक प्रक्रिया का दर्जा देता है जो मानवीय प्रकृति के तीन बराबर के महत्वपूर्ण आयामों जैसे अस्तित्वात्मक (यानि जीवन की सुरक्षा की प्रकृति), मनोवैज्ञानिक (यानि विचार करने और कार्य करने की स्वतत्रता की उत्कंठा) तथा सामाजिकता (यानि सभी भौतिक और मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं में समानता व न्याय की मजबूत अन्त: प्रेरणा) से गठित है।

इसका सोचना है कि 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' का सिद्धान्त आज के समय में अनुपयोगी (गैर उत्पादक) हो गया है क्योंकि मौजूदा सामाजिक वास्तविकता विभिन्न देशों तथा विभिन्न सामाजिक नस्ली समुदायों के बीच सहयोग की माँग करती है ताकि उनके एक वैश्विक मानवीय इकाई में एकीकृत होने का रास्ता हमवार हो सके।

इसका मानना है कि साधन और साध्य दोनों समान रूप से महत्वपूर्ण है तथा इन दोनों की पवित्रता हर समय और हर जगह कायम रखनी चाहिए।

दृष्टि : हमारे ग्रह की तथा 21वीं सदी के राष्ट्र-राज्यों की अन्तरनिर्भर सामाजिक वास्तविकता, हमें प्रकृति-मानव केन्द्रित एक विश्व की दृष्टि प्रदान करते हैं। जबकि 1945 का संयुक्त राष्ट्र चार्टर सम्प्रभुसत्ता व स्वतंत्र राष्ट्र की एक ऐसी दृष्टि देता है जो विद्यमान वास्तविकता के उलट है।

मूलभूत सिद्धान्त : ऊपर वर्णित दृष्टि के मूलभूत सिद्धान्त में सर्वप्रथम लोगों एवं पर्यावरण को ग्लोबल क्रियाकलापों के केन्द्र में रखा जाना चाहिए यानि एक तरफ लोगों के हितों की सेवा करना तथा दूसरी तरफ पर्यावरण का उन्नयन और संरक्षण करना।

पर्यावरणीय उन्नयन व संरक्षण के इस मूलभूत सिद्धान्त को सभी प्रकार की प्रक्रियाओं में ध्यान में रखना एवं अमल में लाना होगा। यानि मानव समाज में इसकी सार्वत्रिक प्रासंगिकता रहेगी।

वैश्विक व्यवस्था : प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टि के मूलभूत सिद्धान्त तथा पर्यावरण-मानव प्राथमिकता माँग करती है कि संयुक्त राष्ट्र एक जनवादी आधारित तरीके एवं संगठन के रूप में पुनर्गठित हो। लेकिन संयुक्त राष्ट्र जैसा आज है, इस गुण की कमी रखता है। संयुक्त राष्ट्र की साधारण सभा का ढाँचा व कार्यप्रणाली बिल्कुल लोकतांत्रिक है। लेकिन दूसरी शीर्ष निर्णयकारी इकाई अर्थात् सुरक्षा परिषद जो अत्यधिक अनुचित तथा पूर्णरूपेण अप्रजातांत्रिक कायदों–जैसे सैनिक दृष्टि से सबसे ताकतवर देशों के लिए स्थायी सदस्यता व विशेष वीटो पावर–से चरित्रित है।

स्पष्ट तौर से, इस वक्त, इस संगठन के पूर्ण लोकतांत्रिकरण की किसी भी तरह की कोशिश को पांच सदस्यीय विशेषाधिकार क्लब के भारी विरोध का सामना करना पड़ेगा। इसलिए वर्तमान ग्लोबल शक्ति संतुलन को ध्यान में रखते हुए यह दिखता है कि सुरक्षा परिषद के पूर्ण जनवादीकरण में कुछ और समय लगेगा। थोड़े समय के लिए जब तक चल रहे शक्ति संतुलन में परिवर्तन हो तब तक स्थायी सदस्यता का नियम रखते हुए विशेष वीटो पावर का नियम हटा लेना चाहिए। सुरक्षा परिषद की बाकी सभी सीटें साधारण सभा द्वारा चुनाव के जरिए भरी जानी चाहिए।

धनवान देशों का अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष व विश्व बैंक के ऊपर से नियंत्रण कम हो तथा सबसे गरीब देशों का विश्व व्यापार संगठन में अधिक अधिकार दिये जाए।

पूँजी की अवधारणा : प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त का मानना है कि पूँजी दो तरफा घटनाक्रमों से गठित है, यानि एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन तथा दूसरी तरफ मानव संसाधन। ऐसा इसलिए है क्योंकि पर्यावरणीय एवं मानव संसाधन ही मानव समुदाय के जीवनदाता हैं तथा इनके बिना मानव जाति के लिए किसी भी चीज का कोई मूल्य नहीं है। इस प्रकार यह पैसे (या वित्त) को पूंजी मानने की धारणा को दृढ़ता से अस्वीकार करती है। आगे, पैसा या वित्त (कॉरपोरेट या कम्युनिस्ट सिद्धान्तों द्वारा जिसे पूंजी कहा जाता है) भी इन्हीं दो संसाधनों जो मानसिक व शारीरिक श्रम, प्राकृतिक कच्चा माल व तकनीकी औजारों के रूप में एकबद्ध है, की उपज है। स्पष्टतया, वित्त के सभी संघटक–श्रम, तकनीक एवं कच्चा माल पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों द्वारा उपलब्ध होता है। पैसा केवल विनिमय के माध्यम या बाजार के एक औजार का प्रतिनिधित्व

करता है, फिर भी यह अति महत्वपूर्ण गतिविधि समाज में सर्वोच्चता (यानि पूंजी) के दर्जे के योग्य नहीं है।

विकास मॉडल : जन-पर्यावरण प्राथमिकता का मूलभूत सिद्धान्त (जो मानव विकास के लिए अति आवश्यक है) एक नये प्रकार के विकास मॉडल की माँग करता है, जो पांच स्तरीय बुनियादी सिद्धान्तों–यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता (आय में 1:5 की भिन्नता के साथ सभी केलिए सामाजिक सुरक्षा का मूलभूत अधिकार सुनिशिचत करके), उत्पादकता, जन-नेतृत्व वाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता पर टिके हैं। ये पांच स्तरीय बुनियादी सिद्धान्त मानव के जैव-सामाजिक चरित्र से मेल खाते हैं, अर्थात् यह मनुष्य के निजी हित को सामाजिक हित से जोड़ते हैं।

जन-पर्यावरण आधारित विकास मॉडल दो रूढ़िवादी राष्ट्रीय विकास मॉडलों, यानि कॉरपोरेट-नेतृत्व वाले मॉडल और सरकार निर्देशित मॉडल की तुलना में विकास की समयानुकूल धारणा प्रस्तुत करता है। कॉरपोरेट-नेतृत्व वाला विकास मॉडल केवल लाभ या उत्पादकता (जो केवल धन के स्वामियों का हित सुरक्षित करता है) को एक मात्र लक्ष्य बनाता है जबकि सरकार निर्देशित मॉडल उत्पादन के साधनों का एक मात्र उद्देश्य समाजीकरण (या राष्ट्रीयकरण) को चुनता है (जो शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के हितों की सेवा करता है)। ये दोनों पारम्परिक राष्ट्रीय मॉडल मनुष्य के जैव-सामाजिक चरित्र के उलट केवल निजी हित को ही पूरा करते हैं, जैव-सामाजिक चरित्र निजी हित और सामाजिक हित दोनों को जोड़ता है। फिर, वे दोनों पर्यावरण को कोई प्राथमिकता नहीं देते और आर्थिकता या विकास प्रक्रिया में लोकतंत्र और पारदर्शिता के मानदंडों के पालन को कोई स्थान नहीं देते हैं; आगे जबकि कॉरपोरेट मॉडल समता (अथवा सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया अस्वीकार करता है वहीं सरकार निर्देशित मॉडल राजनीतिक समानता और उत्पादकता को पूर्णतया नकारता है।

यह मॉडल कॉरपोरेट नेतृत्व वाले मॉडल और राज्य आधारित मॉडल, दोनों से उनके उद्देश्यों, प्रबन्ध और शैली के मामलों में भिन्नता रखता है।

कॉरपोरेट मॉडल पूंजी एवं पूंजी के मालिकों का विकास करता है और राज्य मॉडल इसके शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के साथ मजदूर कुलीनता के हितों को आगे बढ़ाता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आम तौर पर लोगों और पर्यावरण के हितों की तथा खासतौर पर गरीबों और वंचित तबकों की सेवा पर आधारित है।

प्रबन्ध में, कॉरपोरेट सेक्टर एकाधिकारवादी कॉरपोरेट प्रबन्ध एवं नियंत्रण का पक्षपोषण करता है और राजकीय क्षेत्र एकाधिकारवादी अफसरशाही प्रबंध एवं नियंत्रण का समर्थन करता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल में स्थायी कॉरपोरेटरों की जगह संयुक्त कमेटियों द्वारा चुनी गई पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों द्वारा लोकतांत्रिक प्रबंध एवं नियंत्रण की मान्यता है। जहाँ स्थायी कॉरपोरेटरों की जगह प्रत्येक चुनी गई संयुक्त कमेटी में 2/3 सदस्य साधारण शेयरधारियों द्वारा चुने हुए होंगे तथा 1/3 सदस्य मजदूरों द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि होंगे।

शैली में, अधिनायकवादी और गोपनीय कॉरपोरेट एवं राजकीय शैली के उलट प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल लोकतांत्रिक पारदर्शिता और जवाबदेही की शैली पर आधारित है।

वैश्विक शांति और सुरक्षा : प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल को सर्वप्रथम स्थायी और टिकाऊ शांति एवं सुरक्षा की आवश्यकता है। इस प्रकार की शांति की स्थापना के लिए यह जरूरी है कि प्रभुत्व, विशेषाधिकार एवं विशेष शक्तियों की राजनीति को छोड़ा जाये, परमाणु शस्त्रों पर पूरा नियंत्रण संयुक्त राष्ट्र का करके पूर्ण निशस्त्रीकरण द्वारा टकराव और सैनिक समाधान की नीति को समाप्त किया जाये, राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक असमानताओं को मिटाया जाये, विकसित एवं विकासशील देशों के बीच विकास का फर्क एवं अमीर और गरीब के बीच खाई को हटाया जाये।

राजनीति : प्रकृति-मानव केन्द्रित राजनीति को एक ऐसी राजनीति की आवश्यकता है जो पूर्ण लोकतांत्रिक सिद्धान्तों, गतिविधियों और ढांचे पर आधारित हो। इस प्रकार की राजनीति संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था में विशेष वीटो शक्तियों के कानून को समाप्त करे और निर्णय लेने में लोगों का अधिकतम संभव शक्तिकरण को सुनिश्चित करे तथा पार्टी-केन्द्रित शक्ति का आवश्यक मात्रा में कमी करे।

अर्थशास्त्र : प्रकृति-मानव केन्द्रित आर्थिकता एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता की मांग करती है, जिसकी धारणाएँ, कानून और नियम पहले बताई गई दो उच्च प्राथमिकताओं (यानि मानव और पर्यावरण) तथा पांच उसूलों (यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, लोकतंत्र तथा पारदर्शिता) की रोशनी में बनाये जाने की आवश्यकता है। एडम स्मिथ का 'स्वहित' वाला मूलभूत आर्थिक सिद्धान्त और मार्क्स का प्रत्येक चीज का राज्य राष्ट्रीयकरण का बुनियादी आर्थिक नियम, ये दोनों मानव की जैव-सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एकतरफा है। लेकिन विडम्बना है कि दोनों मॉडल विकास, समृद्धि और उन्नति को मौद्रिक वृद्धि के रूप में मापते हैं न कि मानव और पर्यावरणीय विकास के सन्दर्भ में।

मूल्य प्रणाली : प्रकृति-मानव केन्द्रित मूल्य प्रणाली एक ऐसे जीवन के तरीके (या जीवन शैली) की माँग करती है जो बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों को समाहित करे और लोगों में तर्कसंगत मानवतावादी एवं पर्यावरणवादी सोच, व्यवहार व संगठन को बढ़ावा दे।

पहचान : पहचान का प्रधान रूप अन्तर्राष्ट्रीयवाद बनता है जिसमें राष्ट्रीयता और नस्ली पहचान उपप्रधान है।

लोक प्रेरक पहलू : पर्यावरणीय मानवतावाद मुख्य लोक प्रेरक पहलू है जिसके साथ कुछ मानवतावादी रुझान शामिल है।

अवधारणा : प्रकृति-मानव केन्द्रित अवधारणा वैज्ञानिक वास्तविकतावाद पर आधारित है जो प्रकृति के घटनाक्रम का अध्ययन एवं व्याख्या वैज्ञानिक तथ्यों की रोशनी में तथा सामाजिक घटनाक्रमों का अध्ययन एवं व्याख्या मान्यता प्राप्त सूचना एवं आंकड़ों के आधार पर करता है। इसकी मान्यता है कि प्रकृति और समाज में परिवर्तन लाने में एकता और संघर्ष दोनों उत्प्रेरक का काम करते हैं, इनमें से प्रत्येक निश्चित हालात में कभी पहले और कभी दूसरे स्थान पर होता है।

प्रकृति–मानव केन्द्रित सिद्धान्त न केवल कॉरपोरेट एवं उसके सिद्धान्तों तथा उनसे सम्बन्धित व्यवस्थाओं द्वारा पर्यावरणीय एवं मानव संसाधनों के लिए पैदा की गई चुनौतियों से मुकाबला करने के योग्य बनाता है बल्कि उनका (यानि प्रकृति एवं मानव संसाधनों का) भविष्य में न्यायपूर्ण उपयोग करने की राह भी दिखाता है।

न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था सम्भव है
(जनता के सोच-विचार के लिए अपील)

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आंदोलन (एन एच सी पी एम) मानता है कि इस समय मानव समुदाय को एक बहुत खतरनाक पर्यावरणीय व मानवीय संकट का सामना करना पड़ रहा है। यह चुनौती इतनी गंभीर है कि यदि इसका उत्तर वास्तविक कार्यक्रम से नहीं दिया जाता है तो इसके नतीजे में मानवीय हितों को बहुत ही खतरनाक परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं। सर्वप्रथम ऐसी गंभीर परिस्थिति से निपटने के लिए यह आवश्यक है कि मानव जाति के विभिन्न समुदायों के बीच में पूर्ण एकता कायम हो और एकता के पहलु की यह मांग है कि मानव समुदाय के अन्दर सभी प्रकार की टकराहटों को समाप्त किया जाये। मानव समुदाय की एकता कायम करने का एकमात्र रास्ता इसमें निहित है कि दुनिया में मौजूद सभी प्रकार के अन्याय को समाप्त किया जाए।

एन एच सी पी एम का यह दृष्टिकोण है कि न्यायसंगत दुनिया सभी प्रकार के सामाजिक न्याय की बुनियाद पर स्थापित करना निश्चित तौर पर संभव है। इसके लिए वर्तमान अन्यायपूर्ण कॉरपोरेट व्यवस्था को पुनर्गठित करने की आवश्यकता है।

वर्तमान अन्यायपूर्ण कॉरपोरेट व्यवस्था को एक न्यायपूर्ण आधार पर पुनर्गठित करने के लिए एन एच सी पी एम 15 बिन्दु जनता को सूचित करने, संगठित होने और काम करने के लिए प्रस्तुत करता है। यह उन सभी लोगों से जो इन बिन्दुओं को उचित समझते हैं, अपील करता है कि वे इन पर हस्ताक्षर करें।

जब कभी भी किसी इलाके अथवा देश में चुनाव हो रहे हों वहाँ एन एच सी पी एम मतदाताओं से अपील करता है कि वे इन 15 सिद्धांतों को उम्मीदवारों की सच्चाई जानने का मानदण्ड बनाए। मतदाता उम्मीदवारों से इन बिन्दुओं के समर्थन में हस्ताक्षर करने का अनुरोध करे। जो इन पर हस्ताक्षर करते हैं वे उम्मीदवार जनता के समर्थन के हकदार हैं और जो इन पर हस्ताक्षर करने से हिचकिचाते हैं वे न्यायिक और तर्कसंगत दृष्टिकोण से परे हैं।

1. मानव जाति को हर समय और हर जगह पर्यावरण (यानि हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) को टिकाऊरखने के मूलभूत कार्य को थामे रखना चाहिए।
2. जिन्दा रहने के मानवीय अधिकार को शुद्ध हवा, शुद्ध पीने का पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित की जाए।
3. आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में 5 गुना से अधिक अन्तर) पर आधारित उचित समानता का मानवीय अधिकार हो।
4. विश्व के तमाम झगड़ों का शांतिपूर्ण समाधान होना चाहिए, विशेष तौर पर जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका समस्याओं का। जम्मू-कश्मीर के न्यायपूर्वक समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा और विदेश महकमों को भारत-पाक के ज्वाइंट कन्ट्रोल में दिया जाना चाहिए जबकि इसके 9 नस्ली क्षेत्रों को अधिक से अधिक स्वायत्तता होनी चाहिए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन एवं जॉर्डन के सम्बन्ध में भी कारगर होगा।

5. संयुक्त राष्ट्र संघ को पुनर्गठित करने के लिए सुरक्षा परिषद के पांच स्थायी सदस्यों की वीटो पॉवर समाप्त की जाए तथा किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए साधारण सभा के बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान की जाए।
6. विश्व-व्यापार संगठन, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाय प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है), को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति जिसमें मानव और पर्यावरणीय पहलू उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्व वाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के 5 उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाए।
7. सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित किया जाए।
8. खेती से सम्बन्धित सभी लोगों की जीविका की सुरक्षा सहकारी कृषि व्यवस्था से सुनिश्चित की जाए।
9. शारीरिक व मानसिक दोनों प्रकार के श्रमिकों का सशक्तिकरण हो, जिसके अन्तर्गत संस्थानों, परियोजनाओं और कारखानों के प्रबन्ध में उनका एक तिहाई प्रतिनिधित्व सुनिश्चित हो।
10. उद्योग और सेवा के सभी क्षेत्रों पर से उद्योगपतियों और सरकार का एकाधिकार नियंत्रण खत्म करके तथा आम शेयरधारकों को दो तिहाई और मजदूरों को प्रबंधन में एक तिहाई हिस्सा देकर उनका लोकतांत्रीकरण किया जाए।
11. वित्तीय प्रबन्ध : कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबन्धन एवं नियंत्रण का पक्षधर है तो सरकारी क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियंत्रण का सर्मथक है, पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर इन स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई सदस्य आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियंत्रण स्थापित हो। प्रोमोटर्स (प्रोत्साहक) शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध को समाप्त किया जाए।
12. प्रकृति-मानव केन्द्रित राजनीतिक प्रकिया लोगों द्वारा निर्देशित होनी चाहिये तथा उसका संचालन समर्पित प्रकृति-मानव केन्द्रित सामाजिक कार्यकर्ताओं (या उनके मोर्चे) द्वारा किया जाना चाहिए। चुनाव पूर्णतया स्वतंत्र हो जिसमें प्रत्येक को उम्मीदवार और मतदाता दोनों रूपों में भाग लेने का समान अधिकार है।
13. दलगत ढांचे को महत्व दिए बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करे) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्यसत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के एकाधिकार का खात्मा किया जाए। यदि मतदाता किसी भी विधानसभा या लोकसभा सदस्य को वापिस बुलाना चाहे तो 1/5 मतदाताओं द्वारा लिखित में मांग करने पर पुन: चुनाव करवाया जाय।

14. प्रत्येक सांसद को दो करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये आवंटित करने का मौजूदा नियम हटाकर विकास से सम्बन्धित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्राम सभा सहित और इसके ऊपर कोई नहीं हो) के जरिए खर्च हों।
15. न्यायशास्त्र को पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों के हितों की सुरक्षा और संरक्षण करने के मूलभूत उसूल पर आधारित किया जाए। उपर्युक्त उसूल की अवहेलना करने पर अपराधी के साथ उसे सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल मानवीय क्रूरता और मृत्यु दण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधानों को निर्धारित किया जाए।

V. विश्व सामाजिक मंच के मित्रों से अपील

ऊपर जो कुछ भी कहा गया है उस पर नजरसानी करने पर हम उन सभी दोस्तों– जो आज विश्व सामाजिक मंच की प्रक्रिया को बनाने और आगे ले जाने में भागीदार हैं– को अपील करते हैं कि उनके द्वारा वर्तमान सामाजिक वास्तविकताओं, मंच के कार्यक्रम एवं उसके मुख्य केन्द्रित विषयों, मूल विषयों तथा उप विषयों पर पुनिर्विचार करे।

विश्व सामाजिक मंच की प्रक्रिया से सम्बन्धित सभी महानुभाव पर्याप्त तौर पर सचेत और परिपक्व हैं तथा इस क्षमता से परिपूर्ण हैं कि वे सही और गलत की तमीज कर सकें। यदि उनके रास्ते में वास्तविक कार्यक्रम को अपनाने और उसको लागू करने में कोई बाधा आती है तो कम से कम उन्हें गलत सामाजिक प्रस्तावों को समर्थन देना बन्द कर देना चाहिए तथा वास्तविक कार्यक्रम का विरोध नहीं करना चाहिए। निश्चित तौर पर वे एक ऐसा रास्ता तैयार करने के लिए पूर्णतया सक्षम हैं जहाँ वर्तमान सामाजिक वास्तविकताओं और वास्तविक कार्यक्रम के रास्ते में कोई रुकावट खड़ी न हो सके।

12.1.2004

* * * * *

15, 16 अप्रैल 2004 को दिल्ली में आयोजित 'डॉयलोग ऑन डेमोक्रेसी' (लोकतंत्र पर वार्ता) की तीसरी बैठक के लिये आर.पी. सराफ द्वारा लिखित नोट

वर्तमान लोकतंत्र की अस्पष्ट और भ्रांत धारणाओं ने धनवानों और भ्रष्ट तथा अपराधी प्रवृत्ति के राजनीतिज्ञों को हमारे ग्रह के प्राकृतिक पर्यावरण को बर्बाद करने एवं जैविक संसाधनों को नुकसान पहुँचाने का अवसर प्रदान किया

नीचे इस नोट में क्या लिखा है, ऊपर उल्लेखित प्रसंग इसको स्पष्ट करता है अथवा दूसरे शब्दों में यह दुनिया के वर्तमान हालात के बारे में हमारा निष्कर्ष है।

I. तथ्य क्या कहते हैं

निमन्त्रण-पत्र में प्रस्तुत सिद्धान्त से शुरू करते हुए हमने हमारी बात को प्रस्तुत करने के लिये ''बहु आयामी संस्थानों (यानि संयुक्त राष्ट्र विकास प्रोग्राम की मानव विकास रिर्पोट अथवा संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण प्रोग्राम की पर्यावरण रपट) के संख्यात्मक एवं गुणात्मक मूल्यांकनों की शैली'' का अनुसरण किया है। इस प्रकार, हम नीचे संयुक्त राष्ट्र

पर्यावरण प्रोग्राम और संयुक्त राष्ट्र विकास प्रोग्राम की रिर्पोटों के साथ अन्य वैज्ञानिक तथा सामाजिक विशेषज्ञों के विचारों का संक्षिप्त ब्यौरा दे रहे हैं।

(क) यू नए ई पी रिपोर्ट

2002 की संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यू.एन.ई.पी.) की रिपोर्ट ने चेतावनी दी है कि शहरों का विस्तार, जंगलों का विनाश, खेतों का क्षरण और पानी की बढ़ती हुई मांग से कई देशों में मानवीय और पारिस्थितिक स्वास्थ्य के खराब होने की भारी संभावना है।

यह कहती है कि कृषि की वृद्धि ने बड़े भू-भाग को नुकसान पहुंचाया है, यह जल-स्रोतों को समाप्त कर रही है, मिट्टी में नमक की मात्रा बढ़ा रही है, और जंगली जीवों के आवास को घटा रही है।

पहले से ही मिट्टी का पाँच अरब एकड़ क्षेत्र अमेरीका और कनाड़ा के संयुक्त क्षेत्र से ज्यादा मानवीय गतिविधि द्वारा बर्बाद हो गया जिसमें से छठा भाग बहुत ही ज्यादा अथवा बर्बादी की हद पार कर गया है। 80% से अधिक बर्बादी पानी और हवा के कटाव के जरिये हुई है।

यह आगे कहती है कि विश्व के बहुत से क्षेत्र 2032 तक अपने जैव विविधता और समुद्री पारिस्थितिक वातावरण को बुरी तरह बिगड़ा हुआ देखेंगे।

(ख) यू एन डी पी रिपोर्ट

2003 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार, अमीर और गरीब तथा उच्च और निम्न के बीच विभेद का रूझान कम होने के किसी भी संकेत के अथवा किसी बिन्दु पर ठहरने के बिना, अक्षुण्ण रूप से बढ़ रहा है। 2002 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट अभिव्यक्त करती है कि दुनिया के 1% सबसे अधिक धनवान दुनिया के 75% सबसे गरीब लोगों की कुल आय से ज्यादा आय प्राप्त करते है। 2001 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट लिखती है : विकासशील देशों के 460 करोड़ लोगों में से 85 करोड़ से ज्यादा अशिक्षित है, लगभग 100 करोड़ लोग पीने के स्वच्छ पानी से वंचित है और 240 करोड़ लोगों को समुचित शौच सुविधा उपलब्ध नहीं है। लगभग 3 करोड़ 20 लाख लड़के व लड़कियां स्कूल नहीं जाते। 5 साल के कम आयु के 1 करोड़ 10 लाख बच्चे निरोधक बीमारियों से मर जाते हैं जो प्रतिदिन 30 हजार से अधिक है। 1 करोड़ 20 लाख लोग एक डालर से कम और 2 करोड़ 80 लाख 2 डालर से कम प्रतिदिन आय पर जीते है। इस प्रकार का वंचितपन विकासशील देशों तक ही सीमित नहीं है। ओ.ई.सी.डी. (आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन) के देशों में 13 करोड़ से अधिक लोगों की कमजोर आय है। 3 करोड़ 40 लाख बेरोजगार है और वयस्क कार्यकारी अशिक्षा की औसत दर 15% है। रिपोर्ट आगे व्यक्त करती है कि अमेरीका की सर्वोच्च 10% अमीर आबादी (जो करीब 25 लाख है) की आय विश्व के सबसे गरीब 43% (करीब 200 करोड़) लोगों की संयुक्त आय से ज्यादा है। 1999 की मानव विकास रिपोर्ट कहती है 1990 के दशक के अंत में दुनियां की आबादी के ऊपर के 20% तथा नीचे के 20% लोग क्रमश: विश्व जी डी पी का 86% व 1% विश्व टेलीफोन लाइन का (जो आज की बुनियादी संचार साधन है) 74% तथा 1% तथा विश्व निर्यात का 82% तथा 1% का उपयोग करते थे।

1996 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट बताती है कि विश्व के सबसे धनवान मात्र 3 व्यक्ति 48 अल्पविकसित देशों की संयुक्त जीडीपी के बराबर सम्पदा रखते हैं, विश्व

के 225 सबसे धनवान व्यक्तियों के पास 10 खरब डालर से ज्यादा संपत्ति है जो विश्व के 47% गरीबों (जिनकी संख्या 250 करोड़ है) की कुल आय है।

(ग) अन्य वैज्ञानिक एवं सामाजिक विशेषज्ञों के विचार

आगे, विशेषज्ञों की रिर्पोटों पर आधारित निम्नलिखित तथ्य भी उपर्युक्त निष्कर्ष को पुष्ट करते है।

सन् 2000 में विश्व के ख्यातिनाम वैज्ञानिकों ने अपने वक्तव्य में जोर दिया कि मानव समुदाय यदि शीघ्र ही ग्रीन हाऊस गैसों के उत्पादन को नहीं रोकता तो वैश्विक गर्मी से 21वीं सदी के अन्त तक पृथ्वी जीव-जगत के लिये गैर टिकाऊ बन जायेगी। टिकाऊ विकास पर 2002 का संयुक्त राष्ट्र जोहान्सबर्ग सम्मेलन ने पर्यावरण विनाश तथा मानवीय संसाधनों के पतन की घातक समस्या को स्वीकार किया।

संयुक्त राष्ट के विश्व वन्य जीव कोष (डब्ल्यु डब्ल्यू एफ) का 2002 के अध्ययन ने चेतावनी दी है कि यदि मानव समुदाय (खास कर धनी देश तथा धनी लोगों) ने अति उपयोग तथा बर्बाद करने वाली अपनी जीवन शैली को नहीं बदला तो हमारी पृथ्वी 2050 तक मानव जीवन के लिये गैर टिकाऊ बन जायेगी।

2003 में विश्व के प्रमुख वैज्ञानिकों के रोम सम्मेलन ने सावधान किया कि यदि पर्यावरण पतन खराब करने की प्रक्रिया को कम समय में ही सुधारा नहीं गया तो आने वाले समय में पृथ्वी जीवों के रहने के लिये पूर्ण रूप से गैर टिकाऊ बन जायेगी।

जनवरी, 2004 के 'नेचर' विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित एक लेख कहता है कि ''आने वाले 50 वर्षों में जलवायु परिवर्तन के कारण पृथ्वी के एक चौथाई जानवर और वनस्पतियों के गायब होने की संभावना है।'' अन्य वैज्ञानिक विशेषज्ञ भी जो अपने आपको किसी समय सीमा में नहीं बांधते, पर्यावरणीय परिस्थिति को बहुत ज्यादा खतरनाक स्वीकार करते है।

एक सुप्रसिद्ध आर्थिक इतिहासकार ए. मेडीसन बताते हैं कि सबसे धनवान और सबसे गरीब देशों के बीच फर्क सन् 1820 में लगभग 3 एवं 1 था। यह सन् 1913 में 13 एवं 1 का 1950 में 35 एवं 1, 1973 में 44 एवं 1 तथा 1992 में 72 एवं 1 का हो गया। 1997 में यह हृदय विदारक आँकड़ा यानि करीब 74 एवं 1 का था। आज दुनिया में अमीरों एवं गरीब लोगों के बीच विभेद ऐसा है जो दिल हिलाने वाला है। दुनिया का सबसे अमीर अमेरीकन बिल गेट्स कुल 80 अरब डालर की सम्पत्ति का मालिक है और भारत का अजीम प्रेमजी 6 अरब डालर की सम्पदा का मालिक है, जबकि एक भूखा व्यक्ति खाली जेब और किसी भी अन्य स्त्रोत के अभाव में एक रोटी के टुकड़े को प्राप्त करने के लिये भीख मांगने के सिवाय कोई विकल्प नहीं रखता है, कुछ समय जिन्दा रहता है और फिर इस दुनियां से विदा हो जाता है इस प्रकार की मौतों के कारण को चिकित्सा विशेषज्ञ पेट की खराबी या इसी प्रकार की भौतिक बीमारी को कारण घोषित करते हैं।

कुछ मुट्ठी भर विकसित देश, मुश्किल से विश्व जनसंख्या का 15% आज विश्व के भौतिक एवं वित्तीय संसाधनों के 80% से अधिक पर नियन्त्रण करते हैं तथा 130 विकासशील देशों में रहने वाले 85% विश्व के लोगों के लिए 20% संसाधन छोड़ते हैं।

वर्ल्ड वॉच वांशिगटन जनवरी, 2004 की रिपोर्ट ने उल्लेख किया है कि विश्व के अमीर और उच्च मध्यम वर्गों (जो विश्व का 1/4 भाग है) की अति उपभोग और गैर

टिकाऊ जीवन शैली मानव समुदाय को एक खतरनाक संकट की तरफ धकेल रही है।

इग्लैण्ड के डोरचेस्टर में पारिस्थितिक और जल विज्ञान के केन्द्र प्राकृतिक पर्यावरण अनुसंधान परिषद की मार्च 2004 की रिपोर्ट कहती है :''जीवन के इतिहास में एक षष्टम् महाविलुप्ती की घटना अब हमारे ऊअर पुन: होने जा रही है। जीवों एवं वनस्पतियों की जीवित प्रजातियों की ऐसी महा विलुप्तियाँ समय-समय पर पहले हो चुकी है। इग्लैण्ड के डोरचेस्टर केन्द्र कहता है कि पूर्व की पाँच विलुप्तियाँ प्राकृतिक कारणों से हुई है जबकि छठी विलुप्ति का कारण मानव क्रिया कलाप लगता है।

संयुक्त राष्ट्र की मार्च 2004 की रिपोर्ट कहती है कि सूचना प्रोद्योगिकी का 'धुआं रहित उद्योग' एक बड़ा वैश्विक प्रदूषक है। इसके अनुसार 24 किलोग्राम एवं 27 सेन्टीमीटर की कैथोड़ किरण ट्यूब मानीटर का एक कम्प्यूटर को 230 किलोग्राम जैविक ईंधन, 22 किलोग्राम का रसायन और 1500 किलोग्राम पानी–कुल 1.8 टन पदार्थ की जरूरत होती है।

(घ) दक्षिण एशिया में पर्यावरणीय एवं मानव संसाधनों की स्थिति

दक्षिण ऐशिया में पर्यावरण पतन के सवाल को लेते है तो यह क्षेत्र पिछले 5 दशकों में प्राकृतिक संसाधनों के भारी क्षरण का गवाह है। तेज गति से जंगलों के कटाव से जंगल का क्षेत्र कम होकर कुल भुमि क्षेत्र का 17.5% रह गया है। घोर प्राकृतिक विपदा, जैसे बाढ़ और सूखा से कुछ क्षेत्र इसके पारिस्थितिकी पर दबाव से सीधे जुड़े हुए है, मालद्वीप और बंगलादेश सहित सभी समुद्र तटीय क्षेत्रों पर ग्रीन हाऊस गैसों के कारण ग्लोबल वार्मिंग का गंभीर परिणाम देखा गया है तथा ये अति असुरक्षित बनते जा रहे हैं।

दक्षिण ऐशिया में मानव संसाधनों के पतन के संबंध में स्थिति यह है कि 40 करोड़ दक्षिण ऐशियावासी हमेशा भूखे सोते है। 30 करोड़ अन्य गरीबी की रेखा से थोड़ा ऊपर जीते हैं, आधे से ज्यादा दक्षिण एशियावासी अनपढ़ है, 1/3 बिना घर के, 40% अल्प रोजगार, 1/3 साफ पीने के पानी तथा अन्य स्वस्थ्य सुविधाओं से वंचित है। तथा 3/4 को शौच सुविधा उपलब्ध नहीं है। 5 साल से कम 53% बच्चे बाल श्रमिक है। महिलाओं की स्थिति अति शोचनीय है। विश्वभर में दक्षिण एशिया लिंग आधारित हिसां में सबसे आगे है।

लोगों की औसत आय 309 डालर है जो कि सब सहारा अफ्रीकी लोगों की 555 डालर से कम है, सब सहारा अफ्रिका 2 दशक पहले विश्व का सबसे पिछड़ा इलाका था।

देशों के हिसाब से विश्व में राष्ट्रीय आय भी सबसे कम है। भूटान की 180 डालर से भारत की 360 डालर के बीच है। अन्य सामाजिक वंचितपंत के साथ गरीबी की स्थिति बदतर है। दक्षिण एशिया में 12 करोड़ 60 लाख बच्चों के लिये प्राथमिक शिक्षा की जरूरत है, 69 करोड़ को स्वास्थ्य की, 77 करोड़ को स्वच्छ पीने के पानी की, 8 करोड़ 70 लाख बच्चों को पर्याप्त भोजन की तथा 28 करोड़ 70 लाख वैवाहिक जोड़ों को परिवार नियोजन सुविधा की जरूरत है।

इन सभी के लिए बड़ी वित्तीय राशि की आवश्यकता है। लेकिन शासक तबका अपनी ही प्राथमिकताओं को आगे लाता है। आन्तरिक व बाहरी झगड़े, जो गलत सरकारी नीतियों से पैदा हुए है, क्षेत्र के भारी वित्तीय संसाधनों को निगल जाते हैं।

(ड़) पर्यावरणीय एवं मानव संसाधनों के पतन के दीर्घकालीन एवं अल्पकालीन कारण

ऊपर बताए गये खतरनाक पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों का पतन किसी साधारण बात से नहीं हो सकता। स्पष्टतया, इस प्रकार के चुनौतिपूर्ण विषयों का कारण कुछ मुलभुत बातों में निहित है। ऐतिहासिक अनुभव दिखाता है कि इस प्रकार के परिवर्तन भूतकाल में या तो प्राकृतिक कारणों अथवा किसी विशिष्ट घटनाक्रम के क्रिया कलाप के कारण हुए है। पूरा वैज्ञानिक समुदाय (यद्यपि कुछ इसके हल पर मतभेद रखते है) आज हमें यह कहने में एक मत है कि वर्तमान पर्यावरणीय पतन मानवीय क्रिया कलापों का नतीजा है जिसने पर्यावरणीय संसाधनों का बेदर्दी से विनाश किया है। वर्तमान और भूतकालीन मानव जीवन (जब से होमोसेपियन का पदार्पण हुआ) दिखाता है कि मानव जीवन हमेशा एक सामाजिक रूप में काम किया है जो आमतया एक सामाजिक व्यवस्था के रूप में विद्यमान रहा है। अत: हमारे ग्रह पर विद्यमान जैव पारिस्थितिकी संकट का मूलभूत कारण हमारी वर्तमान सामाजिक व्यवस्था से है और तात्कालिक कारण इस व्यवस्था की परिचालन संस्था (यानि सरकार) में निहित है। इसका अर्थ है कि इस भयंकर खतरे का आधार चल रहा लोकतंत्र (व्यवस्था और इसके संचालक यानि राजनीतिज्ञ) है।

II. वर्तमान डेमोक्रेसी–इसकी प्रकृति, मानदण्ड और व्यवहार

इसकी परिभाषा को लें, डेमोक्रेसी दो शब्दों से बना है यानि डेमो और क्रेसी। डेमो का अर्थ है लोग तथा क्रेसी का अर्थ है शासन। इसका खास अर्थ है लोगों का शासन अथवा लोगों द्वारा शासन। प्रमुख शब्दकोष इसे लोगों द्वारा, लोगों के लिए तथा लोगों का शासन परिभाषित करते हैं। ऐतिहासिक तौर पर डेमोक्रेसी शब्द ग्रीक शब्द डेमोक्रेसिया से आया है, डेमोस यानि 'लोग'+क्रेसिया यानि 'शक्ति, शासन'। डेमोक्रेसी की धारणा प्राचीन ग्रीक के कुछ शहरी राज्यों से पैदा हुई जहां शासन का संचालन चुने हुए प्रतिनिधियों के अप्रत्यक्ष शासन के बजाए सीधे सम्पूर्ण नागरिक इदारे द्वारा होता था। इस प्रकार का शासन संभव था क्योंकि शहरी राज्य की जनसंख्या थोड़ी थी तथा महिलाओं और दासों को कोई राजनीतिक अधिकार नहीं था। दास-मालिकों ने अपने शासन को जनता का शासन कहकर वास्तविकता को विकृत किया।

यह सामान्य तथ्य है कि चल रही डेमोक्रेसी सीधे जनता के शासन को अभिव्यक्त नहीं करती। यह मात्र लोगों के प्रतिनिधियों का शासन है। लोगों को केवल एक ही अधिकार है कि वे अपने प्रतिनिधियों को चुनाव प्रक्रिया के जरिए चुनते हैं। इसके आगे लोगों को कोई अधिकार नहीं। हमारे प्रतिनिधियों को अधिकार है कि वो हमारे ऊपर 5 साल तक शासन करें। इस अर्थ में, हम अपनी डेमोक्रेसी को केवल लोगों के प्रतिनिधियों की डेमोक्रेसी चरित्रित कर सकते हैं न कि लोगों की डेमोक्रेसी। लेकिन शासक-राजनीतिज्ञ इसको जनता का शासन बताते हैं जो कि तथ्यों के उलट हैं। डेमोक्रेसी के दोनों ब्रांड यानि विद्यमान कॉरपोरेट (बहु-पार्टी पद्धति से संचालित) और कम्युनिष्ट डेमोक्रेसी (राज्य निर्देशित या पार्टी अगुवाई के रूप में केवल एक ही कम्युनिष्ट पार्टी के जरिए परिचालित) इसे एक जनता का शासन कहते हैं। जनता के प्रतिनिधियों के शासन को लोगों का शासन कहना तथ्यों को विकृत करना है। हमारे चल रहे जनता के प्रतिनिधियों के शासन में जनता को केवल अपने प्रतिनिधियों को चुनने का अधिकार है। वे वोट देने के अलावा

अन्य कोई अधिकार नहीं रखते। चुने हुए प्रतिनिधियों को वो सब कुछ करने का विशेषाधिकार है जो वे चाहते हैं। वास्तव में, राष्ट्रीय डेमोक्रेसी के ऊपर बताए गये दो प्रकारों में लोगों को किसी भी अन्य मामलों में कुछ भी बोलने का अधिकार नहीं है।

आगे, भारत में कॉरपोरेट निर्वाचन कानून एक लोकसभा उम्मीदवार को अपने संसदीय क्षेत्र में 25 लाख रुपये की चुनावी खर्च की इजाजत देता है (जबकि विभिन्न देशों में चुनावी खर्च के कानून अलग है और एक बड़ी मात्रा में चुनाव खर्च करने की इजाजत देते हैं) भारत में 90% लोग चुनाव पर इतनी बड़ी राशि खर्च करने की स्थिति में ही नहीं है। अत: आम जनता चुनाव में उम्मीदवार बनने (चाहे वे कितने भी योग्य हों) के अवसर से वंचित हैं। केवल पार्टी नामित उम्मीदवार (जो आम तौर पर धनवान वर्गों के होते हैं) ही चुनाव मुकाबले में शामिल होते हैं। हकीकत में, चुनाव लड़ना धनवान वर्गों और उनके समर्थकों तक सीमित है। यहां यह उल्लेख करना रुचिकर होगा कि 1999 के चुनावों पर चुनाव आयोग द्वारा प्रायोजित सी एस डी एस अध्ययन के अनुसार एक लोकसभा उम्मीदवार पर जब कानूनन 14 लाख रुपये चुनावी खर्च की सीमा थी, औसत खर्च प्रति उम्मीदवार 70 लाख रुपये आंका गया जिसका आकलन अब 1 करोड़ 20 लाख रुपये है।

कम्युनिष्ट डेमोक्रेसी में, केवल शासक कम्युनिष्ट पार्टी को उम्मीदवार खड़ा करने का विशेषाधिकार है। इस प्रकार, कॉरपोरेट डेमोक्रेसी में धन के स्वामियों अथवा उनके प्रतिनिधि हर चुनाव में राजनीतिक सत्ता को नियन्त्रण करने में सफल होते है, जबकि कम्युनिष्ट डेमोक्रेसी में, पार्टी सत्ता पर एकाधिकार रखती है।

उपर्युक्त तथ्यों के मध्यनजर, कॉरपोरेट और कम्युनिष्ट डेमोक्रेसी की प्रकृति दो तरफा लक्षण अभिव्यक्त करती है। प्रथमत: यह लोगों के सीधे शासन का प्रतिनिधित्व नहीं करती तथा द्वितीयत: कॉरपोरेट डेमोक्रेसी में यह धन के स्वामियों द्वारा तथा कम्युनिष्ट डेमोक्रेसी में यह कम्युनिष्ट पार्टी (यानि इसके नेतृत्वकारी ग्रुप) के एकाधिकार द्वारा नियन्त्रित होती है।

जहाँ तक कारपोरेट और कम्युनिष्ट डेमोक्रेसी के दो रूपों के मानदण्डों का सवाल है ये दोनों इस सामाजिक आधार से शुरूआत करते हैं जहां ये दोनों मानव केन्द्रित बन जाते हैं। वास्तव में, कॉरपोरेट डेमोक्रेसी में धन के स्वामी और कम्युनिष्ट डेमोक्रेसी में पार्टी यानि इसके कुछ नेता इन पूँजीवादी मॉडलों के प्रेरक शक्ति की तरह कार्य करते हैं और उनके अपने सामाजिक रचनातंत्र में प्रत्येक उनके ही हितों को पूरा करने में हर वक्त कार्य करते हैं।

इन दो पूँजीवादी रूपों का दूसरा मानदण्ड यह है कि वे प्रत्येक समस्या के समाधान में ताकत को अंतिम हथियार मानते हैं। परिणामस्वरूप, कोई भी जटिल समस्या के समाधान हेतु युद्ध उनका प्रथम विकल्प रहता है। अपरिहार्य तौर पर उनके अपने सामाजिक मॉडलों को चलाने तथा उनकी समस्याओं के समाधान के लिए रक्षा प्रमुख प्राथमिकता बन जाती है।

इन दो रूपों का तीसरा मानदण्ड, अधिकतम् धन कमाने एवं लोगों पर शासन करने एवं अपने अच्छे के लिए सत्ता में बने रहने हेतु किसी भी कीमत पर जैसे-तैसे राज्यसत्ता हासिल करना है।

इन दो रूपों का चौथा मानदण्ड उनके वेल्यु सिस्टम का है। कॉरपोरेट वेल्यू सिस्टम सभी प्रकार की गतिविधियों–खेल, फिल्म प्रदर्शन, सौन्दर्य प्रतियोगिताओं, आदि का

वाणिज्यकरण करता है। ये दोनों रूप लिंग भेद मिटाने और पुरुष प्रभुत्व जन मानस में औरत को समान अधिकार देने का जबानी शौर मचाते है जबकि ये चालाकी से सामाजिक और पारिवारिक जीवन में पुरुष प्रभुत्व वाली परम्पराओं को प्रोत्साहन देते हैं तथा महिलाओं के साथ द्वितीय श्रेणी के नागरिक की तरह व्यवहार करते हैं।

कम्युनिष्ट वेल्यु सिस्टम मूलत: कम्युनिष्ट पार्टी और इसके राज्य के जरिए संचालित होता है। लोग आमतौर पर सरकारी नियन्त्रण वाली प्रेस तथा संचार तंत्र से इस प्रकार प्रभावित होते है कि कम्युनिष्ट पार्टी और इसके नेता सामाजिक सच्चाई के वास्तविक प्रतिनिधि है तथा वे सभी अवसरों पर अपने समर्थन का अधिकार रखते हैं।

पाँचवा मानदण्ड इन दो पूँजीवादी रूपों का है कि वे विकास को धन के रूप में आँकते हैं। यद्यपि दोनों (कॉरपोरेट और कम्युनिष्ट सिद्धान्त) पूँजी की अपनी परिभाषाओं में मतभेद रखते हैं (कॉरपोरेट पूँजी को धन का नाम देते हैं और कम्युनिष्ट इसे मजदूरों का अतिरिक्त मूल्य कहते हैं) फिर भी, दोनों इसे धन के रूप में नामित करते है तथा विकास, प्रगति एवं समृद्धि को धन की वृद्धि अथवा धन की वृद्धि दर से मापते हैं। इसलिए वे निवेश के लिए संचित धन को पूँजी कहते हैं। वे अपनी पूँजी बढ़ोतरी के लिए हर प्रकार की युक्ति काम में लेते हैं, जो समाज की सर्वोच्च वस्तु है। पुँजी के बारे में उनकी समझ उन्हें प्राकृतिक या मानवीय संसाधनों का कोई ख्याल किये बिना (जैसे या तैसे) पूँजी को प्रचूर मात्रा में इकट्ठा करने को प्रेरित करती है।

इन दो पूँजीवादी रूप के व्यवहार की ओर आते हैं, दोनों ने निर्दयता से सभी साधनों द्वारा अपनी पूँजी की अधिकतम् मात्रा के लिए एक तरफ पर्यावरणीय संसाधनों को बर्बाद किया है तथा दूसरी तरफ मानवीय संसाधनों का पतन किया है - इस तरह, इनका नुकसान उनको ठीक करने की सीमा से बाहर कर दिया है। यह वह तस्वीर है जिसे संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यू.एन.ई.पी.) संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू एन डी पी) तथा अन्य सामाजिक विशेषज्ञों ने पेश की है।

चल रही डेमोक्रेसी की पूरी प्रक्रिया के उपसंहार (यानि इसके कॉरपोरेट और कम्युनिष्ट नमूनों) में यह कहा जा सकता है कि इसके सकारात्मक पक्ष में कुछ निश्चित तकनीकी और वैज्ञानिक खोजों को सम्मिलित किया जा सकता है, जबकि इसके नकारात्मक पक्ष में (इसकी उपलब्धियों को ढकने वाला) जैविक इतिहास का सबसे बड़ा अपराध निहित है। एक ऐसा अपराध जिसने प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों को अब जीवन और मौत के संकट में धकेल दिया है। चल रही डेमोक्रेसी का 200 वर्षों का इतिहास इस तथ्य की गवाही देता है।

III. डेमोक्रेसी का प्रकृति–मानव केन्द्रित मॉडल

डेमोक्रेसी का प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल मानता है कि मानव और पर्यावरणीय संसाधन मानव समाज के विकास में दो प्रमुख शक्तिया हैं।

यह विश्वास करता है कि मानव जैव-सामाजिक है जो एक तरफ जैविक अस्तित्व का व्यक्तिगत चरित्र तथा दूसरी तरफ सामाजिक हित का चरित्र रखता है।

डेमोक्रेसी के प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल की मान्यता है कि सामाजिक प्रक्रिया मानव स्वभाव के बराबर महत्व के 3 आयामों की एक प्रक्रिया है, वे हैं, अस्तित्व (यानि, जीवन की सुरक्षा), मानसिक (यानि, सोचने और कार्य करने में स्वतंत्रता की लालसा)

और सामाजिक (यानि, सभी भौतिक एवं मानसिक प्रक्रियाओं में समानता और न्याय की मजबूत आकांक्षा)। यहां, लोग तय करते है कि प्रत्येक व्यक्ति की जीवन्त पर्यन्त सामाजिक सुरक्षा को कैसे सुनिश्तित किया जाये, प्रत्येक शख्स को सोचने एवं कार्य करने की पूर्ण स्वतंत्रता कैसे दी जाये, समतावादी आय के बीच कितना फर्क हो।

यह सोचता है कि जिसकी लाठी उसकी भैंस का सिद्धान्त (युद्ध व्यवस्था का प्रतीक) आज गैर उत्पादक बन गया है। यह शांति को अपना बुनियादी सिद्धांत मानता है, यह जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन सहित सभी झगड़ों को बातचीत और समझौतों के जरिए हल करने के लिए प्रतिबद्ध है।

यह मान्य करता है कि साधन और साध्य बराबर महत्व के हैं।

यह ग्रहीय और अन्तर ग्रहीय दृष्टि को अपनाता है। इस दृष्टि का मूलभूत सिद्धान्त लोगों और पर्यावरण को अपनी सम्पूर्ण गतिविधि के केन्द्र में रखना है।

इस दृष्टि से मेल खाते हुए, यह एक नई विश्व व्यवस्था से प्रतिबद्धता रखता है, जिसमें संयुक्त राष्ट्र की साधारण सभा निर्णय लेने में सर्वोच्च इदारा होगी। साधारण सभा अपने फैसलों को लागू करने के लिए एक परिषद को चुनेगी (सुरक्षा परिषद को नियुक्त करने के पुराने सिद्धान्त को निरस्त करते हुए जिसमें कुछ सदस्य परिषद के स्थाई सदस्य होते हैं और वीटो अधिकार रखते हैं) और भविष्य में वर्तमान राष्ट्रीय इकाईयों को दो मान्यताओं समान पहचान और लगभग समान जनसंख्या के आधार पर पुनर्गठन करेगी।

यह स्वीकार करती है कि पूँजी एक दो तरफा घटनाक्रम है, यानि एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन और दूसरी तरफ मानवीय संसाधन। यह धन को पूँजी की प्रतिनिधि इकाई होने के सिद्धान्त को रद्द करती है। यह धन को केवल मात्र विनिमय का माध्यम मानती है।

इसका विकास मॉडल 5 तरफा मूलभूत सिद्धान्तों, यानि पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता (आय में 1:5 के फर्क तथा सभी को सामाजिक सुरक्षा का मूलभूत अधिकार), उत्पादकता, जनता आधारित लोकतंत्र ओर सभी मामलों में पारदर्शिता के असूलों का पक्षपोक्षण करता है।

यह मॉडल कॉरपोरेट और राज्य आधारित दोनों विकास मॉडलों से अपने उद्देश्य, प्रबन्ध एवं शैली में भिन्नता रखता है।

कॉरपोरेट मॉडल पूँजी और पूँजीपतियों का विकास करता है तथा राज्य मॉडल शासक राजनीतिज्ञों, अफसरों एवं मजदूर कुलीनों के हितों को आगे बढ़ाता है जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आमतौर पर लोगों और पर्यावरण का और खासतौर पर गरीबों एवं वंचित तबकों के हितों की सेवा करता है।

प्रबंध में, कॉरपोरेट सेक्टर एकाधिकारवादी कॉरपोरेट प्रबन्ध और नियन्त्रण का समर्थक है तथा राजकीय क्षेत्र एकाधिकारवादी अफसरवादी प्रबंध और नियन्त्रण का पक्षधर है जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर चुनी हुई संयुक्त कमेटियों के जरिए लोकतांत्रिक नियन्त्रण का हामी है। इन संयुक्त कमेटियों में स्थायी कॉरपोरेटरों की जगह 2/3 चुने हुए सदस्य साधारण शेयर धारियों के तथा 1/3 चुने हुए सदस्य मजदूरों के प्रतिनिधि होते हैं।

शैली में, आधिकारिक और गुप्त कॉरपोरेट एवं स्टेट शैली के उलट, प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल लोकतांत्रिक, पारदर्शी तथा जवाबदेही शैली को अपनाता है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित राजनीति पूर्णतया लोकतांत्रिक सिद्धान्तों, कार्यकलापों और संरचना पर आधारित एक डेमोक्रेटिक व्यवस्था को मानती है। इस प्रकार के मॉडल के लिए निर्णय लेने में लोगों के अधिकतम् संभव सशक्तिकरण के सिद्धान्त को लागू करना अनिवार्य है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित आर्थिकता एक तर्कसंगत और वास्तविक अर्थशास्त्र जिसकी धारणा, कानून और नियम ऊपर बताई गई 2-उच्च प्राथमिकताओं (यानि मानव जाति और पर्यावरण) तथा 5 सिद्धान्तों (यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, लोकतंत्र तथा पारदर्शिता) की मांग करती है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित मानदण्ड एक ऐसी जीवन-पद्धति (या जीवन शैली) की मांग करती है जो लोगों में मलभूत मानवीय और पर्यावरणीय मानदण्डों तथा तर्कसंगत, मानवतावादी एवं पर्यावरणवादी सोच, व्यवहार और संगठन से ओत-प्रोत हो।

प्रकृति मानव केन्द्रित डेमोक्रेसी का मॉडल यह सुनिश्चित करेगी कि सभी प्रकार के संविधान (स्थानीय से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के) उनकी संबंधित चुनी हुई संविधान सभाओं द्वारा तैयार किया जावे और उन्हें लोगों द्वारा अंतिम तौर पर अनुमोदित एवं पारित करवाया जावें।

यहां निम्नलिखित विचारों को भी ध्यान में लाया जा सकता है।

विधायिका के सदस्य से निर्मित कार्यपालिका की नेतृत्वकारी स्थिति नहीं हो।

राज्य संरचना के सभी हिस्से, यानि विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका, प्रशासन की समान स्थिति हो।

डेमोक्रेसी का प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल मानता है कि सभी प्रक्रियाओं (सामाजिक आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक आदि) में प्रतिनिधि संस्थायें चुनाव के जरिये निर्वाचित हो जहाँ समाज का प्रत्येक सदस्य चुनाव लड़ने का अधिकार रखता है। चुनाव प्रक्रियाओं में सभी स्तरों पर किसी भी एसोसिएशन, संस्था, पार्टी या ग्रुप को किसी प्रकार की विशेष स्थिति नहीं हो।

सभी प्रकार के चुनाव प्रत्येक उम्मीदवार के लिए सरकारी खर्च पर हों।

मतदाताओं को अपने प्रतिनिधियों को वापिस बुलाने का अधिकार हो।

उम्मीदवार को किसी प्रकार की जमानत राशि जमा नहीं करवानी पड़े इसकी जगह निर्वाचन क्षेत्र के मतदाताओं में से 5% हस्ताक्षर अपने समर्थन में पेश करने हों।

IV. कार्य की दिशा

आगे बढ़ने का रास्ता हमारे दृष्टिकोण से पाँच बातों को करने में निहित है।

(क) लोगों में धन (या पूंजी) आधारित तथा भ्रष्ट एवं अपराध-अभिमुख राजनीतिज्ञों के निर्देशन में चल रही डेमोक्रेसी को प्रकृति-मानव केन्द्रित डेमोक्रेसी में पुर्नगठित करने की जाग्रति पैदा करना।

(ख) वर्तमान परिस्थिति में सही एवं गलत को पहचानने के लिए लोगों को सचेत करना। विद्यमान कॉरपोरेट व्यवस्था पब्लिक की मानसिकता ऐसी बनाती है जहां धन, शक्ति और सत्ता मानव समाज और प्रत्येक मानव के लिये प्रमुख लक्ष्य है। पर्यावरणीय एवं मानवीय हितों की मांग है कि इन तीनों नकारात्मक तथा हानिकारक प्रेरक कारकों की जगह पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों के मूलभूत उद्देश्य को लाया जावे।

(ग) आमतौर पर लोगों के सभी हिस्सों में तथा वंचित एवं उपेक्षित तबकों में खासतौर पर जन-जाग्रति का अभियान शुरू करना क्योंकि उनके हित तुरन्त परिवत्रन की माँग करते हैं।

(घ) ग्रामीण एवं शहरी, गरीब, बेघरबार, बेरोजगार, विधवाओं, महिलाओं, बाल श्रमिकों, छोटी बच्चियों, अवैध संतानों, सफाई कर्मियों, कृषि मजदूरों, बंधक मजदूरों, असंगठित मजदूरों, आदिवासियों, कैदियों, लमपन तत्वों जैसे भिखारियों आदि तथा दफ्तर कर्मचारी, विधार्थियों, युवाओं तथा अल्पसंख्यकों आदि वंचित तबकों में से प्रत्येक का विकास कार्यक्रम तैयार करना।

(ड) भारत अथवा विश्व के अन्य देशों में विद्यमान सभी सामाजिक आन्दोलनों (स्वयं सेवी और गैर सरकारी) से तथा जमीन से जुड़े लोगों से भ्रातृत्व संबंध बनाना।

06.04.2004

* * * * *

भारत, पाक और जम्मू–कश्मीर के लोगों का साझा भविष्य

I दृष्टिकोण

पिछले 15 सालों से हम इस विचार पर कार्यशील हैं कि आज जम्मू-कश्मीर की जो समस्या अत्यधिक जटिल मसला है तथा वर्तमान दुनिया का बहुत ही खतरनाक एवं ज्वलनशील बिन्दु है, जिसे समस्या से संबंधित तीनो पक्षों (यानि भारत, पाकिस्तान एवं जम्मू-कश्मीर की जनता) के हितों में तीन सूत्री समझौते के प्रस्ताव द्वारा सामंजस्य बैठाकर उचित तौर पर हल किया जा सकता है। तीन सूत्री प्रस्ताव निम्न है : (क) जम्मू-कश्मीर के विदेश और सुरक्षा के ममाले भारत-पाक सहराज्य या भारत और पाकिस्तान के संयुक्त नियन्त्रण में रहें। (ख) जम्मू-कश्मीर राज्य एक स्वतन्त्र राज्य रहे जिसमें सभी मामलों (सिवाय विदेश व सुरक्षा जो भारत-पाक सहराज्य द्वारा संचालित हो) की प्रभुसत्ता जम्मू-कश्मीर राज्य में निहित रहे तथा (ग) जम्मू-कश्मीर के सभी नश्लीय समुदायों को अधिकतम संभव स्वायतता प्राप्त रहे।

यह 3-सूत्री समझौता मात्र मनोगत संयोग की उपज नहीं है बल्कि 2-बिन्दुओं पर आधारित एक गम्भीर मूल्यांकन की उपज है। पहला, वैश्वीकरण की विश्वव्यापी चल रही प्रक्रिया किसी साम्राज्यवादी चालबाजी का नतीजा नहीं है बल्कि एक वस्तुगत घटनाक्रम है जो नई वैज्ञानिक तकनीकी विकास के वस्तुगत घटनाक्रम से उभरा है जिसने मनुष्य की मानसिक अन्तरक्रिया को प्रकाश की गति और भौतिक अन्तरक्रिया को ध्वनि से भी तेज गति से करना संभव बना लिया है। हम पूर्णतया सहमत हैं कि वैश्वीकरण की प्रक्रिया की माँग (कारपोरेट पूंजीपति नेताओं और उनके छुपे हुए एजेन्टों द्वारा उनकी दोगली चालबाजियों जो कहना कुछ और करना कुछ से चरित्रित है, कट्टर-वामपंथी जो राजकीय पूंजीवादी कम्युनिस्ट मॉडल को थामे हुए है, धार्मिक रूढ़ीवादियों के विभिन्न सम्प्रदाय, लम्पट तत्वों, इत्यादि के भयंकर विरोध के बावजूद) देशों (या राष्ट्रीय इकाइयों) को अन्तरनिर्भर बना देगी, और ये अन्तरनिर्भर देश पहले अपने आपको क्षेत्रीय दायरे में और कहीं महाद्वीपीय दायरे में संगठित करते हुए आखिरकार विभिन्न नश्लीय और सांस्कृतिक हिस्सों वाली एक मानवीय इकाई (या मानवीय समाज) के विकास की ओर ले जायेगी। दूसरा, लगातार भारत-पाक के बीच चलते तनाव (जो मूल रूप में 1947 के विभाजन तथा

विभाजन पूर्व हिन्दु-मुस्लिम साम्प्रदायिक दंगो से पैदा हुआ है तथा 1947 के बाद के तीन भारत-पाक युद्धों के कारण जारी है) एवं 55 सालों से चले आ रहे भारत-पाक के लम्बे टकराव के बावजूद वैश्वीकरण की प्रक्रिया के प्रभाव तले अन्ततोगत्वा एक नई भारत-पाक दोस्ती और सौहार्द की राह हमवार होगी।

हमने उपर्युक्त समझ की दिशा में मजबूती से कदम बढ़ाये हैं, पहला, अपने आपको भारत-पाक दोस्ती के मंच (1989) में संगठित किया, फिर इस मंच को जम्मू-कश्मीर समस्या के शान्तिपूर्ण समाधान के लिए मंच (1993) में तब्दील किया और उसके बाद इस मंच को जम्मू-कश्मीर समस्या के त्रिपक्षीय समाधान के मंच (2000) के रूप में पुनर्गठित किया। ये सभी बदलाव लोगों की बदलती जा रही चेतना की आवश्यकतानुसार किये गए। त्रिपक्षीय मोर्चे ने एक गहन जन अभियान शुरू किया जो मुख्यतया जम्मू के प्रशासनिक क्षेत्र तक सीमित रहा (जो सभी प्रकार के अमानवीय एवं पर्यावरण विरोधी विश्वासों से ग्रसित अतिवादी शक्तियों का केन्द्र था)। इस अभियान ने जम्मू-कश्मीर समस्या के समाधान के लिए उपर्युक्त तीन सूत्री फार्मूले को गुंजायमान किया। अब समय आ गया है कि जम्मू-कश्मीर समस्या के त्रिपक्षीय समाधान के लिए मंच के हमदर्द कश्मीर और लद्दाख क्षेत्र में क्रियाशील हों तथा नियन्त्रण रेखा के दूसरी तरफ (जिसे आजाद कश्मीर कहा जाता है में) भी यह मंच स्थापित किया जाए।

II मामले कैसे आगे बढ़ रहे हैं

आज जबकि मानवता इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक में प्रवेश कर चुकी है। भारत-पाक संबंधों में एक नई तनाव शिथिलता की स्थिति बनी है इससे यह स्वाभाविक तौर पर प्रश्न उठता है कि इस तनाव शैथिल्य के पीछे क्या है? क्या यह भारत और पाकिस्तान के बीच द्विपक्षीय वार्ता की उपज है जैसा कि अटल बिहारी वाजपेयी और जनरल मुर्शरफ तथा दोनों देशों के मीडिया का दावा है तथ्य इस दावे की पुष्टि नहीं करते हैं। केवल दो वर्ष पहले ही दोनों देश सरहद पर एक-दूसरे की छाती पर संगीने ताने खड़े थे। वाजपेयी और मुर्शरफ दोनों अपनी-अपनी सेनाओं का आव्हान कर रहे थे कि अपने सामने वाले पक्ष को खत्म करने के लिए मुस्तैद रहो। पीछे 6 महीने से भी कम समय हुआ है जब दोनों अपमानजनक तरीके से दोषारोपण कर रहे थे और अब भी शासक भाजपा और इसके दो नेता- अटल बिहारी वाजपेयी व लालकृष्ण आडवानी-हिन्दुत्व के अपने रूढ़ीवादी सिद्धान्त को अपना दृष्टिकोण, परिप्रेक्ष्य और आधार मानते हुए उससे लगातार हर समय और हर कहीं वफादारी से चिपके हुए हैं। जबकि मुशर्रफ और उसकी टीम अपने भविष्य और वर्तमान सन्दर्भ और आधार के लिए इस्लामिक धारणा पर टिके हुए हैं।

क्या ऐसे पुनरूत्थानवादी एवं रूढ़ीवादी नजरिये अपने बलबूते पर दुनियां में अमन चैन कायम करने का सोच भी सकती है। स्पष्टतया, इस महाद्वीप में शान्ति और सामान्य स्थिति लाने की उनकी समस्त घोषणायें उनकी अपनी राजनीतिक समझ-बुझ का नतीजा नहीं है बल्कि नई सामाजिक वास्तविकताओं (यानि वैश्वीकरण की प्रक्रिया या अन्तरनिर्भर राष्ट्रीय घटनाक्रम) के विकास की मजबूरियां है।

उपर्युक्त नई सामाजिक वास्तविकता की मुख्य अभिव्यक्ति यह है कि इसने युद्ध के औजार को (किसी भी समस्या को जो शुरू में कितनी भी कठिन क्यों न नजर आती हो, अन्ततोगत्वा युद्ध के जरिये हल करने की मान्यता पूर्व में रही है) अलाभदायक और प्रभावहीन बना दिया है। सामाजिक समस्याओं को अन्तिम तौर पर युद्ध के जरिए हल

करने की प्रभावहीनता इससे स्पष्ट होती है कि अमेरिका जो आज के समय में सबसे बड़ी महाशक्ति है, को इराकी और अफगानी लोगों के हाथों गतिरोध सहना पड़ रहा है। वास्तव में इराक और अफगानिस्तान पर अमेरिका के हमले ने आतंकवाद को एक नया प्रोत्साहन दिया है यानि, आंतकवाद के विरूद्ध अमेरिका का युद्ध अलाभकारी सिद्ध हुआ है। आगे, यह इस तथ्य से भी देखा जा सकता है कि दुनियां में चल रहे सभी सशस्त्र संघर्ष में कोई भी पक्ष निर्णायक जीत की स्थिति में नहीं है।

द्वितीयत: इसने बातचीत दोस्ती और सहयोग के तरीकों को समस्याओं से निपटने के अत्यधिक प्रभावी रास्ते का सामाजिक दर्जा प्रदान किया है।

तृतीयत:, इसने दुनिया के लोगों में पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों को भारी नुकसान पहुँचाने वाले युद्धों (चौमुखी विध्वंश के हथियारों के उपयोग) का विरोध करने की नई चेतना को प्रज्वलित किया है।

क्या उपरोक्त विकास की नई स्थिति एक अद्भुत घटनाक्रम है या एक अनहोनी घटना है। ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि प्रकृति से मनुष्य की अन्तरक्रिया में जब कभी भी मूलभूत परिवर्तन होता है (जिसके नतीजे में अत्यधिक महत्वपूर्ण नया वैज्ञानिक-तकनीकी ज्ञान विकसित होता है) तथा इसके अनुरूप मानव समाज में लोगों के बीच में एक नया अन्तर-व्यवहार होने लगता है तब मनुष्य की जिन्दगी के हर क्षेत्र में यानि, वैचारिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा जिन्दगी की सुरक्षा के क्षेत्र में एक बुनियादी (व्यवस्थागत) परिवर्तन होता है। ऐसी स्थिति में कोई भी कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो तथा किसी भी प्रकार की आध्यात्मिक या भौतिकवादी सिद्धान्तों को मानने वाला क्यों न हो, यदि वह वास्तविकतावादी है तो कोई भी नई उभरी सामाजिक वास्तविकता का प्रतिरोध नहीं कर सकता और भारत-पाक के दोनों व्यवहारवादी नेता-यानि, वाजपेयी (1971 के भारत-पाक युद्ध में पाकिस्तान को दो भागों में विभाजित करने वाली इन्दिरा गांधी को देवी दुर्गा कहने वाले सिद्धान्तकार) तथा मुर्शरफ (1999 कारगित युद्ध के प्रणेता) आज यही कर रहे हैं तथा नोबल शान्ति पुरस्कार जल्दी से जल्दी पाने की संभावना के लिए अपने-अपने शान्ति के बिन्दु उठा रहे हैं।

III वास्तविकता की आवश्यकताएं क्या करने को कहती हैं

दुनियां की नई स्थिति जो सामाजिक सत्य को निर्धारित करने के लिए अन्तिम तकनीक के तौर पर युद्ध को नकारने तथा बातचीत, समझौता, मित्रता एवं सहयोग के द्वारा किसी भी मसले को अत्यधिक प्रभावी तरीके के रूप में विकसित होने में चरित्रित है, भारत और पाकिस्तान के उच्चस्थ कार्यपालिका के नेतृत्व ने 6 जनवरी 2004 को संयुक्त वक्तव्य पर हस्ताक्षर करके यह स्वीकार किया है कि भारत-पाक के मध्य सभी द्विपक्षीय मुद्धों को जिसमें जम्मू-कश्मीर समस्या शामिल है–आपसी द्विपक्षीय वार्ता से हल किया जाये और यह भारत-पाक संबंधों में तनाव-शैथिल्य के नये दौर तथा इस महाद्वीप में शान्ति प्रक्रिया की शुरूआत की पहल को इंगित करता है।

शान्ति प्रक्रिया का रास्ता, जैसा कि अनुभव दर्शाता है, कोई सीधा-सादा रास्ता नहीं होगा बल्कि विवादों और उग्र शाब्दिक झगड़ो वाला खासकर जम्मू-कश्मीर के मसले पर कठिनाईयों भरा मार्ग होगा। एक ऐसी विवादास्पद स्थिति पहले ही 12 मार्च के जनरल मुर्शरफ के वक्तव्य के रूप में सामने आ चुकी है जिसमें उन्होंने जम्मू-कश्मीर को

केन्द्रीय मुद्दा बनाया और जिस पर भारत ने एतराज किया और पाकिस्तान ने उसका बचाव किया। शाब्दिक टकराहट से बचने का एक ही रास्ता है किसी भी मुद्दे पर अपनी पुरानी धारणा को दोहराने से रोका जाए तथा 6 जनवरी के संयुक्त वक्तवय को ध्यान में रखकर बोला जाय। शान्ति प्रक्रिया तार्किक अन्त तक पहुंचाने के लिए यह तथ्य समझना आवश्यक है कि जम्मू-कश्मीर एक केन्द्रीय या विवादास्पद मुद्दे की बहस को एक बारगी दरकिनार कर दिया जाए तो भी 55 वर्षों से भारत-पाक संबंधों में खरास और भारत-पाक के मध्य तीन युद्धों का एकमात्र मुख्य कारण जम्मू-कश्मीर समस्या है, यह भी एक तथ्य है कि संबंधित तीनों पक्षों यानि, भारत, पाकिस्तान एवं जम्मू-कश्मीर के लोगों के बीच जम्मू-कश्मीर समस्या का एक न्यायिक और तर्कसंगत हल न निकाल लिया जाए तब तक इस उपमहाद्वीप में एक न्यायपूर्ण और स्थायी शान्ति स्थापित नहीं की जा सकती है।

मौजूदा क्षण में एकमात्र सवाल जिसका अभी तक जवाब नहीं दिया जा सका है, वह यह है कि जम्मू-कश्मीर के लोगों का प्रतिनिधित्व कौन करता है, इसका उत्तर दो सामाजिक तथ्यों में निहित है। पहला तथ्य यह है कि इसकी विवादास्पद प्रकृति की वास्तविकता के मद्देनजर (जिसको संयुक्त राष्ट्र संघ ने स्वीकार किया है और भारत-पाकिस्तान सहित राष्ट्र राज्यों के भारी बहुमत ने माना है, तथा जिसको 1972 के शिमला समझौते एवं 1999 के लाहौर घोषणा में उल्लेखित किया है) जम्मू-कश्मीर के लोगों के बहुमत का प्रतिनिधित्व मुख्यतया वे लोग करते हैं जो जम्मू-कश्मीर समस्या को अनसुलझी समस्या मानते हैं। दूसरा तथ्य यह है कि किसी भी पक्षकार को उपर्युक्त कथन स्वीकार न हो तो जम्मू-कश्मीर में चुनाव इसका वांछित उत्तर-प्रदान कर सकता है। हमारी नजर में पहले वाला प्रस्ताव अधिक उचित और सकारात्मक है।

उपर्युक्त तथ्यों की मौजूदगी में जम्मू-कश्मीर के लोगों का कार्य यह बनता है कि शान्ति प्रक्रिया का सुदृढ़ीकरण करते हुए इस प्रक्रिया को तार्किक अन्जाम तक आगे बढ़ाया जाय, इन सभी ग्रुपों (हुरियत कान्फ्रेस के दोनों धड़ों सहित) जो जम्मू-कश्मीर समस्या को विवादास्पद मुद्दा मानते हैं तथा इस समस्या को न्यायपूर्ण और तर्कसंगत तौर पर हल करने के लिए समर्पित हैं-से अपील की जाए कि वे वृहद संयुक्त मोर्चा गठित करें।

संयुक्त मोर्चे को निम्न कार्य सम्भालने चाहिए

पहला कार्य यह होना चाहिए कि जब तक जम्मू-कश्मीर समस्या का अन्तिम हल न निकल जाय तब तक यह संयुक्त मोर्चा कायम रहे जबकि जेके समस्या का हल निकालने के लिए एक साझा फार्मूला निकालने के बहुत अच्छे स्तर तक पहुँचाने की भरपूर कोशिश की जानी चाहिए।

दूसरा कार्य यह होना चाहिए कि जम्मू-कश्मीर में, विशेषतौर पर कश्मीर घाटी में सामान्य स्थिति स्थापित करने और उसे मजबूत बनाने के लिए भारत-पाकिस्तान की मदद की जाए ताकि वे विश्वास पैदा करने वाले कार्यों को अपना सकें और क्रियान्वित कर सकें। विश्वास पैदा करने वाले कार्यों की सूची तैयार करते समय संयुक्त मोर्चे को निम्न प्रस्तावों पर भी ध्यान देना चाहिए।

जम्मू कश्मीर में, विशेषतौर पर घाटी में सामान्य स्थिति कायम करने के लिए

(क) खाड़कुओं के संबंध में भारत द्वारा एकतरफा जंगबन्दी की जाए।

(ख) सभी राजनीतिक बन्दियों को रिहा किया जाय।

(ग) सभी बलों, खास करके भारतीय बलों द्वारा जेके में सभी मानव अधिकारों के हनन को रोका जाए।

(घ) कश्मीर घाटी में तैनात भारतीय सुरक्षा बलों के एक हिस्से को वापिस बैरकों में ले जाया जाए।

(ड़) संयुक्त रूप से सहमत भारत-पाक आयोग कायम किया जाए जो तीनों पक्षों यानि भारत, पाकिस्तान एवं खाड़कू ग्रुपों द्वारा मानव अधिकारों के उल्लंघन की जाँच करें तथा सभी पीड़ितों को या उनके परिवार में हुई मौत के मामले में संबंधित उल्लंघनकर्ता या अपराधी पक्ष से उचित मुआवजा दिलाने की सिफारिश करेगा। खाड़कू ग्रुपों द्वारा मानवाधिकारों के उल्लंघन के मामले में भारत और पाकिस्तान द्वारा संयुक्त रूप से मुआवजा दिया जाए।

भारत–पाक संबंधों में सामान्य स्थिति स्थापित करने के लिए

(क) सरहद पर मौजुदा भारत पाक जंगबन्दी को आगे भी लागू रखा जाए।

(ख) नियन्त्रण रेखा के दोनों तरफ सुरक्षा बलों को एक-एक किलोमीटर पीछे ले जाया जाए।

(ग) दोनों देशों की सैनिक टुकड़ियों द्वारा संयुक्त निगरानी की जाए।

(घ) तीन समझौतों-(1) सियाचीन (2) वुल्लर बैराज और (3) सरक्रीक, जिन पर करीब 5 साल पूर्व भारत तथा पाकिस्तान द्वारा प्राथमिक स्वीकृति दी हुई है–पर हस्ताक्षर करें।

(ड़) भारत और पाकिस्तान तथा जम्मू-कश्मीर और आजाद कश्मीर के बीच कुछ बन्द रास्तों (1) मुनावाव-खोखरापार, (2) फाजिल्का एवं इसके सामने वाला पाकिस्तानी शहर (3) अमृतसर-लाहौर (जो बहाल हो चुका है) (4) गुरुदासपुर-शक्करगढ (5) श्रीनगर-मुज्जफराबाद (6) पुँछ-पालन्द्री (वाया रावलकोट) (7) जम्मू-सियालकोट (वाया सुचेतगढ)

(च) समस्त सेना विहिन क्षेत्र में भारत पाक मैत्री पार्क तथा व्यापारिक केन्द्र स्थापित किये जाए।

(छ) सियाचीन के खाली किये गये पहाड़ों पर वैज्ञानिक रिसर्च केन्द्र स्थापित किये जाएं जिन्हें भारत-पाक संयुक्त रूप से चलाएं।

तीसरा कार्य यह होना चाहिए कि भविष्य में कोई भी वार्ता नई दिल्ली, इस्लामाबाद या दोनों से हो तो ऐसी स्थिति में संयुक्त मोर्चे को अपना दृष्टिकोण (यदि आम सहमति हो तो) या संयुक्त मोर्चे में सम्मिलित सभी ग्रुपों को अपना-अपना दृष्टिकोण (यदि मतभिन्नता हो तो) रखना चाहिए।

चतुर्थ कार्य यह होना चाहिए कि जम्मू-कश्मीर समस्या को हल करने के लिए कुछ प्रतिमानों का सुझाव दिया जाए। इस प्रकार की सूची तैयार करते समय संयुक्त मोर्चा निम्न प्रतिमानों पर भी सोच सकता है।

(क) जम्मू-कश्मीर की समस्या को हल करने के लिए युद्ध नहीं समझौते पर हस्ताक्षर करके सभी सैनिक तरीकों को नकारा जाए और शान्तिपूर्ण तरीके को अपनाया जाए।

(ख) विवाद में सम्मिलित तीनों पक्षों यानि, भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर की एकता और अखंडता को अक्षुण रखा जाए।

(ग) सभी प्रकार के साम्प्रदायिक और विभाजित करने वाले प्रस्तावों को रद्द किया जाए।

(घ) जम्मू-कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है या जम्मू-कश्मीर पाकिस्तान की श्वास नली है, ऐसी पूर्व निर्धारित धारणाओं से ऊपर उठा जाए।

(ड़) भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोग समान जैनेटिक कोड लिए हुए हैं इस बात को ध्यान में रखा जाए।

(च) दोनों देशों के लोगों को गरीबी, बेरोजगारी, निरक्षरता आदि एक जैसी वर्तमान समस्याओं से सामना है, इस बात को ध्यान में रखा जाए।

(छ) भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों के लिए साझा भविष्य का परिप्रेक्ष्य अपनाया जाए।

उपर्युक्त प्रतिमानों से शुरू करते हुए संयुक्त मोर्चे का पंचम कार्य यह होना चाहिए कि जम्मू-कश्मीर समस्या का ऐसा समझौतापूर्ण हल निकाला जाए जो संबंधित तीनों पक्षों (यानि, भारत, पाकिस्तान, एवं जम्मू-कश्मीर) की आकांक्षाओं और हितों में सामंजस्य बैठाता हो, उनके अपने-अपने राष्ट्रीय सम्मान को सुरक्षित रखता हो तथा उनके सम्पन्न भविष्य के विशाल द्वार को खोलता हो। दिनांक 17.3.04

* * * * *

विश्व सामाजिक मंच में सार्क देशों के कार्यक्रम तैयारी की लोक तदर्थ समिति (Agenda Preparing Peoples Adhoc Commitee of SAARC Countries in WSF) द्वारा जारी प्रेस नोट

विश्व सामाजिक मंच में सार्क देशों के कार्यक्रम तैयारी की लोक तदर्थ समिति में सम्मिलित दो राष्ट्रीय इकाइयों (यानि भारत और नेपाल) की एक बैठक जोधपुर में सम्पन्न हुई। इस बैठक में नेपाल से डॉ.डी.बी.सिंह और भारत से रूपायन भट्टाचार्य (पश्चिम बंगाल), सज्जनकुमार व घनश्याम डेमोक्रेट (राजस्थान) ने भाग लिया। बैठक में पंजाब से सुखदेवसिंह, पश्चिम बंगाल से डॉ. नमिता प्रधान एवं नेपाल से दिल्ली प्रसाद पर्यवेक्षक के तौर पर शामिल हुए।

इस बैठक में निम्नलिखित निर्णय लिये गए :–

1. जून 2004 के मध्य में समिति की तीन दिवसीय मिटिंग श्रीनगर या जम्मू (जैसी भी स्थिति हो) में आयोजित करने के लिए विश्व सामाजिक मंच में सार्क देशों के कार्यक्रम तैयारी की लोक तदर्भ समिति के सदस्यों को प्रस्ताव भेजा जाए। इन दो निर्धारित स्थानों पर किसी वजह से यह बैठक न हो पाये तो अन्य स्थान या तो जालन्धर (पंजाब) या दिल्ली होगा।

2. इस बैठक का एजेन्डा (कार्यक्रम) समिति के राष्ट्रीय घटकों या किसी भी व्यक्तिगत सदस्य द्वारा भेजे गये एजेन्डों में से न्याय आधारित सार्क व न्याय आधारित दुनिया बनाने के लिए सांझा कार्यक्रम छांटने का होगा।

3. लोक तदर्भ समिति की सभी राष्ट्रीय इकाईयों से यह निवेदन किया जाए कि वे निर्धारित समय में (यानि 20 अप्रैल तक) न्याय आधारित सार्क व न्याय आधारित दुनिया

कायम करने के बारे में अपने विचार भेजे और संयोजक महोदय उन विचारों को लोक तदर्थ समिति के सदस्यों को 30 दिन में जारी करें।

उपर्युक्त वर्णित विश्व सामाजिक मंच में सार्क के कार्यक्रम तैयारी की लोक तदर्थ समिति का गठन सार्क के 6 देशों (यानि, भूटान, नेपाल, श्रीलंका, पाकिस्तान, बंगलादेश व भारत) के प्रतिनिधियों की 20 जनवरी 2004 को मुम्बई में सम्पन्न हुई बैठक में हुआ था। गहन प्रयासों के बावजूद मालदीव के प्रतिनिधियों से सम्पर्क नहीं किया जा सका।

समिति के सदस्यों के नाम निम्नलिखित हैं–

भूटान–1. श्री डी.एस. काफले 2. श्री टिक्का बास्तोला 3. श्री डी.पी. काफले

नेपाल–4. डा. डी.बी.सिंह 5. श्री मैतालाल गुरूंग 6. श्री विष्णुप्रसाद तिमिल सिना

श्रीलंका–7. फादर एस गुई डे 8. श्री एस.के. चन्द्राशेगरन 9. श्री मेगाला शनमुगम

पाकिस्तान–10. मौलाना ओबेदुल्ला भुट्टो 11. श्री अब्दुल अजीज अब्बासी 12. श्री गुलाम फरीद अवान

बंगलादेश–13. श्री फजल हुसैन बादशा 14. श्री अमृता बरूआ 15. श्री मुशाहित अहमद

भारत–16. श्री रूपायन भट्टाचार्य (पश्चिम बंगाल) 17. श्री सज्जनकुमार हनुमानगढ़ (राजस्थान) 18. श्री घनश्याम डेमोक्रेट, जोधपुर (राजस्थान)

घनश्याम डेमोक्रेट, संयोजक
विश्व सामाजिक मंच में सार्क देशों के कार्यक्रम तैयारी की लोक तदर्थ समिति
23/864, चौपासनी हाउसिंग बोर्ड,जोधपुर (राजस्थान)
फोन : 0091-291-2715471
E-mail : sajjan_nhcpm@rediffmail.com
29-01-2004

* * * * *

मजदूरों की मूलभूत एवं दिन-प्रतिदन की समस्याओं का मूल कारण

उपरोक्त कथित समस्या का कारण पूँजी के मौजूदा दो गलत सिद्धान्तों (क) मुक्त बाजार नेतृत्व वाली पश्चिमी उदारवादी आर्थिकता और (ख) राज्य निर्देशित मार्क्सवादी आर्थिकता के दो दोषपूर्ण नजरियों में निहित है। उपर्युक्त वर्णित दो सिद्धान्तों के प्रमुख सूत्र निम्न हैं।

उदारवादी और मार्क्सवादी दोनों सिद्धान्त समाज में पूंजी को बहुत मूल्यवान वस्तु मानते हैं। यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि इन दोनों सिद्धान्तों को मानने वाले समाज की सम्पन्नता और प्रगति को पूँजी व प्रति-व्यक्ति आय की वृद्धि दर तथा सम्पूर्ण पूँजी की मात्रा में वृद्धि से मापते हैं। दुनियां में प्रत्येक उदारवादी और मार्क्सवादी सरकार (यानि, सभी देशों की सरकारें) उपर्युक्त सिद्धान्त का अनुसरण करती हैं। इन दोनों सिद्धान्तों का वैश्विक चरित्र वैचारिक और प्रशासनिक दोनों तौर पर प्रत्येक मनुष्य को अधिकतम पूँजी(या धन) कमाने की प्रेरणा प्रदान करता है। प्रत्येक मनुष्य की अधिकतम धन कमाने की प्रवृत्ति का सार्वत्रिक चरित्र मानव समुदाय के सामाजिक पक्ष की पूर्णतया अनदेखी

करता है और इस प्रकार मानव समुदाय को एक अर्द्ध मानव झुण्ड में बदल देता है जहाँ प्रत्येक अपने लिए जिन्दा रहता है किसी ओर के लिए नहीं।

दोनों सिद्धांत मानव समुदाय के स्वभाव की एकतरफा परिभाषा प्रस्तुत करते हैं जहाँ एक ओर कारपोरेट धारणा इंगित करती है कि 'मनुष्य स्वभाव से ही स्वार्थी है' (मुक्त बाजार आर्थिकता के जनक एडम स्मिथ) द्वारा सूत्रबद्ध किया गया। वहीं दूसरी ओर मार्क्सवादी धारणा मनुष्य को सामाजिक प्राणी होना चारित्रित करती है। दोनों मनुष्य के वास्तविक स्वभाव को नजरअंदाज करती है, जबकि मनुष्य एक जैव-सामाजिक प्राणी है जिसके दो बुनियादी पहलू है यानि सामाजिक के साथ-साथ व्यक्तिगत।

दोनों सिद्धान्त पूँजी के वास्तविक उत्पादनकर्ता के संबंध में गलत धारणा प्रस्तुत करते हैं। जहाँ मार्क्सवादी धारणा पूंजी को मजदूरों के अतिरिक्त मूल्य के रूप में यानि, अपने काम के दौरान मजदूरों द्वारा पैदा किया गया अतिरिक्त मूल्य जो उसकी मजदूरी के अलावा होता है (जिसे पूंजीपति हड़प लेता है) या दूसरे शब्दों में मजदूरों द्वारा पैदा किया गया अतिरिक्त मूल्य) जिसे पूंजीपति अपने पास रख लेता हैं वहीं इसके विपरीत उदारवादी सिद्धान्त चालाकी से इसे पूँजी की देन के रूप में चिन्हित करता है तथा उसके अनुसार पूँजी अपने आप में तब तक कुछ भी पैदा नहीं कर सकती जब तक पूंजीपतियों द्वारा संगठित उत्पादन प्रक्रिया के दौरान उसको (यानि पूंजी को) काम में न लिया जाए। इस प्रकार, जहाँ मार्क्सवादी सिद्धान्त मजदूर को पूंजी निर्माता बनाता है वहीं उदारवादी सिद्धान्त पूंजीपति को पूंजी का निर्माता होना दर्शाता है।

दोनों सिद्धान्त पूंजी के प्रबन्ध प्रक्रिया का मिथ्या वर्णन करते हैं। जहाँ पूंजीवादी सिद्धान्त पूँजी पैदा करने की प्रक्रिया के प्रबन्ध एवं नियन्त्रण का एकमात्र अधिकार पूंजीपति को देता है वहीं मार्क्सवादी सिद्धान्त इस कार्य को राज्य (यानि राजनीतिज्ञों एवं अफसरशाहों से गठित) को सौंप देता है।

इस प्रकार पूंजी पैदा करने की प्रक्रिया के प्रबन्ध और नियन्त्रण में मजदूरों व आम आदमी की कोई भूमिका होती है या उनका कोई अधिकार होता है, इसको ये दोनों सिद्धान्त नकारते हैं। दोनों सिद्धान्त पूँजी के नियन्त्रण में मजदूर की अधिनस्थ स्थिति बना देते हैं।

दोनों सिद्धान्त राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने को अपना तत्काल एवं स्थायी कार्य मानते हैं क्योंकि राजनीतिक सत्ता अधिकतम धन कमाने की प्रक्रिया का मुख्य औजार है।

मजदूर समस्याओं के पूरक कारण

विभिन्न पूरक कारण : भिन्न-भिन्न किस्मों के राजनीतिज्ञों, ट्रेड युनियन नेताओं, नये और पुराने रूढ़ीवादी विचारों के प्रणेताओं तथा कॉरपोरेट व्यवस्था के चलाने वालों द्वारा अनुसरण की जाने वाली बहुत सी मिथ्या एवं एकतरफा धारणाओं और व्यवहार में निहित है। संक्षेप में ये निम्न है, 'आधुनिक समय में मजदूर वर्ग मानव समुदाय का एकमात्र मुक्तिदाता है', 'श्रम और पूंजी एक दूसरे की विरोधी शक्तियां हैं' 'प्रबन्धक हमेशा मजदूर विरोधी होते हैं' 'मजदूरों को अपनी माँगों से ही संबंध रखना चाहिए न कि अपनी उत्पादकता से' 'बहादुर ट्रेड युनियन नेताओं की आवश्यकता है जो कम्पनी के उच्चस्थ अधिकारियों

पर गरज सकें,' 'ट्रेड् युनियनों को राजनीतिक पार्टियों से संबद्ध रहना चाहिए', 'ट्रेड् युनियनों में व्यक्तिगत समस्याओं पर अधिक जोर देना चाहिए,' 'ट्रेड युनियनों को धार्मिक तथा जातीय एजेन्डा पर गठित किया जाना चाहिए' इत्यादि।

पूंजी के गलत सिद्धान्त श्रमिकों व ट्रेड युनियनों को दोषपूर्ण रणनीति प्रदान करते हैं

पूंजी के दो रूढ़ीवादी सिद्धान्त एवं पूरक कारण पूंजी के बारे में गलत समझ प्रदान करता है यानि, यह समझ प्रदान करता है कि मानव समाज में धन या वित्तीय पूंजी का स्थान सर्वोच्च है। इस समझ ने सम्पूर्ण मजदूर आन्दोलन को तथा उनकी विभिन्न ट्रेड युनियनों को गलत रणनीति तैयार करने की ओर मोड़ दिया जो आम तौर पर निम्न है– (क) मानवीय दुनिया में पूँजी को उच्चतम घटनाक्रम स्वीकार करना एक गलत परिप्रेक्ष्य है, (ख) पूंजी के संबंध में श्रम का द्वितीय स्थान स्वीकार करना मुख्य गलत मुद्दा है, (ग) पूंजी-प्रभुत्वकारी है यह प्रतिपादित करना एक गलत प्रधान कार्य है, (घ) मजदूरों को ट्रेड युनियन नेताओं का आज्ञाधीन बनाना एक गलत कार्यशैली है तथा (ड़) ऐसा संगठनात्मक स्वरूप जो व्यक्तिगत आधार पर विरोधता को तूल दे एवं मजदूरों के बीच में फूट को प्रोत्साहित करें, गलत है।

स्पष्टतया, उपर्युक्त वर्णित पूंजी के दो गलत सिद्धान्त, विशेषतौर पर उनका मानवीय प्रेरक प्रभाव तथा उपर्युक्त उल्लेखित अनुचित मजदूर या ट्रेड युनियन रणनीति द्वारा मानव समाज के लिए कुछ गंभीर मुश्किलें खड़ी करना लाजमी था। इस मुश्किल ने अब दुनिया में पर्यावरण-मानवीय संकट की शक्ल में एक तरफ अपने-आपको अभिव्यक्त किया है और दूसरी तरफ अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर या ट्रेड युनियन आंदोलन में उदासी और हताशा में अपने-आपको अभिव्यक्त किया है।

पूंजी के सिद्धान्त की एक वास्तविक परिभाषा के सम्बन्ध में मामले को ठीक करने का प्रश्न और एक उचित मजदूर या ट्रेड युनियन रणनीति तैयार करना

अन्त में, परन्तु अत्यधिक महत्वपूर्ण बिन्दु जो प्रश्न के रूप में अब हमारे सामने हैं वह यह है कि पूँजी के सिद्धान्त की एक वास्तविक परिभाषा के संबंध में मसले को कैसे ठीक किया जाए तथा मजदूरों या ट्रेड युनियन आन्दोलन के लिए एक उचित रणनीति कैसे बनाई जाए। हमारी विनम्र राय है कि प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त पूंजी की तस्वीर को इसके सभी आवश्यक तत्वों सहित प्रस्तुत करता है और यह तस्वीर मजदूर या ट्रेड युनियन आन्दोलन से संबंधित एक उचित रणनीति तैयार करने का सुराग प्रस्तुत करती है।

पूंजी का प्रकृति–मानव केन्द्रित सिद्धान्त

उपर्युक्त उल्लेखित सिद्धान्त दृढ़ता से मानता है कि पूंजी एक 2-तरफा घटनाक्रम लिये हुए है यानि एक तरफ पर्यावरणीय संसांधन और दूसरी तरफ मानवीय संसाधान, यह इसलिए है क्योंकि पर्यावरणीय और मानवीय संसाधन से ही मानव समुदाय की जिन्दगी बनती है और इसके बिना मनुष्य जाति के लिए और अधिक महत्वपूर्ण कुछ भी नहीं है। इस प्रकार यह दृढ़ता से इस धारणा को रद्द करता है कि धन (या वित्तीय पूंजी) ही पूंजी है और ये दोनों संसाधन मानवीय शारीरिक और मानसिक श्रम के साथ प्राकृतिक कच्चे माल और तकनीकी औजारों के रूप में एकमत होकर ही मुद्रा (या वित्त) पूँजी को भी पैदा करता है। स्पष्टतया पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधन ही पूंजी, श्रम, तकनीक एवं कच्चे माल के सभी घटकों को उपलब्ध करवाते हैं। मुद्रा केवल विनिमय के माध्यम या बाजार के औजार

का प्रतिनिधित्व करती है। फिर भी, यह अत्यधिक महत्वपूर्ण कृत्य इसको इस योग्य नहीं बनाता है कि हमें समाज में सर्वोच्च वस्तु (यानि पूंजी) का दर्जा दिया जाए।

यह मानता है कि मनुष्य एक जैव-सामाजिक घटनाक्रम है जिसमें दो एकीकृत गुण व्यक्तिगत और सामाजिक समाये हुए हैं जिसमें प्रत्येक की अपनी उपयोगिता है। इन दो गुणों को अलग करना मानवजाति की संबंधात्मक वास्तविकता को विकृत करना है जो हमेशा बर्बादी की ओर ले जाता है। मौजूदा पर्यावरणीय-मानवीय संकट प्रेरणा के बारे मे प्रचलित एक पक्षीय मानवीय नजरिये के कारण भी है।

इसकी मान्यता है कि मानव समाज में सम्पन्नता और विकास को पर्यावरणीय संरक्षण और संवर्धन एवं मनुष्य के मानसिक और भौतिक कल्याण के स्तर को लगातर उच्च स्तर तक ले जाने के पैमाने से ही मापा जा सकता है। यह उद्देश्य ऐसे विकास मॉडल को अपनाने से प्राप्त किया जा सकता है जो अपने व्यवहार में पाँच मुख्य सिद्धान्तों -यानि, टिकाऊ पर्यावरण, समता (उचित समानता), उत्पादकता (वृद्धि या अधिक मुनाफा), पारदर्शिता एवं लोकतन्त्र को सभी तरह की सामाजिक गतिविधियों में सख्ती से लागू कर प्राप्त किया जाए और इस प्रकार प्रत्येक प्रक्रिया में मौजूद हर प्रकार की विशेष सुविधा और विशिष्ट अधिकारों को समाप्त किया जाए। यह राजनीतिक और व्यापारिक भ्रष्टाचार, कानून और व्यवस्था एवं मानवधिकारों का उल्लंघन, अपराधीकरण आदि के जरिए दुनिया के करीब 40 प्रतिशत वित्तीय संसाधनों के दुरूपयोग और फिजुलखर्ची को समाप्त करेगा। इसका आंकलन है कि विशेष सुविधा, एकाधिकार, भ्रष्टाचार, हिंसा तथा अपराध को समाप्त करके वित्तीय बचत के द्वारा काफी फंड पैदा किया जा सकता है। जिससे दुनिया के करीब 50 प्रतिशत वंचितों (गरीबी की रेखा से नीचे वाले गरीब और सीमान्त किसान, मध्यमवर्गीय बेरोजगार एवं इसी प्रकार के अन्य हिस्से) को आवश्यक एवं जायज सामाजिक सुरक्षा देने के मूल अधिकार की गारण्टी दी जा सकती है। एक समतावादी व्यवस्था कायम करने के लिए इसकी मान्यता है कि मानव समाज में आमदनी में फर्क 1:5 के अनुपात में होना चाहिए।

पूंजी का प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त मानता है कि कारपोरेट एवं राजकीय नेतृत्व वाले दोनों मॉडलों को निम्न कदम उठाकर एकाधिकार विहीन एवं पुनर्गठित किया जा सकता है।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनी के सभी शेयरों को साधारण शेयर बना दिया जाए। इन शेयरों के 2 प्रतिशत से अधिक के मालिक बनने की इजाजत किसी को भी न दी जाए। फिर भी विशेष मामलों में राज्य को साधारण शेयरों के एक चौथाई (जो अभी कॉरपोरेट क्षेत्र मे प्रचलित है) का मालिक बनने की इजाजत दी जा सकती है।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के प्रबन्ध को पूर्ण लोकतान्त्रिक बनाया जाए। इस संबंध में मैनेजमेण्ट बोर्ड में दो तिहाई प्रतिनिधित्व साधारण शेयर धारकों को दिया जाए। बाकी बचा एक तिहाई प्रतिनिधित्व संबंधित कम्पनी के मजदूरों के लिए सुरक्षित रखा जाए। मजदूर प्रतिनिधियों का चुनाव कर्मचारियों और मजदूरों दोनों से किया जाए। इन प्रतिनिधियों को साधारण शेयर धारकों के समान अधिकार होंगे।

* * * * *

चंडीगढ़ में 28–29 फरवरी, 2004 को दलित दासता विरोधी आन्दोलन (डी.डी.वी.ए.) द्वारा बन्धुआ मजदूरी व्यवस्था के उन्मूलन पर द्वितीय राष्ट्रीय सम्मेलन में आर पी सर्राफ द्वारा प्रस्तुत दस्तावेज

बन्धुआ मजदूरी व्यवस्था का उन्मूलन

(एक ऐसी व्यवस्था जो सत्ता के लालची राजनीतिज्ञों द्वारा रक्षित एवं संरक्षित है)

बन्धुआ मजदूर वह है जो कर्ज या किसी और बन्धन के कारण बलात् मजदूरी करने के लिए विवश है।

हम इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर चुके हैं, सारी दुनिया में लाखों लोग बलात् मजदूरी के अधीन हैं। संयुक्त राष्ट संघ के कार्यकारी ग्रुप द्वारा दासता की समकालीन किस्मों पर किये गए एक सर्वे (जो सन् 2000 में किया गया) के अनुमान के अनुसार दुनिया में करीब 2 करोड़ बन्धुआ मजदूरी करने को विवश हैं।

यद्यपि भारत में इस समस्या के परिणाम के संबंध में सरकारी आँकड़े कुछ नहीं उद्घाटित करते हैं परन्तु कुछ पश्चिमी गैर-सरकारी संगठनों द्वारा किये गये स्वतन्त्र सर्वे के अनुसार विभिन्न किस्मों में फंसे हुए बन्धक मजदूरों की संख्या करोड़ों में है जिन्हें अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों के तहत् बलात् मजदूर माना गया है। एक रिपोर्ट के अनुसार यह अमेरिका और यूरोप के कुछ देशों में भी मौजूद है।

बन्धुआ मजदूरी हजारों वर्षों से मौजूद रही है। दक्षिण एशिया में इसने अपनी जड़े जाति व्यवस्था में जमाई तथा यह आज भी कृषि-संबंधों में फल-फूल रही है। उपनिवेशवादी काल में अफ्रीका, कैरेबियन, दक्षिणी-पूर्वी एशिया के ब्रितानी बागानों में मजदूरों की भर्ती के लिए बन्धुआ मजदूरी के तरीके को ही काम में लिया गया है।

गरीबी और वंचितपन भी बन्धुआ मजदूरी के अस्तित्व का कारण है। प्राय: जमीन, शिक्षा या अन्य कोई भी जीने के संसाधन के अभाव में और मात्र जीने भर के लिए पैसे की आवश्यकता गरीब को बाध्य करती है कि वह कर्ज या अन्य बन्धन के बदले में अपने श्रम को बेचे।

बन्धुआ मजदूरों के साथ अवमानवीय व्यवहार होता है और वे जानवरों से भी बदत्तर जिन्दगी गुजारते हैं। जानवर कम से कम अपनी इच्छा से इधर-उधर घूमने के लिए स्वतन्त्र तो हैं परन्तु बन्धुआ मजदूरों को तो यह स्वतंत्रता भी नसीब नहीं है।

बन्धुआ मजदूरी एक दासता की किस्म है, भारत में इसे अवैद्य घोषित किया गया है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 23 बलात् श्रम के उपयोग को प्रतिबन्धित करता है। बन्धुआ मजदूरी व्यवस्था (उन्मूलन) अधिनियम 1976 ने बन्धुआ मजदूरी को गैर-कानूनी करार दिया है। यह कानून जिला मजिस्ट्रेट (कलेक्टर) को यह अधिकार देता है कि यदि बन्धुआ मजदूरी का कोई मामला इसके सामने लाया जाता है तो वह बन्धुआ मजदूरी से मुक्त करने और उसे पुनर्वास करने का आदेश दे सकता है। इस कानून के तहत जिला सर्तकता समन्वयक नियुक्त करने का अधिकार है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अन्तराष्ट्रीय मानवाधिकार सन्धियां हुई है जिस पर भारत के भी हस्ताक्षर हैं। इन सन्धियों में बन्धुआ मजदूरी पर प्रतिबन्ध है।

भारत में यद्यपि संवैधानिक तौर पर बन्धुआ मजदूरी को गैर-कानूनी घोषित किया हुआ है तथापि राजनीति ने कानून-लागू करने वाली भ्रष्ट एजेन्सियों द्वारा छुपे रूप में

बन्धुआ मजदूरी को जीवित रखा हुआ है जो जमींदारों और व्यापारिक निहित स्वार्थियों द्वारा लगायें गये बलात् मजदूरों के मामले में कवच-प्रदान करते हैं। अभी हाल के वर्षों में कुछ लोक समर्पित व्यक्तियों के समूहों ने बहुत से बन्धुआ मजदूरों को मुक्ति दिलाने में मदद की है।

यद्यपि श्रम मन्त्रालय ने केवल 13 राज्यों के 172 जिलों को बन्धुआ मजदूरी ग्रसित के तौर पर चिन्हित किया है, परन्तु 'बन्धुआ मुक्ति मोर्चा' एवं 'एशियाड' के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णयों की रोशनी में इस समस्या को जाँचा जाए तो किसी प्रकार का कोई शक-सुबा नहीं रहता है कि करीब-करीब सभी राज्यों/केन्द्र शासित प्रदेशों में बन्धुआ मजदूरी प्रचलित है।

कई राज्य यह विश्वास करके अपने आपको धोखा दे रहे हैं कि बन्धुआ मजदूरी उन्मूलन अधिनियम 1976 लागू होने से अपने क्षेत्र में सभी बन्धुआ मजदूर मुक्त हो गये हैं एवं बन्धुआ मजदूरी व्यवस्था का पूर्णतया उन्मूलन हो चुका है। कभी-कभी यह मानना मुश्किल हो जाता है कि ऐसी इन्कवारी दूसरों को भ्रमित करने के लिए जानबूझकर दिखाए जाने वाला भोलापन है या चालाकी। इन सभी संभावनाओं में बाद वाली संभावना ठीक मालूम पड़ती है।

देश के शासन में भ्रष्ट राजनीति और इसकी अनिवार्यताएं छाई हुई है। जिसमें सिविल सेवाएं अपनी स्वायतत्ता खो रही हैं इनकी अपनी पहल और यहाँ तक कि कर्तव्य, यानि कानून द्वारा डाली गई जिम्मेदारियां इस हद तक समर्पित हो गई है कि जब तक राज्य का मुख्यमंत्री साफ तौर पर अपनी राजनीतिक प्राथमिकताओं को इंगित नहीं कर दे तब तक आम तौर पर गरीब को और विशेषतौर पर गरीबों में भी सबसे गरीब (जैसे बन्धुआ मजदूर) को कोई न्याय नहीं मिल पाता है। यह अत्यन्त आवश्यक हो गया कि कोई ऐसे रचनातन्त्र की युक्ति निकाली जाए जो बन्धुआ मजदूरी व्यवस्था (उन्मूलन) अधिनियम 1976 तथा अन्य सभी कानून जिनका इस कानून पर असर है, जैसे न्यूनतम मजदूरी, समान वेतन, प्रवासी मजदूर, ठेका मजदूर आदि से संबंधित कानूनों के राज्य में लागू करने की समस्त जिम्मेदारी राज्य के राजनीतिक नेतृत्व पर डाली जा सके। लोकतान्त्रिक शासन के 55 वर्ष बाद, एकमात्र सबसे महत्वपूर्ण सुधार जिसकी हमें आवश्यकता है जिसका यह समय भी उचित है और जब प्रत्येक यह महसूस करता है कि लोगों ने मत देकर जिनको सत्ता दी है, उनकी कारगुजारियों के लिए उनको जवाबदेह बनाया जाना चाहिए ना कि अपने राजनीतिक उस्तादों के आदेशों को लागू करने वाले सिविल सेवकों को ही।

हालांकि केन्द्रीय एवं राज्य सरकारें गरीबी हटाने की वचनबद्धता को अपने शासन का मुख्य उद्देश्य होने का ढिंढोरा पिटती है परन्तु उन्होंने इस उद्देश्य खासकर गरीबों में सबसे गरीब के सन्दर्भ में जिसका प्रतिनिधित्व बन्धुआ मजदूर करता है–की वचन बद्धता को निभाने का कोई प्रमाण नहीं दिया है।इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि गरीबी हटाने के प्रयास में यह पहला सिद्धान्त स्थापित किया जाय कि सर्वप्रथम प्राथमिकता उन गरीबों को दी जानी चाहिए जो किसी बन्धन से मजबूर है जिसमें बच्चे शामिल हैं।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश के तहत) द्वारा गठित विशेषज्ञ ग्रुप की सन् 2001 की रिपोर्ट के अनुसार, ''बन्धुआ मजदूरी के प्रश्न से सफलतापूर्वक निपटने के लिए सबसे आधारभूत एवं एकमात्र सबसे महत्वपूर्ण व अति

आवश्यक यह है कि देश के राजनीतिक नेताओं में इसके प्रति एक ईमानदारी भरी इच्छा हो। इस ग्रुप को यह विश्वास है कि एकमात्र खामी यही है बन्धुआ मजदूरी व्यवस्था से संबंधित मुद्दों का अभाव वास्तव में विभिन्न राज्यों के राजनीतिक नेताओं की राजनीतिक इच्छा के अभाव का द्योतक है। नौकरशाहों के दिमाग में बन्धुआ मजदूरी कानून में इसे परिभाषित करने की समस्या के रूप में यह राजनीतिक इच्छा की कमी अपने आपको छिपा लेती है। बन्धुआ मजदूरी व्यवस्था को समाप्त करने के लिए राजनीतिक इच्छा और राजनीतिक वचनबद्धता का अभाव नौकरशाही को कुछ राज्यों में जैसे, कर्नाटक, पंजाब, व हिमाचल में इस व्यवस्था के अस्तित्व विद्यमान होने के तथ्य से इन्कार की ओर ले जाती है। कुछ अन्य राज्य बन्धुआ मजदूरी व्यवस्था के अस्तित्व को निपुणता से स्वीकार तो करते है परन्तु आभासित ऐसे करते हैं कि यह इतनी नगण्य है कि इस समस्या से निपटने के लिए अत्यावश्यक संवेदनशीलता के साथ-साथ प्रयास करने की जरूरत नहीं है। यह सोच इस कानून के कुछ अत्यधिक आवश्यक प्रावधानों को नहीं लागू करने की ओर ले जाती है। जैसे उनकी पहचान, मुक्ति, पुर्नवास तथा जिला एवं उप संभागीय सतर्कता समितियों का गठन एवं उनकी मिटिंगें बुलाना। हालांकि इस कानून ने कार्यपालक मजिस्ट्रेट को अपराधों पर विचार करने एवं सजा देने की शक्ति दी हुई है परन्तु दी हुई शक्ति के अनुसार कार्यपालक मजिस्ट्रेट मुश्किल से ही कभी लागू करते हैं। मुख्यत: उनके इस विश्वास को धन्यवाद है कि बन्धुआ मजदूरों के नियोजकों के विरूद्ध यदि वे कोई कार्य नहीं करते है तो यह उनके राजनीतिक उस्तादों को खुश करता है। इसलिए इस ग्रुप की पहली और प्रमुख सिफारिश यह है कि सर्वोच्च न्यायालय और राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को ऐसा उपाय निकालना चाहिए जिससे बन्धुआ मजदूरी कानून को तथा माननीय सर्वोच्च न्यायालय के आज्ञात्मक आदेश को लागू करने के लिए राज्यों के मुख्यमंत्रियों पर ईमानदारी से तथा व्यक्तिगत रूप से लागू करने की जिम्मेदारी डाली जा सके। इसको क्रियान्वित करने का एक तरीका यह है कि मुख्य सचिव की बनिस्पत मुख्यमंत्रियों को मजबूर किया जाए कि वह इस संबंध में राज्यों को भेजे गये सर्वोच्च न्यायालय के आज्ञात्मक आदेश पालना किए जाने का शपथ पत्र प्रस्तुत करें।''

मानव अधिकार का सार्वभौमिक घोषणापत्र जिसे 50 वर्ष पूर्व स्वीकृत किया गया था यह घोषणा करता है कि कोई भी गुलामी व पराधीनता में नही रहना चाहिए। यह विश्वास करना मुश्किल है कि महान् और दुखान्तिक शताब्दी बीत चुकी है फिर भी दासता और दास श्रम की समस्याएं अभी भी अनसुलझी पड़ी हैं। इन सबकी एक नाजुक भूमिका यह सुनिश्चित करने में है कि कर्ज से बन्धे हुए एवं दास मजदूरों के मुद्दे को मानव अधिकारों के ऐजेण्डे में पुन: प्रथम स्थान पर लाया जाए। बन्धुआ मजदूर वर्तमान समय की दासता का स्वरूप है-यह असंवैधानिक है, फिर भी अधिकांश देशों में विद्यमान है। राजनीतिक पार्टियों के अपने एजेण्डों में बन्धुआ मजदूरी का मुद्दा कोई मुद्दा नहीं है। मानवता की 2 करोड़ संख्या अभी भी एक ऐसी व्यवस्था के जाल में फंसी हुई है और पीड़ित है जो पुरुषों, महिलाओं और बच्चों को मानव अधिकार देने की अवज्ञा करती है और इन्कार करती है।

आज, कारपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था, इसके अपराध और सत्ता अभिमुखी राजनीति एवं इसकी सत्ता लालची और बेईमान, दोगले व्यवहार वाली पार्टियों और राजनेता बन्धुआ मजदूर व्यवस्था के मुख्य रक्षक बन गये हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि बन्धुआ

मजदूरी व्यवस्था का लागू रहना मुक्त बाजार आधारित कारपोरेट श्रम सिद्धान्त को मजबूत करता है जो यह समझता है कि श्रम एक माल है जिसे पूंजीपति की इच्छा पर कभी भी लगाया और हटाया जा सकता है, परन्तु कारपोरेट श्रम सिद्धान्त श्रम की वस्तुगत वास्तविकता को रद्द करता है कि श्रम एक मानव संसाधन है।बन्धुआ मजदूर व्यवस्था को समाप्त करने का एक मात्र रास्ता इसमें निहित है कि कपटी राजनीतिज्ञों को सभी सामाजिक क्षेत्रों में नकारा जाए तथा कारपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था के स्थान पर प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था लाई जाए। तात्कालिक सभी क्षेत्रों में मजदूरों का सशक्तिकरण (मानसिक व शारीरिक दोनों) करना एवं ट्रेड युनियनों में राजनीतिज्ञों का राजनीतिक नियन्त्रण समाप्त करना है।

* * * * *

नई दिल्ली की दो तरफा नई पहल
आज सभी सैनिक समाधान अप्रासंगिक
समझौताकारी रास्ता इक्कीसवीं सदी की मांग

I नई दिल्ली की दुधारी एकल पहल

एक तरफ जम्मू-कश्मीर के विवादास्पद प्रश्न पर नई दिल्ली द्वारा अब्बास अंसारी के नेतृत्व वाली हुर्रियत कान्फ्रेस को बातचीत के लिए बुलावा देना और दूसरी तरफ इस्लामाबाद के लिए प्रस्ताव रखना स्वागत योग्य है। परन्तु इन वार्ताओं से अधिक आशा नहीं रखी जा सकती है।

प्रथम, दोनों प्रस्तावों में से किसी भी प्रस्ताव पर कोई तैयारी नहीं की गई। नई दिल्ली ने दोनों से संबंधित पक्षों के संबंध में यह प्राथमिक जांच भी नहीं की, कि दोनों पक्ष किस स्थिति में है। इस प्रकार, उक्त प्रस्ताव नई दिल्ली की मात्र मनोगत इच्छा या कूटनीतिक आवश्यकता पर आधारित है। किसी भी गंभीर प्रस्ताव की यह शैली नहीं हो सकती है।

द्वितीय, जम्मू-कश्मीर समस्या पर अंसारी के नेतृत्व वाली हुर्रियत कान्फ्रेस को जो बातचीत के लिए प्रस्ताव दिया गया है वह नये लेबल (2003) वाला पुराना मसाला ही है। यह प्रस्ताव बार-बार पुनरावृति करने वाले उन्हीं दो बुनियादी पूर्व शर्तों को प्रस्तुत करता है जो पहले उन सभी ग्रुपों के समक्ष प्रस्तुत किये जा चुके हैं जिन्हें नई दिल्ली से वार्ता करने का मौका दिया गया था। प्रस्ताव निम्न हैं (क) वार्ता भारत संघ की एकता और अखण्डता के दायरे में होगी। (ख) वार्ता केवल स्वायत्तता के प्रश्न पर या केन्द्र और राज्य के बीच शक्ति के विकेन्द्रीकरण पर होगी। इन्हीं पूर्व शर्तों को हाल ही में जम्मू-कश्मीर समस्या पर नई दिल्ली द्वारा नियुक्त दो वार्ताकार–के.सी.पन्त और एन.एन. वोहरा, द्वारा की जाने वाली वार्ता के लिए सन्दर्भ बिन्दु बनाया गया–जिनका हुर्रियत कान्फ्रेस द्वारा बहिष्कार किया गया।

तृतीय, यह अपनी उक्त शर्त सहित प्रस्तावों को और जटिल बना देता है जब इसके साथ अवास्तविक तथा संकीर्ण कार्यशैली भी जोड़देता है, जो हुर्रियत कान्फ्रेस के एक ग्रुप को ही वार्ता के लिए निमन्त्रण देता है जबकि दूसरे ग्रुप यानि गिलानी के नेतृत्व वाली

हुर्रियत कान्फ्रेस को नजरअन्दाज करता है। इसके अलावा यह खाड़कुओं की उच्चाधिकार प्राप्त सेन्ट्रल कोंसिल की भी उपेक्षा करता है।

नई दिल्ली द्वारा पाकिस्तान से सम्बन्धित प्रस्ताव में वह अपनी कार्यसूची में जम्मू-कश्मीर समस्या को पूर्णतया छोड़ देता है, यह अच्छी तरह जानते हुए भी कि पाकिस्तान जेके समस्या को अपनी श्वास नली चरित्रित करता है तथा पाकिस्तान वार्ता के एजेन्डे में जब तक जम्मू-कश्मीर का सवाल शामिल नहीं कर लिया जाए जिससे भारत के साथ संबंध सामान्य बन सकते हैं तब तक वार्ता के लिए न तो पाकिस्तान तैयार होगा और ना ही वार्ता करेगा।

इस प्रकार नई दिल्ली की दो तरफा पहल तर्कसंगत और टिकाऊ आधार की खामियां लिए हुए है और इसलिए इससे ज्यादा कुछ निकलने वाला नहीं है।

आम तौर पर इस प्रकार के एकपक्षीय या सशर्त प्रस्ताव के पीछे ताकत और शक्ति निदेर्शित धारणा ही कारण होती है।

II आज सेना-केन्द्रित समाधान कारगर क्यों नहीं है

उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर भारत के समय में नये उभर रहे तथ्यों से मिलता है। पहला तथ्य वर्तमान पर्यावरण-मानवीय संकट (जो वर्तमान कारपोरेट व्यवस्था की देन) है। जहाँ एक तरफ सभी पर्यावरणीय स्रोत–उनके अपव्यय तथा अति उपयोग के कारण तेजी से क्षीण होते जा रहे हैं तो दूसरी और मानव संसाधनों को सामाजिक बुराईयों, जैसे असमानता,गरीबी, वंचितपन आदि के जरिये (मानसिक और भौतिक दोनों रूप से) दरिद्रता में धकेल दिया है। पर्यावरण-मानवीय संकट इतना गंभीर है कि इस खतरे के मुकाबले में सम्पूर्ण मानव समुदाय जब तक एक इकाई के रूप में एकबद्ध नहीं हो जाता है तब तक उपर्युक्त वर्णित खतरे का मुकाबला नहीं किया जा सकता है। स्पष्टतया, इस तरह के खतरनाक विराट संकट की माँग है कि सभी तरह की मानवीय टकराहटों को समाप्त किया जाए ताकि ऐसी घातक चुनौती का एकबद्ध होकर सामना किया जाए।

दूसरा तथ्य नई उभरी वैश्वीकरण की प्रक्रिया में अभिव्यक्त होता है जिसने पृथ्वी ग्रह को (मानसिक और भौतिक दोनों तरह से) एक इकाई में बदल दिया है यह मानव की मानसिक अन्तरक्रिया प्रकाश की गति से तथा भौतिक मेल-मिलाप ध्वनि से भी तेज गति से होने के कारण हुआ है। मानव की इस अभूतपूर्व मानसिक एवं भौतिक क्रिया-अन्तरक्रिया ने विभिन्न राष्ट्रीय राज्यों को अन्तरनिर्भर इकाई में एकबद्ध कर दिया है और इस प्रकार एक ढीले-ढाले और अस्पष्ट किस्म के एकल समाज की रचना हो रही है। इस नई विकसित अवस्था को वर्तमान वैश्विक कारपोरेट व्यवस्था (आम तौर पर अधिकांशत: विकसित देशों के शासक समूहों तथा खासतौर पर अमेरिका के शासक समूहों से गठित) के नेतृत्व द्वारा तुरन्त नियन्त्रण में ले लिया गया है ताकि मानवीय और भौतिक पर्यावरणीय वैश्विक साधनों पर अपनी पकड़ को बढ़ाया जा सके और उस पर शिकंजा कसा जा सके जिससे उनकी वित्तीय धन-सम्पत्ति उच्चतम सम्भव गति से बढ़ाई जा सके।

सभी कारपोरेट प्रक्रियाएं, खास तौर से पूंजी उत्पादक गतिविधियाँ जैसे, व्यापार, पूंजी निवेश और प्रसार, तकनीकी हस्तातंरण आदि ने हाल ही में वैश्विक चरित्र ग्रहण किया है इसने कारपोरेट शासकों पर दबाव डाला है कि वे सैनिक दुस्साहस का सहारा न लें ताकि कारपोरेट अधिकतम मुनाफे की प्रक्रिया में कोई विघ्न न पड़े। इस प्रकार वर्तमान

युद्ध उन्मुक्त कारपोरेट व्यवस्था के तहत भी सैनिक समाधाान का घटनाक्रम तर्कसंगत नहीं रहा है। यह युद्ध विरोधी रूख चल रहे सभी सशस्त्र संघर्षों, विशेषतौर पर जार्ज डब्ल्यू बुश (वर्तमान कारपोरेट व्यवस्था का शीर्षस्थ नेता) के नेतृत्व में चल रहे 'चिरस्थायी युद्ध' से स्पष्ट दृष्टिगोचर है। इस युद्ध ने न केवल अमेरिका के हितों को नुकसान पहुंचाया है बल्कि विश्व को एक और अधिक खतरनाक, असुरक्षित तथा अस्थिरता की ओर धकेला है।

III जम्मू कश्मीर समस्या के समाधान के लिए एक न्यायपूर्ण प्रस्ताव

उपर्युक्त विवेचन स्पष्टतया इंगित करता है कि विश्व पटल पर नये उभर रहे दृश्य में जम्मू-कश्मीर सहित प्रत्येक संघर्ष से उभरने के लिए एकमात्र रास्ता शान्ति और समझौते में निहित है तथा भले के लिए जरूरी है कि टकराहट का रास्ता छोड़ दिया जाए। अत: वर्तमान अवसर पर जम्मू-कश्मीर के मसले पर संबंधित तीनों पक्षों, यानि भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों के बीच वार्तालाप शुरू करने का उचित समय है। वार्ता की शुरूआत द्विपक्षीय हो या त्रिपक्षीय यह दो बड़े पक्षों यानि भारत व पाकिस्तान द्वारा तय किया जा सकता है।

विवाद का मुख्य पक्ष होने के कारण नैतिक तौर पर शान्ति प्रक्रिया की पहल करने की जिम्मेदारी नई दिल्ली पर आती है। यहाँ नई दिल्ली द्वारा ली गई तीन तरफा पहल यानि, कुछ महिनों के लिए एकपक्षीय जंगबन्दी की घोषणा, राज्य में हिंसा एवं मानव अधिकारों के उल्लंघन के स्तर में कमी लाना, तथा जम्मू-कश्मीर के विकास के लिए अतिरिक्त धन-राशि की स्वीकृति देना, संबंधित पक्षकारों के बीच गुत्थी-सुलझाने में मदद दे सकता है।

शांति के हितों की मांग है कि संबंधित तीनों पक्षों (भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों) को अपनी-अपनी धारणाओं और नीतियों पर गंभीरता से पुनर्विचार करना चाहिए। इन धारणाओं और नीतियों ने तीनों पक्षों को भारी नुकसान पहुंचाया है तथा जम्मू-कश्मीर के लोगों (खासतौर पर कश्मीरियों को)भयंकर तकलीफें उठानी पड़ी है। सम्पूर्ण जम्मू-कश्मीर उनकी अपनी-अपनी इकाई में शामिल होने के सन् 1947 के परिप्रेक्ष्य को छोड़कर भारत-पाक को चाहिए कि वे अब प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण अपनाएं जो उन पर यह जिम्मेदारी डालता है कि वे भारत पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोगों के बीच एक साझेदारी कायम करें। भारत को इस बात के लिए तैयार होना चाहिए कि वह अपने इस कठोर पक्ष को छोड़े कि जम्मू-कश्मीर भारत का एक अभिन्न अंग है, जबकि पाकिस्तान को इस बात के लिए तैयार करना चाहिए कि वह 1948-49 के संयुक्त राष्ट्र के प्रस्तावों के आधार पर समस्या के समाधान के अपने परम्परागत नारे का त्याग करें, जम्मू-कश्मीर के लोगों को इस वास्तविकता से सामंजस्य बैठाना चाहिए कि जम्मू-कश्मीर एक बहु-नस्ली इकाई है जिसमें किसी भी एक नस्ली समुदाय का पूर्ण बहुमत नहीं है और इसलिए आत्मनिर्णय एवं जनमतसंग्रह के नारों की इस मामले में कोई प्रासंगिता नहीं है। जम्मू-कश्मीर की गुत्थी को सामूहिक जवाब देने के लिए सभी पक्षों को तैयार रहना चाहिए। संबंधित पक्षों की अपनी-अपनी मानसिकता में बदलाव दक्षिण-एशिया के लिए और परिणामस्वरूप दुनिया के लिए अद्‌भुत कार्य कर सकता है।

शान्ति का उद्देश्य और आगे मांग करता है कि तीन तरफा सामाजिक सच्चाई पर विशेष ध्यान दिया जाए, जो निम्न है–

(क) ऐतिहासिक तौर पर भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोग एक हैं और उनके जेनेटिक कोड एवं पूर्वज समान हैं तथा वे एक ही बोली बोलते हैं और समान संस्कृति, आदत, मानदण्ड और रूपों की अनुपालना करते हैं।

(ख) आज के युग में दो राष्ट्रो में विभाजित होने के बावजूद इनको एक जैसी समस्याओं से सामना है, जैसे अपराधीकरण, कानून के राज का उल्लंघन, न्याय, हत्या, बढ़ते अपराध, अव्यवस्था एवं हिंसा, कमरतोड़ भ्रष्टाचार, असमानता, गरीबी, बेरोजगारी, बेघरबारता, सांस्कृतिक मानदण्डों का ह्रास, पर्यावरणीय स्रोतों जैसे हवा और पानी का ह्रास, प्रदूषण, पीने के पानी की घटती उपलब्धतता, भूमि क्षरण, वन-विनाश, जैव-विविधता को खतरा आदि। इस वैज्ञानिक युग के बावजूद भारत और पाकिस्तान दुनियां के सबसे गरीब देशों में सम्मिलित हैं तथा दोनों वित्तीय तौर पर बर्बाद हैं जिनके वित्तीय घाटे आसमान छू रहे हैं।

(ग) सार्क के रूप में नई उभर रही सामाजिक पहचान के साथ अब वे सांझे भविष्य के दौर में प्रवेश कर चुके हैं। उपर्युक्त तथ्यों के मद्देनजर यह देखा जा सकता है कि जम्मू-कश्मीर की समस्या का न्यायपूर्ण और वास्तविक समाधान ऐसे फार्मूले में निहित है जिससे संबंधित तीनों पक्षों के हित मेल खाएँ। हमारी राय में, निम्न तीन सूत्री प्रस्ताव तीनों पक्षों यानि,भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के साथ-साथ विश्व समुदाय की आकांक्षाओं और हितों की सेवा करेगा।

(अ) भारत और पाकिस्तान को अपनी-अपनी राष्ट्रीय आंकाक्षाओं और हितों में सन्तुलन जम्मू-कश्मीर को भारत-पाक सहराज्य में संवैधानिक सम्प्रभुसत्ता देने और जम्मू-कश्मीर की सुरक्षा और विदेश मामले दोनों द्वारा संयुक्त रूप से सम्भालने में निहित है।

(ब) जम्मू-कश्मीर के लोगों और विशेषकर कश्मीरियों की क्षेत्रीय आंकाक्षाओं और हितों से विदेश और सुरक्षा मामलों के अलावा सभी क्षेत्रों में सम्प्रभुसत्ता सौंपकर जम्मू कश्मीर को स्वतन्त्र राज्य के रूप में संवैधानिक स्वीकृति देकर पुरा किया जाए।

(स) जम्मू-कश्मीर के विभिन्न नस्ली-क्षेत्रीय समुदायों की नस्ली आकांक्षाओं और हितों को प्रत्येक इकाई को अधिकतम सम्भव संवैधानिक स्वायतता प्रदान कर पुरा किया जाए। जम्मू-कश्मीर के राज्य स्तरीय मामलों में राज्य प्रमुख, उच्च-न्यायालय, चुनाव आयोग, मानव विकास आयोग, पर्यावरणीय आयोग और योजना आयोग इत्यादि शामिल हों।

संबंधित तीन पक्षों की नस्लीय क्षेत्रीय और वैश्विक इच्छाओं की संतुष्टि के अलावा उपर्युक्त फार्मुला इन पूर्व पक्षों (यानि संबंधित तीनों पक्ष) और विश्व मानवीय समुदाय की नई विकास संभावनाओं का द्वार खोलता है। यह इनको कई अन्य तरह से भी लाभ पहुंचाता है। विश्व समुदाय के लिए भी यह लाभदायक है क्योंकि विश्व के अत्यधिक खतरनाक वैश्विक ज्वलन्त बिन्दु को शान्त करता है। यह दक्षिण एशिया समुदाय को इसके सामाजिक, आर्थिक विकास, सांझा बाजार, संयुक्त सुरक्षा आदि में आई रूकावटों को दूर कर लाभ पहुंचाता है।

और आगे यह भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों को आर्थिक विकास में समान भागीदार बनाकर लाभ पहुंचाता है, इस साझेदारी में भारत और पाकिस्तान

प्रत्येक समान वित्तीय राशि प्रदान करके तथा जम्मू-कश्मीर राज्य प्राकृतिक संसाधनों का अंशदान देकर हिस्सेदार बनते हैं।

जम्मू कश्मीर के लोगों को दोनों देशों की नागरिकता एवं दोनों के साथ व्यापार करने की सुविधा मिलने से अतिरिक्त लाभ भी मिलता है। 7.11.2003

* * * * *

भाजपा नेतृत्व वाली एन डी ए को सत्ता से हटाना स्वागत योग्य कदम

सोनिया का पदत्याग प्रशंसनीय

फिर भी संयुक्त प्रगतिशील गठजोड़ (यूपीए) का कारपोरेट-समर्थक कार्यक्रम कहीं नहीं पहुँचायेगा

क्योंकि ऐतिहासिक अनुभव 'कारपोरेट पूँजी के मानवीय चेहरे वाले सिद्धान्त' को रद्द करता है

I

हमारी अवधारणा

इस लेख में उपर्युक्त वर्णित तीन मुद्दों वाला शीर्षक हमारी अवधारणा को प्रस्तुत करता है। जिस पर इस लेख में विचार-विमर्श हुआ है। हमारी अवधारणा प्रत्येक वस्तु को प्रकृति-मानव दृष्टिकोण से देखती है। जिसका मानना है कि मानव समाज में पूंजी (यानि सर्वोत्तम वस्तु) का निर्माण केवल प्रकृति और मानव संसाधनों से होता है,जबकि मुद्रा अपने सभी स्वरूपों (निवेश सहित) में और हर समय विनिमय की माध्यम मात्र है।

(अ) एक स्वागतयोग्य परिवर्तन

भाजपा नेतृत्व वाले राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठजोड़ को सत्ताच्युत करने का स्वागत हमारे द्वारा किया जाना इन तथ्यों से निकलता है कि यह सत्ता परिवर्तन एक फासिस्ट, सैन्यवादी, धार्मिक रूढ़ीवादी एवं अमेरिका समर्थक कॉरपोरेट पूंजीवादी सरकार की बनिस्पत एक उदार संयुक्त प्रगतिशील गठजोड़ सरकार के हाथ में आया है जिसमें उदारवादी कॉरपोरेट पूँजीवादियों का बहुमत है तथा जिसे सुधारवादी साम्यवादी समूहों का समर्थन हासिल है। चुनाव का जनादेश किसी पार्टी या समूह को सत्ता सौंपने की बजाए मात्र सत्ता परिवर्तन का ही है।

(ब) एक प्रशंसनीय कदम

सोनिया के पदत्याग का यद्यपि मुख्य कारण व्यक्तिगत असुरक्षा रही है फिर भी यह प्रशंसनीय कदम है क्योंकि कोई कॉरपोरेट जगत का नेता मुश्किल से ही ऐसा कोई कदम उठाता है। यदि यह शुद्धत: स्वेच्छा का कदम होता तो यह कदम काँग्रेस पार्टी के अंदर नेता चुने जाने की प्रक्रिया से पूर्व उठाया जाता।

(स) संयुक्त प्रगतिशील गठबन्धन के कार्यक्रम के हश्र का हमारा आकलन

संयुक्त प्रगतिशील गठबन्धन के कार्यक्रम के हश्र (यानि, यूपीए का कार्यक्रम कहीं नहीं पहुँचायेगा) के बारे में हमारा आकलन दो तथ्यों से उभरा है। प्रथम तथ्य यह है कि

कॉरपोरेट एवंम साम्यवादी मॉडल के समाजशास्त्रीय और विकास के सिद्धान्त एक तरफा और नुकसानदायक हैं और दूसरा तथ्य कॉरपोरेट और साम्यवादी दो व्यवस्थाओं के ऐतिहासिक अनुभव में निहित है।

(i) कारपोरेट पूंजी का समाजशास्त्रीय सिद्धान्त

दोनों समाजशास्त्रीय सिद्धान्त (यानि कारपोरेट एवं साम्यवादी) यह मानते हैं कि हमारे ग्रह पर और किसी हद तक ब्रह्माण्ड में भी मानवजाति एक केन्द्रीय घटनाक्रम हैं। यह धारणा स्थापित करती है कि मानव समाज एवं उसके अन्दर हर वस्तु के एकमात्र रचियता लोग हैं। प्रकृति की व्यवस्था में मानव के अद्भुत घटनाक्रम होने की समझ मनुष्य को अपनी इच्छानुसार प्रकृति के सभी घटनाक्रमों के दोहन करने को प्रेरित करती है। यह समझ पूर्णतया पर्यावरणीय आयामों को नकारती है जिसके बिना मनुष्य का अस्तित्व ही संभव नहीं है तथा सामाजिक समानता की मानवीय इच्छा को पूर्णतया नजरअन्दाज करती है। जिसके बिना मनुष्य सामाजिक तौर पर वंचित महसूस करता है।

(ii) कारपोरेट पूंजी के विकास का सिद्धान्त

इनके (यानि, कारपोरेट एवम् साम्यवादी) विकास के सिद्धान्तों के संबंध में स्थिति यह है कि दोनों मानव समाज का मुख्य उद्देश्य पूंजी, धन व सम्पदा को हासिल करना मानते हैं। तथा सामाजिक विकास, सम्पन्नता एवं तरक्की का आधार इनकी वृद्धि होने में देखते हैं।

हालांकि, वर्तमान वास्तविकता और मानव समाज का सम्पूर्ण इतिहास दर्शाता है कि हमारी दुनिया में मानवीय संसाधन और प्राकृतिक संसाधन मानव समाज में हर चीज के निर्माण (जिसमें धन, सम्पदा व पूँजी भी शामिल है) के दो बुनियादी कारक हैं। बिना मानवीय और पर्यावरणीय कारकों (जिनसे मानव समाज की जिन्दगी और उसकी हर चीज बनी हुई है) के धन सम्पदा व पूंजी निर्माण या कारपोरेट व साम्यवादी व्यवस्था की प्रगति एक इंच भी आगे नहीं खिसक सकती है। इसलिए प्रकृति-मानव केन्द्रित नजरिए के अनुसार पूँजी एक दो तरफा घटनाक्रम है यानि, पर्यावरणीय संसाधन और मानव संसाधन। जबकि धन और सम्पदा केवल मात्र विनिमय का साधन है और यह मानव समाज में कोई सर्वोत्तम वस्तु नहीं है।

जैसा कि सभी जानते हैं कि पूँजीवाद का मुख्य उद्देश्य पैसा बनाना है तथा साम्यवाद की भी यही स्थिति है। साम्यवादी सिद्धान्त के रचियता मार्क्स ने पूँजी की धारणा को सर्वोत्तम महत्व दिया और दास-कैपिटल तीन खण्डों में (तीन हजार पृष्ठों से अधिक) में लिख डाला। पूँजी के स्त्रोत पर कॉरपोरेट धारणा से भिन्नता रखते हुए उन्होंने भी पूंजी की परिभाषा धन के रूप में ही की। जहाँ मार्क्स यह मानता है कि पूँजी मजदूरों के अतिरिक्त मूल्य से पैदा होती है जिसे पूँजीपति उसकी उचित मजदूरी अदा न करके शोषण के जरिए इकट्ठा करता है। वहीं कॉरपोरेट पूंजीवाद यह मानता है कि पूंजी उत्पादन की प्रक्रिया में पूँजी निवेश, तकनीक, श्रम एवं कच्चे माल के लगने से पैदा होती है तथा इस उत्पादन प्रक्रिया में पूँजी के मालिक की मुख्य भूमिका रहती है। मार्क्सवादी सिद्धान्त केवल-मात्र एक ही तत्व (यानि श्रम) को पूंजी का स्त्रोत मानने पर केन्द्रित है जबकि कारपोरेट सिद्धान्त उपरोक्त सभी पहलुओं पर जोर देता है एवं पूंजी के मालिक को केन्द्रीय स्थान पर रखता है। परन्तु दोनों इस बात पर एकमत है कि पूँजी धन या धन के संग्रह और विशाल सम्पदा

की द्योतक है। इसलिए मार्क्सवाद और कारपोरेट पूँजीवाद दोनों सामाजिक विकास, सम्पन्नता और प्रगति को धन जुटाने, वृद्धि दर को बढ़ाने या पूँजी विस्तार के तौर पर परिभाषित करते हैं, और प्रत्येक चीज को चाहे वह पर्यावरणीय या मानवीय मुद्दा हो उसको गौण स्थान पर धकेलते हैं।

वाजपेयी की 'उज्ज्वल भारत' की धारणा भी बजट में 8% वृद्धि दर पर आधारित थी जबकि मनमोहनसिंह द्वारा प्रस्तावित बजट सन् 2004-2005 में 8% वृद्धि दर साझा न्यूनतम कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य होना प्रगट करता है।

कारपोरेट पूँजीपति या कारपोरेट राजनीतिज्ञों का उद्देश्य अधिकतम पैसा (व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों) बनाने के अलावा कोई अन्य उद्देश्य नहीं है क्योंकि अधिकतम पैसा बनाना उनके अधिकतम विकास, सम्पन्नता और प्रगति को अभिव्यक्त करता है और यह अधिकतम पैसा मानवीय और पर्यावरणीय संसाधनों के अधिक दोहन और दुरुपयोग से ही बन सकता है।

(iii) कारपोरेट पूँजी के 'मानवीय चेहरा' होने का नारा केवल एक दिवास्वप्न है

दुनिया में कॉरपोरेट एवं साम्यवादी नमूनों के 200 वर्षों के ऐतिहासिक अनुभव ने इस तथ्य की पुष्टि की है कि कारपोरेट पूँजी के 'मानवीय चेहरे' वाला लुभावना नारा केवल मन के लड्डू खाना और दिवास्वप्न देखना है क्योंकि वर्तमान संसार में किसी भी देश और किसी भी क्षेत्र में यह दिवास्वप्न पुरा नहीं हुआ है। उदाहरणार्थ, द्वितीय विश्व-युद्ध की विजयी शक्तियों द्वारा सन् 1945 में दुनिया के आर्थिकता को विकसित करने तथा गरीब देशों से गरीबी हटाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं विश्व बैंक की स्थापना की थी, परन्तु ये विकासशील देशों (जिनकी संख्या लगभग 120 है) में एक भी सम्पन्न या गरीबी से मुक्त मॉडल का निर्माण नहीं कर सके। क्या हमारे वर्तमान प्रधानमंत्री जो नरसिम्हाराव सरकार में वित्तमंत्री रहे थे और सन् 1991-96 में बाजार समर्थक सुधार लागू किए, वे अब दावा कर सकते हैं कि पूरे देश में एक भी जिला गरीबी से मुक्त हो सका है? वास्तव में मुक्त बाजार वाले सुधारों के पिछले डेढ़ दशक में भारत में गरीबों की संख्या दुगुनी हो गई है। आगे, हमारे समय का मौजूदा अन्तर्राष्ट्रीय तौर पर मान्य सर्वोत्तम कारपोरेट मॉडल (यानि अमेरिका) जो दुनिया की एक तिहाई आमदनी (यानि, 33 ट्रिलियन डॉलर में से करीब 11 ट्रिलयन डालर) हड़प लेता है। जो असमानता और अन्याय का सर्वोच्च नमूना है जहाँ आबादी के 1 प्रतिशत लोग अमेरिका के 95 प्रतिशत लोगों की आमदनी से अधिक सम्पति के मालिक हैं और वहाँ 1 करोड़ लोग गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बसर करते हैं। हमारी नजर में वर्तमान परिस्थितियों में कॉरपोरेट पूँजीवादी मॉडल एक महाशक्ति वाला कारॅपोरेट पूँजीवादी मॉडल में तो विकसित हो सकता है परन्तु गरीबी-समर्थक मॉडल की तरफ वापिस नहीं लौट सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि कॉरपोरेट पूँजी विकास के अपने ही नियमों का अनुसरण करती है, यानि, अधिकतम शोषण तथा मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों को अधिकतम निचोड़ने के नियम का पालन करती है। पिछले 200 वर्षों से अधिक के कारपोरेट पूँजीपतियों (जिसमें 70 वर्षों का साम्यवादी मॉडल तथा 55 वर्षों का भारतीय नमूना) के व्यवहार द्वारा प्रदत्त निम्न तथ्यों पर नजर डालने पर यह आसानी से देखा जा सकता है।

II

पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों की स्थिति के बारे में 200 वर्षों से अधिक पूँजीवादी इतिहास का अनुभव

200 वर्षों से अधिक के कारपोरेट पूँजीवादी (जिसमें 70 वर्ष का वैश्विक साम्यवादी शासन का समय शामिल है) इतिहास पर नजर डालें और देखें कि आज हमें किस तरह की दुनिया मिली है ।

(क) संसाधनों पर नियन्त्रण

थोड़े से विकसित देश जिनकी आबादी दुनिया की आबादी का 15 प्रतिशत है। आज दुनिया के भौतिक और वित्तीय संसाधनों के 80 प्रतिशत भाग पर नियन्त्रण किए हुए हैं जबकि 20 प्रतिशत भाग से भी कम संसाधनों पर दुनिया के 85 प्रतिशत लोगों का नियन्त्रण है जो 130 विकासशील देशों में रहते हैं।

सन् 1993 में दुनिया के 10 प्रतिशत गरीब लोगों की आमदनी दुनिया के सबसे धनवान 10 प्रतिशत लोगों की आमदनी का केवल 1.6 प्रतिशत भाग है। दुनिया के सबसे धनवान 1 प्रतिशत लोगों की आमदनी सबसे गरीब 57 प्रतिशत लोगों की आमदनी के बराबर है। अमेरिकी आबादी के सबसे धनवान 10 प्रतिशत लोगों (यानि करीब 2.5 करोड़ लोग) की संयुक्त आमदनी दुनिया के सबसे गरीब 43 प्रतिशत लोगों (करीब 200 करोड़ लोग) की आमदनी से अधिक है। *(संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट 2001)*

सन् 2000 में ब्राजील में 9 अरबपति थे जिनकी संयुक्त संपत्ति 20 अरब डालर थी, भारत में 9 अरबपति थे जिनकी संयुक्त सम्पति 23 अरब डालर थी, मलेशिया के 5 अरबपतियों के पास 12 अरब डालर, मैक्सिकों के 13 अरबपतियों के पास 25 अरब डालर और सउदी अरब के 5 अरबपतियों के पास 41 अरब डालर संपति थी।

दुनिया के 200 अधिकतम धनवान लोगों की परिसम्पत्ति दुनिया की कुल आबादी के 41 प्रतिशत लोगों की संयुक्त आय से अधिक है।

संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट (1996) में इस व्यवस्था का फायदा उठाने के योग्य लोगों और दूसरी तरफ इसके प्रभाव के तहत पीड़ित होने वाले मजबूर लोगों के बीच खतरनाक ध्रुवीकरण की निंदा करते हुए वैश्वीकरण के नियमों को पुन: लिखने की आवश्यकता पर जोर दिया है।

दुनिया के मात्र 20 प्रतिशत लोग 86 प्रतिशत भाग व्यक्तिगत उपभोग पर खर्च करते हैं।

यूरोप में करीब 1100 करोड़ डॉलर मूल्य की आइसक्रीम का उपभोग किया जाता है, जबकि अमेरिका और यूरोप में डिब्बा बन्द भोजन पर 1700 करोड़ डॉलर खर्च आता है। यूरोप और अमेरिका में अन्य 1200 करोड़ डालर सुगन्धित द्रव्यों (इत्र, तेल, फुलेल इत्यादि) पर खर्च किया जाता है। जबकि जापान व्यापारिक मनोरंजन पर 3500 करोड़ डालर खर्च करता है। *(संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट 1996)*

रिपोर्ट कहती है कि विश्व के अधिकतम धनी केवल 3 लोगों की कुल सम्पत्ति अल्पतम् विकसित 48 देशों की संयुक्त जी डी पी (सकल घरेलु उत्पाद) के बराबर है। विश्व के अधिकतम धनी 225 लोगों की संयुक्त सम्पति 1 ट्रिलियन (1000 अरब) डालर है जो 47 प्रतिशत गरीब लोगों (जिनकी संख्या 250 करोड़ बनती है) की कुल आय के

बराबर है विश्व के अधिकतम धनी 32 लोगों की सम्पत्ति दक्षिण एशिया (भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान और मालदीव) तथा ईरान व अफगानिस्तान की जी डी पी से अधिक है। *(1996 यू.एन.एच डी रिपोर्ट)*

विश्व बैंक विकासशील देशों की हल्की तस्वीर पेश करता है। यह कहता है कि 'ट्रिकल-डाउन इकानॉमिक्स' (आर्थिकता को धीरे-धीरे गरीबों तक पहुँचाना)–एक व्यवहार जिसमें आशा की गई कि धनवानों के लिए टेक्सों में कमी समाज में गरीबों को लाभ पहुँचाएगी–का सिद्धान्त काम नहीं करता।

विश्व के 1 प्रतिशत दुनिया के 75 प्रतिशत सबसे गरीब लोगों की आय से ज्यादा प्राप्त करते हैं। *(2002 यू एन एच डी रिपोर्ट)*

उच्च आय वाले देशों में रहने वाले दुनिया के 20% लोग विश्व सकल घरेलु उत्पाद का 86% हिस्सा रखते हैं जबकि नीचे के 20% लोगों के पास मात्र 1% हिस्सा है।

(ख) आय में फर्क

लगभग 120 करोड़ लोग प्रतिदिन 1 डालर से कम पर गुजारा करते हैं (1993 पी पी पी यू.एस. डालर) और 280 करोड़ लोग प्रतिदिन 2 डॉलर से कम पर गुजारा करते हैं। यह वंचितपन विकासशील देशों तक ही सीमित नहीं है। ओ ई सी डी (आर्थिक सहकारिता एवं विकास संगठन) देशों में 13 करोड़ लोग गरीब है।

रूचिकर बात यह है कि एक विशेषज्ञ के अनुमान के अनुसार नई दिल्ली के मुगल बादशाहों (जैसे जहांगीर, शाहजहाँ आदि) की आय अपनी सत्ता के उच्चतम् काल में वर्तमान कीमतों के अनुसार 15000 रुपये वार्षिक हुआ करती थी।

89 देशों में से 77% या तीन चौथाई से अधिक देशों की प्रतिव्यक्ति विकास दर (1960-1980) की अवधि से (1980-2000) की अवधि में लगभग 5% के बिन्दु तक गिर गयी। केवल 14 देश यानि 13% देशों में (1980-2000) की अवधि में (1960-80) की अवधि से प्रति व्यक्ति विकास दर बढ़ी। *(वाशिंग्टन डी सी आधारित आर्थिक और नीतिगत अनुसंधान केन्द्र, सी ई पी आर की रिपोर्ट)*

विश्व के 200 सबसे धनवान व्यक्तियों की संयुक्त सम्पत्ति 1999 में 11 खरब डालर से अधिक थी, बिल गेट्स के पास 90 अरब डॉलर की सम्पत्ति है। आज भी वह विश्व के 60 अरब डॉलर की सम्पत्ति के साथ पहले नम्बर पर है।

(ओ ई सी डी-अन्तराष्ट्रीय मुद्रा कोष-विश्व बैंक का संयुक्त राष्ट्र प्रकाशन)

आज, 150 करोड़ लोग एक डालर प्रतिदिन से कम पर जीते है जो 1987 में 120 करोड़ थे। अनुमान है कि इस न्यूनतम आय पर रहने वालों की संख्या 2015 में 190 करोड़ हो जायेगी।

यह उद्घाटित करती है कि अमीर और गरीब के बीच खाई भी चौड़ी हुई है। 1970 और 1985 के बीच विश्व के गरीबतम् देशों की औसत प्रतिव्यक्ति आय धनवान देशों की तुलना में 3.1% से गिरकर 1.9% हो गई। *(विश्व विकास रपट 1999)*

एक सुप्रसिद्ध आर्थिक इतिहासकार ए मेडीसन बताते हैं कि सबसे धनवान और सबसे गरीब देशों के बीच फर्क सन् 1820 में लगभग 3 एवं 1 के अनुपात में था, यह सन् 1913 में 11 एवं 1 का 1950 में 35 एवं 1, 1973 में 44 एवं 1, 1992 में 72 एवं 1 का तथा 1997 में यह अनुपात लगभग 74 एवं 1 का था।

सबसे अमीर व्यक्ति और सबसे गरीब व्यक्ति के बीच विभेद आज दुनिया में धरती हिलाने वाला है। हमारी दुनिया का सबसे अमीर अमेरिकन बिल गेट्स कुल 80 अरब डालर का स्वामी है।

1999 में बिल गेट्स की सम्पति 90 अरब डालर थी। आज भी वह विश्व के धनवान व्यक्तियों में पहले नम्बर पर है। दूसरा सबसे धनवान आदमी लेरी एलिशन 47 अरब डालर और पाल एलन 28 अरब डालर की सम्पति का मालिक है। विश्व में लगभग 482 अरबपति हैं इसके उलट विश्व के 43 अल्प विकसित देशों में रहने वाले 58 करोड़ 20 लाख लोगों की संयुक्त आय 1999 के दौरान 146 अरब डालर थी।

अमीर और गरीब देशों के बीच कुल राष्ट्रीय उत्पाद की खाई बढ़ी है। जबकि अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया और इंग्लैण्ड का प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय उत्पाद क्रमश 29080 डालर, 19640 डालर, 20870 डालर, 20650 डालर है।

श्रीलंका और भारत का प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय उत्पाद क्रमश: 800डालर और 370 डालर है। *(सभी सन् 1997 के आंकड़े)*

(ओ ई सी डी, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं विश्व बैंक की संयुक्त राष्ट रपट)

(ग) मानवीय वंचितपन

विकासशील देशों में रहने वाले 460 करोड़ लोगों में से 85 करोड़ अशिक्षित हैं, लगभग 100 करोड़ लोगों को पीने का साफ पानी नहीं मिलता, 240 करोड़ लोगों को मूलभूत शौच सुविधा नहीं है। लगभग 32 करोड़ 50 लाख लड़के एवं लड़कियां स्कूल नहीं जाते। 5 साल से कम आयु के 1 करोड़ 10 लाख बच्चे संक्रामक बीमारियों से प्रतिवर्ष मर जाते हैं जो प्रतिदिन 30 हजार से ज्यादा है।

ओ ई सी डी देशों में 13 करोड़ से अधिक लोग गरीब है, 3.4 करोड़ बेरोजगार हैं और व्यस्क कार्यकारी अशिक्षा की औसत दर 15% है। *(संयुक्त राष्ट्र विकास रपट 2001)*

इस वर्ष (1997-98) में विश्व उपभोग 240 खरब डॉलर है यह आंकड़ा 1975 का 6 गुणा है। लेकिन विकासशील देशों में 4 अरब 40 करोड़ लोगों का 3/5 भाग ऐसा सामाजिक सामुदायिक जीवन जी रहा है, जो मूलभूत शौच सुविधा से वंचित है। विश्व बैंक के मुताबिक लगभग 1/3 भाग बिना पीने के स्वच्छ पानी के 1/4 बिना मकान के 1/5 आधुनिक स्वास्थ्य सेवा से दूर है, 1/5 भाग बच्चे प्राथमिक शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाते। लगभग 140 करोड़ लोग दुनियां में निपट गरीब हैं। भूख तथा भूख जनित बीमारियों से वार्षिक 1 करोड़ 80 लाख लोग मर जाते हैं।

5 साल से कम आयु के 1 करोड़ 30 लाख बच्चे प्रतिवर्ष कूपोषण से मर जाते हैं। लगभग 60,000 औरतें प्रतिवर्ष गर्भकाल तथा प्रसव के समय मर जाती है, जो चोटों से होने वाली संख्या का 30 गुणा है। *(युनीसेफ)*

1 अरब 70 करोड़ लोगों को साफ पानी और 3 अरब को शौच सुविधा हासिल नहीं है। अकेले शहरों में 60 करोड़ लोग या तो बिना मकान के हैं या 'जीवन और मौत के चुनौतीपूर्ण वातावरण' में रह रहे हैं। (मानवीय आवास के लिए संयुक्त राष्ट्र केन्द्र) अभी के 2 अरब 60 करोड़ काम करने योग्य लोगों में से 1 करोड़ 20 लाख पूर्णतया बेरोजगार है। और 68 करोड़ अर्द्धबेरोजगार है। अपराध कई गुणा तथा बहुआयामी हो गया है।

अकेले अमेरिका में 1 करोड़ 10 लाख आपराधिक मामले पुलिस में दर्ज है।

(घ) असमानता–क्षेत्रवार

अमेरिका में अमीरों एवं गरीबों के बीच शर्मनाक असमानता विद्यमान है। वास्तव में 'वेतनों की असमानता' में अमेरिका दुनिया का नमूना है। जहाँ अमेरीकी आबादी का 1% भाग वहां के 95% लोगों की सम्पत्ति से ज्यादा सम्पत्ति रखता है। अमेरिका की गरीबी और अन्य देशों की गरीबी में सिर्फ फर्क यह है कि अमेरिका के गरीबों का जीवन स्तर यूरोप अथवा एशिया के गरीबों से उच्च स्तर का है। अमेरिका में एक व्यक्ति की आय औसत तौर पर यूरोप के एक व्यक्ति से 45% तथा जापान से 20% अधिक है। फिर भी अमेरिका में आज एक करोड़ लोग गरीबी में रहते हैं।

प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय उत्पाद (जी एन पी) में अमीर और गरीब देशों का बड़ा फर्क है। जहां अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया और इंग्लेण्ड का प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय उत्पाद क्रमश: 29080 डालर, 19640 डालर, 20870 डालर तथा 20650 डालर है जबकि श्रीलंका और भारत का प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय उत्पाद क्रमश: 800 डालर और 370 डालर है।

आर्थिक सहयोग एवं विकास के लिए संगठन (ओईसीडी) देशों में 13 करोड़ से अधिक लोगों की आय कमजोर है, 3 करोड़ 40 लाख लोग बेरोजगार है और व्यस्क कार्यकारी अशिक्षा दर औसत 15% है।

सन् 2000 में ब्राजील में 9 अरबपति थे जिनकी संयुक्त सम्पति 20 अरब डालर थी। भारत के 9 अरबपतियों की 23 अरब डालर, मलेशिया के 5 की सम्पति 12 अरब डालर, मैक्सिकों के 13 की 25 अरब डालर तथा सउद्री अरब के 5 अरबपतियों की सम्पति 41 अरब डालर थी। *(2001 संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट)*

पिछले दो दशक से अधिक समय में दक्षिण अमेरिका ने विकास दर में ठहराव अनुभव किया है और अफ्रीकन देश नियोजित आय देख चुके हैं। केवल विकासशील देश जिन्होंने पिछले दो दशकों में अच्छा किया है वे वो एशियन देश हैं जिन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष (आईएमएफ) तथा विश्व बैंक द्वारा सुझाए गए मानदण्डों को नकारा। *(वाशिगंटन डीसी आधारित आर्थिक नीति अनुसंधान केन्द्र, सी ई पी आर)*

(ड़) विश्व पर्यावरण की हालत

सन् 2002 की संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यू एन ई पी) की रिपोर्ट चेतावनी देती है कि शहरों के विस्तार, जंगलों के विनाश, खेतों के क्षरण और पानी की बढ़ती मांग अनिवार्य तौर पर बहुत सारे देशों में मानवीय एवं पारिस्थिकीय स्वास्थ्य को चुनौती है।

रिपोर्ट कहती है कि कृषि के विकास से प्राकृतिक भूभाग में कमी, वनस्पतियों की समाप्ति, मिट्टी में नमक की वृद्धि और जंगली जीवों के आवास में कमी होती है।

पहले से ही पांच अरब एकड़ भूमि, अमेरिका और कनाडा के संयुक्त क्षेत्रफल के बराबर, मानवीय गतिविधि से पतित हो गई है, इसमें से छठा भाग 'बहुत ही ज्यादा या पतन की हद' पार कर गया है। 80% से अधिक पतन पानी और हवा के जरिए हुआ है।

यह आगे कहती है कि विश्व के बहुत से क्षेत्र सन् 2032 तक अपने क्षेत्र की जैव-विविधता और तटीय पारिस्थितिकी को बुरे तरीके से बर्बाद होते हुए देखेंगें।

(च) दक्षिण एशिया में पर्यावरणीय संसाधनों की स्थिति

दक्षिण एशिया अपने प्राकृतिक संसाधनों के आधार में भयंकर क्षरण का पिछले 5 दशकों से ज्यादा समय से गवाह है। तेजी से जंगल कटाई के परिणामत: क्षेत्र का जंगल

क्षेत्र भूमि क्षेत्र का 17.5% रह गया है। घोर प्राकृतिक विपदा, जैसे बाढ़ और सूखा से कुछ क्षेत्र उसके पारिस्थितिकी पर दबाव से सीधे जुड़े हुए हैं। मालद्वीप और बांग्लादेश सहित सभी समुद्र तटीय क्षेत्रों पर ग्रीन हाउस गैसों के कारण ग्लोबल वार्मिंग का गंभीर परिणाम देखा गया है तथा ये अति असुरक्षित क्षेत्र बनते जा रहे हैं।

(छ) दक्षिण एशिया में मानवीय संसाधनों की स्थिति

दक्षिण एशिया में मानव संसाधनों के पतन के संबंध में स्थिति यह है कि 40 करोड़ दक्षिण एशियावासी हमेशा भूखे सोते हैं। 30 करोड़ अन्य गरीबी की रेखा से थोड़ा ऊपर जीते हैं, आधे से ज्यादा दक्षिण एशियावासी अनपढ़ हैं 1/3 भाग बिना घर के, 2/5 अल्प रोजगार, 1/3 साफ पीने के पानी तथा अन्य स्वास्थ्य सुविधाओं से वंचित हैं तथा 3/4 भाग को शौच सुविधा उपलब्ध नहीं है। 5 साल से कम 53% बच्चे बाल श्रमिक हैं। महिलाओं की स्थिति अति शोचनीय है। विश्वभर में दक्षिण एशिया लिंग आधारित हिंसा में सबसे आगे हैं।

लोगों की औसत वार्षिक आय 309 डालर है जो कि सब सहारा अफ्रिकी लोगों की 555 डालर से कम है, सब सहारा अफ्रिका 2 दशक पहले विश्व का सबसे पिछड़ा इलाका था।

देशों के हिसाब से विश्व में राष्ट्रीय आय भी सबसे कम है। भूटान की 180 डालर एवं भारत की 360 डालर है।

हाल ही की विश्व बैंक रिपोर्ट (के.टी. 21.05.04 पेज-7) कहती है कि दक्षिण एशिया 1 अरब 40 करोड़ लोगों का क्षेत्र है लेकिन यह विश्व के 40% गरीब लोगों का घर है। पिछले दशक के बाद से इस इलाके के देशों ने कुल घरेलु उत्पाद (जीडीपी) दर टिकाऊ स्तर पर हासिल की है तथा आर्थिक सुधार और सामाजिक विकास में प्रगति हुई है। फिर भी मानव की बेहतरी के मानदण्डों में दक्षिण एशिया को गंभीर चुनौती है।

क्षेत्र में 45% की उच्च अशिक्षा दर है। विश्व की 1/3 मातृत्व मृत्यु यहां होती है। पांच साल से नीचे आयु के लगभग आधे बच्चे कूपोषण का शिकार हैं एवं रिपोर्ट कहती है कि मानव विकास में पर्यावरण पतन, अपर्याप्त बुनियादी संरचना तथा सामाजिक बहिष्कार बाधा है।

(ज) एक असमान और अन्यायपूर्ण मानव समाज व्यवस्था

आज, मानव समुदाय एक अनुचित एवम् अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के तहत जी रहा है जहां धन बल और विशेषाधिकार के जरिए शक्तिशाली कमजोर पर और अमीर-गरीब पर प्रभुत्व जमाएं बैठा है तथा वैश्विक स्तर पर एवम् साथ ही साथ राष्ट्रीय स्तर पर धन बल और विशेषाधिकार न्याय और सत्य के स्वीकृत मापदण्ड बने हुए हैं।

प्रथमतया, विश्व की तमाम संस्थाएं सिद्धान्त और कार्यप्रणाली में प्रभुत्व एवम् विशेषाधिकार लिए हुए हैं, उदाहरणतया, संयुक्त राष्ट्र और उसकी ऐजेन्सियां 1945 के चार्टर से संचालित हो रही हैं जिसमें दुनियां के पाँच सर्वाधिक सैनिक शक्तियों यानि अमेरिका, चीन, ब्रिटेन, फ्रांस और रूस को सुरक्षा परिषद में वीटो पावर तथा स्थायी सदस्यता प्रदान की हुई है। स्पष्टतया, ऐसी विशेषाधिकार आधारित कानून व्यवस्था पूर्णतया भेदभावभरी एवम् अन्यायपूर्ण व्यवस्था है क्योंकि यह संयुक्त राष्ट्र के शेष 180 सदस्यों की भूमिका को नगण्य कर देती है। नैतिक और कानूनी तौर पर यह राजनीतिक

समानता सार्वत्रिक मताधिकार के एक इकाई-एक वोट के मापदण्ड तथा प्रत्येक राष्ट्र राज्य के मानव अधिकार के विश्वव्यापी सिद्धान्त को नकारता है। जबकि संयुक्त राष्ट्र भी विभिन्न राष्ट्र राज्यों के मामलों में मानवाधिकार उल्लंघनों के आधार पर दखलन्दाजी करता है तो इसे नये युग के मुताबिक प्रासंगिक बनाने के लिए तर्कसंगत आधार पर अपने आपको क्यों नहीं पुनर्गठित करना चाहिए।

द्वितीयत:, इसी प्रकार की अतर्कसंगत और अलोकतान्त्रिक शैली दो अन्तर्राष्ट्रीय वित्तिय संस्थाओं- आई एम एफ और विश्व बैंक में मौजूद है, जहाँ प्रत्येक सदस्य की मत क्षमता उसकी आर्थिक शक्ति के आधार पर तय की जाती है। इस प्रकार ये संस्थाएं निश्चय ही वित्तिय विकसित देशों विशेषतौर पर अमेरिका जिसकी कुल मत शक्ति 26 प्रतिशत होने के कारण इन्हीं के द्वारा शासित होती हैं।

तृतीय, नव सृजित अन्यायपूर्ण सीटीबीटी व्यवस्था वास्तव में पाँच बड़ी आणविक शक्तियों को आणविक हथियारों पर एकाधिकार देती हैं–इस प्रकार यह उन्हें दुनिया का अजेय शासक बनाती है।

चतुर्थ, मुट्ठीभर विकसित देश जिनमें दुनियां की आबादी का मुश्किल से 15 प्रतिशत हिस्सा निवास करता है जबकि यह आबादी दुनियां के 80 प्रतिशत भौतिक और वित्तिय संसाधनों पर नियन्त्रण रखती है। दूसरी तरफ दूनियां के 85 प्रतिशत लोग जो 130 विकासशील देशों में रहते हैं, 20 प्रतिशत से भी कम भौतिक और वित्तिय संसाधनों पर नियन्त्रण रखते हैं।

पाँचवां, दुनिया की आधी आबादी महिलाओं की है जो सारी दुनिया में बुरे बर्ताव और असभ्य व्यवहार की शिकार बनी हुई हैं।

षष्ठम, प्रत्येक देश में राष्ट्रीय स्थिति मौजूदा वैश्विक व्यवस्था से बहुत अधिक भिन्न नहीं है। 190 से अधिक देशों के बीच उनकी विभिन्न भौतिक परिस्थितियों, एतिहासिक पृष्ठभूमि, सामाजिक, आर्थिक स्थिति में भिन्नता के बावजूद उनके सामाजिक जीवन की गुणवत्ता में विशेषकर विकासशील देशों के बीच काफी समानताएं हैं मसलन, करीब-करीब सभी देशों (विकसित या विकासशील) की राजनीतिक प्रक्रिया धन शक्ति के प्रभुत्व में रही है। विकासशील देशों के मामले में धन शक्ति के साथ-साथ भुजबल और आदिम मानदण्डों का भी प्रभुत्व है। आम तौर पर आर्थिक प्रक्रिया, गला-काटू प्रतियोगिता, सट्टेबाजी और काले धन से संचालित है। बेईमान मानदण्ड हर कही सामान्य व्यवहार का अंग बन गये हैं।

सप्तम, करीब-करीब प्रत्येक देश में कुछ मुट्ठीभर लोग बहुसंख्या से अधिक विशेषाधिकार लिए हुए हैं। सभी जगह पर, संसदीय विशेषाधिकार कानून के तहत विधायकों को आम कानूनों से निर्धारित छूट प्राप्त है।

विकासशील देशों में सत्ताधारी ग्रुप प्राय: खुलेआम कानूनों का उन्मुक्तता से दुरूपयोग करते हैं। दुनियां में न्यायपालिका कही पर भी लोगों के प्रति जवाबदेह नहीं है। इसके बनिस्पत न्यायालय की मानहानि का कानून सर्वव्यापी है। न्यायालय की मानहानि का कानून न्यायाधीशों को अपने प्रत्येक आलोचक का मुंह बन्द करने की शक्ति प्रदान करता है। प्रशासकीय गुप्तता का कानून करीब-करीब सभी देशों में मौजूद है जो अफसरशाही को सभी तरह के लेन-देन को छुपाने का अधिकार प्रदान करता है और इस

प्रकार अफसरशाही जनता पर हावी रहती है। दुनिया भर में कानून लागू करने वाली एजेन्सियों को विस्तृत शक्तियां हासिल हैं। तीसरी दुनिया के देशों में यह ऐसे बर्ताव करती हैं जैसे ये खुद ही कानून हैं। हर कहीं कानून अमीरों और कानूनों का उल्लंधन करने वालों का पक्ष लेता है तथा गरीबों और वंचितों के विरुद्ध पूर्वाग्रहों से ग्रसित है।

अष्ठम, आज अमेरिका दुनियां का निर्विरोध पुलिसमैन है। अफगानिस्तान में अकेले ही सैनिक कार्यवाही करने के बाद यह और अधिक एकपक्षीय एवम् युद्धकारी हो गया है। अब इसने अपने ही द्वारा आरोपित आतंकवाद के विरुद्ध चिरस्थायी युद्ध की घोषणा कर दी है, जिसे अभी तक न तो संयुक्त राष्ट्र ने और न ही किसी सदस्य राष्ट्र ने परिभाषित किया है। इसके आक्रमण के प्रथम लक्ष्य में तथाकथित ''शैतान राज्य'' - यानि इराक, ईरान, उत्तरी कोरिया, इत्यादि शामिल हैं- जो संयुक्त राष्ट्र के सदस्य हैं और जिन्हें किसी भी तर्क के आधार पर आतंकवादी चरित्रित नहीं किया जा सकता। अमेरिका द्वारा घोषित आक्रमण की नव योजना को दुनिया भर में रद्द किया गया है जिसमें चीन, रूस और युरोपीय समुदाय शामिल है। लेकिन अभी तक अमेरिका इस नई युद्ध परियोजना को शुरू करने के प्रति नरम नहीं पड़ा है।

नवम्, अमेरिकी नेतृत्व वाला कारपोरेट क्षेत्र गंभीर संकट में है, कारपोरेट मुनाफे घट रहे हैं। बहुत सी शीर्षस्थ कारपोरेट कम्पनियां, विशेषतौर पर अमेरिका में बड़ी धोखाधड़ी और घोटालों में लिप्त पाई गई हैं। कारपोरेट दावा करते है कि वे पैसा पैदा करने तथा सम्पन्नता और तरक्की करने वाली एक सामाजिक संस्था है उसके इस दावे का भांडाफोड़ हो गया है।

दसवाँ, कारपोरेट आधारित वैश्विक विकास की प्रक्रिया को अद्वितीय संकट का सामना है जिससे मानवजाति एक बहुत ही गंभीर चुनौतिपूर्ण संकट के दौर से गुजर रही है। अमीर और गरीब का भेद इतना बढ़ गया है कि जिसका अंदाज भी लगाया नहीं जा सकता। गरीबी और बेरोजगारी तेजी से बढ़ रही है। सैनिक बजट द्रुतगति से बढ़ रहा है–जो टिकाऊविकास के स्रोत्रों को बहा ले जाता है, जबकि सामाजिक विकास पर खर्च कम होता जा रहा है। दुनिया में भ्रष्टाचार, अपराध, हिंसा तथा आत्महत्याओं की मात्रा काफी बढ रही है जिसमें राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र तथा उनके प्रशासक इसकी चपेट में आ चुके हैं। मानवाधिकार का उल्लंघन, अल्पसंख्यकों और दूसरे कमजोर तबको के विरुद्ध भेदभाव तथा महिलाओं के खिलाफ अत्याचार बढ़ रहे हैं। नस्ली तनाव ऊचाइयों पर हैं। भिन्न-भिन्न किस्म की रूढीवादी धारणाएं, नई और पुरानी दोनों लोगों को भ्रमित और विभाजित कर रही है।

आज, हम ऐसी दुनिया में हैं जहां भ्रष्ट और अपराधी राजनीतिज्ञ, काला बाजारी और जी हजूरिये बेईमान व्यक्ति सामाजिक जिन्दगी पर प्रभुत्व जमाए हुए हैं।

(i) वैज्ञानिक एवं सामाजिक विशेषज्ञों के विचार

सन् 2000 में विश्व के ख्यातिनाम वैज्ञानिकों ने अपने वक्तव्य में जोर दिया कि मानव समुदाय यदि शीघ्र ही ग्रीन हाऊस गैसों के उत्पादन को नहीं रोकता तो वैश्विक गर्मी से 21वीं सदी के अन्त तक पृथ्वी जीव-जगत के लिये गैर टिकाऊ बन जायेगी। टिकाऊ विकास पर 2002 का संयुक्त राष्ट्र जोहान्सबर्ग सम्मेलन ने पर्यावरण विनाश तथा मानवीय संसाधनों के पतन की घातक समस्या को स्वीकार किया।

संयुक्त राष्ट के विश्व वन्य जीव कोष (डब्ल्यु डब्ल्यू एफ) का 2002 के अध्ययन ने चेतावनी दी है कि यदि मानव समुदाय (खास कर धनीदेश तथा धनी लोगों) ने अति उपभोग तथा बर्बाद करने वाली अपनी जीवन शैली को नहीं बदला तो हमारी पृथ्वी 2050 तक मानव जीवन के लिये गैर टिकाऊ बन जायेगी।

2003 में विश्व के प्रमुख वैज्ञानिकों के रोम सम्मेलन ने सावधान किया कि यदि पर्यावरण पतन खराब करने की प्रक्रिया को कम समय में ही सुधारा नहीं गया तो आने वाले समय में पृथ्वी जीवों के रहने के लिये पूर्ण रूप से गैर टिकाऊ बन जायेगी।

जनवरी, 2004 के 'नेचर' विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित एक लेख कहता है कि ''आने वाले 50 वर्षों में जलवायु परिवर्तन के कारण पृथ्वी के एक चौथाई जानवर और वनस्पतियों के गायब होने की संभावना है।'' अन्य वैज्ञानिक विशेषज्ञ भी जो अपने आपको किसी समय सीमा में नहीं बांधते, पर्यावरणीय परिस्थिति को बहुत ज्यादा खतरनाक स्वीकार करते है।

वर्ल्ड वॉच वांशिगटन जनवरी, 2004 की रिपोर्ट ने उल्लेख किया है कि विश्व के अमीर और उच्च मध्यम वर्गों (जो विश्व का 1/4 भाग है) की अति उपभोग और गैर टिकाऊ जीवन शैली मानव समुदाय को एक खतरनाक संकट की तरफ धकेल रही है।

संयुक्त राष्ट्र की मार्च 2004 की रिपोर्ट कहती है कि सूचना प्रोद्योगिकी का 'धुआं रहित उद्योग' एक बड़ा वैश्विक प्रदूषक है। इसके अनुसार 24 किलोग्राम एवं 27 सेन्टीमीटर की कैथोड़ किरण ट्यूब मानीटर का एक कम्प्यूटर को 230 किलोग्राम जैविक ईधन, 22 किलोग्राम का रसायन और 1500 किलोग्राम पानी–कुल 1.8 टन पदार्थ की जरूरत होती है।

इग्लैण्ड के डोरचेस्टर में पारिस्थितिक और जल विज्ञान के केन्द्र प्राकृतिक पर्यावरण अनुसंधान परिषद की मार्च 2004 की रिपोर्ट कहती है :''जीवन के इतिहास में एक षष्टम् महाविलुप्ती की घटना अब हमारे ऊपर पुन: होने जा रही है। जीवों एवं वनस्पतियों की जीवित प्रजातियों की ऐसी महा विलुप्तियाँ समय-समय पर पहले हो चुकी है। इग्लैण्ड के डोरचेस्टर केन्द्र कहता है कि पूर्व की पाँच विलुप्तियाँ प्राकृतिक कारणों से हुई है जबकि छठी विलुप्ति का कारण मानव क्रिया कलाप लगता है।

III

वर्तमान मानव समाज के दो मूलभूत असन्तुलन

उपरोक्त तथ्य दर्शाते हैं कि वर्तमान मानव समाज दो गंभीर समस्याओं से ग्रसित है।

प्रथमतया, तथ्य दर्शाते है कि हमारा जैव- पर्यावरण गंभीर रूप से गड़बड़ा चुका है। यह विभिन्न पर्यावरणीय तत्वों, यानि, हवा, पानी, भूमि, जैव-विविधता (मानव सहित), जंगलों, इत्यादि के बीच संतुलित संबंधों में आई गड़बड़ी के रूप में प्रतिबिम्बित होता है।

इनमें से प्रत्येक तत्व को अब एक अस्तित्वात्मक संकट यानि, हवा के प्रदूषण के कारण भूमण्डलीय गर्मी (ग्लोबल वार्मिंग) बढ़ने, पानी का प्रदूषण और कमी होने, हरियाली के क्षेत्रों का सिकुड़ने, भूमि क्षय, पर्यावरणीय गड़बड़ियों से बढती चुनौती, इत्यादि से सामना करना पड़ रहा है।

द्वितीयत:, तथ्य दर्शाते है कि मानव समुदाय गंभीर समस्याओं से ग्रसित है। यह दिन-प्रतिदिन की सभी सामाजिक प्रक्रियाओं- आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, इत्यादि में अमानवीय असमानता के बढ़ते जाने से जाहिर होती है।

दूसरी सभी मानवीय समस्याओं- बेरोजगारी, कृषि संकट, स्वास्थ्य समस्याएँ, सामाजिक अन्याय, पानी की कमी, मजदूर समस्याएँ, खाड़कूपन, पूंजी संकट, उदारीकरण, भूमण्डलीकरण, ऊर्जा संकट, अमानवीय शैक्षणिक दिशा, सैन्य आधारित सुरक्षा, सामाजिक असहिष्णुता, प्रभुत्वकारी विदेश नीति, गैर जवाबदेह एवम् नौकरशाही प्रशासन, विज्ञान और तकनीकी का धन-निर्देशित विकास, पंचायत स्तर से लेकर संसदीय स्तर तक भ्रष्ट और अपराध-निर्देशित राजनीति, हिंसक भोगवादी संस्कृति (मूल्य व्यवस्था), और सबसे ऊपर भूखमरी एवं गरीबी, साम्प्रदायिकता व जातिवाद, इत्यादि ऊपर वर्णित दो असंतुलनों की ऊपज हैं। मानव समुदाय इन दो मूलभूत असन्तुलनों (यानि, पर्यावरणीय गिरावट और अमानवीय असमानता) का कैसे सामना करता है–इस पर मानवजाति का भविष्य निर्भर करता है।

IV

वर्तमान पर्यावरणीय एवम् मानवीय असन्तुलन का मूलभूत या दीर्घकालीन कारण

दो असंतुलन जिनका सामना आज मानव समुदाय कर रहा है उसका प्रथम मूल कारण वर्तमान मानवीय प्रेरक पहलू में निहित है जिसके मुताबिक निजी हित या स्वार्थ पूर्ति ही मानवीय जीवन का एकमात्र उद्देश्य है।

आज, स्वहित ही केवल मात्र ऐसी प्रवृत्ति बन गई है जो मानव के समस्त जीवन के मार्ग- यानि, उसके परिप्रेक्ष्य, प्रेरणा, उद्देश्य, प्राथमिकताओं, प्रतिमानों एवम् मानदण्डों को तय कर रही है।

आज के हमारे युग में धन और सत्ता हासिल करना किसी के निजी हित को अधिकतम हद तक पुरा करने का प्रतीक बन गये हैं, सम्पूर्ण संसार इन दो जीवनदायी तत्त्वों के पीछे पड़ा हुआ है। अब इस धन और सत्ता हासिल करने के व्यापार ने (अत्यधिक गैर-टिकाऊ पर्यावरणीय व्यवस्था और एक अत्यधिक गैर न्यायिक व असमानता वाली मानवीय व्यवस्था बनाकर) विश्व को गंभीर पर्यावरणीय और मानवीय बर्बादी के कगार पर धकेल दिया है।

और, कारपोरेट एवम् कम्युनिष्ट दार्शनिक धारणाएँ कि हमारे ग्रह पर और कई मामलों में तो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में मानव जाति सर्वश्रेष्ठ घटनाक्रम है, इस एक तरफा समझ ने निजी हित के मूलभूत कारण को और अधिक मजबूती प्रदान की है। यह धारणा मानव समाज के निर्माण और उसकी प्रत्येक चीज में लोगों की एकमात्र भूमिका को उभारती है, जबकि यह इस सामाजिक सच्चाई की अवहेलना करती है कि मानव समाज में परिवर्तन और विकास दो तरफा अन्तरक्रिया- यानि, एक तरफ प्रकृति और मानव समाज के बीच अन्तरक्रिया तथा दूसरी तरफ खुद मानव समाज के भीतर अन्तरक्रिया - के परिणामस्वरूप होता है।

इसका दूसरा कारण, मानव स्वभाव के बारे में एक तरफा समझ में निहित हैं। यह सोचती हैं कि मानव जाति स्वभाव से स्वार्थी (कॉरपोरेट सिद्धान्त के मुताबिक) तथा

स्वभाव से सामाजिक (कम्युनिस्ट धारणा के मुताबिक) हैं, और इस प्रकार दोनों विचार मानव के दो तरफा चरित्र की सामाजिक वास्तविकता की अवहेलना करते हैं। मानव का दो तरफा चरित्र यह है कि एक तरफ स्व-हित (जो उसके जैविक अस्तित्व से पैदा होता है) और दूसरी तरफ सामाजिक (समाज के एक सदस्य के रूप में उसके सामाजिक अस्तित्व से उभरती है) हित की खासियत लिए हुए है। इसका अर्थ है कि मनुष्य एक जैव-सामाजिक प्राणी है।

उसका तीसरा कारण सामाजिक विकास (या सामाजिक सम्पन्नता और तरक्की) की एक तरफा समझ में निहित है। यह सामाजिक विकास केवल पैसे, सम्पत्ति में वृद्धि या पूंजी की प्राप्ति को मानती है और लाभ (पैसे, सम्पत्ति या पूँजी) को ही सामाजिक विकास का एकमात्र सूचक स्वीकार करती है और इस प्रकार मानव अस्तित्व का एकमात्र उद्देश्य पैसा, सम्पत्ति या पूँजी कमाना बना देती है।

इसका चतुर्थ कारण 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाले परम्परागत राजनीतिक मानदण्ड को वर्तमान सामाजिक हालातों से जोड़े बिना हमेशा के लिए लागू होने वाला मानदण्ड स्वीकार करने की कठमूल्लावादी और अवास्तविक समझ में निहित है। हांलाकि, इस सिद्धान्त के मुताबिक 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' सदा चलने वाला सिद्धान्त है परन्तु यह आज के वक्त में गैर-लाभदायक और गैर उत्पादक बन चुका है, क्योंकि विद्यमान सामाजिक वास्तविकता विभिन्न राष्ट्रों और सामाजिक-नस्ली समुदायों के बीच चौतरफा सहयोग की माँग करती है ताकि इन सबको एक सार्वभौमिक मानवीय इकाई वाली एकीकृत व्यवस्था में संगठित किया जा सके।

इसका पाँचवां कारण साध्य (उद्देश्य) हासिल करने के लिए किसी भी साधन को ठीक समझने की एक तरफा नैतिक अवधारणा से जुड़ा है। इस तरह की धारणा उच्चत्तम लाभ के उद्देश्य को हासिल करने के लिए सभी घोखेबाज साधनों (उदाहरणतया, भ्रष्टाचार, काले-धन, घोटालों, इत्यादि) को अपनाने में सहायक है तथा कहना कुछ और करना कुछ वाले दोगले राजनीतिक तरीकों को इंगित करती है।

उपरोक्त वर्णित कारपोरेट एवम् कम्युनिष्ट व्यवस्था के समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों ने मानवीय और पर्यावरणीय उद्देश्यों को भारी हानि पहुंचाई है और आखिरकार मानव समाज सहित समस्त जैव-जगत के अस्तित्व को खतरा पैदा कर दिया है।

स्व-हित को मानवजाति का मूलभूत स्वभाव चरित्रित करने वाला पहला सिद्धान्त प्रत्येक मानव के सामने पर्यावरण के साथ-साथ सम्पूर्ण मानव समुदाय की कीमत पर अपने निजी हितों को पुरा करने का रास्ता प्रदान करता है।

प्रकृति की व्यवस्था में मनुष्य को अद्वितीय घटनाक्रम समझने वाले द्वितीय सिद्धान्त के अनुसार मनुष्य को दूसरे प्राकृतिक घटनाक्रमों (जैविक और गैर जैविक दोनों) को अपनी सुविधानुसार शोषण करने का लाइसैन्स मिला हुआ है।

तीसरा सिद्धान्त जो लाभ (पैसा, सम्पत्ति या पूँजी बनाने) को मानव विकास, सम्पन्नता और तरक्की को एकमात्र मंत्र के रूप में पेश करता है, यह सिद्धान्त लाभ के अधिकतम भाग पर लाभ के मालिकों को हकदार बनाता है।

चौथा सिद्धान्त जो ताकत को सत्ता के स्रोत के तौर पर उभारता है, यह कमजोर पर ताकतवर के प्रभुत्व को अनुमोदित करता है।

पाँचवां सिद्धान्त जो दोगलेपन को आचार-संहिता के तौर पर प्रचारित करता है, यह आम जनता के उद्देश्यों को हानि पहुंचाता है और ठगों व धोखेबाजों को फायदा पहुँचाता है।

V

संयुक्त प्रगतिशील गढजोड़ के साझा न्यूनतम कार्यक्रम (सीएमपी) पर टिप्पणी

संयुक्त प्रगतिशील गठजोड़ (यूपीए) के साझा न्यूनतम कार्यक्रम (सीएमपी) के प्रश्न पर हम इसका मूल्यांकन इस सिद्धान्त के आधार पर करते है कि क्या भारत और उसके लोगों की मूलभूत समस्याओं का यह वास्तविक प्रत्युत्तर देता है।

इस प्रकार, हमारे सामने पहला प्रश्न उठता है कि भारत और उसके लोगों के सामने अब कौनसी मूलभूत समस्या है। इन समस्याओं की माँग क्या है? और क्या सांझा न्यूनतम कार्यक्रम (सीएमपी) वास्तविक तौर पर इन मांगों को पुरा करता है?

हमारी नजर में देश और उसके लोगों के सामने प्रथम मूलभूत समस्या वैसी ही है जैसी वैश्विक मानव समुदाय को प्रत्येक देश में सामना करना पड़ रहा है, यानि एक तरफ सभी सामाजिक प्रक्रियाओं- आर्थिक, राजनीतिक एवम् सांस्कृतिक- में लगातार बढ़ रही अमानवीय असमानता तथा दूसरी तरफ बिगड़ती जा रही पर्यावरण की स्थिति।

संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्टों एवम् संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण रिपोर्टों के अलावा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं की रिपोर्टें अमानवीय असमानता तथा पर्यावरणीय गिरावट की हर वक्त बिगड़ती जा रही स्थिति को लगातार उजागर कर रही हैं जबकि प्रत्येक देश (भारत सहित) की कारपोरेट सरकार इन दो गंभीर चुनौतियों की वास्तविक सूचनाओं को छुपा रही हैं। साझा न्यूनतम कार्यक्रम भी यही कर रहा है।

अमानवीय असमानता के संबंध में न्यूनतम सांझा कार्यक्रम के सम्पूर्ण मूलपाठ में यह पूर्णतया गायब है, यद्यपि यह भारत में विभत्स रूप में खुले तौर पर मौजूद है जहां केवल 9 अरबपतियों का 23 अरब डालर की सम्पत्ति पर नियन्त्रण है तथा 61 हजार लखपतियों का 267 अरब डालर सम्पति पर नियन्त्रण है, यानि यह भारत के कुल घरेलू सकल उत्पाद (560 अरब डालर) का 50 प्रतिशत भाग है। करीब 30 प्रतिशत कालाधन है, 10 प्रतिशत उच्च मध्यम वर्ग के पास है, 8 प्रतिशत हिस्सा मध्यम एवम् निम्न मध्यम वर्ग के पास है जबकि केवल 2 प्रतिशत हिस्सा 62 प्रतिशत गरीब और वंचितों (40 प्रतिशत वे लोग जिनकी 1 डालर प्रतिदिन से कम आय है तथा 22 प्रतिशत वे लोग हैं जिनकी 2 डालर प्रतिदिन से कम आय है) को प्राप्त होता है। भारत में अमानवीय असमानता की यह स्थिति है। *(हिन्दुस्तान टाइम्स, 17-06-04)*

आगे, यह पर्यावरण को बहुत ही लापरवाही से एक नगण्य मुद्दे के तौर पर लेता है। न तो यह शासन करने के अपने सात बुनियादी सिद्धान्तों में इसे शामिल करता है और ना ही अपने उपशीर्षकों की सूचि में उसे फोकस (केन्द्र बिन्दु) के तौर पर उजागर करता है। न्यूनतम सांझा कार्यक्रम में पर्यावरण के मुद्दे को 'अनुसूचित जाति और जनजातियों की समस्या' वाले शीर्षक के तहत दर्ज किया है, मानो यह मुद्दा महत्वहीन हो (यानि, ''जनजातिय समुदाय जो जंगल पर निर्भर हैं, विशेषतौर पर उनके संबंध में संयुक्त प्रगतिशील गठबन्धन का प्रशासन वे सभी कदम उठायेगा जो इनकी आर्थिक वृद्धि और पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्यों के बीच सामंजस्य कायम करते हो।'')।

भारत सहित हर देश में मानव समुदाय को आजकल सभी पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना है जैसे कि ग्लोबल वार्मिंग (धरती का गर्म होना), ओजोन परत का क्षीण होना, जल की मात्रात्मक व गुणात्मक गिरावट, भूमि क्षरण, जंगल कटाव, जैव-विविधता के बिगड़ते हालात इत्यादि चुनौतियों को सांझा न्यूनतम कार्यक्रम में छुआ तक नहीं गया है।

इसने विश्व शान्ति के मुद्दे को भी दर्ज नहीं किया है जबकि यह मुद्दा इक्कीसवी सदी के अन्तरनिर्भर विश्व में जी रहे मानव समुदाय की तात्कालिक चिंता का विषय है। इसकी बजाए इसने वर्तमान और भूतकाल के सैनिक और टकराववादी नजरिये को महिमामंडित इस प्रतिज्ञा के साथ किया है कि हम अपने सैन्यबलों को आधुनिकतम हथियारों से लैस कर उन्हें शक्तिशाली बनायेंगे।

इस समय मानव समुदाय के सामने जो गंभीर समस्याएं हैं उनको हल करने के लिए प्रथम आवश्यकता है कि विश्व शान्ति कायम की जाए, जबकि इस आवश्यकता को सांझा न्यूनतम कार्यक्रम में पूर्णतया नजरअन्दाज किया गया है। वैश्विक आतंकवाद से संघर्ष करने के नाम पर अमेरिका के बुश प्रशासन ने वर्तमान सामाजिक अस्थिरता और असुरक्षा दुनिया भर में पैदा की है उस पर भी यह कार्यक्रम आंख मूंद लेता है। दुनिया में अस्थिरता और असुरक्षा ने सैन्यकरण के रूझान को नया प्रोत्साहन दिया है जिससे शीत-युद्ध की समाप्ति के बाद भी सैन्य खर्च में बढोतरी होती जा रही है। सैन्यकरण ने विश्व आर्थिकता पर नकारात्मक प्रभाव डाला है जिससे वैश्विक वृद्धि दर धीरे-धीरे गिर रही है और गरीबी एवम् बेरोजगारी और अधिक बढ रही है।

न्यूनतम सांझा कार्यक्रम ने भारत में बढ़ते जा रहे भ्रष्टाचार और अपराधीकरण की राजनीति के रूझान की समस्या को भी नजरअन्दाज किया है जो अब भारतीय लोगों के बीच आम तौर पर चर्चा का विषय बन गया है जिसे दो वर्ष पहले भारत के मुख्य चुनाव अधिकारी लिंगदोह द्वारा इंगित किया गया था।

भारत को आधुनिक सैन्य शक्ति के रूप में विकसित करने के इसके सैन्यवादी नजरिये के कारण इसने आन्तरिक समस्याओं को भी हल करने के लिए टकराववादी दृष्टिकोण को अपनाया है।

आगे, ऐसा मालूम पड़ता है कि अपने सैन्याभिमुखी नजरिये की ईमानदारी से पालना करते हुए इसने विरोधी पार्टियों और ग्रुपों के साथ व्यवहार करने में टकराववादी दिशा अपनाई है। हालिया उठाये गये कदमों में से इसके दो कदम यानि, मुलायम सिंह यादव ग्रुप और भारतीय जनता पार्टी के प्रति कठोर रूख इसके उपरोक्त नजरिये का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

और अधिक, इसका कार्यक्रम गरीबी समर्थक चेहरे को रोजाना दोहराता है जबकि सांझा न्यूनतम कार्यक्रम में गरीबी के मुद्दे को वर्णित करना ही पूर्णतया भूला दिया गया है जबकि भारत की सम्पूर्ण आबादी का 40 प्रतिशत भाग गरीबी की रेखा के नीचे वाले गरीबों से गठित है।

आगे, इसने काले धन पर कोई ध्यान नहीं दिया है जबकि भारत की आर्थिक प्रक्रिया का 30 प्रतिशत से अधिक काला धन है।

इसने हिंसा, अपराध और भ्रष्टाचार के फैलने के मुद्दे को भी छुपाया है। प्रशासन पर माफिया का नियन्त्रण बढ रहा है। भारी संख्या में पुलिस के आदमी माफिया ग्रुपों के साथ

मिली भगत किये हुए हैं। भ्रष्टाचार ने न्यायपालिका में भी जंग लगा दिया है। फौजदारी न्याय प्रणाली असफल हो रही है।

उपरोक्त मुद्दे बुनियादी समस्याएं है, इनको संयुक्त प्रगतिशील गठबन्ध द्वारा अनावश्यक समझा गया है, इन बुनियादी समस्याओं को हल किये बगैर कोई भी देश और उसके लोग गंभीर खतरों तथा कभी-कभी भारी संकटों को झेलने से बच नहीं सकते इन बुनियादी मुद्दों का केवल अस्तित्व में होना ही यह दर्शाता है कि भारत दुनिया में एक अत्यधिक असमानता वाला तथा अन्यायपूर्ण देश है।

अब हम वे बिन्दु लेते हैं जिन्हें साझा न्यूनतम कार्यक्रम ने विभिन्न उपशीर्षकों के तहत वर्णित किया है।

इसके प्रथम उपशीर्षक से शुरू करते हैं जिसमें शासन के लिए 6 मूलभूत सिद्धान्त तय किये गये हैं, जिनमें से दो बिन्दु (बिन्दु नंबर 2 और 6) विशेष ध्यान देने की मांग करते हैं। इनमें से नम्बर 2 के अनुसार केवल 7-8 प्रतिशत वार्षिक ''एक दशक के लिए टिकाऊ विकास दर रोजगार को पैदा कर सकती है और इससे प्रत्येक परिवार के लिए सुरक्षित और टिकाऊ जीवन सुनिश्चित किया जा सकता है। इस प्रकार मानव जीवन की सुरक्षा की गारन्टी केवल आर्थिक वृद्धि दर को बना देता है। जबकि बिन्दु नबर 6 पूंजी-मालिकों को मानव विकास के इंजिन के रूप में पेश करता है। दोनों बिन्दु इस सच्चाई को विकृत करते हैं कि पैसा और सम्पति नहीं बल्कि केवल मानवीय और पर्यावरणीय संसाधन ही मानव समाज की पूंजी हैं तथा कि केवल तकनिकी, श्रम, कच्चे माल और पैसे की मुख्य भूमिका होती है ना कि अकेले पैसे के मालिक की, बल्कि उसकी तो एक तकनीशियन, मजदूर या कच्चे माल के मालिक की तरह ही केवल पैसे के डीलर की भूमिका होती है।

चार अन्य आधारभूत बिन्दु असंगत हैं जिसमें किसानों, खेतिहर मजदूरों और श्रमिकों, खास करके जो असंगठित क्षेत्र में काम करते है और विशेष करके महिलाओं, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अन्य पिछड़ी जातियों और धार्मिक अल्पसंख्यकों से वादे किये गये हैं।

दूसरा मुख्य उपशीर्षक रोजगार से संबंधित है। यहाँ इसने असंगठित अनियमित क्षेत्र में उद्यमों को दरपेश समस्याओं का पता लगाने के लिए राष्ट्रीय आयोग को नियुक्त करने और उसकी सिफारिशों पर अमल करने का वादा किया है जबकि कृषि, कृषि-उद्योग, छोटी एवम् मध्यम दर्जे के उद्योग, छोटी एवं ग्रामीण औद्योगिक इकाइयों, कपड़ा उद्योग, इत्यादि में रोजगार प्रदान करने का वादा किया है।

परन्तु, यह इस तथ्य को छिपाता है कि कुछ हजार बड़े भारतीय कारपोरेट पूंजीपतियों के हाथों में तेजी से विकसित हो रहे अद्वितीय एकाधिकार ने बहुसंख्य लोगों को गरीबी की रेखा के नीचे धकेल दिया है तथा कुछ को गरीबी रेखा के ऊपर निम्न और मध्यम वर्ग की श्रेणी में धकेल दिया है जिनका पुरा-पुरा जीवन ही काम में लगा रहता है। केवल उच्च मध्यम वर्ग के पास ही नये उद्यमों में निवेश के लिए कुछ संसाधन बचते हैं। इसका अर्थ है कि लघु-स्तर पर निवेश अधिकतम संभव सीमा तक सिकुड़ गया है जिसने बेरोजगारी अधिकतम संभव स्तर तक बढा दी है।

तीसरा उपशीर्षक कृषि के बारे में है। यद्यपि किसानों के विभिन्न तबकों को वित्तिय सहायता की है परन्तु इसमें यह व्याख्या नहीं की गई है कि कृषि क्षेत्र की समस्याओं की मूल जड़ क्या है और उन समस्याओं से कैसे निपटा जा सकता है। वास्तव में कृषि क्षेत्र की

समस्या एक बहु आयामी समस्या यानि, जोत क्षेत्र, फसल-पद्धति, निवेश, कृषि निवेश (उर्वरक, कीटनाशक, पेस्टीसाइड इत्यादि), सस्ता ऋण, सिंचाई, बिजली आदि है जो घाटे का व्यवसाय हो गया है। इसलिए हजारों किसानों ने आत्महत्या की है जो अभी जारी है। इस समस्या को बहुआयामी रणनीति के जरिए निपटा जा सकता है।

संक्षेप में कृषि संकट एक व्यवस्थागत संकट है। पूर्व की राजग सरकार ने कृषि का कारपोरेटकरण करने का रास्ता अपनाया, परन्तु गरीब सीमान्त एवम् मध्यम किसान की विपरीत प्रक्रिया से डरकर कृषि के कारपोरेटकरण को लागू नहीं किया। राजग की तरह ही संयुक्त प्रगतिशील गठबन्धन का उद्देश्य भी कृषि के कारपोरेटकरण का ही है परन्तु इसने वामपंथी ग्रुपों और किसानों के निचले तबको की प्रतिक्रिया के डर से इसको फिलहाल उजागर नहीं किया है।

चौथा उपशीर्षक शिक्षा और स्वास्थ्य के बारे में है। शिक्षा की समस्या है कि यह सामाजिक पहलू को बिल्कुल नजरअंदाज करते हुए केवल निजी हित केन्द्रित है। यह मानवतावादी एवम् पर्यावरणवादी दृष्टिकोण को विद्यार्थियों के मन में बैठाने की पूर्णतया उपेक्षा करती है और इस प्रकार उन्हें मानव समाज की बुनियादी सच्चाईयों के ज्ञान से वंचित रखती है। अतएव, वर्तमान शिक्षा व्यवस्था मानवता एवम् पर्यावरणवादी तर्कसंगत व्यक्ति बनाने के बजाए एक ऐसे स्वार्थी और लालची व्यक्ति का निर्माण करती है जो उन्हें कारपोरेट व्यवस्था के अनुकूल बनाती है।

स्वास्थ्य मनुष्य की बुनियादी समस्या है। वर्तमान स्वास्थ्य प्रबन्ध केवल अमीरों एवम् उच्च व मध्यम वर्ग की सेवा करता है और विशाल संख्या में गरीबों और निम्न मध्यम वर्ग की स्वास्थ्य संबंधी आवश्यकताओं से इन्कार करता है। निजी स्वास्थ्य सेवाएं पूर्णतया व्यापारिक हो गई हैं तथा निम्न वर्गों की पहुँच से बहुत दूर हैं। स्पष्टतया, सम्पूर्ण स्वास्थ्य व्यवस्था में बुनियादी परिवर्तन की आवश्यकता है जिससे स्वास्थ्य के मामलों में गरीबों और निम्न तबकों को स्वास्थ्य सुविधा उपलब्ध हो सके।

पांचवां उपशीर्षक महिलाओं और बच्चों के संबंध में है। यद्यपि संसद और विधानसभाओं में महिलाओं के आरक्षण के लिए 30 प्रतिशत का वादा किया गया है और यह जिम्मेदारी भी ली है कि घरेलू हिंसा तथा लिंग भेदभाव के खिलाफ कानून बनाया जायेगा। तथापि महिलाओं के क्षेत्र में असली समस्या यह है कि मर्दों के मुकाबले महिलाओं का स्थान लगातार दोयम दर्जे पर है। तर्कसंगत और निष्पक्ष लिंग समानता का वातावरण बनाने के बजाए वर्तमान व्यवस्था ने स्त्रियों का व्यापारीकरण कर दिया है। मर्दों के मुकाबले स्त्रियों की दोयम दर्जे की स्थिति वाली पुरानी चली आ रही धारणा को समाप्त करने के लिए यह जरूरी है कि जीवन के सभी पहलूओं में मौजूद पितृ-सत्तात्मक प्राचीन धारणा को समाप्त करना होगा।

बच्चे मानव समुदाय का भविष्य हैं और हर समय व हर जगह इस धारणा के तहत बच्चों के प्रति व्यवहार किया जाना चाहिए। उपरोक्त धारणा की रोशनी में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के सभी सम्मेलनों द्वारा बच्चों के मसलों पर प्रस्तावित सभी न्यायिक समाधानों को तुरन्त संशोधित किया जाना चाहिए।

छठा उपशीर्षक का नाम खाद्य एवं पोषण सुरक्षा रखा गया है। न्यूनतम सांझा कार्यक्रम में यह वादा किया गया है कि देश के गरीब एवम् पिछड़े भागों को तथा अत्यधिक वंचित एवम् असहाय लोगों को यह सुरक्षा प्रदान की जाए। हमारी नजर में इस योजना के

तहत केवल मात्र तर्कसंगत वितरण का सिद्धान्त ही यह सुरक्षा प्रदान कर सकता है। जिसमें प्राथमिकता भारत में 40 प्रतिशत गरीबी की रेखा के नीचे के लोगों को दी जाए। इन दो श्रेणियों की पहचान ग्राम सभाओं द्वारा की जानी चाहिए और उसे संबंधित पंचायत सदस्यों से सत्यापित करवाया जाना चाहिए।

सातवां उपशीर्षक पंचायती राज का है। संयुक्त प्रगतिशील गठबन्धन सरकार ने गरीबी हटाने तथा ग्रामीण विकास योजनाओं पर पंचायतों के जरिए धन खर्च करने का वादा किया है। भारत भर में लोगों की शिकायत है कि इस धनराशि का अंधिकांश हिस्सा भ्रष्ट और आपराधिक वृत्ति के पंचायत के पदाधिकारी भ्रष्ट कर्मचारियों से गठबन्धन करके इस धन को हड़प जाते हैं। इस धनराशि को तर्कसंगत रूप से खर्च करने का तरीका यह हो सकता है कि इस राशि को ग्राम सभाओं के जरिए खर्च किया जाए और इसका सत्यापन उनकी संबंधित पंचायत के प्रतिनिधियों द्वारा किया जाए।

आठवें उपशीर्षक में अनुसूचित जाति एवम् अनुसूचित जनजाति का उल्लेख है। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की खुशहाली की योजनाओं का कार्य राष्ट्रीय, प्रान्तीय और जिला स्तर पर गठित आयोगों को सौंपा जाना चाहिए। इन आयोंगों में तीन चौथाई सदस्य इन्हीं वर्गों के और एक चौथाई सदस्य अन्य वर्गों के होने चाहिए। भूमि, जल, रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, इत्यादि सभी मामलों को इन आयोगों को सौंपा जाना चाहिए और इनकी सिफारिशों को सरकार को आमतौर पर स्वीकार कर लेना चाहिए। जो सिफारिशें सरकार को स्वीकार्य नहीं हो उन्हें किसी अधिकरण या न्यायालय को अन्तिम निर्णय के लिए भेज देना चाहिए।

पुराने अनुभवों के मद्देनजर (1980 के दशक के दौरान सरकारी विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट द्वारा इंगित किया गया है कि आरक्षण का करीब-करीब समस्त लाभ उच्च वर्ग (मलाईदार सतह) को मिला है) आरक्षण के मुद्दे पर यह आवश्यक है कि यह अधिकार आर्थिक आधार पर केवल उन्हीं लोगों को दिया जाए जो गरीबी की रेखा के नीचे हैं। जाति और धर्म के आधार पर दिये जाने वाले सभी आरक्षण पूर्णतया समाप्त कर दिये जाने चाहिए। क्योंकि जाति और साम्प्रदायिक आधार पर दिया गया आरक्षण जातिवाद और सम्प्रदायवाद को ही उत्पन्न करता है जो मानवीय एकता को खण्डित करता है और मानवीय सरोकार को नुकसान पहुँचाता है।

नवाँ उपशीर्षक सामाजिक सामंजस्य और अल्पसंख्यकों के कल्याण से संबंधित है। सामाजिक सामंजस्य और अल्पसंख्यकों के कल्याण की समस्या को विभिन्न शासकीय पार्टियों ने अपने समय में हमेशा ही वोट बैंक के मुद्दे के तौर पर उपयोग किया है। वास्तव में यह एक मानवीय मुद्दा है और इसे इसी तरह से लिया जाना चाहिए।

आरक्षण के मुद्दे पर सभी अल्पसंख्यक युवाओं को जो गरीबी की रेखा के नीचे जी रहे हैं उन्हें नौकरियों में आरक्षण का अधिकार दिया जाना चाहिए। अल्पसंख्यकों के उच्च वर्ग की स्थिति बहुसंख्यक उच्च वर्ग के समरूप होनी चाहिए।

दसवाँ उपशीर्षक ढाँचागत सुधार पर है जो सिद्धान्ततः कारपोरेट वर्गों के हितों को आगे बढाने वाला है। यहाँ एक तर्कसंगत सिद्धान्त यह बनता है कि ढांचागत प्रश्न लोक-हित निर्देशित होना चाहिए। इसकी योजनाएँ और परियोजनाएँ ढाँचागत सुधार की प्रक्रिया से जुड़े हुए लोगों के सलाह-मशविरे और स्वीकृति से तैयार की जानी चाहिए। इन

योजनाओं और परियोजनाओं को इस प्रक्रिया से जुड़े लोगों की रजामन्दी से लागू किया जाना चाहिए।

इग्यारहवें उपशीर्षक में जल-संसाधन के मुद्दे पर विचार किया गया है। यह मुद्दा शासन करने का मुद्दा नहीं है बल्कि समस्त जैव-जीवन के जीने-मरने का प्रश्न है। वर्तमान संयुक्त प्रगतिशील गठबन्धन और पिछली राजग दोनों सरकारों ने इस मुद्दे को एक प्रशासकीय मुद्दे के तौर पर सामने रखा और इस समस्या को लोगों की रोजमर्रा की समस्या के रूप में ही लिया। इसलिए इस सरकार और पिछली सरकार ने इसे राष्ट्रीय स्तर पर एक सार्वजनिक मुद्दा नहीं बनाया और इस प्रकार समस्या को गंभीर बना दिया है जबकि भारतीय और विश्व के वैज्ञानिकों के सलाह-मशवीरे से भारत के लोगों द्वारा अन्ततोगत्वा इस समस्या का हल निकाला जाना चाहिए। किसी भी सरकार को यह अधिकार नहीं होना चाहिए कि जनमतसंग्रह के जरिए स्वीकृति लिए बिना ऐसे भंयकर मुद्दे (न्यूनतम साँझा कार्यक्रम के मुताबिक सर्वोच्च मुद्दे) पर अन्तिम निर्णय ले सके। भारतीय राजनीतिज्ञों के समस्त कबीले को यह समझ लेना चाहिए कि एक तरफ पर्यावरण और दूसरी तरफ मानवीय दो तरफा घातक संकट की नयी पनप रही परिस्थिति में शासन करने के पुराने नियम अप्रासंगिक हो गये हैं।

बारहवें उपशीर्षक में क्षेत्रीय असन्तुलन के प्रश्न को उठाया गया है। यह एक मान्य तथ्य है कि भारतीय राज्यों के बीच क्षेत्रीय असन्तुलन मौजूद है। इसका बुनियादी कारण यह है कि आम तौर पर वित्तीय संसाधनों के वितरण का निर्णय राजनीतिक आधार पर किया जाता है तथा केन्द्र में स्थापित प्रत्येक शासक ग्रुप राज्यों में स्थापित विरोधी शासक ग्रुपों के साथ भेदभाव करता है। वर्तमान भ्रष्ट और अपराध निर्देशित परिस्थिति में एक राजनीतिक पक्षपाती नजरिया अपने विरोधी राजनीतिज्ञों के प्रति तर्कसंगत निर्णय नहीं ले सकता। इसका युक्तिसंगत हल संवैधानिक वित्तीय आयोग बनाने में निहित है जो केन्द्र से विभिन्न राज्यों को तर्कसंगत और न्यायपूर्ण आधार पर वित्त को निर्धारित करे।

तेरहवें उपशीर्षक में जम्मू-कश्मीर और उत्तर-पूर्वी समस्याओं को सामने लाया गया है। जम्मू-कश्मीर की समस्या भारत के विभाजन के समय में भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों के बीच विवादास्पद मुद्दा रहा है। पिछले 55 वर्षों के दौरान तीन युद्ध भारत और पाकिस्तान के बीच हुए है। वर्तमान समय में जमीनी हकीकत यह है कि तीन प्रतिद्वन्द्वियों में से एक भी इस योग्य नहीं है कि वह सैन्यबल से अपने बल पर जीत सके। स्पष्टत: एक न्यायपूर्ण और वास्तविक हल आपसी समझौते के फार्मूले में ही निहित है जो संबंधित तीनों पक्षों के हितों में सामंजस्य बैठा सके और प्रत्येक पक्ष के प्रति न्याय हो सके। हमारे दृष्टिकोण से इस समस्या से संबंधित तीन पक्षों (भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों) के हित में सामंजस्य बैठाने के लिए आपसी समझौते के निम्नलिखित तीन प्रस्ताव हैं : (क) जम्मू कश्मीर के संबंध में सुरक्षा के मामले भारत और पाकिस्तान द्वारा संयुक्त रूप में या भारत-पाकिस्तान सहराज्य के द्वारा देखे जाए। (ख) जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र राज्य हो जिसे विदेशी एवं सुरक्षा के मामले (भारत-पाक सहराज्य द्वारा देखा जाए) के अलावा सभी मामलों में सम्प्रभुसत्ता हासिल हो। (ग) जम्मू-कश्मीर के सभी जातीय समुदायों को अधिकतम सम्भव स्वायत्तता दी जाए।

उत्तर-पूर्व की यह समस्या है कि वहाँ बहुत से पुराने परम्परागत जातीय समुदाय है, इतिहास में उनकी उच्च संस्कृति रही है, उनकी आकांक्षा है कि उनका अपना अलग राज्य

हो जिसमें उनकी अपनी-अपनी पहचान को प्रतिनिधित्व मिल सके। अपने-अपने अलग राज्य प्राप्त करने के लिए ये बहुत लम्बे समय से संघर्ष करते आ रहे हैं, पहले इन्होंने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध संघर्ष किया और उसके बाद से वर्तमान नई दिल्ली शासन के विरुद्ध संघर्ष कर रहे हैं। पहले इनका आन्दोलन सम्पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करने का रहा है परन्तु अब अपने से 100 गुना शक्तिशाली विरोधी से युद्ध के नतीजतन अपने पुराने अनुभव से सीखकर तथा इक्कीसवीं सदी के शांति निर्देशित मिजाज को महसूस करते हुए अब ये समझौते की मानसिकता में आ गये हैं। इनमें से कुछ भारत में स्वायत्तता का दर्जा स्वीकार करने के लिए तैयार हैं। परन्तु कुछ अभी भी किसी तरह की आजादी पर जोर दे रहे हैं। अगर नई दिल्ली इन पर कुछ व्यावहारिक नजरिया अपनाए और इन्हें महासंघीय दर्जा प्रदान करे तो यह सबके लिए बहुत फायदेमंद साबित होगा। यह दर्जा इस बात का द्योतक है कि एक राज्य स्वतन्त्र रहते हुए भी किसी महासंघ राज्य का महासंघीय हिस्सा बना रह सकता है। नई दिल्ली को स्वयं देखना चाहिए कि इक्कीसवीं सदी का विकास इस तरह की समस्याओं को पेश कर रहा है। जो बड़े राज्यों को महासंघीय रास्ता अपनाने को मजबूर कर सकता है।

चौदहवाँ उपशीर्षक प्रशासकीय सुधार के प्रबन्धन का है। यद्यपि संयुक्त प्रगतिशील गठबन्धन वर्तमान प्रशासन को कुछ तकनीकी एवं प्रशासकीय सुधार के कदमों के जरिए पुनर्गठित करने का प्रस्ताव रखता है, परन्तु हमारी मान्यता है कि सम्पूर्ण प्रशासन को इस रूप में परिवर्तित किया जाए कि जिससे एक तरफ लोकहित की सेवा होती हो और दूसरी तरफ पर्यावरण का संवर्धन होता हो। ऐसा करने के लिए पुराने कानूनों और नियमों में बुनियादी परिवर्तन की आवश्यकता है ताकि प्रशासन जनता के प्रति जवाबदेह हो सके। ऐसे परिवर्तन में वे सभी कानून और नियम जो प्रशासन को, विशेषकर उच्चतम श्रेणी को असीमित शक्ति देते हो जिससे वे अपने हितों के अनुकूल चाहे जैसे कर सकते हों और इस प्रकार जनता के साथ भीख माँगने वाले या दान देने वालों के समान व्यवहार करने वाला बना देते हैं, ऐसे कानूनों को हटाया जाए। इन कानूनों में शामिल है : (1) सरकारी गुप्तता अधिनियम, (2) न्यायालय की अवमानना का अधिनियम, (3) सैन्य कोर्ट मार्शल कानून, (4) विधायकों का विशेषाधिकार अधिनियम, (5) कम्पनी अधिनियम में प्रोमोटर्स के विशेष अधिकार, (6) विशेष अधिकार का पुलिस अधिनियम।

एक नया अधिनियम बनाया जाना चाहिए जो यह घोषणा करे कि मानव समाज की वास्तविक पूँजी जनता और पर्यावरण हैं (मुद्रा पूँजी केवल विनिमय का माध्यम है), जनता को न केवल प्रशासन का बल्कि कार्यपालिका का प्रधान माना जाना चाहिए तथा मानव जाति के भविष्य के बेहतर विकास की एकमात्र गारण्टी जनता (स्त्री-पुरुष दोनों सहित) के सशक्तिकरण में है। प्रशासन के सम्पूर्ण नजरिए और कार्यप्रणाली में बुनियादी बदलाव के बिना सभी प्रस्तावित सुधार प्रशासन को जनता के लिए और अधिक दमनकारी और अत्याचारी बनायेंगे।

पन्द्रहवां उपशीर्षक श्रम के मुद्दे को लेता है। इसका मजमून संगठित और असंगठित मजदूरों (मजदूरों का 93 प्रतिशत) की समस्याओं से निपटने के बड़े-बड़े वादे करता है। अनुभव बताता है कि ऐसे ऊँचे-ऊँचे वादे आमतौर पर या तो लागू नहीं होते या उन्हें औपचारिक तौर पर निभाया जाता है। इस प्रकार के रवैये के पीछे कारण है कि यह श्रमिक को एक माल मानता है जो उत्पादन और मूल्य पैदा करने की प्रक्रिया में पूंजीपति के लिए

काम करता है। पूँजीपति श्रम के उपयोग के लिए पूर्ण स्वतन्त्रता चाहता है परन्तु भ्रष्ट और अपराध निर्देशित राजनीतिज्ञों की चुनावी जरूरत श्रमिक लुभावने वादों के जरिए लगातार श्रमिकों को छलते हैं जबकि वास्तव में वे धूर्तता और छल पूर्ण तरीके (यानि कहना कुछ और करना कुछ) से पूँजीपति समर्पित गतिविधि करते रहते हैं।

सोलहवाँ उपशीर्षक सार्वजनिक प्रतिष्ठानों के संबंध में है। हमारे दृष्टिकोण से सार्वजनिक प्रतिष्ठान तथा कारपोरेट (या निजी) प्रतिष्ठान दोनों ने मानव समुदाय के उद्देश्य को गहरा नुकसान पहुँचाया है। दोनों ने एक तरफ पर्यावरणीय संसाधनों का अधिक दोहन कर तथा गलत उपयोग कर हानि और नुकसान पहुँचाया है और दूसरी तरफ गरीब और अमीर के बीच अद्वितीय असमानता पैदा की है, इस प्रकार हमारी दुनिया में पर्यावरणीय और मानवीय दो तरफा संकट पैदा किया है जो मानव सहित समस्त जैव जीवन को खतरे में डाल रहा है। द्वितीय, दोनों व्यवहारिक विकास के मॉडल के रूप में असफल रहे हैं, सार्वजनिक प्रतिष्ठान वृद्धि-दर, उत्पादन की कीमत एवं उत्पाद की गुणवत्ता के मामले में कॉरपोरेट-प्रतिष्ठान से प्रतियोगिता में असफल रहा है जबकि कारपोरेट प्रतिष्ठानों ने आधी मानवता को अद्वितीय गरीबी, बेरोजगारी और भूख के शिकंजे में धकेल दिया है।

हमारे दृष्टिकोण से एक नये लोकतान्त्रिक विकास मॉडल की जरूरत है जो सम्पूर्ण मानव समुदाय के हितों से पूर्णतया मेल खाता हो, यह मॉडल निम्न तीन पहलुओं से चिह्नित है : प्रथम, यह प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य से निर्देशित है। द्वितीय, यह विकास के पाँच सिद्धान्तों (यानि पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, लोकतन्त्र, उत्पादकता, एवं चहुँमुखी पारदर्शिता) को मानता है तथा तृतीय, इसकी मान्यता है कि कम्पनियों का प्रबन्धन सामान्य अंशधारकों द्वारा किया जाए जिनके मतों की संख्या दो तिहाई रहे जबकि एक तिहाई मतों का प्रतिनिधित्व (सभी श्रमिकों द्वारा विधिवत चुने हुए) संबंधित कम्पनी से जुड़े हुए श्रमिकों के लिए आरक्षित रखा जाए।

सतरहवाँ उपशीर्षक वित्त नीति (यानि, सरकारी आय) के मुद्दे को उठाता है। यहाँ समस्या यह है कि सरकारी आय के मुकाबले सरकारी खर्च अधिक ने वित्तीय परिस्थितयों में असंतुलन पैदा कर दिया है जो सरकारी वृद्धि दर पर दुष्प्रभाव डाल रही है। वित्तीय संतुलन तभी कायम किया जा सकता है। जब सरकार के अधिक खर्चे को कम किया जाए। सरकार गैर-उपयोगी चीजों जैसे सरकारी ऋण, अमीर और खाते-पीते लोगों को अनुदान, वोट-बैंक क्षेत्रों को शक्तिशाली बनाने की कल्याणकारी योजनाएँ, शोखता हुआ सुरक्षा खर्च, खुफिया सेवाओं आदि पर फिजूलखर्ची को कम करने के बजाए आवश्यक सार्वजनिक खर्च में से बचत की योजना बना रही है। सार्वजनिक खर्च में कमी करते हुए यह धूर्तता से यह घोषणा करते हुए जनता को शांत करते है कि विकास के खर्च में कमी नहीं की जाएगी।

अठारहवाँ उपशीर्षक पूँजी बाजार की बात कहता है। यह पूँजी बाजार की प्रशंसा एक ऐसी संस्था के रूप में करता है जो आर्थिकता के मूल सिद्धान्तों को प्रतिबिम्बित करती है। वास्तव में, पूँजी बाजार कारपोरेट पूँजी का एक औजार है जो बराबर यह संकेत (कभी सच्च और कभी झूठ) देता रहता है कि यह पूँजी की वृद्धि की सेवा करता है।

उन्नीसवां उपशीर्षक आर्थिक सुधारों का उल्लेख करता है। इन सुधारों का वास्तविक उद्देश्य निजीकरण, उदारीकरण तथा कॉरपोरेटकरण की प्रक्रिया के जरिए

कारपोरेट पूँजी के दायरे में अधिक से अधिक प्रतिष्ठानों को लाना है, और इस प्रकार कारपोरेट पूँजीवादी ढाँचे का विस्तार करना तथा उसकी वृद्धि को बढ़ाना है। ऐसा करते हुए इसके सुधारक जनता को नरम करने के लिए यह कहते हैं कि यह सुधार जनता तक वास्तविक लाभ पहुँचायेंगे।

बीसवाँ उपशीर्षक रक्षा, आन्तरिक सुरक्षा का है तथा तेइसवाँ उपशीर्षक विदेश नीति का है जो दोनों अन्तरसंबंधित हैं, इसलिए हम इन पर विवेचन संयुक्त रूप से कर रहे हैं। इस अध्याय (त) के पेराग्राफ चार में जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि विश्व शांति का मुद्दा जो हमारे समय की पहली और सबसे बड़ी माँग है जो साँझा न्यूनतम कार्यक्रम के सम्पूर्ण दस्तावेज में पूर्णतया गायब है। इस प्रकार शान्ति के परिप्रेक्ष्य से रहित है। रक्षा और विदेश दोनों नीतियां स्पष्टतया महाशक्ति का स्थान पाने के लिए एवं मौजूदा बहुध्रुवीय दुनियां में एक शक्तिशाली ध्रुव बनने की दिशा लिए हुए हैं। वर्णित रक्षा संबंधित कार्य जैसे सशस्त्र बलों के आधुनिकीकरण के लिए धन सुनिश्चित करना, राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद को एक प्रभावी संस्था बनाना, विश्वसनीय आणविक हथियारों के कार्यक्रम को जारी रखना, आतंकवाद के विरुद्ध लड़ाई में कोई समझौता नहीं करना तथा दक्षिण एशिया, विशेषतौर पर भारत-पाक मुद्दों से संबंधित सभी विवादस्पद मामलों को हल करने का जिक्र छोड़ना स्पष्ट दर्शाता है कि भारत को दक्षिण एशिया का केन्द्र बनाने का पुराना नजरिया ज्यों का त्यों कायम है।

इक्कीसवाँ उपशीर्षक विज्ञान और तकनीक से संबंधित है। यद्यपि भारत के विशाल विज्ञान और तकनीकी के ढाँचे को शक्तिशाली बनाने का उल्लेख है। परन्तु विज्ञान एवं टेक्नोलोजी का मुख्य उद्देश्य सर्वप्रथम भारत के आम आदमी की सेवा करने का होगा इसका उल्लेख करने से गुरेज किया गया है।

बाइसवाँ उपशीर्षक ऊर्जा सुरक्षा के मुद्दे पर जोर देता है। यह इस सच्चाई का उल्लेख करना भूल गया है कि ऊर्जा के गैर-परम्परागत स्रोतों यानि सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जल ऊर्जा का विकास ही स्थायी उर्जा स्त्रोत की परिस्थिति पैदा करेगा।

उपर्युक्त जो कुछ कहा गया है उसे संक्षेप में इस प्रकार कह सकते हैं कि न्यूनतम साँझा कार्यक्रम कारपोरेट पूँजी की मुख्य प्राथमिकताओं, नीतियों एवं कार्यक्रमों को उजागर करता है न कि भारत के आम लोगों की आवश्यकता को।

VI

मानव समाज का प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल

1. मानव समाज के प्रकृति मानव केन्द्रित मॉडल का मानना है कि मानव समाज में पर्यावरण और मानव जाति दोनों बहुत ही मूल्यवान घटनाक्रम हैं। यह दोनों इसकी सामाजिक पूँजी (सर्वोच्च वस्तु) है, इन दोनों (यानि, पर्यावरणीय-मानवीय संसाधन) में वृद्धि से विकास, सम्पन्नता एवं प्रगति होती है तथा सोचने, कहने, करने और संगठित होने के लिए यह निर्देशक सिद्धान्त का कार्य करता है।

2. यह हर समय और जगह पर्यावरण (यानि, हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) संवर्धन के मूलभूत कार्य का मजबूती से समर्थन करता है।

3. यह प्रत्येक व्यक्ति के जैव-सामाजिक अस्तित्व के अधिकार को शुद्ध हवा, साफ पीने के पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर

सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित करने का समर्थक है।

4. यह आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में अधिकतम 5 गुणा अन्तर) पर आधारित उचित समानता के मूलभूत मानवीय अधिकार का समर्थक है।

5. यह विश्व शान्ति का मजबूती से पक्षपोषण करता है और विश्व के सभी विवादों खासकरके जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका इत्यादि के सीधे शांतिपूर्ण हल के मार्ग का समर्थक है। जम्मू कश्मीर के न्यायपूर्ण समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा एवं विदेश महकमों को भारत-पाक सहराज्य के संयुक्त नियन्त्रण में सौंपा जाना चाहिए जबकि बाकी सभी मामलों (रक्षा और विदेश मामलों के अलावा) में जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र होना चाहिये जबकि इसके नौ नश्ली क्षेत्रों में से प्रत्येक को अधिकतम संभव स्वायत्तता प्रदान की जाए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन और जोर्डन के संबंध में भी कारगर होगा।

6. यह संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के 5 स्थायी सदस्यों के वीटों पावर को समाप्त करते हुए विश्व व्यवस्था के पुनर्गठन करने एवं किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए संयुक्त राष्ट्र की केन्द्रीय सभा में साधारण बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान करने की मांग करता है।

7. यह विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाए प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर पुनर्गठित करने तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है) को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति बनाने की हिमायत करता है जिसमें मानवीय और पर्यावरणीय पहलु उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्ववाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के पांच उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाता है।

8. यह सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50% प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित करने का समर्थक है।

9. यह खेती को सहकारिता के आधार पर सुसंगठित करने को प्रोत्साहित करता है तथा खेती से संबंधित सभी लोगों की जीविका को सुनिश्चित करने का समर्थक है।

10. यह श्रमिकों (शारीरिक और मानसिक दोनों) के सशक्तिकरण के लिए जोरदार आवाज उठाता है, जिसके अनुसार सभी संस्थानों, परियोजनाओं एवं कारखानों के प्रबंध में उनके (श्रमिकों के) एक तिहाई चुने हुए प्रतिनिधियों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए।

11. यह सभी औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों के विकेंद्रीकरण की वकालत करता है जिसके अनुसार कॉरपोरेट और राजकीय मोनोपोली नियन्त्रण समाप्त करते हुए एवं उन्हें साधारण शेयरधारकों (दो तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) तथा मजदूरों (एक तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) के द्वारा प्रबंधित किया जाए।

12. यह वित्त नियन्त्रण के लिए लोकतांत्रिक प्रबंध और नियन्त्रण को प्रस्तावित करता है। कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबंधन एवं नियन्त्रण का पक्षधर है तो राजकीय क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का समर्थक है। जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर स्थायी

कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियन्त्रण का हामी है। प्रोमोटर्स शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध की मिल्कियत को समाप्त किया जाए।

13. इसका पक्का विश्वास है कि राजनीतिक प्रक्रिया लोगों के नेतृत्व में हो और उसका संचालन प्रकृति-मानव केन्द्रित समर्पित सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा किया जाये। चुनाव पूर्णतया स्वतंत्र हो जिसमें प्रत्येक को उम्मीदवार और मतदाता दोनों में समान रूप से भाग लेने का अधिकार हो।

14. यह प्रत्येक देश में प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण के आधार पर कॉरपोरेट पूँजीवादी निर्देशित संविधान तथा न्यायशास्त्र को पुनर्गठित करने का प्रस्ताव रखता है।

15. यह दलगत ढांचे को महत्व दिये बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा चुनाव के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करें) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्य सत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के राजकीय एकाधिकार का खात्मा करने का पक्षधर है। सम्बन्धित मतदाताओं को वापिस बुलाने का अधिकार हो जिसके तहत किसी सभा सदस्य के मतदाताओं का 1/5 भाग अगर लिखित में पुन: चुनाव की मांग इस आधार पर करें कि उपर्युक्त सदस्य अपने मतदाताओं का विश्वास खो चुका है।

16. यह प्रत्येक सांसद को 2 करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये अपने चुनावी क्षेत्र के विकास खर्च के लिए आवंटित करने के मौजूदा नियम को हटाकर विकास से संबंधित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्रामसभा सहित और इसके ऊपर कोई नहीं) के जरिए खर्च करने को प्रोत्साहित करती है।

17. यह मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के हितों की रक्षा एवं संवर्धन के मूलभूत सिद्धान्त का मजबूती से पक्षधर है। उपर्युक्त उसूल की किसी तरह से अवहेलना करने पर अपराधी को सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल दण्ड दिया जाए। दण्ड में मानवीय क्रूरता और मृत्युदण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधान शामिल हो सकते हैं ।

18. यह गांव/वार्ड से राष्ट्रीय स्तर तक पाँच स्तरों पर सामाजिक जीवन के तीन पहलुओं-राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक के प्रबन्ध की शक्ति लोगों को देकर उनके सशक्तिकरण (या जनता के नेतृत्व वाला शासन) को प्रस्तावित करता है।

19. राजनीतिक पहलू माँग करता है कि पाँचों स्तर पर (यानि, राष्ट्रीय, राज्य (या क्षेत्रीय), जिला, ब्लॉक और गाँव)राजनीतिक सभा का गठन किया जाए जो लोकतान्त्रिक व्यवस्था पर कायम रहे तथा पूर्णतया लोकतान्त्रिक उसूलों, गतिविधियों और ढाँचे पर आधारित हो। ऐसा मॉडल निर्णय लेने में भी अधिकतम सम्भव लोक सशक्तिकरण के सिद्धान्त को लागू करना आवश्यक बना देता है।

20. आर्थिक पहलू की आवश्यकता है कि एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता के लिए पाँचों स्तर पर विकास सभाएँ स्थापित की जाएं जिसकी धारणाएँ, कानून एवं

नियम पूर्वोक्त दो उच्चस्थ प्राथमिकताओं (यानि, पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जन-नेतृत्वकारी लोकतन्त्र तथा चहुंमुखी पारदर्शिता) की रोशनी में बनाए जाएं। मनुष्य की जैव सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एडम स्मिथ का 'निजी हित' आधारित बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त तथा हर चीज का राज्य द्वारा राष्ट्रीयकरण करने के मार्क्सवादी बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त, ये दोनों एक तरफा है। परन्तु, विडम्बना यह है कि दोनों मनुष्य और पर्यावरण विकास के सन्दर्भ की बजाए विकास, सम्पन्नता तथा प्रगति को धन वृद्धि के रूप में नापते हैं।

21. सांस्कृतिक पहलू की आवश्यकता है कि पाँचों स्तर पर सांस्कृतिक सभाएं स्थापित की जाएं।यह ऐसे जीने के तरीके (या जीवन शैली) की माँग करता है जो बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों से भरपूर हों तथा लोगों के बीच में तर्कसंगत मानवतावाद एवं पर्यावरणवादी चिन्तन, व्यवहार एवं संगठन को विकसित करता हो।

22. पाँचों स्तर पर राजनीतिक, विकास एवं सांस्कृतिक सभाएँ अपने से संबंधित राजनीतिक, विकास एवं सांस्कृतिक आयोगों का चुनाव करें ताकि सभाओं द्वारा बनाए गये कार्यक्रमों और नीतियों को लागू किया जा सके। पाँच स्तर पर संबंधित राजनीतिक, आर्थिक एवम् सांस्कृतिक आयोग राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक प्रत्येक प्रक्रिया से संबंधित अपने विशेषज्ञों के आयोगों का चयन करेंगे। राजनीतिक विशेषज्ञों का आयोग राजनीतिक मुद्दों जैसे कानून और व्यवस्था, अपराध रोकना, न्यायिक कार्य का काम करेंगे, विकास के विशेषज्ञों का आयोग आर्थिक, वित्तीय मामलों जैसे, विकास योजना बजट, कृषि, उद्योग, सेवा, वित्त एवं बजट के मामलों में कार्य करेगा। सांस्कृतिक विशेषाज्ञों का आयोग शिक्षा, स्वास्थ्य, नैतिक मूल्यों और अन्य सांस्कृतिक विषयों पर जैसे भाषा, संगीत, नृत्य, सिनेमा उद्योग, आदि पर ध्यान देंगे।

प्रकृति–मानव केन्द्रित जनआन्दोलन के आधारभूत सिद्धान्त

1. प्रकृति-मानवकेन्द्रित जनआन्दोलन का मानना है कि मनुष्य दूसरे असंख्य घटनाक्रमों (जिनमें से प्रत्येक अपनी मात्रा और गुण लिए हुए हैं) की तरह ही प्रकृति के विशाल क्षेत्र में एक अन्य खास किस्म है। मानव समाज में परिवर्तन और विकास दो तरफा- यानि एक तरफ मानव और प्रकृति के बीच और दूसरी तरफ खुद मानव समाज के अन्दर अन्तरक्रिया से होता है। ये दोनों अन्तक्रियाएं प्रदर्शित करती है कि मानव समाज के विकास में प्रकृति और मानवजाति दो मुख्य शक्तियां (यानि, सामाजिक पूंजी) है।

2. यह एक ऐसा पर्यावरण और मानव अभिमुख समाज निर्माण के लिए कटिबद्ध है जिसके पांच समान महत्वपूर्ण आयाम हों (क) परिवर्तन और विकास की निरन्तर बहती प्रक्रिया (ख) पर्यावरणीय तरक्की (ग) जैविक और सामाजिक सुरक्षा के लिए मानवीय उत्कण्ठा (घ) सोचने और कार्य करने की आजादी के लिए मानवीय लालसा और (ड.) हर जगह और हर समय पर उचित समानता और न्याय के लिए मानवीय अन्त: प्रेरणा विकसित हो।

3. इसका विकास मॉडल पाँच उसूलों पर आधारित है, यानि पर्यावरणीय तरक्की, उचित समानता (आय में 1:5 के अन्तर के साथ सभी को सामाजिक सुरक्षा का मूलभूत अधिकार), उत्पादकता या वृद्धि, लोक नेतृत्वकारी जनवाद (जैविक सुरक्षा और विचार और कर्म की पूर्ण आजादी सुनिश्चित करने वाला) और चौतरफा पारदर्शिता।

4. प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन समझता है कि मानव समाज की पहली आवश्यकता टिकाऊ और स्थायी शान्ति की है। ऐसी शान्ति कायम करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रभुत्व की राजनीति, विशेष सुविधा और विशेष अधिकारों को समाप्त किया जाए; टकराव का रास्ता और सैनिक समाधान का अंत पूर्ण निशस्त्रीकरण करके और परमाणु हथियारों का नियन्त्रण संयुक्त राष्ट्र (यू एन) को सौंपकर किया जाए। राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक असमानताओं को समाप्त करके तथा धनवान और निर्धन के बीच एवम् विकासशील व विकसित राष्ट्रों के बीच असमानता की खाई पाटी जाए।

5. प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन-पूर्ण जनवादी सिद्धान्तों, कार्य-प्रणाली और ढाँचे पर आधारित जनवादी व्यवस्था कायम करने के लिए प्रतिबद्ध है। ऐसे मॉडल की आवश्यकता है कि संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था में वीटो-पावर के विशेष कानून को समाप्त किया जाए और सभी संस्थाओं में नीचे से लेकर उच्चतम स्तर तक निर्णय लेने की प्रक्रिया में लोगों का अधिकतम सम्भव सशक्तिकरण करने के सिद्धान्त को अपनाया जाए।

6. प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन एक ऐसी प्रकृति-मानव केन्द्रित आर्थिकता सुनिश्चित करने के लिए कटिबद्ध है जिसकी धारणा, कानून और नियम दो उच्च प्राथमिकताओं (यानी, मानवजाति और पर्यावरण) व पाँच उसूलों (यानि पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, जनवाद और पारदर्शिता) की रोशनी में तय किए जाए। मानव की जैव-सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एडम स्मिथ का 'स्व-हित' आधारित मूलभूत आर्थिक सिद्धान्त और मार्क्स का राजकीय राष्ट्रीयकरण का मूलभूत आर्थिक सिद्धान्त दोनों ही एक तरफा है। परन्तु विडम्बना यह है कि दोनों आर्थिक सिद्धान्त विकास, समृद्धि और तरक्की को मुद्रा वृद्धि (पैसा बढने) के रूप में मापते हैं और मानव व पर्यावरणीय विकास के रूप में नहीं मापते।

7. प्रकृति-मानव जन आन्दोलन-ऐसी मूल्य प्रणाली (जीवन-जीने का ढंग या रास्ता) का आव्हान करता है, जिसमें मूलभूत मानवीय और पर्यावरणीय मूल्य समाहित हो तथा जो लोगों में तर्कसंगत मानवीय और पर्यावरणीय सोच, व्यवहार और संगठन को प्रोत्साहित करती हो।

8. प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन-पर्यावरणीय मानवतावाद को मुख्य लोक प्रेरक पहलू के तौर पर विकसित करने का प्रयास करता है।

9. प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन न केवल कारपोरेट और कम्युनिष्ट सिद्धान्तों और उनकी अपनी व्यवस्थाओं द्वारा मानवीय और प्राकृतिक संसाधनों के सामने खड़ी की गई चुनौतियों से मुकाबला करने लायक बनायेगा बल्कि हमें भविष्य में उनके (यानि, प्राकृतिक और मानवीय संसाधनों के) उचित उपयोग का रास्ता भी दिखायेगा।

प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण
saraf_rp@rediffmail.com

* * * * *

पानी के सवाल पर हमारा व्यापक दृष्टिकोण

(इस पृथ्वी पर मानव तथा दूसरे जैव-जीवन के लिए हवा के बाद सबसे आवश्यक चीज)

आमतौर पर पानी का सवाल मानवजाति के समस्त इतिहास में मानव के लिए मुद्दा बना रहा है। पानी का यह आम मानवीय मुद्दा आजकल और अधिक स्पष्ट हो गया है जब मानव समुदाय के लिए पानी का मुद्दा नम्बर एक पर आ गया है।

दुनिया में पानी की ऐसी गंभीर स्थिति का कारण इस बात में निहित है कि आज आम आदमी को पता है कि हमारे समस्त ग्रह पर पानी की उपलब्धता में कमी आ रही है। लोगों की इस धारणा को समस्त वैज्ञानिक समुदाय और पानी के विभिन्न विशेषज्ञ सच्चा साबित करते हैं। बहुत सारे वैज्ञानिक विशेषज्ञ यहाँ तक भविष्यवाणी कर चुके हैं कि सन् 2050 तक (यानि आने वाले 46 वर्षों के भीतर) पानी समाप्त हो सकता है। लोगों और वैज्ञानिकों के बीच इस बात पर सहमति है कि पानी की स्थिति के लिए कोई प्राकृतिक घटनाक्रम नहीं बल्कि मानवीय गतिविधि ही मुख्य तौर पर जिम्मेवार है।

हमारे विचार से पानी के बिगड़ते हालात कोई अलग-थलग घटनाक्रम नहीं है बल्कि पर्यावरण की प्रक्रिया (जिसमें वायु, पानी, भूमि, जंगल, जैव विविधता, इत्यादि घटक शामिल हैं) में विद्यमान आम संकट का ही एक भाग है। हमारे ग्रह पृथ्वी पर पर्यावरण ही मानव सहित समस्त जैव-जगत के अस्तित्व की पूर्व-शर्त है। पानी की खराब हो रही स्थिति हमारे पर्यावरणीय संकट का केवल पहला लक्षण है।

वास्तव में, वर्तमान पर्यावरणीय संकट लगभग 200 साल पहले से ही प्रारम्भ हुआ है, जब पूँजी-मालिकों के विद्यमान शासन का दुनिया में प्रादुर्भाव हुआ और सभी मानवीय और प्राकृतिक संसाधनों को इसके मालिकों की सम्पत्ति को बढ़ाने का जरिया बना लिया गया। इस 200 साल पुरानी पूँजी की व्यवस्था ने पर्यावरण विरोधी तकनीक और अमानवीय व्यवहार अपनाकर एक तरफ पर्यावरणीय पहलू को अत्यधिक नुकसान पहुँचाया है तो दूसरी तरफ मानवीय संसाधनों को भारी हानि पहुँचाई है। इस प्रकार मानवीय और पर्यावरणीय उद्देश्य की अवहेलना की है। पानी की गंभीर समस्या (उसके विभिन्न आयामों में) आम पर्यावरणीय एवं मानवीय संकट का एक भाग भी है।

विशेष रूप से, आज प्रत्येक देश मे पानी को राष्ट्रीय संसाधन माना जाता है और कॉरपोरेट पूँजी के नेतृत्व वाली सरकारें इसे प्रबन्धित और नियन्त्रित करती है जो अपनी नवीनतम तकनीक के जरिये अभी तक पर्यावरणीय संसाधनों और खासकर पानी को बर्बाद कर रही है। भारतीय पूँजी नेतृत्व वाला राज्य भी पानी सहित समस्त पर्यावरणीय क्षेत्र में तबाही मचा रहा है।

आज, जब पानी की समस्या विश्वव्यापी रूप धारण कर चुकी है, कई कॉरपोरेट राष्ट्रीय राज्य, देशों के बीच जल-विवाद के मामले में एक दूसरे पर दोषारोपण कर रहें हैं। देशों के अन्दर जल विवाद पर विभिन्न राजनीतिक ग्रुप एक दूसरे को अपने-अपने जल संकट का कारण बताते हैं। इस तरीके से वे लोगों को दिशा देते हैं कि जल समस्या जैसे कोई टकराववादी मुद्दा हो और इस प्रकार अपने-अपने हानिकारक कार्यक्रमों और कार्यवाहियों के जरिये पानी की खराब होती समस्या के लिए अपने उत्तरदायित्व से मुक्त होने की कोशिश करते हैं।

खेतीबाड़ी एवं किसान विकास मोर्चा, पंजाब मानता है कि लोगों को कॉरपोरेट पूँजी-नेतृत्व वाले शासकों और राजनीतिज्ञों द्वारा ''लोगों के सामने लोग'' खड़े करने के जाल में नहीं फँसना चाहिए। उन्हें पानी से संबंधित सभी मसलों के न्यायिक हल के लिए मानवतावादी और पर्यावरणीय परिप्रेक्ष्य अपनाना चाहिए जिसके अनुसार आज की दुनिया में सभी मसलों का हल शान्तिपूर्ण तरीकों से किया जाए तथा अपने विरोध का केन्द्र, शासक कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था और उसके मुख्य संचालकों के खिलाफ होना चाहिए, जो वास्तव में हमारे युग की सम्पूर्ण खतरनाक समस्याओं के जनक हैं।

उपरोक्त तथ्य हमें पंजाब की जल समस्या का इसके वास्तविक परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करने योग्य बनाते हैं।

पंजाब जल समस्या : धूर्त राजनीतिज्ञों की पैदावार

पंजाब जल समस्या सामान्य तौर पर उभर रही विश्वव्यापी जल संकट का भी भाग है और विशेषतौर पर हालांकि इसका अपना इतिहास है।

इसके बहुत पुराने इतिहास में जाए बिना हम पंजाब जल समस्या को भारत और पाकिस्तान के बीच विश्व बैंक की मध्यस्थता में हस्ताक्षरित हुई (1960) सिंध जल संधि के बाद के सन्दर्भ में नजरसानी करते हैं। इस सन्धि के अनुसार 3 पश्चिमी नदियों (यानि, सिन्ध, झेलम और चिनाब जो पश्चिमी पंजाब में बहती हैं) पर पाकिस्तान को पूर्ण नियन्त्रण सौंप दिया गया और 3 पूर्वी नदियों (यानि, रावी, व्यास, और सतलज जो पूर्वी पंजाब में बहती हैं) पर भारत का नियन्त्रण कायम किया गया, जिसमें से प्रत्येक देश अपने हिस्से के पानी का पूर्ण मालिक होने के नाते अपनी प्राथमिकता के अनुसार उपलब्ध पानी का उपयोग करने का हकदार हो गया। सिन्ध सन्धि दो सम्प्रभुसत्ता सम्पन्न देशो के बीच पानी बंटवारे के विवादित मसले पर समझौते का प्रतिनिधित्व करती है। इस सन्धि के समझौते में राइपेरियन सिद्धान्तों की पूर्णतया अनदेखी की गई है।

पँजाब के कई नेताओं (जो विभिन्न राजनीतिक पार्टियों और किसान संगठनों से संबंधित थे) द्वारा शिकायत की गई कि तीन नदियों (यानि, सतलज, व्यास और रावी) के पँजाब, हरियाणा और राजस्थान (जैसा कि केन्द्र और इन 3 राज्यों के बीच 1976 और 1981 की सन्धियों में तथा 1985 के राजीव-लोगोवाल समझौते में भी उल्लेखित किया गया है।) के बीच जल बँटवारे में पंजाब के साथ न्याय नहीं किया गया है, इस वक्तव्य में कुछ सच्चाई हो सकती है। परन्तु, अपनी शिकायतों के औचित्य को आगे बढ़ाने के बजाए इनमें से कई नेताओं, खास करके बड़ी पार्टियों (जैसे, कांग्रेस और अकाली दल) के नेताओं ने हमेशा अपने राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए मसले का उपयोग करने की कोशिश की है।

पंजाब के एक कांग्रेसी मुख्यमंत्री दरबारा सिंह ने 31 दिसम्बर, 1981 को हरियाणा और राजस्थान के साथ जल बंटवारे के समझौते पर हस्ताक्षर किए, जबकि 12 जुलाई, 2004 को दूसरे कांग्रेसी मुख्यमंत्री अमरेन्द्रसिंह ने समझौता कानून को पंजाब द्वारा रद्द करने (सन् 2004 में) का कानून बनाया। अन्य मुख्यमंत्री प्रकाश सिंह बादल ने अपने मंत्रित्वकाल सन् 1977 में पंजाब पुनर्गठन अधिनियम 1966 की धारा 70-80 की वैद्यता (जो पंजाब एवम् हरियाणा के बीच पानी के बंटवारे से संबंधित है) को सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दी, इन्हीं प्रकाशसिंह बादल ने सन् 2002 में भाजपा के निकट सहयोगी के तौर पर

मुख्यमंत्री बनने के बाद पंजाब एवम् हरियाणा हाईकोर्ट के दिनांक 15/1/2002 के आदेश, जिसमें सतलज-यमुना कैनाल को एक वर्ष में पूरी किए जाने की आज्ञा दी गई थी, को सुप्रीम कोर्ट में कोई चुनौती दायर नहीं की तथा आज वही प्रकाश सिंह बादल शेखी बघार रहे हैं कि यदि कांग्रेस के मुख्यमंत्री नदी जल के बारे में पांव पीछे हटाते हैं तो मैं व मेरा अकाली दल पंजाब के नदी जल के वाजिब हिस्सा पाने के लिए अन्तिम श्वास तक संघर्ष करेंगे।

पँजाब के जागरूक राजनीतिक और किसान नेताओं को बहुत पहले से यह जानकारी थी कि पंजाब की खेती में दो फसली चक्र (यानि, चावल और गेहूँ) की पद्धति पंजाब के जल संसाधनों और इसकी मिट्टी के उपजाऊपन के लिए भारी हानिकारक है, परन्तु उन्होंने इस दो फसली पद्धति के हानिकारक प्रभावों के बारे में किसानों को सूचित करने के लिए किसी तरह का प्रचार अभियान नहीं चलाया। इसका नतीजा यह निकला है कि पंजाब के भूमिगत जल संसाधनों का 50 प्रतिशत भाग पहले ही व्यय हो चुका है और बाकी बचे पानी के निकास की तैयारी है। पंजाब में समर्थन मूल्य नीति के माध्यम से दो फसली पद्धति को नई दिल्ली द्वारा और आगे प्रोत्साहित नहीं करने की माँग करने के बजाए और पंजाब के किसानों को फसलों के विविधकरण (diversification) के मार्ग पर ले जाने के बजाए ये नेता इस चल रही नुकसानदायक पद्धति पर चुप रहना पसन्द करते हैं।

इस बात को मुश्किल से अनदेखा किया जा सकता है कि जिन पुरानी वास्तविकताओं के आधार पर तीनों राज्यों (यानि, पंजाब, हरियाणा और राजस्थान) को 1976 और 1981 के समझौतों में जल आवंटन किया गया था वे परिस्थितियां अत्यधिक बदल गई है, खास करके पंजाब के मामले में स्थिति तेजी से बदली हैं। ऐसे हालात में, यह पूर्णतया न्यायोचित है कि नये उभरे तथ्यों को देखा जाए और उनके आधार पर तीनों राज्यों को नये सिरे से जल का आवंटन किया जाए।

पंजाब विधान सभा में 12 जुलाई, 2004 को पंजाब समझौता समाप्ति बिल 2004 अंगीकार करने के बाद कुछ नये उभरे अन्धराष्ट्रवादियों ने माँग की है कि पुराने समझौते के तहत हरियाणा और राजस्थान को दिय गए पानी पर रॉयल्टी ली जानी चाहिए। वे इस तथ्य को अनदेखा करते हैं कि भारतीय संविधान (सूची सातवीं, लिस्ट पहली, संघीय लिस्ट, इन्दराज 56), में निहित है ''अन्तर-राज्य नदियों और नदी घाटियों का नियमन और विकास उसी हद तक किया जा सकता है जिसमें ऐसे नियमन और विकास संघ के नियन्त्रण के तहत संसद द्वारा घोषित जनहित के लिए उचित कानून के दायरे में हो।''

संविधान की सूची सातवीं, लिस्ट दूसरी, राज्य लिस्ट, इन्दराज 17वाँ, के तहत राज्य केवल प्रबन्धित करता है ''पानी, यानि, कहा जा सकता है कि संघीय लिस्ट के इन्दराज 56 के प्रावधानों के अनुसार जल आपूर्ति, सिंचाई और नहरों, जल विकास और तटबन्ध, जल संग्रहण और जल विधुत के विषय प्रबन्धित करता है।''

उपरोक्त तथ्यों की रोशनी में यह आवश्यक है कि केन्द्र सरकार एक जल विशेषज्ञों का आयोग नियुक्त करे जो नयी उभरी वास्तविकताओं के आधार पर तीनों संबंधित नदियों में जल की सही उपलब्ध मात्रा का पता करे और वर्तमान समय में पंजाब राज्य की पानी की यथार्थ (सही-सही) आवश्यकता का पता करे और उसके आधार पर तीन संबंधित राज्यों-यानि, पँजाब, हरियाणा और राजस्थान के बीच जल विभाजन की नई सिफारिश करे। (21.8.2004)

–मघरसिंह कुलरियां

पूंजी के तीन मुख्य सिद्धान्त

उदारवादी और मार्क्सवादी सिद्धान्त

(क) दोनों उदारवादी और मार्क्सवादी सिद्धान्त पूंजी को समाज में अति बहुमूल्य वस्तु मानते हैं। यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि ये दोनों सिद्धान्त सामाजिक समृद्धि और प्रगति को पूंजी की वृद्धि दर और प्रतिव्यक्ति पूंजी वृद्धि तथा पूंजी की कुल वृद्धि से मापते हैं। दुनिया का प्रत्येक उदारवादी और मार्क्सवादी सरकार (यानि सभी देशों की सरकारें) उपर्युक्त सिद्धान्त का अनुसरण करती है। इन दो सिद्धान्तों का ग्लोबल चरित्र वैचारिक और प्रशासनिक दोनों तरह से प्रत्येक मानव को पूंजी(अथवा धन) के अधिकतम् संक्रेन्द्रण के लिए प्रेरित करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति का दौलत इकट्ठी करने का विश्वव्यापी चरित्र मानव समुदाय के सामाजिक पहलू को पूर्णतया नकारता है और इस प्रकार इसे एक अमानवीय झुण्ड में बदल देता है जहां प्रत्येक अपने लिए जीता है और सभी के लिए कोई नहीं है।

दोनों सिद्धान्त मानवजाति की प्रकृति की एकतरफा परिभाषा प्रस्तुत करते हैं। कॉरपोरेट अवधारणा के अनुसार 'मानव प्रकृति से स्वार्थी है' (जैसा कि मुक्त-बाजार अर्थशास्त्र के जन्मदाता एडम स्मिथ ने प्रतिपादित किया) जबकि मार्क्सवादी धारणा कहती है कि मानव की प्रकृति सामाजिक है। दोनों मानव की वास्तविक प्रकृति को नकारते हैं, मानव की वास्तविक प्रकृति जैव-सामाजिक है जो दो तरफा मूलभूत लक्षण रखती है यानि सामाजिक के साथ ही निजी।

दोनों सिद्धान्त पूंजी के वास्तविक उत्पादनकर्ता को गलत पेश करते हैं। मार्क्सवादी अवधारणा मजदूरों के अतिरिक्त मूल्य को पूंजी परिभाषित करती है, यानि मजदूरों द्वारा पैदा किया गया अतिरिक्त मूल्य जो उसको दी जाने वाली मजदूरी से अलग होता है जिसे काम के दौरान पैदा किया जाता है (जिसे पूंजीपति हड़प जाता है), दूसरे शब्दों में मजदूर अपनी निश्चित कार्यावधि में उसे दी जाने वाली मजदूरी से अधिक मूल्य पैदा करता है जिसे (यानि मजदूरों द्वारा पैदा किया गया अतिरिक्त मूल्य) पूंजीपति हथिया लेता है। इसके उलट, उदारवादी सिद्धान्त चतुराई से चिह्नित करता है कि पूंजी, तकनिकी, श्रम और कच्चे माल का उत्पादन प्रक्रिया में योगदान अपने-आप नहीं हो सकता जब तक कि उत्पादन प्रक्रिया के दौरान इनका उपयोग पूंजीपति द्वारा संगठित नहीं किया जाता।इस प्रकार मार्क्सवादी अवधारणा मजदूर को एकमात्र पूंजी का निर्माता बताती है जबकि पूंजीवादी धारणा पूंजीपति को ही इसका पैदा करने वाला पेश करती है।

(ख) दोनों सिद्धान्त पूंजी के प्रबंध प्रक्रिया को विकृत करते हैं। पूंजीवादी सिद्धान्त पूंजीपति को पूंजी पैदा करने की प्रक्रिया का एकमात्र प्रशासक और नियन्त्रक प्राधिकारी बनाता है। जबकि मार्क्सवादी सिद्धान्त इस कार्य को राज्य (यानि, राजनीतिज्ञों और अफसरशाहों का समिश्रण) के सपूर्द करता है, पूंजी को पैदा करने की प्रक्रिया के प्रबन्ध और नियन्त्रण में मजदूरों और आम लोगों के अधिकार की किसी भी भूमिका को नकारता है।

दोनों सिद्धान्त पूंजी के नियन्त्रण में श्रम की भूमिका को ताबेदार स्थिति में पहुंचाते हैं।

दोनों सिद्धान्त अपने तात्कालिक और स्थाई कार्यों के लिए राजनैतिक सत्ता हासिल

करने के पक्षधर हैं, क्योंकि अधिकतम धन कमाने की प्रक्रिया में राजनीतिक सत्ता एक मुख्य हथियार की तरह काम करती है।

पूंजी का प्रकृति–मानव केन्द्रित सिद्धान्त

(क) उपरोक्त वर्णित सिद्धान्त का पक्के तौर पर मानना है कि पूंजी में दो तरफा घटनाक्रम समाविष्ट हैं, यानि, एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन और दूसरी तरफ मानवीय संसाधन। ऐसा इसलिए है क्योंकि पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों से ही मानव समुदाय का जीवन बनता है और उनके बिना मानवजाति के लिए किसी भी चीज का कोई मूल्य नहीं है। इस प्रकार यह पैसे (या वित्त) को पूंजी मानने की धारणा को पक्के तौर पर रद्द करती है और यहां तक कि पैसे (या वित्त) वाली पूंजी भी इन दो संसाधनों से ही पैदा होती है, जो मानव के मानसिक और शारीरिक श्रम के साथ प्राकृतिक कच्चे-माल और तकनिकी औजारों के एकीकृत होने का एक रूप है। स्पष्टतया, पूंजी के सभी अवयव-श्रम, तकनिकी और कच्चा माल-पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों के द्वारा प्रदान किये जाते हैं। पैसा केवल विनिमय के माध्यम का प्रतिनिधित्व करता है या बाजार का एक औजार है। फिर भी इस अति महत्वपूर्ण कार्यवाही को ही समाज में सर्वोच्च घटनाक्रम (यानि, पूंजी) का दर्जा नहीं दिया जा सकता है।

इसका मानना है कि मनुष्य एक जैव-सामाजिक घटनाक्रम है जो अपने-आप में दो जुड़े हुए गुणों-निजी और सामाजिक को समाए हुए हैं जिनमें से प्रत्येक की अपनी उपयोगिता है। इन दोनों गुणों को तोड़ना मानवजाति की तर्क संगत वास्तविकता को विकृत करना है–जिसका परिणाम हमेशा बर्बादी में निकलता है। इस वक्त चल रहा पर्यावणीय मानवीय संकट भी प्रचलित एक तरफा मानवीय सोच और प्रेरणा का परिणाम है।

(ख) इसका मानना है कि मानव समाज में सम्पन्नता और विकास को मापने का पैमाना केवल मात्र पर्यावरणीय संरक्षण और संवर्द्धन तथा मानव का निरन्तर बढ़ता मानसिक और भौतिक कल्याण का स्तर ही हो सकता है। इस उद्देश्य को एक ऐसे विकास मॉडल को अपनाकर हासिल किया जा सकता है। जिसमें 5 मुख्य उसूलों का कड़ाई से व्यवहार में पालन किया जाए यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता (उचित समानता), उत्पादकता (वृद्धि या उच्च लाभ), पारदर्शिता और सभी तरह की सामाजिक गतिविधियों में जनवाद लागू करते हुए किसी भी प्रक्रिया में विद्यमान सभी विशेष अधिकारों और अतिरिक्त सुविधाओं को समाप्त किया जाए। इससे विश्व के 40 प्रतिशत वित्तीय संसाधनों की राजनीतिक और व्यापारिक भ्रष्टाचार के माध्यम से बर्बादी और गलत हाथों में जाने से रोका जा सकेगा, मानव अधिकारों और कानून के राज की अवहेलना तथा अपराधीकरण इत्यादि को समाप्त किया जा सकेगा। यह अनुमान है कि विशेष अधिकारों, एकाधिकार, भ्रष्टाचार, हिंसा और अपराध को समाप्त करके इतना धन बचाया जा सकता है जो दुनियां के 50 प्रतिशत वंचित लोगों (गरीबी की रेखा से नीचे लोगों, गरीब और सीमान्त किसानों, मध्यम वर्गीय बेरोजगारों और ऐसे ही अन्य हिस्सों के लोगों सहित) के लिए आवश्यक और वाजिब सामाजिक सुरक्षा के मूल अधिकार के रूप में गारण्टी देने के लिए काफी साबित हो सकता है। एक समतावादी व्यवस्था की स्थापना के लिए इसका मानना है कि मानव समाज के आय का अन्तर 1:5 के अनुपात में होना चाहिए।

(ग) पूंजी के प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त का मानना है कि कॉरपोरेट और

सरकारी-नेतृत्व वाले दोनों मॉडलों का गैर इजारेदारीकरण और पुनर्गठित करने के लिए निम्नलिखित कदम उठाए जाएँ–

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के सभी शेयरों को साधारण शेयर बनाया जाय। किसी को भी इसके 2 प्रतिशत से अधिक शेयर रखने की इजाजत नहीं दी जाए। हालांकि राज्य को किन्हीं विशेष मामलों में साधारण शेयर का एक चौथाई हिस्से का मालिक बनने की इजाजत दी जाए। प्रोत्साहक शेयरों (या ब्लॉक शेयरों) के नियमों (जो कॉरपोरेट क्षेत्र में अब प्रचलित है) को पूर्णतया रद्द किया जाए।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के प्रबन्ध को पूरी तरह जनवादी बनाया जाए। इस संबंध में साधारण शेयर धारकों को प्रबन्ध मण्डल में दो तिहाई प्रतिनिधित्व दिया जाए। बाकी बचा एक तिहाई प्रतिनिधित्व उसी कम्पनी के संबंधित श्रमिकों के लिए आरक्षित रखा जाए। श्रमिकों के प्रतिनिधियों का चुनाव दोनों तरह के श्रमिकों (यानि मानसिक या शारीरिक श्रम करने वालों) में से किया जाए और उन्हें साधारण शेयरधारियों से आने वाले प्रतिनिधियों के समान ही अधिकार प्रदान हों।

ऐसा उद्यम जिसमें सरकार के एक चौथाई शेयर हों उसके प्रबन्ध मण्डल में सभी शेयरधारियों के प्रतिनिधित्व की निम्नलिखित हिस्सेदारी हो : साधारण शेयरधारी 50 प्रतिशत, श्रमिकों की भागीदारी 33 प्रतिशत और सरकारी भागीदारी 17 प्रतिशत हो।

प्रबन्ध मण्डल का चुनाव 3 वर्ष के लिए हो।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल का उपरोक्त वर्णित जनवादी क्षेत्र वर्तमान में चल रहे एकाधिकारवादी कॉरपोरेट और राज्य-निर्देशित क्षेत्रों की तुलना में कहीं अधिक (दुगुना हो सकता है) उत्पादक होगा। इस पहले वाले क्षेत्र के (यानि, जनवादी क्षेत्र के) उच्च वृद्धि दर (या सम्पत्ति के उत्पादन की दर) का कारण इसके (यानि प्रकृत्ति-मानव केन्द्रित मॉडल के) अत्यधिक विकसित मानवीय और पर्यावरणीय संसाधनों में निहित होगा। इसके मानवीय और पर्यावरणीय संसाधनों में अत्यधिक विकास के कारण एक समतावादी आय जिसका अनुपात 1:5 के स्तर पर सुनिश्चित करने पर आधारित होगा और जीवन के सभी क्षेत्र में प्रत्येक व्यक्ति के लिए सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार देने में निहित होगा, जनता और पर्यावरण इसकी मुख्य प्राथमिकताएँ बनाने का मूलभूत सिद्धान्त अख्तियार करने में निहित होगा, इसके द्वारा विश्व शान्ति और सुरक्षा को अपनाने में निहित होगा, जीवन के सभी स्थानीय से विश्वस्तरीय तक के आर्थिक, वित्तीय और व्यापारिक संस्थानों के क्षेत्रों और गांव से लेकर संयुक्त राष्ट्र संघ के स्तर तक जनता के सशक्तिकरण (खास करके महिलाओं, मजदूरों एवं वैज्ञानिकों-तकनीशियनों) की राजनीति में निहित है, इसके वास्तविक और तर्कसंगत अर्थशास्त्र और इसकी मानवीय एंव पर्यावरणीय मूल्यों से ओतप्रोत संस्कृति में निहित है।

(घ) सरकारी-नेतृत्व वाले क्षेत्र की अव्यवहारिकता को भूतवपूर्व सेवियत संघ के पतन से और विश्व में भूतपूर्व समाजवादी देशों द्वारा इस मॉडल को रद्द करने से देखा जा सकता है। कॉरपोरेट क्षेत्र का अप्रभावी होना निरन्तर बढ़ रही असमानता, गरीबी, भूखमरी, बेरोजगारी, बेघरबारता और इन सबसे ऊपर विश्व भर में निरन्तर बढ़ रहे गैरटिकाऊ (अब यहाँ और तब वहाँ) पर्यावरणीय संकट से देखा जा सकता है।

पर्यावरणीय और मानवीय मसलों पर मानव समुदाय(या जनता) की बढ़ती भूमिका और माँग दर्शाती है कि मानव समाज किस दिशा में जा रहा है।

कॉरपोरेट क्षेत्र द्वारा हालिया अख्तियार किया सामाजिक जवाबदेही और नैतिक व्यवहार के दर्शन का उदाहरण भी कॉरपोरेट क्षेत्र से मुक्त व्यापार के मूलभूत सिद्धान्त के गैर-कारगर होने को दर्शाता है जो सिद्धान्त प्रत्येक आर्थिक विकास प्रक्रिया (जिसका एकमात्र उद्देश्य व्यक्तिगत लाभ को उच्चतम सीमा तक बढ़ाना है) में सामाजिक न्याय की उपेक्षा करता है।

(ड़) उदारीकरण, निजीकरण और पुनरसंरचना की चौतरफा ज्ञात धारणाओं पर नजर डाले जो कि आवश्यक तौर पर कॉरपोरेट क्षेत्र की सेवा करती है, इनको भी प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल से संबंधित हर प्रक्रिया में जनता की सहकारी पहलकदमियों से प्रत्युत्तर दिया जा सकता है।

वैश्विक व्यापारिक और वित्तीय संस्थानों (यानि, विश्व व्यापार संगठन, आई.एम.एफ. और विश्व बैंक) के संबंध में उनको बंद करने की अतिवादी मांग के बजाए हमें तर्कसंगत मांग रखनी चाहिए कि ये संस्थान अपने वर्तमान कॉरपोरेट विकास के उद्देश्य की जगह प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास के उद्देश्य को अपनाएं।

(यह उद्धरण नेचर-हुमन सेन्ट्रिक व्यूप्वाइंट अंग्रेजी के अगस्त, 2003 तथा हिन्दी के अंक 182 से लिया गया है)

* * * * *

जम्मू-कश्मीर समस्या के त्रिपक्षीय हल के लिए मोर्चा

जेके समस्या के हल का खाका

I. दृष्टिकोण

हमारा पक्का विश्वास है कि जम्मू-कश्मीर का मसला सांस्कृतिक, नस्ली, राष्ट्रीय या धार्मिक नहीं बल्कि सामान्य तौर पर एक मानवीय मसला है। खास करके यह भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों के बीच त्रिपक्षीय मसला है।

उपरोक्त धारणा इस तथ्य पर आधारित है कि नई उभरी देशों की अन्तरनिर्भरता की विश्वव्यापी वास्तविकता में सभी राष्ट्रों के बीच विवादों को मानवीय मसले बना दिया है, जबकि सभी परम्परागत परिभाषित पहचानों-जैसे नस्ली, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय और धार्मिक को या तो अप्रासंगिक बना दिया है या आंशिक प्रासंगिक बना दिया है। उदाहरण के लिए धर्म का सवाल भारत विभाजन से पहले अत्यधिक प्रभावी था वहाँ आज भारत व पाकिस्तान दोनों में यह अप्रांसगिक बन गया है। इस संबंध में भारत में हाल ही में हिन्दुत्व की राजनीति को रद्द कर दिया जाना और पाकिस्तान की सम्पूर्ण राजनीतिक प्रक्रिया में सभी प्रकार की साम्प्रदायिक पार्टियों की अप्रासंगिकता इसका ठोस प्रमाण है। हालिया अमेरिका की परम्परागत सैनिक एकाधिकारवाद के रद्द होने से जाहिर होता है कि विश्वव्यापी व्यवस्था की एक नई प्रक्रिया का प्रादुर्भाव हो रहा है।

सामान्य तौर पर जम्मू-कश्मीर के मसले की मानवीय प्रकृति और खासतौर पर इसके त्रिपक्षीय चरित्र के तहत इसका एक वास्तविक, तर्कसंगत और न्यायिक हल निकालने के लिए संबंधित तीनों पक्षों (यानि, भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों) के बीच उचित विचार विमर्श के बाद निम्नलिखित तीन एकीकृत कदम उठाए जाने चाहिए।

(अ) विवादित मसला मानने वाले सभी ग्रुपों के बीच एक व्यापक सहमति बनाने के लिए

जम्मू-कश्मीर को विवादित मसला मानने वाले और इसका न्यायिक और तर्कसंगत आधार पर हल स्वीकार करने वाले (आपसी लक्ष्य भिन्नता के बावजूद) सभी ग्रुपों (हर्रियत कान्फ्रेंस के दो धड़ों सहित) से विस्तृत संयुक्त मोर्चा बनाने और अपना कार्य पुरा करने के लिए हर कोशिश करने की अपील करना।

(ब) जम्मू-कश्मीर और खास करके घाटी में सामान्य हालात बहाल करने के लिए

(क) खाड़कूपन के संबंध में भारत द्वारा एकतरफा युद्ध विराम करना।

(ख) जम्मू-कश्मीर में सभी राजनीतिक कैदियों को रिहा करना।

(ग) जम्मू-कश्मीर में सभी ताकतों द्वारा और खास करके भारत द्वारा सभी मानव अधिकारों के हनन को रोकना।

(घ) कश्मीर घाटी में प्रयुक्त भारतीय बलों के एक भाग को वापिस बुलाना।

(ड़) तीनों पक्षों (यानि भारत, पाकिस्तान और खाड़कू ग्रुपों) द्वारा किए जा रहे मानवाधिकार हनन की शिकायतों की दोनों देशों की सहमति से नियुक्त भारत-पाक आयोग से जाँच करवाना और सभी पीड़ितों के लिए उचित मुआवजे की उससे सिफारिश करवाना। पीड़ितों की हत्या वाले मामलों में उनके परिवारों को संबंधित हननकर्ता पक्ष या आक्रमणकारी से समूचित मुआवजा दिलवाना। खाड़कूओं द्वारा किए गए मानवाधिकार हनन के मामलों में पीड़ितों को भारत और पाकिस्तान दोनों द्वारा मिल कर मुआवजा दिया जाए।

(स) भारत-पाक संबंधों में सामान्य स्थिति बहाल करने के लिए

(क) वर्तमान भारत-पाक युद्ध विराम को आगे बढ़ाना।

(ख) दोनों देशों के बलों को युद्ध विराम रेखा से एक किलोमीटर पीछे कर लेना।

(ग) दोनों देशों के सैनिक बलों के दस्तों द्वारा संयुक्त सीमा निगरानी करना।

(घ) तीन समझौतों-सियाचीन, वुलर बैराज और सर क्रीक पर हस्ताक्षर करना, जिन पर भारत व पाकिस्तान के बीच लगभग 5 वर्ष पहले ही प्रारम्भिक सहमति हो चुकी है।

(ङ) भारत व पाकिस्तान के बीच तथा जम्मू-कश्मीर व आजाद कश्मीर के बीच बन्द पड़े कुछ रास्तों को खोलना। जैसे–

(1) मुनाबाव-खोखरापार।

(2) फाजिल्का और इसके सामने।

(3) अमृतसर-लाहौर (जो खुल चुका है)।

(4) पूँछ-पलन्दरी (वाया रावलकोट)।

(5) जम्मू-सियालकोट (वाया सुचेतगढ़)

(6) श्रीनगर-मुज्जफराबाद

(7) पूँछी-उड़ी सड़क वाया हाजी पीर।

(8) कारगिल-अस्कार्डू सड़क।

(च) सीमा पर खाली पड़े सम्पूर्ण क्षेत्र में भारत-पाक दोस्ती के पार्क और व्यापार केन्द्र बनाए जाएँ।

(छ) सियाचीन पहाड़ी के खाली क्षेत्र में एक संयुक्त भारत-पाक वैज्ञानिक अनुसंधान केन्द्र की स्थापना की जाए।

II. जम्मू–कश्मीर समस्या के लिए ढंग–तरीके और आधारभूत मान्यताएँ निश्चित करना

(क) भारत-पाक युद्धवर्जन संधि पर हस्ताक्षर करते हुए सभी सैनिक रूपों को रद्द करना और शान्तिपूर्ण रास्ता अख्तियार करना।

(ख) विवाद में शामिल तीनों राज्यों-यानि, भारत, पाकिस्तान और जम्मू कश्मीर की एकता और अखण्डता को कायम रखना।

(ग) सभी साम्प्रदायिक और फूटग्रस्त प्रस्तावों को रद्द करना।

(घ) जम्मू-कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है या पाकिस्तान की शाहरग (श्वास नली) है, जैसी सभी पुरानी धारणाओं से मुक्ति पाना।

(ड़) भारत, पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोगों का समान आनुवांशिक कोड (यानि, एक वंश के लोग) है, इस बात को ध्यान में रखा जाए।

(च) दोनों देशों के लोगों को वर्तमान दौर में गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, इत्यादि समान समस्याओं से सामना है, इस बात को मद्देनजर रखा जाए।

(छ) और भारत, पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोगों के साँझे भविष्य के परिप्रेक्ष्य को अख्तियार किया जाए।

III. एक मानवीय प्रस्ताव

उपरोक्त ढंग, तरीकों और मान्यताओं से चलते हुए तीनों संबंधित पक्षों के सामने सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह है कि जेके समस्या पर एक समझौताकारी हल निकाला जाए। एक ऐसा हल जो संबंधित तीनों पक्षों के हितो और आकांक्षाओं में मेल बैठाता हो और उनके अपने-अपने राष्ट्रीय सम्मान की रक्षा करता हो तथा उनकी सम्पन्नता के लिए भविष्य के द्वार खोलता हो।

हमारी तरफ से हम निम्नलिखित तीन सूत्री मानवतावादी हल प्रस्तावित करते हैं। हमारे प्रस्ताव है :

(क) कि जम्मू-कश्मीर की रक्षा और विदेश मामलों को भारत और पाकिस्तान द्वारा संयुक्त रूप से या भारत-पाक सहराज्य के माध्यम से संचालित किया जाए।

(ख) कि जम्मू-कश्मीर राज्य एक स्वतन्त्र राज्य हो जिसको रक्षा और विदेश मामलों (जिनको भारत-पाक सहराज्य द्वारा चलाया जाए) के अलावा सभी मामलों में सम्प्रभुसता हासिल हो और

(ग) कि जम्मू-कश्मीर में सभी नस्ली समुदायों को अधिकतम सम्भव स्वायत्तता दी जाए।

जेके समस्या के त्रिपक्षीय हल के लिए मोर्चा
आर पी सर्राफ, फोन 0191-2535354 (पीपी), एम आर कुरैशी, फोन-0191-2530001,
ए एस राथर, फोन-0191-2578989, E-mail: saraf_rp @rediffmail.com

* * * * *

सही व गलत में भेद करने का सवाल

I

इतिहास दर्शाता है कि मनुष्य अपने उद्भव से ही प्रत्येक घटनाक्रम (प्राकृतिक और सामाजिक) से संबधित उसके सिद्धान्त (यानि उसके गुण, चरित्र या प्रकृति) व्यवहार और संगठन से बर्ताव के लिए सही और गलत में भेद करने के उसूल को अपनाकर ही विकसित हुआ है और अपना जीवन बसर करता रहा है। मानवीय जीवन में कोई भी क्षण (यानि सामाजिक गतिविधि या भोजन करने और यहाँ तक कि आराम करने की व्यक्तिगत गतिविधि के समय भी) ऐसा नहीं बीतता जब मानव मात्र को इस सवाल से पाला नहीं पड़ता है।

II

इतिहास आगे दर्शाता है कि प्रत्येक घटनाक्रम की तरह सही और गलत में भेद करने का सवाल लगातार बदलता रहा है। इस प्रकार, इतिहास की विभिन्न सामाजिक मंजिलों में गलत व सही में पहचान करने के लिए भिन्न-भिन्न तरह के विचार मौजूद रहे हैं।

उदाहरण के लिए वर्तमान में चल रही पूंजीवादी मंजिल में हम पांच किस्म के मूलभूत विचारों का प्रचलन देख रहे हैं। जिनमें से प्रत्येक हमारे समय की सच्चाई का प्रतिनिधित्व करने का दावा करते हुए अपने से भिन्न विरोधी विचारों को झूठा साबित करता है। ये पांच किस्मे हैं–1. कारपोरेट, 2. कम्युनिष्ट, 3. धार्मिक रूढ़ीवादी, 4. राजनीतिक और आर्थिक रूढ़ीवादी और 5. स्वतंत्र विचार जो किसी विचाराधारा से जुड़े हुए नहीं हैं।

कारपोरेट सिद्धान्त कहता है कि सही व गलत के बीच भेद करने में निर्णायक पहलू पूंजी है। इसके मुताबिक पूंजी की वृद्धि ही विकास, सम्पन्नता और उन्नति को दर्शाती है और कि पूंजी की अधिकतम वृद्धि निजी मिल्कियत और स्वतंत्र राजनीतिक प्रतियोगिता से ही हासिल की जा सकती है।

कम्युनिष्ट सिद्धान्त भी मानता है कि लोगों का विकास, सम्पन्नता और उन्नति नापने का पैमाना पूंजी वृद्धि है। यह आगे कहता है कि राजनीतिक सत्ता पर कम्युनिष्ट पार्टी का एकाधिकार और उत्पादन के साधनों पर राज्य का एकाधिकार उच्च पूंजी वृद्धि हासिल करने की पूर्व शर्त है।

धार्मिक रूढ़ीवादी भी पूंजी वृद्धि के सिद्धान्त को सामाजिक विकास के आधार के तौर पर पेश करते हैं। परन्तु उनके अनुसार पूंजी-निर्माण में वृद्धि केवल उनके अपने-अपने धार्मिक रूढ़ीवादी विश्वासों के रास्ते पर चलकर हासिल की जा सकती है।

आर्थिक रूढ़ीवादी जैसे निजीकरण, उदारीकरण और पुनर्गठन के समर्थकों का मानना है कि अधिकतम पूंजी वृद्धि केवल उनकी धारणाओं को अपनाने से ही हो सकती है, जबकि राष्ट्रीयकरण, सरकारी मिल्कियत या सार्वजनिक क्षेत्र के समर्थक दावा करते हैं कि केवल उनका सिद्धान्त अपनाकर ही उच्चत्तम पूंजी-उत्पादन हासिल किया जा सकता है।

स्वतंत्र विचारक, हालांकि अधिकतम पूंजी के विचार को उच्च प्राथमिकता देते हैं। परन्तु वे गढ़मढ़ धारणाओं का जंगल खड़ा करते हैं। जिनसे कहीं नहीं पहुँचा जा सकता।

उपरोक्त वर्णित सिद्धान्त हालांकि भिन्न-भिन्न रास्ते सुझाते हैं। परन्तु मूल तौर पर सभी सहमत हैं कि पूंजी ही उन सबका साझा उद्देश्य है, यानि वर्तमान समाज में गलत व

सही की पहचान के लिए उन सबका परिभाषित मूल्य एक है।

पूंजी के सिद्धान्त को सही व गलत के निर्णय के लिए फैसलाकून पहलू मानने के ठीक उलट हालिया उभरा प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त मानता है कि उनकी पूंजी (यानि पैसा या धन-सम्पत्ति) केवल विनिमय का माध्यम मात्र है और यह समाज में किसी बहुमूल्य चीज का प्रतिनिधित्व नहीं करती है। इस सिद्धान्त के अनुसार केवल मानवीय और पर्यावरणीय संसाधन समाज में प्रत्येक चीज के अस्तित्व और विकास के लिए दो आधारभूत पहलू हैं। इन दो पहलूओं के अलावा समाज में किसी चीज (धन-सम्पत्ति, पैसा या अन्य कोई चीज) का कोई मूल्य नहीं है।

III

पूंजीवादी युग से पहले मानव समाज सामंती व्यवस्था से चरित्रित था जो हजारों साल तक चली और जिसमें बड़ी संख्या मे छोटे-बड़े सामंती राज्यों का अस्तित्व रहा और जहां प्रत्येक राज्य एक राजा के द्वारा शासित था। राजशाही का अद्वितीय लक्षण जिसे विभिन्न धर्मों में अपनी साँझी धारणा के तहत उभारा। वह यह था कि राजा ईश्वर का व्यक्तिगत प्रतिनिधि है। इसलिए वह लोगों पर राज करने का अधिकारी है (यह राजाओं का दैविक अधिकार का सिद्धान्त कहलाता है)। विभिन्न किस्मों के धर्मों के बीच भारी दुश्मनी के बावजूद सही व गलत को पहचानने के लिए उनका परिभाषित सांझा बिन्दू राजा ही था। राजा के प्रति अत्यधिक राजभक्ति प्रत्येक धर्म का आम उद्देश्य था, जबकि उसका विरोध करना पाप और अपराध था।

IV

सामन्ती युग से पहले विश्वभर में मानव समाज की पद्धति कबीलावाद थी। इस पद्धति के तहत कबीले के प्रति वफादारी सही व गलत की पहचान का मापदण्ड थी। कबीले और उसके मुखिया के प्रति किसी भी तरह की गैर-वफादारी को अनैतिक और गैर-कानूनी व्यवहार माना जाता था।

V

और पीछे जाते हुए हम गण समाज की तरफ आते हैं जो कई खून के रिश्ते वाले परिवारों (जो संस्कृत में गण-गौत्र कहलाते हैं) से गठित होता था। गण की सामाजिक संरचना में गण के सभी सदस्यों को सभी मामलों में बराबरी के अधिकार थे तथा जिसमें साथ ही साथ गण के नेता को अन्तिम निर्णय करने का अधिकार प्राप्त था। जब कभी विरोधी गण के सदस्य नजर आते या पकड़े जाते तो उनके साथ दुश्मन जैसा बर्ताव किया जाता और उन्हें निर्दयता से कत्ल कर दिया जाता था। गण सामाजिक संरचना लाखों साल तक चलती रही। गण समाज में गलत व सही के बीच फैसला करने का परिभाषित उसूल सम्पूर्ण गण के सांझे भले और सम्पन्नता के लिए काम करना था जबकि इस उसूल की अवहेलना करना अपराध बनता था।

VI

इसके प्रारम्भिक भूतकाल की तरफ पीछे जाते हैं तो हम पाते हैं कि जब मानव घुमक्कड़ था और मानवीय झुण्ड (जो नर और नारी के मानवीय समूह से बने थे और अनुवंशीय और यौन संबंधों से बंधे थे जो आगे जाकर सामाजिक संरचना में विकसित हुए जिन्हें परिवार कहा जाता है) समस्त पृथ्वी पर अपनी प्रारम्भिक सामाजिक संरचना में

गठित हो रहा था, उस समय सही व गलत के बीच भेद करने का मानवीय उसूल यह था कि संबंधित मानव झुण्ड के हितों को आगे बढ़ाएं और उनकी रक्षा करें वही सही है, जिसमें इसके प्रत्येक सदस्य के 3 आधारभूत जैविक आवेगों को पूरा करना भी शामिल था।

VII

मानवीय समाज की विभिन्न मंजिलों यानी सामन्ती, पूंजीवादी इत्यादि में सही और गलत की पहचान के विभिन्न उसूलों पर दृष्टिपात दर्शाता है कि ये उसूल मुख्य तौर पर अपने समय के सम्पूर्ण समाज के भले (यानी इसकी निश्चित सामाजिक व्यवस्था जिसे प्राचीन संस्कृत साहित्य में राज्य धर्म कहा गया) के लिए थे। इन्होंने उस समाज के प्रत्येक व्यक्तिगत सदस्य की सम्पूर्ण आधारभूत जैविक आवश्यकताओं की सेवा की– यानि (क) किसी भी खतरे से जीवन की सुरक्षा के आधारभूत जैविक मानवीय आवश्यकता को पूरा करना, (ख) उपलब्ध आवश्यक भौतिक चीजों यानि भोजन, मकान, कपड़े इत्यादि के माध्यम से शारीरिक आवश्यकताओं और साथ ही साथ मनोवैज्ञानिक धारणाओं यानि सामाजिक पहचान, न्याय, स्वतंत्रता, समानता, भाईचारा इत्यादि के माध्यम से मानसिक आवश्यकताओं को पूरा करके इस आधारभूत जैविक मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करना, (ग) और सह यौन जीवन के कानूनी और नैतिक मानदण्डों के माध्यम से आधारभूत जैविक मानवीय यौन आवश्यता को पूरा करना।

यह सुस्पष्ट है कि सही व गलत के बीच पहचान करने के लिए मनुष्य की 3 आधारभूत जैविक आवश्यकताओं में से किसी ने भी कभी भी परिभाषित सिद्धान्त की भूमिका अख्तियार नहीं की है।

VIII

किसी विशिष्ट समाज से संबंधित गलत और सही में भेद करने का मूलभूत विचार कोई साधारण धारणा नहीं है। बल्कि यह उस सामाजिक समुदाय के लिए सर्वोच्च महत्व की धारणा है। यह इसलिए है कि इस प्रकार के एक सामाजिक रचनातंत्र की सम्पूर्ण संरचना इस सिद्धान्त पर आधारित, निर्देशित, कार्यान्वित और संगठित होती है। दूसरे शब्दों में किसी भी रचनातंत्र का सम्पूर्ण राजनीतिक क्षेत्र, आर्थिक तंत्र और सांस्कृतिक परिमण्डल का आधार सही और गलत में भेद के अपने संबंधित मूलभूत विचार से निर्मित होता है। इसे विद्यमान पूंजीवादी कॉरपोरेट समाज के मूलभूत सिद्धान्त और व्यवहार से आसानी से देखा जा सकता है। जहाँ हमारी सम्पूर्ण राजनीति (सम्पूर्ण संविधान, कानूनों एवं नियमों से गठित) समस्त आर्थिकता (निर्माण, सेवा, कृषि आदि जैसे सभी क्षेत्रों से गठित), तथा सम्पूर्ण संस्कृति (विचार, रिवाज, कला, शिक्षा, विज्ञान, तकनिकी, खोज, आचरण, शिष्टाचार आदि) पूंजी को जीवन-रेखा मानने वाले मूलभूत सिद्धान्त पर आधारित है और पूंजी के खिलाफ वाली हर चीज गलत है। हमारे विद्यमान कॉरपोरेट मॉडल के न्याय, उदारता, समानता, भ्रातृत्व और विकास का सम्पूर्ण सिद्धान्त और व्यवहार सही और गलत में भेद के इस मूलभूत विचार से निर्देशित है।

अर्थात् कॉरपोरेट पूंजी मालिक और इसके राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक गुर्गे प्रत्येक देश में आम आदमी की पीठ पर कैसे और क्यों सवार हैं। जबकि आम-साधारण जनता उनके (कॉरपोरेट के) असीमित दमन और शोषण के जुए के नीचे कराह रही है।

सही और गलत में भेद करने वाले विभिन्न परिभाषित विचारों की इसी तरह की भूमिका उनके समकालीन ऐतिहासिक समय में रही है।

IX

सही और गलत में भेद के कॉरपोरेट मूलभूत विचार से असाधारण मत भिन्नता रखते हुए प्रकृति-मानव केन्द्रित मूलभूत विचार मानता है कि हर प्रकार के न्याय राजनीतिक, कानूनी, आर्थिक और नैतिक इत्यादि–और स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व के मूलभूत मानवीय अधिकार इस मूलभूत सिद्धान्त पर आधारित होने चाहिये जो प्राकृतिक और मानवीय घटनाक्रम को मानव जीवन का स्नायु केन्द्र समझे तथा प्राकृतिक और मानवीय घटनाक्रम के खिलाफ सभी गतिविधियों को अनैतिक और घृणित माने।

* * * * *

(जोधपुर में 29 से 31 अक्टूबर, 2004 को बेरोजगारी पर सम्मेलन में प्रस्तुत पेपर)

वर्तमान वैश्विक बेरोजगारी
मानव समुदाय के लिए एक भयावह समस्या
इसका कारण एवं निवारण

I

बेरोजगारी आज दुनिया की सबसे गंभीर समस्याओं (जैसे, ग्लोबल वार्मिंग की बिगड़ती स्थिति, पानी की भारी कमी, गरीब-अमीर के बीच बढ़ती खाई, अद्वितीय गरीबी इत्यादि) में से एक है जो अब खतरनाक रफ्तार और स्तर हासिल कर चुकी है, ऐसा इसके इतिहास में कोई उदाहरण नहीं मिलता। शायद विश्व ने रोजगार के ऐसे खराब हालात का मुश्किल से ही कभी सामना किया है जैसा कि आज कर रहा है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आई. एल. ओ.) की 2003-2004 की रिपोर्ट के अनुसार मानव समुदाय के सामने आज बेरोजगारी एक अत्यन्त भयावह वैश्विक समस्या है।

2003 आई. एल. ओ. रिपोर्ट दर्शाती है कि सन् 2003 में वैश्विक बेरोजगारी लगातार बढ़ती गई है जो पुरुष और महिलाओं में मिलाकर 185.9 मिलियन (यानि सम्पूर्ण श्रमिक संख्या का 6.2 प्रतिशत) तक पहुंच गई है। जबकि बाद के आधे साल में आर्थिकता में कुछ सुधार हुआ है। परन्तु बेरोजगारी ने उच्चत्तम आँकड़े का रिकार्ड कायम किया है। युवाओं में यह बेरोजगारी तेजी से बढ़ी है। दुनिया के बेराजगारों में लगभग 108.1 मिलियन पुरुष तथा 77.8 मिलियन महिलाएं हैं।

युवाओं के लिए वैश्विक बेरोजगारी का रुझान 2004 में एक नया विश्लेषण आई. एल. ओ. के रोजगार रणनीति विभाग द्वारा तैयार किया गया है। जिसके अनुसार 15 से 24 वर्ष की उम्र के युवा दुनियां में बेरोजगारों का करीब आधा हिस्सा हैं। वास्तव में युवा बेरोजगारी विश्व में व्यापक तौर पर पिछले दशक में आसमान छूने लगी है जो करीब 88 मिलियन तक पहुंच गई है।

रिपोर्ट में पाया गया है कि 15 से 64 वर्ष तक की आयु वाले काम करने लायक आबादी का युवा 25 प्रतिशत हिस्सा है जो सन् 2003 में दुनियाभर की बेरोजगार जनसंख्या 186 मिलियन का 47 प्रतिशत है।

युवाओं की भारी संख्या में बेरोजगार होने के अलावा भी जो युवा रोजगार में लगे हैं उनकी स्थिति भी कोई बेहतर नहीं है। 550 मिलियन दुनिया के कामगारों में 130 मिलियन युवा कामगार हैं। जो काम तो करते हैं परन्तु वे स्वयं और उनके परिवार 1 डालर प्रतिदिन की गरीबी की रेखा के दायरे से ऊपर नहीं उठ पाते हैं।

रिपोर्ट के अनुसार सन् 2003 में दुनियाभर में युवा बेरोजगारी की दर 14.4 प्रतिशत रही है। जिसमें सबसे ऊँची दर पश्चिमी एशिया एवम उत्तरी अफ्रीका के देशों की 25.6 प्रतिशत, सब-सहारा अफ्रीका की 21 प्रतिशत, संक्रमणकालीन आर्थिकताओं वाले देशों की 18.6 प्रतिशत, लेटिन अमेरिका एवं कैरीबियन देशों की 16.6 प्रतिशत, दक्षिणी-पूर्वी एशिया की 16.4 प्रतिशत, दक्षिण एशिया की 13.9 प्रतिशत तथा औद्योगिक देशों की 13.4 प्रतिशत एवं पूर्वी एशिया की 7 प्रतिशत बेरोजगारी रही है।

केवल औद्योगिक आर्थिकता वाले क्षेत्र में युवाओं की बेरोजगारी में दर्शनीय गिरावट देखी गई है। 1993 में यह बेरोजगारी 15.4% थी जो 2003 में 13.4% हो गई है।

दुनिया के 85 प्रतिशत युवा विकासशील देशों में रहते हैं, जहाँ व्यस्कों की तुलना में युवा 3.8 गुणा अधिक बेरोजगारी के शिकार हैं जबकि औद्योगिक देशों में यह बेरोजगारी 2.3 गुणा है।

इस रिपोर्ट के अनुसार ये बेरोजगार युवा अस्तित्व के लिए संघर्षरत हैं, अनौपचारिक आर्थिकताओं में प्राय: युवा असन्तोषजनक हालात में कार्य करने को विवश हैं। जिन युवाओं को काम मिल भी जाता है उन्हें प्राय: ज्यादा वक्त, अनौपचारिक अनुबंध के तहत, कम तनख्वाह एवम् नाम मात्र की सामाजिक सुरक्षा या बिलकुल सुरक्षा नहीं होने के हालात में काम करना पड़ता है। इस प्रकार युवाओं की निर्भरता अपने परिवारों पर बढ़ती जा रही है तथा गैर कानूनी गतिविधियों में धकेले जाने की संभावना प्रबल हो गई है।

रिपोर्ट दर्शाती है कि युवाओं की संख्या में तेजी से हो रही बढ़ोतरी के कारण रोजगार देने वाली आर्थिक गतिविधियों की यह क्षमता नहीं रह गई है कि वे सब को काम दे सके।

पिछले दशक में युवाओं की जनसंख्या में वृद्धि दर 10.5 प्रतिशत रही है तथा 2003 में उनकी जनसंख्या 1 अरब 10 करोड़ हो गई। जबकि युवाओं के लिए यह आर्थिकता मात्र 0.2 प्रतिशत की दर से ही रोजगार उपलब्ध करा सकी है यद्यपि रोजगार के 526 मिलियन अवसर उपलब्ध हो रहे हैं।

युवा बेरोजगारी रिकार्ड स्तर तक पहुंच गई है और आसमान को छू रही है जो यह चेतावनी दे रही है कि इससे दुनिया की आर्थिकता पिछड़ती जा रही है। इस पर संयुक्त राष्ट्र संघ ने आव्हान किया है कि इस समस्या से निपटने के लिए लक्ष्यबद्ध एवम् सामूहिक कदम उठाए जाएं।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के डायरेक्टर जनरल जुआन सोमाविया ने कहा, ''हम अत्यधिक शिक्षित युवा पीढ़ी के एक महत्वपूर्ण भाग की ऊर्जा और बुद्धि को बर्बाद कर रहे हैं। जबकि ऐसा विश्व ने पहले कभी नहीं किया।संयुक्त राष्ट्र मिलेनियम विकास लक्ष्य को हासिल करने के लिए युवाओं के रोजगार पाने और अच्छे कार्य कर पाने की संभावनाओं को बढ़ाना पूर्णतया दुसाध्य है।''

संयुक्त राष्ट्र मिलेनियम सम्मेलन 2000 द्वारा अत्यधिक गरीबी और भूख को आधा कम करने तथा बच्चों व मातृत्व मृत्युदर को कम करने सहित कुछ विशेष लक्ष्य सन् 2015 तक हासिल करने का आव्हान् किया है।

युवाओं के लिए ग्लोबल रोजगार रुझान 2004 की आई. एल. ओ. रिपोर्ट कहती है कि विश्व के युवाओं की बेरोजगारी दर को आधा करने के लिए कम से कम 2.2 ट्रिलियन (22 खरब) धन की आवश्यकता है। यह सन् 2003 के विश्व सकल घरेलू उत्पाद (विश्व की जी.डी.पी.) का लगभग 4 प्रतिशत भाग है।

आई. एल. ओ. की सन् 2003 की रिपोर्ट के अनुसार विश्व के विभिन्न भागों में बेरोजगारी की दर नीचे टेबल के अनुसार है–

बेरोजगारी दर प्रतिशत में (सन् 1990 से 2002 के बीच)

क्र. सं.	क्षेत्र/वर्ष	1990	1995	2000	2002
1.	लेटिनअमेरिका और कैरीबियन	6.5	8.5	9.0	9.9
2.	पूर्वी एशिया	–	3.0	3.2	4.0
3.	दक्षिण-पूर्व एशिया	3.0	4.2	6.0	6.8
4.	दक्षिण एशिया	3.8	3.0	3.8	3.8
5.	यूरोपिय संघ	8.0	11.0	7.0	7.0
6.	अमेरिका	5.0	5.0	4.0	5.2
7.	जापान	2.1	3.0	4.5	5.3
8.	सब-सहारा अफ्रीका के नीचे	–	–	13.0	14.8
9.	मध्य-पूर्व और उत्तरी अफ्रीका	–	–	17.0	18.0

बिजनैस स्टेन्डर्ड 17/3/2004

भारत के संबंध में सुपरिचित सांख्यिकीय आँकड़े दशति हैं कि बेरोजगारी वृद्धि की समस्या अत्यधिक गंभीर है।

राष्ट्रीय सैम्पल सर्वे की दो क्रमागत रिपोर्टों के अनुसार बेरोजगारी की दर 5.99 प्रतिशत से 7.32 प्रतिशत के स्तर तक पहुंच गई है और इससे कुल बेरोजगारों की संख्या 20.13 मिलियन से बढ़कर 26.58 मिलियन हो गई।

प्रतिवर्ष लगभग 8 मिलियन (80 लाख) भारतीय श्रम शक्ति (रोजगार लायक) में दाखिल होते हैं। परन्तु पिछले सन् 1993-2000 के बीच प्रतिवर्ष औसतन मात्र 3.6 मिलियन (36लाख) नये रोजगारों का सृजन होता रहा है।

दसवीं पंचवर्षीय योजना के आधार वर्ष 2002 में बेरोजगारी के हालात दर्शाते हैं कि बेरोजगारी के बैकलॉग (संचय) को भरने के लिए 35 मिलियन रोजगार अवसरों के सृजन की आवश्यकता है। सन् 2002-07 के बीच 45.56 मिलियन लोगों के लिए रोजगार अवसरों का सृजन करने की आवश्यकता है।

विजारिया का अध्ययन 'भारत में युवाओं के बीच बेरोजगारी' दर्शाता है कि भारत की सम्पूर्ण आबादी की तुलना में युवाओं के बीच बेरोजगारी अधिक है और बढ़ती अधिसंख्या में युवा लोग भारत की श्रम शक्ति में शामिल हो रहे हैं। आज बेरोजगारी की अत्यधिक चुनौतीपूर्ण समस्या शिक्षित बेरोजगारी के रूप में मौजूद है। **From Rediff.com home news Business website**

भारत के सरकारी रोजगार कार्यालयों में सन् 2000 में ऐसे 4 करोड़ नौजवानों के नाम दर्ज थे जो रोजगार चाहते थे।

सन् 1988 से 1999 के दौरान रोजगार वृद्धि दर 6.68 प्रतिशत रही और इस अवधि में पंजीकृत रोजगार खोजने वालों की दर 22.56 प्रतिशत रही।

आर्थिक सर्वेक्षण 2002-2003 में भारत सरकार ने स्वीकृत किया है कि 1988-94 के दौरान रोजगार वृद्धि की दर प्रतिवर्ष 2.7 प्रतिशत थी, जबकि 1994-2000 के बीच यह वृद्धि केवल 1.07 प्रतिशत रह गई, जिसका अर्थ है कि प्रतिवर्ष वृद्धि दर में कमी 1.63 प्रतिशत की हो गई। इसी स्रोत के मुताबिक 1993-94 के दौरान बेरोजगारी की दर 5.99 प्रतिशत थी। जबकि 1999-2000 के वक्त यह बरोजगारी दर 7.32 प्रतिशत तक बढ़ गई। और यह वही समय था जब नई आर्थिक नीतियों के हर माध्यम से आर्थिक वृद्धि हासिल करने के नारे लगाये जा रहे थे।

इसी सर्वेक्षण के मुताबिक यह भी साफ है कि बिहार के आर्थिक हालात भी बाकी भारत की तरह के हैं, जहाँ रोजगार वृद्धि की दर 1.59 प्रतिशत रही और बेरोजगारी की वृद्धि दर 7.32 प्रतिशत रही।

श्रम की उपलब्धता (बेरोजगारी) के संबंध में आंकड़े मुद्दे की केवल भयावह स्थिति को दर्शाते हैं। जहाँ देश की कुल आबादी का 61.8 प्रतिशत श्रम शक्ति हर वक्त काम के लिए तैयार है वहाँ बिहार में यह 57.3 प्रतिशत है। इस प्रकार बिहार और अखिल भारतीय स्तर पर 50 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या श्रम उपलब्ध करवाने के लिए तैयार खड़ी है, यानि बेरोजगारी की लाईन में खड़ी है।

देश भर में बेरोजगारी की निराशाजनक हालात को हालिया रेल्वे नौकरियों के समय हुए दंगा-फसादों ने साफ उद्घाटित किया है। रेल्वे में ग्रुप 'सी' और 'डी' के लिए परीक्षा ली गई। जिसमें 38000 नौकरियों के लिए 75 लाख आवेदक उपस्थित हुए और इसी दौरान आसाम और महाराष्ट्र में हिंसा हुई। इन पदों के लिए जहाँ 12वीं पास मांगे गये थे। वहाँ आवेदकों में एम.बी.ए. किए हुए, स्नातक और स्नातकोत्तर, बी.टेक. किये हुए शामिल थे।

II

बेरोजगारी का कारण क्या है, इस सवाल को लेते हैं। इसका तात्कालिक कारण बाजार-निर्देशित कारपोरेट विकास मॉडल में निहित है। जिसका एकमात्र उद्देश्य अधिकतम लाभ कमाना है। जिसके लिए यह कारपोरेट मॉडल जहाँ तक सम्भव हो मानव श्रम से बचते हुए अत्यधिक विकसित तकनीक काम में लेता है। विकसित तकनीक भारी उत्पादन की क्षमता रखती है जो एक तरफ संसाधनों के अति उपयोग और दुरुपयोग से एवम् और अधिक अवशिष्ट (कूड़ा) पैदा करके प्राकृतिक पर्यावरण को प्रदूर्षित करती है और नुकसान पहुंचाती है वहीं दूसरी तरफ बहुसंख्यक श्रमिकों की छंटनी कर अमीरी-गरीबी में अमानवीय दूरी पैदा करती है तथा इस प्रकार मानव संसाधनों को नुकसान पहुंचाती है।

बेरोजगारी का अन्तिम मूल कारण कारपोरेट सामाजिक व्यवस्था की धन और सत्ता की दिशा में निहित है, जिससे लगातार पूँजी-मालिकों के हाथों में मुनाफे से धन का ढेर इकट्ठा होता जा रहा है जबकि श्रमिक और अन्य मेहनतकश लोगों को यह गरीब विरोधी कारपोरेट नीतियों के माध्यम से गरीबी में धकेलती जा रही है।

कारपोरेट सामाजिक व्यवस्था निम्न मूलभूत तत्वों से चरित्रित है, इनमें से प्रत्येक का नेतृत्व एवम् नियन्त्रण एक समय में एक कारपोरेट ग्रुप या उसकी प्रतिनिधि संस्था तथा दूसरे समय में अन्य कारपोरेट ग्रुप या उसकी प्रतिनिधि संस्था करती है।

1. राज्य का ढ़ांचा राजनीतिक दलों द्वारा नियन्त्रित और संचालित होता है। यद्यपि राजसत्ता पाने और राजसत्ता में बने रहने के लिए उनमें आपस में बहुत तीव्र संघर्ष होता है। परन्तु वे सब इस बुनियादी कारपोरेट सिद्धांत पर एकमत हैं कि कारपोरेट नजरिया और व्यवस्था मानव समुदाय के लिए सबसे अधिक बेहतर सामाजिक दृष्टिकोण एवम् प्रबन्ध का प्रतिनिधित्व करता है। ये सभी कारपोरेट समर्थक राजनीतिक पार्टियाँ अपने-अपने कारपोरेट समर्थकों द्वारा दिये गये धन के सहारे आपस में चुनावी मुहिम का संचालन करते हैं और चुनाव लड़ते हैं। प्रत्येक कारपोरेट राज्य अपने अधीन क्षेत्र के प्राकृतिक एवम् मानव संसाधनों पर चुनौतीहीन संवैधानिक एवम् विधिक नियन्त्रण रखता है।

2. आर्थिक ढांचा स्वयं कारपोरेट पूंजीपतियों द्वारा (बड़े व छोटे दोनों) सामूहिक तौर पर नियन्त्रित एवम् संचालित है। आर्थिक ढ़ांचे जिसे उत्पादन पद्धति भी कहते हैं, में उत्पादन क्षेत्र की सभी श्रेणियाँ शामिल हैं। वर्तमान कारपोरेट उत्पादन पद्धति आम तौर पर तीन मुख्य उत्पादन क्षेत्रों से गठित हैं, अर्थात्

(क) कृषि एवम् उससे संबंधित शाखाएँ

(ख) कारखाना एवम् उससे संबंधित अन्य व्यवसाय तथा

(ग). सेवाएँ और उससे संबंधित गतिविधियाँ ।

वर्तमान में सेवाक्षेत्र विशेषतौर पर सूचना तकनीकी शाखा वद्धि दर के नजरिए से अत्यधिक उत्पादक क्षेत्र होने से प्रथम स्थान पर है तथा इस प्रकार आर्थिक व्यवस्था में प्राथमिक स्थान रखता है।

3. सांस्कृतिक तौर पर विभिन्न सांस्कृतिक गतिविधयों का विशाल क्षेत्र कारपोरेट नियन्त्रण के तहत है। प्रत्येक सांस्कृतिक तत्व आज माल बन चुका है जिसे किसी कीमत पर खरीदा व बेचा जा सकता है। वर्तमान दृश्य एवम् लिखित मिडिया (जिसमें फिल्म और सिनेमा क्षेत्र शामिल है) आज मौजूदा कारपोरेट व्यवस्था के रक्षक हैं।

III

बेरोजगारी की समस्या के समाधान के बारे में यह आवश्यक है कि इस समस्या को तात्कालिक, दीर्घकालिक तथा व्यवस्थागत तीन तरफा दृष्टिकोण से हल किया जाए।

तात्कालिक रास्ता निम्न तीन माँगों पर आधारित होना चाहिए :–

(क) सभी गैर स्नातक तथा उससे नीचे वाले (अशिक्षित सहित) सभी बेरोजगारों को प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 2 डालर के हिसाब से मासिक भत्ता दिया जाए।

(ख) सभी स्नातक व उससे ऊपर के बेरोजगारों को प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 3 डालर के हिसाब से मासिक भत्ता दिया जाए।

(ग) सभी विशेषज्ञों एवम् व्यवसायियों को प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 4 डालर के हिसाब से मासिक भत्ता दिया जाए।

दीर्घकालीन रास्ता निम्न तीन क्षेत्रों को विकसित करने में निहित है। –

(क) पर्यावरण क्षेत्र जिसके हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता आदि घटक हैं।

(ख) मानव क्षेत्र जो सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवम् राजनीतिक आयाम लिए हुए हैं।

(ग) वैज्ञानिक एवम् तकनीकी क्षेत्र जो तमाम प्रकृति या ब्रह्माण्ड में अनुसंधान करने में लगा हुआ है।

व्यवस्थागत परिवर्तन विवश कर रहा है कि वर्तमान कारपोरेट व्यवस्था को एक नई प्रकृति-मानव केंद्रित व्यवस्था में बुनियादी तौर पर तब्दील किया जाए।

नई व्यवस्था के निम्न मुख्य बिन्दु हैं–

मानव समाज का प्रकृति–मानव केंद्रित मॉडल

1. मानव समाज के प्रकृति मानव केन्द्रित मॉडल का मानना है कि मानव समाज में पर्यावरण और मानव जाति दोनों बहुत ही मूल्यवान घटनाक्रम हैं। यह दोनों इसकी सामाजिक पूँजी (सर्वोच्च वस्तु) है, इन दोनों (यानि, पर्यावरणीय-मानवीय संसाधन) में वृद्धि से विकास, सम्पन्नता एवं प्रगति होती है तथा सोचने, कहने, करने और संगठित होने के लिए यह निर्देशक सिद्धान्त का कार्य करता है।

2. यह हर समय और हर जगह पर्यावरण (यानि, हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) संवर्धन के मूलभूत कार्य का मजबूती से समर्थन करता है।

3. यह प्रत्येक व्यक्ति के जैव-सामाजिक अस्तित्व के अधिकार को शुद्ध हवा, साफ पीने के पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित करने का समर्थक है।

4. यह आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में अधिकतम 5 गुणा अन्तर) पर आधारित उचित समानता के मूलभूत मानवीय अधिकार का समर्थक है।

5. यह विश्व शान्ति का मजबूती से पक्षपोषण करता है और विश्व के सभी विवादों खासकरके जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका इत्यादि के सीधे शांतिपूर्ण हल के मार्ग का समर्थक है। जम्मू कश्मीर के न्यायपूर्ण समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा एवं विदेश महकमों को भारत-पाक सहराज्य के संयुक्त नियन्त्रण में सौंपा जाना चाहिए जबकि बाकी सभी मामलों (रक्षा और विदेश मामलों के अलावा) में जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र होना चाहिये जबकि इसके नौ नश्ली क्षेत्रों में से प्रत्येक को अधिकतम संभव स्वायत्तता प्रदान की जाए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन और जोर्डन के संबंध में भी कारगर होगा।

6. यह संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के 5 स्थायी सदस्यों के वीटों पावर को समाप्त करते हुए विश्व व्यवस्था के पुनर्गठन करने एवं किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए संयुक्त राष्ट्र की केन्द्रीय सभा में साधारण बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान करने की मांग करता है।

7. यह विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाए प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर पुनर्गठित करने तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है) को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति बनाने की हिमायत करता है जिसमें मानवीय और पर्यावरणीय पहलु उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्ववाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के पांच उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाता है।

8. यह सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50% प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित करने का समर्थक है।

9. यह खेती को सहकारिता के आधार पर सुसंगठित करने को प्रोत्साहित करता है तथा खेती से संबंधित सभी लोगों की जीविका को सुनिश्चित करने का समर्थक है।

10. यह श्रमिकों (शारीरिक और मानसिक दोनों) के सशक्तिकरण के लिए जोरदार आवाज उठाता है, जिसके अनुसार सभी संस्थानों, परियोजनाओं एवं कारखानों के प्रबंध में उनके (श्रमिकों के) एक तिहाई चुने हुए प्रतिनिधियों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए।

11. यह सभी औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों के विकेंद्रीकरण की वकालत करता है जिसके अनुसार कॉरपोरेट और राजकीय मोनोपोली नियन्त्रण समाप्त करते हुए एवं उन्हें साधारण शेयरधारकों (दो तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) तथा मजदूरों (एक तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) के द्वारा प्रबंधित किया जाए।

12. यह वित्त नियन्त्रण के लिए लोकतांत्रिक प्रबंध और नियन्त्रण को प्रस्तावित करता है। कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबंधन एवं नियन्त्रण का पक्षधर है तो राजकीय क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का समर्थक है। जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियन्त्रण का हामी है। प्रोमोटर्स शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध की मिल्कियत को समाप्त किया जाए।

13. यह प्रत्येक सांसद को 2 करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये अपने चुनावी क्षेत्र के विकास खर्च के लिए आवंटित करने के मौजूदा नियम को हटाकर विकास से संबंधित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्रामसभा सहित और इसके ऊपर कोई नहीं) के जरिए खर्च करने को प्रोत्साहित करती है।

14. यह प्रत्येक देश में प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण के आधार पर कॉरपोरेट पूँजीवादी निर्देशित संविधान तथा न्यायशास्त्र को पुनर्गठित करने का प्रस्ताव रखता है।

15. यह मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के हितों की रक्षा एवं संवर्धन के मूलभूत सिद्धान्त का मजबूती से पक्षधर है। उपर्युक्त उसूल की किसी तरह से अवहेलना करने पर अपराधी को सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल दण्ड दिया जाए। दण्ड में मानवीय क्रूरता और मृत्युदण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधान शामिल हो सकते हैं ।

16. इसका पक्का विश्वास है कि मानव समाज की सभी संघटक प्रक्रियाओं–यानि, पर्यावरणीय, मानवीय और वैज्ञानिक तकनीकी–पर लोगों का नियंत्रण होना चाहिए और उन्हीं द्वारा संचालित होना चाहिए।

17. यह गांव/वार्ड से राष्ट्रीय स्तर तक पाँच स्तरों पर सामाजिक जीवन के तीन पहलुओं-राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक के प्रबन्ध की शक्ति लोगों को देकर उनके सशक्तिकरण (या जनता के नेतृत्व वाला शासन) को प्रस्तावित करता है।

18. लोगों के सशक्तिकरण की प्रक्रिया चुनाव के तरीके से तय की जाए जो पूर्णतया स्वतंत्र हो और जहाँ प्रत्येक को उम्मीदवार के तौर पर भागीदारी करने का अधिकार है तथा मतदाता के रूप में अपनी राय जाहिर करने का अधिकार है। यह दलगत ढांचे को महत्व दिये बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा चुनाव के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करें) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्य सत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के राजकीय एकाधिकार का खात्मा करने का पक्षधर है। सम्बन्धित मतदाताओं को वापिस बुलाने का अधिकार हो जिसके तहत किसी सभा सदस्य के मतदाताओं का 1/5 भाग अगर लिखित में पुन: चुनाव की मांग इस आधार पर करें कि उपर्युक्त सदस्य अपने मतदाताओं का विश्वास खो चुका है।

19. राजनीतिक पहलू माँग करता है कि पाँचों स्तर पर (यानि, राष्ट्रीय, राज्य या क्षेत्रीय, जिला, ब्लॉक और गाँव)राजनीतिक सभा का गठन किया जाए जो लोकतान्त्रिक व्यवस्था पर कायम रहे तथा पूर्णतया लोकतान्त्रिक उसूलों, गतिविधियों और ढाँचे पर आधारित हो। ऐसा मॉडल निर्णय लेने में भी अधिकतम सम्भव लोक सशक्तिकरण के सिद्धान्त को लागू करना आवश्यक बना देता है।

20. आर्थिक पहलू की आवश्यकता है कि एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता के लिए पाँचों स्तर पर विकास सभाएँ स्थापित की जाएं जिसकी धारणाएँ, कानून एवं नियम पुर्वोक्त दो उच्चस्थ प्राथमिकताओं (यानि, पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जन-नेतृत्वकारी लोकतन्त्र तथा चहुंमुखी पारदर्शिता) की रोशनी में बनाए जाएं। मनुष्य की जैव सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एडम स्मिथ का 'निजी हित' आधारित बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त तथा हर चीज का राज्य द्वारा राष्ट्रीयकरण करने के मार्क्सवादी बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त, ये दोनों एक तरफा है। परन्तु, विडम्बना यह है कि दोनों मनुष्य और पर्यावरण विकास के सन्दर्भ की बजाए विकास, सम्पन्नता तथा प्रगति को धन वृद्धि के रूप में नापते हैं।

21. सांस्कृतिक पहलू की आवश्यकता है कि पाँचों स्तर पर सांस्कृतिक सभाएं स्थापित की जाएं।यह ऐसे जीने के तरीके (या जीवन शैली) की माँग करता है जो बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों से भरपूर हों तथा लोगों के बीच में तर्कसंगत मानवतावाद एवं पर्यावरणवादी चिन्तन, व्यवहार एवं संगठन को विकसित करता हो।

22. पाँचों स्तरों पर राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक सभाओं द्वारा बनाये गये कार्यक्रमों और नीतियों को लागू करने के लिए अपने-अपने राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक क्षेत्र के विशेषज्ञों के आयोगों का चुनाव करना। राजनीतिक विशेषज्ञों का आयोग राजनीतिक मुद्दों, जैसे–कानून और व्यवस्था, अपराध रोकथाम, न्यायिक कार्यवाही से सम्बन्ध रखे; विकास विशेषज्ञों का आयोग आर्थिक, वित्तीय मसलों, जैसे–विकास योजना, कृषि उद्योग, सेवाएं, वित्त और बजट को देखे और सांस्कृतिक विशेषज्ञों का आयोग शिक्षा, स्वास्थ्य, नैतिक मूल्यों एवं अन्य सांस्कृतिक विषय, जैसे–भाषा, संगीत, नृत्य, सिनेमा उद्योग आदि पर ध्यान दें।

23. प्रत्येक चुनी हुई संस्था अपने प्रभाव क्षेत्र में चाहे वह निचले स्तर की हो या ऊपर के स्तर की हो सम्प्रभुसत्ता सम्पन्न होगी। किसी भी समय दो चुनी हुई संस्थाओं या सार्वजनिक संस्थाओं के मध्य मतभेद उत्पन्न हो तो सम्बन्धित इकाइयाँ अपने-अपने

प्रतिनिधि समूहों को नियुक्त करेंगी जो बातचीत के जरिए सम्बन्धित प्रश्न का हल निकालेंगी। यदि मामला आपस में तय हो जाता है तो वह फैसला मान्य होगा। यदि दोनों पक्ष साझे निर्णय पर सहमत नहीं होते तो मसला सम्बन्धित लोगों द्वारा जनमतसंग्रह से हल किया जाएगा।

24. इसका मानना है कि किसी भौगोलिक इकाई की आन्तरिक सुरक्षा का प्रश्न सम्बन्धित लोगों द्वारा ही देखा जाए। विभिन्न भौगोलिक इकाइयों की सीमा-सुरक्षा का मुद्दा सुरक्षा एजेन्सी द्वारा देखा जाए तथा यह सुरक्षा एजेन्सी सम्बन्धित लोगों द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा स्वीकृत नियमों के अनुसार बनाई जाए।

25. समाज में प्रत्येक प्रदूषण फैलाने वाली तकनीक का संचालन यह नहीं होने देगी चाहे उस तकनीक में कितनी भी ज्यादा उत्पादक क्षमता हो।

IV

काम की गतिविधि के सवाल पर हमें आमतौर पर लोगों में बिगड़ती हुई बेरोजगारी की समस्या के बारे में (उसकी प्रकृति, कारण और हल सहित) गहन जन जागृति अभियान चलाने और विशेषतौर पर यह अभियान विद्यार्थियों, युवाओं तथा प्रौढ़ अवस्था वाले बेरोजगारों में चलाना आवश्यक है।

प्रारम्भ में यह आवश्यक है कि बेरोजगारों (यानि, विद्यार्थियों, नौजवानों और मध्यम आयु वाले प्रोढ़ों) के बीच बिना किसी देरी के प्रचार अभियान और संगठनात्मक कार्य शुरू किया जाए। वो लोग जो किसी भी क्षेत्र, इलाके, राज्य, भारत या किसी अन्य देश में बेरोजगारी की समस्या के संबंध में एक न्यूनतम कार्यक्रम के आधार पर बेरोजगारों के बीच प्रचार अभियान चलाने और उन्हें संगठित करने के लिए तैयार है, उन्हें बिना कोई देरी किए आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया जाए। उचित यह रहेगा कि बेरोजगारों का संगठन प्रकृति-मानव केन्द्रित बेरोजगारों का संगठन, मोर्चा, आन्दोलन आदि के नाम से बनाया जाए एवं संगठित किया जाए। यह संगठन किसी और नाम से भी बनाया जा सकता है। परन्तु इसे बेरोजगारों के संबंध में प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम अपनाना चाहिए। बेरोजगारों से संबंधित कार्यक्रम में तात्कालिक, दीर्घकालीन व व्यवस्थागत कार्यक्रम शामिल रहेंगे।

प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम को मानने वाला बेरोजगारों का संगठन अपने प्रोग्राम, संविधान और गतिविधियों के बारे में सभी निर्णय लेने में पूर्णतया स्वतंत्र रहेगा।

प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम को मानने वाले बेरोजगारों के संगठन का प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन के साथ अत्यन्त मैत्रीपूर्ण संबंध रहेगा।

प्रकृति-मानव केन्द्रित बेरोजगारों का संगठन बेरोजगारों के सभी संगठनों को एकबद्ध कर एक संगठन बनाने का कार्य करेगा, यदि यह कार्य संभव नहीं होता तो यह सभी बेरोजगारों के संगठन का संयुक्त मोर्चा बनाने की कोशिश करेगा।

आर. पी. सराफ, सम्पादक : नेचर-हुमन सेन्ट्रिक व्यूप्वाइंट
saraf_rp@rediffmail.com

* * * * *

(जोधपुर में 29 से 31 अक्टूबर, 2004 को बेरोजगारी पर सम्मेलन में प्रस्तुत पेपर)

बेरोजगारी : इतिहास में पूंजीवाद के उद्‌भव से पहले कोई मुद्दा नहीं रहा

I

इतिहास दर्शाता है कि सामाजिक समस्या के रूप में बेरोजगारी का अस्तित्व प्राचीनकाल में दिखाई नहीं देता। सामान्य रूप से यूनानी या लेटिन भाषा में बेरोजगारी के भावार्थ का कोई शब्द नहीं मिलता तथा शायद पुरानी भारतीय भाषाओं में भी नहीं। अंग्रेजी भाषा का शब्द 'unemployment' (बेरोजगारी) 19वीं शताब्दी के मध्य तक आम इस्तेमाल में नहीं आया था।

खाद्य संग्रह और शिकार करने के श्रम विभाजन में (जो पत्थरों, डंडों, हड्डियों, तीरों व धनुषों आदि की तकनीक पर आधारित था) काम के अभाव का प्रश्न ही नहीं था क्योंकि प्रथम, जातियों और कबीलों के लोग सामूहिक रूप से कार्य करते थे, दूसरे वे 24 घण्टे के रोजाना श्रम के बाद मुश्किल से ही जिन्दा रहने लायक भोजन इकट्ठा कर पाते थे।

पशुपालन या चारगाह काल के श्रम विभाजन के युग में (जो तीर-कमान, पशुपालन और बाद में कांसे व तांबे के औजारों आदि की तकनीक पर आधारित था), जब साधारण श्रम मुख्य रूप से दासों द्वारा किया जाता था, बेरोजगारी शायद कोई बड़ी सामाजिक समस्या नहीं थी क्योंकि दास-मालिकों को बेकार रहने का नुकसान भुगतना पड़ता था। कभी-कभार भगौड़े दासों या स्वतंत्र कर्मियों को शायद बेरोजगारी का अनुभव होता होगा। लेकिन इस बात का कोई पक्का सबूत नहीं मिलता। कहा जाता है (और इस काल के संकेत भी है) कि प्राचीन महत्त्व के महान स्मारक जैसे कि मिश्र के पिरामिड, चीन की दीवार आदि शायद अकाल, महामारी या बाढ़ आदि के दौरान पीड़ितों को भुगतान सहित काम दिलाने के लिए बनाए गए थे। भिक्षावृत्ति का इन दिनों प्रचलन दिखाई देता है। लेकिन भिखारी और बेकार लोग समाज में बुरी दृष्टि से देखे जाते थे।

कृषि श्रम विभाजन के युग में (जो कि धातु के खासकर लोहे के पिघलाने, गठने, भूमि को उपजाऊ बनाने, खादान, चक्की चलाने, बुनने, चमड़े के काम, मिट्टी के काम, कागज बनाने, छापेखाने व जहाज बनाने आदि की तकनीक पर आधारित था) जब कृषिदास जमीन से बन्धुआ थे, दस्तकार और उनके शिक्षार्थी श्रम संघों से बंधे थे, गाँव स्वायत्तता या क्षेत्रीय स्वायत्तता मौजूद थी और शहरी लघु उद्योग स्थानीय प्रकृति के थे, तब बेरोजगारी एक गौण समस्या थी। घुमक्कड़, असामाजिक तत्त्व व भिखारी आदि जो काफी तादाद में थे, उस काल के बेरोजगारों में शामिल किये जा सकते हैं। सामाजिक व्यवहार, इन लोगों के प्रति घृणा का था। प्राकृतिक विपदाओं में सहायता कार्य का रिवाज तब भी जारी रहा। कृषि श्रम विभाजन के आखिरी दौर (15वीं व 16वीं सदी) में पश्चिम यूरोप में बेरोजगारों की संख्या में वृद्धि के तीन कारण थे। प्रथम, गहन खेती व भेड़ पालन कार्य के अस्तित्व में आने से देहाती श्रम उखड़ गया। दूसरे, शहरों में बढ़ रहे कारखानों के निमार्ण ने गाँव के लोगों को शहरों व कस्बों की तरफ आकर्षित किया। तीसरे, जनसंख्या में तेजी से वृद्धि हुई। 1600 ई. तक यूरोप में 6 से 7 करोड़ लोग थे जो 100 वर्ष पहले की तुलना में तकरीबन दोगुणा थे। आबादी वृद्धि की इस छलांग ने नए भूमि क्षेत्रों की खोज,

निर्माण की वस्तुओं के व्यापार में वृद्धि व विकास को प्रेरित किया। परिणामत: 16वीं शताब्दी में पश्चिमी यूरोप के बहुत सारे शहरों में सहायता कार्यों व गरीबों को नियंत्रित करने के लिए कानून बनने शुरू हुए और हर प्रकार की भिक्षावृत्ति पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया।

II

17वीं शताब्दी में, जब निर्माण का श्रम-विभाजन (जो दस्तकारी पर आधारित था) पश्चिमी यूरोप में काफी हद तक फैल गया तो अर्थशास्त्रियों ने कृषिकारिता की सोच (जो शारीरिक श्रम की अवमानना करती थी) से हटकर मानवीय श्रम की महत्ता को महसूस करना शुरू किया। मानवीय श्रम के उचित उपयोग द्वारा धन अर्जित करने की बड़ी संभावनाएँ देखी जाने लगी। जो एकमात्र संस्था इस कार्य को कर सकती थी वह थी राज्य जो बेकारों को काम करने को बाध्य कर सकती थी। विलियम पैटी, जो ब्रिटेन का पहला अर्थशास्त्री थी, जिसने अपनी पुस्तक "Treatise on Taxes and Contribution" (1662) में सुझाव दिया कि अपराधियों को जेल में ठूंसने व मारने के बजाय गुलाम बनाना चाहिए। ''दास बनाने पर उनसे इतना सस्ता व इतना ज्यादा काम लिया जा सकता है जितना प्राकृतिक रूप से वे सहन कर सकें। इस प्रकार वे सामाजिक धन से एक व्यक्ति के छीने जाने के बजाय दो का योगदान करेंगे।'' आधुनिक अर्थशास्त्र की भाषा में 17वीं सदी के अर्थशास्त्रियों ने श्रम को उत्पादन का एक साधन माना। 18वीं सदी में घुमक्कड़ों व भिखारियों के सुधार के लिए कार्यगृहों की स्थापना हुई। लेकिन कार्यगृहों की योजना कारगर सिद्ध नहीं हुई, क्योंकि एक तो यह महंगी थी, दूसरे इस प्रकार के श्रमिकों में उचित दक्षता का अभाव था। इसकी विफलता से यह विचार पैदा हुआ (जो 18वीं सदी के फ्रांसीसी अर्थशास्त्री क्विजने व अंग्रेज अर्थशास्त्री एडम स्मिथ ने प्रतिस्थापित किया) कि समाज को इस बात से लाभ होगा कि इसके सदस्य जिसे उचित समझें उसी व्यवसाय को चुनें। व्यक्तिगत प्राप्ति की ख्वाहिश ही समाज की आर्थिक मशीन की प्रेरक शक्ति समझी गई, इस निजी स्वार्थ को प्राप्त करने की स्वतन्त्रता इस शक्ति की अहमियत बढ़ा देगी। प्रतिस्पर्धा सार्वजनिक हित के लिए निजी स्वार्थ को नियन्त्रित करने का तन्त्र है। प्रतिस्पर्धा कुशल व्यक्तियों को मात्र उचित पुरस्कार ही नहीं प्रदान करेगी बल्कि उसी क्षण कुशल व्यक्तियों को उनकी वृद्धि व कुशलता की बहुत ऊँची कीमत वसूल करने से भी रोकेगी। इस आर्थिक प्रतिस्पर्धा में राज्य एक निरपेक्ष भूमिका अदा कर सकता है। हालांकि एडमस्मिथ की पुस्तक 'Wealth of Nations' (1776) उपरोक्त विचारधारा का पक्षपोषण करती है मगर बेरोजगारी के बारे में कुछ नहीं कहती; बल्कि यह पूर्ण रोजगार को सामान्य बात मानती है। फ्रांसीसी अर्थशास्त्री जेबीसे ने कहा कि पूर्ति अपनी मांग पैदा करती है। चीजों की बहुतायत आर्थिक गतिविधि को रोकने के बजाय तेज करेगी। मालथ्यूस (19वीं सदी का प्रथम काल) ने अपने निराशावादी दृष्टिकोण कि बढ़ती जनसंख्या गरीबी को जन्म देती है, के बावजूद बेरोजगारी को कोई बड़ी समस्या नहीं माना। रिकार्डो (19वीं सदी का पूर्वार्द्ध) जिसने निजी स्वार्थ व प्रतियोगिता की एडम स्मिथ की पूर्व धारणाओं को स्वीकार किया, ने भी बेरोजगारी की तरफ कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। सिसमोन्दी (19वीं सदी का पूर्वार्द्ध) जिसने औद्योगिक पूंजीवाद की सख्ती से आलोचना की, रोजगार को एक अस्थाई घटना समझा, राज्य की निरपेक्षता की आलोचना की मगर कोई सुझाव नहीं दिया कि राज्य को क्या करना चाहिए।

19वीं सदी के पूर्वार्द्ध में औद्योगिक क्रांति (यानि कि उत्पादन के लिए शक्ति चालक मशीनों का इस्तेमाल तथा कारखाने की व्यवस्था) ने पश्चिमी देशों में जहाँ एक तरफ श्रम की कुशलता में वृद्धि की तो दूसरी तरफ श्रम के सापेक्षिक महत्व में कमी व भौतिक पूँजी के महत्व में वृद्धि की। शुरू-शुरू में, जब मशीनों ने श्रमिकों का स्थान लेना शुरू किया और जब काम की दशा थका देने वाली थी तो श्रमिकों व दस्तकारों ने नई तकनीक का विरोध किया और कुछ स्थानों पर मशीनों को तोड़ा भी। लेकिन धीरे-धीरे उन्होंने परिवर्तन से समझौता कर लिया तथा मशीनी श्रम विभाजन में पैदा होने वाली समस्याओं के हल के लिए श्रम-संघों की स्थापना की।

मशीनी श्रम विभाजन ने कुछ विचित्र हालात को पैदा किया; जब वस्तुओं की मांग होती तो उद्यमियों को श्रमिकों की जरूरत रहती और जब वस्तुएँ बाजारों को भर देती तो वे मजदूरों की छुट्टी करना शुरू कर देते। अत: विस्तार के काल में कभी संकुचन तो कभी ठहराव आने लगा। जैसे-जैसे औद्योगिकरण की गति तेज हुई, श्रम का लगातार अतिरिक्त रहना आम चिन्ता का विषय बना। जे. एस. मिल (मध्य 19वीं सदी) ने इस नए घटनाक्रम को दरयाफ्त किया मगर वह फिर भी आर्थिक सन्तुलन के एडम स्मिथ के सिद्धान्त को मानता रहा। मार्क्स पहला महान अर्थशास्त्री था जिसने बेरोजगारी को औद्योगिक पूँजीवाद का आवश्यक परिणाम माना और कहा कि यह श्रम की एक रिजर्व सेना को जन्म देता है। क्लासिकल अर्थशास्त्रियों ने श्रम की माँग व पूत्रि में असंतुलन को एक अस्थाई घटनाक्रम माना तथा इस प्रकार बेरोजगारी की समस्या को एक विपथन करार दिया। मार्क्स ने असंतुलन को पूंजीवाद की अन्तरनिहित विशेषता माना तथा इस प्रकार बेरोजगारी की समस्या को औद्योगिक पूँजीवाद का एक आम तत्व माना। फिर भी पूंजीवाद का विकल्प, यानि, मार्क्सवाद का एक दलीय नेतृत्व वाला एकाधिकार एवम् राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक गतिविधियों पर राज्य का नियन्त्रण (जो समाजवाद या साम्यवाद कहलाता है) पूँजीवादी रोग से कोई ज्यादा बेहतर साबित नहीं हुआ है, दोनों (यानि, पूँजीवाद व साम्यवाद) सार रूप में पर्यावरण एवम् मानव हितों के लिए हानिकारक ही रहे हैं।

III

20वीं सदी के प्रारम्भ में पश्चिम में बेरोजगारी पर अनेक परचे व अध्ययन सामने आने शुरू हुए। अचानक ही बेरोजगारी की समस्या एक ज्वलंत समस्या बन गई। पुस्तकें, लेख और सरकारी जांच की रिपोर्टें पहले से ज्यादा तादात में आने लगी। 1917 में रूस की अक्तूबर क्रान्ति के बाद रूस में प्रत्येक काम करने वाले आदमी को काम का संवैधानिक अधिकार मिला जबकि 1920 के दशक में पश्चिम के कई देशों में बेरोजगारी भत्ते के अनेक कानून बने। 1928 में जाने-पहचाने दो अंग्रेज अर्थशास्त्रियों सिडनी व बीट्रीस वैब ने लिखा कि ब्रिटेन में पिछले 50 वर्षों के दौरान बेरोजगारी की दर कभी भी 2% से नीचे नहीं गई। 1929-1932 की विश्वव्यापी मन्दी ने अभूतपूर्व बेरोजगारी को जन्म दिया। सन् 1929 में जेनेवा स्थित अन्तर्राष्ट्रीय श्रम ऑफिस ने बेरोजगारी के विश्व सूचकांक को प्रकाशित करना शुरू किया। 1932 में जेनेवा स्थित अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा जारी किया सूचकांक 1929 में 100 के आधार पर 291 था।

इस मन्दी के बाद 1936 में कारपोरेट-समर्थक प्रसिद्ध अंग्रेज अर्थशास्त्री कीन्स ने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि विकसित देशों में बेरोजगारी का कारण प्रभावी मांग का कम होना है जिसे मुद्रा की पूर्ति बढ़ाकर या घाटे की वित्त व्यवस्था से लोगों के हाथों में

ज्यादा धन पहुंचाकर दूर किया जा सकता है और इस प्रकार प्रत्येक मन्दी के काल के बाद बेरोजगारी के चक्र को रोका जा सकता है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद दो दशकों तक कीन्स का यह सिद्धान्त प्रभावी रहा। लेकिन उसके बाद इसका परिणाम भयंकर मुद्रास्फीति में निकला जिसने पश्चिम की अर्थव्यवस्था को खतरा पैदा कर दिया।

कीन्स के सिद्धान्त के असफल होने के बाद 1970 के दशक का क्लासिकल सिद्धान्त अपनी कारपोरेट दिशा- यानि, मिल्टन फ्रायडमैन के नव क्लासिकल सिद्धान्त (जो पूर्ति पक्षीय सिद्धान्त भी कहलाता है) के तौर पर अपने परिवर्तित रूप में आया, जिसने मुद्रा की मात्रा में कमी व मजदूरी की दरों में कमी करके बढती हुई मुद्रास्फीति व बेरोजगारी की समस्या का हल सुझाया। नव क्लासिकल सिद्धान्त ने मुद्रास्फीति का हल कुछ हद तक निकाला, मगर बेरोजगारी की समस्या और बदतर हो गई, यानि कि कीन्स के सिद्धान्त की तरह यह भी एक तरफा है जिसने बेरोजगारी का हल तो निकाला मगर मुद्रास्फीति को बदतर बना दिया। 1980 के दशक में राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन व ब्रिटिश प्रधानमंत्री मार्गरिट थैचर नव क्लासिकल सिद्धान्त के मुख्य अनुयायी रहे हैं उसके बाद यह सिद्धान्त भी अपना महत्व खो चुका है।

IV

पहले कीन्स का कारपोरेट समर्थक मांग का सिद्धान्त व उसके बाद मिल्टन फ्रायडमैन के कारपोरेट दिशा वाले पूर्ति के सिद्धान्त के नुस्खे के असफल होने के बाद पूँजी के बड़े सिद्धान्तवेत्ता सैद्धान्तिक तौर पर किंकर्तव्यविमूड हो गए। परन्तु शीघ्र ही दो महत्वपूर्ण घटनाओं ने उन्हें 'पूँजीवादी व्यवस्था कारगर है' इस पर जोर देने के लिए एक नई युक्ति गढने का मौका प्रदान कर दिया है। पहली घटना पूर्वी यूरोप के देशों में साम्यवादी शासकीय धड़े का विखण्डित होना था जिसने सम्पूर्ण साम्यवादी आन्दोलन को भ्रमित कर दिया तथा दूसरी घटना देशों के बीच तेजी से विकसित हो रही अन्तरनिर्भरता थी (इस स्थिति को दो विकसित तकनीक, यानि, सूचना तकनीक तथा सुपरसोनिक (ध्वनी से तेज) तकनीक ने तेजी से आगे बढाया है। पहली तकनीक ने मानवीय संचार को प्रकाश की गति दी है तथा दूसरी ने मनुष्य के आपस में मिलने की रफ्तार को ध्वनि की गति प्रदान की है)।

तद्नरूप कारपोरेट पूँजी के उच्चस्थ सिद्धान्तकारों तथा उसको लागू करने वाले उस्तादों ने एक नई रणनीति चुन ली जो इस बात पर जोर देती है कि दुनिया में तथा हर देश व क्षेत्र में बेरोजगारी व अन्य सभी सामाजिक बिमारियों जैसे असमानता, गरीबी, अशिक्षा तथा बिमारियाँ आदि जो दुनिया के लोगों को परेशानी में डाले हुए हैं, इन सबकी एक ही रामबाण दवा है और वह है पूंजी की वृद्धि दर।

उपरोक्त वर्णित उच्च वृद्धि दर की कारपोरेट रणनीति को लागू करने के लिए यह आवश्यक है कि पूँजी या पूँजी निवेश की गति सभी तरह के बन्धनों, रूकावटों तथा सीमाओं जैसे सभी सामाजिक सुरक्षा के प्रावधानों, मानव अधिकारों के लिहाज, श्रम अधिकारों, सीमा शुल्क व कर, बाजार आरोपण आदि से मुक्त रहे ताकि पूँजी की गति या इसकी वृद्धि दर में कोई बाधा उत्पन्न न हो। यहाँ कारपोरेट रणनीति प्रत्येक देश तथा प्रत्येक वित्तीय संस्था में तीन आर्थिक सुधारों का नुस्खा पेश करती है–यानि, उदारीकरण, निजीकरण तथा पुनर्संरचना–इस प्रकार यह रणनीति बिना अवरोध के कारपोरेट पूँजी के विकास के लिए एक अनुकूल अन्तर्राष्ट्रीय हालात का रास्ता हमवार करती है।

V

वृद्धि दर निर्देशित आर्थिक सुधारों की नई विकसित हो रही कारपोरेट रणनीति के अनुसरण में सन् 1994 में आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (OECD) ने बेरोजगारी की समस्या पर कारपोरेट दिशा से विस्तृत विश्लेषण किया। इसने बेरोजगारी के कारणों के बारे में तब प्रचलित श्रम-समर्थक दो विचारों पर बेतहाशा हमला शुरू कर दिया।

प्रथमत: उक्त रिपोर्ट में यह बात कही गई है कि बेरोजगारी के लिए यांत्रिकी अर्थात टेक्नोलॉजी को दोष नहीं दिया जा सकता। क्योंकि जहाँ टेक्नोलॉजी लघु-कुशलता वाले कार्यों को समाप्त कर देती है, वहीं वह नए ढंग के उच्च कुशलता वाले तथा अधिक उत्पादक कार्यों का सृजन भी करती है। द्वितीयत: यह रिपोर्ट, इस विचारधारा का खण्डन करती है कि निम्न मजदूरी वाले देशों से किए जा रहे आयातों के कारण विकसित देशों में मजदूरी और बेरोजगारी पर उलटा प्रभाव पड़ रहा है। चूंकि, ओ.ई.सी.डी. देशों के सकल व्यय का केवल 1.5% ही अन्य देशों से किए गए आयात पर खर्च होता है, तथा कैसी ही स्थिति हो, ज्यो-ज्यों विकासशील देश धनी हो जाते हैं, वे ओ.ई.सी.डी. देशों से निर्यात के लिए नया क्षेत्र या बाजार उपलब्ध कराते हैं।

इसके अतिरिक्त, ओ.ई.सी.डी. रिपोर्ट, स्वयं इस संगठन के सदस्य राष्ट्रों की नीतियों को भी बेरोजगारी में वृद्धि के लिए दोषी मानती है। इस रिपोर्ट के अनुसार ओ.ई.सी.डी. देशों की दीर्घ काल से चली आ रही असफलता श्रम बाजार तथा विश्व अर्थ-व्यवस्था के परिवर्तनों की शिक्षा एवं प्रशिक्षण को अपनाने में निहित है, जिसका पृथक-पृथक स्थानों पर भिन्न-भिन्न प्रकार का परिणाम निकलता है। दूसरे, इस रिपोर्ट में यूरोपीय देशों द्वारा द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद आई आर्थिक समृद्धि के बाद अपनाई गई सामाजिक नीतियों को, यथा, न्यूनतम मजदूरी, उदार बेरोजगारी परिलाभ, तथा नियोजन संरक्षण कानून- इन्हें उच्च मूल्य वाली अर्थात अधिक मंहगी अर्थव्यवस्थाएँ बनाने के लिए उत्तरदायी माना है।

आगे इस रिर्पोट में पश्चिमी यूरोपीय श्रमिक बाजारों पर इस बात का दोष आरोपित किया गया है कि इन्होंने वैश्वीकरण की मांग के अनुरूप मजदूरी एवं रोजगार के ढांचों में समुचित परिवर्तन नहीं किए है।

अन्ततोगत्वा ओ ई सी डी रिपोर्ट ने, बेरोजगारी की समस्या से निपटने के लिए, एक दुतरफा कार्य योजना का सुझाव प्रस्तुत किया है। ओ ई सी डी कार्य योजना के एक भाग में नियम कानून को समाप्त कर सुधार लाने की मांग की गई है। यह सरकारों से अपेक्षा करेगी कि गरीबी से संघर्ष करने के अधिक प्रत्यक्ष तरीकों को न्यूनतम मजदूरी के विकल्प के रूप में स्थापित किया जावे, अथवा न्यूनतम मजदूरी में आयु और क्षेत्र विशेष के आधार पर तो कुछ अन्तर किया जावे। कार्य योजना का यह भी सोचना है कि व्यापारिक प्रतिष्ठानों के लिए कामगीरों को एकत्र कर लेना तथा उनसे काम ले लेना अधिक आसान होना चाहिए। इसमें आगे यह तर्क दिया गया है कि यदि सरकारें केवल बेरोजगारी भत्ते की मात्रा को कम कर दे तो बेरोजगार अधिक उत्सुकता से काम अर्थात रोजगार की खोज करेंगे। कार्य योजना में कहा गया है कि दीर्घ-अवधि वाले परिलाभ केवल तभी दिये जाने चाहिए, जबकि उनका प्राप्तकर्त्ता सक्रिय श्रम बाजार कार्यक्रमों में भाग लेता है अर्थात अपनी भूमिका निभाता है।

ओ.ई.सी.डी. रिपोर्ट में दूसरी ओर बेहतर कार्य कुशलता या दक्षता का आह्वान किया गया है। इसका प्रारम्भ जल्दी होना चाहिए, अधिक पाठशाला-पूर्व शिक्षा हो, जल्दी स्कूल छोड़ने की स्थिति बहुत कम हो तथा स्कूल शिक्षा क्षेत्र अर्थात पाठ्यक्रम का दायरा बहुत व्यापक हो। कार्य योजना यह मांग करती है कि उद्योगों एवं विद्यालयों में निकट का सम्पर्क एवं समन्वय हो तथा वास्तविक कार्यक्षेत्र के बाहर प्रशिक्षण के अधिक अवसर उपलब्ध हो। यदि इन सब सिफारिशों एवं सुझावों की क्रियान्विति की जाती है तो ओ.ई.सी.डी. के सदस्य राष्ट्रों की श्रम शक्ति के लिए काम या रोजगार प्राप्ति की सम्भावना ही नहीं बढ़ेगी, बल्कि इस बात की सम्भावना भी बढ़ेगी की उन्हें ऊँची मजदूरी वाले व अधिक दक्षता वाले रोजगार उपलब्ध हों।

संयुक्त राज्य अमेरिका का आर्थिक अनुभव, बेरोजगारी की समस्या पर कुछ नई अन्तदृष्टि या परिज्ञान डालते हुए, यह बताता है कि संयुक्त राज्य की अर्थव्यवस्था ने 1980 के दशक में, इस अवधि में पश्चिमी यूरोप की तुलना में, कहीं अधिक लोगों को नौकरियां उपलब्ध कराई है अर्थात् कहीं अधिक रोजगार के अवसरों का सृजन किया है। यह इसलिए संभव था क्योंकि पश्चिमी यूरोप द्वारा श्रम बाजारों के लिए की गई व्यवस्था की क्रियान्विति करने के दौरान संयुक्त राज्य ने उत्पादन बाजारों के अवरोधकों को हटाने का प्रयास किया जो पश्चिमी यूरोप की अर्थव्यवस्थाओं पर हावी थे। उत्पाद बाजारों पर नियंत्रण व अवरोधक हटा कर संयुक्त राज्य फुटगर व्यवसाय, बैंकिग (प्रतिभूति एवं बंधक), टेलीविजन, फिल्म व विडियों व्यवसाय आदि में रोजगार के नए अवसर सृजित करने में सफल रहा। संयुक्त राज्य का अनुभव यह इंगित करता है कि श्रम बाजार एवं उत्पाद बाजार के नियमों का निरसन करने या उनमें छूट देने में हाथों-हाथ आगे बढ़ना वांछनीय है- ताकि इस प्रकार अधिक अच्छे वेतन वाले रोजगारों का सृजन हो सके। केवल श्रम बाजार का सुधार करने से निम्न कुशलता तथा न्यून वेतन वाले रोजगारों का ही सृजन होता है।

संयुक्त राज्य द्वारा जारी किए गए कानून के दोहरे उदारीकरण के बावजूद आई.बी.एम व फोर्ड मोटर्स जैसी अमेरिकन कम्पनियों सहित, औद्योगिक विश्व बड़ी तत्परता से रोजगार में कमी या छंटनी करता रहा, जिसके परिणामस्वरूप बेरोजगारों की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। ऐसा इस आशा के साथ किया गया था कि इससे अधिक अच्छी कार्यकुशलता या दक्षता का सृजन होगा। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। प्रसिद्ध प्रबंध विशेषज्ञ, श्री पीटर ड्रूकर ने इस संबंध में कहा है हम देख रहे हैं कि रोग के सही निदान के पहले बहुत अधिक अंग-विच्छेद किया जा रहा है। (अर्थात् अनुमान के आधार पर किए जा रहे प्रयोगों के अपेक्षित परिणाम नहीं निकल रहे हैं।)

यूनाइटेड स्टेट्स के जनगणना ब्यूरों के आर्थिक अध्ययन केन्द्र द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार विगत 10 वर्षों के दौरान जिन कारखानों ने श्रमिक संख्या में कमी कर दी उन्हें केवल 55 प्रतिशत उत्पादकता लाभ प्राप्त हुआ तथा बाकी 45 प्रतिशत लाभ उन कारखानों को हुआ जिन्होंने श्रमिक संख्या में वृद्धि की तथा जिनका सकल उत्पाद इस अवधि में दुगुने से भी अधिक हो गया। इस अध्ययन के लेखकों में से एक जॉन हाल्टीवेन्जर ने टिप्पणी की है कि– उत्पादकता वृद्धि की प्रक्रिया केवल मात्र श्रमिक संख्या की कमी करने से कहीं अधिक उग्र व कोलाहट वाली तथा कहीं अधिक उलझी हुई

है। एक अन्य अमेरिकन परामर्श विशेषज्ञ, आर्थर लिटिल ने यह पाया है कि बड़ी मात्रा में की गई श्रमिक श्रंटनी तथा व्यूह-रचना में अचानक किए परिवर्तन से कम्पनियों के लिए आशा के विपरित कई समस्याएं खड़ी हो जाती है। इस प्रकार उक्त सभी विचारक इस बिन्दू पर एक मत है कि बड़े स्तर पर की गई श्रमिक छंटनी, आशा के अनुरुप उत्पादन करने में असफल रही है, तथा भविष्य में इस असफलता की मात्रा और घनी हो जाएगी क्योंकि वर्तमान समय में छंटनी का क्षेत्र और अधिक व्यापक होता जा रहा है।

नये आर्थिक सुधारों की कारपोरेट रणनीति की निराशाजनक कारगुजारी पर उपरोक्त टिप्पणी स्वयं-सिद्ध होती है।

आर.पी. सराफ, सम्पादक, नेचर-हुमन सेन्ट्रिक व्यूप्वाइन्ट
saraf_rp@rediffmail.com

* * * * *

(जोधपुर में 29 से 31 अक्टूबर, 2004 को बेरोजगारी पर सम्मेलन में प्रस्तुत पेपर)

बेरोजगारी : इसकी परिभाषा, प्रकार, कारण और निवारण

I

बेरोजगारी की परिभाषा के सवाल पर सामाजिक विज्ञान में बेरोजगारी की कोई प्रमाणिक अवधारणा या परिभाषा नहीं मिलती।

श्रम (आई एल ओ) सांख्यिकों के 1954 के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में इसे इस तरह से परिभाषित किया गया था :

1. किसी निश्चित दिन या किसी निश्चित सप्ताह के लिए एक निश्चित उम्र को प्राप्त करने वाले निम्न प्रकार के लोग बेरोजगारों की श्रेणी में आते हैं।

   क. रोजगार के लिए उपलब्ध वे श्रमिक जिनका रोजगार का समझौता या तो खत्म कर दिया गया हो या स्थगित कर दिया गया हो और जो बिना काम के हो तथा लाभ या वेतन के लिए काम की तलाश में हों।

   ख. वे लोग जो किसी निश्चित समयावधि के लिए (मामूली बीमारी को छोड़कर) लाभ या वेतन के लिए काम की तलाश में हो तथा जो पहले कभी रोजगार में न रहे हों और जिनका वर्तमान पद एक कामगार का न हो (यानी कि पूर्व रोजगार दाता वगैरह) या जो अब रिटायर हो गए हों।

   ग. वे लोग जो बिना रोजगार के हैं, काम करने को तैयार हैं या जिन्होंने उस निश्चित अवधि के बाद काम शुरू करने का इन्तजाम किया है।

   घ. वे लोग जिनकी बिना वेतन अस्थाई या अनिश्चित काल के लिए छुट्टी कर दी गई हो।

2. निम्न श्रेणी के लोगों को बेरोजगारों की श्रेणी में नहीं रखा जाता :

   क. वे लोग जो अपना व्यवसाय या फार्म स्थापित करना चाहते हैं लेकिन जिन्होंने अभी ऐसा किया नहीं है, जो कि लाभ या वेतन के लिए काम की तलाश में नहीं हो।

   ख. पूर्व अवैतनिक पारिवारिक कार्मिक जो काम पर नहीं है और ना ही काम की तलाश कर रहे हों।

लेकिन अर्थशास्त्रियों के अनुसार यह परिभाषा–जो बेरोजगारों की दो मुख्य विशेषताओं पर जोर देती है जैसे (क) 'काम पर नहीं' (ख) 'काम की तलाश'- कम विकसित देशों में जहां अर्द्ध बेरोजगार आंशिक रूप में रोजगार प्राप्त किए होते हैं, ज्यादा सहायक नहीं होती।

3. उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए हम कह सकते है कि सामान्य भाषा में बेरोजगारों से मतलब है वे लोग जो कहीं काम न कर रहे हों मगर सक्रिय रूप से काम की तलाश में हों तथा जो सीमान्त रोजगार प्राप्त किए हों मगर पूर्णकालिक काम की तलाश कर रहे हों। इस प्रकार बेरोजगार वह है जो काम न कर रहा हो और जो सक्रिय रूप से काम की तलाश कर रहा हो या जो आंशिक रूप से रोजगार प्राप्त हो मगर पूर्णकालिक काम की तलाश में हो।
4. बेरोजगारी को जब समाज पर लागू करके देखा जाय तो यह न इस्तेमाल किए गए मानवीय श्रम या मानव संसाधनों के दुरुपयोग को दर्शाती है। जिन्हें किसी भी उत्पादक कार्य में लगाया नहीं जा सकता।
5. अत: बेराजेगारी सिर्फ बेरोजगारों के लिए ही नहीं बल्कि समाज के लिए भी नुकसानदेह है।

II

बेरोजगारी के विशिष्ट प्रकारों के संबंध में विभिन्न अर्थशास्त्रियों के अनुसार विकसित देशों में बेरोजगारी निम्न रूपों में मिलती है–ऊँची मजदूरी दर, चक्रीय, अल्पकालिक (**Frictional**), ढांचागत और तकनीकी (समायोजन से सम्बन्धित–**Pertaining to Rationalisation**) जबकि कम विकसित देशों में उपरोक्त रूपों के अतिरिक्त यह अदृश्य अर्द्ध-बेरोजगारी, मौसमी और व्यापार की प्रतिकूल स्थिति आदि के रूप में भी पायी जाती है।

III

जहां तक बेरोजगारी के कारणों व समाधानों का प्रश्न है प्रत्येक किस्म की बेरोजगारी के इसके प्रतिपादक के अनुसर विशिष्ट कारण व हल है।

ऊँची मजदूरी दर बेरोजगारी का कारण क्लासिकल व नव-क्लासिकल अर्थशास्त्रियों के अनुसार मजदूरी की दर ऊँचा होना है जो उत्पादन की लागत को बढ़ाकर पूँजी निवेश और प्रभावी माँग को कम कर देती है। उनका विश्वास है कि बेरोजगारी औद्योगिक पूंजीवाद की वृत्ति नहीं बल्कि इसका विचलन है जो एक ऐसी अस्थाई घटना है जिसे मजदूरी की दर कम करके ठीक किया जा सकता है।

चक्रीय बेरोजगारी, कीन्स के अनुसार तब पैदा होती है जब प्रभावी मांग में कमी के कारण अर्थव्यवस्था में उत्पादित भारी वस्तुओं का भण्डार न खपाया जा सके। मांग में कमी मनुष्य की कम खर्च करके बचाकर रखने की जन्मजात प्रवृत्ति के कारण पैदा होती है। यह पूंजी निवेश में कमी लाती है। जिसके परिणामस्वरूप रोजगार में कमी होती है। यह चक्रीय इसलिए कही जाती है क्योंकि व्यावसायिक मन्दियाँ लगभग नियत काल के अन्तराल पर आती रही है (उदाहरणार्थ : 1969-70, 74-75 और 80-82 के हाल ही के मन्दी काल)। इस प्रकार की बेरोजगारी को घाटे की अर्थव्यवस्था के जरिए पूंजी निवेश को बढ़ाकर यानि लोगों के हाथों में ज्यादा धन पहुंचाकर और मांग को बढ़ाकर दूर किया जा सकता है।

अल्पकालिक (**Frictional**) बेरोजगारी, अर्थशास्त्रियों के अनुसार, एक विकसित हो रही और गतिमान अर्थव्यवस्था में जहां श्रम की मांग व पूर्ति लगभग सन्तुलन में हो, तब पैदा होती है जब पुराने पड़ रहे कारखाने बन्द हो जाते है। इससे श्रमिक बेरोजगार हो जाते हैं। वे या तो नये बन रहे उद्योगों में विस्थापित होते हैं या इस प्रकार के उद्योगों में काम पाने के लिए नये व्यवसाओं को सीखतें हैं। अल्पकालिक बेरोजगारी के कारण निम्न है– मशीनों या उपकरणों का बन्द हो जाना, माल की कमी होना, श्रम में गतिहीनता होना या श्रमिकों में तकनीकी स्तर की कमी होना आदि (जैसे कि द्वितीय विश्वयुद्ध के उद्योगों के बन्द होने पर श्रमिकों का शान्तिकालीन उद्योग में विस्थापित होना)। अल्पकालिक बेरोजगारी को निम्न तरीकों से कम किया जा सकता है: श्रमिकों को शीघ्र प्रशिक्षण की सहुलियतें देकर, श्रम विनिमय केन्द्र खोलकर और अन्तरणकाल में बेरोजगारों के लिए सामाजिक सुरक्षा का प्रबन्ध करके तथा तकनीकी परिवर्तन की गति को नियन्त्रित करके।

ढाँचागत बेरोजगारी, अर्थशास्त्रियों के अनुसार, मानव संसाधनों का विकास भौतिक पूंजीगत संसाधनों की अपेक्षा अधिक तेज होता है। इससे दीर्घकालीन बेरोजगारी जन्म लेती है। इस प्रकार की बेरोजगारी मुख्यत: कम विकसित देशों में है जहाँ श्रम भौतिक पूँजी से ज्यादा होता है। विकसित देशों तक में वर्तमान दीर्घकालीन बेरोजगारी से पता चलता है कि भौतिक पूँजी में वृद्धि श्रम शक्ति में वृद्धि का मुकाबला नहीं कर पा रही। भौतिक पूंजी की कमी का उपलब्ध साधनों के कुशल उपयोग द्वारा, दुरुपयोग को रोककर, बचत व विनियोजन में वृद्धि करके, करों को विवेकपूर्ण करके तथा देशी व विदेशी ऋण को जुटाकर दूर किया जा सकता है।

तकनीकी बेरोजगारी (या समायोजन से सम्बन्धित बेरोजगारी **unemployment pertaining to rationalisation**), अर्थशास्त्रियों के अनुसार, तब उत्पन्न होती है जब (क) नई तकनीक पुरानी का स्थान लेती है, या (ख) प्रबन्ध की नई तकनीक पुरानी प्रबन्ध तकनीक का स्थान लेती है, जबकि उत्पादन तकनीक वही बनी रहती है। जब नई तकनीक व पुरानी तकनीक में बहुत ज्यादा अन्तर हो और पुरानी तकनीक श्रम की पुरानी तकनीक को मूल्य रहित कर दे तो तकनीकी बेरोजगारी ज्यादा कष्टप्रद होती है। इससे श्रमिक या तो अकुशल व्यवसायों में काम करने पर मजबूर होते हैं या वैकल्पिक प्रबन्ध न होने तक बेरोजगार रहते हैं यदि बेरोजगारों का समावेश करने के लिए नये रोजगार के अवसर पैदा किए जायें तो प्रबन्ध व्यवस्था में परिवर्तन के कारण उत्पन्न होने वाली बेरोजगारी भी उसी तरह की समस्याएँ पैदा करती है। तेज आर्थिक वृद्धि की दर तकनीकी बेरोजगारी का एक समय कारण है तो दूसरे समय समाधान।

अदृश्य बेरोजगारी, अर्थशास्त्रियों के अनुसार कम विकसित देशों, खासकर उनके देहात से सम्बन्धित है। ग्रामीण बेरोजगारी के दो पहलू है– मौसमी व चिरकालिक। मौसमी बेरोजगारी तब पैदा होती है जब कृषि कार्य में लगी जनसंख्या कृषि कार्य के अभाव में 5-7 महीने लगातार बेकार रहती है। चिरकालिक बेरोजगारी अविकसित कृषि का चिरकालिक घटनाक्रम है। 1945 में मान्दलवाम ने अंदाजा लगाया कि यूनान, यूगोस्लाविया, पोलैंड, रूमानिया, बुलगेरिया में सक्रिय ग्रामीण कार्मिकों का 27 प्रतिशत फालतू था। 1951 में संयुक्त राष्ट्र संघ के एक अध्ययन से पता चला कि भारत व पाकिस्तान के बहुत सारे क्षेत्रों में तथा फिलीपीन व इन्डोनेशिया के कुछ हिस्सों में अतिरिक्त ग्रामीण जनसंख्या 20-25 प्रतिशत से कम नहीं थी। भारत के बारे में उपरोक्त अन्दाजा तब लगाया

गया था जबकि भारतीय कृषि में 10 करोड़ लोग थे (जनगणना 1951)। अब जबकि यह संख्या 17 करोड़ 10लाख हो गई है (जनगणना 1981), इसका मतलब है कि 40 प्रतीशत से ज्यादा जनसंख्या (या प्रत्येक 5 सदस्यों के ग्रामीण परिवार में 2 लोग)फालतू हैं। जाहिरा तौर पर सब काम में लगे प्रतीत होते हैं मगर वास्तव में सब अर्द्ध बेरोजगार हैं। इस प्रकार की बेरोजगारी भौतिक पूंजी या दूसरे पूरक संसाधनों की कमी का परिणाम है (यानि कि पूंजी में वृद्धि की निम्न दर, ऊँचा पूंजी/उत्पाद अनुपात इत्यादि)। इसका पूंजी के भण्डार की मात्रा या उत्पादन की इकाइयों में वृद्धि करके हल किया जा सकता है ताकि अतिरिक्त धन्धों को पैदा करके अतिरिक्त जनसंख्या को खपाया जा सके।

मौसमी बेरोजगारी, अर्थशास्त्रियों के अनुसार, विकसित और कम विकसित दोनों ही तरह के देशों में पाई जाती है। यह कुछ व्यवसायों की मौसमी प्रकृति के कारण होती है। उदाहरण के लिए गर्मियों में कुल्फी के कारखानों व नाविकों की ब्रिटेन में प्रभावी मांग होती है। दूसरे मौसमी उद्योगों के उदाहरणों में चावल मिल व चीनी के कारखानों को शामिल किया जा सकता है। कम विकसित देशों में कृषि 100 प्रतिशत मौसमी व्यवसाय है।

व्यापार की प्रतिकूल स्थिति से पैदा होने वाली बेरोजगारी, अर्थशास्त्रियों के अनुसार, कम विकसित देशों में अक्सर तब होती है जब प्राथमिक वस्तुओं की कीमतों में गिरावट के कारण रोजगार के स्तर में कमी आती है। इस प्रकार की बेरोजगारी को कम विकसित देशों के उत्पादन में विविधता लाकर और निर्यात बढ़ाकर दूर किया जा सकता है।

आर.पी. सराफ, सम्पादक, नेचर-हुमन सेन्ट्रिक व्यूप्वाइन्ट
saraf_rp@rediffmail.com

* * * * *

कांग्रेस–नेतृत्व वाले संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन का कॉरपोरेट पूंजी का मानवीय चेहरे वाला सिद्धान्त केवल मिथ्या नाम है

हमारा उपर्युक्त आकलन दो तथ्यों से निकला है। प्रथम तथ्य यह है कि कॉरपोरेट एवं साम्यवादी मॉडल के समाजशास्त्रीय और विकास के सिद्धान्त एक तरफा और नुकसानदायक हैं और दूसरा तथ्य कॉरपोरेट और साम्यवादी दो व्यवस्थाओं के ऐतिहासिक अनुभव में निहित है।

(i) कारपोरेट पूंजी का समाजशास्त्रीय सिद्धान्त

दोनों समाजशास्त्रीय सिद्धान्त (यानि कारपोरेट एवं साम्यवादी) यह मानते हैं कि हमारे ग्रह पर और किसी हद तक ब्रह्माण्ड में भी मानवजाति एक केन्द्रीय घटनाक्रम हैं। यह धारणा स्थापित करती है कि मानव समाज एवं उसके अन्दर हर वस्तु के एकमात्र रचियता लोग हैं। प्रकृति की व्यवस्था में मानव के अद्भुत घटनाक्रम होने की समझ मनुष्य को अपनी इच्छानुसार प्रकृति के सभी घटनाक्रमों के दोहन करने को प्रेरित करती है। यह समझ पूर्णतया पर्यावरणीय आयामों को नकारती है जिसके बिना मनुष्य का अस्तित्व ही संभव नहीं है तथा सामाजिक समानता की मानवीय इच्छा को पूर्णतया नजरअन्दाज करती है। जिसके बिना मनुष्य सामाजिक तौर पर वंचित महसूस करता है।

(ii) कारपोरेट पूंजी के विकास का सिद्धान्त

इनके (यानि, कारपोरेट एवम् साम्यवादी) विकास के सिद्धान्तों के संबंध में स्थिति यह है कि दोनों मानव समाज का मुख्य उद्देश्य पूंजी, धन व सम्पदा को हासिल करना मानते हैं। तथा सामाजिक विकास, सम्पन्नता एवं तरक्की का आधार इनकी वृद्धि होने में देखते हैं।

हालांकि, वर्तमान वास्तविकता और मानव समाज का सम्पूर्ण इतिहास दर्शाता है कि हमारी दुनिया में मानवीय संसाधन और प्राकृतिक संसाधन मानव समाज में हर चीज के निर्माण (जिसमें धन, सम्पदा व पूँजी भी शामिल है) के दो बुनियादी कारक हैं। बिना मानवीय और पर्यावरणीय कारकों (जिनसे मानव समाज की जिन्दगी और उसकी हर चीज बनी हुई है) के धन सम्पदा व पूंजी निर्माण या कारपोरेट व साम्यवादी व्यवस्था की प्रगति एक इंच भी आगे नहीं खिसक सकती है। इसलिए प्रकृति-मानव केन्द्रित नजरिए के अनुसार पूँजी एक दो तरफा घटनाक्रम है यानि, पर्यावरणीय संसाधन और मानव संसाधन। जबकि धन और सम्पदा केवल मात्र विनिमय का साधन है और यह मानव समाज में कोई सर्वोत्तम वस्तु नहीं है।

जैसा कि सभी जानते हैं कि पूँजीवाद का मुख्य उद्देश्य पैसा बनाना है तथा साम्यवाद की भी यही स्थिति है। साम्यवादी सिद्धान्त के रचियता मार्क्स ने पूँजी की धारणा को सर्वोत्तम महत्व दिया और दास-कैपिटल तीन खण्डों में (तीन हजार पृष्ठों से अधिक) में लिख डाला। पूँजी के स्त्रोत पर कॉरपोरेट धारणा से भिन्नता रखते हुए उन्होंने भी पूंजी की परिभाषा धन के रूप में ही की। जहाँ मार्क्स यह मानता है कि पूँजी मजदूरों के अतिरिक्त मूल्य से पैदा होती है जिसे पूँजीपति उसकी उचित मजदूरी अदा न करके शोषण के जरिए इकट्ठा करता है। वहीं कॉरपोरेट पूंजीवाद यह मानता है कि पूंजी उत्पादन की प्रक्रिया में पूँजी निवेश, तकनीक, श्रम एवं कच्चे माल के लगने से पैदा होती है तथा इस उत्पादन प्रक्रिया में पूँजी के मालिक की मुख्य भूमिका रहती है। मार्क्सवादी सिद्धान्त केवल-मात्र एक ही तत्व (यानि श्रम) को पूंजी का स्त्रोत मानने पर केन्द्रित है जबकि कारपोरेट सिद्धान्त उपरोक्त सभी पहलुओं पर जोर देता है एवं पूंजी के मालिक को केन्द्रीय स्थान पर रखता है। परन्तु दोनों इस बात पर एकमत है कि पूँजी धन या धन के संग्रह और विशाल सम्पदा की द्योतक है। इसलिए मार्क्सवाद और कारपोरेट पूँजीवाद दोनों सामाजिक विकास, सम्पन्नता और प्रगति को धन जुटाने, वृद्धि दर को बढ़ाने या पूँजी विस्तार के तौर पर परिभाषित करते हैं, और प्रत्येक चीज को चाहे वह पर्यावरणीय या मानवीय मुद्दा हो उसको गौण स्थान पर धकेलते हैं।

वाजपेयी की 'उज्ज्वल भारत' की धारणा भी बजट में 8% वृद्धि दर पर आधारित थी जबकि मनमोहनसिंह द्वारा प्रस्तावित बजट सन् 2004-2005 में 8% वृद्धि दर साझा न्यूनतम कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य होना प्रगट करता है।

कारपोरेट पूँजीपति या कारपोरेट राजनीतिज्ञों का उद्देश्य अधिकतम पैसा (व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों) बनाने के अलावा कोई अन्य उद्देश्य नहीं है क्योंकि अधिकतम पैसा बनाना उनके अधिकतम विकास, सम्पन्नता और प्रगति को अभिव्यक्त करता है और यह अधिकतम पैसा मानवीय और पर्यावरणीय संसाधनों के अधिक दोहन और दुरुपयोग से ही बन सकता है।

(iii) कारपोरेट पूँजी के 'मानवीय चेहरा' होने का नारा केवल एक दिवास्वप्न है

दुनिया में कॉरपोरेट एवं साम्यवादी नमूनों के 200 वर्षों के ऐतिहासिक अनुभव ने इस तथ्य की पुष्टि की है कि कारपोरेट पूँजी के 'मानवीय चेहरे' वाला लुभावना नारा केवल मन के लड्डू खाना और दिवास्वप्न देखना है क्योंकि वर्तमान संसार में किसी भी देश और किसी भी क्षेत्र में यह दिवास्वप्न पुरा नहीं हुआ है। उदाहरणार्थ, द्वितीय विश्व-युद्ध की विजयी शक्तियों द्वारा सन् 1945 में दुनिया के आर्थिकता को विकसित करने तथा गरीब देशों से गरीबी हटाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं विश्व बैंक की स्थापना की थी, परन्तु ये विकासशील देशों (जिनकी संख्या लगभग 120 है) में एक भी सम्पन्न या गरीबी से मुक्त मॉडल का निर्माण नहीं कर सके। क्या हमारे वर्तमान प्रधानमंत्री जो नरसिम्हाराव सरकार में वित्तमंत्री रहे थे और सन् 1991-96 में बाजार समर्थक सुधार लागू किए, वे अब दावा कर सकते हैं कि पूरे देश में एक भी जिला गरीबी से मुक्त हो सका है? वास्तव में मुक्त बाजार वाले सुधारों के पिछले डेढ़ दशक में भारत में गरीबों की संख्या दुगुनी हो गई है। आगे, हमारे समय का मौजूदा अन्तर्राष्ट्रीय तौर पर मान्य सर्वोत्तम कारपोरेट मॉडल (यानि अमेरिका) जो दुनिया की एक तिहाई आमदनी (यानि, 33 ट्रिलियन डॉलर में से करीब 11 ट्रिलयन डालर) हड़प लेता है। जो असमानता और अन्याय का सर्वोच्च नमूना है जहाँ आबादी के 1 प्रतिशत लोग अमेरिका के 95 प्रतिशत लोगों की आमदनी से अधिक सम्पति के मालिक हैं और वहाँ 1 करोड़ लोग गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बसर करते हैं। हमारी नजर में वर्तमान परिस्थितियों में कॉरपोरेट पूँजीवादी मॉडल एक महाशक्ति वाला कारॅपोरेट पूँजीवादी मॉडल में तो विकसित हो सकता है परन्तु गरीबी-समर्थक मॉडल की तरफ वापिस नहीं लौट सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि कॉरपोरेट पूँजी विकास के अपने ही नियमों का अनुसरण करती है, यानि, अधिकतम शोषण तथा मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों को अधिकतम निचोड़ने के नियम का पालन करती है। पिछले 200 वर्षों से अधिक के कारपोरेट पूँजीपतियों (जिसमें 70 वर्षों का साम्यवादी मॉडल तथा 55 वर्षों का भारतीय नमूना) के व्यवहार द्वारा प्रदत्त निम्न तथ्यों पर नजर डालने पर यह आसानी से देखा जा सकता है।

* * * * *

एजेन्डा प्रीपेरिंग पीपल्स एडहॉक कमेटी ऑफ सार्क कन्ट्रीज का प्रस्तावित कार्यक्रम

1. हमारा पहला प्रस्ताव है कि सार्क देशों का एजेन्डा विश्व शान्ति स्थापित करने का होना चाहिए तथा सार्क देशों के बीच सभी विवादों (जैसे जम्मू-कश्मीर का विवाद) और प्रत्येक सार्क देश के अन्दर सभी सात देशों में विद्यमान विवादों को हल करने का होना चाहिए।

2. हमारा दूसरा प्रस्ताव है कि (क) हवा के प्रदूषण को बंद करके (ख) विद्यमान पानी के स्रोतों के घटते स्तर और उसकी गुणवत्ता में खराबी को रोककर (ग) भूमि के पतन (घ) जंगल कटाव और (ड़) जैव-विविधता विरोधी व्यवहार एवं कार्यवाहियों को समाप्त करके सम्पूर्ण सार्क क्षेत्र में एवं प्रत्येक देश में प्राकृतिक संसाधनों की बर्बादी को ठोस जन कार्यवाही की योजना बनाकर और प्राकृतिक संसाधनों को पुनर्जीवित करने की

योजना को आगे ले जाने वाले प्रासंगिक जन संगठन बनाकर रोका जाए तथा प्रत्येक प्रदूषण फैलाने वाली तकनिकी को रोका जाए चाहे वह कितनी भी उपयोगी और उत्पादक नजर क्यों न आ रही हो।

3. हमारा तीसरा प्रस्ताव है कि दु:ख तकलीफ एवं कष्टमय जीवन जीने वाले लोगों जैसे गरीब, भूखे, बेरोजगार, असहाय आदि की पुन: सबलता के लिए निम्नलिखित तीन आधारभूत कदम उठाकर ठोस कार्य योजना बनायी जाए (i) आर्थिक मोर्चे पर : (क) कष्टमय जीवन-जीने वाले प्रत्येक व्यक्ति (यानि विश्व बैंक, आई एम एफ और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सियों द्वारा परिभाषित गरीबी की रेखा से नीचे जीने वाले व्यक्ति) को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार हो, (ख) आय में फर्क कम करके 1:5 के अनुपात तक लाना और (ग) प्रत्येक ऐसे व्यक्ति को प्रतिदिन 2 डॉलर से अधिक सामाजिक सुरक्षा भत्ता देना। (ii) राजनीतिक मोर्चे पर : (क) दलगत विचार किये बिना प्रत्येक व्यक्तिगत उम्मीदवार (जो राज्य विधानसभा में अपने मतदाताओं के एक हजार हस्ताक्षर एवं केन्द्रीय विधानसभा के लिए पांच हजार हस्ताक्षर प्रस्तुत करे) को सरकारी खर्च पर चुनाव लड़ने का अधिकार हो। यदि मतदाताओं को 1/5 भाग प्रतिनिधि को वापिस बुलाने की मांग करे तो मतदाताओं को पुन: मतदान का अधिकार इस आधार पर हो कि प्रतिनिधि अपने मतदाताओं का विश्वास खो चुका है, (ख) विभिन्न प्रबंध प्रक्रियाओं में मजदूरों को एक तिहाई प्रतिनिधित्व प्रदान करना (iii) सांस्कृतिक मोर्चे पर भ्रष्टाचार, काला धन एवं काली अर्थव्यवस्था तथा पक्षपात को समाप्त करना।

4. हमारा चौथा प्रस्ताव एक तार्किक जनसंख्या नियन्त्रण नीति का है।

5. हमारा पाँचवां प्रस्ताव है कि सार्क देशों में निर्णय लेने की प्रक्रिया का तरीका सर्वसम्मति का अपनाया जावे।

6. हमारा छठा प्रस्ताव है कि महिलाओं के हितों की रक्षा के लिए सभी सामाजिक संस्थाओं एवं सभी स्तरों पर महिलाओं को 50% आरक्षण हो।

7. हमारा सातवां प्रस्ताव सभी संस्थाओं में असहायों को पर्याप्त आरक्षण हो।

प्रस्तावक

भारत के कमेटी सदस्य	नेपाल के कमेटी सदस्य
1. रूपायन भट्टाचार्य, प. बंगाल	1. डॉ. डी.बी. सिंह
2. सज्जन कुमार, हनुमानगढ़	2. बिष्णु प्रसाद तिमिलसिना
3. घनश्याम डेमोक्रेट, संयोजक जोधपुर	
पाकिस्तान के प्रतिनिधि	
1. मोहम्मद शफीक कुरैशी	2. नियाज हुसैन बाबर

* * * * *

('कृषि का संकट, खास कर पंजाब के सन्दर्भ में–संकट के पैदा होने के कारण और इससे बाहर निकलने का रास्ता' विषय पर 8-9 जनवरी 2005 की बरनाला पंजाब में हुए कृषि सम्मेलन में पेश किया गया पेपर)

कृषि का संकट

(खास कर पंजाब के सन्दर्भ में)

संकट के पैदा होने के कारण और इससे बाहर निकलने का रास्ता

1. पंजाब में कृषि

पंजाब भारत के छोटे राज्यों में से एक है। जिसका भौगोलिक क्षेत्र भारत के कुल क्षेत्र का 1.5 प्रतिशत है और कृषि क्षेत्र का 2.6 प्रतिशत है। पंजाब की जलवायु का इसकी (पंजाब की) आर्थिकता पर गहरा असर है। पंजाब के मैदानों का निर्माण मृदा (एलुवियम) के जमाव से हुआ है। उसकी मिट्टी ऊपजाऊ और गहरी परत वाली है। पंजाब को भौगोलिक और जमीनी आधार पर दो भागों में बांटा जा सकता है : पहाड़ी और मैदानी क्षेत्र।

पहाड़ी क्षेत्र बहुत छोटा है जो पूर्व की तरफ शिवालिक पहाड़ियों को शामिल करता है और पश्चिम में होशियारपुर जिले तक जाता है। पंजाब की 90 प्रतिशत भूमि मैदानी है। यह सिंध-गंगा मैदान का एक भाग है।

इसकी अधिकतर भूमि जोत के अधीन है। पंजाब के मैदान भौतिक रुकावटों से मुक्त हैं। वर्षा की कमी सिंचाई सुविधा से पूरी कर ली जाती है। सिर्फ रोपड़ और होशियारपुर दो जिले ही अपनी कुल भूमि के 60 प्रतिशत से कम हिस्से पर खेती करते हैं। इन जिलों की जमीन बरसाती नालों और शिवालिक पहाड़ियों से पटी होने के कारण इससे ज्यादा जोत के अधीन नहीं लाई जा सकती है।

पंजाब में औसतन सालाना वर्षा 580 मिमी. होती है। यह वर्षा सिर्फ कम ही नहीं बल्कि समय और स्थान के अनुसार बेतरतीब (असमान) होती है। जहां यह उत्तर-पूर्वी अर्द्ध-पहाड़ी इलाकों में 1000 मिमी. से ऊपर होती है। वहां दक्षिणी-पश्चिमी हिस्सों में मुश्किल से 250 मिमी. तक ही होती है।

पंजाब को 6 कृषि जलवायु क्षेत्रों में बांटा जा सकता है जो कृषि समर्थता और समस्याओं के सन्दर्भ में समान है।

2. पंजाब का कृषि रिकार्ड

अनाज के उत्पादन में पिछली सदी के पिछले दो दशकों में पंजाब भारत में ही नहीं बल्कि दुनिया में एक मॉडल रहा है। संसार का हिस्सा होने के नाते पंजाब दुनिया के भौगोलिक हिस्से का 0.0003 प्रतिशत हिस्सा घेरता है। यह पूरे संसार के कुल उत्पादन में से गेहूं का 2.27 प्रतिशत, चावल का 2.04 प्रतिशत और कपास का 2.05 प्रतिशत पैदा करता रहा है। राष्ट्रीय स्तर पर हालांकि यह 1.5 प्रतिशत क्षेत्रफल घेरता है जबकि कुल राष्ट्रीय कृषि पैदावार का 9 प्रतिशत पैदा करता है। राष्ट्रीय स्तर पर पंजाब 21 प्रतिशत गेहूं, 10 प्रतिशत चावल और 15 प्रतिशत कपास पैदा करता है। यह पिछले दो दशक से केन्द्रीय अनाज भण्डार में चावल 50 प्रतिशत और गेहूं 70 प्रतिशत का योगदान देता आ रहा है।

दक्षिण एशिया में पंजाब ने कृषि पैदावार में 'हरित क्रान्ति' की अगुवाई की। पंजाब

ने अनाज उत्पादन में 1970 के दौरान 70 लाख टन के मुकाबले पिछले वर्ष 210 लाख टन पैदा किया। यह दुनिया में सबसे ऊंचे वृद्धि दर के रिकार्डों में से एक रिकार्ड है।

पंजाब के पास भारत का 5.04 मिलियन हैक्टेयर रकबा है परन्तु कृषि विकास के सन्दर्भ में यह सबसे विकसित राज्य है।

2001-2002 में कुल अनाज उत्पादन (मोटे अनाज और दालें) 2 करोड़ 49 लाख टन पैदा हुआ। राष्ट्रीय भोजन सुरक्षा और आत्मनिर्भरता की धारणा पंजाब पर निर्भर करती है। राज्य की कुल घरेलू पैदावार में कृषि का हिस्सा 39 प्रतिशत है। गेहूं और चावल का उत्पादन उच्चतम स्तर पर पहूंच चुका है और दूसरी फसलों के लिए रकबे में काफी कमी आ चुकी है।

पंजाब के कुल 5.04 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र में से 4.21 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र जोत के अधीन है। इसका अर्थ है कि 84 प्रतिशत क्षेत्र जोत के अधीन है। फसली तीव्रता जो 1947-48 में 117 प्रतिशत थी, वह आज बढ़कर 183 प्रतिशत हो गई है। 1950-51 में 53 प्रतिशत सिंचाई योगय क्षेत्र आज बढ़कर 94 प्रतिशत हो गया है। पंजाब कृषि के गेहूं-चावल मुख्य फसली चक्र, बहुत खुले पानी और बहुत ज्यादा रसायनों (नदीन-नाशक और किड़ेमार दवाइयां व खादें) के उपयोग से चरित्रित है।

पिछले 55 सालों में पंजाब में अनाज की पैदावार 20 लाख टन से बढ़कर 2 करोड़ 40 लाख टन पहुंच गई है। इसका अर्थ है कि इसमें 12 गुना वृद्धि हुई है।

कृषि पैदावार में पहली बड़ी छलांग 1965-66 में लगी जब गेहूं की ज्यादा उत्पादन देने वाली मैक्सिकन किस्म पंजाब में लाई गई। दूसरी बड़ी छलांग 1970 के बीच उस वक्त लगी जब चावल की बौनी किस्में आईं और इसके साथ ही चावल के उत्पादन में कई गुना बढ़ोतरी हुई।

इस उदाहरण योग्य बढ़ोतरी के बावजूद पंजाब की कृषि आज बहुत गम्भीर समस्याओं का सामना कर रही है। इसकी गेहूं, चावल, कपास, गन्ना और मक्की आदि की पैदावार घट रही है। इसके पर्यावरणीय पैदावारी तत्व–जैसे, मिट्टी, पानी, जंगल, जैव विविधता आदि बहुत ज्यादा दबाव में है। इसकी ग्रामीण आर्थिकता ज्यादा से ज्यादा गैर बराबरी वाली हो रही है। यहां पर जोत योग्य भूमि बढ़ने की कोई सम्भावना नहीं है, बहुत ज्यादा फसली जमीन जोत के अधीन आ गई है। फसली तीव्रता बहुत ऊंचे स्तर पर पहुंच चुकी है। कृषि निवेश सामग्री की खपत राष्ट्रीय स्तर से ज्यादा, यानि 170 किग्रा. है। बढ़ती हुई आबादी के साथ जमीनी जोत के छोटे होने के कारण कृषि छोटे और बहुत छोटे किसानों के लिए घाटे का सौदा बन गई है। कृषि निवेश सामग्री और मजदूरी की दरें बढ़ने के कारण खेती लागत बढ़ गई है। 1975-76 से 2001-2002 तक के आंकड़ों के अनुसार गेहूं की लागत 7 गुना, कपास की लागत 8 गुना और चावल की लागत 11 गुना बढ़ गई है। कृषि लागत के बढ़ने से किसान कर्जे के बोझ तले दब गया है। पंजाब के ऊपर कुल 11700 करोड़ रुपये कृषि कर्ज है। जिसका वार्षिक ब्याज 2300 करोड़ रुपये बनता है इसका अर्थ है कि फसली पैदावार की कुल कीमत का यह 14 प्रतिशत बनता है। पंजाब कृषि की इस गैर-संगतता के परिणाम स्वरूप बड़ी संख्या में किसान आत्महत्या कर रहे हैं। उपरोक्त आंकड़ों से कोई भी पंजाब के कृषि परिदृश्य को देख सकता है।

पंजाब के लिए मानव विकास रिपोर्ट-2004 जो राज्य सरकार की पहलकदमी और सहयोग के साथ संयुक्त राष्ट्र विकास प्रोग्राम एवं योजना आयोग के साथ मिलकर तैयार

की गई है, यह रिपोर्ट हमें कुछ आश्चर्यजनक आंकड़े प्रदान करती है। यह दर्शाती है कि 1961 से 1991 तक खेती काश्तकारों का प्रतिशत तेजी से (46 से 31 प्रतिशत) घटा है। इन्हीं सालों में खेत मजदूरों की प्रतिशत मात्रा में काफी वृद्धि (10 से 23 प्रतिशत) हुई है। जबकि 1951 में खेती करने वालों में खेत मजदूरों का अनुपात 8 प्रतिशत था), यह वृद्धि 1960 के बाद आई हरित क्रान्ति के बाद शुरू हुई।

रिपोर्ट के अनुसार खेत मजदूरों में गणनीय वृद्धि छोटे और बहुत छोटे किसानों के कंगाल होने का नतीजा है। उस समय से अब खेती जोत तीन गुना छोटी हो गई है। हालिया रिपोर्ट के अनुसार 5 एकड़ से कम खेती की जोत व्यवहारिक नहीं रही है। छोटे और बहुत छोटे किसानों के लिए दो टाइम की रोटी कमाने के लिए बनाई गई योजनाएं फेल हो गई हैं और सरकार के ऐसे कदम उन्हें प्रभावित नहीं कर सके। इसका नतीजा यह निकला है कि हर घर का जीव विदेशों में जाने के लिए हर जायज व नाजायज तरीके का सहारा ले रहा है।

फसली विभिन्नता और ठेका काश्तकारी से किसानों की समस्या हल करने का नुस्खा सुझाया जा रहा है, परन्तु अभी तक कमजोर अमल के कारण इसका नतीजा नहीं निकल सका है। उदाहरण के तौर पर ज्यादा पैदावार देने वाली फसली विभिन्नता समय की मांग है क्योंकि गेहूं का उत्पादन मामूली ही बढ़ रहा है और चावल का उत्पादन ठहराव की स्थिति में है तथा कपास का उत्पादन घट रहा है। क्योंकि इन समस्त फसलों की प्रति एकड़ कीमतों में ठहराव है, कृषि निवेश की सामग्री की लागतें बेहद बढ़ गई हैं जिसका नतीजा ना सिर्फ किसानों के ऊपर कर्ज का बोझा बढ़ने में निकला है बल्कि प्रदेश के कृषि विकास पर भी उल्टा असर पड़ा है। इसके अलावा कुछ और नकारात्मक असर, जैसे कि भूमिगत पानी के स्तर का गिरना भी पैदा हो गया है। इसी तरह ठेका-काश्तकारी को पूंजी एवं तकनीक हासिल करने के लिए प्राइवेट क्षेत्र की भागीदारी की आवश्यकता है।

स्पष्ट है कि जब तक प्राइवेट क्षेत्र को कुछ रियायतें नहीं मिलती हैं तो यह स्कीम आगे नहीं बढ़ सकती है। सिर्फ यही काफी नहीं हैं बल्कि जब तक किसान अपने हित को सुरक्षित नहीं समझता तब तक वह इस योजना में हिस्सेदार नहीं बन सकता। जाहिर है कि इस स्कीम के तहत होने वाली फसलों को सुरक्षित मण्डी की जरुरत है।

इस रिपोर्ट का बुनियादी नुक्ता एक वास्तविकता पर आधारित बुनियादी नीति की मांग करता है जो एक ऊंची और टिकाऊ तरक्की की दर प्रदान कर सके। कृषि के क्षेत्र में कई वर्षों से उठाए गए कदम वो नतीजे नहीं दे सके जिनकी जरुरत है। उदाहरण के तौर पर जोहल कमेटी की तरफ से सुझाई गई फसली विविधता के तहत बदली (अन्य फसले) फसलें जैसे कि फल, सब्जियां और पशु चारे के लिए उचित बाजार की जरुरत है। लेकिन बदकिश्मती की हालत यह है कि अपनी मण्डी जैसी स्कीम भी लड़खड़ा रही है। इसके अलावा फसली विविधता उस समय तक आगे नहीं बढ़ सकती, जब तक आर्थिकता के क्षेत्र में विभिन्नता नहीं की जाती है। यह हालात किसानों की सहकारिता को अहम भूमिका प्रदान करने वाले सही कदम उठाने की मांग करते हैं, जिसकी काफी समय से अनदेखी की गई है।

डेयरी क्षेत्र को आगे बढ़ाने की जरुरत है। अगर शहरीकरण के रूझान को रोका और उल्टा नहीं जाता, तो छोटे और बड़े शहरों के 50 मील के इलाके के इर्द-गिर्द के कृषि क्षेत्र एक दशक या इससे कुछ ज्यादा समय में शहरी धनवानों और कम्पनियों द्वारा हड़प

लिये जाएंगे। संक्षेप में पंजाब की जरुरत है कि कृषि क्षेत्र में 1960 की हरित क्रान्ति (जब कुल जोत क्षेत्र बढ़ा और फसली तीव्रता में अत्यधिक वृद्धि हुई) से परे (अलग हटते हुए) कृषि व्यवस्था में तब्दीली की जाए। सार रूप में कृषि को ऐसे तब्दील किया जाए जिससे वह सम्पन्नता का प्रतीक बन सके।

उपरोक्त तथ्यों की रोशनी में यह कहा जा सकता है कि आज पंजाब की कृषि को बहुत ही गम्भीर बहु-आयामी संकट का सामना करना पड़ रहा है।

प्रथमत:, प्राकृतिक संसाधनों के खराब होने के कारण संकट का पर्यावरणीय पहलू ज्यादा गम्भीर हो गया है। उपजाऊ जमीन खराब हो गई है। जल श्रोत (पृथ्वी के ऊपर और भूमिगत) घट गये हैं। पानी का खारापन और सेम बढ़ रही है। औद्योगिक कचरा, जैसे नाइट्रेट, सल्फेट, क्लोराइड के कारण पानी प्रदूषित हो रहा है और पीने के लिए नुकसानदायक हो गया है। जंगल का कवर (जो कि शिवालिक पहाड़ियों तक ही सीमित है) सिकुड़ रहा है। यह अब केवल प्रदेश के क्षेत्रफल का 5 प्रतिशत रह गया है, जबकि यह 20 प्रतिशत होना चाहिए। यहां तक कि 10 प्रतिशत जंगल का कवर भी गैर सेहतमन्द वातावरण को जाहिर करता है।

दूसरा, संकट का मानवीय पहलू भी कम गम्भीर नहीं है। आबादी बढ़ रही है, गरीबी ज्यादा हो रही है, बेरोजगारी में बढ़ोतरी हो रही है, शिक्षा (खासतौर पर प्राइमरी स्तर पर), स्वास्थ्य सुविधाएं और ढांचागत सुविधाएं बुरी हालत में है। ग्रामीण इलाकों में शिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी, अज्ञानता, अन्धविश्वास आदि के कारण निराशा का वातावरण है। खेत मजदूरों और छोटे व बहुत छोटे किसानों की हालत खराब हो रही है।

तीसरा, संकट का तृतीय पहलू यह है कि प्रदेश में कृषि एक फायदेमन्द धन्धा नहीं रही है। कृषि की पैदावारी दर गिर रही है जबकि कृषि निवेश सामग्री की दरें लगातार बढ़ रही हैं। राज्य की प्रति व्यक्ति एवं कुल कृषि पैदावार दर राष्ट्रीय औसत से काफी कम है। कपास, गन्ना और मक्की की फसलों में कमी का रूझान है, गेहूं और चावल उत्पादन में ठहराव है, गेहूं-चावल फसली चक्र की वजह से प्रति एकड़ वास्तविक आमदनी (1981-82 के आधार से) नीचे आ गई है, देश में पंजाब के चावलों का आकर्षण (खासतौर से सरकारी तौर पर खरीदे गये चावल के गुणवत्ता नियमों के घटिया होने के कारण) पहले जैसा नहीं रहा है। पंजाब का किसान गेहूं-चावल फसली चक्र में फंसा हुआ है, अत: उसको इस चक्र में से निकलने का कोई रास्ता दिखाई नहीं दे रहा है, तेजी के साथ बढ़ रहा कर्ज उन्हें आत्महत्या की तरफ धकेल रहा है।

चतुर्थ, संकट की कृषिकारी हदें भी नजर आने लगी हैं। कृषि मुनाफे में गिरावट के कारण भूमि का किराया मूल्य घट गया है। परिवारों के बड़े आकार के कारण भूमि का बंटवारा भी हो रहा है।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि इस संकट का समूचा आर्थिक पहलू बहुत ही चिन्ताजनक है। राज्य में आम विकास की गति मन्द हुई है। वार्षिक औसत दर में गिरावट आई है। राज्य की आर्थिकता में असन्तुलन है। राज्य की जीडीपी में ज्यादा हिस्सा कृषि का है, जबकि कृषि को इससे कोई ज्यादा लाभ नहीं पहूंच रहा है। बाकी राज्यों के मुकाबले में पंजाब के अन्दर कोई बड़े वर्णन योग्य केन्द्रीय प्रोजेक्ट नहीं हैं। पंजाब को मिलने वाली केन्द्रीय सहायता देश भर में सबसे कम है। देश के दूसरे भागों से कोई बड़ा निजी निवेश भी पंजाब में नहीं हुआ है। औद्योगिक पिछड़ेपन का मुख्य कारण पैसे की कमी

है। छोटे उद्योगों की कमजोर कारगुजारी का एक कारण ऊंची बैंक ब्याज दरें हैं तथा सुगर उद्योग (जिसमें करीब 20 सुगर मिलें शामिल हैं) की काफी बुरी स्थिति है।

3. पंजाब कृषि संकट के निहित कारण

उपरोक्त संकट का मूल कारण मौजूदा रसायन आधारित कृषि तकनीक में निहित है। इस तकनीक का बुनियादी कृषि निवेश यानि उर्वरक, रोगनाशक एवं कीटनाशक अत्यधिक रासायनिक हैं जो एक तरफ मिट्टी में मौजूद जैविक पोषक तत्वों को नष्ट करता है एवं फसल समर्थक जीवों को समाप्त कर देता है, नतीजतन मिट्टी की गुणवत्ता में कमी आती है और अन्ततोगत्वा उसे बंजर भूमि में बदल देती है तथा दूसरी तरफ पानी की अत्यधिक खपत के जरिए जल संसाधनों में कमी आती है। पंजाब में इस रासायनिक खेती की तकनीक के लागू हुए 40 सालों (1964-2004) में इस तकनीक ने कृषि के सभी मुख्य घटकों, यानि, पर्यावरणीय संसाधन, मानवीय स्वास्थ्य, फसल उत्पादकता, वित्तिय वृद्धि, कृषि ढांचा आदि को नुकसान पहुंचाया है। उन सभी देशों में जहां रसायन आधारित कृषि तकनीक का उपयोग किया गया है। वहां समान किस्म के नकारात्मक प्रभाव व्यवहार में दिखाई पड़ते हैं। रसायन आधारित कृषि तकनीक की अत्यधिक कारगुजारी ने 21वीं सदी के शुरू में ही कृषि को मृत्युशैया पर ला खड़ा किया है। फिर भी मौजूदा विश्व कॉरपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था के सभी उच्चस्थ नियंत्रणकर्ताओं द्वारा यह मानने के बजाए कि उनकी प्रतिपादित रासायनिक कृषि नीति की धारणाएं एवं भूमिका समग्र रूप से नकारात्मक रही हैं, उल्टा इस वास्तविकता को छुपाने में अति उत्साह से लगे हुए हैं और यह प्रचारित कर रहे हैं कि रासायनिक कृषि तकनीक की मौजूदा खेती की सभी कमियां नई खोजी जा चुकी आनुवंशिक परिष्करण (जेनेटिक मोडिफिकेशन या जी.एम.) या प्रजनन परिवर्तन (ट्रांसजेनिक परिवर्तन जिसकी वास्तविक स्थिति का वर्णन अगले अध्याय में किया गया है) की तकनीक द्वारा ठीक कर दी जाएगी।

यह ध्यान देने योग्य है कि रासायनिक खेती की सम्पूर्ण वास्तुकला बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा सोची समझी गई तथा उत्पादित की गई, जिनका शुरू से लेकर आज तक लगातार इस रासायनिक खेती की तकनीक पर एकाधिकार चला आ रहा है। समस्त संसार में कारपोरेट पूंजीवादी नेतृत्व वाली सरकारों ने अपने-अपने राष्ट्रीय कृषि क्षेत्रों एवं नीतियों में आधारशिला के रूप में इस रासायनिक खेती की तकनीक को जबसे इसका उद्भव हुआ है तबसे इसे अपनाया है।

रासायनिक तकनीक की शुरुआत से ही कॉरपोरेट पूंजीवादी सरकार तथा व्यापारियों के नेता यह कहते और प्रचारित करते आ रहे हैं कि 20वीं शताब्दी की यह 'हरित' क्रान्ति है। वे इसे लगातार चरित्रित करते रहे हैं कि यह मानवता को सदा के लिए भूख से मुक्त करेगी और हमेशा के लिए खाद्य सुरक्षा प्रदान करेगी। परन्तु ये सभी बड़बोले दावे धाराशाही हो गये हैं। इस चमत्कारित कृषि तकनीक के लागू होने के 40 साल बाद भी कृषि के क्षेत्र में दुनिया के सामने भयानक समस्याएं मुंह बाए खड़ी हैं।

पंजाब के कृषि संकट का एक पूरक कारण इसकी खेती में चावल-गेहूं चक्र वाली फसल पद्धति का रिवाज भी है। परन्तु अब रासायनिक खेती के सभी प्रचारक इस पूरक कारण को कृषि संकट के मूल कारण के तौर पर पेश कर रहे हैं। इसकी अप्रासंगिकता इस तथ्य में देखी जा सकती है कि एशिया, अफ्रीका, लैटिन अमेरिका और यूरोप के सभी

फसली विविधता वाले कृषि क्षेत्रों में भी रासायनिक खेती के एक समान दुष्प्रभाव सामने आये हैं।

खेती के विकास का माध्यम यदि विभिन्न फसलें पैदा करने (विविधिकरण) के कारण होता तो विविधिकरण खेती वाले देशों और क्षेत्रों में रासायनिक खेती का प्रभाव पंजाब के कृषि अनुभव से पूर्णतया भिन्न होता।

तथापि, पंजाब की गेहूं-चावल फसल पद्धति की बड़ी जिम्मेदारी केन्द्र व राज्य सरकारों की है। केन्द्र की जिम्मेदारी इस तथ्य में निहित है कि कृषि उत्पादन की राष्ट्रीय वृद्धि दर को बढ़ाने में दयनीय असफलता के बाद केन्द्र सरकार ने अपने खाद्य भण्डार की जरुरतों को पूरा करने के लिए पंजाब और हरियाणा की खेती पर विभिन्न कीमतें और बाजार प्रलोभनों के जरिए अतिरिक्त भार डालने का सरल रास्ता अपनाया। यद्यपि 1980 के शुरू से ही यह साफ होने लगा था कि पंजाब में गम्भीर कृषि संकट पैदा हो रहा है। सरकार के अपने कृषि विशेषज्ञों के अनुसार यह संकट गेहूं-चावल फसल पद्धति चक्र का प्रभाव है, केन्द्र सरकार ने इस उभरते गम्भीर खतरे को पंजाब के लोगों से छुपाया तथा अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए पंजाब की खेती का दोहन जारी रखा। आज भी केन्द्र सरकार उसी रास्ते पर है और पंजाब के लोगों को इस बात के लिए प्रेरित नहीं कर रही है कि गेहूं-चावल फसल चक्र के तरीके के स्थान पर अधिक लाभदायक तथा उचित फसल विविधता का रास्ता अपनाया जाए। राज्य सरकार इस मायने में जिम्मेदार रही है कि उसने पंजाबियों को इस खतरे की गम्भीरता के बारे में सूचित नहीं किया और ना ही इस चुनौती से निपटने के लिए कोई कार्यक्रम बनाया तथा ना ही पंजाब की खेती और उसके किसानों को बर्बाद होने से बचाने के लिए केन्द्र सरकार को समय रहते उचित कदम उठाने के लिए कहा।

अन्य सभी कारण जैसे–संसाधनों और निवेश के उपयोग में कुशलता और निपुणता की कमी, कमजोर ढांचागत सुविधाएं (जैसे–बिजली, परिवहन, भण्डारण इत्यादि), अपर्याप्त ऋण सेवाएं, सूदखोरों की अधिक ब्याज दरें, अपर्याप्त फसल बीमा सेवा, भारत के कुल निर्यात में कृषि का न के बराबर हिस्सा, किसानों की आवश्यकताओं के अनुसार शोध में कमी, किसानों को आधुनिक खेती की तकनीक तथा बाजार की कीमतों के बारे में सूचना न मिलना, कृषि विपणन व्यवस्था का कमजोर होना, ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा में कमी, गरीबी, बेरोजगारी, पुराने पड़ चुके रीति-रिवाज इत्यादि कृषि नीति के कूप्रबन्ध की अभिव्यक्तियां है।

4. पंजाब कृषि संकट से उभरने के दो वैकल्पिक रास्ते

(अ) जी.एम. या ट्रांसजेनिक खेती

अनुवांशिक परिष्कृत (जीएम) या परा प्रजनन (ट्रांसजेनिक) खेती एक नया आविष्कृत कृषि मॉडल है। विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) ने कृषि क्षेत्र में दुनिया की कृषि समस्याओं के हल के रूप में इसे एक बड़ी छलांग के रूप में मान्यता दी है। व्यापार बाजार, वित्तीय संस्थाओं, संयुक्त राष्ट्र एवं सभी राष्ट्रीय सरकारों ने इसका समर्थन किया है।

यह याद करना दिलचस्प रहेगा कि 40 साल पहले जब रसायन आधारित खेती की तकनीक सामने आई थी तब खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) एवं अन्य कृषि विशेषज्ञों

ने ऐसी ही प्रशंसा की थी। उस समय रासायनिक तकनीक को 20वीं शताब्दी की 'हरित क्रान्ति' उद्घोषित किया गया था।

अब यह बिल्कुल स्पष्ट है कि इस रसायन आधारित तकनीक और इसके उत्पादों ने करीब-करीब सभी पर्यावरणीय पहलूओं (जमीन, पानी, जैव-विविधता, मौसम, जंगल आदि) तथा मानवीय स्वास्थ्य को भारी नुकसान पहुंचाया है, बल्कि मुट्ठी भर बहुराष्ट्रीय कम्नियों को ही एकमात्र लाभ पहुंचाया है जिनका इस तकनीक पर लगातार एकाधिकार चला आ रहा है और इनके उत्पादों (रासायनिक उर्वरक, रोगनाशक व कीटनाशक दवाइयों) पर दुनिया की करीब-करीब सभी सरकारों से प्रतिवर्ष अरबों डालर का अनुदान प्राप्त किया जाता रहा है। पर्यावरणीय संसाधनों के क्षीण होने के तथ्य को सारी दुनिया के जाने-माने सभी कृषि विशेषज्ञों (एफएओ सहित) ने अब स्वीकार कर लिया है। अत्यधिक युक्तिसंगत वर्णन किये जाने योग्य तथ्य यह है कि किसी भी कृषि एजेन्सी या विशेषज्ञ ने उंगली उठाकर यह मांग नहीं की कि कम से कम प्रयोगशाला के स्तर पर रासानिक कृषि तकनीक को जांचा जाए। प्रत्येक ने चुपचाप एक नये कृषियुग के अग्रदूत के रूप में इसे स्वीकार कर लिया। परन्तु अब इसकी कारगुजारी के 40 वर्ष बाद कृषि को वर्तमान बहुपक्षिय संकट से उभारने के लिए इनमें से प्रत्येक एक नया सूत्र खोजने में लगे हुए हैं।

पुन:, जीएम या ट्रांसजेनिक (परा प्रजनन) का नया फार्मुला इन्हीं बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा दिया गया है जो इन्हीं कम्पनियों में कार्यरत कृषि विशेषज्ञों द्वारा की गई खोज पर आधारित है। परन्तु इस समय पूर्व की स्थिति से बिल्कुल भिन्न स्थिति है। यद्यपि खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) के और कुछ अन्य विशेषज्ञों ने विश्व की कृषि समस्याओं के हल के रूप में उपरोक्त तकनीक का स्वागत करना शुरू किया है परन्तु दुनिया का आधा वैज्ञानिक समुदाय तथा सभी पर्यावरणवादी एवं मानववादी समुदायों ने जीएम तकनीक को यह चरित्रित करते हुए इसका विरोध किया है कि यह पर्यावरण एवं मानव के लिए हानिकारक है। दुनिया के कॉरपोरेट समुदाय और उसके चहेतों की इच्छा है कि विश्व समुदाय नई कृषि तकनीक को रसायन आधारित तकनीक की तरह ही चुपचाप स्वीकार कर लें।

प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण मानता है कि कृषि विशेषज्ञों, पर्यावरणवादी और मानवाधिकार ग्रुपों, किसानों तथा अन्य रूची रखने वाले लोगों द्वारा निम्न बिन्दुओं पर प्रत्येक देश के विभिन्न भागों और क्षेत्रों में विश्वव्यापी बहस चलाई जाए।

(क) क्या कृषि को बाजार-आधारित या पर्यावरण-मानव आधारित होना चाहिए?

(ख) दुनिया के विभिन्न भागों और क्षेत्रों में मौजूद विश्वव्यापी भूख और कूपोषण का कारण कहां निहित है। दुनिया के 1/5 भाग के लोगों की भूख का कारण अपर्याप्त खाद्य उत्पादन है या अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था।

(ग) एक न्यायपूर्ण और उचित कृषि नीति को कोई कैसे परिभाषित करे?

(ब) पर्यावरण-मानव अभिमुख (या जैविक) कृषि

उपरोक्त दृष्टिकोण मानता है कि जैविक खेती एक ऐसी उत्पादन पद्धति का प्रतिनिधित्व करती है जिसमें एक तरफ सभी पर्यावरणीय संसाधनों की उचित सुरक्षा और उसका संवर्द्धन किया जाता है और दूसरी तरफ मानवीय हितों की सेवा करती है और उन्हें पूरा करती है। जैविक खेती के मुख्य लक्षण निम्नलिखित हो सकते हैं।

परिभाषा–सरल परिभाषा के रूप में जैविक खेती कृषि उत्पादन की एक व्यवस्था है जो सभी कृत्रिम निवेशों के उपयोग को प्रतिबन्धित करता है, मिट्टी को उपजाऊ बनाता है तथा फसल चक्र के विविधिकरण को आवश्यक बनाता है एवं बहु-फसल (inter cropping), घास चारा एवं फसल व पशुओं के बीच पूरक एकता की तकनीक अपनाता है। यह कृषि-जलवायु व्यवस्था, स्वास्थ्य, जैव विविधता सहित जैविक चक्रों एवं मिट्टी की जैविक गतिविधि को संवर्द्धित एवं विकसित करता है। जैविक खेती का उचित प्रबन्ध जल-प्रदूषण को घटाता है या समाप्त करता है तथा खेत में पानी और मिट्टी को संरक्षित करने में मदद करता है। कुछ विकसित देशों में मसलन, जर्मनी, फ्रांस ने जल-प्रदूषण की समस्या का हल करने के रूप में जैविक तकनीक को काम में लेने के लिए किसानों पर दबाव डाला है या अनुदान का सहारा लिया है।

बहुत से देशों के कृषि क्षेत्र में जैविक खेती का महत्व बढ़ता जा रहा है, बिना इस पर ध्यान दिए कि उनका विकास स्तर क्या है, तथापि अभी तक जैविक खेती एक छोटा उद्योग ही है। आस्ट्रिया और स्वीटजरलैण्ड में जैविक खेती का प्रतिनिधित्व खाद्य व्यवस्था में 10 प्रतिशत है जबकि अमेरिका, फ्रांस, जापान व सिंगापुर में इसकी वृद्धि दर 20 प्रतिशत सालाना से अधिक हो चुकी है।

विकासशील दुनिया के लिए जैविक उत्पादों की मांग ने नये निर्यात अवसरों को भी पैदा किया है। विभिन्न खाद्यों की सालाना मांग शुरू होने से किसी भी देश के लिए यह असम्भव हो गया है कि वह अपनी सभी जैविक खाद्य की जरुरतों को घरेलू उत्पादों से पूर्ण कर सके। बहुत से विकासशील देशों ने जैविक उत्पादों के लिए इन आकर्षक बाजारों की जरुरतों को पूरा करना शुरू कर दिया है। मसलन यूरोप के शिशु खाद्य उद्योगों की पूर्ति के लिए उष्णकटीबन्धिय फल, दक्षिण अफ्रीका के लिए जिम्बाबवे की जड़ी-बूटियां, यूरोपीय समुदाय के लिए अफ्रीकी कपास, नीदरलैण्ड के लिए चीन की चाय और जापान के लिए चीन की सोयाबीन निर्यात होती है।

शुरुआती दौर–तार्किक तौर पर किसान यह अनुभव करते हैं कि कृत्रिम निवेशों को नकारने से एवं उनकी खेती को जैविक उत्पादन में बदलने से उन्हें उत्पादकता में कुछ नुकसान उठाना पड़ता है। पूर्णतया जैविक गतिविधि स्थापित करने से पहले (मसलन, लाभदायक जिवाणुओं की संख्या में वृद्धि, नाइट्रोजन पोषित गांठदार जड़ें) सामान्य तौर पर रोगाणुओं को समाप्त करने एवं उपजाऊपन की समस्या बनी रहेगी। कहीं-कहीं जैविक उत्पादन को सम्भव बनाने के लिए जलवायु व्यवस्था पुन: स्थापित करने में सालों लग सकते हैं। ऐसे मामलों में शुरुआत में अन्य टिकाऊ तरीकों–जो कृत्रिम रसायनों के न्यायिक उपयोग की इजाजत देते हैं, अधिक अनुकूल रहेंगे। एक रणनीति के अनुसार किस्तों में खेतों को जैविक उत्पादन में तब्दील किया जा सकता है ताकि सम्पूर्ण खेती को दाव पर न लगाना पड़े। अधिकांश अध्ययनों ने पाया है कि परम्परागत खेती की बनिस्पत जैविक खेती के लिए काफी मात्रा में श्रम निवेश की जरूरत है। इसलिए जैविक खेती में विशेष तौर पर पाई जाने वाली फसल विविधता एवं उनकी विभिन्न बोवाई तथा कटाई समय सारणी श्रम की मांग का अधिक समान वितरण कर सकती है जिससे रोजगार को स्थायित्व प्रदान करने में मदद मिल सकती है। जैसा कि सभी कृषि व्यवस्थाओं में है, उत्पादन में विविधता आय के अवसरों को बढ़ा देती है तथा परिवार के भोजन में स्वास्थ्य

रक्षक खनिज एवं विटामिन की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है जैसा कि फलों के मामले में है। यह फसलों के बड़े स्तर पर होने वाले नुकसान के जोखिम को भी कम करता है।

तथापि, जैविक खेती वाले किसानों को भारी अनिश्चितता का सामना है। उत्तरी अमेरिका के 73 प्रतिशत जैविक खेती करने वाले किसानों के अनुसार सूचनाओं का अभाव जैविक तब्दिली में एक बड़ी बाधा है। विस्तार अधिकारी जैविक तरीकों के लिए मुश्किल से ही पर्याप्त प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं तथा अध्ययन यह बताते हैं कि वे कभी-कभी किसानों को जैविक खेती करने के लिए हतोत्साहित भी करते हैं और आगे, विकासशील देशों में संस्थागत समर्थन नहीं के बराबर है। सम्पूर्ण उत्पादन के दौरान किसानों को मदद देने योग्य पेशेवर संस्थाएं, उत्पादन के बाद एवं विपणन प्रक्रिया बहुत से विकासशील देशों में अस्तित्व में ही नहीं है। ऐसे हालात में यह बहुत ही मुश्किल है कि काश्तकार किसान आवश्यक श्रम निवेश करे एवं परिवर्तन काल की कठिनाइयों का भार उठाए, जब तक कि उसे यह गारन्टी ना हो कि जब जैविक उत्पादन के लाभ मिलने लगेंगे उन बाद के सालों में उसे भूमि में काश्तकारी से हटाया नहीं जाएगा।

प्रभावशाली लाभांश

विशेष तौर पर, जैविक निर्यात प्रभावशाली लाभांशा सहित बिकते हैं, प्राय: समान तरह के गैर जैविक उत्पादों की तुलना में 20 प्रतिशत अधिक कीमत पर जैविक उत्पाद बिकते हैं। फिर भी अन्ततोगत्वा जैविक उत्पादों का लाभ बदलता रहता है, तथा कुछ अध्ययनों का मूल्याकंन है कि इसका लाभ दीर्घ-काल में मिलता है। तथापि उचित हालात में जैविक खेती से बाजार में मिलने वाले लाभ के बल पर परिवार की आय बढ़ाकर स्थानीय खाद्य सुरक्षा में योगदान मिल सकता है। फिर भी, इस आकर्षक बाजार में प्रवेश पाना इतना आसान नहीं है। किसान एवं कृषि व्यापारी अपने उत्पादों को विकसित देशों में बेचना चाहते हैं उनके लिए आम तौर पर यह आवश्यक हो जाता है कि वे जैविक प्रमाण पत्र एजेन्सी को किराये पर लें और प्रतिवर्ष जाँच के द्वारा यह पुष्ट करवायें कि उसका उत्पाद विभिन्न व्यापारिक साझेदारों द्वारा स्थापित मानदण्डों के अनुकूल है।

पर्यावरणीय उपलब्धियाँ–अधिकांश जैविक किसानों का प्रेरणा स्त्रोत आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति के अलावा भी है-इनका उद्देश्य जमीन, पशु एवं पौधों में अन्तरक्रिया को बढ़ाना, प्राकृतिक पोषण एवं उर्जा प्रवाह को संरक्षित करना तथा जैव-विविधता को विकसित करना है ये सभी बिन्दु टिकाऊ खेती के लिए योगदान करने वाले हैं।

इनमें जल-जमीन में क्षरण, ठोसपन, खारेपन एवं गिरावट के अन्य कारणों से मुकाबला करने के लिए बहुत सी जल एवं मिट्टी की सुरक्षा एवं संरक्षण की तकनीकों को अपनाया जाता है। इनके द्वारा फसल चक्र, जैविक खाद एवं घास के उपयोग से मिट्टी की संरचना का विकास होता है तथा मिट्टी में हष्ट-पुष्ट सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या बढ़ती है। मिश्रित एवं कड़ीबद्ध (relay crop) फसल बोवाई से अधिक समय तक लगातार मिट्टी ढकी रहती है और इस प्रकार वर्षा, हवा और सूर्य की क्षरण शक्ति के लिए मिट्टी का नंगा रहना बहुत कम समय के लिए रह पाता है।

जैविक किसान कृत्रिम (रासायनिक) रोग नाशकों की बनिस्पत प्राकृतिक रोगाणु नियन्त्रकों-मसलन, जैविक नियन्त्रण, रोगाणु नियन्त्रक गुण वाले पौधों का भी उपयोग करते हैं। कृत्रिम रोग नाशकों का जब गलत उपयोग होता है तब लाभदायक जीवों को भी ये समाप्त कर देते हैं, रोगाणु प्रतिरोध क्षमता घटा देते हैं और प्राय: जल जमीन को प्रदूषित

कर देते हैं। जहरीले कृत्रिम रोगाणुनाशकों-जो प्रतिवर्ष तीन करोड़ लोगों को जहर से ग्रसित करते हैं-का उपयोग कम करने से किसान परिवारों का स्वास्थ्य अच्छा होने की तरफ बढ़ेगा। कृत्रिम नाइट्रोजन उर्वरकों (रासायनिक खादों) का उपयोग समाप्त करने से पानी में नाइट्रोजन प्रदूषण का जोखिम काफी हद तक कम हो जायेगा जबकि फसल चक्र परिवर्तन का रोगाणुओं और बिमारियों को नियंत्रित करने एवं उपजाऊपन को बनाए रखने वाला विस्तृत रूप से काम आने वाला तरीका पहले से चला आ रहा है। अधिकांश प्रमाणीकरण के कार्यक्रम खनिज उर्वरकों के उपयोग पर रोक लगाते हैं जबकि खेतों में जैविक खाद पैदा करने में मदद करने के लिए यह एक आवश्यक सहायक है। फिर भी खेत से बाहर प्राकृतिक एवं जैविक उर्वरकों-मसलन, रॉक फॉस्फेट, पोटाश, गुवानो, समुद्री शैवाल, बूचड़खाने के उप-उत्पाद, जमीनी चूना पत्थर, लकड़ी की राख का भी उपयोग किया जाता है।

अन्त में फसल चक्र खाद्य फसलों की विविधता, चारा एवं कम प्रयुक्त पौधों को संवर्द्धित करता है जो कुल मिलाकर खेत में उत्पादन और उपजाऊपन को विकसित करते हैं, इसके अलावा खेत में पौधों के आनुवंशिक संसाधनों को संरक्षित करने में मदद दे सकता है। इस व्यवस्था में पशुओं को जोड़ने से जैविक मांस, अण्डे, दूध उत्पाद, इसी तरह भारवाही पशु शक्ति के जरिये-आय में बढ़ोतरी होती है। इस व्यवस्था में तीन फसलें एवं खेत पर वन उपज को जोड़ने से छाया एवं वायु प्रवाह में रूकावट उपलब्ध होगी, जबकि भोजन, आय, ईंधन और लकड़ी भी उपलब्ध होगी। जैविक कृषि की विविधता में कृषि-मछली पालन का जुड़ाव भी हो सकता है।

जैविक खेती–हजारों वर्षों की परम्परागत खेती–वास्तव में जैविक खेती कोई नया आविष्कार नहीं है। यह परम्परागत कृषि उत्पादन का तरीका है जो पिछले 10 हजार सालों के व्यवहार से वर्तमान स्तर तक विकसित हुआ है। 40 साल पहले तक यह दुनिया में प्रभुत्वकारी कृषि उत्पादन की व्यवस्था थी। फिलहाल कॉरपोरेट और सत्ताधारियों को जैविक खेती रास नहीं आ रही है।

5. विकास मॉडल में कृषि को प्रथम स्थान दिया जाना

एक तरफ कृषि (मनुष्य के खाद्य एवं स्वास्थ्य से सम्बन्धित) का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान तथा दूसरी तरफ सभी पर्यावरणीय संसाधनों-यानि, जल, जमीन, जलवायु, जंगल, जैव विविधता आदि को ध्यान में रखते हुए यह अत्यन्त आवश्यक है कि पूँजी निवेश, ग्रामीण ऋण, नीची दरों की किस्तों वाली फसल बीमा, निर्यात, प्रासंगिक तकनीक, जैव बीज एवं जैविक निवेश, भूमि सुधार आदि के मद्देनजर विकास मॉडल में जैविक निर्देशित खेती को प्रथम स्थान दिया जाए।

6. कृषि उत्पादों का मूल्य संवर्द्धन

गाँवों में और गाँवों के आसपास कृषि उत्पाद के मूल्य संवर्द्धन के लिए यह आवश्यक है कि कृषि संसाधन उद्योगों (बड़े, मध्यम और छोटे) को विकसित करने की आवश्यकता है। पंजाब की खेती में गेहूँ-चावल फसल चक्र पद्धति के स्थान पर, पंजाब की कृषि को पुन: स्थापित करने और भविष्य में विकसित करने के लिए एवं पंजाब में संतुलित व चलने योग्य आर्थिकता के निर्माण के लिए भी फसलों की विविधता के तरीके को अपनाना बहुत ही कठिन मामला है।

पंजाब, जहाँ खाद्य अनाजों का अतिरिक्त भण्डार है, वहाँ विभिन्न किस्मों के खाद्य संसाधन उद्योगों को लगाया जाना काफी उपयुक्त है। बढ़ती जा रही अधिकांश बागवानी फसलों के लिए भी यह अनुकूल है, इन फसलों के कच्चे माल के मूल्य के अलावा इनको विभिन्न किस्मों के रस के रूप में संसाधित (Processed) किया जा सकता है। संसाधित खाद्य पदार्थ एवं फलों के रसों के निर्यात के लिए एक पर्याप्त ढाँचागत-संरचना के निर्माण की आवश्यकता है-जिसमें पर्याप्त बिजली की उपलब्धता, शीत-भण्डारों की स्थापना, संसाधित (Processing) सुविधाओं जैसे पैकेट बनाना, डिब्बा बन्दी करना, बोतल बन्द करना, हिमीकरण और निर्जलीकरण करके फलों के साथ-साथ खाद्य पदार्थों के मूल्य में संवर्द्धन करना शामिल है।

देश के विभिन्न भागों में ताजा सब्जियों और फलों की पूर्ति की जा सकती है अगर परिवहन की संतोषजनक उपलब्धता हो। इनको चार्टेड उड़ानों के जरिए यूरोप भी भेजा जा सकता है। इस सबके लिए किसानों के बीच में समय पर और समुचित सुचनाओं के प्रचार-प्रसार की आवश्यकता है। देश के विभिन्न भागों में मौजूद भिन्न-भिन्न फलों और सब्जियों की कीमतों के बारे में सूचित होने की आवश्यकता है ताकि वे सही विक्रय केन्द्र का चयन कर सकें, उसी प्रकार देश के बाहर यूरोप के भिन्न-भिन्न बाजारों की कीमतों के बारे में फैक्स और फोन के जरिए उन्हें सूचनाओं की आपूर्ति की जानी चाहिए। यहाँ राज्य सरकार को वाँछित भूमिका निभाने की आवश्यकता है।

पक्की बुनियाद पर कृषि उद्योग को विकसित करने के लिए निम्न कदम-उठाने की आवश्यकता है।

कृषि को उद्योग धन्धों का दर्जा दिया जाए।

परिवहन जाल को विकसित करने तथा भण्डारण (शीत भण्डार सहित) को उन्नत करना एवं फसल कटाई के बाद के नुकसानों को निर्धारित समय में कम करने के लिए खाद्य अनाज, फलों एवं सब्जियों के लिए सुविधाओं का सही प्रबन्धन करके ढाँचागत-संरचना के विकास के लिए पर्याप्त धन उपलब्ध करवाना।

7. न्यायसंगतता सुनिश्चित करने के लिए

प्रकृति-मानव केन्द्रित या जैविक आधार पर खेतीबाड़ी का विकास करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण कार्य ग्रामीण मानवीय संसाधनों का विकास करना है, क्योंकि यह सिर्फ खेतीबाड़ी से संबंधित लोग ही हैं जो प्राकृतिक संसाधनों और कृषि निवेश सामग्री के इस्तेमाल के जरिए इसकी विकास प्रक्रिया को जारी रख सकते हैं। एक बार किसी प्रक्रिया से संबंधित लोगों के जागृत और प्रेरित होने के साथ ही कोई भी संभव कार्य यकीनी बन सकता है। ग्रामीण मानवीय संसाधनों को विकसित करने के लिए निम्नलिखित कार्यो को पुरा करना आवश्यक है।

8. कृषि ढाँचे में परिवर्तन के लिए

पंजाब में कृषि समता या न्यायसंगता एवं उत्पादकता के लिए मुख्य बाधा भूमि जोतों का घटता आकार है। इससे एक साधारण परिवार की औसतन जरूरतें पूरी करने लायक आमदनी भी नहीं होती है। इससे छोटी जोतें अव्यवहारिक और नहीं चल सकने वाली बन गई हैं। वर्तमान में ऐसी कुल भूमि जोतें (4 एकड़ से कम क्षेत्र वाली) राज्य की कुल भूमि जोतों का दो तिहाई हिस्सा है। इससे राज्य के दो तिहाई छोटे और सीमान्त

किसान निहायत गरीबी के स्तर पर जीवन बसर कर रहे हैं। यदि इनके साथ खेत मजदूर (जिनमें से ज्यादातर गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बसर कर रहे हैं) और जोड़ दिए जाए तो पँजाब की ग्रामीण आबादी में इन सबकी गिनती 80 प्रतिशत से ऊपर बनती है।

हमारे उपरोक्त आम परिप्रेक्ष्य में यह आवश्यक है कि इस बाधा को ऐसे तरीके से हटाया जाए कि इससे एक तरफ हमारी जोतें व्यवहारिक और चल सकने लायक (उत्पादन में सभी आधुनिक साधनों का उपयोग करने लायक) बन सकें तथा दूसरी तरफ छोटे और सीमान्त किसान के हितों की सुरक्षा हो सके। हमारे विचार अनुसार अलग-अलग क्षेत्रों में छोटे और सीमान्त किसानों (4 एकड़ से कम इकाइयों वाले) को अपनी जोतों को मोटे तौर पर तीन तरह के कृषि उप-ढाँचों में पुर्नगठित करने पर ध्यान देना चाहिए।

(क) प्राइवेट फार्म – दो फसली सिंचित भूमि और भूमि के गुणात्मक फर्क अनुसार उत्पादक समर्थता वाली 10 एकड़ जमीन के आस-पास के फार्म बनाए जा सकते हैं। ऐसे फार्म छोटे और सीमान्त किसान अपनी संलग्न भूमि को एक-दूसरे के साथ मिलाकर बना सकते हैं या एक सीमान्त व छोटा किसान दूसरे छोटे व सीमान्त किसान से भूमि ठेके या किराये पर लेकर 10 एकड़ इकाई का फार्म बना सकता है। ऐसे किसानों द्वारा उपयोग की जाने वाली कृषि सामग्री और किए गये निवेश (खर्च) पर विशेष कृषि छूट (सब्सिडी) दी जानी चाहिए और जमानत के तौर पर भूमि रहण रख कर कम ब्याज दर से कर्जा दिया जाना चाहिए। इन इकाईयों को मंडी लागत कम करने और ज्यादा मंडी लाभ प्राप्त करने के लिए उचित सरकारी मंडियों के साथ गुन्था जाना चाहिए।

(ख) सहकारी फार्म – छोटे और सीमान्त किसानों द्वारा संलग्न जमीनें मिला कर अलग-अलग क्षेत्रों में भूमि के गुण के अनुसार सिंचित दो फसली भूमि के 100 एकड़ के सहकारी फार्म बनाए जा सकते हैं। ऐसे कार्यों को खेती के साथ-साथ बाजार प्रक्रियाओं का संचालन करना चाहिए। ऐसा कानून बनाना चाहिए कि इसके संस्थापक फायदे के लिए कोई भी 4 एकड़ से ज्यादा भूमि वाले किसान को इसका सदस्य बनने की इजाजत नहीं हो। अनुभव दर्शाता है कि धनी किसान प्राय: ऐसी संस्थाओं में प्रभुत्व कायम कर लेते हैं और अपने फायदे के लिए इनका शोषण करते है। मुख्य तौर पर सदस्यों द्वारा किराये आधारित मजदूरी प्रदान की जाएं। केवल विशेष हालात में बाहरी मजदूर लगाए जाएं। सहकारी खेती नये कानून पर आधारित होनी चाहिए, जो इसको जन आधारित आन्दोलन बनाए और नौकरशाही की हर किस्म की दखलअन्दाजी पर पूर्ण रोक लगाए।

(स) इकरारनामा (या ठेका) काश्तकारी–केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा विकसित करनी चाहिए। ठेका (या इकरारनामा) काश्तकारी का अर्थ है एक उद्योगपति (जिसे निर्यात के लिए एक निश्चित विशेष गुण वाले कृषि माल की आवश्यकता है) के साथ ऐसा इकरार जिसके तहत छोटे व सीमान्त किसान विशेष फसल का उत्पादन करें या उनके पड़ौस में काम कर रही किसी कृषि-औद्योगिक इकाई (जिसका एक विशेष कृषि उत्पाद को प्रोसेस करने के लिए लगाया गया है) के लिए फसल बोई जाए। यह प्रबन्ध एक तरफ छोटे व सीमान्त किसान का अपनी भूमि पर नियन्त्रण और मालिकाना हक सुनिश्चित करता है तथा दूसरी तरफ उन्हें व्यवहारिक और चल सकने लायक बनाता है।

फिर भी इकरारनामा काश्तकारी सिर्फ तभी व्यवहारिक बन सकती है यदि सरकार (केन्द्र या राज्य) कानूनी गारण्टर के तौर पर काम करे और किसानों को विश्वास दिलाए

कि बड़े उद्योगपतियों को किसानों के हितों से खिलवाड़ करने की इजाजत नहीं दी जायेगी।

इकरारनामा काश्त छोटे और सीमान्त किसानों के 10 एकड़ वाले सिंचित सहकारी फार्म के लिए ज्यादा उपयुक्त है। इकरारनामा काश्त, दवाइयों वाले पौधों, जैव-विविधता और कृषि जंगलात व संरक्षण सहित सभी फसलों के लिए की जा सकती है। ऐसे बहुत से इलाके है जहाँ प्राइवेट और सरकारी क्षेत्र के उद्योग इसको विकसित कर सकते हैं। भारत में गन्ने और तम्बाकू उद्योग ठेका खेती को उपयोग करते है। चीन, थाईलैण्ड और बहुत से अन्य देशों ने उद्योग-कृषि के संबंधों को बहुत से क्षेत्रों में विकसित किया है।

(द) जहाँ तक बड़े और मध्यम खेती जोत का संबंध है इनके मालिकों को अपने फार्मों पर चल रहे विद्यमान तरीको से खेती करने की इजाजत होनी चाहिए।

(य) जहाँ तक खेत मजदूरों का संबंध है उनकी दयनीय हालात सुधारने के लिए कुछ सुधारक कदम उठाने की जरूरत है ये कदम निम्न है:

1. न्यूनतम मजदूरी तय करना और उसे सख्ती से लागू करना।

2. उन भूमिहीनों को जिन्हें भूमि सुधारों, भू-दान, ग्रामदान आदि के तहत पहले जमीनें मिली थी परन्तु अभी तक बस नहीं सके हैं उन्हें पुन: बसाया जाए।

3. खाली पड़ी जमीन जो किसी सार्वजनिक उद्देश्य के लिए नहीं रखी गई है, उसे बाकी बचे भूमिहीनों को अलाट की जाए।

4. पीने के पानी, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं की सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जाए।

5. ग्रामीण गृह निर्माण योजना के तहत भूमिहीनों के लिए कार्यस्थल पर घर की व्यवस्था की जावे।

6. प्रत्येक कृषि कामगार के लिए 50,000 रुपये बीमा राशि जमा की जाए जिसमें संबंधित राज्य व केन्द्र सरकार बराबर हिस्सा प्रदान करें।

7. उपर्युक्त सुधारों के आधार पर कृषि का पुनर्गठन करने से कृषि की प्रक्रिया अधिक उत्पादक और न्यायकारी (समतावादी) बन सकेगी।

9. ग्रामीण ढांचे के जनवादीकरण के लिए

*ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और ढांचागत संरचना का विकास किया जाए।

*ग्रामीण जनता के ज्ञान और दक्षता को विकसित किया जाये।

*सीमान्त किसानों और कृषि कामगारों के जीवन हालातों को बेहतर बनाए जाए।

*छोटे किसानों को रियायती कृषि निवेश सामग्री और सस्ता ऋण प्रदान किया जावे।

*मध्यम तथा धनी किसानों के लिए स्थायी कीमत नीति, उचित राष्ट्रीय बाजार, दीर्घावधि ऋण, निर्यात सुविधाएँ, इत्यादि सुनिश्चित की जाए।

भिन्न-भिन्न ग्रामीण विकास योजनाओं जैसे आई.आर डी.पी., जवाहर रोजगार योजना, इन्दिरा आवास योजना, आदि के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में खर्च होने वाले फण्ड के उचित उपयोग के लिए गाँव की चुनिन्दा कमेटियों को उस फण्ड की निगरानी करने का अधिकार देना।

सहकारी आन्दोलन का पूर्णतया लोकतान्त्रिकरण–इसके नौकरशाही कानूनों को संशोधित करके और विभाग की नौकरशाही नीति को बदलकर–करना।

महिलाओं को जमीन सहित अपने पति की समस्त जायदाद में सह-मालिक बनाना और उन्हें सभी चुनावी संस्थाओं में 50 प्रतिशत आरक्षण देना।

हर पंचायत (इसके सभी) सदस्यों को हर 6 महीनें बाद (या साल में दो बार) अपने हल्के का दौरा करने और अपने वोटरों की आम सभा के सामने 6 महीने का रिकार्ड बहस और टिप्पणियों के लिए पेश करने को कानूनी जिम्मेवारी बनाकर वोटरों के आगे उन्हें जवाबदेह बनाना।

10. वर्तमान कारॅपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था को बदलने की सामाजिक आवश्यकता

मानव समाज में कृषि को उचित स्थान दिलाने के लिए यह आवश्यक है कि पूँजी (यानि, धन और सम्पत्ति) निर्देशित कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था और इसके दोगलेपन की शैली (यानि कहना कुछ और करना कुछ) वाली व्यवस्था को बदलकर और उसके स्थान पर प्रकृति-मानव निर्देशित सामाजिक व्यवस्था कायम करना, जिसकी दो सर्वोच्च प्राथमिकताएं-यानि, पर्यावरण और मानव है तथा जो पाँच मूलभूत सिद्धान्तो-यानि, पर्यावरण संवर्धन, उचित समानता (यानि कारपोरेट पूँजीवादी राजनीतिक पार्टियों और व्यापारिक घरानों के स्थान पर जनता का सशक्तिकरण करना, प्रत्येक वंचित और गरीब व्यक्ति की सामाजिक सुरक्षा करना तथा आमदनी के बेतुके फर्क को 1 : 5 के तर्कसंगत फर्क की सीमा में लाना), उत्पादकता (या वृद्धि दर), जनता के नेतृत्व वाले जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता की पालना करती है।

11.सार संक्षेप

ऊपर जो कुछ कहा गया है उसके बारे में संक्षेप में कोई कह सकता है कि रसायन आधारित खेती ने पंजाब तथा दुनियां की खेती का बहुत नुकसान किया है, जिसकी पूर्ति नहीं की जा सकती है। जीन्स तब्दीली (जी एम) निर्देशित तकनीकी पँजाब और दुनिया की खेती को और अधिक तबाह कर देगी, इससे बाहर निकलने का रास्ता सिर्फ प्रकृति-मानव केन्द्रित (या जैविक) खेती ही है। दिनांक 1.1.2005

* * * * *

(नेचर-ह्युमन सेन्ट्रिक व्यूप्वाइंट द्वारा तैयार किया गया एक लेख जिसे प्रकृति - मानव केन्द्रित जन आन्दोलन के 3 नेताओं श्री रूपायन भट्टाचार्य (पं.बंगाल), श्री सज्जन कुमार एवं श्री घनश्याम डेमोक्रेट (राजस्थान) ने इण्डियन सोशियल साइन्स की 28वीं कांग्रेस 16 से 20 जनवरी, 2005 गांधीग्राम विश्वविद्यालय, अम्बाथुराइ, डिन्डीगल (तमिलनाडू)- 624302, में प्रस्तुत किया तथा इसकी व्याख्या की।)

हमारे ग्रह पृथ्वी पर घातक पारिस्थितिकी–जैविक संकट मण्डरा रहा है दीवार पर साफ लिखा है सुधार करो या मिट जाओ

आधुनिक सभ्यता के संकट का सिद्धान्त महज एक भटकाव है

1. हमारे ग्रह पर एक घातक पर्यावरणीय-जैविक संकट मंडरा रहा है। आज मानवता को हमारी पृथ्वी पर सबसे गंभीर पर्यावरणीय-जैविक संकट से सामना है। वास्तविकता यह है कि यदि मानवता अपने वर्तमान रास्ते को जारी रखती है तो यह शीघ्र ही अन्य जैविक घटनाक्रम के साथ विनाश को प्राप्त होगी। यदि यह सही रास्ता अपनाती है तो मानवता के लिए अब भी एक सुनहरे भविष्य की संभावना है।

(क) पर्यावरणीय संकट की स्थिति

जनवरी, 2004 के 'नेचर' विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित एक लेख कहता है कि ''आने वाले 50 वर्षो में जलवायु परिवर्तन के कारण पृथ्वी के एक चौथाई जानवर और वनस्पतियों के गायब होने की संभावना है।'' अन्य वैज्ञानिक विशेषज्ञ जो अपने आपको किसी समय सीमा में नहीं बांधते, पर्यावरणीय परिस्थितियों को बहुत ज्यादा खतरनाक स्वीकार करते है।

संयुक्त राष्ट्र की मार्च 2004 की रिपोर्ट कहती है कि सूचना प्रोद्योगिकी का 'धूआं रहित उद्योग' एक बड़ा वैश्विक प्रदूषक है। इसके अनुसार 24 किलोग्राम एवं 27 सेन्टीमीटर की कैथोड़ किरण ट्यूब मॉनीटर के एक कम्प्यूटर को 230 किलोग्राम जैविक ईंधन, 22 किलोग्राम का रसायन और 1500 किलोग्राम पानी–कुल 1.8 टन पदार्थ की जरूरत होती है।

इग्लैण्ड के डोरचेस्टर में पारिस्थितिकी और जल विज्ञान केन्द्र के प्राकृतिक पर्यावरण अनुसंधान परिषद की मार्च 2004 की रिपोर्ट कहती है : ''जीवन के इतिहास में एक षष्टम् महाविलुप्ति की घटना अब हमारे ऊपर पुन: होने जा रही हैं। जीवों एवं वनस्पतियों की जीवित प्रजातियों की ऐसी महाविलुप्तियाँ समय समय पर पहले हो चुकी है। इग्लैण्ड के डोरचेस्टर केन्द्र कहता है कि पूर्व की पाँच विलुप्तियाँ प्राकृतिक कारणों से हुई हैं जबकि छठी विलुप्ति का कारण मानव क्रिया कलाप लगता है।

2003 में विश्व के प्रमुख वैज्ञानिकों के रोम सम्मेलन ने सावधान किया कि यदि पर्यावरण पतन की प्रक्रिया को कम समय में ही सुधारा नहीं गया तो आने वाले समय में पृथ्वी जीवों के रहने के लिए पूर्ण रूप से गैर टिकाऊ बन जायेगी।

संयुक्त राष्ट्र के विश्व वन्य जीव कोष (डब्लू.डब्लू. एफ.) का 2002 के अध्ययन ने चेतावनी दी है कि यदि मानव समुदाय (खास कर धनी देश तथा धनी लोगों)ने अति उपभोग तथा बर्बाद करने वाली अपनी जीवन शैली को नहीं बदला तो हमारी पृथ्वी 2050 तक मानव जीवन के लिए गैर टिकाऊ बन जायेगी।

टिकाऊविकास पर 2002 का संयुक्त राष्ट्र जोहान्सबर्ग सम्मेलन ने पर्यावरण विनाश तथा मानवीय संसाधनों के पतन की घातक समस्या को स्वीकार किया।

सन् 2000 में विश्व के 6000 ख्यातिनाम वैज्ञानिकों ने अपने वक्तव्य में जोर दिया कि मानव समुदाय यदि शीघ्र ही ग्रीन हाऊस गैसों के उत्पादन को नहीं रोकता तो वैश्विक गर्मी से 21वीं सदी के अंत तक पृथ्वी जीव-जगत के लिए गैर टिकाऊ बन जायेगी।

लोगों का विश्वास भी इसी लाईन पर चल रहा है। लोग ऐसा महसूस करते हैं कि ग्रीन हाऊस गैस बड़ी मात्रा में बढ़ रही है, विश्व के पानी के स्त्रोत घट रहे हैं। बड़े पैमाने पर वनों का विनाश हो रहा है, 60% से अधिक कृषि योग्य भूमि पतित हो गयी है, बहुत सी जीव प्रजातियां समाप्त हो गयी है और अन्य प्राकृतिक उत्पादों का गैर टिकाऊ प्रयोग उनके जीवन के लिए बहुत गंभीर चुनौती पैदा कर रहा है।

(ख) मानवीय संकट की अवस्था

मानव विकास से संबंधित लगभग सभी ग्लोबल संस्थाएं, यानि, संयुक्त राष्ट्र संघ, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन इत्यादि-अब हमारे विद्यमान विकास मॉडल की गैर-टिकाऊ पद्धति पर जोर दे रहे हैं, जिसका चरित्र-चित्रण मुख्यतया असह्य असमानता, पक्षपात, गरीबी, अन्याय, अपराध, हिंसा इत्यादि से होता है।

वर्ल्ड वॉच वाशिंगटन की जनवरी 2004 की रिपोर्ट में कहा गया है कि विश्व के धनी और उच्च मध्यम वर्गों (जो विश्व की आबादी का एक चौथाई भाग है) की अपव्ययी और गैर-टिकाऊ जीवन पद्धति मानव समुदाय को खतरनाक संकट की तरफ धकेल रही है।

2002 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट अभिव्यक्त करती है कि दुनिया के 1% सबसे अधिक धनवान दुनिया के 75% सबसे गरीब लोगों की कुल आय से ज्यादा आय प्राप्त करते हैं। 2001 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट लिखती है, विकासशील देशों के 460 करोड़ लोगों में से 35 करोड़ से ज्यादा अशिक्षित है, लगभग 100 करोड़ लोग पीने के स्वच्छ पानी से वंचित है और 240 करोड़ लोगों को समुचित शौच सुविधा उपलब्ध नहीं है। लगभग 3 करोड़ 20 लाख लड़के व लड़किया स्कूल नहीं जाते। 5 साल से कम आयु के 1 करोड़ 10 लाख बच्चे निरोधक बीमारियों से मर जाते हैं जो प्रतिदिन 30 हजार से अधिक है। 1 अरब 20 करोड़ लोग एक डालर से कम और 2 अरब 80 करोड़ 2 डालर से कम प्रतिदिन आय पर जीते है। इस प्रकार का वंचितपन विकासशील देशों तक ही सीमित नहीं है, ओ.ई.सी.डी. (आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन) के देशों में 13 करोड़ से अधिक लोगों की कमजोर आय है। 3 करोड़ 40 लाख बेरोजगार है और वयस्क कार्यकारी अशिक्षा की औसत दर 15% है। रिपोर्ट आगे व्यक्त करती है कि अमेरिका की सर्वोच्च 10% अमीर आबादी (जो करीब 2 करोड़ 50 लाख है) की आय विश्व के सबसे गरीब 43% (करीब 200 करोड़)लोगों की संयुक्त आय से ज्यादा है। 1999 की मानव विकास रिपोर्ट कहती है कि 1990 के दशक के अंत में दुनिया की आबादी के 20% लोग जो उच्च आय वाले देशों में रहते हैं तथा नीचे के 20% लोग क्रमश: विश्व जी डी पी का 86% व 1% : विश्व

टेलिफोन लाईन का जो आज का बुनियादी संचार साधन है, 74% तथा 1.5%, विश्व निर्यात का 82% व 1% तथा विदेशी निवेश का 68% तथा 1% भाग उपयोग एवम् नियन्त्रित करते हैं। 1996 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट बताती है कि विश्व के सबसे धनवान मात्र 3 व्यक्ति 48 अल्पविकसित देशों की संयुक्त जी डी पी के बराबर सम्पदा रखते हैं, विश्व के 225 सबसे धनवान व्यक्तियों के पास 10 खरब डालर से ज्यादा सम्पत्ति है जो विश्व के 47% गरीबों (जिनकी संख्या 250 करोड़ है) की कुल आय है। विश्व के 32 सबसे धनवान व्यक्तियों की सम्पदा दक्षिण एशिया (भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान तथा मालद्वीप) तथा ईरान एवं अफगानिस्तान की संयुक्त जी डी पी से ज्यादा है।

मानव समाज में असमानता और वंचितपन अभूतपूर्व गति से आगे बढ़ रहा है। जरा यह तथ्य देखें। सबसे धनवान और सबसे गरीब देशों के बीच फर्क सन् 1820 में लगभग 3 एवं 1 के अनुपात में था। यह सन् 1913 में 11 एवं 1 हुआ, 1950 में 35 एवं 1, 19, 73 में 44 एवं 1 तथा 1992 में 72 एवं 1 का हो गया। 1997 में यह हृदय विदारक आँकड़ा यानि करीब 74 तथा 1 का था। आज दुनिया में अमीरों एवं गरीब लोगों के बीच विभेद ऐसा है जो दिल हिलाने वाला है। दुनिया का सबसे अमीर अमेरिकन बिल गेट्स कुल 80 अरब डालर की सम्पत्ति का मालिक है और भारत का अजीम प्रेमजी 6 अरब डालर की सम्पदा का मालिक है, जबकि एक भूखा व्यक्ति खाली जेब और किसी अन्य स्त्रोत के अभाव में एक रोटी के टुकड़े को प्राप्त करने के लिए भीख मांगने के सिवाय कोई विकल्प नहीं रखता है, कुछ समय जिन्दा रहता है और फिर इस दुनियां से विदा हो जाता है, इस प्रकार की मौतों के कारण को चिकित्सा विशेषज्ञ पेट की खराबी या इसी प्रकार की भौतिक बीमारी को कारण घोषित करते हैं।

हर कहीं लोग महसूस कर रहे हैं कि उनकी दिन-प्रतिदिन की समस्याएँ-भूख, गरीबी, बेरोजगारी, बेघरबारता, बीमारियाँ, पीने के पानी और स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी, मँहगा और देरी से मिलने वाला न्याय, महिलाओं के खिलाफ अत्याचार, साम्प्रदायिक और जातिवादी दंगे, बिजली गुल होना, भ्रष्टाचार, अपराध, मानवाधिकारों का हनन, इत्यादि गंभीर हो रही है। राजनीतिक नेता और व्यापारिक क्षेत्र सार्वजनिक फण्ड को निचोड़ रहे हैं तथा उचित या अनुचित साधनों से अपनी जेबें भर रहे हैं।

(ग) आधुनिक सभ्यता के संकट का मसला

आधुनिक सभ्यता के संकट के मसले पर नजर डालें तो सच्चाई यह है कि सभ्यता आवश्यक तौर पर किसी निश्चित समाज (या व्यवस्था) की केवल संस्कृति की द्योतक होती है। जहाँ तक संस्कृति का संबंध है, यह समाज (या व्यवस्था) की राजनीति और आर्थिकता के मूलभूत सिद्धान्तों पर आधारित होती है। सामन्ती संस्कृति सामन्ती राजनीति और आर्थिकता के मूलभूत सिद्धान्तों को थामे हुए थी, यानि कि राजशाही के प्रति वफादारी के सिद्धान्त की पालना करना। इसके अनुसार ही सामन्ती सभ्यता सामन्ती राजनीति और आर्थिकता के सिद्धान्तों का प्रचार करती थी। इसी तरह वर्तमान कॉरपोरेट पूंजीवादी समाज (या व्यवस्था) में इसकी राजनीति और आर्थिकता के सिद्धान्त पूँजी को सर्वोच्च वस्तु करार देते हैं और मानवीय विकास, सम्पन्नता और तरक्की को पूँजी (पैसा या सम्पत्ति) के पैमाने से नापते हैं। तभी वर्तमान कारपोरेट पूंजीवादी संस्कृति अपने भिन्न-भिन्न क्षेत्रों (यानि शिक्षा, अर्थशास्त्र, वाणिज्य, दर्शनशास्त्र, समाज शास्त्र, मनोविज्ञान,

राजनीति विज्ञान, गृह विज्ञान, रक्षा तथा रणनीतिक अध्ययनों, पारिस्थितिकी और पर्यावरणीय विज्ञान, दूर संचार और पत्रकारिता, कम्प्यूटर विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी, भूगोल, इतिहास, पुरातत्व विज्ञान और संस्कृति, कृषि विज्ञान, जैव-चिकित्सा विज्ञान, सामाजिक चिकित्सा और सामुदायिक स्वास्थ्य, जैव-तकनीकी, मानवशास्त्र, अन्तर्राष्ट्रीय संबंध, भाषाई जनसंख्या विज्ञान, विज्ञान और तकनीकी नीति अध्ययन, सामाजिक कार्य, सांख्यिकी और गणित) में इस पैसे की संस्कृति को ही उभारती है और तभी संस्कृति के इन सभी क्षेत्रों के संचालक पूर्णतया पैसा आधारित मानदण्डों पर चलते हैं। सम्पूर्ण विज्ञान, तकनीकी और अनुसंधान बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के प्रति एवं पूँजी, पैसा या सम्पत्ति को अधिकतम हद तक पहुँचाने के प्रति समर्पित है।

इसीलिए हम कहते हैं कि आधुनिक सभ्यता के संकट का मसला पहले से चल रहे घातक पारिस्थितिक-जैविक संकट का एक भाग मात्र है। इसलिए सभ्यता के संकट को एजेन्डा के तौर पर पेश करना अनावश्यक है। जो मुख्य संकट पर ध्यान केन्द्रित करने और उसे निशाना बनाने की क्रिया को विकृत करता है।

2. पारिस्थितिक-जैविक संकट का कारण

मुख्यतः, इस संकट का व्यापक कारण प्राकृतिक और मानवीय संसाधनों की गलत समझ में निहित है।

खास करके, धनवानों और उनके गुर्गों की गैर-टिकाऊ जीवन पद्धति इस संकट की मुख्य वजह है।

मौलिक तौर पर, इस संकट का कारण कॉरपोरेट पूँजीवादी और कम्युनिष्ट व्यवस्था के समाजशास्त्र में निहित है। पहला समाजशास्त्रीय कारण एडम स्मिथियन और मार्क्सवादी मॉडलों की इस एक तरफा समझ में निहित है कि मनुष्य हमारे ग्रह पृथ्वी पर और यहाँ तक कि ब्रह्माण्ड में, यानि कि प्रकृति की व्यवस्था में सर्वोच्च घटनाक्रम है। स्पष्टतया, ये दोनों मॉडल एक मात्र लोगों को मानव समाज और इसमें प्रत्येक चीज के निर्माता के तौर पर पेश करते हैं, और इस सामाजिक सच्चाई की अवहेलना करते है कि मानव समाज में परिवर्तन और विकास दो तरफा अन्तरक्रिया–यानि एक तरफ प्रकृति और समाज के बीच और दूसरी तरफ मानव समाज के अन्दर की अन्तरक्रिया-के कारण होता है।

दूसरा मूलभूत समाशास्त्रीय कारण मानवीय स्वभाव (प्रकृति) के बारे में कॉरपोरेट पूँजीवादी और कम्युनिष्ट सिद्धान्तों की एक तरफा समझ में निहित है। कॉरपोरेट पूँजीवादी सिद्धान्त सोचता है कि मानवजाति स्वभाव से स्वार्थी है, जबकि कम्युनिष्ट अवधारणा मानती है कि मनुष्य स्वभाव से सामाजिक है, इस प्रकार ये दोनों सिद्धान्त मनुष्य के दो तरफा चरित्र की सामाजिक वास्तविकता की अवहेलना करते हैं। मनुष्य का दो तरफा चरित्र, यानि की एक तरफ निजी हित (जो मनुष्य के जैविक अस्तित्व से पैदा होता है) और दूसरी तरफ सामाजिक हित (समाज के सदस्य के तौर पर एक सामाजिक तत्व के रूप में पैदा हुआ हित) है, इसका अर्थ है कि मनुष्य एक जैव-सामाजिक प्राणी है।

3. पारिस्थितिक-जैविक संकट से बाहर निकलने का रास्ता

अल्पकालीन मार्ग

इस संकट से बाहर निकलने का अल्पकालीन मार्ग एक न्याय-आधारित समाज की स्थापना–जिसके आधारभूत सिद्धान्तों, यानि, (1) कॉरपोरेट पूँजीवादी समर्थक

राजनीतिक पार्टियों तथा व्यापारिक घरानों की जगह आम जनता का सशक्तिकरण करने, (2) प्रत्येक वंचित और गरीब व्यक्ति की सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करने और (3) बेतुके आय के अन्तर को 1 : 5 के अनुपात में तर्कसंगत बनाने–में निहित है।

प्रकृति–मानव केन्द्रित मार्ग

इस संकट का आधारभूत हल वर्तमान कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था के स्थान पर एक प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था कायम करने में निहित है, जिसके उद्देश्य, सिद्धान्त, तरीके और संगठनात्मक सिद्धान्त दो उच्च प्राथमिकताओं-यानि, पर्यावरण और मनुष्य को लिए हों तथा जो पाँच आधारभूत उसूलों–यानि, पर्यावरणीय संवर्द्धन, उचित समानता (यानि, प्रत्येक वंचित और गरीब व्यक्ति की सामाजिक सुरक्षा कायम करके तथा बेतुके आय अन्तर को 1:5 के तर्कसंगत अनुपात में लाकर), उत्पादकता (या वृद्धि दर), लोक नेतृत्व वाला जनवाद (यानि, कॉरपोरेट पूंजीवादी समर्थक राजनीतिक पार्टियों व व्यापारिक घरानों की बजाए आम जनता का सशक्तिकरण करके) एवं चौतरफा पारदर्शिता-द्वारा संचालित हो।

प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं-

मानव समाज का प्रकृति–मानव केन्द्रित मॉडल

1. मानव समाज के प्रकृति मानव केन्द्रित मॉडल का मानना है कि मानव समाज में पर्यावरण और मानव जाति दोनों बहुत ही मूल्यवान घटनाक्रम हैं। यह दोनों इसकी सामाजिक पूँजी (सर्वोच्च वस्तु) है, इन दोनों (यानि, पर्यावरणीय-मानवीय संसाधन) में वृद्धि से विकास, सम्पन्नता एवं प्रगति होती है तथा सोचने, कहने, करने और संगठित होने के लिए यह निर्देशक सिद्धान्त का कार्य करता है।

2. यह हर समय और सब जगह पर्यावरण (यानि, हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) संवर्धन के मूलभूत कार्य का मजबूती से समर्थन करता है।

3. यह प्रत्येक व्यक्ति के जैव-सामाजिक अस्तित्व के अधिकार को शुद्ध हवा, साफ पीने के पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित करने का समर्थक है।

4. यह आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में अधिकतम 5 गुणा अन्तर) पर आधारित उचित समानता के मूलभूत मानवीय अधिकार का समर्थक है।

5. यह विश्व शान्ति का मजबूती से पक्षपोषण करता है और विश्व के सभी विवादों खासकरके जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका इत्यादि के सीधे शांतिपूर्ण हल के मार्ग का समर्थक है। जम्मू कश्मीर के न्यायपूर्ण समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा एवं विदेश महकमों को भारत-पाक सहराज्य के संयुक्त नियन्त्रण में सौंपा जाना चाहिए जबकि बाकी सभी मामलों (रक्षा और विदेश मामलों के अलावा) में जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र होना चाहिये जबकि इसके नौ नश्ली क्षेत्रों में से प्रत्येक को अधिकतम संभव स्वायत्तता प्रदान की जाए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन और जोर्डन के संबंध में भी कारगर होगा।

6. यह संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के 5 स्थायी सदस्यों के वीटों पावर को समाप्त करते हुए विश्व व्यवस्था के पुनर्गठन करने एवं किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए संयुक्त राष्ट्र की केन्द्रीय सभा में साधारण बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान करने

की मांग करता है। कुछ समय दौरान, विश्व के विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों के लोगों के मतदान से निर्वाचित संविधान सभा द्वारा रचित संविधान के आधार पर संयुक्त राष्ट्र का पुनरगठन किया जाए।

7. यह विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाए प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर पुनर्गठित करने तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है) को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति बनाने की हिमायत करता है जिसमें मानवीय और पर्यावरणीय पहलु उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्ववाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के पांच उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाता है।

8. यह सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50% प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित करने का समर्थक है।

9. यह खेती को सहकारिता के आधार पर सुसंगठित करने को प्रोत्साहित करता है तथा खेती से संबंधित सभी लोगों की जीविका को सुनिश्चित करने का समर्थक है।

10. यह श्रमिकों (शारीरिक और मानसिक दोनों) के सशक्तिकरण के लिए जोरदार आवाज उठाता है, जिसके अनुसार सभी संस्थानों, परियोजनाओं एवं कारखानों के प्रबंध में उनके (श्रमिकों के) एक तिहाई चुने हुए प्रतिनिधियों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए।

11. यह सभी औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों के विकेंद्रीकरण की वकालत करता है जिसके अनुसार कॉरपोरेट और राजकीय मोनोपोली नियन्त्रण समाप्त करते हुए एवं उन्हें साधारण शेयरधारकों (दो तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) तथा मजदूरों (एक तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) के द्वारा प्रबंधित किया जाए।

12. यह वित्त नियन्त्रण के लिए लोकतांत्रिक प्रबंध और नियन्त्रण को प्रस्तावित करता है। कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबंधन एवं नियन्त्रण का पक्षधर है तो राजकीय क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का समर्थक है। जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियन्त्रण का हामी है। प्रोमोटर्स शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध की मिल्कियत को समाप्त किया जाए।

13. यह प्रत्येक सांसद को 2 करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये अपने चुनावी क्षेत्र के विकास खर्च के लिए आवंटित करने के मौजूदा नियम को हटाकर विकास से संबंधित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्रामसभा सहित और इसके ऊपर कोई नहीं) के जरिए खर्च करने को प्रोत्साहित करती है।

14. यह प्रत्येक देश में प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण के आधार पर कॉरपोरेट पूँजीवादी निर्देशित संविधान तथा न्यायशास्त्र को पुनर्गठित करने का प्रस्ताव रखता है।

15. यह मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के हितों की रक्षा एवं संवर्धन के मूलभूत सिद्धान्त का मजबूती से पक्षधर है। उपर्युक्त उसूल की किसी तरह से अवहेलना करने पर

अपराधी को सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल दण्ड दिया जाए। दण्ड में मानवीय क्रूरता और मृत्युदण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधान शामिल हो सकते हैं ।

16. इसका पक्का विश्वास है कि मानव समाज की सभी संघटक प्रक्रियाओं–यानि, पर्यावरणीय, मानवीय और वैज्ञानिक तकनीकी–पर लोगों का नियंत्रण होना चाहिए और उन्हीं द्वारा संचालित होनी चाहिए।

17. यह गांव/वार्ड से राष्ट्रीय स्तर तक पाँच स्तरों पर सामाजिक जीवन के तीन पहलुओं–राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक–के प्रबन्ध की शक्ति लोगों को देकर उनके सशक्तिकरण (या जनता के नेतृत्व वाला शासन) को प्रस्तावित करता है।

18. लोगों के सशक्तिकरण की प्रक्रिया चुनाव के तरीके से तय की जाए जो पूर्णतया स्वतंत्र हो और जहाँ प्रत्येक को उम्मीदवार के तौर पर भागीदारी करने का अधिकार है तथा मतदाता के रूप में अपनी राय जाहिर करने का अधिकार है। यह दलगत ढांचे को महत्व दिये बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा चुनाव के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करें) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्य सत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के राजकीय एकाधिकार का खात्मा करने का पक्षधर है। सम्बन्धित मतदाताओं को वापिस बुलाने का अधिकार हो जिसके तहत किसी सभा सदस्य के मतदाताओं का 1/5 भाग अगर लिखित में पुन: चुनाव की मांग इस आधार पर करें कि उपर्युक्त सदस्य अपने मतदाताओं का विश्वास खो चुका है।

19. राजनीतिक पहलू माँग करता है कि पाँचों स्तर पर (यानि, राष्ट्रीय, राज्य या क्षेत्रीय, जिला, ब्लॉक और गाँव)राजनीतिक सभा का गठन किया जाए जो लोकतान्त्रिक व्यवस्था पर कायम रहे तथा पूर्णतया लोकतान्त्रिक उसूलों, गतिविधियों और ढाँचे पर आधारित हो। ऐसा मॉडल निर्णय लेने में भी अधिकतम सम्भव लोक सशक्तिकरण के सिद्धान्त को लागू करना आवश्यक बना देता है।

20. आर्थिक पहलू की आवश्यकता है कि एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता के लिए पाँचों स्तर पर विकास सभाएँ स्थापित की जाएं जिसकी धारणाएँ, कानून एवं नियम पुर्वोक्त दो उच्चस्थ प्राथमिकताओं (यानि, मानवजाति और पर्यावरण) तथा पाँच सिद्धान्तों (यानि, पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जन-नेतृत्वकारी लोकतन्त्र तथा चहुंमुखी पारदर्शिता) की रोशनी में बनाए जाएं। मनुष्य की जैव-सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एडम स्मिथ का 'निजी हित' आधारित बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त तथा हर चीज का राज्य द्वारा राष्ट्रीयकरण करने के मार्क्सवादी बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त, ये दोनों एक तरफा है। परन्तु, विडम्बना यह है कि दोनों मनुष्य और पर्यावरण विकास के सन्दर्भ की बजाए विकास, सम्पन्नता तथा प्रगति को धन वृद्धि के रूप में नापते हैं।

21. सांस्कृतिक पहलू की आवश्यकता है कि पाँचों स्तर पर सांस्कृतिक सभाएं स्थापित की जाएं।यह ऐसे जीने के तरीके (या जीवन शैली) की माँग करता है जो बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों से भरपूर हों तथा लोगों के बीच में तर्कसंगत मानवतावाद एवं पर्यावरणवादी चिन्तन, व्यवहार एवं संगठन को विकसित करता हो।

22. पाँचों स्तरों पर राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक सभाओं द्वारा बनाये गये कार्यक्रमों और नीतियों को लागू करने के लिए अपने-अपने राजनीतिक, विकास और

सांस्कृतिक क्षेत्र के विशेषज्ञों के आयोगों का चुनाव करना। राजनीतिक विशेषज्ञों का आयोग राजनीतिक मुद्दों, जैसे–कानून और व्यवस्था, अपराध रोकथाम, न्यायिक कार्यवाही से सम्बन्ध रखे; विकास विशेषज्ञों का आयोग आर्थिक, वित्तीय मसलों, जैसे–विकास योजना, कृषि उद्योग, सेवाएं, वित्त और बजट को देखे और सांस्कृतिक विशेषज्ञों का आयोग शिक्षा, स्वास्थ्य, नैतिक मूल्यों एवं अन्य सांस्कृतिक विषय, जैसे–भाषा, संगीत, नृत्य, सिनेमा उद्योग आदि पर ध्यान दें।

23. प्रत्येक चुनी हुई संस्था अपने प्रभाव क्षेत्र में चाहे वह निचले स्तर की हो या ऊपर के स्तर की हो सम्प्रभुसत्ता सम्पन्न होगी। किसी भी समय दो चुनी हुई संस्थाओं या सार्वजनिक संस्थाओं के मध्य मतभेद उत्पन्न हो तो सम्बन्धित इकाइयाँ अपने-अपने प्रतिनिधि समूहों को नियुक्त करेंगी जो बातचीत के जरिए सम्बन्धित प्रश्न का हल निकालेंगी। यदि मामला आपस में तय हो जाता है तो वह फैसला मान्य होगा। यदि दोनों पक्ष साझे निर्णय पर सहमत नहीं होते तो मसला सम्बन्धित लोगों द्वारा जनमतसंग्रह से हल किया जाएगा।

24. इसका मानना है कि किसी भौगोलिक इकाई की आन्तरिक सुरक्षा का प्रश्न सम्बन्धित लोगों द्वारा ही देखा जाए। विभिन्न भौगोलिक इकाइयों की सीमा-सुरक्षा का मुद्दा सुरक्षा एजेन्सी द्वारा देखा जाए तथा यह सुरक्षा एजेन्सी सम्बन्धित लोगों द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा स्वीकृत नियमों के अनुसार बनाई जाए।

25. समाज में प्रत्येक प्रदूषण फैलाने वाली तकनीक का संचालन यह नहीं होने देगी चाहे उस तकनीक में कितनी भी ज्यादा उत्पादक क्षमता हो। 10.1.2005

* * * * *

जनसंख्या वृद्धि के विस्फोट की समस्या
घातक पर्यावरणीय संकट को शीघ्र ही पीछे छोड़ सकती है
और
मानव समुदाय को सन् 2050 तक अस्थिर कर सकती है

(1)

अब तक स्वीकार्य तथ्य है कि बढ़ रही मानव जनसंख्या की समस्या आज एक खतरनाक स्थिति में पहुँच चुकी है। हाल ही में सरपट बढ़ रही जनसंख्या वृद्धि की इतनी तेज गति, मानव समुदाय और अन्य जैविक प्रजातियों को प्रस्तुत अत्यन्त गंभीर पर्यावरण ह्रास की चुनौती को भी मात दे सकती है।

(2)

जैसा कि इसकी भूतकालीन ओर वर्तमान स्थिति गवाह है, जनसंख्या वृद्धि दर हाल ही पैदा हुई समस्या है जो 1950 से पहले मौजूद नहीं थी। ऐसा इसलिए था कि मानव जाति अपनी शुरुआत से ही 20वीं सदी की प्रथम अर्द्ध शताब्दी तक अपनी संख्या बढ़ाने की इच्छा रखता रहा है और इसके लिए काम करता रहा है।

(3)

10 लाख साल से अधिक समय तक मानव की जनसंख्या वृद्धि कछुआ चाल से बढ़ी। यह सन् 1800 में मात्र 1 अरब तक पहुँची। आगे यह 130 वर्षों में (यानि 1930 में)

दुगुनी यानि दो अरब हुई, अगले 30 वर्षों (यानि 1960 में) तीन अरब तथा अगले 15 वर्षों यानि (1975) में चार अरब तथा आगे के 11 वर्षों यानि (1986) में पांच अरब हो गयी। आज विश्व जनसंख्या 6 अरब से अधिक (1 अरब 30 करोड़ विकसित देशों में तथा 4 अरब 70 करोड़ विकासशील देशों में) है। 9 करोड़ लोग प्रतिवर्ष बढ़ रहे हैं। अनुमान है कि विश्व जनसंख्या की वृद्धि एक मिनट में 179 की है (प्रत्येक 100 की संख्या में से 97 की जनसंख्या वृद्धि विकासशील देशों में हो रही है), इस चाल से यह सन् 2050 में दुगुनी (यानि 12.5 अरब) हो जायेगी। विश्व की वहन क्षमता का अनुमान 8 अरब जनसंख्या को संभालने का है। यदि वर्तमान जनसंख्या वृद्धि की रफ्तार जारी रहती है तो 3 सदियों में पृथ्वी पर मानव को सिर्फ खड़ा रहने की जगह मिलेगी।

हमारे विचार से भूतकाल में कम जनसंख्या वृद्धि दर का कारण पूर्व-पूँजीवादी समय में संयुक्त परिवार की व्यवस्था रही है, जो संकट के समय में प्रत्येक व्यक्ति की सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करती थी। आगे, यह कमी 1950 के बाद जनसंख्या वृद्धि का तरीकाकार भी प्रमाणित करता है।

(4)

1950 के बाद जनसंख्या वृद्धि की समस्या पांच प्रकार के अनुभव प्रदान करती है।

पहला अनुभव विकसित देशों का है जो बताता है कि उच्च जन्म दर और उच्च मृत्युदर में गिरावट भौतिक और मानसिक विकास के सुधरे हालात में हुई जिसमें मानव आर्थिक जिन्दगी तथा बुढ़ापे में कुछ हद तक सामाजिक सुरक्षा महसुस करता है।

दूसरा अनुभव भूतपूर्व सोवियत संघ, जर्मनी, जापान और कुछ स्केनेडेनवियन देशों का है जो संकेत देता है कि पूर्ण सामाजिक सुरक्षा और अच्छी स्वास्थ्य सेवा के हालात में जनसंख्या वृद्धि दर कम यहाँ तक कि शून्य तक गिर जाती है।

तीसरा अनुभव दक्षिण पूर्व और पूर्वी एशियन देशों का है जो बताता है कि आर्थिक विकास के साथ शिक्षा, स्वास्थ्य और परिवार नियोजन का आन्दोलन भी जनसंख्या वृद्धि दर को नीचे लाता है।

चौथा अनुभव बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल आदि का है जो दिखाता है कि परिवार नियोजन की प्रभावी योजना भी जनसंख्या वृद्धि दर को कुछ कम करती है।

पांचवा अनुभव अफ्रीका और दक्षिण एशिया में स्थित कुछ पिछड़े देशों का है जो बताता है कि निम्न आर्थिक स्थितियों में जनसंख्या नियन्त्रण का अप्रभावी कार्यक्रम जनसंख्या वृद्धि दर को उच्च स्तर पर रखता है।

(5)

उपर्युक्त अनुभव गवाह है कि खराब आर्थिक जीवन, बुढ़ापे तथा अच्छी स्वास्थ्य सेवा की कुछ निश्चित सामाजिक सुरक्षा की गारन्टी से संतुलित जनसंख्या वृद्धि दर को हासिल करना संभव है। यह अनुभव आगे दर्शाता है कि पूर्ण सामाजिक सुरक्षा के हालात में मानव स्वयं अपने बच्चे पैदा करने के बारे में ज्यादा परेशान नहीं होता।

(6)

बढ़ती जनसंख्या के खतरे के बारे में विश्व 1960 के दशक तक सचेत हुआ, तब से तीन अन्तर्राष्ट्रीय जनसंख्या सम्मेलन बुचारेस्ट 1974, मैक्सिको 1984 तथा काहिरा 1994 हुए। प्रथम सम्मेलन ने विकास यानि महिलाओं की भूमिका, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि को

जनसंख्या नियन्त्रण का केन्द्र बिन्दु बनाया तथा सामाजिक कारक को द्वितीय स्थान पर धकेला। दूसरे सम्मेलन में आर्थिक कारक पर अधिक जोर दिया तथा शांति, सुरक्षा और पर्यावरण के हित में 'भूखमरी की समाप्ति' को केन्द्रीय विषय बनाया, पुन: सामाजिक कारक पर कम जोर दिया गया।

हाल ही काहिरा सम्मेलन में कुछ निश्चित सामाजिक विषयों को अपनी रणनीति का आधार बनाने पर जोर दिया लेकिन सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा के सवाल को पीछे छोड़ दिया। इसने मुख्यत: निम्नलिखित बिन्दुओं पर जोर दिया-

(क) महिला जनसंख्या नीति का एक महत्त्वपूर्ण संघटक होने के नाते, महिलाओं का सशक्तिकरण, लिंग समानता या समान पारिवारिक भागीदारी (टकराव नहीं), संतान उत्पत्ति के अधिकार, शिशु और मातृत्व मृत्यु दर में कमी, शादी की आयु में वृद्धि, बच्चों के जन्म अन्तराल में वृद्धि, आदि को सम्मेलन ने अपना उद्देश्य बनाया।

(ख) 20 वर्षों में सभी को प्राथमिक शिक्षा खासकर के लड़कियों को।

(ग) परिवार नियोजन, सूचना और सेवाओं को सभी तक पहुँचाना।

(घ) गरीबी के हालात में भी संतानोत्पादन में कमी।

(ड़) धार्मिक रूढ़िवादियों द्वारा कुछ परम्परावादी पारिवारिक धारणाओं की व्यर्थता को थामे रखना जो गर्भपात पर बहस के दौरान प्रकट हुई।

(च) विश्व संसाधनों के बंटवारे पर उत्तर एवं दक्षिण के बीच बातचीत की आवश्यकता, विश्व संसाधनों का अब तक पश्चिमी विकास मॉडल एवं जीवन शैली द्वारा अति उपभोग एवं बर्बाद किया जाना।

ईसाई और धार्मिक कट्टर पंथियों के अड़ियल रवैये के कारण तीन विवादास्पद विषयों–यानि गर्भपात, वयस्क यौनाचार और जनन स्वास्थ्य–पर सम्मेलन का अधिक समय लगा।

अन्तत: यह तय हुआ कि गर्भपात को परिवार नियोजन के उपायों में शामिल नहीं किया जावे और जिन देशों में यह कानूनी है वहाँ इसे सुरक्षित बनाया जावे। अन्य दो विषयों को सभी की संतुष्टि के लिए संशोधित किया जावे।

धन के सवाल पर यह आम सहमति थी कि इस कार्यक्रम को लागू करने की कीमत 17 अरब डालर होगी। अमेरिका, जापान, जर्मनी, युरोपियन समुदाय आदि बहुत से विकसित देशों ने जनसंख्या संबंधी गतिविधियों पर धनराशि बढ़ाने का वादा किया।

(7)

ऊपर बताये गये जनसंख्या सम्मेलनों की सार्थकता और दिशा का क्या हुआ? क्या उनकी सिफारिशों और सुझावों ने जनसंख्या नियन्त्रण की प्रक्रिया में मदद की ?

तथ्य बताते हैं कि इन सम्मेलनों द्वारा प्रसारित कार्य योजनाओं और दुनियां की विभिन्न सरकारों द्वारा उन्हें लागू करने की जोर-शोर की आवाजों के बावजूद जनसंख्या समस्या की स्थिति लगातार खराब होती जा रही है। दुनिया में एक भी ऐसा बड़ा क्षेत्र नहीं है जहाँ जनसंख्या वृद्धि की प्रक्रिया में नरमी अथवा रुकावट के संकेत हो।

उपर्युक्त 3 जनसंख्या सम्मेलनों की तकनीक और तरीकाकार काम करने में असफल क्यों हुए? सरल सा उत्तर है कि जनसंख्या समस्या की प्रकृति और इसके कारण को

समझने में उनकी समझ वास्तविकता से मेल नहीं खाई। इस प्रकार, उनके हल वास्तविकता से मेल नहीं खाए और वे काम नहीं आए।

पहले सम्मेलन ने जनसंख्या नियन्त्रण के लिए विकास को केन्द्र बनाया। दूसरे सम्मेलन ने भूखमरी को समाप्त करने के नारे को केन्द्रीय विषय बनाया। तीसरे सम्मेलन ने जनसंख्या सम्मेलन का सर्वोच्च संघटक महिलाओं को मानने पर जोर दिया और मुख्यत: महिला संबंधी विषयों जैसे महिलाओं का सशक्तिकरण, लिंग समानता, संतानोत्पत्ति अधिकार, शादी की आयु में वृद्धि आदि को छुआ। किसी ने भी 10 लाख साल से भी अधिक समय में विभिन्न सामाजिक व्यवस्थाओं की मानव जनसंख्या समस्या के ऐतिहासिक अनुभव और यहाँ तक कि चल रहे कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था के अन्दर सोवियत संघ और कुछ अन्य देशों के सकारात्मक अनुभवों से सीखने की कोशिश नहीं की।

(8)

बहरहाल, कॉरपोरेट पूंजीवाद के मूलभूत सिद्धांत शून्य जनसंख्या विकास दर और सभी को सामाजिक सुरक्षा की धारणा से मेल नहीं खाते।

शून्य जनसंख्या वृद्धि की धारणा बाजार के मांग और पूर्ति के नियम की कार्यवाही में विभेद का प्रतिनिधित्व करती है क्योंकि स्थिर जनसंख्या की मांग, पूर्ति के अनुनादी कारक से लगातार पिछड़ेगी–इस प्रकार पूरी कॉरपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था को ठप्प कर देगी।

इसी प्रकार सभी को सामाजिक सुरक्षा का मानदण्ड इसके अन्य मूलभूत बाजार नियम से मेल नहीं खाता जो मजबूत को कमजोर पर हावी होने के समर्थ बनाता है। यदि सभी कमजोर सामाजिक सुरक्षा प्राप्त कर ले तो वे मजबूत के साथ बाजार प्रतियोगिता क्यों करेंगे। स्पष्टतया, सभी को सामाजिक सुरक्षा का मानदण्ड अमीरों की धन इकट्ठा करने की क्षमता पर उल्टा प्रभाव डालता है–इस प्रकार पूँजी की विकास दर को नीचे लाता है। बहरहाल, कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था कुछ सीमित मात्रा में सामाजिक सुरक्षा का मानदण्ड स्वीकार कर सकता है, जो विकसित देशों तक सीमित है, जबकि बहुसंख्यक विकासशील देशों को इस मानदण्ड से बाहर ही रखा है और इस प्रकार कॉरपोरेट व्यवस्था बेचने और खरीदने के लिए बाजार के प्रति समर्पित है।

आगे शून्य जनसंख्या वृद्धि और सभी को सामाजिक सुरक्षा का मानदण्ड कॉरपोरेट पूँजीवाद के अन्य मूलभूत सिद्धान्तों की तार्किकता को कमजोर करते हैं, जैसे-मानव की बुनियादी प्रकृति स्वार्थ की है, मानव का मुख्य चरित्र व्यक्तिवाद है, असमानता पूँजी के विकास का नियम है और इसी प्रकार के अन्य सिद्धान्त।

उपर्युक्त अध्ययन से यह आसानी से अनुमान लगाया जा सकता है कि अन्य मूलभूत सामाजिक घटनाक्रम की तरह कॉरपोरेट पूँजीवाद भी ऐसे किसी प्रस्ताव के साथ समझौता नहीं कर सकता जो अन्ततः इसको कमजोर बनाये। अत: कैसा भी जोखिम हो, कॉरपोरेट पूँजीवाद जनसंख्या वृद्धि की समस्या को प्रबंधित करने के लिए अपनी ही रणनीति को आगे बढ़ायेगा–एक रणनीति जो एक तरफ बढ़ी हुई जनसंख्या के लिए भोजन की आवश्यकता पूरा करने तथा दूसरी तरफ बढ़े हुए हाथों को अपने सामाजिक और उत्पादक दायरे में समायोजित करना–लेकिन इन दोनों कॉरपोरेट उद्देश्यों का अन्त असफलता में ही निकलेगा।

(9)

विश्व कृषि संसाधनों (यानि, भूमि, पानी, जलवायु, जैव-विविधता, वन आदि) पर बढ़ता अतिरिक्त बोझ-चाहे आगे कितनी ही नयी तकनीकी खोजें हो- उसे किसी भी तात्कालिक उत्पादक उपयोग के लिये अनुपयुक्त बना देगा-इस प्रकार इसका परिणाम न सिर्फ नये जन्म लेते लोगों के लिए बल्कि सम्पूर्ण मानव जनसंख्या के लिए गंभीर कृषि संकट में निकलेगा। अतिरिक्त जनसंख्या सामाजिक एवं उत्पादन दायरे में कोई जगह नहीं पाते हुए विद्यमान भ्रांतियों एवं उलझनों को अधिक बढ़ायेगी। यह मानव समुदाय (जो 2050 के आसपास अपने क्रांतिक बिन्दू पर पहुँचेगा जब जनसंख्या 12.5 अरब हो जायेगी, जबकि हमारे ग्रह की क्षमता 8 अरब लोगों तक की है) के लिए न सिर्फ भोजन संकट होगा बल्कि कॉरपोरेट पूंजीवाद के लिए बहुत ही खतरनाक कुप्रबन्ध वाला अवसर होगा। अनिवार्य तौर पर उस वक्त भूख मर रही जनता व्यवस्थागत परिवर्तन के लिए हो हल्ला कर रही होगी।

मामलों को ठीक ढंग से निपटाने और शांतिपूर्ण या निर्विघ्न संक्रमण के लिए क्या कोई शक्ति होगी अथवा प्रत्येक मामला उथल-पुथल में दाखिल हो जायेगा जिसका परिणाम अनिवार्य तौर पर मानवता और अन्य जैव-जगत के खात्मे में निकलेगा। केवल समय ही बतायेगा कि हवा किस तरफ बहती है। 12.1.2005

* * * * *

ट्रेड-यूनियनवाद पर प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण की आम अवधारणा

1. मूलभूत अवधारणा

प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण मानता है कि पूंजी में दो तरफा घटनाक्रम शामिल है, यानि एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन और दूसरी तरफ मानवीय संसाधन। ऐसा इसलिए है क्योंकि पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों से ही मानव समुदाय का जीवन बनता है और उनके बिना मानव समाज के लिए किसी भी चीज का कोई मूल्य नहीं।

यह पूंजी की दो धारणाओं, यानि पूंजी का उदारवादी (कॉरपोरेट) सिद्धान्त तथा पूंजी के मार्क्सवादी सिद्धान्त को पूर्णतया अस्वीकार करती है। उदारवादी (कॉरपोरेट) सिद्धान्त मानता है कि पूंजी चार कारकों, यानि, तकनीकी, श्रम, कच्चा माल और पूंजी की उपज है जबकि मार्क्सवादी सिद्धान्त मानता है कि मजदूरों का अतिरिक्त मूल्य (मजदूरों के वास्तविक श्रम के मूल्य से कम दी गई मजदूरी जिसे पूंजीपति हड़प लेता है) ही पूंजी है। वास्तव में, दोनों सिद्धान्त व्यवहार में, धन या सम्पदा अथवा इसकी वृद्धि को पूंजी बताते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि उदारवादी और मार्क्सवादी दोनों सिद्धान्त विकास, प्रगत्ति और समृद्धि (चाहे व्यक्तिगत हो या सामूहिक) का प्रतिनिधित्व पूंजी द्वारा ही करने में एकमत है। इसलिए सम्पूर्ण विश्व में सभी सरकारी बजटों, व्यापारिक लेखों-जोखों और व्यक्तिगत आय को विकास, प्रगति और समृद्धि का सूचकांक स्वीकार किया जाता है।

ऊपर बताई गई वास्तविकता से यह जरूरी है कि मजदूरों को एक तरफ (सोचने एवं व्यवहार में) आमतौर पर लोगों और खासतौर पर मजदूरों (मानसिक और शारीरिक श्रम करने वाले) के प्रति हमेशा जवाबदेह रहना चाहिये तथा दूसरी ओर पर्यावरण (या इसके

संघटकों) के संवर्धन के लिए वचनबद्ध होना चाहिये। यह मूलभूत अवधारणा हर कहीं मजदूरों की सभी गतिविधियों में प्रदर्शित होनी चाहिये।

2. मजदूरों की तीन बुनियादी मांगें (सभी देशों में)

(क) मजदूरों का प्रबन्ध में 1/3 प्रतिनिधित्व का अधिकार हो।

(ख) प्रत्येक वंचित एवं बेरोजगार की सामाजिक सुरक्षा हो।

(ग) प्रत्येक देश में व्यक्तिगत आय में अधिकतम फर्क 1:5 का हो।

3. मुख्य विषय

मजदूरों को हर कहीं मजदूर अधीनता की समाप्ति के लिए और प्रबन्ध में श्रम-पूंजी भागीदारी स्थापित करने हेतु काम करना चाहिये ताकि कार्यशक्ति और नियन्त्रक स्टाफ के बीच समता कायम की जा सके।

4. मुख्य लक्षण

मजदूरों का मुख्य लक्षण समाज का हिस्सा होने के नाते आमतौर पर मानवता का और खासतौर पर श्रमिकों (उनके काम की गुणवत्ता के कारण) की भलाई का है। मजदूरों के संगठन व्यवसाय के अनुसार, यानि एक समान काम की प्रकृति तथा एक समान काम के हालात के आधार पर संगठित किये जाते हैं तथा ये नश्ल, जाति, धर्म, विभिन्न सांस्कृतिक ग्रुपों, राजनीतिक पार्टियों आदि के प्रभाव से मुक्त होते हैं। इसीलिए ही मजदूरों के संगठन ट्रेड यूनियन कहलाते हैं न कि कुछ और।

5. ट्रेड यूनियन आन्दोलन का ऐतिहासिक अनुभव

ट्रेड यूनियन आन्दोलन, अपने 200 वर्षों के लम्बे समय में सकारात्मक एवं नकारात्मक दो प्रकार के लक्षणों से चारित्रित रहा है।

सकारात्मक लक्षणों में : विभिन्न नश्लों, धर्मों, राष्ट्रों, उपराष्ट्रियताओं, सांस्कृतिक ग्रुपों आदि के मजदूरों को एक यूनियन में संगठित करके मानव की दृष्टि को व्यापक करना, सभी कामगार लोगों के लिए कई प्रकार के अधिकारों को प्राप्त करना जैसे (1) मजदूरों को एक यूनियन में संगठित होने का अधिकार (2) हड़ताल का अधिकार एवं सामूहिक सौदाकारी का अधिकार (3) मजदूरी एवं वेतन वृद्धि (4) काम के घण्टों में कमी (5) बालश्रम एवं छोटे बच्चों को काम पर लगाने पर रोक (6) कामगार महिलाओं को मातृत्त्व अवकाश (7) आवास, बीमारी, शिशु सेवा केन्द्र, फैक्ट्री केन्टीन, शुद्ध वायु प्रणाली, सुरक्षा मानदण्ड, बीमा लाभ, अवकाश गृह, स्वास्थ्य सेवा केन्द्रों, श्रम कल्याण योजनाओं आदि के मामले में कामगार लोगों को सामाजिक सुरक्षा, शामिल है।

आज ट्रेड यूनियनें सभी प्रकार के ट्रेड और व्यवसायों की गतिविधियों और संगठन की एक आम अवधारणा बन गयी हैं, यानि किसानों, मध्यम वर्ग, व्यापारी और यहां तक कि बड़े पूंजीपतियों और एकाधिकारवादियों की भी। इस प्रकार आज समाज में ट्रेड यूनियन की भूमिका एवं स्थान सर्वव्यापी बन गया है।

ट्रेड यूनियन की बहुत सारी उपलब्धियों के बावजूद ट्रेड यूनियन आन्दोलन कुछ कमजोरियों का भी शिकार रहा है। ये कमजोरियां है :

⁂ट्रेड यूनियनों के नेता और गतिविधियां आमतौर पर स्थापित राजनीतिक पार्टियों से जुड़ी होती हैं जो मजदूरों को अपने राजनीतिक उद्देश्यों के लिए काम में लेते हैं।

⁂राजनीतिक प्रभुत्व वाली ट्रेड यूनियनें आमतौर पर मजदूरों की सामाजिक चेतना तथा खासतौर पर प्रत्येक देश में मजदूरों से सम्बन्धित कानूनों एवं नियमों की कानूनी शिक्षा प्रदान करने के अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य की बजाए अपने सदस्यों की व्यक्तिगत समस्याओं पर अधिक जोर देती है।

⁂राजनीतिक प्रभुत्ववाली ट्रेड यूनियनें कुछ निश्चित वामपंथी और दक्षिणपंथी एक तरफा धारणाओं से चरित्रित या प्रभावित है जैसे–

⁂वामपंथी धारणाएं कि मजदूर वर्ग मानवता का एकमात्र मुक्तिदाता है, श्रम और पूंजी विरोधी शक्तियां है, प्रबन्ध हमेशा मजदूर विरोधी होता है, मजदूरों को केवल अपनी मांगों से मतलब है, उत्पादकता से नही। मजदूरों को बहादुर (उत्तेजना फैलाने वाले) नेताओं की जरूरत है, उनके गलत बर्ताव की अनदेखी करना आदि।

⁂ट्रेड यूनियन को जाति, सम्प्रदाय और संकीर्ण लाईनों पर संगठित करने और यूनियनों को प्रबन्ध की आज्ञाकारी बनाने का दक्षिणपंथी व्यवहार।

6. ट्रेड यूनियनों का मुख्य कार्य

1. ट्रेड यूनियनों को 3 तरफा जुड़ी हुई गतिविधियां करने की जरूरत है (क) राजनीतिक, आर्थिक, कानूनी और सांस्कृतिक स्तर को ऊंचा उठाते हुए मजदूरों की सामाजिक चेतना को गहरा करना (ख) ट्रेड यूनियनों की जनतांत्रिक कार्यप्रणाली हेतु प्रयास करना (ग) मजदूरों की तात्कालिक और दीर्घ-परास की मांगों के आधार पर एवं एक धंधे में एक यूनियन के नियम से मेल बैठाते हुए, मजदूरों को संगठित करना।

2. मजदूरों की सामाजिक चेतना ऊंचा उठाने के लिए यह जरूरी है कि मजदूरों में ग्लोबल सामाजिक वास्तविकता एवं इसकी मांगों की पर्याप्त समझ पैदा की जाए।

3. ट्रेड यूनियनों के जनतांत्रिक कार्यकलाप के लिए यह जरूरी है कि हर वक्त और हर स्तर पर जनतांत्रिक सिद्धान्तों का पालन किया जावे। मजदूरों की प्रत्येक मांग के लिए यह कानूनी और शान्तिपूर्ण साधन अपनाने के लिए प्रेरित करता है। इसमें वार्ता, समझौता, मध्यस्थता और अन्त में हड़ताल शामिल है।

7. ट्रेड यूनियनों की मांगों का आम घोषणा-पत्र

1. कर्मचारियों को चुनाव लड़ने सहित राजनीतिक अधिकार।

2. श्रम को मानवीय पूंजी माना जावे न कि माल।

3. कार्यशक्ति का प्रबन्ध के मातहत की स्थिति को समाप्त करना, मजदूरों सहित लोगों को प्रबन्ध/प्रशासन में भागीदारी का संवैधानिक अधिकार प्रदान करना।

4. एक उचित सरकारी श्रमनीति का निर्माण करना जिसका उद्देश्य कामगारों एवं प्रबन्धकों को समान दर्जा देकर श्रम-पूंजी (कार्यशक्ति-प्रबन्ध) के बीच सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध बनाना हो।

5. मजदूरों की क्षमता एवं योग्यताओं में वृद्धि करना।

6. श्रम विरोधी कानूनों के जरिए भारत को प्रतियोगी बनाने की भारत सरकार की नीति को वापिस लेने की मांग करना।

7. सबसे नीचे और सर्वोच्च के बीच मजदूरी/वेतन का फर्क 1 : 5 रखने की मांग करना।

8. ट्रेड यूनियनों की मांगों का विशिष्ट घोषणा-पत्र

यह प्रत्येक यूनियन के मुताबिक अलग-अलग होगा।

9. ट्रेड यूनियन की कार्यशैली

(क) विचार एवं आचरण में नेतृत्व मजदूरों के साथ ट्रेड यूनियन आन्दोलन के प्रति हमेशा जवाबदेह होना चाहिये।

(ख) मजदूर एवं प्रबन्ध लोगों के प्रति जवाबदेह हो।

(ग) मांगों का घोषणा-पत्र तर्क संगत होना चाहिये तथा मजदूरों की सलाह से तैयार हो एवं मजदूरों में पूरी तरह लोकप्रिय होना चाहिये।

(घ) ट्रेड यूनियन कार्य मजदूरों से प्रतिदिन घनिष्ट सम्पर्क के जरिए किया जाना चाहिये एवं ट्रेड यूनियन काम करते समय मजदूरों की सामाजिक चेतना बढ़नी चाहिये।

(ङ) ट्रेड-यूनियन गतिविधियों में जनतांत्रिक कायदों का कड़ाई से पालन किया जाना चाहिये।

(च) प्रत्येक मजदूर को धैर्यपूर्वक सुनना चाहिये तथा उसकी व्यक्तिगत, पारिवारिक और कार्यालय सम्बन्धी समस्याओं को जानने का प्रयास करना चाहिये।

(छ) ट्रेड यूनियनों के आम सदस्यों की नियमित बैठकें की जानी चाहिये।

(ज) महिलाओं को ट्रेड यूनियन नेतृत्व में उचित प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिये।

(झ) मजदूरों द्वारा हर कहीं पर्यावरण संरक्षण, समता, उत्पादकता, जनवाद एवं पारदर्शिता के मानदण्डों का पालन करना चाहिये।

10. ट्रेड यूनियनों का संगठनात्मक कार्य

एक संगठनात्मक रूप जो एक कार्यस्थल में एक यूनियन के सिद्धान्त पर अमल द्वारा मजदूरों के बीच अधिकतम् सम्भव एकता की जरूरत पर जोर देता है। जहां एक यूनियन बनाना व्यवहारिक नहीं हो वहां तुरन्त एक न्यूनतम् साझा कार्यक्रम के आधार पर विद्यमान सभी यूनियनों को एक संयुक्त फ्रण्ट में संगठित करने का प्रयास होना चाहिये।

11. प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल दो सर्वोच्च प्राथमिकताओं, यानि पर्यावरण एवं मानव का पक्षपोषण करता है तथा पांच सिद्धान्तों, यानि पर्यावरणीय संवर्द्धन, उचित समता (यानि, प्रत्येक वंचित एवं जरूरतमन्द को सामाजिक सुरक्षा, अतर्कसंगत वेतन असमानता को 1 : 5 के अनुपात में तर्कसंगत बनाना) जनता के नेतृत्ववाला लोकतंत्र (कॉरपोरेट पूंजीवादी समर्थक राजनीतिक पार्टियों एवं व्यवसायियों की जगह लोगों का सशक्तिकरण) तथा चौतरफा पारदर्शिता। ये पांच आयामी मूलभूत सिद्धान्त मानव की जैव-सामाजिक प्रकृति से मेल खाते हैं, यानि यह मनुष्य के निजी हित और उसके सामाजिक हित में समन्वय बैठाते हैं।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल परम्परागत राष्ट्रीय विकास मॉडलों यानि कॉरपोरेट नेतृत्व और सरकार निर्देशित की तुलना में विकास की समयानुकूल धारणा को पेश करता है। कॉरपोरेट नेतृत्ववाला विकास मॉडल केवल लाभ या उत्पादकता (जो केवल धनस्वामियों के हितों को सुनिश्चित करता है) को अपना एकमात्र उद्देश्य बनाता है जबकि सरकार निर्देशित विकास मॉडल उत्पादन के साधनों का केवल समाजीकरण

(अथवा राष्ट्रीयकरण) को ही अपना लक्ष्य चुनता है (जो शासक राजनीतिज्ञों एवं अफसरों के हितों की सेवा करता है), ये दोनों परम्परावादी राष्ट्रीय मॉडल मानवता के जैव-सामाजिक चरित्र या निजी-हित एवं सामाजिक हित दोनों के विपरीत केवल निजी-हित की सेवा करते हैं। फिर वे पर्यावरण को कोई प्राथमिकता नहीं देते तथा आर्थिकता अथवा वृद्धि प्रक्रिया में लोकतांत्रिक और पारदर्शी मानदण्डों को कोई भी स्थान नहीं देते। आगे कॉरपोरेट मॉडल समता (अथवा सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया रद्द करता है जबकि सरकार निर्देशित मॉडल राजनीतिक समानता एवं उत्पादकता की पूर्णतया अनदेखी करता है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल कॉरपोरेट नेतृत्त्व और राज्य आधारित दोनों विकास मॉडलों से उनके उद्देश्यों, प्रबन्ध और शैली में भिन्नता रखता है।

कॉरपोरेट मॉडल पूंजी एवं पूंजी के मालिकों का विकास करता है और राज्य मॉडल इसके शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के साथ मजदूर कूलीनता के हितों को आगे बढ़ाता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आमतौर पर लोगों और पर्यावरण के हितों की तथा खासतौर पर गरीबों और वंचित तबकों की सेवा पर आधारित है।

प्रबन्ध में, कॉरपोरेट सेक्टर एकाधिकारवादी कॉरपोरेट प्रबन्ध एवं नियंत्रण का पक्षपोषण करता है और राजकीय क्षेत्र एकाधिकारवादी अफरशाही प्रबन्ध एवं नियंत्रण का समर्थन करता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल में पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर लोकतांत्रिक प्रबन्ध एवं नियंत्रण की मान्यता है।

शैली में, अधिनायकवादी और गोपनीय कॉरपोरेट एवं राजकीय शैली के उलट प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल लोकतांत्रिक, पारदर्शिता और जवाबदेही की शैली पर आधारित है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल मानता है कि दोनों कॉरपोरेट और सरकार निर्देशित विकास मॉडलों का निम्नलिखित कदम उठाकर विकेन्द्रीकरण किया जाना चाहिये।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के सभी शेयरों को साधारण शेयर बनाया जावे। किसी को भी इन शेयरों का 0.5% शेयर से ज्यादा रखने की इजाजत नहीं हो। बहरहाल विशेष मामलों में राज्य को 1/5 भाग शेयर रखने की इजाजत हो। प्रोमोटर शेयर्स के नियम (जो अभी कॉरपोरेट सेक्टर में चालू है) को पूर्णतया रद्द किया जावे। प्रत्येक साधारण शेयर धारक का एक वोट होगा चाहे उसके साधारण शेयर की संख्या कितनी भी हो।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के प्रबन्ध को पूर्णतया जनतांत्रिक बनाया जावे। इस मामले में, साधारण शेयर धारकों को प्रबन्ध मण्डल में 2/3 प्रतिनिधित्व दिया जावे। प्रतिनिधित्व का 1/3 भाग सम्बन्धित कम्पनी के श्रमिकों के लिए आरक्षित हो। श्रमिकों का प्रतिनिधित्व शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के कामगारों में से हो जिन्हें साधारण शेयर धारकों जैसे ही अधिकार हो।

ऐसे अधिकरण जिनमें सरकार का 1/5 भाग साधारण शेयर हो उनके प्रबन्ध मण्डल में साधारण शेयर धारकों को 60% श्रमिकों का 30% तथा सरकार का 10% प्रतिनिधित्व हो।

प्रबन्ध मण्डल 3 वर्षों के लिए चुना जावे।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल का उपर्युक्त डेमोक्रेटिक सेक्टर दोनों एकाधिकारवादी कॉरपोरेट और राज्य चलित सेक्टरों से अधिक उत्पादक (सम्भवत : दोगुना) होगा। इसके (यानि डेमोक्रेटिक सेक्टर के) उच्च वृद्धि दर (या सम्पदा उत्पादन की दर) का कारण इसके (यानि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल के) वेतन में 1 : 5 के समतावादी फर्क के सुनिश्चित करने तथा प्रत्येक को जीवन के हर क्षेत्र में सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने, इसके लोगों और पर्यावरण को मूलभूत सिद्धान्त बनाने, इसके विश्व-शान्ति एवं सुरक्षा के पालन करने, इसके गांव से संयुक्त राष्ट्र स्तर एवं अन्य आर्थिक, वित्तीय एवं ग्लोबल व्यापारिक संस्थाओं तक में लोगों के सशक्तिकरण करने की राजनीति (खासकर महिलाओं, मजदूरों, और वैज्ञानिकों-तकनीकीविदों की), इसकी वास्तविक एवं तर्कसंगत आर्थिकता तथा इसकी मानवीय एवं पर्यावरणवादी संस्कृति के कारण मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के अपार विकास में निहित है।

सरकार निर्देशित सेक्टर की अव्यवहार्यता को भूतपूर्व सोवियत यूनियन के ढहने में और विश्व के समाजवादी देशों में इस मॉडल की अवहेलना में देखा जा सकता है। कॉरपोरेट सेक्टर की अदक्षता विश्वभर में कॉरपोरेट मॉडल में लगातार बढ़ रही असमानता, गरीबी, भूख, बेरोजगारी, बेघरबारता के बढ़ते ग्राफ और सबसे ऊपर लगातार गैर टिकाऊ संकट (अब यहाँ और कल वहाँ) में देखी जा सकती है।

पर्यावरणीय एवं मानवीय मामलों पर सामुहिक नियंत्रण की बढ़ती हुई लोगों की मांग, मानव समाज जिधर बढ़ रहा है उसकी दिशा बताती है।

कॉरपोरेट सेक्टर द्वारा सामाजिक जवाबदेही एवं मूल्यवादी व्यवहार के नये अपनाये जाने वाले दर्शन की मुद्रा भी कॉरपोरेट सेक्टर के अहस्तक्षेप के मूलभूत सिद्धान्त के कार्यशील नहीं होने को प्रदर्शित करता है, इसका मूलभूत सिद्धान्त जो आर्थिक विकास प्रक्रिया में प्रत्येक सामाजिक मान्यता की उपेक्षा करता है और जिसका एकमात्र उद्देश्य अधिकतम् लाभ कमाना है। (नवम्बर, 2004)

* * * * *

विद्युत शक्ति आज मानव समाज में ऊर्जा के साथ-साथ प्रदूषण का सबसे बड़ा स्रोत

1. विद्युत शक्ति - ऊर्जा की एक किस्म

ऊर्जा, गति, हलचल या क्रिया की द्योतक है। जो ब्रह्माण्ड के प्रत्येक घटनाक्रम में मौजूद है। ब्रह्माण्ड में मौजूद सभी तरह की चीजें अपनी गतिविधि के लिए ऊर्जा पर निर्भर है।

ऊर्जा बहुत सारे रूपों में चरित्रित है, उदाहरण के लिए उष्मा उर्जा की एक किस्म है जो सीधी लकड़ी के जलाने से हासिल होती है। भाप ऊर्जा की एक और शक्ल है जो कि तेल जलाने से पैदा होती है। परमाणु ऊर्जा की एक और किस्म है जो कि परमाणु की नाभि तोड़ने से हासिल होती है। वायु, पानी ओर सौर ऊर्जा इसकी अन्य किस्में हैं।

ऊर्जा भौतिकी के बुनियादी सिद्धान्त की दो प्रक्रियाओं में से एक है जबकि दूसरी पदार्थ है, भौतिकी के इस बुनियादी सिद्धान्त के मुताबिक ऊर्जा ना तो पैदा की जा सकती

है और ना ही नष्ट की जा सकती है, लेकिन ये पदार्थ से पैदा की जा सकती है और फिर पदार्थ में बदली जा सकती है।

अपने समस्त इतिहास में मानव जाति ने ऊर्जा की भिन्न-भिन्न किस्मों और स्रोतों को विकसित किया है। अपने प्रारम्भिक दौर में लोगों के पास सिर्फ अपने बाहु-बल की ऊर्जा थी। कुछ देर बाद (लगभग 12 लाख साल पहले) उन्होंने आग की ऊर्जा का उपयोग करना शुरू किया, इसके बाद सिलसिलेवार हवा की ऊर्जा का उपयोग पानी में चलने वाली नावों, जल ऊर्जा का उपयोग जल चक्की चलाने में, जानवरों की ऊर्जा का उपयोग बैलगाड़ी और हल चलाने में (लगभग 3000 साल पहले) किया।

17वीं सदी के मध्य तक लकड़ी सबसे महत्त्वपूर्ण ईंधन था। लकड़ी के लगातार बढ़ते इस्तेमाल ने उसको काफी कम कर दिया। धीरे-धीरे इसकी जगह कोयला लेने लगा। कोयले की बढ़ती माँग ने कोयले के खनन के बेहतर तरीकों को जन्म दिया जिसमें कोयला खानों को सुखाने के लिए पम्प के आविष्कार तक ले गई। भाप ऊर्जा से चलने वाला पम्प जल्दी ही भाप इंजिन में विकसित हो गया-यह एक नई खोज थी जिसने उष्मा ऊर्जा को यान्त्रिक ऊर्जा में बदल दिया।

1830 के दशक के प्रारम्भ में यान्त्रिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदलने की खोज ने विद्युत शक्ति के सिद्धान्त को जन्म दिया जो भिन्न-भिन्न प्रक्रियाओं में ऊर्जा के उपयोग का ज्यादा बेहतर तरीका है।

2. ऊर्जा के स्रोत

अपनी मौजूदा हैसियत के मुताबिक ऊर्जा के मुख्य स्रोत जीवाष्म ईंधन, जल शक्ति और परमाणु ऊर्जा हैं। लकड़ी, सौर ऊर्जा, हवा, समुद्री लहरें, रासायनिक और भू-उष्मा के स्रोत भी ऊर्जा प्रदान करते हैं। भविष्य के ऊर्जा स्रोतों में शामिल है–ईंधन सैल, ठोस और तरल अपशिष्ट, हाइड्रोजन और जल-चुम्बकीय यान्त्रिक जनरेटर। विश्व स्तर पर उपयोग किए जाने वाले जीवाष्म ईंधन है–पेट्रोलियम पदार्थ, कोयला और प्राकृतिक गैस। स्लेटी पत्थर और लुक वाली रेत भविष्य के महत्त्वपूर्ण ऊर्जा स्रोत है।

विश्व में उपयोग की जाने वाली व्यापारिक ऊर्जा का करीब 40% पेट्रोलियम पदार्थ से प्राप्त होता है। जबकि कोयले से 26 प्रतिशत विश्व की व्यापारिक ऊर्जा प्राप्त होती है। प्राकृतिक गैस से 21 प्रतिशत व्यापारिक ऊर्जा प्राप्त की जाती है। प्राकृतिक गैस ऊर्जा प्राप्त करने का एक स्वच्छ स्रोत है। जल शक्ति से 7 प्रतिशत व्यापारिक ऊर्जा प्राप्त की जाती है। परमाणु ऊर्जा करीब 6 प्रतिशत अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक ऊर्जा प्रदान करती है। लकड़ी एक समय दुनिया का मुख्य ईंधन था। बहुत सारे विकासशील देशों में लकड़ी आज भी उष्मा ऊर्जा का एक बड़ा स्रोत है। सौर ऊर्जा एक स्वच्छ और कभी न खत्म होने वाला ऊर्जा का स्रोत है। वायु-शक्ति वायु मिलों और नावों को चलाती है। लहरों से पैदा होने वाली ऊर्जा गुरुत्वाकर्षण ऊर्जा में आती है, यानि जब पानी ऊँची लहरों से नीची लहरों में चलता है तब निकलने वाली ऊर्जा। रासायनिक ऊर्जा रासायनिक क्रियाओं से निकलती है, इसका उपयोग बैटरियों में किया जाता है। भूगर्भीय उष्मा उस वक्त पैदा होती है जब पानी जमीन की सतह के नीचे गर्म चट्टानों के सम्पर्क में आता है। भूगर्भीय ऊर्जा सिर्फ उन इलाकों में पैदा होती है जहाँ जमीन की सतह के नीचे गर्म चट्टाने मौजूद हैं। बोलिविया, आसइलैण्ड, इटली, जापान, फिलीपाइन, न्यूजीलैण्ड और अमेरिका में भूगर्भीय

उष्मा से चलने वाले विद्युत घर विकसित किए हैं। ठोस और तरल अपशिष्ट भी ऊर्जा प्रदान कर सकते हैं।

किसी दिन हाइड्रोजन, तेल व गैस का स्थान ईंधन के रूप में ले सकती है। आज हाइड्रोजन को ऊर्जा स्रोत बनाना एक महँगा धन्धा है।

3. दुनिया में विद्युत ऊर्जा की स्थिति

20वीं सदी के शुरू से ही विद्युत शक्ति मानव समाज का मुख्य ऊर्जा स्रोत बन गया है। यह बहुत सारे घरों को रोशनी, गर्मी एवं ठण्डक देती है। यह घर में उपयोग किए जाने वाले बहुत से उपकरणों को चलाती है जैसे, टेलिविजन, रेफ्रीजरेटर इत्यादि। यह उद्योगों में मशीनें चलाती है। स्टोरों और दफ्तरों में व्यापार के लिए बहुत से उपयोगी यन्त्रों जैसे कम्प्यूटर, लिफ्ट इत्यादि को चलाती है। रेलों और जमीन के अन्दर चलने वाली गाड़ियों को चलाने के काम आती है। पानी निकालने, गायों का दूध निकालने, पशुओं का चारा काटने के काम आती है।

विद्युत शक्ति को वाट नाम की इकाई से मापा जाता है। 1000 वाट विद्युत शक्ति एक किलोवाट बनती है। किसी वस्तु में उपयोग की गई विद्युत शक्ति की मात्रा किलोवाट/प्रति घण्टा के रूप में प्रदर्शित की जाती है। अगर कोई 100 वाट वाले 10 बल्ब एक घंटे के लिए चलते हैं और एक 100 वाट का बल्ब 10 घंटे के लिए चलता है तो वह 1 किलोवाट/घंटा विद्युत शक्ति का उपयोग करता है।

समस्त दुनिया के बिजली घरों में बड़े विद्युत जनरेटरों से विद्युत उत्पन्न की जाती है। दुनिया के विद्युत घरों की कुल क्षमता किसी खास समय 23.4 बिलियन किलोवाट विद्युत पैदा कर सकने की है।

विद्युत शक्ति पैदा करने वाले मुख्य प्लाण्ट हैं–(1) जीवाष्म ईंधन की भाप से विद्युत शक्ति पैदा करने वाले प्लाण्ट, (2) जल-विद्युत शक्ति प्लाण्ट, और (3) परमाणु शक्ति प्लाण्ट। दूसरे अन्य कई किस्मों के विद्युत प्लाण्ट जो कम मात्रा में बिजली पैदा करते हैं।

जीवाष्म-ईंधन की भाप से चलने वाले विद्युत शक्ति प्लाण्ट तकरीबन दुनिया की कुल बिजली का 63 प्रतिशत, जल-विद्युत शक्ति घरों से तकरीबन 20 प्रतिशत और परमाणु ताकत से चलने वाले विद्युत घरों से करीब 17 प्रतिशत बिजली पैदा की जाती है। तुलनात्मक तौर पर दूसरे अन्य संसाधनों से बहुत कम मात्रा में बिजली पैदा की जाती है। भूगर्भीय उष्मा से पैदा होने वाली भाप से चलने वाले बिजली घरों में टरबाइनों को घूमाकर बिजली पैदा की जाती है। वायु-ऊर्जा से चलने वाले विद्युत घरों में हवा से चलने वाले जनरेटरों को घुमा कर विद्युत पैदा की जाती है। कुछ बिजली प्लाण्ट समुद्री लहरों की उर्जा से जनरेटर घूमा कर बिजली पैदा करते हैं। कुछ प्लाण्ट लकड़ी या खेती के घास-फूस को जलाकर विधुत जनरेटरों के माध्यम से बिजली पैदा करते हैं। बहुत थोड़े विद्युत प्लाट सौर ऊर्जा को बिजली में बदलने के लिए सौर सेलों का उपयोग करते हैं। सौर सैलों द्वारा बिजली पैदा करना महँगा पड़ता है, फिर भी वैज्ञानिक और इंजीनियर सौर सेलों को बेहतर बनाने के तरीकों की तलाश कर रहे हैं ताकि कम खर्चे से ज्यादा बिजली पैदा की जा सके।

विश्व स्तर पर मौजूद बिजली की मात्रा और बँटवारे को देखने से हर कोई व हर जगह एक बड़ी बेइन्साफी और असमानता को देख सकता है। इस अन्यायपूर्ण हालात का

सबसे मुख्य पहलु यह है कि विकसित देशों में रहने वाली 20 प्रतिशत आबादी दुनिया की कुल बिजली पैदावार का 80 प्रतिशत हिस्सा हासिल करती है और उपयोग करती है जबकि कम विकसित देशों में रहने वाले 80 प्रतिशत लोगों को सिर्फ बाकी बचे 20 प्रतिशत हिस्से में अपना गुजारा करना पड़ता है। अमेरिका में प्रति व्यक्ति बिजली की उपलब्ध मात्रा अल्प विकसित देशों की तुलना में 30 गुना ज्यादा है। बिजली के इस किस्म का अन्यायपूर्ण बँटवारा कमोबेश प्रत्येक देश के अन्दर मौजूद है। जहाँ लगभग सारी बिजली उद्योगपतियों, बड़ी जमीन के मालिकों और अमीर व्यक्तियों द्वारा उपयोग की जाती है।

4. भारत में विद्युत शक्ति की स्थिति

भारत में बिजली उद्योग एक सदी पुराना है। इसने अपने अस्तित्व के पहले 50 सालों में (भारत की आजादी यानि 1947 तक) 1362 मेघावाट बिजली पैदा करने की समर्थता हासिल कर ली थी। 1947 के बाद उसका उत्पादन कुछ तेजी से होने लगा। सन् 1950 में यह 1713 मेघावाट तक पहुँचा और आज यह 109973 मेघावाट हो गया है जिसमें थर्मल से 78340 मेघावाट यानि 71.2%, जल विद्युत से 28910 मेघावाट, यानि 26.3% और परमाणु से 2720 मेघावाट, यानि 2.5% हासिल की गई है। स्पष्ट है कि ज्यादा विद्युत पैदावार थर्मल प्लाण्टों से की गई है और इनका नियन्त्रण राज्य और केन्द्र सरकारों के पास है।

बिजली क्षेत्र को चलाने के लिए पहला भारतीय बिजली कानून 1910 में अमल में आया। इसके बाद 1948 में एक व्यापक बिजली आपूर्ति कानून बनाया गया। जिसको बिजली आपूर्ति कानून-1948 कहा जाता है, इस कानून को 1976 में पहली दफा संशोधित किया गया। इसके बाद निजी निवेश को आसान बनाने के लिए दूसरा संशोधन 1991 में किया गया। निजी निवेशकों को स्वच्छ प्रतियोगिता और पारदर्शिता का माहौल प्रदान करने के लिए 1998 में विद्युत नियमन आयोग कानून लागू किया गया। अब नये विद्युत कानून 2003 ने सारे पुराने कानूनों की जगह ले ली है।

बिजली कानून-2003 से पहले पारम्परिक या नियन्त्रित बिजली प्रबन्ध में इसको पैदा करने, संचार करने एवं बंटवारा करने की प्रक्रियाएं केंद्रीय सरकार या एक ही प्रबन्धकीय केन्द्र के तहत चलाई जाती रही हैं। अब, जब नये विद्युत कानून 2003 के तहत विद्युत पैदा करने, संचार करने एवं बंटवारे की मिल्कियत और प्रबन्ध व्यवस्था के लिहाज से अलग-अलग कर दिया गया है। जिसे ये बिजली प्रबन्ध के विनियमन का नाम देते हैं। विनियमन की प्रक्रिया राज्य बिजली बोर्ड की पुनरसंरचना करने से शुरू हो चुकी है।

आज बिजली की स्थिति कमजोर तस्वीर पेश करती है। विश्व की औसत 2074 इकाई प्रति व्यक्ति खपत के मुकाबले भारत में विद्युत की प्रति व्यक्ति खपत 350 इकाई है। भारत की 44 प्रतिशत आबादी बिजली से वंचित है। जिनको बिजली मिलती भी है उनकी बहुसंख्या को कम आपूर्ति और लगातार बिजली कटौती का शिकार होना पड़ता है। मौजूदा साधनों को बढ़ाने के लिए निवेश की कमी के कारण उत्पादक क्षमता लगातार अपने लक्ष्य से 40-50 प्रतिशत कम रही है। भारतीय स्तर पर थर्मल स्टेशनों के लोड फैक्टर में सुधार के बावजूद ऊर्जा की कमी और जरूरत के वक्त उच्चतम कमी जो 7 और 12 प्रतिशत है–इससे अंधेरा कायम रहता है। संचार और वितरण घाटा (जिसका वसूल कुछ भी नहीं होता) पैदावार का आधा है। 45-50 प्रतिशत घाटे में मुख्य भाग चोरी का है।

राज्य बिजली बोर्ड के कुछ कर्मचारी इस चोरी में शामिल है। यह मीटरों की कमी व ऊर्जा के लेखा-जोखा, पड़ताल के उसूलों की कमी की वजह से होती है।

उपर्युक्त तथ्यों की बुनियाद पर यदि हम बिजली की वास्तविक उपलब्धता पर नजर डालें तो यह असल में पैदावार का 50 प्रतिशत है क्योंकि कुल पैदा हुई बिजली का 50 प्रतिशत हिस्सा संचार घाटे (24-27 प्रतिशत) और चोरी (लगभग 25 प्रतिशत) में बर्बाद हो जाता है। यदि सरकारी अन्दाजे के मुताबिक कुल पैदावार में जरूरत से 7 प्रतिशत कमी (जो विद्युत ऊर्जा उत्पादन में ही कम रहता है) को शामिल कर लिया जाए तो यह घाटा 57 प्रतिशत बन जाता है। इस कमी का मतलब है कि भारत में मौजूदा बिजली वितरण व्यवस्था में 43 प्रतिशत या ज्यादा से ज्यादा 50 प्रतिशत बिजली कारगर है। बिजली की माँग और पूर्ति के बीच बड़ा अन्तर है। यह गाँवों, शहरी गरीब बस्तियों और झुग्गियों में लगातार अंधेरे से अभिव्यक्त होता है।

बिजली की कमी उद्योग और खेती बाड़ी पैदावार को लगातार धीमी कर रही है। बिजली की कमी के कारण भारत की आर्थिकता का घाटा आजकल भारत के सकल घरेलु उत्पादन (जीडीपी) का अन्दाजन 3 प्रतिशत है। इस अन्दाजे के अनुसार पिछले साल का यह आर्थिक घाटा 50000 करोड़ बनता है।

ताजा विशेषज्ञ रिपोर्टों के मुताबिक बिजली की पैदावारी लागत 3 रुपये प्रति युनिट बनती है जबकि प्रति युनिट 2 रुपये से थोड़ी ऊपर बेची जाती है। फिर भी दुनिया के सन्दर्भ में भारत की कम की गई बिजली कीमत (जो 2 रुपये से थोड़ी ऊपर है) अन्तर्राष्ट्रीय कीमतों से दुगुनी है। अनियमित आपूर्ति और लगातार वोल्टेज का घटना-बढ़ना ध्यान देने लायक अन्य पहलू हैं।

भारत के भिन्न-भिन्न राज्यों में हालात यदि ज्यादा खराब नहीं तो इसके बराबर जरूर है। सारे राज्य बिजली बोर्ड घाटे में चल रहे हैं जो करोड़ो रुपये में हैं। 2000-01 के साल में यह घाटा 26013 करोड़ रुपये था। स्पष्ट है कि यह अति महत्त्वपूर्ण साधन वित्तीय तौर पर गैर-टिकाऊबन गया है। घाटे की रकम राज्य दर राज्य अलग-अलग है, लेकिन हर राज्य बिजली बोर्ड आर्थिक संकट की जकड़ में है।

भारत के बिजली क्षेत्र के दूसरे महत्वपूर्ण पहलू जो कि एक सरकारी प्रकाशन (ऊर्जा क्षेत्र सुधार–2001 का दिशा कार्यक्रम–जो भारत सरकार के उर्जा मंत्रालय द्वारा जारी किया गया) के अनुसार नीचे लिखे हैं–

*राज्य बिजली बोर्डों का व्यापारिक घाटा 1996-97 के बीच 11305 करोड़ रुपये में बढ़कर 2000-01 में 26013 करोड़ रुपये हो गया।

*अन्दरूनी साधनों की प्राप्ति का घाटा 1996-97 में 2091 करोड़ रुपये से बढ़कर 2000-01 में 13093 करोड़ रुपये हो गया।

*अन्दाजन ऊर्जा की कुल पैदावार का 55 प्रतिशत (62000 करोड़ रुपये) के बिल बनते हैं और सिर्फ 42 प्रतिशत (46000 करोड़ रुपये) वसूल होते हैं।

*बिजली की औसत वित्तीय वसूली और औसतन आपूर्ति लागत के बीच अन्तर 1996-97 में 50 पैसे प्रति इकाई से बढ़कर 2000-2001 में 92 पैसे प्रति इकाई हो गया है।

*उद्योग और वाणिज्यिक उपभोक्ता के औसतन खर्च से ज्यादा मूल्य वसूल किया जाता है।

*रिपोर्ट में दर्शाये गये 25 प्रतिशत संचार और वितरण घाटे को बिल्कुल कम करके पेश किया गया है, जबकि वास्तव में घाटे 40 से 50 प्रतिशत के बीच है (विकसित देशों में संचार और वितरण घाटा 10 प्रतिशत है)। राज्य बिजली बोर्डों का घाटा चोरी के कारण अन्दाजन 20000 करोड़ रुपये वार्षिक है।

*उपभोक्ता द्वारा बिजली का अकुशल उपयोग करना।

*ग्रिड अनुशासन की कमी होना।

*नाकाफी अन्तर-क्षेत्रीय संचार तालमेल होना।

5. पंजाब में विद्युत शक्ति के बुनियादी मसले

पंजाब विद्युत शक्ति की समस्या पर नजर डालें तो तथ्य स्वयं बोलते हैं।

पहला नजरशानी करने लायक तथ्य यह है कि पिछले 55 वर्षों से पंजाब राज्य बिजली बोर्ड (पंजाब में बिजली समस्या को नियन्त्रित करने वाली समूची एजेन्सी) पर अथाह कर्ज चढ़ा है। पी एस इ बी के 2003-2004 के बजट अन्दाजे के अनुसार यह कर्ज 627128 लाख रुपये हैं जो नीचे लिखे उप-शीर्षकों के मुताबिक है: (क) राज्य सरकार के लोन 453753 लाख रुपये (ख) लोगों का उधार (एस एल आर बोंड) 15800 लाख रुपये (ग) एल आई सी का लोन 96465 लाख रुपये (घ) आर ई सी का लोन 61110 लाख रुपये।

पँजाब बिजली क्षेत्र के बारे में दूसरे ध्यान देने योग्य तथ्य निम्नलिखित हैं–

पँजाब में बिजली की अत्यधिक कमी है। पी.एस.ई.बी. के आँकड़ों के मुताबिक पँजाब में प्रतिदिन कुल जरूरत 830 लाख युनिट है जबकि इसके कुल स्रोतों से प्रतिदिन कुल पैदावार 440 लाख युनिट है। पी.एस. ई.बी. दूसरे राज्यों से 190 लाख यूनिट प्रतिदिन खरीदता है, फिर भी यह 200 लाख यूनिट प्रतिदिन कम पड़ती है, जिसका नतीजा कई-कई जगह 8 से 10 घंटे तक विद्युत कटौती के रूप में निकलता है।

पैदावार के क्षेत्र में सारे पैदावारी स्त्रोत अपनी समर्थता और जरूरत से कम पैदा कर रहे हैं।

संचार और वितरण के क्षेत्र में (जिसमें चोरी हावी है) कुल घाटे 50 प्रतिशत से ऊपर जाते हैं।

पंजाब बिजली क्षेत्र का एक और चिन्ताजनक पहलू यह है कि इसकी वित्तीय स्थिति ऐसे हालत में बिगड़ी है जब पंजाब सरकार पहले ही वित्तीय दिवालिएपन के किनारे खड़ी है।

पँजाब बिजली क्षेत्र को इस संकट से निकालने के लिए फौरी तौर पर एक नई बुनियादी नीति की जरूरत है।

6. विद्युत शक्ति उत्पादन आज सबसे ज्यादा प्रदूषण पैदा करने वाला स्रोत

विद्युत शक्ति उत्पादन ने मानव समाज के सामने बहुत गंभीर समस्याएँ पैदा कर दी है। प्रथमत: इसने लाखों सालों से जमा हुए ईंधन के भंडारों को खात्मे के किनारे पहुँचा दिया है। पेट्रोलियम पहला ईंधन है जो 21वीं सदी के मध्य में दुर्लभ हो जाएगा। प्राकृतिक गैस भी बहुत तेजी से खत्म हो रही है। मौजदा लागत दर के मुताबिक-प्राकृतिक गैस पेट्रोलियम के खात्मे के बाद थोड़ी देर ही टिक पायेगी।

द्वितीयत:, परन्तु ज्यादा गंभीर समस्या यह है कि जीवाष्म ईंधन की पैदावार, परिवहन और उपयोग हमारे प्राकृतिक पर्यावरण को खराब कर रहे हैं। समुद्र के किनारे तेल निकालने वाले क्षेत्रों एवं पेट्रोलियम के टैंकरों की आवाजाही (परिवहन) के दौरान तेल बिखर जाने से समुद्र प्रदूषित हो जाता है, समुद्री किनारे अशुद्ध हो जाते है और जीव-जन्तु मर जाते हैं। तेल पाइप लाइनों को बिछाने के लिए रास्ते में स्थित पेड़ों को काटने से पर्यावरण को नुकसान पहुँचता है। भूमिगत कोयला खानों के कई बार गिर जाने से बनी गुफाओं से खतरनाक गैस निकलती है। खान खोदने से जमीन के बहुत सारे हिस्से का कटाव हो जाता है। कोयले और तेल के जलने के कारण पैदा हुई नाइट्रोजन आक्साइड और सल्फर डाई आक्साइड गैसों के कारण हवा-प्रदूषित हो जाती है। ये पदार्थ हवा में मौजूद नमी के साथ क्रिया करते हैं। जिससे धरती के ऊपर तेजाबी वर्षा होती है अत: नदी और झीलें प्रदूषित होती हैं। मोटर-गाड़ियों में जलने वाला तेल हवा को प्रदूषित करने में सबसे आगे है। यहाँ तक कि सबसे स्वच्छ जीवाष्म ईंधन को जब जलाया जाता है तो कार्बन-डाई आक्साइड पैदा होती है। कार्बन-डाई-ऑक्साइड गैस एक गैर-नुकसानदायक गैस है। परन्तु इसके वातावरण में जमा होने से एक ऐसा घटनाक्रम पैदा होता है। जिसको ग्रीन हाउस प्रभाव कहा जाता है, कार्बन-डाई आक्साइड शीशे की तरह गर्मी को आकाश में जाने से रोकती है और धरती को गर्म करती है। ग्रीन हाउस प्रभाव पृथ्वी के तापमान को लगातार बढ़ाता है, ध्रुवों के ऊपर जमी बर्फ को पिघलाता है और बाढ लाता है।

ऊर्जा पैदा करने के दूसरे स्रोत भी पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। परमाणु ऊर्जा प्लाण्ट ताप प्रदूषण और रेडियोधर्मी अपशिष्ट पैदा करते हैं। बड़े बांधों का निर्माण नदियों के हालात में तब्दीलियां लाता है। बिजली की लाइनें विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र पैदा करती हैं जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं। समुद्री लहरों पर आधारित ऊर्जा प्लाण्ट समुद्रों के किनारे ऐसे हालात पैदा करते हैं जो समुद्री जीवन पर नुकसानदायक असर डालते हैं। जमीनी गर्मी से चलने वाले प्लाण्ट वातावरण में गर्मी और गैसे छोड़ते हैं। ऊर्जा का कोई भी इस्तेमाल चाहे उसका स्रोत कितना भी स्वच्छ क्यों न हो, अधिक गर्मी पैदा करता है। अगर ऊर्जा का उपयोग लगातार बढ़ता गया तो इससे निकलने वाली गर्मी हमारे ग्रह पृथ्वी के पर्यावरण को बदल सकती है।

7. क्या किया जाए और कैसे किया जाए

हर कोई महसूस करता है कि विश्व (जिसमें सारे राष्ट्रीय राज्य शामिल हैं) स्तर पर बिजली क्षेत्र की नये सिरे से पुनरसंरचना करने की जरूरत है। परन्तु क्या किया जाए और कैसे किया जाए इस बारे में अलग-अलग विचार हैं।

विकास के दोनों पाम्परिक मार्डल, जैसे कि, (क) सरकारी मिल्कियत और प्रबन्धित वाला क्षेत्र जिसको सरकारी क्षेत्र के तौर पर जाना जाता है, और (ख) बाजार या कॉरपोरेट पूंजी निर्देशित उद्यम, जिन्हें प्राइवेट क्षेत्र कहा जाता है, ये दोनों बिजली क्षेत्र को प्रारम्भ से आज तक दुनिया, भारत और पँजाब में चलाते रहे हैं, इनमें से हर एक का मकसद सिर्फ पैसा और सत्ता पर एकाधिकार कायम करना है। दोनों मॉडलों में सिर्फ फर्क यह है कि कॉरपोरेट पूँजी की अगुवाई में चलने वाला मॉडल पूँजी मालिकों का एकाधिकार चाहता है। जबकि कम्युनिस्ट निर्देशित सरकारी मॉडल अकेली कम्युनिस्ट पार्टी का एकाधिकार चाहता है। इसके अलावा दोनों की यह धारणा है कि पूँजी (पैसा या सम्पत्ति) मानव

समाज में सबसे श्रेष्ठ वस्तु है अत: इसकी बढ़ोतरी समाजी विकास, तरक्की और सम्पन्नता को जाहिर करती है। इस तरह पूँजी के विकास के लिए ये दोनों मॉडल ना तो पर्यावरण की वहनीयता (टिकाऊपन) का और ना ही मानवीय मूल्यों का ध्यान रखते हैं। फिर भी इन दोनों की एक दूसरे पर सर्वोच्चता हासिल करने की प्रतियोगिता के दौरान कम्युनिस्ट मॉडल मुकाबले में हार गया है और 1990 के इर्दगिर्द बिखर गया (फिर भी कमजोर हुई कम्युनिस्ट पार्टियां उसी मॉडल पर खड़ी हैं)।

कम्युनिस्ट मॉडल के बिखरने के डेढ़ दशक के दौरान कॉरपोरेट पूंजीवादी मॉडल विश्व (भारत समेत सारे राष्ट्रीय राज्यों) स्तर पर एक अकेला मॉडल रह गया है। भारत के संदर्भ में जबकि इसने हर क्षेत्र में हावी स्थिति कायम कर ली है। बिजली क्षेत्र (जो पिछले 55 वर्षों से सरकारी क्षेत्र का हिस्सा रहा है) शायद आखिरी बहुत महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है जो बीसवीं सदी के अंत में कारपोरेट क्षेत्र के नियन्त्रण में आ रहा है। लेकिन जिन राज्यों में बिजली को कॉरपोरेट क्षेत्र के हवाले किया किया गया है, उनका तजुर्बा आम आदमी के लिए उस तजुर्बे से बेहतर साबित नहीं हुआ है, जो आम लोग सरकारी नियन्त्रण के तहत देख चुके हैं। सरकारी क्षेत्र लगातार बढ़ते सरकारी वित्तीय घाटे और उपभोक्ता के लिए घटिया सेवाओं पर कायम था। कॉरपोरेट कम्पनियों का तीन साला तजुर्बा बढ़ते कारपोरेट मुनाफे, महँगी बिजली एवं उपभोक्ता के लिए कमजोर सेवा के रूप में चरित्रित है। विश्व स्तर पर कारपोरेट और सरकारी मॉडलों का एक ही किस्म का तजुर्बा (मामूली अन्तर के साथ) दर्शाता है कि बावजूद उनकी अलग-अलग शक्लों के ये दोनों बुनियादी तौर पर एक ही किस्म के पूंजी समर्थक और राजनीतिक सत्ता समर्थक खासियत रखते हैं।

उपर्युक्त तथ्यों को सामने रखते हुए यह जरूरी है कि नीचे लिखे 4 पक्षीय कार्य को हाथ में लिया जाए।

(क) उपर्युक्त काम का पहला भाग उन बुनियादी उसूलों को तय करना है जो बिजली सुधारों की प्रक्रिया का तीनों स्तरों–अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय (जो कि किसी देश के भाग, प्रान्तीय हिस्से या राज्य होते हैं)–पर मार्गदर्शन करें।

(ख) उपर्युक्त काम का द्वितीय भाग इस अतिमहत्त्वपूर्ण मसले को तय करना है कि बिजली उत्पादन के मौजूदा जीवाष्म ईंधन के गैर-नवीनीकरण वाले तरीके (जो सबसे ज्यादा प्रदूषण पैदा करते हैं और हमारी पृथ्वी पर मानव जीवन सहित समस्त जैविक जीवन के लिए खतरा पैदा कर रहे हैं) की बजाए नवीनीकरण (या पुन: बहाली) वाले स्रोतों (जैसे सौर ऊर्जा, पानी तथा हवा, आदि) में तब्दील किया जाए जो प्रदूषण मुक्त है। फिर भी, बावजूद इस बात के कि प्रदूषण का मसला बिजली उत्पादन के मौजूदा तरीकों से पैदा हो रहा है और मानवता के लिए गम्भीर खतरा पैदा कर रहा है। मौजूदा कॉरपोरेट व्यवस्था (इसके सरकारी क्षेत्र सहित) के महारथियों ने इसको नजरअन्दाज किया हुआ है।

(ग) उपर्युक्त कार्य का तीसरा भाग एक अमल योग्य संक्रमणकालीन प्रबन्ध तैयार करना है जो कि केन्द्र तथा प्रान्तीय स्तर पर सुधारों की प्रक्रिया को भारत (दुनिया के अन्य राष्ट्रीय राज्यों में भी) और इसके प्रान्तों या क्षेत्रों में पर्यावरण और मानव पक्षीय हल की तरफ ले जाए।

(घ) उपर्युक्त कार्य का चौथा भाग पर्यावरण एवं मानव केन्द्रित विद्युत शक्ति प्रबन्ध के निर्माण के लिए एक वास्तविकता पर आधारित रणनीति तैयार करना है।

अपने कार्य के पहले भाग से शुरू करते हुए यह लेखन बिजली सुधारों की प्रक्रिया को हर समय और हर जगह अगुवाई करने के लिए निम्नलिखित बुनियादी उसूलों का प्रस्ताव करती है। ये हैं :

(क) हर समय एक तरफ पर्यावरणीय संवर्द्धन और दूसरी तरफ मानवीय सामाजिक विकास के लिए आजादी की सर्वोच्चता, उचित समानता और तर्कसंगत व्यवहार के उसूलों को थामे रखना।

(ख) आने वाले 2 सालों में मौजूदा पर्यावरण विरोधी एवं मानव विरोधी गैर नवीनीकरण वाले संसाधन–जैसे पैट्रोल, थर्मल, परमाणु इत्यादि जो विश्व की 80 प्रतिशत बिजली पैदा कर रहे हैं–को नवीनीकरण वाले स्रोत (जैसे सौर, पानी और हवा इत्यादि) में तब्दील करें।

(ग) हर प्रकार के उपभोक्ता (गरीबी रेखा के नीचे वाले लोगों सहित) के लिए बेहतर ऊर्जा की आपूर्ति करना।

(घ) सम्भवतम हद तक सस्ती दरों पर बिजली आपूर्ति करना।

(ङ) बिजली की सर्वव्यापी आपूर्ति का प्रबन्ध करना।

(च) किसी खास समय पर बिजली-कटौती एवं अन्य बिजली पाबन्दियों को राजनीतिक या आर्थिक रुतबे में फर्क किये बगैर सबके लिए बराबर लागू करना।

हमारे काम के दूसरे भाग को देखते हुए इस लेखन की राय है कि सबसे पहले यह जरूरी है कि लोगों को यह मांग करने के लिए जागृत व लामबन्द किया जाए कि सारी राष्ट्रीय सरकारों को अपने-अपने देश में उचित खोज के जरिए दो सालों के अन्दर-अन्दर जीवाष्म ईंधन से पैदा हो रही विद्युत शक्ति की मौजूदा तकनीक (जो सबसे अधिक प्रदूषण पैदा करने वाला स्रोत है) की जगह पुन: बहाली वाले स्रोतों, जैसे–सौर, पानी, वायु, इत्यादि से बिजली पैदा करने की नई तकनीक (जिसको विशेषज्ञ पहले से ही जानते हैं) अपनाई जाए।

दूसरा वांछित कदम है कि यूएन को ऊर्जा और बिजली विशेषज्ञों का एक आयोग गठन करने की अपील की जाए जो दो सालों के अन्दर-अन्दर मौजूदा संसार में सबसे अधिक प्रदूषण पैदा करने वाले मुख्य स्रोत (फासिल फ्यूल, यानि पेट्रोल, कोयला इत्यादि) से सस्ते दरों से हासिल की जा सकने वाले नवीनीकरण (पुन: बहाली) वाले स्रोतों (जैसे, सौर, पानी व वायु, इत्यादि) से बिजली पैदा करने की उचित तकनीक के बारे में सुझाव पेश करें।

हमारे काम के तीसरे हिस्से की तरफ आते हुए यह लेखन समझता है कि बिजली के नाजुक चरित्र (भौतिकी के मुताबिक एक ऐसा पदार्थ जिसमें अकल्पित तब्दीलियां होती हैं) और एक बुनियादी सामाजिक संसाधन होने के कारण इसको बहु राष्ट्रीय कम्पनियों–जो हर चीज को माल (यानि, एक ऐसी वस्तु जिसे बाजार में खरीदा-बेचा जा सकता है) समझती है और जिनका एक मात्र उद्देश्य मुनाफा कमाने के अलावा कुछ नहीं है–के हवाले नहीं किया जाना चाहिए। इसकी जगह इसको (बिजली प्रक्रिया को) प्रत्येक देश के अन्दर संवैधानिक स्वायत्तता प्राप्त राष्ट्रीय बिजली प्रबन्धन बोर्ड (तथा प्रत्येक प्रान्तीय क्षेत्र या राज्य में प्रान्त या राज्य बोर्ड) जिसमें किसी सरकारी पक्ष की तरफ से राजनीतिक या प्रबन्धक दखलन्दाजी नहीं होनी चाहिए, जो सम्बन्धित विधानपालिका के प्रति

जवाबदेह हो–के सुपुर्द किया जाए। बोर्डों में नीचे लिखे अनुसार चुने हुए प्रतिनिधि शामिल किये जाए–

(क) असेम्बली के चुने हुए नुमायन्दे 40 प्रतिशत (ख) 20 प्रतिशत तकनीकी कर्मचारी, 20 प्रतिशत वर्कर (शारीरिक एवं मानसिक कार्य करने वाले दोनों तरह के कर्मचारी), और 20 प्रतिशत उपभोक्ता।

राष्ट्रीय संवैधानिक स्वायत बिजली प्रबन्धन बोर्ड द्वारा राज्यों या प्रान्तीय संवैधानिक स्वायत बिजली प्रबन्धन बोर्डों के साथ सलाह-मशवीरा करके बिजली उत्पादन और संचार व वितरण से सम्बन्धित बुनियादी नीति तय की जाए जो प्रत्येक पर लागू होगी।

उपर्युक्त अनुपात में प्रतिनिधित्व के मुताबिक ही राज्य (या प्रान्तीय) स्तर पर राजनीतिक या प्रशासकीय दखलन्दाजी के बगैर एक संवैधानिक स्वयत्तता प्राप्त प्रत्येक राज्य का बिजली प्रबन्ध बोर्ड बनाया जाए।

संवैधानिक स्वायत्तता प्राप्त प्रान्तीय एवं रियासती बिजली प्रबन्धन बोर्ड तत्काल नीचे लिखे कदम उठाए–

(क) मजदूरों, कर्मचारियों एवं तकनीशियनों के साथ तुरन्त वार्तालाप शुरू किया जाए और उन्हें पूरी तरह से विश्वास दिलाया जाए कि सुधार ना तो उनकी कीमत पर होंगे और ना ही विदेशी निर्देशित होंगे, बल्कि यह भारतीय लोगों के हित में होंगे।

(ख) हर किस्म की राजनीतिक दखलन्दाजी–स्थानान्तरण और नियुक्तियों समेत–रोकी जाए।

(ग) हर किस्म की मुफ्त बिजली आपूर्ति (गरीबी की रेखा से नीचे वाली श्रेणी के लिए 100 युनिट प्रति महिना प्रति परिवार को छोड़कर) बन्द की जाए।

(घ) हर किस्म की बिजली बर्बादी (चोरी समेत) को रोका जाए।

(ङ) बिजली कर दरों को इस तरीके से पुन: सुधारना कि लगी हुई पूंजी, छीजत और ब्याज दरों को जोड़कर कम से कम तीन प्रतिशत मुनाफा आये।

(च) पुन: बहाली वाले स्रोतों (जैसे सौर, पानी, वायु, जैविक-पदार्थ इत्यादि) को उचित प्राथमिकता दी जाए।

(छ) मजदूर कर्मचारियों, तकनीशियनों एवं बोर्ड के सदस्यों को प्रेरित करना कि कुशलता और पैदावारी योग्यता को बढ़ाते हुए स्वच्छ पर्यावरण एवं लोगों के हितों की सेवा के उद्देश्य को ऊंचा उठाए।

(ज) ऊर्जा संरक्षण एवं ऊर्जा लेखा-जोखा को हर स्तर पर सशक्त करना।

(झ) सरकार के साथ कर्जों की अदायगी के बारे में सालाना किस्तों तथा कर्ज की मियाद तय करने के बारे में बातचीत करना।

हमारे काम के चौथे भाग की तरफ आते हुए यह लेखन निम्नलिखित प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल की राय देता है।

8. पूंजी के बारे में प्रकृति–मानव केन्द्रित दृष्टिकोण

प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण मानता है कि पूंजी में दो तरफा घटनाक्रम शामिल है, यानि एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन और दूसरी तरफ मानवीय संसाधन। ऐसा

इसलिए है क्योंकि पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों से ही मानव समुदाय का जीवन बनता है और उनके बिना मानव समाज के लिए किसी भी चीज का कोई मूल्य नहीं।

यह पूंजी की दो धारणाओं, यानि पूंजी का उदारवादी (कॉरपोरेट) सिद्धान्त तथा पूंजी के मार्क्सवादी सिद्धान्त को पूर्णतया अस्वीकार करती है। उदारवादी (कॉरपोरेट) सिद्धान्त मानता है कि पूंजी चार कारकों, यानि, तकनीकी, श्रम, कच्चा माल और पूंजी की उपज है जबकि मार्क्सवादी सिद्धान्त मानता है कि मजदूरों का अतिरिक्त मूल्य (मजदूरों के वास्तविक श्रम के मूल्य से कम दी गई मजदूरी जिसे पूंजीपति हड़प लेता है) ही पूंजी है। वास्तव में, दोनों सिद्धान्त व्यवहार में, धन या सम्पदा अथवा इसकी वृद्धि को पूंजी बताते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि उदारवादी और मार्क्सवादी दोनों सिद्धान्त विकास, प्रगति और समृद्धि (चाहे व्यक्तिगत हो या सामूहिक) का प्रतिनिधित्व पूंजी द्वारा ही करने में एकमत है। इसलिए सम्पूर्ण विश्व में सभी सरकारी बजटों, व्यापारिक लेखों-जोखों और व्यक्तिगत आय को विकास, प्रगति और समृद्धि का सूचकांक स्वीकार किया जाता है।

9. प्रकृति–मानव केन्द्रित विकास मॉडल

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल दो सर्वोच्च प्राथमिकताओं, यानि पर्यावरण एवं मानव का पक्षपोषण करता है तथा पांच सिद्धान्तों, यानि पर्यावरणीय संवर्द्धन, उचित समता (यानि, प्रत्येक वंचित एवं जरूरतमन्द को सामाजिक सुरक्षा, अतर्कसंगत वेतन असमानता को 1 : 5 के अनुपात में तर्कसंगत बनाना) जनता के नेतृत्ववाला लोकतंत्र (कॉरपोरेट पूंजीवादी समर्थक राजनीतिक पार्टियों एवं व्यवसायियों की जगह लोगों का सशक्तिकरण) तथा चौतरफा पारदर्शिता। ये पांच आयामी मूलभूत सिद्धान्त मानव की जैव-सामाजिक प्रकृति से मेल खाते हैं, यानि यह मनुष्य के निजी हित और उसके सामाजिक हित में समन्वय बैठाते हैं।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल परम्परागत राष्ट्रीय विकास मॉडलों यानि कॉरपोरेट नेतृत्व और सरकार निर्देशित की तुलना में विकास की समयानुकूल धारणा को पेश करता है। कॉरपोरेट नेतृत्ववाला विकास मॉडल केवल लाभ या उत्पादकता (जो केवल धनस्वामियों के हितों को सुनिश्चित करता है) को अपना एकमात्र उद्देश्य बनाता है जबकि सरकार निर्देशित विकास मॉडल उत्पादन के साधनों का केवल समाजीकरण (अथवा राष्ट्रीयकरण) को ही अपना लक्ष्य चुनता है (जो शासक राजनीतिज्ञों एवं अफसरों के हितों की सेवा करता है), ये दोनों परम्परावादी राष्ट्रीय मॉडल मानवता के जैव-सामाजिक चरित्र या निजी-हित एवं सामाजिक हित दोनों के विपरीत केवल निजी-हित की सेवा करते हैं। फिर वे पर्यावरण को कोई प्राथमिकता नहीं देते तथा आर्थिकता अथवा वृद्धि प्रक्रिया में लोकतांत्रिक और पारदर्शी मानदण्डों को कोई भी स्थान नहीं देते। आगे कॉरपोरेट मॉडल समता (अथवा सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया रद्द करता है जबकि सरकार निर्देशित मॉडल राजनीतिक समानता एवं उत्पादकता की पूर्णतया अनदेखी करता है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल कॉरपोरेट नेतृत्त्व और राज्य आधारित दोनों विकास मॉडलों से उनके उद्देश्यों, प्रबन्ध और शैली में भिन्नता रखता है।

कॉरपोरेट मॉडल पूंजी एवं पूंजी के मालिकों का विकास करता है और राज्य मॉडल इसके शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के साथ मजदूर कूलीनता के हितों को आगे

बढ़ाता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आमतौर पर लोगों और पर्यावरण के हितों की तथा खासतौर पर गरीबों और वंचित तबकों की सेवा पर आधारित है।

प्रबन्ध में, कॉरपोरेट सेक्टर एकाधिकारवादी कॉरपोरेट प्रबन्ध एवं नियंत्रण का पक्षपोषण करता है और राजकीय क्षेत्र एकाधिकारवादी अफरशाही प्रबन्ध एवं नियंत्रण का समर्थन करता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल में पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर लोकतांत्रिक प्रबन्ध एवं नियंत्रण की मान्यता है।

शैली में, अधिनायकवादी और गोपनीय कॉरपोरेट एवं राजकीय शैली के उलट प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल लोकतांत्रिक, पारदर्शिता और जवाबदेही की शैली पर आधारित है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल मानता है कि दोनों कॉरपोरेट और सरकार निर्देशित विकास मॉडलों का निम्नलिखित कदम उठाकर विकेन्द्रीकरण किया जाना चाहिये।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के सभी शेयरों को साधारण शेयर बनाया जावे। किसी को भी इन शेयरों का 0.5% शेयर से ज्यादा रखने की इजाजत नहीं हो। बहरहाल विशेष मामलों में राज्य को 1/5 भाग शेयर रखने की इजाजत हो। प्रोमोटर शेयर्स के नियम (जो अभी कॉरपोरेट सेक्टर में चालू है) को पूर्णतया रद्द किया जावे। प्रत्येक साधारण शेयर धारक का एक वोट होगा चाहे उसके साधारण शेयर की संख्या कितनी भी हो।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के प्रबन्ध को पूर्णतया जनतांत्रिक बनाया जावे। इस मामले में, साधारण शेयर धारकों को प्रबन्ध मण्डल में 2/3 प्रतिनिधित्व दिया जावे। प्रतिनिधित्व का 1/3 भाग सम्बन्धित कम्पनी के श्रमिकों के लिए आरक्षित हो। श्रमिकों का प्रतिनिधित्व शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के कामगारों में से हो जिन्हें साधारण शेयर धारकों जैसे ही अधिकार हो।

ऐसे अधिकरण जिनमें सरकार का 1/5 भाग साधारण शेयर हो उनके प्रबन्ध मण्डल में साधारण शेयर धारकों को 60% श्रमिकों का 30% तथा सरकार का 10% प्रतिनिधित्व हो।

प्रबन्ध मण्डल 3 वर्षों के लिए चुना जावे।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल का उपर्युक्त डेमोक्रेटिक सेक्टर दोनों एकाधिकारवादी कॉरपोरेट और राज्य चलित सेक्टरों से अधिक उत्पादक (सम्भवत : दोगुना) होगा। इसके (यानि डेमोक्रेटिक सेक्टर के) उच्च वृद्धि दर (या सम्पदा उत्पादन की दर) का कारण इसके (यानि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल के) वेतन में 1 : 5 के समतावादी फर्क के सुनिश्चित करने तथा प्रत्येक को जीवन के हर क्षेत्र में सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने, इसके लोगों और पर्यावरण को मूलभूत सिद्धान्त बनाने, इसके विश्व-शान्ति एवं सुरक्षा के पालन करने, इसके गांव से संयुक्त राष्ट्र स्तर एवं अन्य आर्थिक, वित्तीय एवं ग्लोबल व्यापारिक संस्थाओं तक में लोगों के सशक्तिकरण करने की राजनीति (खासकर महिलाओं, मजदूरों और वैज्ञानिकों-तकनीकीविदों की), इसकी वास्तविक एवं तर्कसंगत आर्थिकता तथा इसकी मानवीय एवं पर्यावरणवादी संस्कृति के कारण मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के अपार विकास में निहित है।

सरकार निर्देशित सेक्टर की अव्यवहार्यता को भूतपूर्व सोवियत यूनियन के ढहने में और विश्व के समाजवादी देशों में इस मॉडल की अवहेलना में देखा जा सकता है। कॉरपोरेट सेक्टर की अदक्षता विश्वभर में कॉरपोरेट मॉडल में लगातार बढ़ रही असमानता, गरीबी, भूख, बेरोजगारी, बेघरबारता के बढ़ते ग्राफ और सबसे ऊपर लगातार गैर टिकाऊ संकट (अब यहाँ और कल वहाँ) में देखी जा सकती है।

पर्यावरणीय एवं मानवीय मामलों पर सामुहिक नियंत्रण की बढ़ती हुई लोगों की मांग, मानव समाज जिधर बढ़ रहा है उसकी दिशा बताती है।

कॉरपोरेट सेक्टर द्वारा सामाजिक जवाबदेही एवं मूल्यवादी व्यवहार के नये अपनाये जाने वाले दर्शन की मुद्रा भी कॉरपोरेट सेक्टर के अहस्तक्षेप के मूलभूत सिद्धान्त के कार्यशील नहीं होने को प्रदर्शित करता है, इसका मूलभूत सिद्धान्त जो आर्थिक विकास प्रक्रिया में प्रत्येक सामाजिक मान्यता की उपेक्षा करता है और जिसका एकमात्र उद्देश्य अधिकतम् लाभ कमाना है। (फरवरी, 2005)

* * * * *

('जनतांत्रिक आंदोलन की प्रक्रिया के ध्रुवीकरण के सामने चुनौतियां' विषय पर जाने माने गाँधीवादी नेताओं द्वारा आयोजित नागपुर कांफ्रेंस के प्रस्तावित कार्यक्रम पर टिप्पणी)

जनतान्त्रिक आन्दोलन के ध्रुव्रीकरण की प्रक्रिया के समक्ष चुनौतियां

(1)

उपर्युक्त शीर्षक दो बिन्दुओं को स्पष्ट करने की माँग करता है। पहला बिन्दु है कि लोकतान्त्रिकरण की धारणा के मायने क्या है तथा दूसरा बिन्दु है कि ध्रुवीकरण का क्या अर्थ है।

हमारी नजर, में वर्तमान संदर्भ में लोकतान्त्रिक आन्दोलन (भारत में या दुनिया में) मौजूदा लोकतान्त्रिक स्वरूप के सिद्धान्त व व्यवहार में विश्वास रखने वालों की गतिविधि और संगठन को अभिव्यक्त करता है तथा ध्रुवीकरण की धारणा नकारात्मक शक्तियों के संदर्भ में सकारात्मक लोकतान्त्रिक शक्तियों के ध्रुवीकरण को इंगित करती है।

(2)

सबसे पहले हम भारत में लोकतन्त्र एवं इसको लागू करने वालों की कारगुजारी पर नजर डालते हैं। दो शीर्षस्थ नेताओं भारत के राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम एवं प्रधानमंत्री डॉक्टर मनमोहनसिंह द्वारा भारतीय लोकतन्त्र एवं इसको लागू करने वालों (यानि भारतीय संसद, विधानसभा तथा राजनीतिक दलों पर नियन्त्रण रखने वाले राजनीतिज्ञों) की टिप्पणियों पर ध्यान देना काफी दिलचस्प रहेगा।

20 मार्च 2005 को पुरस्कार वितरण समारोह पर बोलते हुए राष्ट्रपति अब्दुल कलाम ने कहा कि सरकार बनाने में संख्या बढ़ाने के संदिग्ध तरीकों को अपनाया गया है। अत: इसके लिए आत्मनिरीक्षण किया जाना चाहिए। यह टिप्पणी हाल ही के राजनीतिक घटनाक्रम के संदर्भ में महत्वपूर्ण है। पीछे की चुनाव प्रक्रियाओं को देखते हुए जो अत्यन्त तनावग्रस्त एवं घातक हिंसक रही है, इस पर उन्होंने कहा कि ''हमें अपने प्रति ईमानदार होना चाहिए।''

संख्या बढ़ाने का गणितीय दबाव तथा कुछ विधायक सीटों की कथित खरीद-फरोख्त एवं कथित संदिग्ध व अलोकतान्त्रिक तरीके अपनाकर जीतना अक्सर लोगों की नजर में हमारी लोकतान्त्रिक व्यवस्था पर सन्देह उत्पन्न करता है।

राष्ट्रपति महोदय ने कहा कि जब राजनीति स्वयं राजनीतिक दुस्साहस में पतित होती है तब राष्ट्र विपत्ति के मार्ग पर जायेगा जो अवश्यंभावी तौर पर बर्बादी और विनाश का मार्ग है।

20 मार्च 2005 को 2002 के लिए श्रेष्ठ सांसद पुरस्कार प्रदान करते हुए प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने अफसोस जाहिर किया कि संसद में आमतौर पर माहौल एवं बहस का स्तर गिरता जा रहा है।

प्रधानमंत्री ने कहा कि लोग संसदीय संस्थाओं में विश्वास खो दें इससे पहले हमें आत्मनिरीक्षण की आवश्यकता है। उन्होंने कहा कि सासंदों को सदन में अच्छी तैयारी करके आना चाहिए तथा असहमति के बीच भी हमें एक-दूसरे को गंभीरता से सुनना चाहिए क्योंकि लोकतन्त्र का यही सारतत्व एवं प्रमाणांक है।

उन्होने आगे कहा, ''मैं सोचता हूँ कि ऐसे मौके हमें आत्मनिरीक्षण करने के अवसर प्रदान करते हैं, इसमें कोई शक नहीं कि संसद जिसे हम चला रहे हैं उसमें आम माहौल और बहस के स्तर में गिरावट आ रही है।''

बहुत से भारतीय विद्वजनों को इस तथ्य से गर्व महसूस होता है कि दुनियों में भारत एक सबसे बड़ा लोकतान्त्रिक देश है। हमारा इतिहास उतार-चढ़ाव का रहा है एवं हमारी सांस्कृतिक विरासत उच्च रही है, हमारी अनेकता में एकता रही है, हमारा संविधान सबसे विस्तृत है, जो लोकतान्त्रिक ताने-बाने से गुथा हुआ है, परन्तु यह सारा गर्व और सम्मान उस समय रूई के बादलों की तरह काफूर हो जाता है और सिर शर्म से झुक जाता है जब हम वर्तमान राजनीति के बदसूरत एवं विकृत चेहरे पर नजर डालते हैं। राजनीतिज्ञ जो येन-केन प्रकारेण, सही या गलत तरीके से, बाहुबल या धक्का-मुक्की से, वोट या सोट से अथवा अन्य किसी भी गलत तरीके से इस विश्वास के साथ कि उनके सभी भ्रष्ट तरीकों को संविधान की गलत व्याख्या करके, उसकी लचीली प्रकृति को ढाल की तरह उपयोग करके जायज ठहराया जा सकेगा, इन निहित स्वार्थी राजनीतिज्ञों की मात्र सत्ता हथियाने की अंधी-दौड़ में राजनीति के बुनियादी मूल्य और नैतिकता खो गई है जिससे देश एवं देश का सम्मान व विरासत का बर्बाद होना अवश्यंभावी है।

सर्वोच्च न्यायालय भी दागदार, भ्रष्ट एवं अपराधिक राजनीतिज्ञों को चुनाव प्रक्रिया के जरिए संसद एवं विधानसभाओं में प्रवेश पाने से नहीं रोक सका है तथा इसका निर्णय करने के लिए संसद और विधान सभाओं की मर्जी पर छोड़ दिया है। चुनाव आयोग की स्थिति भी नकारा एवं मूक दर्शक वाली है।

किसी भी देश के भ्रष्टाचार से मुक्त होने की आशा तब तक नहीं की जा सकती जब तक कि उसका राजनीतिक टोला भ्रष्टाचार में डूबा रहता है। भ्रष्टाचार राजनीतिक मीनारों से उतरकर अफसरशाही आँगन में पाँव पसारता है और इसके बाद प्रशासकीय दीवारों में घुन की तरह लग जाता है और सारे कार्यपालिका के ढाँचे को ग्रसित करता है और अन्ततोगत्वा समस्त समाज में घुसपैठ करके देश को बर्बाद करता है। इसलिए कुंभकर्णी नींद से हमारे जागने का समय आ गया है तथा और अधिक समय खोने का तनिक भी

समय नहीं है क्योंकि देरी करने से कहीं ऐसा न हो कि हमारी लोकतान्त्रिक प्रक्रिया को बर्बाद होने से बचाने का समय भी हमारे हाथ से निकल जाए।

उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए क्या हम भारतीय लोकतन्त्र को सच्चा लोकतन्त्र चरित्रित कर सकते हैं और इसके झण्डा बरदारों को सच्चा जनवादी कह सकते हैं? क्या ऐसे भ्रष्टाचार आधारित लोकतन्त्र के अनुयायियों की एकता को लोकतान्त्रिक धारा का नाम दे सकते हैं।

आर्थिक असमानता एवं पर्यावरण की स्थिति के संदर्भ में वर्तमान लोकतन्त्र और उसको लागू करने वालों की पिछले 50 वर्षों की कारगुजारी पर अब नजर डालते हैं।

आर्थिक असमानता के संबंध में यह भारत में अत्यधिक क्रूर रूप में विद्यमान है जहाँ केवल 9 अरबपतियों की 23 बिलियन (अरब) डालर धन सम्पत्ति पर तथा 61 हजार करोड़पतियों का 267 अरब डालर (यानि भारत के कुल सकल घरेलु उत्पाद- जो 560 अरब डालर है- के लगभग 50 प्रतिशत) पर नियन्त्रण है, करीब 30 प्रतिशत काला धन है। 10 प्रतिशत सम्पत्ति उच्च मध्यम वर्ग के पास है, 8 प्रतिशत मध्यम और निम्न वर्गों के पास है जबकि केवल 2 प्रतिशत धन 62 प्रतिशत गरीबों और वंचितों (जिसमें से 40 प्रतिशत की आय 1 डालर से कम है तथा 22 प्रतिशत की आय 2 डालर से कम है) के हिस्से में आता है।

पर्यावरण की स्थिति के संबंध में, पर्यावरण के सभी घटक, यानि हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता आदि में काफी हद तक गिरावट आ चुकी है और प्रदूषित हो गये हैं।

(3)

दक्षिण एशिया में लोकतन्त्र और उसको लागू करने वालों की कारगुजारी की दशा पर नजर डालें तो पाते है कि इस क्षेत्र में पिछले 50 वर्षों में तेज गति से जंगल काटने से भारी मात्रा में प्राकृतिक संसाधनों का ह्रास हुआ है। इस इलाके में जंगल का भूमि क्षेत्र घटकर 17.5 प्रतिशत रह गया है। कुछ घातक प्राकृतिक विपदाएं जैसे-बाढ़ एवं सूखे का सीधा संबंध इसकी परिस्थितिकी पर बेजा दबाब से है। ग्रीन हाउस प्रभाव से उत्पन्न ग्लोबल वार्मिंग (पृथ्वी का गर्म होना) का गंभीर असर सभी समुद्र-तटीय क्षेत्रों में है, जिसमें मालदीव एवं बांग्लादेश अतिसंवेदनशील क्षेत्र है।

दक्षिण एशिया में मानव संसाधनों के पतन के संबंध में स्थिति यह है कि 40 करोड़ दक्षिण एशियावासी हमेशा भूखे सोते हैं। 30 करोड़ अन्य गरीबी की रेखा से थोड़ा ऊपर जीवन बसर करते हैं, आधे से ज्यादा दक्षिण एशियावासी अनपढ़ है, 1/3 भाग बिना घर के, 2/5 अल्प रोजगार, 1/3 साफ पीने के पानी तथा अन्य स्वास्थ्य सुविधाओं से वंचित है तथा 3/4 भाग को शौच सुविधा उपलब्ध नहीं है। 5 साल से कम आयु के 53% बच्चे कम वजन वाले हैं। महिलाओं की स्थिति अति शोचनीय है। विश्वभर में दक्षिण एशिया लिंग आधारित हिंसा में सबसे आगे हैं।

इस क्षेत्र के लोगों की औसत आय 309 डालर है जो कि सब सहारा अफ्रीकी लोगों की 555 डालर से कम है, सब सहारा अफ्रीका दो दशक पहले विश्व का सबसे पिछड़ा इलाका था। देशों के हिसाब से विश्व में राष्ट्रीय आय भी सबसे कम है। भूटान की आय 180 डालर से भारत की आय 360 डालर के बीच है।

बहुत से अन्य वंचितपन के साथ गरीबी की स्थिति बदत्तर है। दक्षिण एशिया में 12 करोड़ 60 लाख बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा की जरूरत है, 69 करोड़ को स्वास्थ्य सेवा

की, 77 करोड़ को स्वच्छ पीने के पानी की , 8 करोड़ 70 लाख बच्चों को पर्याप्त भोजन की तथा 28 करोड़ 70 लाख वैवाहिक जोड़ों को परिवार नियोजन सुविधाओं की जरूरत है।

इन सभी के लिए बड़ी वित्तीय राशि की आवश्यकता है। लेकिन शासक तबका अपनी ही प्राथमिकताओं को आगे लाता है। आन्तरिक व बाहरी झगड़े, जो गलत सरकारी नीतियों से पैदा हुए हैं, क्षेत्र के भारी वित्तीय संसाधनों को निगल जाते हैं।

(4)

वर्तमान लोकतन्त्र एवं उसको लागू करने वालों की अन्तर्राष्ट्रीय कारगुजारी के मुद्दे पर आते हैं जो संयुक्त राष्ट्र संघ एवं अन्य वैज्ञानिकों तथा सामाजिक वैज्ञानिकों की अधिकृत रिपोर्टों से स्पष्ट है।

2002 की संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यू.एन.ई.पी.) की रिपोर्ट ने चेतावनी दी है कि शहरों का विस्तार, जंगलों का विनाश, खेतों का क्षरण और पानी की बढ़ती हुई मांग से कई देशों में मानवीय और पारिस्थितिक स्वास्थ्य के खराब होने की भारी संभावना है।

यह कहती है कि कृषि की वृद्धि ने बड़े भू-भाग को नुकसान पहुंचाया है, जल-स्रोतों को समाप्त कर रही है, मिट्टी में नमक की मात्रा बढ़ा रही है, और जंगली जीवों के आवास को घटा रही है।

पहले से ही मिट्टी का पाँच अरब एकड़ क्षेत्र अमेरीका और कनाडा के संयुक्त क्षेत्र से ज्यादा मानवीय गतिविधि द्वारा बर्बाद हो गया जिसमें से छठा भाग बहुत ही ज्यादा अथवा बर्बादी की हद पार कर गया है। 80% से अधिक बर्बादी पानी और हवा के कटाव के जरिये हुई है।

यह आगे कहती है कि विश्व के बहुत से क्षेत्र 2032 तक अपने जैव विविधता और समुद्री पारिस्थितिक वातावरण को बुरी तरह बिगड़ा हुआ देखेंगे।

2003 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार, अमीर और गरीब तथा उच्च और निम्न के बीच विभेद का रूझान कम होने के किसी भी संकेत के अथवा किसी बिन्दु पर ठहरने के बिना, अक्षुण्ण रूप से बढ़ रहा है। 2002 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट अभिव्यक्त करती है कि दुनिया के 1% सबसे अधिक धनवान दुनिया के 75% सबसे गरीब लोगों की कुल आय से ज्यादा आय प्राप्त करते है। 2001 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट लिखती है : विकासशील देशों के 460 करोड़ लोगों में से 85 करोड़ से ज्यादा अशिक्षित है, लगभग 100 करोड़ लोग पीने के स्वच्छ पानी से वंचित है और 240 करोड़ लोगों को समुचित शौच सुविधा उपलब्ध नहीं है। लगभग 3 करोड़ 20 लाख लड़के व लड़कियां स्कूल नहीं जाते। 5 साल के कम आयु के 1 करोड़ 10 लाख बच्चे निरोधक बीमारियों से मर जाते हैं जो प्रतिदिन 30 हजार से अधिक है। 120 करोड़ लोग एक डालर से कम और 280 करोड़ 2 डालर से कम प्रतिदिन आय पर जीते है। इस प्रकार का वंचितपन विकासशील देशों तक ही सीमित नहीं है। ओ.ई.सी.डी. (आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन) के देशों में 13 करोड़ से अधिक लोगों की कमजोर आय है। 3 करोड़ 40 लाख बेरोजगार है और वयस्क कार्यकारी अशिक्षा की औसत दर 15% है। रिपोर्ट आगे व्यक्त करती है कि अमेरीका की सर्वोच्च 10% अमीर आबादी (जो करीब 2.5 करोड़ है) की आय विश्व के सबसे गरीब 43% (करीब 200 करोड़) लोगों की संयुक्त आय से ज्यादा है। 1999 की मानव विकास रिपोर्ट कहती है कि 1990 के दशक के अंत में दुनिया की आबादी के ऊपर के 20% तथा नीचे के 20% लोग क्रमश: विश्व जी डी पी का 86% व 1%, विश्व टेलीफोन

लाइन का (जो आज का बुनियादी संचार साधन है) 74% व 1.5% तथा विश्व निर्यात का 82% तथा 1%, का उपयोग करते थे।

1996 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट बताती है कि विश्व के सबसे धनवान मात्र 3 व्यक्ति 48 अल्पविकसित देशों की संयुक्त जीडीपी के बराबर सम्पदा रखते हैं, विश्व के 225 सबसे धनवान व्यक्तियों के पास 10 खरब डालर से ज्यादा संपत्ति है जो विश्व के 47% गरीबों (जिनकी संख्या 250 करोड़ है) की कुल आय है।

आगे, विशेषज्ञों की रिर्पोटों पर आधारित निम्नलिखित तथ्य भी उपर्युक्त निष्कर्ष को पुष्ट करते है।

सन् 2000 में विश्व के ख्यातिनाम वैज्ञानिकों ने अपने वक्तव्य में जोर दिया कि मानव समुदाय यदि शीघ्र ही ग्रीन हाऊस गैसों के उत्पादन को नहीं रोकता तो वैश्विक गर्मी से 21वीं सदी के अन्त तक पृथ्वी जीव-जगत के लिये गैर टिकाऊ बन जायेगी। टिकाऊ विकास पर 2002 का संयुक्त राष्ट्र जोहान्सबर्ग सम्मेलन ने पर्यावरण विनाश तथा मानवीय संसाधनों के पतन की घातक समस्या को स्वीकार किया।

संयुक्त राष्ट के विश्व वन्य जीव कोष (डब्ल्यू डब्ल्यू एफ) का 2002 के अध्ययन ने चेतावनी दी है कि यदि मानव समुदाय (खास कर धनी देश तथा धनी लोगों) ने अति उपयोग तथा बर्बाद करने वाली अपनी जीवन शैली को नहीं बदला तो हमारी पृथ्वी 2050 तक मानव जीवन के लिये गैर टिकाऊ बन जायेगी।

2003 में विश्व के प्रमुख वैज्ञानिकों के रोम सम्मेलन ने सावधान किया कि यदि पर्यावरण पतन खराब करने की प्रक्रिया को कम समय में ही सुधारा नहीं गया तो आने वाले समय में पृथ्वी जीवों के रहने के लिये पूर्ण रूप से गैर टिकाऊ बन जायेगी।

जनवरी, 2004 के 'नेचर' विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित एक लेख कहता है कि ''आने वाले 50 वर्षों में जलवायु परिवर्तन के कारण पृथ्वी के एक चौथाई जानवर और वनस्पतियों के गायब होने की संभावना है।'' अन्य वैज्ञानिक विशेषज्ञ भी जो अपने आपको किसी समय सीमा में नहीं बांधते, पर्यावरणीय परिस्थिति को बहुत ज्यादा खतरनाक स्वीकार करते है।

एक सुप्रसिद्ध आर्थिक इतिहासकार ए. मेडीसन बताते हैं कि सबसे धनवान और सबसे गरीब देशों के बीच फर्क सन् 1820 में लगभग 3 एवं 1 था। यह सन् 1913 में 11 एवं 1 का 1950 में 35 एवं 1, 1973 में 44 एवं 1 तथा 1992 में 72 एवं 1 का हो गया। 1997 में यह हृदय विदारक आँकड़ा यानि करीब 74 एवं 1 का था। आज दुनिया में अमीरों एवं गरीब लोगों के बीच विभेद ऐसा है जो दिल हिलाने वाला है। दुनिया का सबसे अमीर अमेरीकन बिल गेट्स कुल 47 अरब डालर की सम्पत्ति का मालिक है और भारत का अजीम प्रेमजी 6 अरब डालर की सम्पदा का मालिक है, जबकि एक भूखा व्यक्ति खाली जेब और किसी भी अन्य स्त्रोत के अभाव में एक रोटी के टुकड़े को प्राप्त करने के लिये भीख मांगने के सिवाय कोई विकल्प नहीं रखता है, कुछ समय जिन्दा रहता है और फिर इस दुनियां से विदा हो जाता है, इस प्रकार की मौतों के कारण को चिकित्सा विशेषज्ञ पेट की खराबी या इसी प्रकार की भौतिक बीमारी को कारण घोषित करते हैं।

कुछ मुट्ठी भर विकसित देश, मुश्किल से विश्व जनसंख्या का 15% आज विश्व के भौतिक एवं वित्तीय संसाधनों के 80% से अधिक पर नियन्त्रण करते हैं तथा 130 विकासशील देशों में रहने वाले 85% विश्व के लोगों के लिए 20% संसाधन छोड़ते हैं।

वर्ल्ड वॉच वांशिगटन जनवरी, 2004 की रिपोर्ट ने उल्लेख किया है कि विश्व के अमीर और उच्च मध्यम वर्गों (जो विश्व का 1/4 भाग है) की अति उपभोग और गैर टिकाऊ जीवन शैली मानव समुदाय को एक खतरनाक संकट की तरफ धकेल रही है।

इग्लैण्ड के डोरचेस्टर में पारिस्थितिकी और जल विज्ञान केन्द्र के प्राकृतिक पर्यावरण अनुसंधान परिषद की मार्च 2004 की रिपोर्ट कहती है :''जीवन के इतिहास में एक षष्टम् महाविलुप्ती की घटना अब हमारे ऊपर पुन: होने जा रही है। जीवों एवं वनस्पतियों की जीवित प्रजातियों की ऐसी महा विलुप्तियाँ समय-समय पर पहले हो चुकी है। इग्लैण्ड के डोरचेस्टर केन्द्र कहता है कि पूर्व की पाँच विलुप्तियाँ प्राकृतिक कारणों से हुई है जबकि छठी विलुप्ति का कारण मानव क्रिया कलाप लगता है।

संयुक्त राष्ट्र की मार्च 2004 की रिपोर्ट कहती है कि सूचना प्रोद्योगिकी का 'धुआं रहित उद्योग' एक बड़ा वैश्विक प्रदूषक है। इसके अनुसार 24 किलोग्राम एवं 27 सेन्टीमीटर की कैथोड़ किरण ट्यूब मानीटर के एक कम्प्यूटर को 230 किलोग्राम जैविक ईधन, 22 किलोग्राम का रसायन और 1500 किलोग्राम पानी – कुल 1.8 टन पदार्थ की जरूरत होती है।

(5)

भारत, दक्षिणी एशिया एवं दुनिया के स्तर पर मानवीय समुदाय एवं प्राकृतिक पर्यावरण के संदर्भ में उपर्युक्त वर्णित नकारात्मक कारगुजारी के बावजूद वर्तमान लोकतन्त्र के समर्थक इसे जनता से, जनता के लिए, जनता के द्वारा परिभाषित करते हैं। परन्तु यह परिभाषा वर्तमान लोकतन्त्र की हुबहु वास्तविकता का प्रतिनिधित्व नहीं करती। हमारे विद्यमान सामाजिक ढाँचे में लोगों को केवल एक ही अधिकार है कि वे अपने प्रतिनिधियों को चुनाव प्रक्रिया के जरिए चुनते हैं। इसके आगे लोगों को कोई अधिकार नहीं। हमारे प्रतिनिधियों को अधिकार है कि वो हमारे ऊपर 5 साल तक शासन करें। इस अर्थ में, हम अपनी डेमोक्रेसी को केवल लोगों के प्रतिनिधियों की डेमोक्रेसी चरित्रित कर सकते हैं न कि लोगों की डेमोक्रेसी। लेकिन शासक-राजनीतिज्ञ इसको जनता का शासन बताते हैं जो कि तथ्यों के उलट हैं। डेमोक्रेसी के दोनों ब्रांड यानि विद्यमान कॉरपोरेट (बहु-पार्टी पद्धति से संचालित) और कम्युनिष्ट डेमोक्रेसी (राज्य निर्देशित या पार्टी अगुवाई के रूप में केवल एक ही कम्युनिष्ट पार्टी के जरिए परिचालित) इसे एक जनता का शासन कहते हैं। जनता के प्रतिनिधियों के शासन को लोगों का शासन कहना तथ्यों को विकृत करना है। हमारे चल रहे जनता के प्रतिनिधियों के शासन में जनता को केवल अपने प्रतिनिधियों को चुनने का अधिकार है। वे वोट देने के अलावा अन्य कोई अधिकार नहीं रखते। चुने हुए प्रतिनिधियों को वो सब कुछ करने का विशेषाधिकार है जो वे चाहते हैं। वास्तव में, राष्ट्रीय डेमोक्रेसी के ऊपर बताए गये दो प्रकारों में लोगों को किसी भी अन्य मामलों में कुछ भी बोलने का अधिकार नहीं है।

आगे, भारत में कॉरपोरेट निर्वाचन कानून एक लोकसभा उम्मीदवार को अपने संसदीय क्षेत्र में 25 लाख रुपये की चुनावी खर्च की इजाजत देता है (जबकि विभिन्न देशों में चुनावी खर्च के कानून अलग है और एक बड़ी मात्रा में चुनाव खर्च करने की इजाजत देते हैं) भारत में 90% लोग चुनाव पर इतनी बड़ी राशि खर्च करने की स्थिति में ही नहीं है। अत: आम जनता चुनाव में उम्मीदवार बनने (चाहे वे कितने भी योग्य हों) के अवसर से वंचित हैं। केवल पार्टी नामित उम्मीदवार (जो आम तौर पर धनवान वर्गों के होते हैं) ही

चुनाव मुकाबले में शामिल होते हैं। हकीकत में, चुनाव लड़ना धनवान वर्गों और उनके समर्थकों तक सीमित है। यहां यह उल्लेख करना रुचिकर होगा कि 1999 के चुनावों पर चुनाव आयोग द्वारा प्रायोजित सी एस डी एस अध्ययन के अनुसार एक लोकसभा उम्मीदवार पर जब कानूनन 14 लाख रुपये चुनावी खर्च की सीमा थी, औसत खर्च प्रति उम्मीदवार 70 लाख रुपये आंका गया जिसका आकलन अब 1 करोड़ 20 लाख रुपये है।

कम्युनिष्ट डेमोक्रेसी में, केवल शासक कम्युनिष्ट पार्टी को उम्मीदवार खड़ा करने का विशेषाधिकार है। इस प्रकार, कॉरपोरेट डेमोक्रेसी में धन के स्वामियों अथवा उनके प्रतिनिधि हर चुनाव में राजनीतिक सत्ता को नियन्त्रण करने में सफल होते है, जबकि कम्युनिष्ट डेमोक्रेसी में, पार्टी सत्ता पर एकाधिकार रखती है।

उपर्युक्त तथ्यों के मध्यनजर, कॉरपोरेट और कम्युनिष्ट डेमोक्रेसी की प्रकृति दो तरफा लक्षण अभिव्यक्त करती है। प्रथमत: यह लोगों के सीधे शासन का प्रतिनिधित्व नहीं करती तथा द्वितीयत: कॉरपोरेट डेमोक्रेसी में यह धन के स्वामियों द्वारा तथा कम्युनिष्ट डेमोक्रेसी में यह कम्युनिष्ट पार्टी (यानि इसके नेतृत्वकारी ग्रुप) के एकाधिकार द्वारा नियन्त्रित होती है।

जहाँ तक कारपोरेट और कम्युनिष्ट डेमोक्रेसी के दो रूपों के मानदण्डों का सवाल है ये दोनों इस सामाजिक आधार से शुरूआत करते हैं जहां ये दोनों मानव केन्द्रित बन जाते हैं। वास्तव में, कॉरपोरेट डेमोक्रेसी में धन के स्वामी और कम्युनिष्ट डेमोक्रेसी में पार्टी यानि इसके कुछ नेता इन पूँजीवादी मॉडलों के प्रेरक शक्ति की तरह कार्य करते हैं और उनके अपने सामाजिक रचनातंत्र में प्रत्येक उनके ही हितों को पूरा करने में हर वक्त कार्य करते हैं।

इन दो पूँजीवादी रूपों का दूसरा मानदण्ड यह है कि वे प्रत्येक समस्या के समाधान में ताकत को अंतिम हथियार मानते हैं। परिणामस्वरूप, कोई भी जटिल समस्या के समाधान हेतु युद्ध उनका प्रथम विकल्प रहता है। अपरिहार्य तौर पर उनके अपने सामाजिक मॉडलों को चलाने तथा उनकी समस्याओं के समाधान के लिए रक्षा प्रमुख प्राथमिकता बन जाती है।

इन दो रूपों का तीसरा मानदण्ड, अधिकतम धन कमाने एवं लोगों पर शासन करने एवं अपने अच्छे के लिए सत्ता में बने रहने हेतु किसी भी कीमत पर जैसे-तैसे राज्यसत्ता हासिल करना है।

इन दो रूपों का चौथा मानदण्ड उनके वेल्यु सिस्टम का है। कॉरपोरेट वेल्यू सिस्टम सभी प्रकार की गतिविधियों–खेल, फिल्म प्रदर्शन, सौन्दर्य प्रतियोगिताओं, आदि का वाणिज्यकरण करता है। ये दोनों रूप लिंग भेद मिटाने और पुरुष प्रभुत्व जन मानस में औरत को समान अधिकार देने का जबानी शौर मचाते है जबकि ये चालाकी से सामाजिक और पारिवारिक जीवन में पुरुष प्रभुत्व वाली परम्पराओं को प्रोत्साहन देते हैं तथा महिलाओं के साथ द्वितीय श्रेणी के नागरिक की तरह व्यवहार करते हैं।

कम्युनिष्ट वेल्यु सिस्टम मूलत: कम्युनिष्ट पार्टी और इसके राज्य के जरिए संचालित होता है। लोग आमतौर पर सरकारी नियन्त्रण वाली प्रेस तथा संचार तंत्र से इस प्रकार प्रभावित होते है कि कम्युनिष्ट पार्टी और इसके नेता सामाजिक सच्चाई के वास्तविक प्रतिनिधि है तथा वे सभी अवसरों पर अपने समर्थन का अधिकार रखते हैं।

पाँचवा मानदण्ड इन दो पूँजीवादी रूपों का है कि वे विकास को धन के रूप में आँकते हैं। यद्यपि दोनों (कॉरपोरेट और कम्युनिष्ट सिद्धान्त) पूँजी की अपनी परिभाषाओं में मतभेद रखते हैं (कॉरपोरेट पूँजी को धन का नाम देते हैं और कम्युनिष्ट इसे मजदूरों का अतिरिक्त मूल्य कहते हैं) फिर भी, दोनों इसे धन के रूप में नामित करते है तथा विकास, प्रगति एवं समृद्धि को धन की वृद्धि अथवा धन की वृद्धि दर से मापते हैं। इसलिए वे निवेश के लिए संचित धन को पूँजी कहते हैं। वे अपनी पूँजी बढ़ोतरी के लिए हर प्रकार की युक्ति काम में लेते हैं, जो समाज की सर्वोच्च वस्तु है। पूँजी के बारे में उनकी समझ उन्हें प्राकृतिक या मानवीय संसाधनों का कोई ख्याल किये बिना (जैसे या तैसे) पूँजी को प्रचूर मात्रा में इकट्ठा करने को प्रेरित करती है।

इन दो पूँजीवादी रूप के व्यवहार की ओर आते हैं, दोनों ने निर्दयता से सभी साधनों द्वारा अपनी पूँजी की अधिकतम मात्रा के लिए एक तरफ पर्यावरणीय संसाधनों को बर्बाद किया है तथा दूसरी तरफ मानवीय संसाधनों का पतन किया ह–इस तरह, इनका नुकसान उनको ठीक करने की सीमा से बाहर कर दिया है। यह वह तस्वीर है जिसे संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यू.एन.ई.पी.) संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू एन डी पी) तथा अन्य सामाजिक विशेषज्ञों ने पेश की है।

चल रही डेमोक्रेसी की पूरी प्रक्रिया के उपसंहार (यानि इसके कॉरपोरेट और कम्युनिष्ट नमूनों) में यह कहा जा सकता है कि इसके सकारात्मक पक्ष में कुछ निश्चित तकनीकी और वैज्ञानिक खोजों को सम्मिलित किया जा सकता है, जबकि इसके नकारात्मक पक्ष में (इसकी उपलब्धियों को ढकने वाला) जैविक इतिहास का सबसे बड़ा अपराध निहित है। एक ऐसा अपराध जिसने प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों को अब जीवन और मौत के संकट में धकेल दिया है। चल रही डेमोक्रेसी का 200 वर्षों का इतिहास इस तथ्य की गवाही देता है।

(6)

हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि जनता द्वारा, जनता से, जनता के लिए राज्य केवल मात्र प्रकृति-मानव केन्द्रित लोकतन्त्र के मॉडल द्वारा ही स्थापित किया जा सकता है।

डेमोक्रेसी का प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल मानता है कि मानव और पर्यावरणीय संसाधन मानव समाज के विकास में दो प्रमुख शक्तिया हैं।

यह विश्वास करता है कि मानव जैव-सामाजिक है जो एक तरफ जैविक अस्तित्व का व्यक्तिगत चरित्र तथा दूसरी तरफ सामाजिक हित का चरित्र रखता है।

डेमोक्रेसी के प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल की मान्यता है कि सामाजिक प्रक्रिया मानव स्वभाव के बराबर महत्व के 3 आयामों की एक प्रक्रिया है, वे हैं, अस्तित्व (यानि, जीवन की सुरक्षा और यौन प्रवृति), मानसिक (यानि, सोचने और कार्य करने में स्वतंत्रता की लालसा) और सामाजिक (यानि, सभी भौतिक एवं मानसिक प्रक्रियाओं में समानता और न्याय की मजबूत आकांक्षा)। यहां, लोग तय करते है कि प्रत्येक व्यक्ति की जीवन पर्यन्त सामाजिक सुरक्षा को कैसे सुनिश्तित किया जाये, प्रत्येक शख्स को सोचने एवं कार्य करने की पूर्ण स्वतंत्रता कैसे दी जाये, समतावादी आय के बीच कितना फर्क हो।

यह सोचता है कि जिसकी लाठी उसकी भैंस का सिद्धान्त (युद्ध व्यवस्था का प्रतीक) आज गैर उत्पादक बन गया है। यह शांति को अपना बुनियादी सिद्धांत मानता है,

यह जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन सहित सभी झगड़ों को बातचीत और समझौतों के जरिए हल करने के लिए प्रतिबद्ध है।

यह मान्य करता है कि साधन और साध्य बराबर महत्व के हैं।

यह ग्रहीय और अन्तर ग्रहीय दृष्टि को अपनाता है। इस दृष्टि का मूलभूत सिद्धान्त लोगों और पर्यावरण को अपनी सम्पूर्ण गतिविधि के केन्द्र में रखना है।

इस दृष्टि से मेल खाते हुए, यह एक नई विश्व व्यवस्था से प्रतिबद्धता रखता है, जिसमें संयुक्त राष्ट्र की साधारण सभा निर्णय लेने में सर्वोच्च इदारा होगी। साधारण सभा अपने फैसलों को लागू करने के लिए एक परिषद को चुनेगी (सुरक्षा परिषद को नियुक्त करने के पुराने सिद्धान्त को निरस्त करते हुए जिसमें कुछ सदस्य परिषद के स्थाई सदस्य होते हैं और वीटो अधिकार रखते हैं) और भविष्य में वर्तमान राष्ट्रीय इकाईयों को दो मान्यताओं-समान पहचान और लगभग समान जनसंख्या-के आधार पर पुनर्गठन करेगी।

यह स्वीकार करती है कि पूँजी एक दो तरफा घटनाक्रम है, यानि एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन और दूसरी तरफ मानवीय संसाधन। यह धन को पूँजी की प्रतिनिधि इकाई होने के सिद्धान्त को रद्द करती है। यह धन को केवल मात्र विनिमय का माध्यम मानती है।

इसका विकास मॉडल 5 तरफा मूलभूत सिद्धान्तों, यानि पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता (आय में 1:5 के फर्क तथा सभी को सामाजिक सुरक्षा का मूलभूत अधिकार), उत्पादकता, जनता के नेतृत्व वाला लोकतंत्र ओर सभी मामलों में पारदर्शिता के उसूलों का पक्षपोक्षण करता है।

यह मॉडल कॉरपोरेट और राज्य आधारित दोनों विकास मॉडलों से अपने उद्देश्य, प्रबन्ध एवं शैली में भिन्नता रखता है।

कॉरपोरेट मॉडल पूँजी और पूँजीपतियों का विकास करता है तथा राज्य मॉडल शासक राजनीतिज्ञों, अफसरों एवं मजदूर कुलीनों के हितों को आगे बढ़ाता है जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आमतौर पर लोगों और पर्यावरण का और खासतौर पर गरीबों एवं वंचित तबकों के हितों की सेवा करता है।

प्रबंध में, कॉरपोरेट सेक्टर एकाधिकारवादी कॉरपोरेट प्रबन्ध और नियन्त्रण का समर्थक है तथा राजकीय क्षेत्र एकाधिकारवादी नौकरशाही प्रबंध और नियन्त्रण का पक्षधर है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर चुनी हुई संयुक्त कमेटियों के जरिए लोकतांत्रिक नियन्त्रण का हामी है। इन संयुक्त कमेटियों में स्थायी कॉरपोरेटरों की जगह 2/3 चुने हुए सदस्य साधारण शेयर धारियों के तथा 1/3 चुने हुए सदस्य मजदूरों के प्रतिनिधि होते हैं।

शैली में, आधिकारिक और गुप्त कॉरपोरेट पूँजीवादी एवं राजकीय शैली के उलट, प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल लोकतांत्रिक, पारदर्शी तथा जवाबदेही की शैली को अपनाता है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित राजनीति पूर्णतया लोकतांत्रिक सिद्धान्तों, कार्यकलापों और संरचना पर आधारित एक डेमोक्रेटिक व्यवस्था को मानती है। इस प्रकार के मॉडल के लिए निर्णय लेने में लोगों के अधिकतम् संभव सशक्तिकरण के सिद्धान्त को लागू करना अनिवार्य है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित आर्थिकता एक तर्कसंगत और वास्तविक अर्थशास्त्र, जिसकी

धारणा, कानून और नियम ऊपर बताई गई 2-उच्च प्राथमिकताओं (यानि मानव जाति और पर्यावरण) तथा 5 सिद्धान्तों (यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, लोकतंत्र तथा पारदर्शिता) की मांग करती है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित मानदण्ड एक ऐसी जीवन-पद्धति (या जीवन शैली) की मांग करती है जो लोगों में मलभूत मानवीय और पर्यावरणीय मानदण्डों तथा तर्कसंगत, मानवतावादी एवं पर्यावरणवादी सोच, व्यवहार और संगठन से ओत-प्रोत हो।

प्रकृति-मानव केन्द्रित डेमोक्रेसी का मॉडल यह सुनिश्चित करेगा कि सभी प्रकार के संविधान (स्थानीय से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के) उनकी संबंधित चुनी हुई संविधान सभाओं द्वारा तैयार किया जावे और उन्हें लोगों द्वारा अंतिम तौर पर अनुमोदित एवं पारित करवाया जावें।

यहां निम्नलिखित विचारों को भी ध्यान में लाया जा सकता है।

विधायिका के सदस्यों से निर्मित कार्यपालिका की नेतृत्वकारी स्थिति को समाप्त किया जाए।

राज्य संरचना के सभी हिस्सों, यानि विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका, प्रशासन की समान स्थिति हो।

डेमोक्रेसी का प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल मानता है कि सभी प्रक्रियाओं (सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक आदि) में प्रतिनिधि संस्थायें चुनाव के जरिये निर्वाचित हो जहाँ समाज का प्रत्येक सदस्य चुनाव लड़ने का अधिकार रखता है। चुनाव प्रक्रियाओं में सभी स्तरों पर किसी भी एसोसिएशन, संस्था, पार्टी या ग्रुप को किसी प्रकार की विशेष स्थिति प्राप्त नहीं हो।

सभी प्रकार के चुनाव प्रत्येक उम्मीदवार के लिए सरकारी खर्च पर हों।

मतदाताओं को अपने प्रतिनिधियों को वापिस बुलाने का अधिकार हो।

उम्मीदवार को किसी प्रकार की जमानत राशि जमा नहीं करवानी पड़े तथा इसकी जगह निर्वाचन क्षेत्र के मतदाताओं में से 5% हस्ताक्षर अपने समर्थन में पेश करने हों।

(7)

हमारी नजर में आगे का रास्ता निम्न पाँच कार्य करने में निहित है–

(क) वर्तमान पूँजी आधाारित तथा भ्रष्ट एवं अपराध निर्देशित राजनीतिज्ञों के नेतृत्व वाले लोकतन्त्र को प्रकृति-मानव केन्द्रित लोकतन्त्र में पुनर्गठित करने के लिए लोगों की समझ को बढ़ाया जाए।

(ख) वर्तमान हालात में सही और गलत में भेद करने के बारे में लोगों को सेचत किया जाए। मौजूदा कारपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था ने लोगों में ऐसी मानसिक चेतना पैदा की है जिससे मानव समाज और उसके प्रत्येक व्यक्ति ने धन, सत्ता और ताकत को हासिल करने का मुख्य उद्देश्य बना लिया है। पर्यावरणीय और मानवीय हितों की यह माँग है कि इन तीन नकारात्मक एवं नुकसानदायक प्रेरक पहलुओं के स्थान पर पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों को विकसित करने को मुख्य उद्देश्य बनाया जाए।

(ग) आम तौर पर लोगों के सभी हिस्सों में और विशेष तौर पर लोगों के उपेक्षित हिस्सों में गोलबन्दी शुरू की जाए, क्योंकि उपेक्षितों के बहुत बड़े हिस्सों को इस परिवर्तन की तुरन्त जरूरत है।

(घ) प्रत्येक वंचित ग्रुप, जैसे गाँव और शहर के गरीब, बेघर, बेरोजगार, विधवा, महिला, बाल मजदूर, शिशु बालिकाओं, अपंग, सफाई कर्मचारी, खेत मजदूर, बन्धुआ मजदूर, असंगठित मजदूर, आदिवासी, कैदी, विचाराधीन अभियुक्त, बूढ़े जिनकी सेवा करने वाला कोई नहीं हो, फैक्ट्री मजदूर भटके तत्व जैसे भिखारी इत्यादि, कर्मचारी, विद्यार्थी, युवा एवं अल्संख्यक आदि से संबंधित विकास का कार्यक्रम तैयार किया जाए।

(ड़) भारत में एवं दुनिया के अन्य देशों में उन सभी लोगों से जो सामाजिक आन्दोलन और जमीनी आन्दोलन से जुड़े हुए है, उन सभी के साथ भाईचारे का संबंध कायम किया जाए। (6.4.2005)

* * * * *

'विश्व कृषि- इसके संकट, कारण एवं समाधान' विषय पर एक पेपर नेचर-ह्युमन सेंट्रिक व्यूप्वाइंट के सम्पादक आर पी सराफ द्वारा 11-12 जून 2005 को हनुमानगढ़ (राजस्थान) में आयोजित कृषि सम्मेलन में प्रस्तुत किया गया।

विश्व कृषि : इसके संकट, कारण और समाधान

1. कृषि - एक अति महत्वपूर्ण मानवीय व्यवसाय

कृषि एक अति महत्वपूर्ण मानवीय व्यवसाय है जो एक तरफ सम्पूर्ण पर्यावरण (यानि हवा, पानी, जमीन, मौसम, जैव-विविधता जंगल आदि) की प्रक्रिया से सीधा जुड़ा हुआ है दूसरी तरफ मानवीय प्रजाति का यह जीवन आधार (मानवीय भोजन एवं स्वास्थ्य) है इस प्रकार कृषि मानवीय कार्यक्रम की उच्चतम प्राथमिकता बनती है परन्तु वास्तव में मौजूदा विश्व कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था की कार्यसूची में इसकी जगह निम्नतम् प्राथमिकता में है और इसलिए आर्थिकता में इसका तीसरा स्थान है जबकि प्रथम दो स्थान सेवा एवं औद्योगिक क्षेत्र को दिया हुआ है।

वर्तमान समाज में कृषि को तृतीय स्थान देने का बुनियादी कारण कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था की मूल धारणा में निहित है जो धन सम्पदा को ही पूँजी (यानि समाज में अति मूल्यवान वस्तु) समझती है और धन उपार्जन करना ही इसका सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य है तथा धन उत्पादकों (यानि पूँजी मालिकों) को पर्यावरण एवं मानवीय संसाधनों को अपनी इच्छानुसार उपयोग और उपभोग करने का पूर्ण अधिकार है।

2. विश्व कृषि का संकट

आज, आमतौर पर विश्व कृषि को बहुआयामी संकटों का सामना है। इस संकट को संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा मई, 2005 में जारी रिपोर्ट में देखा जा सकता है। रिपोर्ट में कहा गया (जैसा कि 29.5.05 के पेज 9 पर हिन्दू अखबार ने सार निकाला) कि सन् 1996 में विश्व खाद्य सम्मेलन द्वारा निर्धारित अंतिम सीमा सन् 2015 के मध्य तक भूखे को कम करने के प्रस्ताव के संबंध में अब तक की हुई प्रगति को राष्ट्र संघ के खाद्य एवं कृषि संगठन ने 'असंतोषजनक' कहा है।

विकासशील देशों में मौसम परिवर्तन के कारण खेती योग्य भूमि में कमी भी विश्व के भूखे लोगों की संख्या में इजाफा होने का खतरा पैदा करती है।

यह मूल्यांकन इस सप्ताह विश्व में भूखमरी पर प्रगति के पुनरावलोकन हेतु विश्व खाद्य सुरक्षा समिति के समक्ष खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट में किया गया है।

मौसम परिवर्तन के कारण भारत में 12.50 करोड़ टन दालों के उत्पादन में कमी

आयेगी जो वर्षा से हो रहे दाल उत्पादन का 18 प्रतिशत बनता है। फिर भी विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार करीब 40 गरीब विकासशील देशों की आबादी जिसकी संयुक्त आबादी करीब 2 अरब है जिसमें 45 करोड़ कूपोषित हैं, इन 40 देशों में मौसम परिवर्तन से उत्पादन में कमी के कारण कूपोषित लोगों की संख्या द्रुत गति से बढ़ जायेगी, जिससे गरीबी और खाद्य असुरक्षा से मुकाबला करने की प्रगति में कई तरह की बाधा उत्पन्न होगी।

इसका सबसे गंभीर प्रभाव सब सहारा के अफ्रीकी देशों में पड़ने की संभावना है, जो मौसम परिवर्तन के प्रभाव से बचने की या खाद्य आयात बढ़ाकर इस क्षतिपूर्ति को पूरा करने की पहले से ही कम क्षमता रखते है।

मौसम परिवर्तन के कारण 65 विकासशील देशों में जहाँ 1995 में विकासशील देशों की कुल आधी आबादी निवास करती है 28 करोड़ टन दालों के उत्पादन में कमी होने का खतरा है। इस कमी की कीमत 56 अरब डालर है जो 1995 में इन विकासशील देशों की कृषि के कुल घरेलू सकल उत्पाद का 16 प्रतिशत के बराबर है।

विश्व खाद्य सम्मेलन ने 1996 में अपना लक्ष्य निर्धारित किया था जिसकी पुष्टि सहस्त्राब्दि विकास समिति ने सन् 2000 में की है। खाद्य एवं कृषि संगठन की टिप्पणी के अनुसार ''यदि वर्तमान रुझान जारी रहता है तो सन् 2015 तक कुपोषित लोगों की संख्या आधी नहीं कर सकेंगे, यह निश्चित है।''

खाद्य एवं कृषि संगठन के मूल्याकांन के अनुसार 2000-2002 में दुनिया भर में 85.2 करोड़ लोग कुपोषित थे। 81.5 करोड़ विकासशीन देशों में, 2.8 करोड़ संक्रमणकालीन देशों में एवं 90 लाख औद्योगिक देशों में। दक्षिण एशिया और सब-सहारा के अफ्रिकन देशों में दुनिया के बहुतायत भूखे लोग हैं। विश्व खाद्य सम्मेलन का आधारभूत काल 1990-92 की दशाब्दि तक विकासशील देशों में कुपोषित लोगों की संख्या केवल 90 लाख ही घटी है। फिर भी, इन दस सालों के बाद के 5 सालों में विकासशील देशों में अति भूखे लोगों की संख्या प्रतिवर्ष 40 लाख की दर से बढ़ी है, जिससे पिछले पांच सालों में 2.7 करोड़ भूखे लोगों की संख्या में जो कमी आई थी उसका दो तिहाई भाग फिर भी सूखा ही रह गया।

यह मूल्यांकन जटिल कुपोषण से संबंधित है। फिर भी टकराहट, आर्थिक असफलता एवं प्राकृतिक विपदाओं जिसमें हाल की सुनामी शामिल है, के कारण दुनिया की आबादी के 5-10 प्रतिशत लोग अस्थाई भूख के शिकार हुए है, उपर्युक्त टिप्पणी स्वत: स्पष्ट है।

3. भारतीय कृषि की स्थिति

भारतीय कृषि की वर्तमान स्थिति की ओर मुड़े, हालांकि इससे 1950 से 2004 तक 54 सालों में कृषि उत्पादन (5 करोड़ टन से 20 करोड़ टन) चौगुना कर लिया है परन्तु इसकी कृषि विकास दर दुनिया के मानदण्ड से काफी कम है। आज भारत की कृषि को इसके (अ) सिंचित क्षेत्र और (ब) शुष्क खेती दोनों क्षेत्रों में गंभीर चुनौतियां हैं।

(अ) सिंचित खेती के समक्ष चुनौतियां

जल संसाधनों का अति दोहन

रसायन आधारित खेती की तकनीक को परम्परागत तकनीक के बनिस्पत पानी की कहीं अधिक जरूरत है। इसके सघन पैदावार पर जोर से सम्बन्धित क्षेत्र में पानी

संतुलन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। स्वाभावतया, जहाँ भूमिगत पानी काम में लिया है वहां भूमिगत पानी का स्तर नीचे गिरा है। कभी-कभी जब हल्के ट्यूबवेल काम नहीं करते तब किसानों को सबमर्सिबल पम्प लगाने के लिए करोड़ों रुपये अतिरिक्त खर्च करने पड़े।

जहाँ नहरों के जरिए पानी दिया जाता है या जहाँ भूमि जल स्तर ऊपर है वहाँ वाटर लागिंग या खारेपन की समस्या पैदा हो गई है जिससे वह क्षेत्र खेती योग्य नहीं रहा।

मिट्टी एवं पर्यावरण की गिरावट

रसायन तकनिकी भूमि स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालती है, क्योंकि इसके रसायनिक निवेश जैसे उर्वरक, रोगनाशक, नदीमनाशक आदि हालांकि फसल को बचाते है लेकिन भूमि पर एक नकारात्मक प्रभाव डालते हैं- ये मिट्टी का उपजाऊबनाने वाले सुक्ष्म जीवाणुओं की संख्या घटाते हैं, इनसे भूमि में पौधों को पर्याप्त आक्सीजन न मिलने की समस्या पैदा हुई है तथा नाइट्रेट का प्रदूषण बढ़ा है।

भूमि पतन के साथ ही, रयासनों के प्रयोग ने बहुत से पक्षी एवं जानवरों की प्रजातियों को मार दिया है, मौसम को गर्म बनाने में योगदान दिया है तथा पेड़ों की वृद्धि एवं फैलाव को नुकसान पहुँचाया है- इस प्रकार सम्पूर्ण पर्यावरणीय प्रक्रिया का पतन किया है।

रासायनिक खेती विशेषज्ञों ने तकनीक में कुछ आधुनिकीकरण करके सम्पूर्ण सूक्ष्म जीव प्रबन्ध करने को बाध्य हुए है और फसल चक्र में बदलाव लाने की पद्धति अपनाकर उक्त कमियों को कम करने की कोशिश की है इन्होंने फसलों के कचरे, जैसे लेगूम और हरी घास को खाद के रूप में लेने के सुझाव दिये है। यह परम्परागत जैविक खाद मिट्टी की उर्वरक क्षमता को कायम रख सकेगी, इससे अधिक पैदावार होगी। सूक्ष्म पोषक जीवाणुओं की उपलब्धता बढ़ेगी। रासायनिक खेती के विशेषज्ञ अब सुझाव देने लगे है कि खेती के कचरे की खाद, मुर्गी पालन से उत्पन्न खाद, प्रेस मड खाद, आदि सभी जैविक खादों का उपयोग किया जावे। यह भी कह रहे है कि गेहूँ और चावल के कचरे को जलाने की बनिस्पत पुन: मिट्टी में गला दिया जावे।

हानिकारक कीटों के बढ़ने की समस्या

रसायनों के अंधाधुप प्रयोग और सघन खेती ने हानिकारक कीटों के बढ़ने की समस्या पैदा कर दी है। इन कीटों से हो रहे नुकसान से बचने के लिए उदारता से पेस्टीसाइड्स काम में लिये जा रहे हैं इनके अति उपयोग के कारण कुछ कीटों में प्रतिरोधक क्षमता का विकास हुआ है और कुछ नए कीट पैदा हो गए हैं। नकली पैस्टीसाइड्स और कीटनाशकों ने समस्या को और गंभीर बनाया है। किसानों द्वारा अपनाई गई पैस्टीसाइड्स छिड़काव की तकनीकी में भी सुधार की आवश्यकता है। इसके लिए रासायनिक खेती विशेषज्ञ इन्टीग्रेटेड पेस्ट मैनेजमेन्ट का सुझाव रखते हैं जिसमें मैकेनिल, बायोलोजिकल और कल्चरल उपाय एवं होस्ट प्लांट रेजिस्टेन्स शामिल हैं।

दोषपूर्ण तकनीक अपनाना

नकली जर्म-प्लाजमा की खेती और चमकीले कॉटन की बोआई का परिणाम इस फसल के नए विकराल रोगाणु पैदा करने में निकला है। इस खेती ने भूजल का अधिक मात्रा में दोहन व अपव्यय भी किया। रोगग्रस्त जर्म प्लाज्मा तथा गन्ने की नुकसान दायक किस्म ने किसानों का नुकसान किया है।

उत्पादन की उच्च लागत

फर्टीलाईजर, पेस्टीसाइड्स, हर्बीसाइड्स तथा शंकर बीजों आदि निवेशों की कीमतें भयंकर बढ़ी है। निवेशों के अति उपयोग के नए हानिकारक कीटों की प्रजातियों को पैदा किया है–वीड बॉयो टाईप और पैथोजन स्ट्रेयन्स। कपास में हालियोथिश और सफेद मक्खी तथा गेहूँ में फालरिस माइनर जैसे हानिकारक कीटों ने पेस्टीसाइड्स से मुकाबला करने की प्रतिरोधकता विकसित कर ली है। निवेश का अति उपयोग उत्पादन लागत में वृद्धि करता है।

कृषि जोतों में छोटा होने के कारण आज उपलब्ध मशीने मंहगी हो गयी है। टेक्टर अक्सर बेकार पड़े रहते हैं और किसानों पर कर्ज का बोझ बढ़ाते हैं। परिणामत: यह कर्ज या तो भारत में हजारों किसानों की आत्महत्या में निकला अथवा इन मशीनों को स्थानीय बाजार में ऋण चुकाने के लिए लोहे के भाव बेचा जाता है।

फसल कटाई के बाद की व्यवस्था अपर्याप्त

खराब होने वाले फलों और सब्जियों जैसे कृषि उत्पाद भारी मात्रा में लगभग 30 से 40 प्रतिशत तक बेकार हो जाते हैं। आगे, संगठित बाजार व्यवस्था की कमी की वजह से बिचौलियों की दखलन्दाजी ज्यादा है। इसलिए, तुरन्त भारी मात्रा में संसाधन इकाईयाँ लगाने की जरूरत है। संसाधन के लिए उपयुक्त फल और कृषि विविधिता को विकसित करने की भी आवश्यकता है। माल ढोने, सड़क परिवहन, भण्डारन एवं विभिन्न कृषि उत्पादों के लिए बाजार व्यवस्था आदि संरचना की जरूरत है। इस वक्त ग्रामीण क्षेत्रों में कच्चा माल पैदा करने वाले उत्पादकों तथा संसाधन इकाईयों को जोड़ने के लिए सड़क, बिजली, संचार की व्यवस्था अपर्याप्त है तथा उपर्युक्त नये काम हाथ में लेने से पहले इनका प्रबन्ध करना आवश्यक है।

दूध उत्पादों में आगे सुधार लाने के लिए जरूरी है कि डेयरी स्तर पर दूध को ठंडा रखने की व्यवस्था हो और दूध को संसाधन इकाईयों तक पहुँचाने के लिए यातायात के साधन हो तथा दूध एवं दूध के उत्पाद का उचित मूल्य किसानों को मिले।

कृषि आधारित उद्योगों की कमी

प्रतिवर्ष 52000 करोड़ रुपयों से अधिक का खेती उत्पादों का कचरा पैदा होता है। यह बात अक्टूबर, 2004 में चैन्नई में आयोजित तीसरे भारत-आशियान व्यापार सम्मेलन में प्रस्तुत एक अध्ययन में कही गई। इसमें कहा गया कि भारत के कृषि उत्पाद का 25 प्रतिशत भाग कटाई तथा उपभोग के बीच नष्ट हो जाता है। भारतीय खाद्य संसाधन उद्योग अभी तक शुरूआती दौर में है। केवल 2 प्रतिशत फलों व सब्जियों को तथा 15 प्रतिशत दूध उत्पादकों को संसाधित किया जाता है। इसलिए, नई उभर रही समस्याओं से मुकाबला करने के लिए कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना करना जरूरी है।

निर्यात पर अपर्याप्त जोर

फल, सब्जी, फूल, आलू, बासमती चावल, गेहूँ आदि के निर्यात की भारी संभावनाएँ हैं। ऐसे क्षेत्रों को चिन्हित करने की जरूरत है जहाँ पर इन फसलों को पैदा करके तैयार एवं संसाधित किया जा सके। आगे, इनके परिवहन, भण्डारण, ढुलाई आदि की कोशिश हो ताकि उत्पादन लागत कम की जा सके।

कृषि में निर्यात के लिए, प्रान्तीय स्तर पर विशेषज्ञों की बाजार इकाई विकसित करने की आवश्यकता है, जो कृषि उत्पादों के बाजार रूझानों के प्रति पूर्ण जागरूक और परिपूर्ण हो।

घट रही भूमि जोत से कृषि विकास में बाधा

भूमि जोत में लगातार कमी कृषि विकास में एक भारी बाधा है। बढ़ती जनसंख्या के दबाव में जोत का विभाजन होता जा रहा है और वह अलाभदायक हो गई है। इन छोटी जोतों में लाभदायक तकनीक को काम में लेना असंभव होगा। हालांकि छोटे व बड़े किसान की उत्पादकता समान है परन्तु छोटी जोत होने के कारण छोटे किसान की आमदनी कम है। समय के साथ, जमीन का किराया भी कम हो गया है। भूमि मिल्कियत/ लीज के कानूनों में परिवर्तन की आवश्यकता है ताकि बड़ी जोत को विकसित किया जा सके, जैसे छोटें किसानों के 100 एकड़ के सहकारी फार्म बनाए जा सकें तथा 10 एकड़ के निजी खेत जो मध्यम किसान की मिल्कियत हो या गरीब किसानों या छोटे मध्यम किसान लीज पर लेकर खेती कर सकें।

अनुसंधान के लिए धन की कमी

बदलते कृषि परिदृश्य में अन्तर्राष्ट्रीय बाजार के लिए कृषि-माल उत्पादन के लिए उदारता से अनुसंधान संस्थाओं को धन उपलब्ध करवाया जाना चाहिए। अतिरिक्त कामगारों द्वारा किसानों के घर तक विकसित तकनीकी मुहैया करने के लिए प्रचुर धन की आवश्यकता है। भारतीय किसानों में से 70 प्रतिशत कृषि पर निर्भर है उनकी सुरक्षा के लिए सरकार को अनुसंधान/ विस्तार के लिए नीतियाँ बनाने की जरूरत है।

अपर्याप्त बीमा सुरक्षा

कृषि में बीमा की स्थिति अत्यन्त शोचनीय है। यह मुश्किल से कुल फसल का 10 प्रतिशत ही है। फसल बीमा जो जोखिम के ठीक अनुमान पर आधारित है, सभी श्रेणियों के किसानों को प्रेरित करेगी।

उत्पादकता में ठहराव

ऊपर बताए गए गैर प्रेरक पहलुओं के परिणाम स्वरूप, कृषि उत्पादकता में ठहराव और यहाँ तक कि गिरावट आई है।

किसान कर्ज एवं नशे में

कृषि उत्पादकता में गिरावट एवं आय में कमी ने किसानों को खासकर गरीब किसानों को कर्ज में डूबो दिया है। कर्ज चुकाने की असमर्थता एवं अपनी चिन्ताओं को भुलाने के लिए बड़े पैमाने पर किसान नशे का आदि हो गया है।

किसानों द्वारा आत्महत्या

कृषि के उपर के सभी नकारात्मक लक्षणों ने किसानों को हद से ज्यादा हताश कर दिया है, कृषि के विद्यमान संकट से निकलने के लगातार प्रयास के बाद अन्ततः निरन्तर चिन्ता से अपनी मुक्ति के लिए आत्महत्या करते हैं।

(ब) शुष्क खेती की चुनौतियाँ

शुष्क खेती के संबंध में, निम्नलिखित मामले लघुकालीन एवं दीर्घकालीन आधार पर हल करने की जरूरत है।

शुष्क भूमि की समस्या

शुष्क भूमि कंगाल क्षेत्र है जिसमें पेड़ पौधों के लिए जरूरी पोषण, खासकर नाईट्रोजन और फास्फोरस की कमी है। विशेषज्ञों के मुताबिक पृथ्वी की सतह पर 40 प्रतिशत की शुष्क भूमि है।

भारत में शुष्क खेती 9.7 करोड़ हेक्टर या कुल खेती योग्य भूमि 14.38 करोड़ हेक्टर का 70 प्रतिशत भाग में होती है। यहाँ तक कि सन् 2010 तक भारत की सम्पूर्ण सिंचाई क्षमता विकसित होने के बाद भी कृषि योग्य भूमि का 50 प्रतिशत वर्षा पर आधारित रहेगा। इसके उपरान्त वर्षा आधारित क्षेत्रों का बहुत हिस्सा अनिश्चित वर्षा से संबंधित है।

भारत में शुष्क खेती 40 प्रतिशत मानवीय जनसंख्या तथा 60 प्रतिशत पशुओं को मदद करता है। यह भारत के कुल खाद्य उत्पादन में 40 प्रतिशत सहयोग करती है।

शुष्क भूमि की जोते बहुत छोटी हैं। लगभग 76 प्रतिशत शुष्क भूमि के किसान दो हेक्टर से कम के मालिक है वह भी छिन्न-भिन्न एवं खण्डित है। यहाँ तक कि मामूली सा मशीनीकरण भी इन परिस्थितियों में कठिन बन जाता है।

शुष्क भूमि की मिट्टी का ऊपर से हटने के बाद पतित मिट्टी पेड़-पौधों के लिए बेकार रहती है। हर साल क्षरण के कारण मिट्टी की हानि हमारे देश में औसत लगभग 16.4 टन हेक्टयर रहती है। यह शुष्क भूमि की मिट्टी के गैर उपजाऊपन की विशिष्ट प्रचण्डता दर्शाती है।

उत्पादकता वृद्धि में मिट्टी का कटाव होना तथा इसका जारी रहना सबसे ज्यादा गंभीर समस्या है। भारत के 32.9 करोड़ हेक्टेयर भौगोलिक क्षेत्र में से 17.5 करोड़ हेक्टेयर भूमि विभिन्न तरह के भूमि कटाव से ग्रसित हैं।

शुष्क खेती में पशुपालन व्याप्त है। इसलिए खाद्य सुरक्षा जितना ही चारा उत्पादन मनुष्य और पशु के जीवित रहने के लिए आवश्यक है।

जल संग्रहण

जल संग्रहण की संभावना काफी है यहाँ तक कि जहाँ वर्षा कम होती है वहाँ भी। भारत में वर्षा से 40 करोड़ हैक्टेयर मीटर पानी भारत की मिट्टी के बराबर बरसता है। भौगोलिक स्थिति के कारण सतह पर बहने वाले 40 प्रतिशत पानी को बड़े जलाशयों में संग्रहित किया जा सकता है। (सिंचाई आयोग की रिपोर्ट के अनुसार)

वर्षा के पानी को सिंचाई के लिए छोटे पैमाने पर वाटरशेड द्वारा संग्रहित किया जा सकता है। (वाटरशेड एक भूमि क्षेत्र है जहाँ सतह के जल को एक ही जगह से निकाला जाता है। एक क्षेत्र जहाँ पानी नदी द्वारा निकलता है बड़ा वाटर शेड है, जबकि झरनों एवं नालों द्वारा बहता पानी मध्यम दर्जे का वाटर शेड है।) संग्रहित पानी को सुखे से प्रभावित फसलों को दिया जा सकता है। कृषि पर राष्ट्रीय आयोग ने वाटर शेडों द्वारा पानी संग्रहित करने का सुझाव दिया है।

शुष्क खेती की उत्पादकता बढ़ने और स्थिरता के अलावा बहते पानी के संग्रहण से मिट्टी कटाव रुकेगा, जल संग्रहण क्षेत्र की जल स्थिति अच्छी होगी, संकट के समय आवश्यक पानी उपलब्ध रहेगा और भूमि में सिल्टेशन कम होगा।

भूमि उपयोग व्यवस्था

सारी शुष्क भूमि खेती के लिए उपयोगी नहीं है, कुछ भूमि चारागाह, और बाकी बागवानी, कृषि-जंगलात के लिए उपयोगी है। बदल-बदल कर भूमि उपयोग करने की व्यवस्था में खतरा कम हैं, यह विशेषतौर पर सीमान्त भूमि के लिए अधिक उत्पादक व आमदनी वाली व्यवस्था है।

शुष्क खेती की तकनीक मिट्टी की विशिष्टता से निकटता से जुड़ी है और क्षेत्र दर क्षेत्र बदलती रहती है साथ ही यह मिट्टी की किस्म व क्षेत्र की वर्षा के तरीके पर निर्भर करती है।

खेती के लिए भूमि उपयोग का चुनाव भूमि की क्षमता, परिस्थिति और बाजार स्वीकृति एवं मांग पर निर्भर होगी।

विकसित फसल किस्म, फर्टिलाईजर उपयोग, समय पर कृषि कार्य, विकसित फसल तकनीकी के मुख्य तत्व हैं। फसल विविधता किसी भी भूमि उपयोग प्रणाली का अनिवार्य तत्व है। पेड़ों या चारगाह फसलों का जलसंग्रहण क्षेत्र के आधार पर कृषि से अच्छा मेल है।

शुष्क भूमि और गरीबी

भारत में शुष्क खेती गरीबी से अविच्छन्नरूप से जुड़ी है। खेती योग्य 70 प्रतिशत भूमि आबादी के 50 प्रतिशत भाग को जीने योग्य बनाती है, यह तथ्य स्वयं स्पष्ट है। तार्किक तौर पर इसका समाधान एक तरफ पर्यावरण को संरक्षित करने में और दूसरी तरफ लोगों की माली हालात व राष्ट्रीय आर्थिकता ठीक करने में होगा।

स्पष्टतया, इस अतिविशाल कार्य को पारम्परिक अफसरशाही तरीके से हल नहीं किया जा सकता। यह मनोवृति और व्यवहार में बुनियादी परिवर्तन की मांग करता है। सबसे पहले भूमि के क्षरण को आगे रोकने और उसे पुन: उत्पादक बनाने के लिए लोगों की भागीदारी पूर्व शर्त हैं यह न सिर्फ क्षेत्र की विशालता से जरूरी है बल्कि (यदि इसे हाथ में न लिया तो) इसके विशाल होने के रूझान के कारण भी जरूरी है। आगे भूमिहीनों की भारी संख्या का विद्यमान होना, इस समस्या में अन्य आयाम जोड़ता है। बंजर भूमि का बहुत बड़ा भाग सरकार की मिल्कियत में होने और साथ ही साथ बहुत से लोगों की व्यक्तिगत मिल्कियत में होने की समस्या में जटिलता आती है। अन्य मुद्दा जल संग्रहण कार्यक्रम को लागू करने का है क्योंकि इससे संबंधित भूमि विभिन्न मालिकों के बीच बंटी हुई है।

उपर्युक्त बाधाओं को पार करने और समस्या को सही ढंग से हल करने के लिए यह जरूरी है कि निम्नलिखित कदम उठाए जाए–

(क) ग्रामीण इलाकों के चुनिन्दा स्थानों पर सूचना केन्द्रों को खोलकर शुष्क खेती के समाजशास्त्र का प्रचार करना और गाँवों, क्षेत्रों तथा देश के लिए इसके लाभदायक प्रभावों को बताना।

(ख) विभिन्न श्रेणी के किसानों को कई तरह के प्रोत्साहन देना। जैसे बेकार पड़ी खेती योग्य भूमि (वनों एवं सार्वजनिक के अलावा) और सरकारी, वन या चारागाह भूमि और गैर कानूनी तरीके से हथियाई गई भूमि को भूमिहीनों में (भूमि वितरण कमेटियों के जरिये जिसमें 50 प्रतिशत आरक्षण भूमिहीनों का हो, के जरिये) वितरित करना, साथ ही

पशुओं, कृषि औजारों और अन्य निवेश की जरूरतों के लिए वित्तिय सहायता देना, शुष्क भूमि किसानों के ऋण बोझ को कम करना, जरूरतमंदों को शाख सुविधाएँ प्रदान करना आदि।

(ग) संबंधित लोगों को कोपरेटिव में संगठित करना और प्रत्येक गाँव में शुष्क खेती की समस्याओं को हल करने के लिए एसोसिशेन (ग्राम विकास मण्डल, जी वी एम) का गठन करना।

(घ) मालिकाना की विभिन्न हैसयित से ऊपर उठ कर शुष्क खेती की सम्पूर्ण प्रक्रियाओं के लिए गांव समुदाय में जिम्मेवारी की भावना बैठाना।

(ड) महिलाओं को उनके पतियों के साथ जमीन मालिक बनाकर शुष्क खेती आन्दोलन को संगठित करने में औरतों को शामिल करना।

(च) मिट्टी और वर्षा के पानी को राष्ट्रीय सम्पदा स्वीकार करते हुए जल संग्रहण आधारित शुष्क खेती के सहकारीकरण को प्रोत्साहन देने के लिए आवश्यक कानून बनाना और विविधिताओं को हल करना। कॉपरेटिव में बंधकर एक ग्राम समुदाय जलसंग्रहण आधारित संसाधनों के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं। इसके संरक्षण और प्रभावी उपयोग में शामिल हैं, जल संसाधन विकास, बेकार भूमि का विकास, मिट्टी एवं पानी संरक्षण, कृषि विस्तार, जैव-गैस, जंगल-खेती तथा बचत/शाख योजना।

4. विश्व कृषि संकट के निहित कारण

उपर्युक्त संकट का मूल कारण मौजूदा रसायन आधारित कृषि तकनीक में निहित है। इस तकनीक का बुनियादी कृषि निवेश यानि, उर्वरक, रोगनाशक एवं कीटनाशक अत्यधिक रासायनिक हैं जो एक तरफ मिट्टी में मौजूद जैविक पौषक तत्वों को नष्ट करता है एवं फसल समर्थक जीवों को समाप्त कर देता है, नतीजन मिट्टी की गुणवत्ता में कमी आती है और अन्ततोगत्वा उसे बंजर भूमि में बदल देती है तथा दूसरी तरफ पानी की अत्यधिक खपत के जरिए जल संसाधनों में कमी आती है। पंजाब में इस रासायनिक खेती की तकनीकी के लागू हुए 40 सालों (1964-2004) में इस तकनीक ने कृषि के सभी मुख्य घटकों, यानि, पर्यावरणीय संसाधन, मानवीय स्वास्थ्य, फसल उत्पादकता, वित्तीय वृद्धि, कृषि ढाँचा आदि को नुकसान पहुँचाया। उन सभी देशों में जहां रसायन आधारित कृषि तकनीक का उपयोग किया गया है। वहां समान किस्म के नकारात्मक प्रभाव व्यवहार में दिखाई पड़ते हैं। रयासन आधारित कृषि तकनीक की अत्यधिक कारगुजारी ने 21 वीं सदी के शुरू में ही कृषि को मृत्युशैया पर ला खड़ा किया है। फिर भी मौजूदा विश्व कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था के सभी उच्चस्थ नियंत्रणकर्ताओं द्वारा यह मानने के बजाए कि उनकी प्रतिपादित रासायनिक कृषि नीति की धारणाएं एवं भूमिका समग्र रूप से नकारात्मक रही हैं, उल्टा इस वास्तविका को छुपाने में अति उत्साह से लगे हुए हैं और यह प्रचारित कर रहे हैं कि रासायनिक कृषि तकनीक की मौजूदा खेती की सभी कमियां नई खोजी जा चुकी आनुवांशिक परिष्करण (जेनेटिक मोडिफिकेशन या जी.एम.) या प्रजनन परिवर्तन (ट्रांसजेनिक परिवर्तन जिसकी वास्तविक स्थिति का वर्णन अगले अध्याय में किया गया है) की तकनीक द्वारा ठीक कर दी जाएगी।

यह ध्यान देने योग्य है कि रासायनिक खेती की सम्पूर्ण वास्तुकला बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा सोची समझी गई तथा उत्पादित की गई, जिनका शुरू से लेकर आज

तक लगातार इस रासायनिक खेती की तकनीक पर एकाधिकार चला आ रहा है। समस्त संसार में कारपोरेट पूँजीवादी नेतृत्व वाली सरकारों ने अपने-अपने राष्ट्रीय कृषि क्षेत्रों एवं नीतियों में आधारशिला के रूप में इस रासायनिक खेती की तकनीकी को जब से इसका उद्‌भव हुआ है तबसे इस अपनाया है।

रासायनिक तकनीक की शुरूआत से ही कॉरपोरेट पूँजीवादी सरकार तथा व्यापारियों के नेता यह कहते और प्रचारित करते आ रहे है कि 20 वीं शताब्दी की यह 'हरित' क्रांति है। वे इसे लगातार चरित्रित करते रहे हैं कि मानवता को सदा के लिए भूख से मुक्त करेगी और हमेशा के लिए खाद्य सुरक्षा प्रदान करेगी। परन्तु ये सभी बड़बोले दावे धाराशाही हो गये हैं। इस चमत्कारित कृषि तकनीक के लागू होने के 40 साल बाद भी कृषि के क्षेत्र में दुनिया के सामने भयानक समस्या मुंह बाए खड़ी हैं।

अन्य सभी कारण जैसे-संसाधनों और निवेश के उपयोग में कुशलता और निपूर्णता की कमी, कमजोर ढाँचागत सुविधाएं (जैसे–बिजली, परिवहन, भण्डारण इत्यादि) अपर्याप्त ऋण सेवाएं, सूदखोरों की अधिक ब्याज दरें, अपर्याप्त फसल बीमा सेवा, भारत के कुल निर्यात में कृषि का न के बराबर हिस्सा, किसानों की आवश्यकताओं के अनुसार शोध में कमी, किसानों को आधुनिक खेती की तकनीक तथा बाजार की कीमतों के बारे में सूचना न मिलना, कृषि विपणन व्यवस्था का कमजोर होना, ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा में कमी, गरीबी, बेरोजगारी, पुराने पड़ चुके रीति-रिवाज इत्यादि कृषि नीति के कूप्रबन्धन की अभिव्यक्तियाँ है।

5. विश्व कृषि संकट से उभरने के दो वैकल्पिक रास्ते

(अ) जी.एम. या ट्रांसजेनिक खेती

आनुवांशिक परिष्कृत (जीएम) या परा प्रजनन (ट्रांसजेनिक) खेती एक नया आविष्कृत कृषि मॉडल है। विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) ने कृषि क्षेत्र में दुनिया की कृषि समस्याओं के हल के रूप में इसे एक बड़ी छलांग के रूप में मान्यता दी है। व्यापार बाजार, वित्तीय समस्याओं, संयुक्त राष्ट्र एवं सभी राष्ट्रीय सरकारों ने इसका समर्थन किया है।

यह याद करना दिलचस्प रहेगा कि 40 साल पहले जब रसायन आधारित खेती की तकनीक सामने आई थी तब खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) एवं अन्य कृषि विशेषज्ञों ने ऐसी ही प्रशंसा की थी। उस समय रासायनिक तकनीक को 20 वीं शताब्दी की 'हरित क्रांति' उद्‌घोषित किया गया था।

अब यह बिल्कुल स्पष्ट है कि इस रसायन आधारित तकनीक और इसके उत्पादों ने करीब-करीब सभी पर्यावरणीय पहलूओं (जमीन, पानी, जैव-विविधता, मौसम, जंगल आदि) तथा मानवीय स्वास्थ्य को भारी नुकसान पहुंचाया है, बल्कि मुट्ठी भर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को ही एकमात्र लाभ पहुँचाया है, जिनका इस तकनीक पर लगातार एकाधिकार चला आ रहा है और इनके उत्पादों (रासायनिक उर्वरक, रोगनाशक व कीटनाशक दवाईयों) पर दुनिया की करीब-करीब सभी सरकारों से प्रतिवर्ष अरबों डालर का अनुदान प्राप्त किया जाता रहा है। पर्यावरणीय संसाधनों के क्षीण होने के तथ्य सारी दुनिया के जाने-माने सभी कृषि विशेषज्ञों (एफएओ सहित) ने अब स्वीकार कर लिया है। अत्यधिक युक्तिसंगत वर्णन किये जाने योग्य तथ्य यह है कि किसी भी कृषि एजेन्सी या विशेषज्ञ ने

उंगली उठाकर यह मांग नहीं कि कम से कम प्रयोगशाला के स्तर पर रासायनिक कृषि तकनीक को जांचा जाए। प्रत्येक ने चुपचाप एक नये कृषियुग के अग्रदूत के रूप में इसे स्वीकार कर लिया। परन्तु अब इसकी कारगुजारी के 40 वर्ष बाद कृषि को वर्तमान बहुपक्षीय संकट से उभारने के लिए इनमें से प्रत्येक एक नया सूत्र खोजने में लगे हुए हैं।

पुनः, जीएम या ट्रांसजेनिक (परा प्रजनन) का नया फार्मूला इन्हीं बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा दिया गया है जो इन्हीं कम्पनियों में कार्यरत कृषि विशेषज्ञों द्वारा की गई खोज पर आधारित है। परन्तु समय पूर्व की स्थिति से बिल्कुल भिन्न स्थिति है। यद्यपि खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) के और कुछ अन्य विशेषज्ञों ने विश्व की कृषि समस्याओं के हल के रूप में उपर्युक्त तकनीक का स्वागत करना शुरू किया है परन्तु दुनिया का आधा वैज्ञानिक समुदाय तथा सभी पर्यावरणवादी एवं मानवतावादी समुदायों ने जीएम तकनीक को यह चरित्रित करते हुए इसका विरोध किया है कि यह पर्यावरणीय एवं मानव के लिए हानिकारक है। दुनिया के कॉरपोरेट समुदाय और इसके चहेतों की इच्छा है कि विश्व समुदाय नई कृषि तकनीक को रसायन आधारित तकनीक की तरह ही चुपचाप स्वीकार कर लें।

प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण मानता है कि कृषि-विशेषज्ञों, पर्यावरणवादी और मानवाधिकार ग्रुपों, किसानों तथा अन्य रूचि रखने वाले लोगों द्वारा निम्न बिन्दुओं पर प्रत्येक देश के विभिन्न भागों और क्षेत्रों में विश्वव्यापी बहस चलाई जाए।

(क) क्या कृषि को बाजार-आधारित या पर्यावरण-मानव आधारित होना चाहिए?

(ख) दुनिया के विभिन्न भागों और क्षेत्रों में मौजूद विश्वव्यापी भूख और कूपोषण का कारण कहां निहित है। दुनिया के 1/5 भाग के लोगों की भूख का कारण अपर्याप्त खाद्य उत्पादन है या अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था।

(ग) एक न्यायपूर्ण और उचित कृषि नीति को कोई कैसे परिभाषित करे?

(ब) पर्यावरण-मानव अभिमुख (या जैविक) कृषि

उपर्युक्त दृष्टिकोण मानता है कि जैविक खेती एक ऐसी उत्पादन पद्धति का प्रतिनिधित्व करती है जिसमें हर तरफ सभी पर्यावरणीय संसाधनों की उचित सुरक्षा और उसका संवर्द्धन किया जाता है और दूसरी तरफ मानवीय हितों की सेवा करती है और उन्हें पूरा करती है। जैविक खेती के मुख्य लक्षण निम्नलिखित हो सकते है।

परिभाषा

सरल परिभाषा के रूप में जैविक खेती कृषि उत्पादन की एक व्यवस्था है जो सभी कृत्रिम निवेशों के उपयोग को प्रतिबन्धित करता है, मिट्टी को उपजाऊ बनाता है तथा फसल चक्र के विविधिकरण को आवश्क बनाता है एवं बहु-फसल (**Inter Croppuing**), घासचारा एवं फसल व पशुओं के बीच पूरक एकता की तकनीक अपनाता है। यह कृषि-जलवायु व्यवस्था, स्वास्थ्य, जैव-विविधता सहित जैविक चक्रों एवं मिट्टी की जैविक गतिविधि को संवर्द्धित एवं विकसित करता है। जैविक खेती का उचित प्रबन्ध जल-प्रदूषण को घटाता या समाप्त करता है तथा खेत में पानी और मिट्टी को संरक्षित करने में मदद करता है। कुछ विकसित देशों में मसलन, जर्मनी, फ्रांस ने जल-प्रदूषण की समस्या का हल करने के रूप में जैविक तकनीक को काम में लेने के लिए किसानों पर दबाव डाला है या अनुदान का सहारा लिया है।

बहुत से देशों के कृषि क्षेत्र में जैविक खेती का महत्व बढ़ता जा रहा है, बिना इस पर ध्यान दिए कि उनका विकास स्तर क्या है, तथापि अभी तक जैविक खेती एक छोटा उद्योग ही है। आस्ट्रिया और स्वीटजरलैण्ड में जैविक खेती का प्रतिनिधित्व खाद्य व्यवस्था में 10 प्रतिशत है जबकि अमेरिका, फ्रांस, जापान व सिंगापुर में इसकी वृद्धि दर 20 प्रतिशत सालाना से अधिक हो चुकी है।

जैविक उत्पादों की मांग ने विकासशील दुनिया के लिए नये निर्यात अवसरों को भी पैदा किया है। विभिन्न खाद्यों की सालाना मांग शुरू होने से किसी भी देश के लिए यह असम्भव हो गया है कि वे अपनी सभी जैविक खाद्य की जरूरतों को घरेलू उत्पादों से पूर्ण कर सके। बहुत से विकासशीन देशों ने जैविक उत्पादों के लिए इन आकर्षक बाजारों की जरूरतों को पूरा करना शुरू कर दिया है। मसलन यूरोप के शिशु खाद्य उद्योग की पूर्ति के लिए उष्णकटिबन्धीय फल, दक्षिण अफ्रिका के लिए जिम्बावे की जड़ी-बूटियां, यूरोपीय समुदाय के लिए अफ्रीकी कपास, नीदरलैंड के लिए चीन की चाय और जापान के लिए चीन की सोयाबीन निर्यात होती है।

परिवर्तन के शुरूआती दौर में कठिनाईयाँ

तार्किक तौर पर किसान यह अनुभव करते हैं कि कृत्रिम निवेशों को नकारने से एवं उनकी खेती को जैविक उत्पादन में बदलने से उन्हें उत्पादकता में कुछ नुकसान उठाना पड़ता है। पूर्णतया जैविक गतिविधि स्थापित करने से पहले (मसलन, लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि, नाइट्रोजन पोषित गाठंदार जड़ें) सामान्य तौर पर रोगाणुओं को समाप्त करने एवं उपजाऊपन की समस्या बनी रहेगी। कहीं-कहीं जैविक उत्पादन को सम्भव बनाने के लिए जलवायु व्यवस्था को पुन: स्थापित करने में सालों लग सकते हैं। ऐसे मामलों में शुरूआत में अन्य टिकाऊ तरीको–जो कृत्रिम रसायनों के न्यायिक उपयोग की इजाजत देते हैं, अधिक अनुकूल रहेंगे। एक रणनीति के अनुसार किस्तों में खेतों की जैविक उत्पादन में तब्दील किया जा सकता है ताकि सम्पूर्ण खेती को दाव पर न लगाना पड़ें। अधिकांश अध्ययनों ने पाया कि परम्परागत खेती की बनिस्पत जैविक खेती के लिए काफी मात्रा में श्रम निवेश की जरूरत है। इसलिए जैविक खेती में विशेष तौर पर पाई जाने वाली फसल विविधता एवं उनकी विभिन्न बोवाई तथा कटाई के समय सारणी श्रम की मांग का अधिक समान वितरण कर सकती है जिसमें रोजगार का स्थायित्व प्रदान करने में मदद मिल सकती है। जैसा कि सभी कृषि व्यवस्थाओं में है, उत्पादन में विविधता आय के अवसरों को बढ़ा देती है तथा परिवार के भोजन में स्वास्थ्य रक्षक खनिज एवं विटामिन की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है जैसा कि फलों के मामले में है। यह फसलों के बड़े स्तर पर होने वाले नुकसान के जोखिम को भी कम करता है।

तथापि, जैविक खेती वाले किसानों को भारी अनिश्चिता का सामना है। उत्तरी अमेरिका के 73 प्रतिशत जैविक खेती करने वाले किसानों के अनुसार सूचनाओं का अभाव जैविक तब्दिली में एक बड़ी बाधा है। विस्तार अधिकारी जैविक तरीकों के लिए मुश्किल से ही पर्याप्त प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं तथा अध्ययन यह बताते हैं कि वे कभी-कभी किसानों को जैविक खेती करने के लिए हतोत्साहित भी करते हैं और आगे, विकासशील देशों में संस्थागत समर्थन नहीं के बराबर है। सम्पूर्ण उत्पादन के दौरान किसानों की मदद देने योग्य पेशेवर संस्थाएं, उत्पादन के बाद एवं विपणन प्रक्रिया बहुत से विकासशील देशों

में अस्तित्व में ही नहीं है। ऐसे हालात में यह बहुत ही मुश्किल है कि काश्तकार किसान आवश्यक श्रम निवेश करे एवं परिवर्तन काल की कठिनाइयों का भार उठाए, जब तक कि उसे यह गारण्टी ना हो कि जब जैविक उत्पादन के लाभ मिलने लगेंगे उसके बाद के सालों में उसे भूमि में काश्तकारी से हटाया नहीं जाएगा।

प्रभावशाली लाभांश

विशेष तौर पर, जैविक निर्यात प्रभावशाली लाभांश सहित बिकते हैं, प्राय: समान तरह के गैर जैविक उत्पादों की तुलना में 20 प्रतिशत अधिक कीमत पर जैविक उत्पाद बिकते हैं। फिर भी अन्ततोगत्वा जैविक उत्पादों का लाभ बदलता रहता है, तथा कुछ अध्ययनों का मूल्यांकन है कि इसका लाभ दीर्घ-काल में मिलता है। तथापि उचित हालात में जैविक खेती से बाजार से मिलने वाले लाभ के बल पर परिवार की आय बढ़ाकर स्थानीय खाद्य सुरक्षा में योगदान मिल सकता है। फिर भी, इस आकर्षक बाजार में प्रवेश पाना इतना आसान नहीं है। किसान एवं कृषि व्यापारी अपने उत्पादों को विकसित देशों में बेचना चाहते हैं उनके लिए आम तौर पर यह आवश्यक हो जाता है कि वे जैविक प्रमाण पत्र एजेन्सी को किराये पर लें और प्रतिवर्ष जाँच के द्वारा यह पुष्ट करवायें कि उसका उत्पाद विभिन्न व्यापारिक साझेदारों द्वारा स्थापित मानदण्डों के अनुकूल है।

पर्यावरणीय उपलब्धियाँ

अधिकांश जैविक किसानों का प्रेरणा स्त्रोत आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति के अलावा भी है–इनका उद्देश्य जमीन, पशु एवं पौधों में अन्तरक्रिया को बढ़ाना, प्राकृतिक पोषण एवं ऊर्जा प्रवाह को संरक्षित करना तथा जैव-विविधता को विकसित करना है। ये सभी बिन्दु टिकाऊ खेती के लिए योगदान करने वाले हैं।

इनमें जल-जमीन में क्षरण, ठोसपन, खारेपन एवं गिरावट के अन्य कारणों से मुकाबला करने के लिए बहुत सी जल एवं मिट्टी की सुरक्षा एवं संरक्षण की तकीनीकों को अपनाया जाता है। इसके द्वारा फसल चक्र, जैविक खाद एवं घास के उपयोग से मिट्टी की संरचना का विकास होता है तथा मिट्टी में हष्ट-पुष्ट सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या बढ़ती है। मिश्रित एवं कड़ीबद्ध (Relay crop) फासल बोवाई से अधिक समय तक लगातार मिट्टी ढकी रहती है और इस प्रकार वर्षा, हवा और सूर्य की क्षरण शक्ति के लिए मिट्टी का नंगा रहना बहुत कम समय के लिए रह पाता है।

जैविक किसान कृत्रिम (रासायनिक) रोग नाशकों की बनिस्पत प्राकृतिक रोगाणु नियंत्रकों–मसलन, जैविक नियंत्रण, रोगाणु नियंत्रक गुण वाले पौधों का भी उपयोग करते हैं। कृत्रिम रोग नाशकों का जब गलत उपयोग होता है तब लाभदायक जीवों को भी ये समाप्त कर देते हैं, रोगाणु प्रतिरोध क्षमता घटा देते हैं और प्राय: जल जमीन को प्रदूषित कर देते हैं। जहरीलें कृत्रिम रोगाणुनाशकों–जो प्रतिवर्ष तीन करोड़ लोगों को जहर से ग्रसित करते हैं–का उपयोग कम करने से किसान परिवारों का स्वास्थ्य अच्छा होने की तरफ बढ़ेगा। कृत्रिम नाइट्रोजन उर्वरकों (रासायनिक खादों) का उपयोग समाप्त करने से पानी में नाइट्रोजन प्रदूषण का जोखिम काफी हद तक कम हो जायेगा जबकि फसल चक्र परिवर्तन रोगाणुओं और बिमारियों को नियंत्रित करने एवं उपजाऊपन को बनाए रखने वाला विस्तृत रूप से काम में आने वाला तरीका पहले से चला आ रहा है। अधिकांश प्रमाणीकरण के कार्यक्रम खनिज उर्वरकों के उपयोग पर रोक लगाते हैं जबकि खेतों में

जैविक खाद पैदा करने में मदद करने के लिए यह एक आवश्यक सहायक है। फिर भी खेत से बाहर प्राकृतिक एवं जैविक उर्वरकों-मसलन, रॉक फास्फेट, पोटाश, गुवानों, समुद्री शैवाल, बूचड़खानें के उप-उत्पाद, जमीनी चूना पत्थर, लकड़ी की राख का भी उपयोग किया जाता है।

अन्त में फसल चक्र खाद्य फसलों की विविधता, चारा एवं कम प्रयुक्त पौधों को संवर्द्धित करता है जो कुल मिलाकर खेत में उत्पादन और उपजाऊपन को विकसित करते हैं, इसके अलावा खेत में पौधों के आनुवांशिक संसाधनों को संरक्षित करने में मदद दे सकता है। इस व्यवस्था में पशुओं को जोड़ने से जैविक मांस, अण्डे, दूध उत्पाद इसी तरह भारवाही पशु शक्ति के जरिये-आय में बढ़ोत्तरी होती है। इस व्यवस्था में तीन फसलें, एवं खेत पर वन उपज को जोड़ने से छाया एवं वायु प्रवाह में रुकावट उपलब्ध होगी, जबकि भोजन, आय, ईंधन और लकड़ी भी उपलब्ध होगी। जैविक कृषि की विविधता में कृषि-मछली पालन का जुड़ाव भी हो सकता है।

जैविक खेती-हजारों वर्षों की परम्परागत खेती

वास्तव में जैविक खेती कोई नया आविष्कार नहीं है। यह परम्परागत कृषि उत्पादन का तरीका है जो पिछले 10 हजार सालों के व्यवहार से वर्तमान स्तर तक विकसित हुआ है। 40 साल पहले तक यह दुनिया में प्रभुत्वकारी कृषि उत्पादन की व्यवस्था थी। फिलहाल कॉरपोरेट और सत्ताधारियों को जैविक खेती रास नहीं आ रही है।

6. विकास मॉडल में कृषि को प्रथम स्थान दिया जाना

एक तरफ कृषि (मनुष्य के खाद्य एवं स्वास्थ्य से सम्बन्धित) का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है और दूसरी तरफ सभी पर्यावरणीय संसाधनों–यानि, जल,जमीन, जलवायु, जंगल, जैव-विविधता, आदि को ध्यान में रखते हुए यह अत्यन्त आवश्यक है कि पूँजी निवेश, ग्रामीण ऋण, नीची दरों की किस्तों वाली फसल बीमा, निर्यात प्रासंगिक तकनीक, जैव बीज एवं जैविक निवेश, भूमि सुधार आदि के मद्देनजर विकास मॉडल में जैविक निर्देशित खेती को प्रथम स्थान दिया जाए।

7. वर्तमान कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था को बदलने की सामाजिक आवश्यकता

मानव समाज में कृषि को उचित स्थान दिलाने के लिए यह आवश्यक है कि पूँजी (यानि, धन और सम्पत्ति) निर्देशित कॉरपोरेट व्यवस्था को इसके दोगलेपन की शैली (यानि कहना कुछ और करना कुछ) वाली व्यवस्था को बदलकर उसके स्थान पर प्रकृति-मानव निर्देशित सामाजिक व्यवस्था कायम करना जिसकी दो सर्वोच्च प्राथमिकताएं–यानि, पर्यावरण और मानव है तथा जो पाँच मूलभूत सिद्धान्तों–यानि, पर्यावरण-संवर्धन, उचित समानता (यानि कॉरपोरेट पूँजीवादी राजनीतिक पार्टियों और व्यापारिक घरानों के स्थान पर जनता का सशक्तिकरण करना, प्रत्येक वंचित और गरीब व्यक्ति की सामाजिक सुरक्षा करना तथा अपनी आमदनी के बेतुके फर्क को 1 : 5 के तर्कसंगत फर्क की सीमा में लाना), उत्पादकता (या वृद्धि दर), जनता के नेतृत्व वाले जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता की पालना करती है।

8. सार संक्षेप

ऊपर जो कुछ कहा गया है उसके बारे में संक्षेप में कोई कह सकता है कि रसायन आधारित खेती ने पंजाब तथा दुनिया की खेती का बहुत नुकसान किया है, जिसकी पूर्ति नहीं की जा सकती है। जीन्स तब्दीली (जीएम) निर्देशित तकनीकी पंजाब और दुनिया की खेती को और अधिक तबाह कर देगी, इससे बाहर निकलने का रास्ता सिर्फ प्रकृति-मानव केन्द्रित (या जैविक) खेती ही है।

* * * * *

जम्मू-कश्मीर के भविष्य की संभावनाओं पर वाशिंगटन सम्मेलन के लिए विचार हेतु एक संक्षिप्त टिप्पणी

(1)

इस संक्षिप्त टिप्पणी का केन्द्र बिन्दु यह है कि जम्मू-कश्मीर समस्या से संबंधित तीनों पक्ष यानि भारत, पाक, व जम्मू-कश्मीर के लोगों के हितों को समायोजित करने वाले समझौते का फार्मूला ही एक मात्र रास्ता है जो जम्मू-कश्मीर समस्या का न्यायिक व वास्तविक हल निकालने का आधार बन सकता है ऐसा इसलिए है क्योंकि, अंतरनिर्भर देशों या राष्ट्रों वाले नए उभरे विश्व में द्विपक्षीय या बहुपक्षीय विवादों का एक पक्षीय समझौता टिक नहीं पाता और यदि सैनिक ताकत से संबंधित पक्षकारों पर एक पक्षीय समझौता लाद भी दिया जाए तो लम्बे समय तक चल नहीं पाता–इस प्रकार ऐसा एक पक्षीय समझौता न केवल संबंधित पक्षकारों को बल्कि उनके पड़ौसियों और दोस्तों के हितों को भी नुकसान पहुँचता है तथा अंत में समझौता ही समाप्त हो जाता है। यह तत्कालीन समय की बहुत सी टकराहटपूर्ण विवादास्पद घटनाओं के निष्कर्ष से बखूबी जाहिर होता है जैसे अफ्रीका में इरीटिया-इथोपिया सीमा विवाद, दक्षिण पूर्व एशिया में इन्डोनेशिया-मलेशिया में झगड़ा, दक्षिण अमेरिका में पेरू-अर्जेन्टीना में संघर्ष आदि। आगे, यूरोप के कई ऐसे मामले प्रस्तुत करता है जहां झगड़ने वाले पक्षों ने अंत में समझौते वाले भिन्न-भिन्न रास्ते निकाले। जिनमें कुछ निम्न है–(i) सन् 1921 के समझौते में फिनलैण्ड एवं स्वीडन के बीच आलैण्ड द्वीप समूहों पर प्रभुसत्ता का अधिकार हासिल रहा तथा स्वीडिश आबादी को अपने मामलों का प्रबन्ध करने की स्वायत्तता हासिल रही। (ii) सन् 1946, 1969 के समझौते से दक्षिण ट्रोयल मॉडल आस्ट्रिया व इटली के बीच स्थापित हुआ जिसके जरिए इटली को दक्षिण ट्रोयल पर प्रभुसत्ता का अधिकार रहा तथा जर्मन नस्ल के लोगों को अपने मामलों का प्रबन्ध करने का अधिकार रहा। (iii) सन् 1954 के समझौते से यूगोस्लाविया व इटली के बीच ट्रायस्ट मॉडल स्थापित हुआ जिसके जरिए ट्रायस्ट के इटली वाले भाग के लोग यूगोस्वालिया वाले ट्रायस्ट के भाग में स्वतंत्रता पूर्वक व्यापार व पर्यटन कर सकते थे। (iv) अंडोरा पर फ्रांस-स्पेन का संयुक्त नियंत्रण (v) सन् 1998 के समझौते से इंग्लैण्ड व आयरलैण्ड के बीच स्थापित उत्तरी आयलैण्ड मॉडल जिसके जरिए उत्तरी आयरलैण्ड के लोगों को निर्धारित समयावधि के बाद यह तय करने का अधिकार होगा कि वे आयरिश रिपब्लिक में शामिल होना चाहेंगे या यथास्थिति रखना चाहेंगे।

(2)

इजरायल-फिलीस्तीन की तरह जम्मू-कश्मीर की समस्या भी वर्तमान दुनियां में सबसे पुरानी समस्याओं में से एक समस्या है जिसे करीब 56 वर्ष हो चुके है, इस पूरे काल में दोनों पक्षों यानि भारत व पाकिस्तान के बीच तीखा संघर्ष रहा जिसने इनको भीषण युद्ध की ओर तीन बार धकेला है जिससे इन दोनों देशों को भारी जान माल का नुकसान उठाना पड़ा है।

लम्बे ऐतिहासिक अनुभवों से सीखते हुए कि दोनों देशों के बीच न समाप्त होने वाले घातक संघर्ष ने दोनों देशों के विकास का गला घोंटा है तथा सभी क्षेत्रों में दोनों देश पिछड़ गए है, इसलिए लगातार चले आ रहे इस संघर्ष को समाप्त करने का एक नया बोध भारत और पाकिस्तान दोनों में प्रकट हुआ है, इसने इनको प्रेरित किया है कि आपसी सभी विवादों को शांतिपूर्वक निपटाया जाए ताकि दोनों देश आपस में शांति एवं मैत्रीपूर्वक जीवन जी सके। इस नये बोध के फलस्वरूप जो डेढ़ वर्ष पूर्व ही उत्पन्न हुआ है। नतीजतन जम्मू-कश्मीर के साथ ही साथ भारत-पाक से संबंधित विवादस्पद मुद्दों पर शांति-प्रक्रिया उभर कर सामने आई है।

(3)

फिर भी, आज भारत-पाक शांति प्रक्रिया में जो उत्साह कुछ माह पहले था, उसमें कमी आई है, इस उत्साह में कमी की झलक भारत एवं पाकिस्तान से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर दोनों पक्षों के अस्थिर व्यवहार जैसे, चल रही शांति प्रक्रिया की गति के बारे में राष्ट्रपति मुशर्रफ का असंतोष, प्रधानमंत्री मनमोहनसिंह की इस प्रक्रिया में कम दिलचस्पी का इजहार, श्रीनगर मुजफ्फराबाद की बस सेवा शुरू होने के बाद नई दिल्ली द्वारा कोई नई पहल शुरू न करने से भारत-पाक के बीच बहुत से तनाव वाले विवादास्पद मुद्दों जैसे सियाचीन ग्लेशियर, सरक्रीक, बुलर बैराज, बघलियार तथा किशनगंगा बिजलीघर में से एक भी तनाव बिन्दु का न छोड़ पाने से, भारत के विदेश मंत्री द्वारा पाक अधिकृत कश्मीर में अब भी आतंकवादी ढांचे का बरकरार रहने का आरोग लगाने से, संयुक्त राष्ट संघ की सुरक्षा परिषद में भारत को स्थान मिलने के प्रयासों में भारत असफल हो जाए इसलिए पाकिस्तान द्वारा राजनयिक अभियान चलाने से प्रतिबिम्बित होता है।

(4)

नरमी एवं विश्वास अर्जित करने के संबंध में धीमी गति से या रूकी हुई भारत-पाक शांति प्रक्रिया को गतिशील करने के लिए यह आवश्यक है कि ऐसे सभी कदम जिसमें नीतिगत कोई परिवर्तन करने की आवश्यकता न हो तुरन्त लागू किए जाए। यहां, जम्मू कश्मीर के दो विभाजित भागों एवं भारत प्रबंधित कश्मीर एवं पाकिस्तान के बीच विभिन्न सड़क मार्गों को तुरन्त खोला जाए। जम्मू-कश्मीर के दो विभाजित मार्गों में व्यापार एवं वाणिज्य की प्रक्रिया निर्धारित समय से शुरू की जाए तथा भारत पाक के बीच बकाया सभी विवादों को निश्चित समयावधि में तय किया जाए।

(5)

भारत और पाकिस्तान तथा जम्मू-कश्मीर के विभाजित दोनों भागों के बीच नरमी एवं विश्वास अर्जित करने की प्रक्रिया तभी और प्रभावी बन सकती है जब इस प्रक्रिया को जम्मू-कश्मीर विशेष तौर पर घाटी में जहाँ नरमी एवं विश्वास अर्जित करने की एक नई

प्रक्रिया (जिसकी पहल अभी ली जानी है) से जोड़ा जाए। यह सामान्य स्थिति बहाल करने की नई प्रक्रिया यह सुनिश्चित करेगी कि सभी मानव अधिकारों के उल्लंघन को समाप्त किया जाए, सभी राजनीतिक बंदियों को रिहा किया जाए, अशांत अधिनियम एवं सैनिक बल विशेषाधिकार अधिनियम को वापिस लिया जाए। एक पक्षीय युद्धबंदी तथा कश्मीर घाटी में तैनात भारतीय सेना को वापिस बैरकों में लौटाया जाए, संयुक्त रूप से स्वीकृत भारत-पाक आयोग गठित किया जाए जो तीनों पक्षों यानि भारत, पाकिस्तान तथा खाड़कू ग्रुपों द्वारा किए गए मानव अधिकारों के उल्लघंन की जाँच करेगा एवं सभी पीड़ितों को या उनकी मृत्यु पर उनके परिवारों को उचित मुआवजा देने की सिफारिश करेगा, लड़ाकू ग्रुप द्वारा मानव अधिकारों का उल्लंघन करने के मामले में पीड़ितों को मुआवजे का भुगतान भारत एवं पाकिस्तान संयुक्त रूप से करेंगे।

(6)

दोनों देशों के नेताओं के संबंधित दावों के बावजूद, भारत-पाक शांति प्रक्रिया को वास्तव में गतिशील बनाने के लिए वास्तविकता की यह मांग है कि नई दिल्ली को सभी खाड़कूओं के संबंध में तुरन्त युद्ध बंद करने की घोषणा करनी चाहिए तथा उनसे अपील करनी चाहिए कि वे या तो अलग से या अन्य राजनीतिक शक्तियों के साथ जम्मू-कश्मीर समस्या को सुलझाने के लिए मेज पर बात करने आए, खाड़कुओं के प्रतिनिधियों की संख्या नई दिल्ली व संबंधित खाड़कूओं के चयनित प्रतिनिधियों के बीच बातचीत के जरिए तय की जाए।

चुनाव के मान्य अन्तर्राष्ट्रीय मानदण्डों के जरिए सभी राजनीतिक शक्तियों के महत्व को निर्धारित किया जाए। ये चुनाव सरकार व राजनीतिक दलों द्वारा स्वीकृत संयुक्त आयोग की निगरानी में कराए जाए।

जम्मू-कश्मीर की समस्या को विवादित मुद्दा मानने वाले दलों (विशेषतौर पर खंडित हुर्रियत कान्फ्रेन्स, जो अभी कई ग्रुपों से गठित है) के लिए भयंकर चुनौती का समय है। यदि विवादित मुद्दा मानने वालों का ग्रुप चुनाव (जो कि किसी भी प्रत्याशी पर राजनीतिक पार्टी का लोक महत्व क्या है यह निर्धारित करने का अन्तर्राष्ट्रीय मान्य तरीका है) में भाग नहीं लेता है तो वह नैतिक तौर पर जन विश्वसनीयता खो देगा। यदि वे खण्डित रहते हुए चुनाव में भाग लेते हैं तो वे कोई विश्वसनीय जीत हासिल नहीं कर पाएंगे। यह लोकतांत्रिक शक्तियों के लिए एक दयनीय समय होगा तथा जम्मू-कश्मीर के लोगों जिन्होंने अपने उद्देश्य को पाने के लिए महान कुर्बानी दी है, के लिए दु:खद घटना होगी।

इस समय जम्मू-कश्मीर का चरित्र विवादित मुद्दे का है, की धारणा से जुड़े सभी लोगों के लिए उचित एवं वास्तविक रास्ता एक व्यापक संयुक्त मोर्चे या एक समन्वय समिति में जम्मू-कश्मीर के मूलभूत चरित्र के प्रश्न पर एकबद्ध होने में है और बाद में तर्कसंगता एवं वास्तविकता के आधार पर अपना दृष्टिकोण तय करने की कोशिश करनी चाहिए।

(7)

जम्मू-कश्मीर समस्या से संबंधित पक्षकारों के प्रश्न पर, नई दिल्ली केवल दो (यानि भारत व पाकिस्तान को) ही पक्षकार मानती है, इस प्रकार जम्मू-कश्मीर के लोगों को पट्टाधारी या किराएदार के रूप में चरित्रित करती है, पाकिस्तान इस मुद्दे पर ढुलमुल

रुख अख्तियार करता है, जबकि विभिन्न राजनीतिक पार्टियां विभिन्न रुख अख्तियार करती है फिर भी, वास्तव में, इतिहास, समाजशास्त्र, पुरानी व नई परम्पराएं, संस्कृति, संविधान एवं कानून, सभी की यह मान्यता है कि किसी भी देश के निवासी उस क्षेत्र के स्थायी एवं वास्तविक मालिक होते हैं जबकि सभी सत्ताधारी लोगों के बारे में इनकी मान्यता है कि ये सत्ता में आते-जाते रहते हैं। इस प्रकार हम यह मानते हैं कि जम्मू-कश्मीर के लोग जम्मू-कश्मीर समस्या के मामले में प्रथम दर्जे के पक्षकार है जबकि नई दिल्ली व इस्लामाबाद द्वितीय दर्जे के पक्षकार है। अत: हमारी नजर में जम्मू-कश्मीर समस्या एक त्रिपक्षीय मुद्दा है। व्यावहारिक तौर पर, त्रिपक्षीय व त्रिकोणीय रास्ता उपयोग में लिया जा सकता है, त्रिपक्षीय मीटिंग का अर्थ है एक ऐसी मीटिंग जहां मूलभूत निर्णय लिए जाने है जबकि त्रिकोणीय मीटिंग, इसके पैराकारों के अनुसार, एक ऐसा तरीका है जिसमें दो बड़े पक्ष बुनियादी निर्णय लेते है और तब उस निर्णय को तीसरे कनिष्ठ सहयोगी को अलग से सूचित कर दिया जाता है।

(8)

भारत और पाकिस्तान के लोगों द्वारा गंभीरता पूर्वक ध्यान देने योग्य एक अन्य तथ्य यह है कि नए उभरे विश्व के शक्ति संतुलन के संदर्भ में जम्मू-कश्मीर का क्षेत्र रणनीतिक तौर पर दुनिया में एक अति संवेदनशील क्षेत्र है इसलिए, दुनिया की प्रमुख महाशक्ति अमेरिका ने वहां रणनीतिक तौर पर सैनिक अड्डे कायम करने का निश्चय कर लिया है ताकि चीन, जो दूसरे नम्बर की विश्व महाशक्ति है, उसको विभिन्न सैनिक राजनयिक दबावों के जरिए विश्व राजनीति में प्रभावी भूमिका निभाने से रोका जा सके। अमेरिका के सैनिक व तकनीकी विशेषज्ञों ने पहले से ही सैनिक गतिविधियों के लिए बहुत ही उपयुक्त स्थान जो चीन की सीमा से चिपके हुए ही है पाकिस्तान प्रबंधित उत्तरी सीमा क्षेत्र (यानि गिलगिट तथा बालिटिस्तान) में निरीक्षण करना शुरू किया हुआ है। ताजा अमेरिकी सोच के अनुसार, उसका दक्षिण एशिया का सैनिक अड्डा-जिसमें गिलगिट और बालिटिस्तान (पाक प्रबंधित कश्मीर) तथा लद्दाख और कश्मीर (भारत प्रबंधित कश्मीर) वाला क्षेत्र शामिल है, आने वाले दिनों में एक बहुत बड़ी विश्वव्यापी सैनिक भूमिका अदा करेगा। इसमें इसका पारम्परिक सहयोगी पाकिस्तान (जिसको इसने गैर नाटो सहयोगी होने का दर्जा हाल ही में आवंटित किया है) मध्य एशिया क्षेत्र में शांति स्थापित करने में मदद करेगा, जबकि इसका नया रणनीतिक सैनिक साझेदार यानि भारत, जिसके साथ इसने दुनिया भर में अमेरिकी सेना की साझेदारी में भारतीय सेना के उपयोग के लिए सैनिक सहयोग व रक्षा संधि के प्रस्तावों पर हाल ही में हस्ताक्षर किए है, अमेरिका को दुनिया भर में आतंकवाद (जो कि समस्या नहीं है बल्कि कॉरपोरेटों द्वारा पैदा किया गया प्रभाव है) से लड़ने के लिए पैरा ट्रूप मुहैया करायेगा। सही वास्तविकता कैसी शक्ल अख्तियार करेगी, अधिकांशत: जम्मू-कश्मीर पर भारत और पाकिस्तान के तथा महाशक्ति अमेरिका के साथ वर्तमान में भारत और पाकिस्तान के अधीनस्थ सैनिक संबंधों पर भारत और पाकिस्तान के आम लोगों की प्रतिक्रिया, इस पर निर्भर करेगा।

वर्तमान में अमेरिका की सोच यह है कि भारत-अमेरिकी रणनीति सैनिक साझेदारी के बावजूद, भारत और पाकिस्तान दोनों अमेरिका के साझेदार के तौर पर एक साथ कार्य कर सकेंगे परन्तु भारत-पाक का अतीत का रिकार्ड यह प्रदर्शित करता है कि मामले इतने

सरल नहीं है। आने वाला समय (जब अमेरिका से भारत और पाकिस्तान के प्रधानमंत्री वापस लौट कर आयेंगे) यह इंगित करेगा कि भारत-पाक संबंधों के मामले तथा जम्मू-कश्मीर के अन्दर के मामले क्या शक्ल अख्तियार करते हैं, क्या पाकिस्तान अमेरिकी गुट में रहेगा तथा भारत के साथ मैत्री संबंध रख पायेगा या पाकिस्तान एक नया रणनीतिक साझा चीन के साथ कायम करेगा तथा एक नई जम्मू-कश्मीर नीति और भारत के प्रति एक नया नजरिया अपनायेगा–यह समय ही बतायेगा।

(9)

जम्मू-कश्मीर समस्या के समाधान के प्रश्न पर हम पुख्ता तौर पर यह राय रखते हैं कि प्रत्येक रणनीतिक या बुनियादी समस्या का हल, विशेषतौर पर आज की दुनियां में, उसके बुनियादी सिद्धान्तों या क्रियान्वित करने के तरीकों–जिस पर वह आधारित है–से शुरू की जानी चाहिये। कोई भी हल जो उसकी बुनियादी धारणा या नैतिक नियमों से रहित हो तो वह प्राय: विकृत होकर भ्रम, मिथ्यावर्चन एवं गलत अर्थ निकालने के जाल में फंस जाता है।

उपर्युक्त नजिरए से शुरू करते हुए, हम जम्मू-कश्मीर समस्या के हल के लिए निम्न क्रियान्वति के तरीके निर्धारित करते हैं-

(क) जम्मू-कश्मीर एक मानवीय समस्या है।

(ख) इस समस्या का चरित्र त्रिपक्षीय है, जिसमें भारत, पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोग शामिल हैं।

(ग) सभी सैनिक दलों को निरस्त करते हुए एक शांतिपूर्ण रास्ता–भारत-पाक के मध्य कोई युद्ध नहीं का समझौता करके–अपनाया जाना चाहिये।

(घ) विवाद ग्रसित तीनों पक्षों यानि भारत, पाकिस्तान तथा जम्मू-कश्मीर की एकता, अखण्डता को बरकरार रखा जाना चाहिए।

(ड़) सभी साम्प्रदायिक एवं विभाजन करने वाले हलों को रद्द किया जाना चाहिये।

(च) सभी पूर्वाग्रह ग्रसित धारणाओं–जैसे जम्मू-कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है या जम्मू-कश्मीर पाकिस्तान की श्वास नली है–से छुटकारा पाना चाहिये।

(छ) यह ध्यान में रखना चाहिये कि भारत, पाकिस्तान एवं जम्मू-कश्मीर के लोगों की आनुवांशिकता एक ही है।

(ज) दोनों देशों के लोगों की समान मौजूदा समस्याओं जैसे गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा आदि को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

(झ) भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों का साझा भविष्य है, इस विचार को अपनाना चाहिए।

(ञ) जम्मू-कश्मीर समस्या को सुलझाने की प्रक्रिया में प्रत्येक प्रकार के विदेशी हस्तक्षेप से बचना चाहिए।

(10)

उपर्युक्त क्रियान्विति के तरीके से दिशानिर्देश लेते हुए, तीनों पक्षों के समक्ष सबसे महत्वपूर्ण कार्य जम्मू-कश्मीर समस्या का मानवीय और समझौता पूर्ण हल खोजना है, एक ऐसा हल जो संबंधित तीनों पक्षों की आंकांक्षाओं और हितों में समन्वय बैठा सके,

उनके राष्ट्रीय गौरव का सम्मान रख सके तथा भविष्य में उनकी सम्पन्नता का मार्ग खोल सके। हमारी ओर से, हम मानवीय हल के लिए निम्न तीन बिन्दु प्रस्तावित करते हैं :

(i) भारत व पाकिस्तान संयुक्त रूप से भारत-पाक सहराज्य द्वारा जम्मू-कश्मीर की रक्षा और विदेश मामले संभाले।

(ii) रक्षा और विदेश मामलों (जो भारत-पाक सहराज्य द्वारा संभाले जाएँ) के अलावा सभी मामलों में जम्मू-कश्मीर को स्वतंत्र राज्य का दर्जा दिया जाए।

(iii) जम्मू-कश्मीर के सभी नस्ली समुदायों–चाहे वे नियन्त्रण रेखा के पाकिस्तानी या हिन्दुस्तानी किसी भी भाग में रहते हों–को अधिकतम सम्भव स्वायत्तता प्रदान की जाए। जम्मू-कश्मीर राज्य स्तर के मामलों में ये हो सकते हैं–राज्य प्रमुख, उच्च न्यायालय, चुनाव आयोग, मानव विकास आयोग, पर्यावरणीय आयोग, योजना आयोग, इत्यादि।

तीन संबंधित पक्षों के हितों की पूर्ति के अलावा उपर्युक्त फार्मूला इन्हें तथा विश्व समुदाय को बहुत से अन्य रूपों में फायदा पहुँचायेगा।

विश्व की एक बहुत खतरनाक ज्वलन्त समस्या को हल करके यह विश्व समुदाय के लिए उचित माहौल बनायेगा।

यह दक्षिण एशिया के लोगों के मानवीय और प्राकृतिक संसाधनों के विकास में पड़ी बाधा को हटाकर अत्यधिक लाभ पहुंचायेगा।

यह भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों को आर्थिक विकास में समान भागीदार बनाकर फायदा पहुँचायेगा जिसमें भारत व पाकिस्तान समान वित्तीय हिस्सेदारी करके तथा जम्मू-कश्मीर राज्य के लोग अपनी भागीदारी प्राकृतिक संसाधनों के रूप में करके विकास में अपना योगदान दे सकेंगे।

(11)

जम्मू-कश्मीर को 7 क्षेत्रों में विभाजित करने तथा वहां के लोगों को अधिकतम् स्वशासन मुहैया कराने के राष्ट्रपति मुशर्रफ का प्रस्ताव, सीमाओं को स्थायी बनाने का भारत का प्रस्ताव तथा संयुक्त राज्य जम्मू-कश्मीर का हुर्रियत कांफ्रेंस के प्रस्ताव में से कोई भी प्रस्ताव उन्हें क्रियान्वित करने के तरीकों या मूलभूत सिद्धान्तों को स्पष्ट नहीं करता, ना ही यह स्पष्ट करता है कि ये प्रस्ताव जम्मू-कश्मीर के लोगों की आकांक्षा तथा भारत एवं पाकिस्तान के राष्ट्रीय हितों की पूर्ति कैसे कर पाएगा।

दिनांक 14 जुलाई 2005

आर पी सराफ, सम्पादक - नेचर-ह्युमन सेन्ट्रिक व्यूप्वाइंट
Email-saraf_rp@rediffmail.com

* * * * *

कश्मीर संघर्ष आतंकवाद नहीं

सर्राफ का सुझाव–विवाद का तीन सूत्री हल

कश्मीर समस्या के त्रिपक्षीय हल के लिए मोर्चे की ओर से ग्रेटर कश्मीर अखबार को साक्षात्कार देते हुए राम प्यारा सर्राफ ने सुझाव देते हुए पैरवी की, कि पाकिस्तान से आये हुए बुद्धिजीवियों को सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक दलों व पक्षों से मिलना-जुलना चाहिए और बातचीत करनी चाहिए तथा कश्मीर विवाद के हल पर उन्होंने अपना नजरिया और फार्मूला प्रस्तुत किया (जाकिर मलिक द्वारा उद्धृत)।

प्रश्न : कश्मीर मसले के बारे में आपकी राय क्या है?

उत्तर : कश्मीर मुद्दा विश्व का खतरनाक एवं ज्वलनशील मुद्दा है तथा दोनों देशों (भारत और पाकिस्तान) के बीच एक विवादास्पद मुद्दा है। कश्मीर में चल रहा संघर्ष नई दिल्ली के कुशासन के विरुद्ध है। यह किसी भी सूरत में आतंकवाद नहीं है क्योंकि कश्मीर के लोग अपने अधिकारों के लिए लड़ रहे हैं।

प्रश्न : आपकी नजर में कश्मीर समस्या का समाधान क्या हो सकता है?

उत्तर : कश्मीर समस्या का वास्तविक समाधान इस फार्मूले में निहित है कि विवाद से संबंधित तीनों पक्षों-भारत, पाकिस्तान तथा जम्मू-कश्मीर के लोगों के हितों का सामंजस्य बैठाया जाए। जैसा कि आप जानते हैं कि पाकिस्तान के पत्रकारों का एक दल राज्य के दौरे पर आया हुआ है। हमने उनसे निवेदन किया है कि इस प्रस्ताव पर वे विचार करें, प्रस्ताव निम्न है–(क) भारत और पाकिस्तान की अपनी-अपनी राष्ट्रीय आकांक्षाओं और हितों के बीच सन्तुलन बनाने के लिए जम्मू-कश्मीर की सम्प्रभुसता संवैधानिक रूप में भारत-पाक सहराज्य को संयुक्त रूप से रक्षा एवं विदेश मामले की हद तक सौंपी जाए। (ख) जम्मू-कश्मीर के लोगों (खासकर कश्मीरियों) की क्षेत्रीय आकांक्षाओं और हितों की पूर्ति संवैधानिक तौर पर जम्मू-कश्मीर को स्वतन्त्र राज्य स्वीकार करने में है, जिसके पास रक्षा और विदेश मामलों को छोड़कर अन्य सभी मामलों में प्रभुसत्ता सम्पन्न शक्तियाँ निहित रहें। और (ग) जम्मू-कश्मीर के भिन्न-भिन्न क्षेत्रीय समुदायों की नस्ली आकांक्षाओं और हितों में सामजंस्य, प्रत्येक समुदाय को अधिकतम सम्भव संवैधानिक स्वायत्तता प्रदान करके स्थापित किया जा सकता है।

प्रश्न : आपका फार्मूला कश्मीर समस्या के समाधान की ओर कैसे ले जाएगा?

उत्तर : कश्मीर की समस्या के समाधान के लिए लोगों का एक विस्तृत संयुक्त मोर्चा बनाया जाए और भारत और पाकिस्तान को उक्त फार्मूला अपनाने में मदद दे। आगे, विश्वसनीयता बनाने वाले कदमों की पहल जम्मू-कश्मीर के साथ ही साथ भारत और पाकिस्तान के बीच सामान्य स्थिति बहाल करने और सुदृढ़ बनाने में मदद करेगी।

प्रश्न : जम्मू-कश्मीर में सामान्य स्थिति बहाल करने के लिए क्या कदम उठाए जाने चाहिए?

उत्तर : जम्मू-कश्मीर में सामान्य स्थिति बहाल करने के लिए, यह महत्त्वपूर्ण है कि भारत को एक पक्षीय युद्ध बन्द करने की घोषणा करनी चाहिए। इसके अलावा जम्मू-कश्मीर राज्य में सामान्य स्थिति बहाल करने के लिए कुछ प्रस्ताव निम्न है–सभी राजनैतिक बन्दियों को छोड़ा जाए, सभी बलों विशेषतौर पर भारतीय बलों द्वारा सभी तरह के मानव अधिकारों के उल्लंघन को बन्द किया जाए, कश्मीर में तैनात भारतीय बलों

को आंशिक तौर पर वापिस बैरकों में लाया जाए, तीनों पक्षों द्वारा उल्लंघन किये गये मानव अधिकारों की शिकायतों पर जाँच करने के लिए संयुक्त रूप से स्वीकृत भारत-पाक आयोग नियुक्त किया जाय यह आयोग सभी पीड़ितों को उचित मुआवजा दिये जाने की सिफारिश भी करे।

फिर भी, सम्पूर्ण उपमहाद्वीप में सामान्य स्थिति बहाल करने के लिए भारत और पाकिस्तान दोनों सरकारों द्वारा सीमा पर युद्धबंदी की जानी चाहिए। नियन्त्रण रेखा के दोनों तरफ एक-एक किलोमीटर तक सेनाओं को पीछे हटाया जाना चाहिए, दोनों सेनाओं द्वारा सीमा पर संयुक्त गश्त की जानी चाहिए। दोनों पक्षों द्वारा सियाचिन, वुलर बैराज एवं सरक्रीक की समस्याओं पर हुए समझौतों पर हस्ताक्षर करना चाहिए तथा भारत-पाकिस्तान और आजाद कश्मीर के बीच कुछ बन्द रास्तों को खोला जाना चाहिए और सेना विहीन एक किलोमीटर क्षेत्र में भारत-पाक मैत्री पार्क एवं व्यापार केन्द्र खोले जाने चाहिए और इसके अलावा साचेम पर्वत पर संयुक्त तौर पर भारत-पाक शोध केन्द्र चलाया जाना चाहिए।

प्रश्न : क्या आपका प्रस्ताव विश्व समुदाय और विवाद में शामिल पक्षों को रास आयेगा?

उत्तर : मैं आशा करता हूँ कि उपर्युक्त प्रस्ताव विश्व समुदाय को रास आयेगा क्योंकि विश्व की सबसे खतरनाक समस्या मिट जायेगी, दक्षिण एशिया समुदाय को यह फायदा पहुँचायेगा क्योंकि उनकी सामाजिक, आर्थिक विकास में आड़े आ रही बाधाएँ हट जायेगी, इसके अलावा साझा बाजार और संयुक्त सुरक्षा स्थापित होगी। यह प्रस्ताव भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों के हितों की भी सेवा उनको आर्थिक विकास में बराबर का साझेदार बनाकर करेगा जिसमें सबकी बराबर की वित्तीय भागीदारी रहेगी। जबकि जम्मू-कश्मीर के हिस्से का योगदान प्राकृतिक संसाधनों के रूप में रहेगा। जम्मू-कश्मीर के लोगों को यह अतिरिक्त लाभ मिलेगा कि वे दोनों देशों के नागरिक हो जायेंगे।

प्रश्न : कश्मीर समस्या की जड़ क्या है?

उत्तर : इसकी जड़ नई दिल्ली में निहित है, क्योंकि उसका बहुसंख्यकवादी नजरिया सभी धार्मिक अल्पसंख्यकों और नस्ली समुदायों से भेदभाव का व्यवहार करता है, जिसकी नीतियाँ अमीरों के पक्ष की है और तरीका विशेष तौर पर मानव अधिकारों के उल्लंघन के मामलों में दमनकारी है, जबकि उसने लिखित तौर पर यह वादा किया हुआ है कि जम्मू-कश्मीर के लोगों को पूर्ण स्वायत्तता प्रदान की जायेगी। इस प्रकार कश्मीरी मुख्य धारा से अलग-थलग कर दिये गए। पिछले करीब 40 वर्षों से भारत समर्पित विभिन्न कश्मीरी शासकों द्वारा अमानवीय अत्याचार करने के बाद लोग मजबूरन खाड़कू रास्ते पर चल पड़े हैं। अन्य गलती हुरियत कान्फ्रेन्स में निहित है क्योंकि लोगों की रोजमर्रा की समस्याओं के समाधान के लिए उनके पास कोई अल्पकालीन कार्यक्रम नहीं है और इसके अलावा गलती इस्लामाबाद में भी निहित है क्योंकि सुन्नी-रूढिवाद ने न केवल विभिन्न धार्मिक समुदायों में बल्कि नस्ली गुटों में भी दरारें पैदा कर दी है।

प्रश्न : कश्मीर समस्या के हल के लिए बातचीत पर आम सहमति कैसे बनाई जाए?

उत्तर : इसके लिए तीन तरफा बुनियादी कार्य तथा सात पक्षीय तात्कालिक कार्य किये जाने की आवश्यकता है। बुनियादी कार्य है : (क) मोर्चे के घोषणा पत्र तथा अन्य

संबंधित दस्तावेजों के आधार पर जम्मू-कश्मीर के लोगों को जागृत, गोलबन्द एवं संगठित किया जाए, (ख) जम्मू-कश्मीर समस्या के वास्तविक, न्यायपूर्ण एवं त्रिपक्षीय हल पर आम सहमति बनाई जाए, तथा (स) मोर्चे की सामाजिक चेतना, मूल्य पर आधारित कार्यशैली एवम् संगठन के लोकतान्त्रिक ढाँचे का विकास किया जाए। जबकि तात्कालिक कार्य निम्न है, (क) नियन्त्रण रेखा के दूसरी तरफ सभी मानवीय, शान्तिप्रिय एवं लोकतान्त्रिक शक्तियों के साथ तुरन्त सौहार्दपूर्ण एवं मैत्रीपूर्ण संबंध कायम किये जाएं और उनके साथ साझा समझ बनाने के लिए जम्मू-कश्मीर समस्या को बातचीत के तरीके से एक वास्तविक और न्यायिक हल तक पहुँचने के लिए विचार विमर्श किया जाए, (ख) जम्मू-संभाग में जिला स्तर पर सम्मेलन किये जाएँ, (ग) मोर्चे के त्रिपक्षीय फार्मूले के पक्ष में हस्ताक्षर अभियान चलाया जाए, (घ) मोर्चे के कार्यक्रम पर जन-गोष्ठियाँ आयोजित की जाएँ, (ड़) जम्मू-कश्मीर समस्या पर आम सहमति आधारित तर्क संगत, न्यायिक तथा त्रिपक्षीय हल निकालने के लिए अन्तर-नस्ली एवं अन्तर दलीय बातचीत को आगे बढ़ाया जाए। तथा (च) राज्य में विभिन्न संवेदनशील स्थानों पर साम्प्रदायिक सौहार्द सम्मेलन किये जाएँ।

(दैनिक 'ग्रेटर कश्मीर' श्रीनगर, अक्टूबर 3, 2004 में प्रकाशित)

* * * * *

संयुक्त हुर्रियत का दौरा लाभदायक रहेगा : सर्राफ

कश्मीर समस्या के समाधान के लिए त्रिपक्षीय मोर्चे के नेता रामप्यारा सर्राफ ने कहा कि पाकिस्तान प्रशासित कश्मीर में विभाजित हुर्रियत का दौरा पाकिस्तान और पाकिस्तान प्रशासित कश्मीर के लोगों में पीड़ादायक अनुभूति देगा, इसलिए हुर्रियत के धड़ों को 2 जून को उड़ी-मुज्जफराबाद बस में बैठने से पहले एक समन्वय समिति या एक संयुक्त मोर्चे का गठन कर लेना चाहिए।

एकमात्र ग्रेटर कश्मीर को दिये गये साक्षात्कार में वर्तमान राजनैतिक घटनाओं की रोशनी में कश्मीर विवाद के विभिन्न पहलुओं पर सर्राफ ने अपने विचार प्रस्तुत किए।

प्रश्न : विभाजित हुर्रियत का पाकिस्तान दौरे पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

उत्तर : हुर्रियत कान्फ्रेन्स के चार गुट (मिरवायज उमर फारूख के नेतृत्व वाली आल पार्टी हुर्रियत कान्फ्रेन्स, सैयद अली शाह गिलानी के नेतृत्व वाली तहरिक ए हुर्रियत जम्मू-कश्मीर, यासीन मलिक के नेतृत्व वाला जम्मू-कश्मीर लिबरेशन फ्रंट तथा शब्बीर अहमद शाह के नेतृत्व वाली डेमोक्रेटिक फ्रीडम पार्टी) अपना-अपना झंडा लिये चल रहे हैं जो स्वाभाविक तौर पर पाक-अधिकृत कश्मीर या पाकिस्तान के लोगों में पीड़ादायक अनुभूति प्रदान करेंगे। हर जगह तार्किक तौर पर लोगों में यह भावना होगी कि इन नेताओं ने न तो कश्मीरी संघर्ष से कोई सबक सीखा है और ना ही इन्होंने हजारों की संख्या में कश्मीरी लोगों द्वारा दी गई कुर्बानियों–जिसमें इनके परिवार के सदस्य भी शामिल है–पर कोई ध्यान दिया है। इस प्रकार की अनुभूति साधारण तौर पर यह छाप छोड़ती है कि आम तौर पर लोगों की समस्याओं और खास तौर पर कश्मीरियों की समस्याओं की बनिस्पत इन नेताओं ने अपने-अपने सोच और व्यक्तित्व को ज्यादा ध्यान में रखा है। इसमें निश्चित तौर पर हर कही कश्मीरियों के हितों को नुकसान पहुँचता है।

प्रश्न : हुर्रियत की पुन: एकता कैसे कायम की जा सकती है?

उत्तर : हुर्रियत के विभिन्न गुटों में पुरानी दिशा से एकता कायम करना बहुत मुश्किल है। परन्तु सभी तरफ से यदि ईमानदारी से संयुक्त मोर्चे या समन्वय समिति की तरह के किसी इन्तजाम के आधार पर कोशिश की जाए तो इनके बीच की दूरियां कम हो सकती हैं। जम्मू-कश्मीर राज्य के भविष्य के संबंध में भारत, पाकिस्तान और कश्मीरियों के विचार-विमर्श से उभरने वाले निर्णय से हुर्रियत का प्रत्येक गुट अपने-आपको बाध्य करे, यह बिन्दु हुर्रियत गुटों की एकता का मूल-आधार बनता है।

प्रश्न : हुर्रियत के किसी भी एक गुट का नेतृत्व क्या सम्पूर्ण राज्य का प्रतिनिधित्व करता है?

उत्तर : नहीं, राज्य के तीनों क्षेत्रों में अलगाववादी किसी भी नेता का प्रभाव नहीं है। इन नेताओं का मुख्य ध्यान केवल कश्मीर घाटी पर ही रहा है तथा अन्य क्षेत्रों की इन्होंने उपेक्षा ही की है। इसके अलावा घाटी में भी इनके विभाजित ढाँचे में से भी कोई गुट यह दावा नहीं कर सकता है कि वह सम्पूर्ण राज्य का प्रतिनिधित्व करता है। इन सभी गुटों को पुन: एक हो जाना चाहिए तथा उन्हें सभी क्षेत्रों पर ध्यान देना चाहिए।

प्रश्न : 20 मई को दक्षिण एशियाई सांसदों के समापन सत्र में जनरल मुशर्रफ द्वारा दिये गये वक्तव्य पर आपकी क्या टिप्पणी है?

उत्तर : उनका वक्तव्य प्रशंसनीय है जिसमें पाकिस्तान के राष्ट्रपति ने वर्तमान परिस्थिति को आने वाली पीढ़ियों के लिए बेहतर दक्षिण एशिया बनाने हेतु पुनर्मेल के रास्ते को एक अवसर के रूप में पेश किया है। पाकिस्तान के नेता ने भारत-पाकिस्तान के बीच कश्मीर विवाद को एकमात्र अत्यधिक तकलीफदायक विवाद होने पर भी जोर दिया है। उन्होंने जम्मू-कश्मीर में सीमाओं को अप्रासंगिक करार देने का प्रस्ताव भी रखा है जो उनके मुताबिक कश्मीरी विवाद के रिसते हुए घाव के लिए मल्हम (दवा) का काम करेगी। उनके अनुसार महत्वहीन सीमाएं कश्मीर में नियन्त्रण रेखा के दोनों तरफ माल व लोगों के आने-जाने में सहुलियत प्रदान करेगी और समय बीतने के साथ-साथ विभाजन रेखा को अप्रासंगिक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगी। राष्ट्रपति मुशर्रफ की जम्मू कश्मीर को विभाजित करने वाली सीमाओं को अप्रासंगिक बनाने की धारणा को व्यवहार मे लागू करने की प्रक्रिया यह माँग करती है कि जम्मू-कश्मीर में, विशेषतौर पर घाटी में आन्तरिक के साथ-साथ बाह्य शान्ति दृढ़ता से स्थापित की जाए और यह शान्ति भारत द्वारा एक पक्षीय युद्ध बन्दी की घोषणा कर पुन: स्थापित की जा सकती है। इसके लिए सभी राजनीतिक बन्दियों को छोड़ना होगा, मानव अधिकारों के उल्लंघन को रोकना होगा, कश्मीर से सेना को वापिस बुलाना होगा, इसके अलावा इस संबध में अन्य कई कदम उठाने होंगे।

प्रश्न : इस दृष्टिकोण को टिकाऊ और व्यवहारिक कैसे बनाए जाए?

उत्तर : यह आवश्यक है कि यह दृष्टिकोण वास्तविक एवम् व्यावहारिक वैश्विक कार्यक्रम प्रस्तुत करे तथा वर्तमान गैर-न्यायिक एवं अतर्कसंगत विश्व-व्यवस्था को न्यायपूर्ण, तर्कसंगत विश्व व्यवस्था में परिवर्तित करने के लिए दृढ़ संकल्प हो। इस प्रकार के परिवर्तन के लिए, सर्वप्रथम दुनिया भर में एकपक्षीय अमेरिकन प्रभुत्व को समाप्त करने की आवश्यकता है, आतंकवाद अपने-आप में अमानवीय घटनाक्रम है, फिर भी यह

अपने-आप में कोई कारण नहीं है बल्कि अमेरिकन आतंकवाद की एक उपज है। एक न्यायिक और तर्कसंगत विश्व व्यवस्था कायम करके ही आतंकवाद का उन्मूलन किया जा सकता है।

(दैनिक, 'ग्रेटर कश्मीर' श्रीनगर मई 30, 2005 में प्रकाशित)

* * * * *

जम्मू-कश्मीर समस्या का त्रिपक्षीय हल के लिए मोर्चे द्वारा

जम्मू-कश्मीर मुद्दे पर पाकिस्तान के राष्ट्रपति और भारत के प्रधानमंत्री से अपील

1. 17 अप्रैल, 2005 को नई दिल्ली में होने वाली आप लोगों की अनौपचारिक बैठक के मौके पर मोर्चे (जम्मू-कश्मीर समस्या का त्रिपक्षीय हल के लिए मोर्चा) द्वारा हार्दिक बधाई। आप दोनों द्वारा दिये गए वक्तव्यों के अनुसार इस अनौपचारिक बैठक में भारत-पाक के महत्वपूर्ण मुद्दों पर, विशेषतौर पर जम्मू-कश्मीर के संबध में विचार-विमर्श किया जाना है।

2. पिछले दो सालों में जम्मू-कश्मीर के बारे में नई दिल्ली और इस्लामाबाद के वक्तव्यों और क्रियाकलापों पर पीछे मुड़कर नजर डालें तो शिथिलता और विश्वास निर्माण के कदमों जैसे- दोनों देशों द्वारा सेनाओं को वापस बैरकों में लौटाना (जो कुछ समय पहले आमने-सामने की स्थिति में खड़ी थी), दोनों देशों के बीच बहुत से सद्भावना प्रतिनिधि मण्डलों का आदान प्रदान, जिसमें जम्मू-कश्मीर में नियन्त्रण रेखा के दोनों तरफ के प्रतिनिधिमण्डल शामिल हैं, एक दूसरे के कैदियों की रिहाई आदि-आदि। जो दोनों पक्षों द्वारा आपस में सामान्य संबंध पुन: स्थापित करने के लिए तथा जम्मू-कश्मीर में विशेषतौर पर घाटी में तनावमुक्त माहौल बनाने के उद्देश्य से उठाये गये हैं, जिनका हम स्वागत करते हैं और प्रशंसा करते हैं।

3. फिर भी यह मोर्चा महसूस करता है कि भारत-पाक पहलकदमी और गतिविधि की रफ्तार बहुत धीमी व रूकी हुई सी है और वैश्विक स्तर पर अत्यन्त खतरनाक ज्वलनशील हमारी समस्या (यानि जम्मू-कश्मीर समस्या) की प्रकृति से मेल नहीं खाती है। हम आप दोनों से तहेदिल से निवेदन करते हैं कि इस अत्यन्त महत्वपूर्ण समस्या (भारत एवं पाकिस्तान सहित) को इस सन्दर्भ में ध्यान दिया जाए कि यह समस्या विश्व शान्ति साथ ही परमाणु संघर्ष–जो मानव समुदाय के 1/5 हिस्से को तबाह करने की संभावना लिए हुए है–का खतरा पैदा करने वाली है।

4. इस मोर्चे की मान्यता है कि करीब 1990 में साम्यवादी व्यवस्था के पतन एवं अमेरिका के एकल महाशक्ति के रूप में उभरने के बाद पैदा हुए हमारे इस युग में विश्व-शान्ति (इक्कीसवी शताब्दी का दृष्टिकोण) मानव समुदाय की प्राथमिक आवश्यकता बन चुकी है। यह आवश्यकता हमारी वर्तमान वैश्विक आवश्यकता से उत्पन्न हो रही है। जहाँ, एक तरफ मानवता का सामना पर्यावरण ह्रास से है तथा दूसरी तरफ मानव समाज में आर्थिक एवं राजनीतिक असमानता की बढ़ती खाई से है। विश्व शान्ति की प्राथमिक आवश्यकता की माँग है कि सामान्य जन के बीच हर प्रकार की सामाजिक, राष्ट्रीय राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक फूट परस्ती को समाप्त किया जाए।

जैसा कि अनुभव दर्शाता है, मानवीय फूट परस्ती को न्यायिक आधार पर सभी विवादास्पद बिन्दुओं का समाधान करके मिटाया जा सकता है और एक न्यायिक आधार तभी बनता है जब बन्दूक के राज के साथ ही साथ मानव समुदाय में राजनीतिक सत्ता हथियाना या पूँजी के निर्णायक पहलू होने के सिद्धान्त को नकारा जाए।

5. मोर्चे का मानना है कि जम्मू-कश्मीर की समस्या का बुनियादी कारण 1947 से पूर्व की कांग्रेस के हिन्दू समर्थक नजरिए तथा मुस्लिम लीग के मुस्लिम नजरिए के बीच तीव्र संघर्ष में निहित है, इस प्रकार इन दो धर्म आधारित संगठनों के बीच गहरी टकराहट के नतीजतन संयुक्त भारत का विभाजन हुआ। विभाजन बहुत सी अनसुलझी समस्याओं को लेकर आया जिसमें अत्यधिक जटिल समस्या (यानि जम्मू-कश्मीर समस्या) शामिल है, जो आज भी भारत और पाकिस्तान के बीच अनसुलझी समस्या है।

6. वर्तमान समय में मोर्चा मानता है कि नरमी और विश्वास निर्माण की प्रक्रिया, बावजूद इसके कि भारत-पाक ने कई प्रशंसनीय कदम उठाये हैं, फिर भी यह अत्यधिक अस्थिर है। यह प्रक्रिया जानदार व गतिशील हो सकती है व होगी यदि तीनों पक्षों (भारत, पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोगों) को बातचीत की प्रक्रिया में शामिल किया जाए। जम्मू-कश्मीर एक विवादास्पद प्रश्न है, इसको मानने वाली शक्तियों को नरमी तथा विश्वास निर्माण की प्रक्रिया में शामिल नहीं किया जाता है तो इस प्रक्रिया से उत्पन्न सद्भावना पर विपरीत असर पड़ेगा।

7. मोर्चे की राय में अकेले नरमी और विश्वास निर्माण की प्रक्रिया जमीनी वास्तविकता को नहीं बदल सकती। जमीनी वास्तविकता तब बदलनी शुरू होगी जब जम्मू-कश्मीर समस्या को हल करने के लिए त्रिपक्षीय वार्ता की प्रक्रिया अपना रास्ता पकड़ेगी।

8. मोर्चा महसूस करता है कि जम्मू-कश्मीर समस्या के संबंध में भारत और पाकिस्तान के बीच चल रही शान्ति प्रक्रिया तभी प्रभावी बन सकेगी जब पहले से अपनाई गई नरमी और विश्वास निर्माण की प्रक्रिया के अतिरिक्त जम्मू-कश्मीर में, विशेषतौर पर घाटी में निम्न कदम उठाए जाएँ, सभी मानव अधिकार उल्लंघनों को समाप्त किया जाए, सभी राजनीतिक बन्दियों को रिहा किया जाए, अशान्त क्षेत्र अधिनियम तथा सैन्य व विशेषाधिकार अधिनियम आदि वापस लिये जाएँ, एक तरफा युद्धबन्दी की जाए तथा कश्मीर घाटी में तैनात भारतीय सेना को उनकी बैरकों में वापस लौटाया जाए, संयुक्त रूप से स्वीकृत भारत-पाक आयोग गठित किया जाए जो तीनों पक्षों यानि भारत, पाकिस्तान तथा खाड़कू ग्रुपों द्वारा किये गये मानवाधिकारों के उल्लंघन की जाँच करेगा एवं सभी पीढ़ियों को या उनकी मृत्यु पर उनके परिवारों को संबंधित उल्लंघन करने वाले या अपराधी द्वारा उचित मुआवजा देने की सिफारिश करेगा। खाड़कू ग्रुपों द्वारा मानवाधिकारों का उल्लंघन करने के मामले में पीड़ितों को मुआवजे का भुगतान भारत एवं पाकिस्तान संयुक्त रूप से करेंगे।

9. मोर्चा दृढ़ता से विश्वास करता है कि हमारा उपग्रह घातक पर्यावरणीय-जैविक संकट की चपेट में है और आने-वाले दिनों में भारत और पाकिस्तान दोनों को अन्य देशों की तरह ही समान रूप से जीवन और मृत्यु की समस्या का सामना है जैसे, वैश्विक उष्माकरण का प्रभाव, जल स्तर का गिरना, हवा और पानी के प्रदूषण का बढ़ना, सिंचाई योग्य भूमि का क्षरण, भूमि उत्पादकता में गिरावट, वैश्विक वन क्षेत्र का सिकुड़ना (आवश्यक

न्यूनतम स्तर से भी नीचे होना), बहुत सी प्रजातियों के तेजी से लुप्त होने के साथ जैव-विविधता को खतरा, आर्थिक एवं सांस्कृतिक असमानता में वृद्धि, अमीरों और गरीबों के बीच राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक ना पाटी जा सकने वाली खाई का होना, राजनीति, राजनीतिक पार्टियों, राजनेताओं का अपराधीकरण, तेजी से बढ़ती जनसंख्या, फैलता शहरीकरण तथा कृषि योग्य भूमि का कम होना, शहरों का गन्दी बस्तीकरण होना आदि। परन्तु इन समस्याओं के बारे में बहुत कम ध्यान दिया गया है। हमारे सरकारी कार्यक्रम का तो ये भाग भी नहीं बन सके हैं। जब तक इन समस्याओं को गंभीरता से और जल्दी से नहीं निपटाया जाता है तब तक विज्ञान, तकनीक, कला और संस्कृति के क्षेत्र में प्राप्त की गई बहुत सी मानवीय उपलब्धियों का कोई मायने नहीं रहता। इन वास्तविकताओं के संदर्भ में भारत और पाकिस्तान को वर्तमान खतरनाक पर्यावरणीय-जैविक संकट को अपना प्राथमिक ध्यान देने वाला केन्द्र बनाना चाहिए।

कुछ जानकारों में यह भय है दिन ब दिन खराब होती पर्यावरण और इसके विभिन्न तत्वों की, विशेषतौर पानी की स्थिति तथा साथ ही सबसे बड़े हिमालय के ग्लेशियरों का पिघलना, सिन्ध, झेलम और चिनाब नदियों में पानी का कम होना, जम्मू-कश्मीर सरकार द्वारा यह दावा करना कि वह इन नदियों के पानी को उपयोग कर बिजलीघर निर्माण कर सकते हैं, यह भारत और पाकिस्तान के बीच तनाव उत्पन्न कर सकता है क्योंकि पाकिस्तान यह मानता है कि उक्त नदियों के पानी पर उनके एकाधिकार 1961 की सिन्धु जल सन्धि के अनुसार है जिसके तहत उसने रावी, सतलुज और व्यास नदियों के पानी के अधिकार को भारत को सौंप दिया था।

10. मोर्चा यह दृष्टिकोण रखता है कि उपर्युक्त कदम उठाने के बाद संबंधित पक्षकारों के सामने अगला कार्य जेके समस्या के समाधान को क्रियान्वित करने के दिशा-निर्देश कार्य यह है कि क्रियान्विति की ऐसी प्रक्रिया छांटी जाए तो जम्मू-कश्मीर समस्या के समाधान की ओर ले जाने वाली साबित हो।

11. मोर्चा विश्वास करता है कि क्रियान्विति की आवश्यक प्रक्रिया छाँटे जाने से पहले संबंधित पक्षकारों को निम्न तीन आवश्यक तथ्यों पर उचित ध्यान देना चाहिए।

12. प्रथम, आम तौर पर प्राचीन उपनिवेशवाद (जैसे, ब्रिटिश, फ्रांस आदि) तथा विशेष तौर पर 1947 के बाद का महाशक्तिवाद (जिसका प्रतिनिधित्व 1945 से 1990 तक अमेरिका और सोवियत युनियन ने किया है) और 1990 के बाद एकल महाशक्ति अमेरिका द्वारा प्रस्तुत व्यवहार के ऐतिहासिक अनुभव के आधार पर कोई भी यह आसानी से देख सकता है कि हमारे युग में वर्तमान अमेरिकन महाशक्ति सबसे अधिक आक्रमणकारी, निर्दयी, चालाक और अमानवीय शक्ति है जिसका प्रतिनिधित्व केवल बहुत ही संकुचित बड़े व्यापारी (अरबपति और खरबपति) तथा उच्चस्थ राजनीतिज्ञ (जो बड़े व्यापारियों के जर-खरीद एजेन्ट हैं) करते हैं और ये एक तरफ सारी दुनियां के लोगों, अमेरिकन और युरोपियन लोगों सहित का दमन और शोषण करते हैं और दूसरी तरफ पर्यावरणीय संसाधनों का ह्रास व नाश करते हैं।

दूसरा तथ्य यह है कि वर्तमान समय में अमेरिकन महाशक्ति दो सबसे ऊँची प्राथमिकताओं की क्रियान्विती में व्यस्त है। पहली दुनिया में आतंकवाद को उखाड़ फेंकना तथा दूसरी चीन के विरुद्ध अघोषित सैनिक और आर्थिक गठजोड़ कायम करना। उपर्युक्त दो रणनीतिक कार्यों के संबंध में इसका मानना है कि विश्व आतंकवाद के विरुद्ध

इसके द्वारा छेड़े गये युद्ध में पाकिस्तान इसका कार्यनीतिक सहयोगी है जबकि भारत, जापान की तरह चीन के विरुद्ध अघोषित सैनिक और आर्थिक रणनीतिक गठजोड़ का जोड़ीदार है।

तीसरा तथ्य यह है कि भारतीय राज्य का महाशक्तिवादी दृष्टिकोण या सब जगह व्यस्त अमेरिकन महाशक्तिवाद का कनिष्ठ साझेदार के तौर पर कार्यरत रहने का दृष्टिकोण (जो बीसवीं सदी का दृष्टिकोण रहा है। जब युद्ध प्रथम स्थान ग्रहण किये हुए था) भारत, दक्षिण एशिया तथा दुनिया के लोगों के हितों को अत्यधिक नुकसान पहुँचाने वाला है। यह सही है कि पाकिस्तान की वर्तमान भूमिका पाकिस्तान के प्रति अमेरिका की खिलाफत को रोकने के लिए है, उच्च तकनीकी हथियार प्राप्त करने के लिए एवम् जम्मू-कश्मीर पर इसके भारत के साथ विवाद में अमेरिका का समर्थन प्राप्त करना केवल मात्र एक कार्यनीतिक कार्यवाही है तथापि जम्मू-कश्मीर विवाद के समाधान होने पर पाकिस्तान जम्मू-कश्मीर सहित अन्तरराष्ट्रीय मामलों में अपना स्वतंत्र रुख अख्तियार करने की स्थिति में आ सकता है।

13. मोर्चा जम्मू-कश्मीर समस्या के हल के लिए निम्न क्रियान्वति के तरीके निर्धारित करता है–(क) जम्मू-कश्मीर एक मानवीय समस्या है। (ख) इस समस्या का चरित्र त्रिपक्षीय है, जिसमें भारत, पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोग शामिल हैं। (ग) सभी सैनिक दलों को निरस्त करते हुए एक शांतिपूर्ण रास्ता–भारत-पाक के मध्य कोई युद्ध नहीं का समझौता करके–अपनाया जाना चाहिये। (घ) विवाद ग्रसित तीनों इकाइयों यानि भारत, पाकिस्तान तथा जम्मू-कश्मीर की एकता, अखण्डता को बरकरार रखा जाना चाहिए। (ड़) सभी साम्प्रदायिक एवं विभाजन करने वाले हलों को रद्द किया जाना चाहिये। (च) सभी पूर्वाग्रह ग्रसित धारणाओं–जैसे जम्मू-कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है या जम्मू-कश्मीर पाकिस्तान की श्वास नली है–से छुटकारा पाना चाहिये। (छ) यह ध्यान में रखना चाहिये कि भारत, पाकिस्तान एवं जम्मू-कश्मीर के लोगों की आनुवांशिकता एक ही है। (ज) दोनों देशों के लोगों की समान मौजूदा समस्याओं जैसे गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा आदि को ध्यान में रखा जाना चाहिए। (झ) भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों का साझा भविष्य है इस विचार को अपनाना चाहिए। (ञ) जम्मू-कश्मीर समस्या को सुलझाने की प्रक्रिया में प्रत्येक प्रकार के विदेशी हस्तक्षेप से बचना चाहिए।

14. उपर्युक्त क्रियान्विति के तरीके से दिशानिर्देश लेते हुए, तीनों पक्षों के समक्ष सबसे महत्वपूर्ण कार्य जम्मू-कश्मीर समस्या का मानवीय और समझौता पूर्ण हल खोजना है, एक ऐसा हल जो संबंधित तीनों पक्षों की आंकांक्षाओं और हितों में समन्वय बैठा सके, उनके राष्ट्रीय गौरव का सम्मान रख सके तथा भविष्य में उनकी सम्पन्नता का मार्ग खोल सके। हमारी ओर से, हम मानवीय हल के लिए निम्न तीन बिन्दु प्रस्तावित करते हैं–(i) भारत व पाकिस्तान संयुक्त रूप से भारत-पाक सहराज्य द्वारा जम्मू-कश्मीर की रक्षा और विदेश मामले संभाले। (ii) रक्षा और विदेश मामलों (जो भारत-पाक सहराज्य द्वारा संभाले जाएँ) के अलावा सभी मामलों में जम्मू-कश्मीर को स्वतंत्र राज्य का दर्जा दिया जाए। (iii) जम्मू-कश्मीर के सभी नस्ली समुदायों-चाहे वे नियन्त्रण रेखा के पाकिस्तानी या हिन्दुस्तानी किसी भी भाग में रहते हों को अधिकतम सम्भव स्वायत्तता प्रदान की जाए।

* * * * *

मानवजाति का भविष्य

वर्तमान वास्तविकता के अनुसार केवल दो तरफा संभावना है – जीवन या मौत, अन्य तीसरी संभावना नहीं

उपर्युक्त सार-संक्षेप हमें प्रकृति-मानव केन्द्रित जन-आन्दोलन के जयपुर सम्मेलन (25 से 27 नवम्बर, 2005) के परिप्रेक्ष्य, नजरिये और समझ को प्रदान करता है। जो प्रथमतया, मानव जाति की विद्यमान आधारभूत वास्तविकता को सही तौर पर समझे और द्वितीयत: इस वास्तविकता के अनुरूप एक वास्तविक प्रत्युत्तर का प्रस्ताव तैयार करे।

1. आज मानवजाति की आधारभूत स्थिति

वर्तमान मानव हालात का केन्द्रीय पहलू साफ-साफ दर्शाता है कि आज मानव समुदाय को एक ऐसे घातक पर्यावरणीय–जैविक संकट से सामना करना पड़ रहा है जो अब हमारे ग्रह पृथ्वी को हिला रहा है और जो मानव इतिहास में अनसुना है।

यह संकट इतना गंभीर है कि या तो मानव समुदाय कम से कम सम्भव समय में इस पर नियन्त्रण कर लेगा अन्यथा यह संकट जल्दी ही मानव समुदाय को लील जायेगा।

मोटे तौर पर, यह दो आयामी संकट है, यानि एक तरफ सामान्यतया पर्यावरणीय गिरावट का संकट एवं खास करके इसके प्रत्येक घटक का संकट होना और दूसरी तरफ आम तौर पर वर्तमान समाज के (जो एक 'स्वतंत्र और खुला जनवाद' कहलाता है और अपने दो शताब्दियों से अधिक पुराने सिद्धान्त और व्यवहार के साथ चल रहा है) के मनुष्यत्व के गुणों से वंचित होने (अमानवीयकरण) का संकट और इसके प्रत्येक सामाजिक पहलू यानि समाजशास्त्रीय या वैचारिक या सैद्धान्तिक दृष्टि या आधारभूत नजरिया, लोगों का विश्वास और प्रेरणा, मानवीय प्रजनन प्रक्रिया या मानव जनसंख्या की समस्या, मानवीय लिंग संबंधों और पुरुष व स्त्रीलिंग के बीच अनुपात, इसके अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय और स्थानीय पहलुओं के अन्तर्गत राजनीतिक प्रदर्शन और आर्थिक उन्नति और संस्कृति के सभी घटकों, यानि शिक्षा, विज्ञान और तकनीकी, भाषा, कला (संगीत, नृत्य, अभिनय, स्थापत्यकला, मूर्तिकला, रंगसाजी, दस्तकारी, इत्यादि), व्यवहार, बातचीत का तरीका, पहनावा, इत्यादि, के अमानवीयकरण का संकट है।

(क) आमतौर पर पर्यावरणीय गिरावट की चुनौती और खासतौर पर इसके प्रत्येक घटक के ह्रास की चुनौती

आज मानव समाज को दरपेश घातक पर्यावरणीय–जैविक चुनौती का यह पहला पक्ष है। यह इतना घातक है कि अगर इसे एक दशक या इसके आस-पास ही पीछे नहीं धकेला गया तो यह विशेषज्ञों की राय के मुताबिक अनियन्त्रित हो जायेगा तथा मानव प्रजाति (दूसरे जैव-घटनाक्रम के साथ) को उसके अंतिम प्रयाण (मौत) में धकेल देगा और इस प्रकार यह पृथ्वी पर प्रत्येक प्रकार के जीव-जगत के अस्तित्व को मिटा देगा।

पर्यावरणीय गिरावट का मुख्य कारण विद्यमान रासायनिक आधारित और मुख्यतया तापीय ऊर्जा संचालित पूँजीवादी तकनीकी (निर्माण उद्योग, कृषि, सूचना उद्योग, इत्यादि से संबंधित) द्वारा पैदा किया प्रदूषण है। यह अब हमारे सभी घटकों-जिनसे हमारा

पर्यावरण बनता है यानि, हवा, पानी, जमीन और जैव-विविधता (जंगलों सहित) से स्पष्ट प्रकट होता है। ये संक्षेप में नीचे ऐसे वर्णित किये जा सकते हैं।

वायु

(अ) आज हमारे ग्रह पर वायु प्रदूषण जैव-जीवन के लिए मुख्य चुनौती बना हुआ है। यह एक बड़ा हत्यारा बन गया है जिससे प्रतिवर्ष 40 लाख लोग मर रहे हैं।

(ब) कार्बन और अन्य ग्रीन हाऊस गैसों (जैसे कार्बनडाइ-आक्साइड, मिथेन, क्लोरोफ्लोरोकार्बन, इत्यादि) का पिछले 3 दशक के दौरान उत्सर्जन तीन गुना बढ़ चुका है जो ग्लोबल वार्मिंग (वैश्विक उष्माकरण) और जलवायु परिवर्तन करके समस्त जैव-जीवन के लिए गंभीर चुनौती पैदा कर रहा है।

(स) अमेरिका अकेला, एक तिहाई गीन हाऊस गैसें उत्सर्जित करता है जो विश्व का सबसे मुख्य प्रदूषक का स्थान लिए हुए है।

जल

(अ) विश्व की 50 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या को अब रोजाना के लिए आवश्यक शुद्ध जल की भारी कमी का सामना है।

(ब) विश्व की आद्रभूमि के 60 प्रतिशत से अधिक भाग का नाश हो चुका है और साफ जल की 10000 प्रजातियों का एक चौथाई भाग विलुप्त हो गया है।

(स) दूषित पानी से लगभग 30 लाख लोग प्रतिवर्ष मर जाते हैं।

भूमि

(अ) विश्व के आधे से अधिक जंगल नष्ट हो चुके हैं। जंगल नष्ट होने की दर अब 90,000 वर्ग किलोमीटर प्रतिवर्ष है। ये अगले 25 वर्षों में विलुप्त हो सकते हैं।

(ब) अब विश्व की कृषि भूमि के दो तिहाई भाग की उपजाऊ भूमि क्षयग्रस्त हो गई है।

(स) विश्व के आधे से अधिक घास के मैदान साफ हो गये। भारत को अब एक तिहाई चारे की कमी पड़ रही है।

वन्य जीवन

(अ) लगभग 1000 प्रजातियां विलुप्त हो गई है और 12000 प्रजातियां खतरे की सूची में है।

(ब) विश्व के लगभग 75 प्रतिशत समुद्री मछली पकड़ने के क्षेत्रों में अत्यधिक मछलियाँ पकड़ ली गई है तथा पूर्ण उपयोग में ले ली गई है। उत्तरी अमेरिका में मछली की 10 प्रजातियाँ 1990 में ही विलुप्त हो गई थी।

(स) चिड़ियों की जानी पहचानी 9946 प्रजातियों में से 70 प्रतिशत संख्या में घट गई हैं।

लोग

(अ) सन् 1930 के बाद लगभग 400 करोड़ लोग विश्व में और शामिल हो गये हैं। सन् 1930 में विश्व की आबादी 200 करोड़ थी जो बढ़कर सन् 2000 में 600 करोड़ के ऊपर पहुँच गई।

(ब) अगले 10 सालों में विश्व में 100 करोड़ और अधिक लोग शामिल हो जायेंगे।

पृथ्वी के आकाश मण्डलों पर प्रभाव

आगे, पर्यावरणीय गिरावट का प्रभाव हमारे ग्रह पृथ्वी के 5 मुख्य आकाश मण्डलों पर भी पड़ा है। ये है -

1. **जैव–मण्डल** – (यानि, जंगल सहित पृथ्वी की सतह और वायुमण्डल का वह भाग जिसमें जीव-जगत रहता है और विचरण करता है।)

2. **जल मण्डल** – यानि, जल से आच्छादित पृथ्वी की सतह का भाग।

3. **स्थल मण्डल** : यानि, पृथ्वी की परत और पृथ्वी के ऊपरी आवरण का ठोस चट्टानी भाग।

4. **भू–मण्डल** – यानि इसकी ऊपरी सतह को छोड़कर पृथ्वी की सम्पूर्ण भौगोलिक संरचना।

5. **वायुमण्डल** – यानि, पृथ्वी के चारों तरफ गैसों का लिफाफा जो नीचे लिखी 5 परतों से बना हुआ है।

(अ) ट्रोपोस्फेयर (क्षोभमंडल), यानि भूमध्य रेखा पर लगभग 18 किलोमीटर (11 मील) तथा ध्रुवों पर लगभग 6 किलोमीटर (4 मील) मोटी सबसे नीचे की वायुमण्डलीय परत जिसमें आम तौर पर हवा का ताप लगभग 6.50 सेल्सियस प्रति किलोमीटर ऊंचाई के साथ घटता जाता है।

(ब) स्ट्राटोस्फेयर (समतामण्डल), यानि क्षोभमंडल और मध्यमंडल के बीच स्थित वायुमण्डलीय परत।

ओजोन मण्डल, यानि, समतापमण्डल का वह क्षेत्र जहाँ ओजन का सकेन्द्रण अधिकतम (गहन) है। यहाँ ग्रीन हाउस गैसों द्वारा अवशोषित पराबैंगनी किरणों द्वारा ओजोन परत के एक तिहाई से ज्यादा भाग को नष्ट कर दिया गया है।

(स) मध्यमण्डल, यानि समतापमण्डल और तापीय मण्डल के बीच की वायुमण्डलीय परत।

(द) थर्मोस्फेयर (तापीय मण्डल), यानि मध्यमण्डल और बाह्यमण्डल के बीच की वायुमण्डलीय परत।

(य) ब्राह्यमण्डल, यानि पृथ्वी के वायुमण्डल की ब्राह्यतम परत। यह पृथ्वी की सतह से लगभग 400 किलोमीटर ऊपर तक फैली है।

चारों मण्डल (यानि, जैव मण्डल, जल मण्डल, स्थलमण्डल, और वायुमण्डल) सीधे प्रभावित होते हैं जबकि पांचवा मण्डल (यानि, भूमण्डल) जो द्रव्यमान और ऊर्जा (जिसकी परिणति भूकम्पों की आवृति में होती है) की गति के सम्बन्ध में अन्य चार मण्डलों के साथ अन्तक्रिया के माध्यम से प्रभावित होता है।

सन् 2005 के पिछले 10 महीने विश्व भर में बर्बादी के रिकार्ड रहे हैं। क्रिसमस सप्ताह के प्रथम दिन सुनामी ने सुमात्रा, भारत और श्रीलंका इत्यादि के तटीय इलाकों से टकराकर उन्हें तबाह किया, जापान, ताइवान, चीन, और दक्षिण पूर्वी एशिया में प्रशान्त महासागरीय प्रचण्ड तूफान, मैक्सिकों की खाड़ी में उठे महाचक्रवातों ने क्यूबा, कैरीबियन द्वीपों, मैक्सिकों और अमेरिका के तटों पर विप्लव मचाया, 4 से 6 अक्टूबर मुम्बई, ग्वाटेमाला, एल सल्वाडोर और मैक्सिको में घातक बाढ़ और किचड़ की फिसलन से हुआ नुकसान, आंध्र और तमिलनाडू में चक्रवात, हिमालय की स्थानभ्रष्टता वाली रेखा के साथ-साथ

गैर मुक्त दबाव के चलते 8 अक्टूबर को कश्मीर में मुज्जफराबाद के नजदीक आया भूकम्प, इन सभी में अति बर्बादी हुई, इनसे लाखों लोग मारे गये और इनके रास्ते में जो भी चीज आई उसे नष्ट कर दिया। यह प्रकृति का तीव्र प्रकोप है। इसी दौरान मनुष्य अपनी स्थानीय बर्बादियों में भी उलझा रहा है, जैसे अक्टूबर 2005 में बाली विस्फोटों का दूसरा दौर और 7 जुलाई के लंदन विस्फोट।

यही कुछ नहीं दुनिया विश्वव्यापी महामारी बर्ड फ्लू (एच 5 एन 1 वाइरस) के खतरे में है। इस शक्तिशाली महान विपत्ति को रोकने के लिए केवल अच्छे की आशा करना काफी नहीं है। चीन के लेक क्यूंघाई में पाई गई अनजान बीमारी से लाखों लोग मारे जा सकते है और यह विश्व आर्थिकता को तोड़ सकती है। आज तक 15 करोड़ से अधिक मुर्गे-मुर्गी मर गये और पूर्व व दक्षिण-पूर्व एशिया में बीमार चिड़ियाओं को इस रोगाणु की वजह से चुन कर अलग कर दिया गया है। हाल ही में साइबेरिया, तुर्की और रोमानिया में कुछ मामले प्रकाश में आने से और अधिक बर्बादी की संभावना है।

वैज्ञानिक राय

हमारे प्राकृतिक पर्यावरण के बिगड़ते हालात के बारे में वैज्ञानिक समुदाय बहुत समय से चेतावनी दे रहा है, पहले से ही विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा काफी बड़ी संख्या में रिपोर्टें प्रसारित की गई हैं यहाँ नीचे उनमें से कुछ ही रिपोर्टों को संदर्भ के लिए प्रस्तुत कर रहे हैं।

जनवरी, 2004 के 'नेचर' विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित एक लेख कहता है कि ''आने वाले 50 वर्षो में जलवायु परिवर्तन के कारण पृथ्वी के एक चौथाई जानवर और वनस्पतियों के गायब होने की संभावना है।'' अन्य वैज्ञानिक विशेषज्ञ जो अपने आपको किसी समय सीमा में नहीं बांधते, पर्यावरणीय परिस्थितियों को बहुत ज्यादा खतरनाक स्वीकार करते है।

संयुक्त राष्ट्र की मार्च 2004 की रिपोर्ट कहती है कि सूचना प्रोद्योगिकी का 'धूआं रहित उद्योग' एक बड़ा वैश्विक प्रदूषक है। इसके अनुसार 24 किलोग्राम एवं 27 सेन्टीमीटर की कैथोड़ किरण ट्यूब मॉनीटर के एक कम्प्यूटर को 230 किलोग्राम जैविक ईंधन, 22 किलोग्राम का रसायन और 1500 किलोग्राम पानी–कुल 1.8 टन पदार्थ की जरूरत होती है।

इग्लैण्ड के डोरचेस्टर में पारिस्थितिकी और जल विज्ञान केन्द्र के प्राकृतिक पर्यावरण अनुसंधान परिषद की मार्च 2004 की रिपोर्ट कहती है–''जीवन के इतिहास में एक षष्टम् महाविलुप्ति की घटना अब हमारे ऊपर पुन: होने जा रही हैं। जीवों एवं वनस्पतियों की जीवित प्रजातियों की ऐसी महाविलुप्तियाँ समय समय पर पहले हो चुकी है। इग्लैण्ड के डोरचेस्टर केन्द्र कहता है कि पूर्व की पाँच विलुप्तियाँ प्राकृतिक कारणों से हुई हैं जबकि छठी विलुप्ति का कारण मानव क्रिया कलाप लगता है।

2003 में विश्व के प्रमुख वैज्ञानिकों के रोम सम्मेलन ने सावधान किया कि यदि पर्यावरण पतन की प्रक्रिया को कम समय में ही सुधारा नहीं गया तो आने वाले समय में पृथ्वी जीवों के रहने के लिए पूर्ण रूप से गैर टिकाऊ बन जायेगी।

संयुक्त राष्ट्र के विश्व वन्य जीव कोष (डब्लू.डब्लू. एफ.) का 2002 के अध्ययन ने चेतावनी दी है कि यदि मानव समुदाय (खास कर धनी देश तथा धनी लोगों) ने अति

उपभोग तथा बर्बाद करने वाली अपनी जीवन शैली को नहीं बदला तो हमारी पृथ्वी 2050 तक मानव जीवन के लिए गैर टिकाऊ बन जायेगी।

टिकाऊ विकास पर 2002 का संयुक्त राष्ट्र जोहान्सबर्ग सम्मेलन ने पर्यावरण विनाश तथा मानवीय संसाधनों के पतन की घातक समस्या को स्वीकार किया।

सन् 2000 में विश्व के 6000 ख्यातिनाम वैज्ञानिकों ने अपने वक्तव्य में जोर दिया कि मानव समुदाय यदि शीघ्र ही ग्रीन हाऊस गैसों के उत्पादन को नहीं रोकता तो वैश्विक गर्मी से 21वीं सदी के अंत तक पृथ्वी जीव-जगत के लिए गैर टिकाऊ बन जायेगी।

लोगों का विश्वास भी इसी लाईन पर चल रहा है। लोग ऐसा महसूस करते हैं कि ग्रीन हाऊस गैस बड़ी मात्रा में बढ़ रही है, विश्व के पानी के स्रोत घट रहे हैं। बड़े पैमाने पर वनों का विनाश हो रहा है, 60% से अधिक कृषि योग्य भूमि पतित हो गयी है, बहुत सी जीव प्रजातियां समाप्त हो गयी है और अन्य प्राकृतिक उत्पादों का गैर टिकाऊ प्रयोग उनके जीवन के लिए बहुत गंभीर चुनौती पैदा कर रहा है।

(ख) आम तौर पर वर्तमान मानव समाज और खास तौर पर इसके प्रत्येक सामाजिक पहलू में मनुष्यत्व के गुणों से वंचित होने की चुनौती

यह घातक पर्यावरणीय-जैविक चुनौती का अन्य पक्ष है जिससे आज मानव समाज सामना कर रहा है। यह (यानि, सामान्यतया मानव समाज का और खास तौर पर इसके प्रत्येक सामाजिक पहलू का अमानवीयकरण) इतना खतरनाक है कि अगर इसके संभवतम संक्षिप्त समायावधि के अन्दर-अन्दर सुधारा नहीं गया तो यह पर्यावरणीय चुनौती को और अधिक तीव्र कर देगा जो इस पृथ्वी पर मानव सहित सभी जैव-जीवन का अपरिहार्य तौर पर संहार कर देगी।

स्पष्टतया, उपर्युक्त पैरा, तीन खोजी सवालों को उठाता है। पहला सवाल है–मनुष्यत्व के गुणों से वंचित होने (अमानवीयकरण) का क्या अर्थ है। दूसरा सवाल है–वे कौनसे तथ्य हैं जो वर्तमान मानव समाज में अमानवीयकरण के द्योतक है और तीसरा सवाल है कि कैसे अमानवीयकरण की प्रक्रिया उग्र पर्यावरणीय संकट को और अधिक तीव्र कर देगी जिसका परिणाम विद्यमान मानव समाज के विनाश में निकलेगा।

पहले सवाल के सम्बन्ध में, अमानवीकरण किसी घटनाक्रम या प्रक्रिया में विद्यमान मानवीय गुणों, मूल्यों या चरित्र से वंचित होने या उलट जाने का अर्थ ही है। यहाँ मुख्य पहलू यह है कि मनुष्य अपने मानसिक सोच और व्यवहारिक-गतिविधि में एक तर्कसंगत प्राणी है जिसने निश्चित जमीनी वास्तविकता के अनुरूप सही और गलत में भेद करने की तकनीक को अख्तियार करके अपनी तर्कसंगतता को विकसित किया है। निस्संदेह, लम्बे ऐतिहासिक मानवीय कूच के दौरान बहुत कमियाँ और यहाँ तक कि भारी गलतियाँ हुई हैं परन्तु गंभीर भटकावों के बावजूद मनुष्य हमेशा सही रास्ते की तरफ लौटता रहा है। हम आशा करते हैं कि मनुष्य इस वक्त भी सही प्रक्रिया को दोहरायेगा।

अत: वर्तमान मानव समाज या विश्व के सभी देशों में अब चल रहे तथाकथित 'स्वतंत्र और खुले जनवाद' में अमानवीयकरण के मुख्य पहलू क्या हैं।

प्रथमत:, इसका मुख्य लक्षण यह है कि जहाँ इसके संस्थापक या निर्माणकर्ता, यानि पश्चिमी पूँजीवादी वर्ग इसे स्वतंत्र और खुले जनवाद की संज्ञा देता है परन्तु वास्तव

में और व्यवहार में यह हमारे ग्रह पर विद्यमान अभी तक की सभी सभ्यताओं में से सबसे अधिक क्रूर और जंगली सामाजिक व्यवस्था है।

यह वही सभ्यता है जिसने नागासाकी और हिरोशिमा (जापान) में दुनिया की सम्पूर्ण आबादी को आंतकित करने के लिए आम आदमी के खिलाफ अमानवीय परमाणु बम्ब का पहली बार प्रयोग करके हजारों लोगों को मौत के घाट उतार दिया एवं लाखों लोगों को जीवन भर के लिए अपंग व अशक्त बना दिया। यह घटना 1945 में तब हुई जब जापानी पक्ष आत्मसमर्पण के साफ संकेत दे रहा था और अमेरिका दुनिया में एकमात्र परमाणु ताकत था और कॉरपोरेट पूँजीवादी देशों में सबसे अधिक आर्थिक तौर पर विकसित और सैनिक तौर पर ताकवर देशों में शामिल था। अब पाँच महाशक्तियों (चीन, रूस, ब्रिटेन और फ्रांस के साथ सबसे ऊपर अमेरिका) के पास इतनी बड़ी संख्या में परमाणु हथियारों का जखीरा है जो हमारे ग्रह पृथ्वी को टुकड़े-टुकड़े कर सकता है।

यहाँ एक स्वाभाविक सवाल पैदा होता है कि एक स्वतंत्र और खुले जनवाद को इतने बड़े परमाणु हथियारों के भंडार के निर्माण की आवश्यकता क्यों पड़ी। इसका उचित कारण है कि हमारी वर्तमान व्यवस्था कॉरपोरेट पूंजीवादी वर्ग द्वारा स्वतन्त्र एवं खुले जनवाद के तरीके से चलाई जाती है जो वास्तव में एक अमानवीय, अन्यायिक और अनुचित व्यवस्था है जिसमें कमजोर पर ताकतवर तथा गरीब पर अमीर हावी रहते हैं। इस व्यवस्था में पैसा, ताकत और विशेषाधिकार, राष्ट्र स्तर से लेकर विश्व स्तर तक सच्चाई और न्याय के स्वीकृत मानदण्ड हैं।

यह तथ्य प्रथमत: सभी विश्व संस्थानों के सिद्धान्त और कार्यशैली से स्पष्ट है। उदाहरण के लिए संयुक्तराष्ट्र और इसकी एजेन्सियां 1945 के चार्टर द्वारा संचालित होती है जो कि सैनिक तौर पर विश्व के सर्वोच्च शक्तिशाली 5 राज्यों–यानि अमेरिका, चीन, ब्रिटेन, फ्रांस और रूस को वीटों अधिकार एवं चुनिंदा सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता देता है। स्पष्टत: इस प्रकार के विशेषाधिकार पूर्णतया भेदभावपूर्ण और अन्याय पर आधारित है क्योंकि यह शेष 180 संयुक्त राष्ट्र सदस्यों की भूमिका को कम करता है। नैतिक और कानूनी तौर पर यह विश्व व्यापी रूप से स्वीकृत राजनीतिक समानता के सिद्धान्त–यानि एक इकाई एक वोट–का सार्वभौमिक मानक और प्रत्येक राष्ट्र के मानवाधिकार को नकारता है। जब संयुक्त राष्ट्र विभिन्न राज्यों में मानवाधिकारों के उल्लंघन के आधार पर हस्तक्षेप करता है तो वह स्वयं तर्कसंगत आधार पर पुनर्संरचना क्यों नहीं करता जो उसे नये युग के मुताबिक प्रासंगिक बनाता है।

द्वितीयत: इसी तरह की अतार्किक एवं अलोकतांत्रिक शैली 2 अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों–आई एम एफ और विश्व बैंक में प्रचलित है जहाँ आर्थिक महत्व ही प्रत्येक सदस्य की मतशक्ति तय करता है। इस प्रकार ये संस्थाएं निश्चित तौर पर वित्तीय रूप से विकसित देशों खासकर अमेरिका जो कुल मतशक्ति का 26 प्रतिशत मताधिकार रखता है, द्वारा संचालित है।

तृतीयत: नई रचित सी टी बी टी व्यवस्था 5 बड़ी परमाणु शक्तियों को परमाणु शस्त्रों पर स्वाभाविक एकाधिकार प्रदान करती है। इस प्रकार यह उन्हें विश्व का अजेय अधिपति बनाती है।

चतुर्थ, कुछ विकसित देश, मुश्किल से विश्व जनसंख्या का 15 प्रतिशत, आज विश्व की 80 प्रतिशत भौतिक और वित्तीय संसाधनों पर नियन्त्रण रखते हैं। 130

विकासशील देशों में रहने वाले विश्व के 85 प्रतिशत लोगों के लिए 20 प्रतिशत से कम संसाधन छोड़ते हैं।

पंचम् महिलाएं विश्व जनसंख्या का आधा भाग पूरी दुनिया में लगातार गलत व्यवहार एवं बुरे बर्ताव की शिकार हो रही है।

षष्ठम, प्रत्येक देश की राष्ट्रीय परिस्थिति चल रही विश्व व्यवस्था से ज्यादा अलग नहीं है। 190 से अधिक देशों में उनकी विभिन्न भौतिक स्थिति, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और सामाजिक आर्थिक हालात के बावजूद, सामाजिक जीवन की गुणवत्ता में कुछ रूपान्तरण के साथ बहुत बड़ी समानता है, खासकर विकासशील देशों में। उदाहरण के लिए लगभग सभी देशों (चाहे विकसित हो या विकासशील) में राजनीतिक प्रक्रिया पर धन की शक्ति का प्रभुत्व है। विकासशील देशों में यह बाहुबल और आदिकालीन मानदण्डों को साथ लिए हुए है। आर्थिक प्रक्रिया आमतौर पर गलाकाटू प्रतियोगिता, सट्टेबाजी और कालाबाजारी से चलित है। बेईमानी के मानक हर कहीं व्यवहार के सर्वमान्य मानदण्ड बने हुए हैं।

सप्तम, लगभग हरके देश में, भारी बहुमत की तुलना में, कुछ थोड़े से लोग विशेषाधिकार रखते हैं। प्रत्येक जगह विधायक विशेष संसदीय अधिकारों के तहत आम कानूनों से स्वतंत्र हैं। विकासशील देशों में शासक ग्रुप अकसर कानून का दुरुपयोग करके दण्ड से मुक्त हो जाता है। दुनियों में कहीं भी न्यायपालिका लोगों के प्रति जवाबदेह नहीं है। उल्टे किसी भी आलोचना को चुप करने के लिए यह सर्वत्र अदालत की अवमानना कानून का विशेषाधिकार रखती है। सरकारी गोपनीयता कानून लगभग सभी देशों में विद्यमान है जो अफसरशाही को सभी मामले ढकने और लोगों पर सवार होने एवं उनके साथ दुर्व्यवहार करने का अधिकार देता है। कानून लागू करने वाली संस्थाएँ दुनियां भर मे व्यापक अधिकार रखती है। तीसरी दुनियां में वे इस प्रकार व्यवहार करते है जैसे वे स्वयं ही कानून हो। हर कहीं कानून धनवान और कानून तोड़ने वालों का पक्ष लेता हैं और गरीबों एवं वंचितों के विरूद्ध पक्षपाती है।

अष्टम, अमेरिका आज दुनिया का निर्विरोध पुलिसमैन बन गया है। अफगानिस्तान में अकेले हाथों से अमेरिका की सैनिक सफलता के बाद यह अधिक एकपक्षीय और युद्धकारी बन गया है। अब, इसने आरोपित आतंकवाद के खिलाफ बेमियादी युद्ध की घोषणा कर दी है। जबकि आतंकवाद को न तो संयुक्त राष्ट्र या अन्य किसी यू.एन. सदस्य ने अभी तक परिभाषित किया है। इसके हमले के प्रथम लक्ष्य में तथाकथित 'दुष्ट राज्य' यानि इराक, ईरान, उत्तरी कोरिया इत्यादि शामिल हैं जो संयुक्त राष्ट्र के सदस्य हैं और जिन्हें किसी भी तर्क से आतंकवादी चरित्रित नहीं किया जा सकता। हालिया अमेरिका द्वारा घोषित आक्रमण योजना को विश्वभर में अस्वीकृति मिली है जिसमें चीन, रूस तथा यूरोपीय समुदाय शामिल हैं। परन्तु जहाँ तक अमेरिका का सवाल है वह अभी तक अपनी नई युद्ध परियोजना को रोकने के लिए तैयार नहीं है।

नवम्, घातक पारिस्थितिक-जैविक संकट के साथ अमेरिका के नेतत्व वाला विश्व कारपोरेट विकास मॉडल गम्भीर संकट में है। कारपोरेट मुनाफा गिर रहा है। बहुत सारी उच्च कारपोरेट कम्पनियां, खास करके अमेरिका में बड़ी-बड़ी धोखाधड़ियों और जालसाजियों में शामिल पाई गई है। कारपोरेट मॉडल का यह दावा कि ये कम्पनियाँ

सम्पत्ति सर्जन और सम्पन्नता व उन्नति करने वाले सामाजिक संस्थान है–गलत साबित हुआ है।

दशम्, विकास प्रक्रिया के सामने अभूतपूर्व संकट है, यह मानवजाति को गम्भीर चुनौती पेश कर रही है। धनी-निर्धन के बीच बढ़ रहा विभाजन अद्वितीय स्तर पर पहुँच चुका है। गरीब और बेरोजगारी तेजी से बढ़ रही है। सैनिक बजट–जो टिकाऊ विकास का शोषक है–तेजी से बढ़ रहे हैं, जबकि सामाजिक विकास पर खर्चे घट रहे हैं। विश्व में भ्रष्टाचार, अपराध, हिंसा और आत्महत्याओं का क्षेत्र तेजी से बढ़ रहा है, राजनीतिक, आर्थिक क्षेत्र और उनकी कार्यपालिकाओं को भी यह अपने दायरे में ले रही है। मानव अधिकारों की अवहेलना, अल्पसंख्यकों और अन्य कमजोर तबकों के खिलाफ भेदभाव तथा महिलाओं के ऊपर दमन लगातार बढ़ रहे हैं। नस्ली तनाव ऊंचाई पर है। भिन्न-भिन्न तरह की रूढ़ीवादी धारणाएं, नई और पुरानी दोनों, लोगों को गलत दिशा दे रही हैं और उनमें फूट डाल रही हैं।

आज हम एक ऐसी दुनियां में रह रहे हैं जहाँ बेईमान कॉरपोरेट राजनीति, कालाधन और जी हजूरी का व्यवहार सबसे अधिक फायदे के धन्धे बन गये हैं जो वर्तमान में चल रही स्वतन्त्र और खुले जनवाद तथा इसके 'कानून के राज' को चरितार्थ करने का पैमाना है।

उपर्युक्त वर्णित सभी गंभीर चुनौतियाँ और खतरनाक आशंकाएँ मानव समाज के भीतर और मानव व प्रकृति के बीच असांमजस्य को प्रतिबिम्बित करती है। आवश्यक तौर पर ये मानव समुदाय की अमानवीय अवस्था को इंगित करते हैं।

स्पष्टतया, मानव समाज की ऐसी अमानवीय अवस्था कुछ महाशक्तियों और उनके अपने-अपने सहयोगियों के नेतृत्व में जिनका भिन्न-भिन्न देशों में शासन होने की वजह से कॉरपोरेट शक्तियों को यह अवसर मिला कि उन्होंने अधिकतम धन इकट्ठा करने और सत्ता के एकाधिकार की अपनी कॉरपोरेट प्राथमिकता का अनुसरण करते हुए लोगों को सभी जरियों से कारपोरेट फूटग्रस्त कार्यक्रम में धकेल दिया है, जिससे हर कहीं माफिया झगड़े, सभ्यता के युद्ध, धार्मिक झगड़े, वंश-दुश्मनी, जाति-विवाद, नस्ली तनावों, राष्ट्रीय झगड़े इत्यादि पैदा होते हैं।

उपर्युक्त वर्णित तथ्य, प्रकृति मानव निर्देशित लोगों के कंधों पर यह भारी दायित्व सौंपते हैं कि वे चल रहे इस संकट के घातक परिणामों की अपनी समझ को गहरा करें, इसके वास्तविक कारण को जानने की कोशिश करें तथा एक वास्तविक कार्यक्रम अपनाकर अपनी सामर्थ्य के मुताबिक जवाब देने के लिए जो कुछ कर सकते हैं वह अवश्य करें।

(2) पर्यावरणीय गिरावट और सामाजिक अमानवीयकरण के लिए जिम्मेदार कौन है

विश्व में सभी कॉरपोरेट संस्थानों, यानि यू.एन., विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन, राष्ट्रीय राज्यों और मुख्य सामाजिक वैज्ञानिक, विद्वान और योजनाकार यह घोषणा करने में एकमत हैं कि चल रहा पर्यावरणीय-जैविक संकट मानव गतिविधि का परिणाम है। परन्तु इनमें से किसी ने भी जन गतिविधि की धारणा को परिभाषित नहीं किया है। ना ही विश्व सम्मेलनों-यानि, पर्यावरण और विकास पर 1972-स्टाकहोम विश्व सम्मेलन, 1992-रीयो यू.एन. सम्मेलन और टिकाऊ विकास पर 2002 जोहान्सबर्ग यूएन सम्मेलन-ने इस सवाल को छुआ है। जबकि टिकाऊ विकास के कार्यक्रम

को अख्तियार करते हुए इन सम्मेलनों में गैर-टिकाऊमानवीय तौर-तरीकों और जीवन-शैली पर केवल हल्का उल्लेख मात्र किया गया है परन्तु आज के हालात में विभिन्न प्रकार, रचना या आकृति में चल रही मानवीय व्यवस्था के विशिष्ट ढांचे को चिह्नित करने से गुरेज किया गया है। स्पष्टतया, उपर्युक्त वर्णित सभी मुख्य सामाजिक अभिनेता इस आवश्यक बिन्दु को बिल्कुल अस्पष्ट छोड़ते हुए प्रत्येक मनुष्य पर बराबर का दोष मढते हैं। इस आडम्बरपूर्ण सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक मानव एक प्रदूषक है परन्तु प्रत्येक व्यक्ति इस सच्चाई को जानता है कि प्रदूषण पैदा करने की जिम्मेदारी उन्हीं लोगों पर जाती है जो प्रदूषण पैदा करने वाली फैक्ट्रियों व खेती के मालिक हैं, ना कि उनमें काम करने वाले मजदूरों पर।

ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि मानवजाति, उसकी जीवन पद्धति या जीने का तरीका या अन्य कोई गतिविधि हमेशा से ही संगठित, यानि समाज के रूप में विद्यमान रही है। मानव इतिहास में गण, कबीला, सामन्ती राज्य और औद्योगिक सामाजिक ढाँचा इत्यादि विभिन्न तरह की सामाजिक व्यवस्थाएँ रही हैं। प्रत्येक सामाजिक ढाँचा अपनी सामाजिक व्यवस्था (संवैधानिक और कानूनी उसूलों सहित) के रूप में पहचाना जाता है जिसमें उस समाज को पहचानने वाले आधारभूत पहलू कानूनी और संवैधानिक उसूल होते हैं।

आज मानव समुदाय एक वैश्विक कॉरपोरेट व्यवस्था में निवास कर रहा है जो बहुत से राष्ट्रीय राज्यों से गठित और संचालित हैं। उनमें से सभी अपने सोच, व्यवहार और संगठन में एक ही तरह के कॉरपोरेट उसूलों का अनुसरण करते हैं। उनके बीच अन्तर केवल उनके अपने-अपने क्षेत्र और आबादी के आकारों का ही है। सामाजिक स्तर पर वे एक जैसी विचारधारा, राजनीति, आर्थिकता, संस्कृति और सुरक्षा पद्धति का अनुसरण करते हैं। संबंधित सामाजिक व्यवस्था से अलग या स्वतन्त्र कोई भी मानवीय गतिविधि, जीवन का तरीका या जीवन शैली नहीं होती है।

उपर्युक्त तथ्यों की रोशनी में यह कहा जा सकता है कि विद्यमान कॉरपोरेट व्यवस्था अब दुनिया को हिला रहे वर्तमान खतरनाक संकट का आधार है। इस आधार की गलतियों के लिए आवश्यक है कि इस व्यवस्था के समस्त चार आयामों–यानि, समाजशास्त्रीय धारणाओं, व्यवस्थागत उसूलों, संचालक मानदण्डों और ऐतिहासिक अनुभव-का समुचित अध्ययन किया जाए।

समाजशास्त्रीय दोष

समाजशास्त्रीय मूल कारण एडम स्मिथवादी तथा मार्क्सवादी विकास मॉडलों (ये दोनों ही मॉडल विश्व के विभिन्न भागों में चल रही राष्ट्रीय राज्य व्यवस्था, जो अब पीछे हट रही है, के दो प्रामाणिक विकास पद्धतियों के रूप में कार्यरत रहे हैं) की एक तरफा दार्शनिक समझ में निहित है। यह एकतरफा समझ है कि ब्रह्माण्ड में मनुष्य सर्वश्रेष्ठ घटनाक्रम है। स्पष्टत: यह लोगों को मानव समाज और इसकी प्रत्येक वस्तु का एकमात्र निर्माणकर्त्ता पेश करता है। यह इस सामाजिक सच्चाई को दरकिनार करता है कि मानव समाज में परिवर्तन और विकास दो तरफा अन्तरक्रिया-एक तरफ प्रकृति और मानव समाज के बीच और दूसरी तरफ मानव समाज के अन्दर-अन्तरक्रिया से होता है।

दूसरा मूल समाजशास्त्रीय कारण मानव स्वभाव के संबंध में एडम स्मिथ और

मार्क्सवादी विकास मॉडल की एकतरफा समझ में निहित है। एडम स्मिथ का आर्थिक मॉडल यह मानता है कि मानव समुदाय का स्वभाव निजी स्वार्थ का है। मार्क्सवादी आर्थिक सिद्धान्त मनुष्य की प्रकृति के प्रश्न पर दिग्भ्रमित धारणा रखती है। प्रथम, मनुष्य की प्रकृति सामाजिक है इस पर जोर देती है और अगले ही क्षण निरपेक्ष सामाजिक होने के गुण को औद्योगिक सर्वहारा (जो इस सिद्धान्त के अनुसार मानव समाज का मुक्तिदाता है) में तब्दील कर देता है और अन्तिम तौर पर सामाजिक विशिष्टता के समस्त एकाधिकार को कम्युनिस्ट पार्टी में निहित कर देता है। इस दृष्टिकोण के तहत मानव समाज को सामाजिक तौर पर तब्दील करने की क्षमता अकेली कम्युनिस्ट पार्टी में ही समझता है।

वास्तव में, तथापि मानव समुदाय का दुतरफा चरित्र है, एक तरफ जैविक चरित्र और दूसरी तरफ सामाजिक चरित्र। जैविक चरित्र का पहलू मानव समुदाय के व्यक्गित अस्तितत्व को प्रतिबिम्बत करता है, जबकि सामाजिक चरित्र का पहलू उसके सामाजिक जीवन, कार्यशैली और संगठन को इंगित करता है।

व्यवस्थागत दोष

बुनियादी व्यवस्थागत दोष कारपोरेट व्यवस्था के उद्देश्य से पैदा होता है जो अधिकतम लाभ और अधिकतम वृद्धि दर को इसके विकास का एकमात्र उद्देश्य बताता है। उदारवादी और मार्क्सवादी दोनों धारणाएं यह स्वीकार करती हैं कि सामाजिक सम्पन्नता और प्रगति को जाँचने का एकमात्र मापदण्ड वृद्धि दर है। अधिकतम वृद्धि दर पाने की अपनी खोज में इन दोनों ने पर्यावरण और मानवीय विकास के पहलुओं को बर्बादी के कगार पर ला खड़ा किया है।

द्वितीय, सामाजिक सम्पन्नता और प्रगति को मापने का एकमात्र मापदण्ड मौद्रिक वृद्धि को मानने का सार्वभौमिक स्वीकृत नियम सबसे अधिक नुकसानदेह व्यवस्थागत खामी है। सामाजिक उन्नति के पहलू को रुपया-पैसा के रूप में परिभाषित करने से धन बटोरने की मनुष्य की महत्त्वकांक्षा को अत्यधिक प्रज्ज्वलित किया है। यह आज के तथ्यों के मद्देनजर स्पष्ट है कि लगभग प्रत्येक मनुष्य की मुख्य प्रेरणा रुपया-पैसा बन गया है। जो उसके परिप्रेक्ष्य, मानसिकता, उद्देश्य, प्राथमिकता तथा साधन व मानदण्ड को तय करता है।

तब धन और सत्ता अधिकतम स्वहित का प्रतिनिधित्व करती है, पूरी दुनिया अब इन दो 'जीवनदायी अमृत' के पीछे भाग रही है। धन और सत्ता पाने के इस व्यापार ने अधिकतम गैर-टिकाऊ मानव व्यवस्था लाकर अब दुनिया को गम्भीरतम पर्यावरणीय और मानवीय बर्बादी के कगार पर ला खड़ा किया है।

वास्तव में, स्व-हित पशु जगत का बुनियादी स्वभाव है, जबकि मनुष्य का जबसे होमोसेपियन के रूप में प्रादुर्भाव हुआ, तब से उसकी प्रकृति जैव-सामाजिक है। अर्द्ध सामाजिक होने का उसका एकमात्र गुण मनुष्य प्रजाति को पशु प्रजाति से भिन्नता प्रदान करता है। जब मनुष्य में सामाजिक पहलू नहीं रहता, तब उसकी जीवन शैली एक पशु के रूप में बदल जाती है।

परिचालन खामियाँ

मुख्य परिचालन खामी का सम्बन्ध इसकी संचालन एजेन्सी या सरकार से है। एकमात्र निजी हित की स्थायी धारणा के निर्देशन के तहत राष्ट्रीय सरकारों (प्रत्येक देश में

पार्टी व्यवस्था पर आधारित) के नेतागणों का मुख्य ध्यान अपने लिए सही या गलत तरीके से धन बटोरने और लगातार सत्ता अपने हाथों में रखने में लगा रहता है और जनहित या अन्य पर्यावरणीय-जैविक मुद्दों पर कोई गौर नहीं करता है। उनकी खास जीवन शैली कहना कुछ और करना कुछ की है। वे हमेशा गरीबों और वंचितों के लिए आँसू बहाते हैं, परन्तु हर समय अमीर और प्रभुत्वशाली लोगों का हित साधते हैं।

उपर्युक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि जब तक वर्तमान सामाजिक व्यवस्था और इसके विकास के पैमाने के स्थान पर टिकाऊ, न्यायपूर्ण और समता के मॉडल को न लाया जाए, तब तक असमानता और गरीबी की अत्यधिक खतरनाक सामाजिक चुनौती को प्रभावी उत्तर देने की क्षीण सम्भावना रहती है।

विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था का ऐतिहासिक अनुभव

वर्तमान पर्यावरणीय-जैविक संकट की जड़ विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था में कैसे है यह इसके 200 वर्षों के भूतकालीन तथा वर्तमान इतिहास (जो औद्योगिक क्रांति की शुरुआत से विभिन्न विकास चरणों–औद्योगिक, प्रतियोगी, उपनिवेशी और उत्तर-उपनिवेशी–से गुजरते हुए अब ग्लोबल चरण में प्रवेश किया है) से देखी जा सकती है।

प्रथमत:, यह (यानि, कॉरपोरेट इतिहास) कॉरपोरेट विकास मॉडल की गैर-टिकाऊ कार्यवाही–एक तरफ पर्यावरणीय संसाधनों का दुरुपयोग और बर्बादी तथा दूसरी ओर मानवीय संसाधनों के साथ अमानवीय बर्ताव को दिखाता है। इसका नतीजा आज पर्यावरणीय संसाधनों के क्षरण और मानवीय संसाधनों के दरिद्र होने में निकला है, जो हमारे ग्रह पर घातक जैव-पारिस्थितिकी संकट का कारण है।

द्वितीयत:, यह मानव समाज में प्रेरक तत्त्व के तौर पर स्वहित के अपने समाजशास्त्र को आगे लाता है। इसने चारों तरफ स्वार्थ की प्रेरणा को पैदा किया, इस प्रकार व्यक्तिगत लालच और प्राप्ति के रुझान को अधिकतम हद तक बढ़ाया तथा सामाजिक हितों की अन्य मानवीय प्रवृत्तियों को नकारा।

तृतीयत:, यह प्रत्येक समय और स्थान में 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' की अपनी राजनीति को समाज की स्थिरता, सुरक्षा एवं व्यवस्था को बनाये रखने का एकमात्र सामाजिक सिद्धान्त प्रस्तुत करता है।

इस प्रकार यह किसी भी कीमत पर उचित या अनुचित साधनों से ताकत हासिल करने की मानसिकता तैयार करता है, जो राजनैतिक प्रक्रिया को अपराधीकरण की ओर ले जाता है। आगे, 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' की राजनीति व्यक्तियों के साथ-साथ समाज में तनाव, झगड़ों और युद्ध-उन्माद की मनोवृत्ति को बढ़ावा देती है। यह कमजोर पर ताकतवर के प्रभुत्व का एक सामाजिक वातावरण पैदा करती है। इस प्रकार यह अपने विश्व प्रभुत्व की स्थापना की भूमिका तैयार करता है।

चतुर्थ, यह सामाजिक विकास का एकमात्र निर्धारक अधिकतम लाभ को अपना बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त के तौर पर प्रस्तुत करता है, इस प्रकार यह सभी सामाजिक हितों की उपेक्षा करता है चाहे वो पर्यावरण, सामाजिक न्याय, उचितता, समता, उदारता आदि सहित कोई भी हो। आगे, अधिकतम लाभ के एकमात्र उद्देश्य के साथ स्वहित के समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के मेल से पूरे विश्व में धन कमाने की होड़ मच गई है, मुख्य रूप से भ्रष्ट और भद्दे तरीकों से। धन-हड़पने के व्यापार में कारपोरेट क्षेत्र की भूमिका को विश्व

की सर्वोच्च बहुराष्ट्रीय कम्पनियों (विशेषकर अमेरिका आधारित कम्पनियों) के हालिया धोखों और घोटालों से देखा जा सकता है।

पंचम, यह सभी प्रकार के दोगले मानदण्डो जैसे ''कहना कुछ और करना कुछ'' को स्वीकृति देता है, और इन्हें बाजार के नियमों और सत्ता ढाँचे की जरूरत के नाम पर जायज ठहराता है।

षष्ठम् यह सभी प्रकार की रूढ़ीवादी धारणाओं और तकनीकों को काम में लेता है जो इसे आर्थिक और राजनीतिक उद्धेश्यों की मजबूती में मदद देता है जबकि लोगों को संकीर्ण एवं उग्रवादी लाईन में विभाजित करता है।

अन्तिम, लेकिन बहुत ही महत्वपूर्ण, कारपोरेट आधारित टिकाऊ विकास मॉडल, टिकाऊ विकास की बहुआयामी प्रक्रिया को दुर्बल बनाता है, यह कारपोरेटों को विश्व पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों को प्रदूषित और शोषित करने की सुविधाएँ प्रदान करता है-इस प्रकार जैव-पारिस्थितिकी संकट को एक खतरनाक बिन्दु पर ले आया है।

3. पारिस्थितिक-जैविक संकट से बाहर निकलने का रास्ता

अल्पकालीन मार्ग

इस संकट से बाहर निकलने का अल्पकालीन मार्ग पांच उसूलों की बुनियाद पर एक न्याय आधारित समाज की स्थापना करने में निहित है, यानि, (1) हर समय और हर स्थान पर पर्यावरण और लोगों को सर्वोच्चता देना, (2) लोगों के बीच भाईचारे के मजबूत संबंध स्थापित करना (3) कॉरपोरेट पूँजीवादी समर्थक राजनीतिक पार्टियों तथा व्यापारिक घरानों की जगह आम जनता का सशक्तिकरण करने, (4) प्रत्येक वंचित और गरीब व्यक्ति की सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करने और (5) बेतुके आय के अन्तर को 1 : 5 के अनुपात में तर्कसंगत बनाने–में निहित है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित मार्ग

इस संकट का आधारभूत हल वर्तमान कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था के स्थान पर एक प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था कायम करने में निहित है, जिसके उद्देश्य, सिद्धान्त, तरीके और संगठनात्मक सिद्धान्त दो उच्च प्राथमिकताओं-यानि, पर्यावरण और मनुष्य के लिए हों तथा जो पाँच आधारभूत उसूलों–यानि, पर्यावरणीय संवर्द्धन, उचित समानता (यानि, प्रत्येक वंचित और गरीब व्यक्ति की सामाजिक सुरक्षा कायम करके तथा बेतुके आय अन्तर को 1:5 के तर्कसंगत अनुपात में लाकर), उत्पादकता (या वृद्धि दर), लोक नेतृत्व वाला जनवाद (यानि, कॉरपोरेट पूंजीवादी समर्थक राजनीतिक पार्टियों व व्यापारिक घरानों की बजाए आम जनता का सशक्तिकरण करके) एवं चौतरफा पारदर्शिता-द्वारा संचालित हो।

प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं–

मानव समाज का प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल

1. मानव समाज के प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल का मानना है कि मानव समाज में पर्यावरण और मानव जाति दोनों बहुत ही मूल्यवान घटनाक्रम हैं। यह दोनों इसकी सामाजिक पूँजी (सर्वोच्च वस्तु) है, इन दोनों (यानि, पर्यावरणीय-मानवीय संसाधन) में वृद्धि से विकास, सम्पन्नता एवं प्रगति होती है तथा सोचने, कहने, करने और संगठित होने के लिए यह निर्देशक सिद्धान्त का कार्य करता है।

2. यह हर समय और सब जगह पर्यावरण (यानि, हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) संवर्धन के मूलभूत कार्य का मजबूती से समर्थन करता है।

3. यह प्रत्येक व्यक्ति के जैव-सामाजिक अस्तित्व के अधिकार को शुद्ध हवा, साफ पीने के पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित करने का समर्थक है।

4. यह आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में अधिकतम 5 गुणा अन्तर) पर आधारित उचित समानता के मूलभूत मानवीय अधिकार का समर्थक है।

5. यह विश्व शान्ति का मजबूती से पक्षपोषण करता है और विश्व के सभी विवादों खासकरके जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका इत्यादि के सीधे शांतिपूर्ण हल के मार्ग का समर्थक है। जम्मू-कश्मीर के न्यायपूर्ण समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा एवं विदेश महकमों को भारत-पाक सहराज्य के संयुक्त नियन्त्रण में सौंपा जाना चाहिए जबकि बाकी सभी मामलों (रक्षा और विदेश मामलों के अलावा) में जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र होना चाहिये जबकि इसके नौ नश्ली क्षेत्रों में से प्रत्येक को अधिकतम संभव स्वायत्तता प्रदान की जाए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन और जोर्डन के संबंध में भी कारगर होगा।

6. यह संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के 5 स्थायी सदस्यों के वीटों पावर को समाप्त करते हुए विश्व व्यवस्था के पुनर्गठन करने एवं किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए संयुक्त राष्ट्र की केन्द्रीय सभा में साधारण बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान करने की मांग करता है। कुछ समय दौरान, विश्व के विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों के लोगों के मतदान से निर्वाचित संविधान सभा द्वारा रचित संविधान के आधार पर संयुक्त राष्ट्र का पुनर्गठन किया जाए।

7. यह विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाए प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर पुनर्गठित करने तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है) को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति बनाने की हिमायत करता है जिसमें मानवीय और पर्यावरणीय पहलु उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्ववाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के पांच उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाता है।

8. यह सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50% प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित करने का समर्थक है।

9. यह खेती को सहकारिता के आधार पर सुसंगठित करने को प्रोत्साहित करता है तथा खेती से संबंधित सभी लोगों की जीविका को सुनिश्चित करने का समर्थक है।

10. यह श्रमिकों (शारीरिक और मानसिक दोनों) के सशक्तिकरण के लिए जोरदार आवाज उठाता है, जिसके अनुसार सभी संस्थानों, परियोजनाओं एवं कारखानों के प्रबंध में उनके (श्रमिकों के) एक तिहाई चुने हुए प्रतिनिधियों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए।

11. यह सभी औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों के विकेंद्रीकरण की वकालत करता है जिसके अनुसार कॉरपोरेट और राजकीय मोनोपोली नियन्त्रण समाप्त करते हुए एवं उन्हें

साधारण शेयरधारकों (दो तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) तथा मजदूरों (एक तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) के द्वारा प्रबंधित किया जाए।

12. यह वित्त नियन्त्रण के लिए लोकतांत्रिक प्रबंध और नियन्त्रण को प्रस्तावित करता है। कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबंधन एवं नियन्त्रण का पक्षधर है तो राजकीय क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का समर्थक है। जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियन्त्रण का हामी है। प्रोमोटर्स शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध की मिल्कियत को समाप्त किया जाए।

13. यह प्रत्येक सांसद को 2 करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये अपने चुनावी क्षेत्र के विकास खर्च के लिए आवंटित करने के मौजूदा नियम को हटाकर विकास से संबंधित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्रामसभा सहित और इसके ऊपर कोई नहीं) के जरिए खर्च करने को प्रोत्साहित करती है।

14. यह प्रत्येक देश में प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण के आधार पर कॉरपोरेट पूँजीवादी निर्देशित संविधान तथा न्यायशास्त्र को पुनर्गठित करने का प्रस्ताव रखता है।

15. यह मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के हितों की रक्षा एवं संवर्धन के मूलभूत सिद्धान्त का मजबूती से पक्षधर है। उपर्युक्त उसूल की किसी तरह से अवहेलना करने पर अपराधी को सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल दण्ड दिया जाए। दण्ड में मानवीय क्रूरता और मृत्युदण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधान शामिल हो सकते हैं।

16. इसका पक्का विश्वास है कि मानव समाज की सभी संघटक प्रक्रियाओं–यानि, पर्यावरणीय, मानवीय और वैज्ञानिक तकनीकी–पर लोगों का नियंत्रण होना चाहिए और उन्हीं द्वारा संचालित होनी चाहिए।

17. यह गांव/वार्ड से राष्ट्रीय स्तर तक पाँच स्तरों पर सामाजिक जीवन के तीन पहलुओं–राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक–के प्रबन्ध की शक्ति लोगों को देकर उनके सशक्तिकरण (या जनता के नेतृत्व वाला शासन) को प्रस्तावित करता है।

18. लोगों के सशक्तिकरण की प्रक्रिया चुनाव के तरीके से तय की जाए जो पूर्णतया स्वतंत्र हो और जहाँ प्रत्येक को उम्मीदवार के तौर पर भागीदारी करने का अधिकार है तथा मतदाता के रूप में अपनी राय जाहिर करने का अधिकार है। यह दलगत ढांचे को महत्व दिये बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा चुनाव के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करें) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्य सत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के राजकीय एकाधिकार का खात्मा करने का पक्षधर है। सम्बन्धित मतदाताओं को वापिस बुलाने का अधिकार हो जिसके तहत किसी सभा सदस्य के मतदाताओं का 1/5 भाग अगर लिखित में पुन: चुनाव की मांग इस आधार पर करें कि उपर्युक्त सदस्य अपने मतदाताओं का विश्वास खो चुका है।

19. राजनीतिक पहलू माँग करता है कि पाँचों स्तर (यानि, राष्ट्रीय, राज्य या क्षेत्रीय, जिला, ब्लॉक और गाँव) पर राजनीतिक सभा का गठन किया जाए जो लोकतान्त्रिक व्यवस्था पर कायम रहे तथा पूर्णतया लोकतान्त्रिक उसूलों, गतिविधियों और ढाँचे पर आधारित हो। ऐसा मॉडल निर्णय लेने में भी अधिकतम सम्भव लोक सशक्तिकरण के सिद्धान्त को लागू करना आवश्यक बना देता है।

20. आर्थिक पहलू की आवश्यकता है कि एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता के लिए पाँचों स्तर पर विकास सभाएँ स्थापित की जाएं जिसकी धारणाएँ, कानून एवं नियम पुर्वोक्त दो उच्चस्थ प्राथमिकताओं (यानि, मानवजाति और पर्यावरण) तथा पाँच सिद्धान्तों (यानि, पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जन-नेतृत्वकारी लोकतन्त्र तथा चहुंमुखी पारदर्शिता) की रोशनी में बनाए जाएं। मनुष्य की जैव-सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एडम स्मिथ का 'निजी हित' आधारित बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त तथा हर चीज का राज्य द्वारा राष्ट्रीयकरण करने के मार्क्सवादी बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त, ये दोनों एक तरफा है। परन्तु, विडम्बना यह है कि दोनों मनुष्य और पर्यावरण विकास के सन्दर्भ की बजाए विकास, सम्पन्नता तथा प्रगति को धन वृद्धि के रूप में नापते हैं।

21. सांस्कृतिक पहलू की आवश्यकता है कि पाँचों स्तर पर सांस्कृतिक सभाएं स्थापित की जाएं।यह ऐसे जीने के तरीके (या जीवन शैली) की माँग करता है जो बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों से भरपूर हों तथा लोगों के बीच में तर्कसंगत मानवतावाद एवं पर्यावरणवादी चिन्तन, व्यवहार एवं संगठन को विकसित करता हो।

22. पाँचों स्तरों पर राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक सभाओं द्वारा बनाये गये कार्यक्रमों और नीतियों को लागू करने के लिए अपने-अपने राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक क्षेत्र के विशेषज्ञों के आयोगों का चुनाव करना। राजनीतिक विशेषज्ञों का आयोग राजनीतिक मुद्दों, जैसे–कानून और व्यवस्था, अपराध रोकथाम, न्यायिक कार्यवाही से सम्बन्ध रखे; विकास विशेषज्ञों का आयोग आर्थिक, वित्तीय मसलों, जैसे–विकास योजना, कृषि उद्योग, सेवाएं, वित्त और बजट को देखे और सांस्कृतिक विशेषज्ञों का आयोग शिक्षा, स्वास्थ्य, नैतिक मूल्यों एवं अन्य सांस्कृतिक विषय, जैसे–भाषा, संगीत, नृत्य, सिनेमा उद्योग आदि पर ध्यान दें।

23. प्रत्येक चुनी हुई संस्था अपने प्रभाव क्षेत्र में चाहे वह निचले स्तर की हो या ऊपर के स्तर की हो सम्प्रभुसत्ता सम्पन्न होगी। किसी भी समय दो चुनी हुई संस्थाओं या सार्वजनिक संस्थाओं के मध्य मतभेद उत्पन्न हो तो सम्बन्धित इकाइयाँ अपने-अपने प्रतिनिधि समूहों को नियुक्त करेंगी जो बातचीत के जरिए सम्बन्धित प्रश्न का हल निकालेंगी। यदि मामला आपस में तय हो जाता है तो वह फैसला मान्य होगा। यदि दोनों पक्ष साझे निर्णय पर सहमत नहीं होते तो मसला सम्बन्धित लोगों द्वारा जनमतसंग्रह से हल किया जाएगा।

24. इसका मानना है कि किसी भौगोलिक इकाई की आन्तरिक सुरक्षा का प्रश्न सम्बन्धित लोगों द्वारा ही देखा जाए। विभिन्न भौगोलिक इकाइयों की सीमा-सुरक्षा का मुद्दा सुरक्षा एजेन्सी द्वारा देखा जाए तथा यह सुरक्षा एजेन्सी सम्बन्धित लोगों द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा स्वीकृत नियमों के अनुसार बनाई जाए।

25. समाज में प्रत्येक प्रदूषण फैलाने वाली तकनीक का संचालन यह नहीं होने देगी चाहे उस तकनीक में कितनी भी ज्यादा उत्पादक क्षमता हो।

4. तात्कालिक कार्य

घातक पर्यावरणीय-जैविक संकट की मूलभूत वास्तविकता जो अब हमारी पृथ्वी को हिला रही है, यह तत्काल माँग करती है कि इस सच्चाई के बारे में लोगों की जागरूकता बढ़ाई जाए कि जीने या मरने की एक घातक चुनौती का अब हमारी मानवजाति और अन्य सभी जैव-घटनाक्रम (जीवों सहित वनस्पति) को सामना करना पड़ रहा है।

आगे, लोगों को इस तथ्य के बारे में सचेत करने की आवश्यकता है कि उपर्युक्त 'जीवन और मौत' की चुनौती का कारण वर्तमान में चल रही मनुष्यत्व से रहित कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था और इसके अमानवीय संचालकों के कारण है जो केवल अपने निजी स्वार्थ के अलावा किसी से भी प्रेरित नहीं है।

तृतीयत:, इसके लिए लोगों को इस सच्चाई के बारे में जगाने की आवश्यकता है कि इस खतरनाक चुनौती का एक वास्तविक हल प्रकृति-मानव निर्देशित अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन एजेण्डे में निहित है।

चतुर्थ, जो लोग उपर्युक्त वर्णित तीन बिन्दुओं से सहमत हो उन सबको प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन के भाग के तौर पर संगठित किया जाए।

पंचम्, इसे पर्यावरणीय और मानवतावादी आन्दोलनों में शामिल सभी लोगों से भाईचारे के रिश्ते विकसित करने की जरूरत है तथा जिन संगठनों व व्यक्तियों के भारत में और विश्व के अन्य देशों में आम जनता से संबंध है उनसे दोस्ताना संबंध बनाये जाए।

1.11.2005

* * * * *

खुले और स्वतन्त्र कॉरपोरेट पूँजीवादी समाज में असमानता की स्थिति अमीर और गरीब के बीच बढ़ती खाई को प्रदर्शित करती है समता और न्याय के इसके नारे की पोल खोलती है और इसके अमानवीय चेहरे को दर्शाती है

कॉरपोरेट पूँजीवाद और उनके चाटुकार निरन्तर यह प्रचार करते हैं कि उन्होंने इस पृथ्वी पर अत्यधिक न्यायिक और समता वाले समाज की स्थापना की है ऐसा मॉडल भूतकाल में कभी नहीं था और यही मॉडल भविष्य के लिए भी रहेगा। परन्तु इस समाज का 200 वर्षो से अधिक समय का ऐतिहासिक अनुभव और सामाजिक व्यवहार सिद्ध करता है कि यह अत्यधिक अन्यायकारी और असमानता वाला सामाजिक ढाँचा है जो मानव समाज के राक्षसी चेहरे को प्रदर्शित करता है।

(क) धनी अधिक धनवान और गरीब अधिक गरीब होते जा रहे हैं

विश्व प्रसिद्ध कॉरपोरेट मैग्जीन 'फोरबॅस' (जिसमें हर साल दुनियां के अधिकतम् धनवान 500 लोगों की सूची छापी जाती है) के सितम्बर, 2005 अंक में कहा गया है कि निरन्तर यह तीसरा साल है जिसमें धनवान 400 लोगों की आय में कुल 125 अरब डालर की वृद्धि हुई है इससे इनके पास कुल धन 11 खरब 30 अरब डॉलर हो गया है। (यहाँ यह उल्लेख करना आकर्षक होगा कि सम्पूर्ण विश्व के 6.5 अरब लोगों की पिछले वर्ष पूरे वर्ष की आय 370 खरब डालर थी।)

इस साल पुन: बिल गेट्स अमेरिका में लगातार 11 वें साल कुल 51 अरब डालर की सम्पति के साथ सर्वोच्च धनवानों की मण्डली में पहले नम्बर पर है।

कुछ लेखे-जोखे द्वारा वाल्टन परिवार दुनिया का सबसे अधिक धनवान माना गया है। इस परिवार के लगभग 5 सदस्य है जिनमें से प्रत्येक के पास 20 अरब डालर की सम्पत्ति है, जो कुल 100 अरब बनती है।

यहाँ यह याद करना उचित होगा कि गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले 1 अरब से अधिक सबसे गरीब लोगों की संयुक्त आय दुनियां के अधिकतम धनी 500 धनवान लोगों की आय का तिहाई हिस्सा ही है।

सन् 2004 में मेरिल लिंच कम्पनी एवं कन्सल्टेन्सी तथा कैपगेमिनी ग्रुप द्वारा तैयार की गई विश्व सम्पत्ति की रिपोर्ट में कहा गया है कि पिछले साल अमेरिका और कनाडा द्वारा पैदा किये गए करोड़पति यूरोप, एशिया, लेटिन अमेरिका और पश्चिम एशिया द्वारा संयुक्त तौर पर पैदा किए करोड़पतियों से अधिक थे।

अमेरिका में 'उच्च सम्पत्ति मालिक' 22 लाख 70 हजार है जिनमें से प्रत्येक के पास 10 लाख डालर या इससे अधिक सम्पत्ति है। अमेरिका और कनाडा के करोड़पतियों के पास सन् 2002 में 85 खरब डालर की सम्पत्ति थी।

यूरोप में कुल 26 लाख लोग करोड़पति थे इनकी बढ़ोतरी दर 2.4 प्रतिशत है तथा सम्पत्ति 8.7 अरब डालर है।

एशिया में करोड़पतियों की संख्या में 20 लाख की वृद्धि हुई है यह वृद्धि 8.4 प्रतिशत है। लेटिन अमेरिका में यह वृद्धि 1.3 प्रतिशत है जिसका अर्थ है कि वहां 3 लाख लोग धनी क्लब से सम्बन्धित है जबकि पश्चिम एशिया में 2 लाख लोग उच्च आय वाले हैं।

अफ्रिका की कुल आबादी 60 करोड़ है जिसमें 1 लाख करोड़पति थे जो 14.9 प्रतिशत की दर से बढ़ रहे हैं।

यह उल्लेखित किया गया है कि भारत में 10 लाख डालर से अधिक वित्तीय संसाधन वाले उच्च आय के व्यक्तियों की संख्या में वृद्धि हुई है। इसमें आगे उल्लेखित है कि इस वर्ष इनकी सम्पत्ति में 22 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो इस वर्ष 267 अरब डालर थी। भारत में सन् 2003 में ऐसे 50,000 पूँजीपति थे जो बढ़कर इस वर्ष 61000 हो गये है। यह 22 प्रतिशत वृद्धि है।

मानव विकास रिपोर्ट (एच डी आर) 2005 के अनुसार यह स्थापित तथ्य है कि भारत में सुधार की कहानी बढ़ती हुई असमानता का भाग बन चुकी है। आज का जनवाद जो बुराइयों को स्वतंत्रता देता है लेकिन भौतिकतौर पर जीवन को सुनिश्चित नहीं कर सकता है, जबकि वास्तव में यह बड़ी अजीब बात है कि यह ऐसे देश में है जो प्राकृतिक दृष्टि से गरीब नहीं है।

विश्व विकास रिपोर्ट 2006 कहती है कि भारत और चीन की उच्च वृद्धि दर के कारण विश्व के विकासशील और विकसित देशों के बीच वैश्विक आय के स्तर की असमानता में कमी आ रही है। परन्तु यह स्थिति का एक अधिक मूल्यांकन है।

देश के अन्दर की स्थिति के लिए यह रिपोर्ट कहती है कि ''जहाँ तक उपलब्ध अनुमानों का सवाल है भारत में असमानता बढ़ रही है परन्तु इसके स्पष्ट प्रमाण नहीं है कि कितनी मात्रा में।''

(ख) संसाधनों पर नियन्त्रण और आय का अन्तर

थोड़े से विकसित देश जिनकी आबादी दुनिया की आबादी का 15 प्रतिशत है। आज दुनिया के भौतिक और वित्तीय संसाधनों के 80 प्रतिशत भाग पर नियन्त्रण किए हुए हैं जबकि 20 प्रतिशत भाग से भी कम संसाधनों पर दुनिया के 85 प्रतिशत लोगों का नियन्त्रण है जो 130 विकासशील देशों में रहते हैं।

सन् 1993 में दुनिया के 10 प्रतिशत गरीब लोगों की आमदनी दुनिया के सबसे धनवान 10 प्रतिशत लोगों की आमदनी का केवल 1.6 प्रतिशत भाग है। दुनिया के सबसे धनवान 1 प्रतिशत लोगों की आमदनी सबसे गरीब 57 प्रतिशत लोगों की आमदनी के बराबर है। अमेरिकी आबादी के सबसे धनवान 10 प्रतिशत लोगों (यानि करीब 2.5 करोड़ लोग) की संयुक्त आमदनी दुनिया के सबसे गरीब 43 प्रतिशत लोगों (करीब 200 करोड़ लोग) की आमदनी से अधिक है। *(संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट 2001)*

सन् 2000 में ब्राजील में 9 अरबपति थे जिनकी संयुक्त संपत्ति 20 अरब डालर थी, भारत में 9 अरबपति थे जिनकी संयुक्त सम्पति 23 अरब डालर थी, मलेशिया के 5 अरबपतियों के पास 12 अरब डालर, मैक्सिकों के 13 अरबपतियों के पास 25 अरब डालर और सउदी अरब के 5 अरबपतियों के पास 41 अरब डालर संपति थी।

(संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट 2002)

दुनिया के 200 अधिकतम धनवान लोगों की परिसम्पत्ति दुनिया की कुल आबादी के 41 प्रतिशत लोगों की संयुक्त आय से अधिक है।

संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट (1996) में इस व्यवस्था का फायदा उठाने के योग्य लोगों और दूसरी तरफ इसके प्रभाव के तहत पीड़ित होने वाले मजबूर लोगों के बीच खतरनाक ध्रुवीकरण की निंदा करते हुए वैश्वीकरण के नियमों को पुन: लिखने की आवश्यकता पर जोर दिया है।

दुनिया के मात्र 20 प्रतिशत लोग 86 प्रतिशत भाग व्यक्तिगत उपभोग पर खर्च करते हैं।

यूरोप में करीब 1100 करोड़ डॉलर मूल्य की आइसक्रीम का उपभोग किया जाता है, जबकि अमेरिका और यूरोप में डिब्बा बन्द भोजन पर 1700 करोड़ डॉलर खर्च आता है। यूरोप और अमेरिका में अन्य 1200 करोड़ डालर सुगन्धित द्रव्यों (इत्र, तेल, फुलेल इत्यादि) पर खर्च किया जाता है। जबकि जापान व्यापारिक मनोरंजन पर 3500 करोड़ डालर खर्च करता है। *(संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट 1996)*

रिपोर्ट कहती है कि विश्व के अधिकतम धनी केवल 3 लोगों की कुल सम्पत्ति अल्पतम् विकसित 48 देशों की संयुक्त जी डी पी (सकल घरेलु उत्पाद) के बराबर है। विश्व के अधिकतम धनी 225 लोगों की संयुक्त सम्पति 1 ट्रिलियन (1000 अरब) डालर है जो 47 प्रतिशत गरीब लोगों (जिनकी संख्या 250 करोड़ बनती है) की कुल आय के बराबर है विश्व के अधिकतम धनी 32 लोगों की सम्पत्ति दक्षिण एशिया (भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान और मालदीव) तथा ईरान व अफगानिस्तान की जी डी पी से अधिक है। *(1996 यू.एन.एच डी रिपोर्ट)*

विश्व बैंक विकासशील देशों की हल्की तस्वीर पेश करता है। यह कहता है कि 'ट्रिकल-डाउन इकानॉमिक्स' (आर्थिकता को धीरे-धीरे गरीबों तक पहुँचाना)–एक

व्यवहार जिसमें आशा की गई कि धनवानों के लिए टेक्सों में कमी समाज में गरीबों को लाभ पहुँचाएगी –का सिद्धान्त काम नहीं करता।

विश्व के 1 प्रतिशत दुनिया के 75 प्रतिशत सबसे गरीब लोगों की आय से ज्यादा प्राप्त करते हैं। *(2002 यू एन एच डी रिपोर्ट)*

उच्च आय वाले देशों में रहने वाले दुनिया के 20% लोग विश्व सकल घरेलु उत्पाद का 86% हिस्सा रखते हैं जबकि नीचे के 20% लोगों के पास मात्र 1% हिस्सा है।

(1999 यू एन एच डी रिपोर्ट)

(ग) आय में फर्क

लगभग 120 करोड़ लोग प्रतिदिन 1 डालर से कम पर गुजारा करते हैं (1993 पी पी पी यू.एस. डालर) और 280 करोड़ लोग प्रतिदिन 2 डॉलर से कम पर गुजारा करते हैं। यह वंचितपन विकासशील देशों तक ही सीमित नहीं है। ओ ई सी डी (आर्थिक सहकारिता एवं विकास संगठन) देशों में 13 करोड़ लोग गरीब है। *(2001 यू एन एच डी रिपोर्ट)*

रुचिकर बात यह है कि एक विशेषज्ञ के अनुमान के अनुसार नई दिल्ली के मुगल बादशाहों (जैसे जहांगीर, शाहजहाँ आदि) की आय अपनी सत्ता के उच्चतम् काल में वर्तमान कीमतों के अनुसार 15000 रुपये वार्षिक हुआ करती थी।

89 देशों में से 77% या तीन चौथाई से अधिक देशों की प्रतिव्यक्ति विकास दर (1960-1980) की अवधि से (1980-2000) की अवधि में लगभग 5% के बिन्दु तक गिर गयी। केवल 14 देश यानि 13% देशों में (1980-2000) की अवधि में (1960-80) की अवधि से प्रति व्यक्ति विकास दर बढ़ी। *(वाशिंग्टन डी सी आधारित आर्थिक और नीतिगत अनुसंधान केन्द्र, सी ई पी आर की रिपोर्ट)*

विश्व के 200 सबसे धनवान व्यक्तियों की संयुक्त सम्पत्ति 1999 में 11 खरब डालर से अधिक थी, बिल गेट्स के पास 90 अरब डॉलर की सम्पत्ति है।

(ओ ई सी डी-अन्तराष्ट्रीय मुद्रा कोष-विश्व बैंक का संयुक्त राष्ट्र प्रकाशन)

आज, 150 करोड़ लोग एक डालर प्रतिदिन से कम पर जीते हैं जो 1987 में 120 करोड़ थे। अनुमान है कि इस न्यूनतम आय पर रहने वालों की संख्या 2015 में 190 करोड़ हो जायेगी।

यह उद्घाटित करती है कि अमीर और गरीब के बीच खाई भी चौड़ी हुई है। सन् 1970 में विश्व के गरीबतम देशों की औसत प्रति व्यक्ति आय धनवान देशों की प्रति व्यक्ति आय की तुलना में 3.1 प्रतिशत थी जो 1985 में गिरकर 1.9% हो गई।

(विश्व विकास रपट 1999)

एक सुप्रसिद्ध आर्थिक इतिहासकार ए मेडीसन बताते हैं कि सबसे धनवान और सबसे गरीब देशों के बीच फर्क आज दिल हिलाने वाला है, यह फर्क जो सन् 1820 में लगभग 3 एवं 1 के अनुपात में था, यह सन् 1913 में 11 एवं 1 का 1950 में 35 एवं 1, 1973 में 44 एवं 1, 1992 में 72 एवं 1 का तथा 1997 में यह अनुपात लगभग 74 एवं 1 हो गया।

सबसे अमीर व्यक्ति और सबसे गरीब व्यक्ति के बीच विभेद आज दुनिया में धरती हिलाने वाला है। हमारी दुनिया का सबसे अमीर अमेरिकन बिल गेट्स अभी भी कुल 51 अरब डालर का स्वामी है और भारत का अजीम प्रेमजी 9.81 अरब डालर की सम्पदा का मालिक है, जबकि एक भूखा व्यक्ति खाली जेब और किसी अन्य स्रोत के अभाव में एक रोटी के टुकड़े को प्राप्त करने के लिए भीख मांगने के सिवाय कोई विकल्प नहीं रखता है,

कुछ समय जिन्दा रहता है और फिर इस दुनिया से विदा हो जाता है, इस प्रकार की मौतों के कारण को चिकित्सा विशेषज्ञ पेट की खराबी या इसी प्रकार की भौतिक बीमारी को कारण घोषित करते हैं।

1999 में बिल गेट्स की सम्पति 90 अरब डालर थी। आज भी वह विश्व के धनवान व्यक्तियों में 80 अरब डालर के साथ पहले नम्बर पर है। दूसरा सबसे धनवान आदमी लेरी एलिशन 47 अरब डालर और पाल एलन 28 अरब डालर की सम्पति का मालिक है। विश्व में लगभग 482 अरबपति हैं इसके उलट विश्व के 43 अल्प विकसित देशों में रहने वाले 58 करोड़ 20 लाख लोगों की संयुक्त आय 1999 के दौरान 146 अरब डालर थी।

अमीर और गरीब देशों के बीच कुल राष्ट्रीय उत्पाद की खाई बढ़ी है। जबकि अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया और इंग्लैण्ड का प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय उत्पाद क्रमश 29080 डालर, 19640 डालर, 20870 डालर, 20650 डालर है।

श्रीलंका और भारत का प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय उत्पाद क्रमश: 800डालर और 370 डालर है। *(सभी सन् 1997 के आंकड़े)*

(ओ ई सी डी, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं विश्व बैंक की संयुक्त राष्ट रपट)

(घ) मानवीय वंचितपन

विकासशील देशों में रहने वाले 460 करोड़ लोगों में से 85 करोड़ अशिक्षित हैं, लगभग 100 करोड़ लोगों को पीने का साफ पानी नहीं मिलता, 240 करोड़ लोगों को मूलभूत शौच सुविधा नहीं है। लगभग 32 करोड़ 50 लाख लड़के एवं लड़कियां स्कूल नहीं जाते। 5 साल से कम आयु के 1 करोड़ 10 लाख बच्चे संक्रामक बीमारियों से प्रतिवर्ष मर जाते हैं जो प्रतिदिन 30 हजार से ज्यादा है।

ओ ई सी डी देशों में 13 करोड़ से अधिक लोग गरीब है, 3.4 करोड़ बेरोजगार हैं और व्यस्क कार्यकारी अशिक्षा की औसत दर 15% है। *(संयुक्त राष्ट्र विकास रपट 2001)*

इस वर्ष (1997-98) में विश्व उपभोग 240 खरब डॉलर है यह आंकड़ा 1975 का 6 गुणा है। लेकिन विकासशील देशों में 4 अरब 40 करोड़ लोगों का 3/5 भाग ऐसा सामाजिक सामुदायिक जीवन जी रहा है, जो मूलभूत शौच सुविधा से वंचित है। विश्व बैंक के मुताबिक लगभग 1/3 भाग बिना पीने के स्वच्छ पानी के, 1/4 बिना मकान के, 1/5 आधुनिक स्वास्थ्य सेवा से दूर है, 1/5 भाग बच्चे प्राथमिक शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाते। लगभग 140 करोड़ लोग दुनियां में निपट गरीब हैं। भूख तथा भूख जनित बीमारियों से वार्षिक 1 करोड़ 80 लाख लोग मर जाते हैं।

5 साल से कम आयु के 1 करोड़ 30 लाख बच्चे प्रतिवर्ष कूपोषण से मर जाते हैं। लगभग 60,000 औरतें प्रतिवर्ष गर्भकाल तथा प्रसव के समय मर जाती है, जो चोटों से होने वाली संख्या का 30 गुणा है। *(युनीसेफ)*

1 अरब 70 करोड़ लोगों को साफ पानी और 3 अरब को शौच सुविधा हासिल नहीं है। अकेले शहरों में 60 करोड़ लोग या तो बिना मकान के हैं या 'जीवन और मौत के चुनौतीपूर्ण वातावरण' में रह रहे हैं। (मानवीय पुनर्वास के लिए संयुक्त राष्ट्र केन्द्र) इस वक्त 2 अरब 60 करोड़ काम करने योग्य लोगों में से 1 करोड़ 20 लाख पूर्णतया बेरोजगार है। और 68 करोड़ अर्द्धबेरोजगार है। अपराध कई गुणा बढ़ गया है।

अकेले अमेरिका में 1 करोड़ 50 लाख आपराधिक मामले पुलिस में दर्ज है।

(ड़) असमानता-क्षेत्रवार

अमेरिका में अमीरों एवं गरीबों के बीच शर्मनाक असमानता विद्यमान है। वास्तव में 'वेतनों की असमानता' में अमेरिका दुनिया का नमूना है। जहाँ अमेरीकी आबादी का 1% भाग वहां के 95% लोगों की सम्पत्ति से ज्यादा सम्पत्ति रखता है। अमेरिका की गरीबी और अन्य देशों की गरीबी में सिर्फ फर्क यह है कि अमेरिका के गरीबों का जीवन स्तर यूरोप अथवा एशिया के गरीबों से उच्च स्तर का है। अमेरिका में एक व्यक्ति की आय औसत तौर पर यूरोप के एक व्यक्ति से 45% तथा जापान से 20% अधिक है। फिर भी अमेरिका में आज एक करोड़ लोग गरीबी में रहते हैं।

प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय उत्पाद (जी एन पी) में अमीर और गरीब देशों का बड़ा फर्क है। जहां अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया और इंग्लेण्ड का प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय उत्पाद क्रमश: 29080 डालर, 19640 डालर, 20870 डालर तथा 20650 डालर है जबकि श्रीलंका और भारत का प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय उत्पाद क्रमश: 800 डालर और 370 डालर है।

आर्थिक सहयोग एवं विकास के लिए संगठन (ओईसीडी) देशों में 13 करोड़ से अधिक लोगों की आय कमजोर है, 3 करोड़ 40 लाख लोग बेरोजगार है और व्यस्क कार्यकारी अशिक्षा दर औसत 15% है।

सन् 2000 में ब्राजील में 9 अरबपति थे जिनकी संयुक्त सम्पति 20 अरब डालर थी। भारत के 9 अरबपतियों की 23 अरब डालर, मलेशिया के 5 की सम्पति 12 अरब डालर, मैक्सिकों के 13 की 25 अरब डालर तथा सउद्दी अरब के 5 अरबपतियों की सम्पति 41 अरब डालर थी। *(2001 संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट)*

पिछले दो दशक से अधिक समय में दक्षिण अमेरिका ने विकास दर में ठहराव अनुभव किया है और अफ्रीकन देश नियोजित आय देख चुके हैं। केवल विकासशील देश जिन्होंने पिछले दो दशकों में अच्छा किया है वे वो एशियन देश हैं जिन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष (आईएमएफ) तथा विश्व बैंक द्वारा सुझाए गए मानदण्डों को नकारा।

(वाशिगंटन डीसी आधारित आर्थिक नीति अनुसंधान केन्द्र, सी ई पी आर)

ऊपर बताए गए आर्थिक विभेद के अलावा, भारी मात्रा में अन्य अनैतिक असमानताएँ हैं। ये उस समाज में सामाजिक जीवन का हिस्सा बने हुए हैं, जो अपने आप को उचित एवं तर्कसंगत समाज का दर्जा देता है। इस समाज का एक मात्र ट्रेड मार्क व्यक्तिगत दक्षता (या सर्जना) है जो इस समाज में सर्वोच्च मूल्यवान स्वीकृत की जाती है।

बेरोजगारों की संख्या 55 करोड़ है (2005 विश्व श्रम संगठन) जो विश्व में लाखों परिवारों को पीड़ित करती है।

लिंग-असमानता विश्व भर में विद्यमान है। धनवान और शासक परिवारों की 10 प्रतिशत औरतों के अलावा बाकी बची सभी औरतें जो शहरी मध्यम एवं गरीब तबके तथा ग्रामीण किसान परिवारों से संबंधित है, विश्व भर में पुरुषों को प्राप्त समान मानवधिकारों से वंचित है।

शहर-गांव विभेद, जिसमें शहरों को गांव की तुलना में अधिक नागरिक सुविधाएं है, प्रत्येक देश का एक आम घटनाक्रम है।

पढ़े-लिखे और अनपढ़ के बीच भेद-भाव सामाजिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में कार्यशील है।

(च) कारण

वर्तमान समाज में विद्यमान असामनता एवं वंचितपन का कारण अन्यायकारी और अतर्कसंगत व्यवस्था में नीहित है, जो अमीर तथा ताकतवर की देखभाल करती है और गरीबों तथा कमजोरों पर ध्यान नहीं देती है।

(छ) तात्कालिक हल

तात्कालिक हल राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं के प्रबंध में लोगों को शामिल करके न्यायिक समाज की स्थापना करने में नीहित है।

(ज) बुनियादी हल

दीर्घकालीन हल वर्तमान कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था की जगह प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था लाने में है।

(झ) वर्तमान कार्य

वर्तमान चल रहे अन्यायकारी और असमान समाज में विद्यमान असमानताएँ एवं वंचितपन की स्थिति के बारे में लोगों की जागृति को ऊँचा उठाने का है।

(15.11.2005)

* * * * *

दक्षेस (सार्क) के सम्मुख सवाल

(क्षेत्रीय सहयोग के लिए दक्षिण एशिया संगठन)

पहले मानवीय एवं पर्यावरणीय मुद्दे

या

व्यापारिक एवं आर्थिक मुद्दे

इसके जन्म से (यानि 1985 से) पिछले 20 वर्षों में यह वह सवाल है जिसे दक्षेस हल नहीं कर पाया है। और इसलिए अब तक इन मुद्दों को उठा भी नहीं पाया है। उपर्युक्त सवाल दक्षेस क्यों नही उठा पाया? इसका कारण है–दक्षेस के देशों को आपस में जिन बुनियादी सवालों का सामना है। उन पर ध्यान नहीं दिया गया है और इसलिए जमीनी वास्तविकता से शुरूआत नहीं हो पाई है।

1. दक्षेस की प्रथम और सबसे महत्वपूर्ण जमीनी वास्तविकता

इस क्षेत्र की प्रथम और सबसे महत्वपूर्ण जमीनी वास्तविकता दक्षेस के सात सदस्यों (मालदीव, भूटान, नेपाल, श्रीलंका, बंगलादेश, पाकिस्तान एवं भारत) के बीच लगातार तनावपूर्ण एवं संदेहास्पद वातावरण (दक्षेस देशों के सत्ताधारी ग्रुपों के बीच वर्तमान नीतियों और उनके विगत इतिहास से उत्पन्न) के बने रहने में निहित है। जब तक यह तनाव और संदेह आधारित स्थिति सौहार्दपूर्ण विश्वास की स्थिति में नहीं बदल जाए तब तक दक्षेस कोई सार्थक प्रगति नहीं कर सकता है।

क्षेत्रीय सहयोग संस्था के लिए यह आवश्यक है कि उसके सदस्यों के बीच मित्रता और विश्वास का रवैया अपनाया जाए। इसका निर्माण ऐसे वातावरण में नहीं किया जा

सकता है जहाँ अविश्वास, सन्देह, तनाव एवं टकराहट हो; जब तक कि ऐसे वातावरण को पैदा करने वाले कारणों को हटा ना दिया जाए तब तक दक्षेस सदस्यों के बीच परस्पर विश्वसनीयता के ईमानदारीपूर्ण संबंध काम नहीं किये जा सकते हैं।,

दक्षेस में सद्भावनापूर्ण वातावरण बनाए जाने की जिम्मेदारी तार्किक तौर पर तथा आवश्यक रूप से भारत की ही बनती है। क्योंकि इस क्षेत्र में करीब-करीब सभी द्विपक्षीय विवादों में यह सबसे बड़ा पक्षकार है। रियायत की कीमत पर भी इसके व्यापारिक साझेदारों के बीच शाख कायम करने के लिए उचित त्याग करना होगा जो न केवल दुनिया एवं दक्षिण एशिया में ही बल्कि भारत में भी शान्ति, लोकतन्त्र एवं विकास में मदद करेगा।

प्रथम, जम्मू-कश्मीर समस्या का उचित समाधान विश्व के प्रमुख ज्वलन्त बिन्दु को शान्त करेगा तथा भारत व पाकिस्तान के बीच अनावश्यक हथियारों की दौड़ में लगने वाले जन-धन की बर्बादी को रोकेगा। नतीजतन, दोनों देश पिछले पचास वर्षों में असहनीय उच्चस्थ सुरक्षा खर्च के कारण वैश्विक स्तर पर विकास और सामाजिक कल्याण के मामले में हासिये पर आ गये हैं।

जम्मू-कश्मीर समस्या की आधारभूत प्रकृति (यानि, कानूनी अर्थ में द्विपक्षीय मसला परन्तु राजनीतिक मानदण्ड के अनुसार यह एक त्रिपक्षीय सवाल है) और इसकी जमीनी वास्तविकताओं (यानि भारत व पाकिस्तान जम्मू-कश्मीर पर अकेले नियन्त्रण हासिल करने के लिए अपने राष्ट्रीय सम्मान को ही दाव पर लगाए हुए हैं और कश्मीरी भारत से बाहर निकलना चाहते हैं, जबकि जम्मू-कश्मीर के अन्य नस्ली समुदाय अपनी-अपनी आकांक्षाएं और आशाएँ लिए हुए हैं) के मद्देनजर इस समस्या का एक न्यायिक, उचित और व्यवहारिक हल वही हो सकता है जिसमें एक तरफ भारत व पाकिस्तान दोनों के अपने-अपने राष्ट्रीय हितों में मेल बैठता हो और दूसरी तरफ जम्मू-कश्मीर राज्य के सभी नस्ली ग्रुपों की आकांक्षाएं और आशाएँ पूरी होती हों। इस उसूल पर आधारित एक ऐसा उचित विकल्प जो सम्पूर्ण जे के राज्य पर या तो भारत-पाक या सार्क सहराज्य (जो जे के राज्य के केवल रक्षा, विदेश और मुद्रा से संबधित विभाग सम्भालने) की स्थापना करे तथा साथ ही एक संघीय ढाँचे के अन्दर जम्मू-कश्मीर के 8 नस्ली क्षेत्रों को पूर्ण स्वायतता प्रदान करे। इस तरह के प्रबन्ध का परिणाम एक तरफ भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों के बीच सहभागिता पैदा होने और दूसरी तरफ सार्क के विकास का रास्ता खुलने के रूप में निकलेगा।

द्वितीय, दक्षेस के छोटे सदस्यों को भारत द्वारा उचित गारन्टी देकर इस आशंका को दूर किया जाना चाहिए कि उनके बाजारों में भारत का माल नहीं छायेगा, जिससे इस क्षेत्र में व्यापार और विकास को नया प्रोत्साहन मिलेगा जो सबके लिए लाभदायक रहेगा।

तृतीय, द्विपक्षीय पीड़ाओं-जैसे भारत और बांग्लादेश के बीच गंगा का पानी, चकमा कबीला, साझी सीमाएँ, भारत के लिए परिवहन सुविधा, भारत में अप्रवासी बांग्लादेशियों, आदि से संबंधित मामले; भारत और नेपाल के बीच कालापनी से संबंधित सवाल, 1950 भारत-नेपाल मैत्री सन्धि, पानी का बँटवारा तथा कुछ बिजली परियोजनाओं, आदि; भारत और श्रीलंका के बीच लिट्टे खाड़कुओं से संबंधित मुद्दे, हिंद महासागर में एक दूसरे के क्षेत्र में मछली पकड़ना, आदि; भूटान में नेपाली निवासियों को लेकर नेपाल से चल रहे विवाद में भारत द्वारा मदद नहीं करने के कारण भूटान की नाराजगी का सवाल;

तथा मालदीव की सुरक्षा संबंधी चिन्ताएँ, आदि–से संबंधित मामलों को सरल करने से दक्षेस देशों के बीच नई मित्रता की भावना उत्पन्न होगी।

चतुर्थ, दक्षेस के अन्य सदस्यों के साथ विवादास्पद मसलों को सुलझाने के लिए हाथ में लेने से इन देशों के लोगों में भारत विरोधी भावनाएँ कम होगी। सभी सार्क देशों के बीच मित्रतापूर्ण संबंध बनाने की प्रक्रिया भारत के बड़े भाई होने की छवि को एक लोकतान्त्रिक एवम तर्कसंगत व्यक्तित्व की छवि में बदला जा सकेगा।

आज, यह और अधिक स्पष्ट है कि यदि सार्क असफल होता है तो आम तौर पर सभी के लिए और खासतौर पर भारत व पाकिस्तान के लिए इसका नतीजा बर्बादीपूर्ण होगा। आमतौर पर दुनिया के अन्य देशों के मुकाबले सभी दक्षिण एशिया के देशों की विकास प्रक्रिया अवरुद्ध हो जायेगी। खास तौर पर भारत और पाकिस्तान में आर्थिक हालात के बिगड़ने से तथा इसके साथ-साथ इन दोनों देशों की टकराहट भरी राजनीति के परिणामस्वरूप एवं आन्तरिक तीव्रतम नस्ली संघर्ष की वजह से ये दोनों बहुजातीय देश अस्थिरता की ओर जा सकते हैं।

2. दक्षेस की अन्य विशिष्ट जमीनी वास्तविकता

अन्य ध्यान देने योग्य सार्क की जमीनी वास्तविकता यह है कि वर्तमान विश्व में इसकी विरोधाभासी अवस्था है, एक तरफ, इसमें मानवीय और प्राकृतिक संसाधनों के विकास की विशाल क्षमताएँ मौजूद है और दूसरी तरफ विश्व का सबसे पिछड़ा हुआ, तथा गरीबी का क्षेत्र भी यही है। सकारात्मक रूप से यह भौगोलिक शृंखलाबद्धता, मनुष्य समुदाय का 1/5 वाँ हिस्सा साझा इतिहास एवम सामाजिक नस्ली प्रेमभाव, 70 करोड़ प्रभावी उपभोक्ता, अमेरिका के बाद द्वितीय सबसे बड़ा रेलवे का जाल (कुल 92256 किलोमीटर), दुनियां में सबसे विस्तृत सिंचित भूमि (करीब 680 मिलियन हैक्टेयर) काफी तादाद में वैज्ञानिकों और तकनीकीविदों की मौजूदगी, कुछ मामलों में विकसित देशों से भी आगे तथा जैव-विविधता एवम प्राकृतिक संसाधनों के समृद्ध भंडार से चरित्रित है। ये सभी मददगार विशिष्टताएँ एक सम्पन्न दक्षिण एशिया समुदाय तथा इसमें विद्यमान विभिन्न समाजों के विकास और संतुष्टी का आधार बन सकती हैं।

इसके बावजूद भी इसका सम्पूर्ण क्षेत्र और इसका प्रत्येक देश एक चहुँमुखी दयनीय तस्वीर पेश करता है। इस शताब्दी के मध्य की तुलना में आज दक्षिण एशिया के राष्ट्र दुनिया के अन्य विकसित राष्ट्रों के मुकाबले कहीं अधिक दो आयामी संकट (मानवीय एवम पर्यावरणीय दोनों) के चपेट में हैं जो इन देशों के लोगों को अमानवीय जीवन स्तर की और धकेल रहे हैं। मानवीय संसाधनों के मामले में करीब 40 करोड़ दक्षिण एशियाई प्रत्येक रात्रि को भूखे सोते है, अन्य 30 करोड़ लोग गरीबी रेखा से थोड़े से ही ऊपर हैं। दक्षिण एशिया के आधे से अधिक लोग अनपढ़ है, एक तिहाई लोगों के पास रहने को घर नहीं है, 40 प्रतिशत लोग अर्द्ध-बेरोजगार हैं, एक तिहाई लोगों को सुरक्षित पीने का पानी तथा अन्य स्वास्थ्यवर्धक सुविधाएँ उपलब्ध नहीं है तथा तीन चौथाई लोग शौचालयों से वंचित हैं। पांच वर्ष की आयु से नीचे के 53 प्रतिशत बच्चे कम वजन वाले हैं। 5 से 14 वर्ष की उम्र के करीब 10 करोड़ बच्चे मजदूर के रूप में काम करते हैं। महिलाओं की हालत अत्यधिक दुखदायी है। दुनिया भर में लिंग आधारित हिंसा में दक्षिण एशिया सबसे ऊपर है।

सार्क के लोगों की वार्षिक औसत आय 399 डालर प्रति व्यक्ति भी अफ्रीका के सब-सहारा क्षेत्र-जो दो दशक पहले दुनियां में सबसे अधिक गरीब क्षेत्र था–कि 555 डालर प्रति व्यक्ति आय से भी कम है। प्रत्येक देश के हिसाब से भी राष्ट्रीय आय दुनियां में सबसे निम्नतम है, भूटान की 200 डालर प्रति व्यक्ति से लेकर भारत की 500 डालर प्रति व्यक्ति के दायरे में ही है।

गरीबी की समस्या अन्य विभिन्न सामाजिक वंचिताओं की वजह से और अधिक गंभीर हो जाती है।

दक्षिण एशिया में 14 करोड़ बच्चों को प्राथमिक स्कूलों की, 75 करोड़ को स्वास्थ्य देखभाल की तथा 99 करोड़ को स्वच्छ पीने के पानी की, 8.7 करोड़ बच्चों को पर्याप्त पोषण की तथा 28.7 करोड़ विवाहित जोड़ो को परिवार नियोजन की सेवाओं की आवश्यकता है।

इन सभी माँगों की पूर्ति के लिए अत्यधिक धन की आवश्यकता है परन्तु सत्ताधारी उच्च वर्ग अपनी ही प्राथमिकताओं को जारी रखता है। प्रशासनिक गलत नीतियों से उत्पन्न आंतरिक व बाह्य संघर्ष इस क्षेत्र के बहुत से वित्तीय संसाधनों को हड़प जाते हैं।

इसके पर्यावरणीय संसाधनों के मामले में, पिछले पांच दशकों में इसके प्राकृतिक संसाधनों के आधार का विस्तृत ह्रास होना दिखाई देता है। द्रुतगति से वनों के विनाश के परिणाम स्वरूप इस इलाके का वन क्षेत्र कुल क्षेत्र का 15 प्रतिशत ही रह गया है। बुरी से बुरी प्राकृतिक आपदाओं में से कुछ, जैसे बाढ और सूखे का सीधा संबंध इसके पारिस्थितिक तन्त्र पर दबाव के कारण है। ग्रीन-हाउस गैसों के प्रभाव से उत्पन्न ग्लोबल वार्मिंग का सभी तटीय क्षेत्रों पर गंभीर असर होना लाजिमी है, मालदीव और बांग्लादेश सबसे अधिक असुरक्षित है।

संसाधनों के अपव्यय के साथ निम्न वृद्धि-दर ने आंतरिक और बाह्य दोनों तरह के सरकारी ऋण में बढ़ोतरी कर दी है। ऋण अदायगी के साथ सेना का खर्च एवं कोष अपव्यय व दुरूपयोग की वजह से इस क्षेत्र की शाख गिरी है जिससे वैश्विक संसाधनों के रूप में पूँजी निवेश और मदद को पर्याप्त आकर्षित करने में अप्रभावी हो जाते है। और वे वैश्विक संसाधन अन्य लाभ पाने वाले क्षेत्रों की तरफ स्थानान्तरित हो जाते हैं। विकासशील देशों की तरफ दीर्घकालीन ऋण सेवा का यह क्षेत्र केवल 4.6 प्रतिशत और विश्व व्यापार में इसका हिस्सा 1 प्रतिशत ही बनता है जबकि इस क्षेत्र की आबादी दुनिया की आबादी की 20 प्रतिशत है। इन रूझानों का असर यह है कि यह क्षेत्र और अधिक हासिये पर चला गया है तथा भारी मात्रा में संसाधनों का बहाव-मानवीय, प्राकृतिक एवं वित्तीय–दक्षिण एशिया से उल्टा विकसित देशों की ओर जाने लगा है।

3. मानवीय एवं पर्यावरणीय मुद्दों पर ही आधारित दक्षेस कार्यक्रम क्यों

उपर्युक्त दो जमीनी वास्तविकताओं से शुरू करते हुए पहला प्रश्न हमारे सामने यह उठता है कि हमारे कार्यक्रम का मूलभूत सिद्धान्त क्या होना चाहिए। क्या इसका कार्यक्रम मानवीय और पर्यावरणीय बिन्दु पर आधारित होना चाहिए या व्यापार एवम आर्थिक मुद्दों से संबंधित होना चाहिए। पहला कार्यक्रम तो प्रकृति-मानव निर्देशित नजरिए से उभरता है तथा लोगों से सीधा संबंधित है जबकि दूसरा कार्यक्रम कारपोरेट-पूँजी-केन्द्रित नजरिए से सामने आता है तथा इसका सीधा संबंध व्यापारियों, वित्तदाताओं, उद्योगपतियों आदि से है।

पहला कार्यक्रम आमतौर पर मानव समुदाय के और विशेष तौर पर दक्षिण एशिया के लोगों के अनुकूल है जबकि दूसरा कार्यक्रम आमतौर पर कॉरपोरेट पूँजीपतियों के और खास तौर पर व्यापारियों, दुकानदारों, आढ़तियों, बैंक मालिकों, उद्योगपतियों के फायदे में है।

आगे, विवेक, तर्क व नैतिक सिद्धान्तों में से किसी भी नजरिए से देखे तो दक्षेस नाम से ही प्रथमदृष्टया यह स्पष्ट अर्थ निकलता है कि यह संगठन दक्षिण एशिया के लोगों से संबंधित मामलों में सहयोग स्थापित करने के लिए बना है ना कि केवल व्यापारियों के हितों को पुरा करने के लिए।

मानवीय एवं पर्यावरणीय कार्यक्रम के संक्षेप में निम्न बिन्दु हैं।

मानवीय मुद्दे

(1) दक्षेस सदस्यों के बीच के सभी विवादास्पद और तनावपूर्ण मुद्दों को तथा विशेषतौर पर जम्मू-कश्मीर समस्या को शान्तिपूर्ण तरीकों से हल किया जाना चाहिए। इससे दक्षिण एशिया ब्राण्ड का राजकीय और ग्रुपों का 'आतंकवाद' समाप्त हो जायेगा।

(2) पर्यावरणीय, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं से संबंधित सभी मामलों में प्रशासकीय स्तर पर निर्णय लेने में लोगों को शामिल किया जाए।

(3) गरीबी, भीख माँगना, बेरोजगारी, बाल मजदूरी, बाल-कुपोषण, लिंग असमानता, निरक्षरता, नई पैदा हुई खतरानाक बिमारियों, जैसे एड्स, कैंसर, बर्ड फ्लू, आदि, अवहनीय जनसंख्या वृद्धि, कालाधन, सीमा पर तस्करी, अराजकता, अपराध, भ्रष्टाचार, मानवाधिकारों का हनन, आदि को समाप्त करने एवं दक्षेस को टकराहट एवम परमाणु विहीन क्षेत्र बनाने, प्रत्येक देश का रक्षा खर्च कम करने, सभी आवश्यक वस्तुओं का व्यापार करना, दक्षेस देशों में परस्पर आधारभूत ढाँचे का निर्माण करने के लिए ठोस कार्यक्रम बनाया जाए।

पर्यावरणीय मुद्दे

(1) सभी ग्रीन हाउस गैसों के स्तर को कम करने की योजना बनाई जाए।

(2) सभी प्रकार के प्रदूषित पानी को फिल्टर (छानना) किया जाए। वर्षा के सम्पूर्ण जल को संग्रहित किया जाए तथा जल के सभी प्रकार के प्रदूषण और अपव्यय को रोका जाए।

(3) सघन या विरल दोनों तरह के जंगल क्षेत्र को बढाने के लिए गहन अभियान एवम कार्य किया जाए।

(4) सभी प्रकार की क्षयग्रस्त भूमि को पुनरजीवित किया जाए, सभी किस्मों (सिंचित या असिंचित) की भूमि की गुणवता को बढाया जाए तथा रेगीस्तानीकरण को रोका जाए।

(5) ऊर्जा उत्पादन के लिए संयुक्त योजनाएं बनाई जाए।

4. सभी क्षेत्रीय ग्रुपों के लिए मानवीय-पर्यावरणीय कार्यक्रम की प्रासंगिकता

हमारी नजर में मानवीय एवम पर्यावरणीय कार्यक्रम मौजुदा सभी क्षेत्रीय संगठनों के लिए प्रांसगिक है। इनमें से कुछ (यूरोपियन युनियन सहित) को अब हल न होने वाली

बाधाओं का सामना है, ये बाधाएँ संकटग्रस्त कारपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था एवं इनके स्वयं के क्षेत्रीय कार्यक्रम से पैदा हुई हैं।

5. हमारा कार्य

मानवीय एवम पर्यावरणीय कार्यक्रम पर दक्षेस का निर्माण करने के लिए लोगों में जन-जागृति की जाए। (17.11.2005)

* * * * *

मानव प्रजाति में लिंग समानता
एक निष्पक्ष एवं न्यायपूर्ण समाज की पहली आवश्यकता

I समस्या

संयुक्त राष्ट्र की बहुत सी रिपोर्टों में कहा गया है कि दुनिया भर में एक चौथाई से भी ज्यादा महिलाओं को उनके घरों में ही हिंसात्मक व्यवहार का शिकार होना पड़ता है। दुनिया में हिंसा का आमतौर पर सामान्य तरीका महिलाओं के पतियों या पुरुष साथियों द्वारा मारपीट करना है।

अमेरिका, जिसे प्राय: दुनिया के अपराधों की राजस्थानी कहा जाता है वहाँ अन्य कारणों से अस्पतालों में भर्ती होने के बनिस्पत, बलात्कार, छेड़खानी और सड़क दुर्घटना के कारण अधिक मरीज भर्ती होते हैं।

तीसरी दुनिया में महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार का ग्राफ कही ऊँचा है कुछ हालत में तो यह 80 प्रतिशत तक है।

पीटी हुई महिलाओं के बच्चों को भी नतीजतन नुकसान उठाना पड़ता है। एक माँ जो घरेलु हिंसा का शिकार है उसके गर्भपात होने की आशंका दुगुनी है तथा कम वजन का बच्चा होने की संभावना चौगुनी है। उसके बच्चों की स्कूल छोड़ने की संभावना ज्यादा है और वे बच्चे बाद में हिंसक हो जाते हैं।

संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट इंगित करती है कि अनुसन्धान का तकलीफदेह तथ्य यह है कि घरेलू हिंसा का संबंध पुरूष और महिला के बीच सारक्षता के अन्तर को कम करके समानता के स्तर पर लाने की प्रगति से सीधे जुड़े होने की संभावना है।

इन रिपोर्टों के अनुसार हिंसा की संभावना बढ़ जाती है जब पुरुष साथी को महसूस होने लगे कि उसकी प्रभुता और नियन्त्रण की स्थिति को चुनौती दी जा रही है।

उन रिपोर्टों का कहना है कि इस समस्या का हल उतना ही कठिन है जितना कि घरों के एकान्त में उनके साथ की जाने वाली मारपीट को जानना। दोस्त, रिश्तेदार, पड़ौसी और अधिकारी इस मामले में दखलन्दाजी करने में अनिच्छुक रहते हैं और पीड़िता स्वयं बहुत कम शिकायत करती हैं तथा अन्य हिंसा के मामलों से पीड़ितों की बनिस्पत ये कानून का सहारा कम लेती हैं।

रिपोर्ट के मुताबिक बहुत सी पीड़ित महिलाएं इस मारपीट को सहजता से यह मानते हुए स्वीकार कर लेती है कि समाज और घर में उनका दर्जा निम्न है और इसलिए ऐसी घटनाएँ उनके साथ होना स्वाभाविक है। जन्म से ही महिलाओं को अभ्यस्त कर दिया जाता है कि उनकी गरिमा केवल इस योग्यता में निहित है कि वे दूसरों को संतुष्ट रख सके

और उनकी सेवा कर सकें, बहुत सी महिलाएं उनके साथ हुई हिंसा को इस रूप में लेती है कि पहले तो वे स्वयं से हुई गलतियों को देखती है और स्वयं को ही दोष देती हैं और हमलावर के हमले को जायज मान लेती हैं और ,आँसू, खरोंचों और 'अपने शर्म के निशानों' को छुपा लेती हैं।

प्राय: महिलाओं का आत्मसम्मान इतना गिर जाता है कि वे अपने-आपको पिटाई योग्य मान बैठती है।

फिर भी रिपोर्टों के अनुसार अधिक से अधिक देश इस समस्या को सबके सामने लाने और इस समस्या के कारणों को उखाड़ने की कोशिश में लगे हुए हैं। केवल लेटिन अमेरिका में ही करीब 400 गैर-सरकारी संगठन विशेष तौर पर महिलाओं के साथ हिंसा से संबंधित मामलो में कार्यरत है।

भारत में महिलाओं के साथ अपराध पिछले दशक में दुगुने से अधिक हो गया है और चुनौतीपूर्ण स्थिति में पहूँच गया है, गृह मंत्रालय के अपराध दर्ज करने वाले विभाग के अनुसार हर पाँच मिनट में महिलाओं के साथ अपराध की एक घटना हो जाती है।

महिलाओं के साथ अत्याचार के अधिकांश मामले ग्रामीण क्षेत्र से होते हैं जहाँ साक्षरता का स्तर अत्यधिक निम्न होता है तथा महिलाएँ अपने अधिकारों के प्रति अनभिज्ञ होती है। बहुत सी पीड़ित महिलाएँ इस डर से शिकायत नहीं करती है कि कहीं उन्हे घर से ही नहीं निकाल दिया जाए। जनजाति और दलित महिलाएँ आम तौर पर दमन का आसान शिकार होती हैं।

संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्टों के वर्णन के अनुसार दुनिया भर में महिलाओं के साथ अत्याचार इस बात को इंगित करता है कि पुरुष या तो महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार करता है या उनके साथ सही बर्ताव नहीं करते हैं तथा महिलाओं के साथ अपराध का अर्थ है कि जब पुरुष अपनी यौन पिपासा को संतुष्ट करने के लिए मौजूदा कानूनों का उल्लंघन करते हैं।

सम्पूर्ण इतिहास में पुरुष द्वारा महिला के साथ अमानवीय बर्ताव एक निरन्तर मौजूद रहने वाला घटनाक्रम रहा है, तथापि उस समय के कानूनी प्रावधानों एवम प्रचलित नैतिकता द्वारा यह अमानवीय व्यवहार मान्यता प्राप्त था।दास प्रथा के यौवन काल (मोटे तौर पर 2000 बी.सी. से लेकर ईसाई युग शुरू होने तक) में दुनियां के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं को खुलेआम पशुओं की तरह खरीदा और बेचा जाता था। दास व्यवस्था के पतन के बाद भी पददलित महिलाएँ बन्धक मजदूरों की सूरत में रही हैं। सामन्ती अर्द्ध-दासता के तहत (उसकी शुरूआत से लेकर 1800 ईसवी तक) महिलाओं का दर्जा अर्द्ध दासता के स्तर तक उठ गया था, जबकि पुरुषों को बहुत सी महिलाओं के साथ विवाह करने का अधिकार था यदि वे उनका खर्च वहन करने की क्षमता रखते हों। तथा सामन्तों को अपने जनाना खाने मे सैकड़ो या हजारों रखैलों को रखने का अधिकार था।

मशीनी औद्योगिक व्यवस्था के उभरने पर (19 वीं शताब्दी से 20 वीं शताब्दी के मध्य तक) पश्चिमी यूरोप में महिलाओं को कुछ बुनियादी अधिकार हासिल हो गए थे। उनमें से मुख्य अधिकार पुरुष और महिलाओं के बीच समानता का अधिकार था। बाद में दुनिया के शेष हिस्से में ये अधिकार महिलाओं को मिल गये और इस प्रकार ये अधिकार सार्वभौम बन गये। इनमें से बहुत से अधिकार अभी भी खास तौर पर गैर-पश्चिमी देशों

में और कुछ हद तक पश्चिमी देशों में कागजों तक ही सीमित हैं, जिसका कारण महिलाओं की चेतना के पिछड़ा होने और पुरूषों द्वारा सैकड़ो वर्षो से प्राप्त लिंग विशेषाधिकारों को छोड़ने में अनिच्छुक होने में निहित है।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के काल में महिला संगठनों व अन्य लोकतान्त्रिक संगठनों के नेतृत्व में कानून द्वारा मान्य महिलाओं के जायज अधिकारों को व्यवहार में लागू करने के लिए तथा जिन महिलाओं को ये अधिकार नहीं मिले है उन्हें अधिकार दिलाने के लिए लगातार आन्दोलन होते रहे हैं। शीत-युद्ध के हालात में बार-बार माँग उठाने पर भी लिंग समानता का मुद्दा विश्व-कार्यक्रम का मुद्दा नही बन सका। परन्तु शीत-युद्ध के बाद के काल में महिलाओं के साथ अपराधिक घटनाओं के बढ़ने के बावजूद लिंग समानता के मुद्दे ने सैद्धान्तिक और व्यवहारिक तौर पर मानव समाज की प्राथमिकताओं में सबसे महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण कर लिया।

महिलाओं के मुकाबले पुरूष मानसिक और शारीरिक तौर पर श्रेष्ठ है; के सन्दर्भ में मानव प्रजाति में लिंग समानता की समस्या क्या एक स्वाभाविक स्थिति है? या क्या महिला की पुरूष पर निर्भरता महिला के कम योग्य होने का प्रमाण है? तथ्य इनमें से किसी भी प्रस्ताव को पुष्ट नहीं करते।

ऐतिहासिक तथ्य बखूबी दर्शातें हैं कि मानव संगठन जो शुरू के काल में अपने आहार-विहार तथा जीवित रहने के लिए भोजन इकट्ठा करने की पद्धति से चरित्रित था और जो बुनियादी तौर पर मानव संतति, वंश-सुरक्षा और प्रतिदिन के जीवन के संबंध में महान मातृ-सत्ता द्वारा प्रबन्धित था। यह मातृ-सत्ता की व्यवस्था–यानि सामाजिक संगठन का वह स्वरूप जिसमें माता परिवार या जनजाति की मुखिया मानी जाती रही तथा जिसमें वंश व रक्त संबंध पिता की बनिस्पत माता के जरिए माने जाते रहे–सैकड़ों हजारों वर्षो तक जारी रही। इस व्यवस्था का बचा-खुचा दर्शन आज भी भारत में लद्दाख, केरल और उत्तर-पूर्व में देखा जा सकता है जहाँ कुछ कबिलों के उत्तराधिकारी अभी भी अपनी-अपनी माताओं के नाम से जाने जाते है। बहुत बाद में यह मातृ-सत्ता, पितृ-सत्ता द्वारा रूपान्तरित हो गई, यानि वह सामाजिक व्यवस्था जिसमें पुरुष का प्रभुत्व हो या पिता या सबसे बड़ी उम्र का पुरुष सदस्य परिवार या कबीले का मुखिया हो तथा वंश एवं रक्त संबंध पुरुष के जरिए निर्धारित होते हों।

और आगे हालिया ऐतिहासिक अनुभव यह साबित करता है कि कुछ सामाजिक क्षेत्रों (राजनैतिक, आर्थिक और कलात्मक) में महिला द्वारा कुछ हद तक समान अधिकार हासिल करने से महिलाओं ने यह साबित कर दिया है कि वे पुरुषों के बराबर काम कर सकती हैं और कभी-कभी तो वो पुरुषों से भी बेहतर काम करती है–इस प्रकार जीवन के हर क्षेत्र में पुरुष के श्रेष्ठ होने और महिला के कमजोर होने की पुरानी चली आ रही मिथ्या धारणा खण्डित होती है।

परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि दोनों लिंगों में कोई भेद नहीं है। हर तरह का अस्तित्व भिन्नता लिए होता है। यह भिन्नता एक पुरूष और दूसरे पुरुष के बीच भी है। और उस अर्थ में पुरुष और महिला दोनों कुछ समान चरित्र रखते हैं जो बुनियादी तौर पर एक-दूसरे के अपवर्जक नहीं हैं बल्कि पारस्परिक रूपान्तरण योग्य हैं एवं दूसरी प्रत्येक चीज की तरह लगातार परिवर्तन और रूपान्तरण की स्थिति में हैं।

तब वह कौनसा कारण है जो मानव समाज में पुरुष प्रभुत्व का निर्धारण करता है ? ऐसा प्रतीत होता है कि मूल कारण सामाजिक श्रम विभाजन में निहित है जो इतिहास के हर चरण में एक निश्चित वैज्ञानिक-तकनीकी संरचना से उत्पन्न होता है। जब तक समाज में भोजन इकट्ठा करने की तकनीक का श्रम विभाजन लागू रहा तब तक महिला का स्थान शीर्ष पर बना रहा परन्तु जैसे ही शिकार की तकनीक का श्रम विभाजन अस्तित्व में आया वैसे ही महिला जो पुरूष की तुलना में शारीरिक बल में कमजोर थी उसे दूसरे स्थान पर थकेल दिया गया। इस श्रम विभाजन में पुरूष ने राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक मामलों का प्रबंध करने का जिम्मा अपने ऊपर ले लिया तथा महिलाओं को घर चलाने और बच्चों को पालने का काम सौंप दिया। यही स्थिति पशु पालन और कृषि के श्रम विभाजन के युगों में भी निरन्तर जारी रही। केवल औद्योगिक श्रम विभाजन ने दुबारा ऐसी परिस्थिति उत्पन्न की जिसमें महिला घर की चारदिवारी से बाहर आ सके तथा विस्तृत सामाजिक परिवेश में बदलाव की भूमिका निभा सके। सामाजिक श्रम विभाजन की आवश्यकताओं के अनुकूल पुरुषों ने महिलाओं के लिए कुछ अधिकार देना स्वीकार कर लिया परन्तु फिर भी बचे-खुचे पुरातन लिंग रूढ़िवादिता के प्रभाव के तहत पुरुष द्वारा व्यवहार में उनका उल्लंघन किया जाता रहा है।

1945 के बाद की वैज्ञानिक तकनीकी क्रान्ति और उससे सम्बन्धित सामाजिक श्रम विभाजन–जो विश्व भर की चुनौतियों (यानि, पर्यावरणीय प्रदुषण, जनसंख्या वृद्धि, गरीबी, समुद्री और अतंरिक्ष खोजों में सहयोग, नस्ली संघर्ष, अमीर-गरीब के बीच टकराव, बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक में भेद, इत्यादि) से निपटने के लिए सभी लोगों की एक नई वैश्विक साझेदारी की मांग करता है–ने लिंग समानता को पुनरस्थापित करने के मुद्दे को मनुष्य जाति के सर्वोच्च महत्वपूर्ण मुद्दे में तब्दील कर दिया है। इसलिए हरेक अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय मानव संगठन लिंग समानता के कार्यक्रम को हाथ में ले रहे हैं।

महिलाओं के साथ हालिया दुर्व्यवहार का तात्कालिक कारण कॉरपोरेट सत्ता की राजनीति और आर्थिकता में निहित है जिसके प्रचारक–धन, बाहुबल के साथ ही साथ सभी प्रतिगामी घटनाक्रमों (प्राकृतिक तौर पर महिलाओं के दुर्बल होने सहित) में इन सभी साधनों को अपने निर्धारित राजनीतिक कार्यक्रम या निर्धारित कामर्शियल उत्पाद के पक्ष में जन समर्थन पैदा करने के काम में लेते हैं। इन सबसे राजनीति के अपराधिकरण तथा आर्थिक जिन्दगी के बाजारीकरण को और बढ़ावा मिला है तथा महिलाओं के साथ अपराध और दुर्व्यवहार में बढ़ोतरी इसकी स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

उपर्युक्त तथ्य दर्शाते हैं कि नये उभरे सामाजिक श्रम विभाजन से महिलाओं की नई भूमिका उत्पन्न हुई है। यह भूमिका किसी गलत कार्य करने के अहसास से या उदारता व दया भाव से पैदा नहीं हुई है और ना ही भावनाओं के कारण पुरूष लिंग समानता की बात करने लगे हैं। सभी प्राचीन नैतिक संहिताओं–धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक या आर्थिक–ने महिलाओं को दोयम दर्जा यह कह कर दिया है कि पुरुष के मुकाबले उसके गुण गौण है। अब भी नई उभरी वास्तविकता की आवश्यकता लिंग समानता में निहित है; इस तथ्य को कुछ अनिच्छा से स्वीकार किया गया है।

दोनों मानव लिंगों के बीच, व्यक्तिगत (यानि परिवार) और सामूहिक (यानि समाज) दोनों स्तर पर बुनियादी संबंध होने के नाते लिंग समानता का मुद्दा तुरन्त समाधान की माँग करता है। जितना जल्दी इसका समाधान किया जाय उतना ही हमारी सामाजिक

प्रगति के लिए बेहतर है। इसके समाधान में देरी, टाल-मटोल और सामाजिक बाँधाएँ उत्पन करना, मानव प्रगति को हानि पहुँचायेगा। यदि हम खुशहाल एवं स्वस्थ सामाजिक जीवन निर्माण करना चाहते है तो महिला को समाज में उसका उचित स्थान देना ही होगा। अत: इसके समाधान के किसी भी कार्यक्रम के लिए दुनिया भर में विचार-विमर्श और क्रियान्वित करने की आवश्यकता है यहाँ कुछ सुझाव ध्यान दिये जाने योग्य है।

II नजरिया

लिंग समानता की समस्या पुरुष और महिला के बीच समानता के सम्बन्ध (सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, आदि) कायम करने का मुद्दा है। केवल यही न्यायपूर्ण समाज व्यवस्था का प्रथम सिद्धान्त है व हो सकता है। मानव संसाधनों के विकास को प्रेरित करने वाला यह एक सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा है और तब यह प्राकृतिक संसाधनों में अन्तरक्रिया के तहत मानव समाज की प्रगति में सहायक व उत्प्रेरक की भूमिका निभाता है। इसलिए इसकी माँग है कि लिंग समानता के मुद्दे को दो बराबर के साझेदारों के बीच साझेदारी के सम्बन्धों के रूप में देखा जाना चाहिए। यह दोनों लिंगों में निहित सर्जनात्मक क्षमताओं को वास्तविक प्रयोग में लाने लायक बनायेगा। इतिहास में इसे एक दूसरे के विरोधी सम्बन्धों के रूप में प्रस्तुत करना गलत है क्योंकि मानव प्रजाति इन दोनों लिंगों के बीच संघर्षपूर्ण सम्बन्धों के रहते विकास नहीं कर सकती थी।

केवल रक्त सम्बन्धों के जुड़ाव के रहते ही मानव प्रजाति की वृद्धि और फलना-फूलना सम्भव हुआ है क्योंकि यह सम्बन्ध पति-पत्नी एवं परिवार के सदस्यों के बीच सौहार्दपूर्ण और अपनेपन का अहसास उत्पन्न करता है। ऐतिहासिक तौर पर वास्तव में पुरुष और महिला के बीच सम्बन्ध प्रभुत्व-अधिनस्थ का रहा है। इसे टकरावादी मुद्दा या 'लिंग युद्ध' के रूप में पेश करने पर जोर देना गैर ऐतिहासिक और अतार्किक होगा।

III आवश्यक पहलकदमियाँ

(1) पितृसत्तात्मक व्यवस्था को समाप्त करके तथा औलाद, उत्तराधिकार और वंश की पहचान के रूप में माता-पिता दोनों के संयुक्त नाम को मान्यता देकर महिला का सामाजिक सशक्तिकरण किया जाए।

(2) सभी पारिवारिक सम्पत्ति–अचल व चल (उद्यम, बैंक, सहकारी समिति इत्यादि की सदस्यता सहित) दोनों में पति व पत्नी की संयुक्त मिल्कियत के कानूनी प्रावधान के जरिए महिला का आर्थिक सशक्तिकरण किया जाए।

(3) राजनीतिक संस्थाओं (स्थानीय संस्थाओं से लेकर संसद तक) के निम्नतम स्तर से उच्चतम स्तर तक 20 वर्ष के लिए महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण, जिसमें से 20 प्रतिशत आरक्षण गरीबी रेखा के नीचे वाली महिलाओं को देकर महिला वर्ग का राजनीतिक सशक्तिकरण किया जाए।

(4) उचित शिक्षा, स्वास्थ्य सुरक्षा, जनसंख्या नियन्त्रण एवं पर्यावरण प्रबन्धन में प्रभावी भूमिका प्रदान करके, गरीबी रेखा से नीचे की महिलाओं को मुफ्त शिक्षा और मुफ्त स्वास्थ्य रक्षा तथा महिलाओं की क्षमता और दर्जे (पुरुष से महिलाओं को कमजोर मानना, घरेलू काम करने के लायक ही बनाए रखना, कमाने वाला पुरुष ही है, आदि मानना) का अवमूल्यन करने वाली पुरानी मूल्य व्यवस्था और मापदण्ड को बदलकर,

विवाह की उम्र बढ़ाकर, समाज व मिडिया में महिला की सकारात्मक छवि बनाकर, महिलाओं का सांस्कृतिक सशक्तिकरण किया जाए।

(5) लिंग समानता की समस्या के बारे में जन-जागृति बढ़ाई जाए।

IV सार-संक्षेप

उपर्युक्त वर्णित पहलुओं की केवल लिंग समानता के लिए ही जरूरत नहीं है बल्कि निष्पक्ष और टिकाऊ समाज के विकास के लिए भी इसकी आवश्यकता है जिससे न केवल स्त्री-पुरुष की असमानता हटेगी अपितु सभी प्रकार की सामाजिक विकृतियाँ–यानि, गरीब-अमीर के बीच, भूस्वामी और भूमिहीन के बीच, गोरे और काले के बीच और इन सबसे ऊपर-प्रकृति व मानव के बीच–भी हट जायेगी।

* * * * *

मानवाधिकारों पर प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण की आम-अवधारणा मानवाधिकारों को सुनिश्चित करने की मुख्य गारंटी जन जागृति

I अवधारणा

अवधारणा के तौर पर सामान्यतया मानवाधिकारों का अर्थ ऐसे उचित अधिकारों के समुच्चय से है जिनका मानव समुदाय के सदस्य होने के नाते प्रत्येक मानव को अधिकार है और जिनको किसी भी हालात में कोई भी सत्ता उससे छीन नहीं सकती है। ये अधिकार मुख्यतया निम्न बनते हैं :

(क) सभी जगह और हर समय पर्यावरणीय (यानि, हवा, पानी, भूमि, जंगल, जैव-विविधता, इत्यादि) टिकाऊपन के मूलभूत मानव अधिकार की सुरक्षा।

(ख) जीवन के सभी क्षेत्रों–राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक (लिंग समानता सहित)–में समानता का अधिकार। यहाँ समानता, राजनीति और संस्कृति में पूर्ण समानता की और आर्थिकता में एक न्यायिक और उचित समानता की द्योतक है।

(ग) जीवन एवं सुरक्षा का अधिकार।

(घ) भूख, कपड़ा, आवास एवं बेरोजेगारी की समस्या से मुक्ति का अधिकार।

(ड़) शिक्षा प्राप्त करने, स्वास्थ्य देखभाल एवं सामाजिक सुरक्षा का अधिकार।

(च) व्यक्तिगत स्वतंत्रता एवं आजादी का अधिकार।

(छ) शोषण के विरुद्ध अधिकार।

(ज) सूचना का अधिकार।

(झ) अन्त:करण एवं आस्था की स्वतंत्रता का अधिकार।

उपर्युक्त वर्णित अवधारणा यह मान्य करती है कि मानवाधिकार किसी सामाजिक व्यवस्था का एक बहुत अधिक महत्वपूर्ण भाग है। किसी सामाजिक व्यवस्था में मानवाधिकारों की गुणवत्ता कानून के राज, सामाजिक न्याय एवं व्यवहार के ढंग को प्रदर्शित करती है।

II ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

ऐतिहासिक रूप में, मानवाधिकार का विषय उतना ही प्राचीन है जितनी मानव प्रजाति। परन्तु विभिन्न ऐतिहासिक अवस्थाओं में यह बदलते रहे हैं। प्रत्येक ऐतिहासिक अवस्था में विशिष्ट सामाजिक विकास और विशिष्ट मानवाधिकारों का रूप रहा है। इस प्रकार गण व्यवस्था के युग में जब लोग जंगलों से भोजन जुटाते (इकट्ठा करते) थे तब कबीले के हर सदस्य के समान अधिकार थे, परन्तु गण से बाहर के व्यक्ति को कोई अधिकार नहीं था और उसकी हत्या कर दी जाती थी। हमारे इस युग में कैदी को भी जीवन एवं सुरक्षा का अधिकार है। कुछ शताब्दी पूर्व तक चोर को सबक सिखाने के लिए शारीरिक दण्ड स्वरूप उसके हाथ काट दिये जाते थे, परन्तु आज अपराधियों को सुधारकर हितकारी नागरिक बनाने हेतु हर प्रकार का शारीरिक दमन गैरकानूनी है।

पन्द्रहवीं सदी के बाद से यूरोप में मानवाधिकारों की प्रक्रिया ने विभिन्न लोकतांत्रिक घटनाओं से खूब ऊर्जा प्राप्त की जैसे, यूरोपीय सुधार (16वीं सदी), ब्रिटेन में संसदीय व्यवस्था का जन्म (17-18वीं शताब्दी), सामन्तवाद विरोधी फ्रांसीसी और अमेरीकी क्रांतियां (18वीं सदी का अन्त) तथा यूरोप में साम्यवादी तथा समाजवादी विचारों की उत्पत्ति (19वीं सदी) आदि।

दूसरे विश्व युद्ध के पश्चात् मानवाधिकारों का वर्तमान ऐतिहासिक काल शुरू होता है। इस काल में युद्ध पूर्व की क्रूरता और युद्धकालीन नाजीवादी, फासीवादी, सैन्यवादी एवं निरंकुशता के भय के खिलाफ जनक्रांति ने शांति एवं मानवीय संबंधों को निर्धारित करने हेतु एक वैश्विक मंच बनाने की मांग की। नतीजतन तीन वर्ष बाद सन् 1945 में संयुक्त राष्ट्र संघ (यू एन) की स्थापना हुई। तीन वर्ष बाद सन् 1948 में यू एन ने मानवीय अधिकारों का अन्तरराष्ट्रीय घोषणा पत्र जारी किया जिसमें सामाजिक-राजनैतिक एवं सामाजिक-आर्थिक अधिकारों को शामिल किया गया। यू एन ने सन् 1966 में मानवाधिकारों पर दो महत्वपूर्ण समझौतों की स्वीकृति दी। इनमें एक समता एवं सामाजिक न्याय के अधिकारों तथा दूसरा नागरिक और राजनैतिक अधिकारों से सम्बन्धित था। अभी तक यू एन ने मानवाधिकारों पर 25 के लगभग समझौते किये हैं। यू एन घोषणा-पत्र एवं समझौते कुछ अपवादों को छोड़कर सारे देशों ने स्वीकार कर लिए हैं।

III मानवाधिकार प्रक्रिया की वर्तमान स्थिति

शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद विश्व बिरादरी के लिए मानवाधिकारों का विषय मुख्य बिन्दु बन गया है तथा मानवाधिकार आन्दोलन ने सारे संसार में नई गति पकड़ ली है।

यद्यपि मानवाधिकारों की राज्य एवं सरकारी स्तर पर वास्तविक स्थिति ज्यादा संतोषजनक नहीं है फिर भी भूतकाल की अपेक्षा ज्यादा अच्छी है। कुछ देश (प्राथमिक रूप में विकसित देश) केवल सिविल एवं राजनैतिक अधिकारों पर ही जोर देते हैं जबकि कुछ (मुख्यत: विकासशील देश) केवल आर्थिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों की बात करते हैं। बहुत से देश उपर्युक्त दोनों प्रकार के अधिकारों के प्रति आंखें बंद किए हुए हैं, ये देश न आर्थिक न ही राजनैतिक मानवाधिकारों की तरफ ध्यान दे रहे हैं।

जनस्तर पर, आज विश्व में मानवाधिकार आन्दोलन सकारात्मक भूमिका अदा कर रहा है। पारराष्ट्रीय मानवाधिकार संगठन, जैसे–एमनेस्टी इंटरनेशनल एवं ह्यूमन राईट्स

वॉच संस्थाएँ इस आन्दोलन में मुख्य रूप से अपना कार्य सम्पादन कर रही है जिसमें राष्ट्रीय स्तर के मानवाधिकार संगठनों का भी अपना-अपना हिस्सा है।

परन्तु आज मानवाधिकारों का आन्दोलन (अन्तराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर) सकारात्मक कार्य करते हुए भी एक पक्षीय समझ लिए है, क्योंकि मुख्य रूप से यह आन्दोलन आज राजनैतिक एवं नागरिक मसलों से ही सरोकार रख रहा है तथा समानता और सामाजिक न्याय के विषयों की पूर्णतया अनदेखी कर रहा है।

मानवाधिकार संगठन इस मानव संसार में अति मानवीय असमानता की स्थिति पर शायद ही कभी सवाल खड़े करते हों। मानवाधिकार संगठन इस बात पर मुश्किल से ही ध्यान देते हैं कि विश्व के 20% लोग (यानि विश्व बैंक के मुताबिक 1.4 अरब लोग) अत्यधिक गरीब क्यों हैं और 50% लोग जैसे-तैसे गरीबी रेखा से नीचे क्यों जी रहे हैं।

1998 की यू एन डी पी मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार वैश्विक उपभोग 240 खरब डालर का किया गया जो 1975 के उपभोग से 6 गुणा ज्यादा था। परन्तु आज विकासशील देशों के 4 अरब 40 करोड़ लोगों का 3/5 भाग मूलभूत शौच सुविधाओं से भी वंचित है। इन आंकड़ों के अनुसार एक तिहाई लोग शुद्ध पीने के पानी से वंचित है। एक चौथाई जनसंख्या के पास रहने के लिए उचित आवास नहीं है। 1/5 लोगों को आधुनिक चिकित्सा सुविधाएँ नहीं है। बच्चों का 1/5 भाग पांचवीं कक्षा तक भी नहीं पहुँच पाता है। पिछले 7 सालों में यह स्थिति और भयावह हो चुकी है।

विश्व के सामान्य लोगों की उपर्युक्त दयनीय जीवन की स्थिति के विपरीत 86% व्यय निजी उपभोग पर (1998 की यू एन डी पी रिपोर्ट के अनुसार) केवल विकसित देशों के 15 प्रतिशत लोगों द्वारा किया जाता है। विश्व के सर्वाधिक 225 व्यक्तियों के पास 10 खरब डालर की सम्पदा है। यह राशि विश्व के 2.5 अरब अति गरीब 47 प्रतिशत लोगों की आमदनी से ज्यादा है। विश्व के सबसे ज्यादा धनी 32 व्यक्तियों की सम्पत्ति दक्षिण एशिया के देशों (जैसे भारत, पाकिस्तान, बांगलादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान, मालदीव) एवं इरान तथा अफगानिस्तान के संयुक्त कुल घरेलू उत्पाद से भी अधिक है। सन् 1956 में निर्धनतम 7 देशों की प्रति व्यक्ति आय से 7 अमीर देशों की प्रति व्यक्ति आय 20 गुणा अधिक थी। सन् 1995 में यह अन्तर विस्फोटक स्तर, यानि, 39 गुणा तक बढ़ गया। अफ्रिका में औसतन प्रति व्यक्ति आय विकसित देश के प्रति व्यक्ति आय का केवल 7 प्रतिशत ही है। लातिन अमेरिका में औद्योगिक देशों की तुलना में सन् 1970 में आय का प्रति व्यक्ति अन्तर 1/3 था जो अब गिरकर 1/4 तक पहुँच गया। आज हालात और ज्यादा बिगड़े हैं।

रिपोर्ट में आगे खुलासा किया गया है कि यूरोप में 11 अरब डालर की आइसक्रीम खाई गई जबकि डिब्बाबंद भोजन पर यूरोप एवं अमेरिका में 17 अरब डालर खर्च किये गये। यूरोप और अमेरिका में 12 अरब डालर इत्र फुलेलों पर उड़ा दिये गए। जापान में 35 अरब डालर व्यवसायिक मनोरंजन पर खर्च किये गए। रिपोर्ट में आगे रहस्योद्घाटन करते हुए बताया गया है कि विश्व के 225 अमीर व्यक्तियों में से ऊपर के तीन लोगों की सम्मिलित पूंजी 48 विकासशील देशों की कुल घरेलू उत्पाद (जी डी पी) के बराबर है। अमीर देशों के लोगों के उपर्युक्त खर्चे अब और ज्यादा बढ़ गये हैं।

मानवाधिकार संगठन विद्यमान वैश्विक एवं राष्ट्रीय असमान राजनैतिक ढांचे को चुनौती नहीं दे रहे हैं बल्कि उनके ढांचों में ही कार्यरत हैं। उदाहरण के रूप में किसी भी

मानवाधिकार संगठन ने विश्व के सर्वोच्च संगठन, यानि यू एन में केवल कुछ देशों को ही वीटो रखने के एकाधिकार वाली असमान ढांचागत व्यवस्था के खिलाफ आवाज नहीं उठाई हैं। और इसके साथ-साथ न ही किसी संगठन ने धन बल के सहारे आई एम एफ एवं विश्व बैंक में मत देने की प्रक्रिया को चुनौती दी है। वास्तव में, बहरहाल विद्यमान मानवाधिकार संगठनों में से 95% से अधिक एन जी ओ (यानि गैर सरकारी संगठन) के रूप में कार्य कर रहे हैं जो कॉरपोरेट वित्तीय सहायता पर निर्भर है।

मानवाधिकार संगठन केवल नागरिक और सामाजिक अधिकारों पर ही अपना ध्यान केन्द्रित करके लोगों के विभिन्न जन समूह, विशेषकर निर्धन एवं वंचित लोगों की वास्तविक समस्या को अस्पष्ट करते हैं। एक व्यक्ति जो भूखा है, रहने को मकान नहीं या बेरोजगार है, वह राजनैतिक और नागरिक अधिकारों का उपयोग कैसे कर सकता है। वास्तव में तथ्य यह है कि केवल राजनैतिक और नागरिक अधिकारों के विषय को उठाना एक कॉरपोरेट कार्यक्रम ही है।

इस प्रकार, मानवाधिकार आन्दोलन अन्य जनतांत्रिक एवं सामाजिक-आर्थिक आन्दोलनों के विकल्प का स्थान नहीं ले सकता। ये मानवाधिकार आन्दोलन व्यवस्था बदलने वाले आन्दोलनों के केवल सहायक की भूमिका ही निभा सकते हैं।

IV भारत में मानवाधिकारों का लेखा-जोखा

आजादी के बाद, भारत में राष्ट्रीय एवं सरकारी स्तर पर मानवाधिकारों की स्थिति बिल्कुल धूमिल रही है। इस लम्बे समय में यू एन मानवाधिकार घोषणा-पत्र एवं अन्य समझौता पत्रों को हस्ताक्षरित करके इन्हें स्वीकार करने के बावजूद भारत सरकार ने निरन्तर मानवाधिकारों के हनन की नीति को ही अपनाया है।

सन् 1947 से लेकर लगातार निरोधक कानूनों के लागू करने पर अथाह सामग्री पेश की जा सकती है जिससे भारत में सामाजिक आजादी की स्थिति का सही पता चलता है। अंग्रेज हुकूमत के दवाब में लागू किए गए सन् 1947 से 1950 तक के निरोधक कानूनों के द्वारा नागरिक आजादी एवं अधिकारों का लगातार हनन किया गया है। सन् 1950 में पी डी ए (निरोधक नजरबंदी कानून) लागू किया गया। इस क्रूर कानून के तहत एक साधारण सिपाही किसी भी नागरिक को किसी अपराध करने के साधारण शक के आधार पर बंदी बना सकता था। इस शक पर भी नजरबंद किया जा सकता था कि कोई आदमी या औरत भविष्य में भी कोई कानून विरोधी अपराध कर सकता है, इस कानून को लगातार 7 बार देश में लागू किया जाता रहा है। हर बार कानून का कार्यकाल 3 वर्ष रखा था (अर्थात् सन् 1971 तक यह कानून भारत में प्रभावी रहा) सन् 1971 में इस कानून के स्थान पर मीसा लागू किया गया। यह कानून 1977 तक लागू रहा।

आपात काल की समाप्ति के बाद 3 वर्षों तक किसी भी निरोधक कानून को लागू न करके सरकार ने नागरिकों पर कृपा की दृष्टि डाली। तब 1980 में राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम (एन एस ए) कुछ समय के लिए देश पर थोपा गया। पूर्व के अधिनियमों की तुलना में एन एस ए अपेक्षाकृत अधिक खतरनाक था क्योंकि इसमें बंदी पर अपनी बेगुनाही के सबूत पेश करने का भार डाला गया था।

आने वाले समय में राष्ट्रीय सुरक्षा कानून के अतिरिक्त दो अन्य क्रूरतापूर्ण कानून लागू किये गए, यथा (1) आतंकवाद प्रभावित क्षेत्रों वाला (विशेष न्यायालय) अधिनियम,

1984 एवं (2) आतंकवादी तथा विध्वंसक गतिविधि (निरोधक) कानून 1985 जिसे टाडा कहा जाता है। टाडा (जो अब पोटा द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है।) शासक पार्टी के विरोधियों को आतंकित करने के लिए भी लागू किया गया। पोटा 2005 में लागू किया गया।

सब कानूनों से अधिक जंगली और क्रूर कानून, यथा–सशस्त्र सेना (विशेष अधिकार) अधिनियम, 1958 (1972 में संशोधित) आज भी लागू है, जिसके बल पर किसी को भी बंदी बनाया जा सकता है या तलाशी ली जा सकती है तथा हर सैनिक को गोली चला कर जान से मारने का अधिकार प्राप्त है।

भारतीय लोकतंत्र के पूरे जीवन काल में इस प्रकार के उपर्युक्त बर्बर एवं अशिष्ट कानूनों को विधि मार्गदर्शक के रूप में जो अतिमहत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है उससे इस तथ्य की असलियत प्रतिबिम्बित हो जाती है कि हमारे देश में कानून के राज का असली चेहरा कैसा है ? मुख्य धारा में चलने वाली राजनैतिक पार्टियों एवं राजनीतिज्ञों का वास्तविक रूप इस तथ्य से भली भाँति स्पष्ट हो जाता है। कुछ विशेष अपवादों को छोड़कर यदि भारतीय न्यायपालिका का लेखाजोखा किया जाए तो वह भी विचार करने योग्य है। जैसे, आपातकाल को कायम रखना, नजरबंदी कानूनों को लंबा चलाना, भोपाल गैस त्रासदी के दोषियों के खिलाफ कार्यवाही करने में नकारात्मक रुख अपनाना तथा अन्य शिखर पर बैठे कानून भंजक एवं विधि का दुरुपयोग करने वाले मगरमच्छों के खिलाफ कार्यवाही करने में बेरुखी दिखाना। देश में आज तक जाँच करने वाली एजेन्सियों, विशेष तौर पर पुलिस की भूमिका भी बड़ी खेदजनक रही है। अंग्रेजों ने सन् 1861 में भारत में पुलिस कानून बनाया था जिसके तहत भारतीय पुलिस ऐसे व्यवहार करती है जैसे वह खुद ही कानून हो।

आज भारत में मानवाधिकारों का दृश्य अतिनिराशाजनक है। प्रमाण के तौर पर, हर वर्ष भारत में लाखों लोग भूख और कुपोषण के कारण तथा लाखों लोग समय पर सही इलाज एवं दवा के अभाव में मर जाते हैं जबकि भारतीय संविधान में जीवन की सुरक्षा का मौलिक अधिकार दिया हुआ है। बोलने एवं संगठित होने की स्वतंत्रता का संवैधानिक अधिकार गारन्टीशुदा होने के बावजूद इस अधिकार के उपयोग पर तरह तरह के बहाने बनाकर निरन्तर पाबंदियां लगाया जाना जारी है। सब नागरिकों के साथ बराबर का कानूनी बर्ताव करने का संवैधानिक अधिकार होने के उपरान्त भी कानून को लागू करने वाले निकाय (एजेन्सियां) गरीब और अमीर के बीच पक्षपातपूर्ण व्यवहार करती है, अमीर का पक्ष लेती है, गरीब के खिलाफ कार्यवाही करती है। बहुसंख्यकों का पक्ष लेती हैं, अल्पसंख्यकों का विरोध करती है। साम्प्रदायिक एवं जातिगत तनावों में विशेष रूप से जाँच एजेन्सियां पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाती हैं (उदाहरतया, सन् 2002 के गुजरात में मुस्लिम विरोधी दंगे, 1984 के दिल्ली में सिख विरोधी दंगे)। भारतीय संविधान में 10 वर्षों के अंदर हर नागरिक को साक्षर करने का वादा किया गया था, आजादी के 5.5 दशक बीत जाने पर भी हमारे लाखों बालक स्कूलों में शिक्षा पाने से वंचित हैं और हमारी 45% जनसंख्या अशिक्षित है।

भारतीय संविधान में नागरिकों को गारण्टी दी गई है कि उन्हें स्वयं के खिलाफ गवाह नहीं बनाया जाएगा, बावजूद इसके हजारों विचाराधीन बंदियों के खिलाफ अमानवीय व्यवहार क्रूरतापूर्ण तरीकों से किया जाता है, जिसमें बंदियों को अंधा कर दिया

जाना भी शामिल है, जैसे भागलपुर मामले में हुआ। देश में हर साल पूछताछ के दौरान शारीरिक यातनाएँ देने से असंख्य नागरिक पुलिस के कब्जे में रहने के दौरान मृत्यु को प्राप्त होते हैं। जेलों में बंद कैदियों को पीटा जाता है। स्वयं पुलिस ही जिन लोगों को खतरनाक मान लेती है उनकी हत्या को पुलिस से मुकाबले में मरना बताती है। अल्पसंख्यकों पर अत्याचार एवं समाज के कमजोर वर्ग के लोगों के खिलाफ दमनचक्र आम घटना बन चुकी है।

हमारे देश भारत में सामाजिक अपराधीकरण की स्थिति इस तथ्य से साफ जाहिर हो जाती है कि देश का कोई भी वी आई पी (महत्वपूर्ण व्यक्ति) कमाण्डो फोर्स के सुरक्षा घेरे के बिना घूम-फिर नहीं सकता।

लोगों पर कानून को लागू करने वाली एजेन्सियों का प्रभाव कानून के पालनकर्ता के रूप में न होकर कानून भंजकों के रूप में है।

उपर्युक्त सब तथ्यों से यह भलिभाँति साबित होता है कि संविधान और कानून में मानवाधिकारों की गारण्टी को शामिल करना मात्र ही काफी नहीं है। मानवाधिकारों को वास्तविक रूप में लागू करके पालना करना अतिमहत्वपूर्ण है।

हमारे देश में मानवाधिकारों की गिरती हुई हालत पर हर वर्ष एमनेस्टी इंटरनेशनल संस्था, ह्यूमन राइट्स वॉच तथा भारतीय मानवाधिकार संस्थाएँ देश और दुनिया भर में रिपोर्टें प्रकाशित करती है। जम्मू-कश्मीर तथा उत्तरी-पूर्वी राज्यों में मानवाधिकारों की स्थिति चौंकाने वाली है। उनकी हालिया रिपोर्ट्स में भारत सरकार पर मानवाधिकारों के दुरुपयोग के मामलों में अपराधी होने के आरोप लगाए गए हैं। इस सबसे यह स्पष्ट संकेत मिलता है कि मानवाधिकार संगठनों द्वारा जहाँ सकारात्मक कार्य किया गया है वहीं उन्हें आगे बहुत कुछ करना बाकी है।

जहाँ तक अन्य देशों में मानवाधिकारों की स्थिति देखी जाए तो वहाँ भी स्थिति ज्यादा उत्साहवर्धक नहीं है। शायद अमेरीका और रूस अपराधों के क्षेत्र में बहुत ऊपर है। धार्मिक रूढिवादी, नस्ली विवाद, सामाजिक आर्थिक असमानता और अधिनायकवादी राजनीति, पार्टियों और राजनीतिज्ञों के प्रभुत्व वाले देश आम तौर पर मानवाधिकार हनन से ग्रसित हैं।

V मानवाधिकारों के हनन के मुख्य कारण

मानवाधिकारों की दुर्दशा के लिए निम्नलिखित कारण मुख्य रूप से जिम्मेवार हैं–

(क) सामान्य रूप में कॉरपोरेट पूंजीवादी राष्ट्र राज्य व्यवस्था देश के आंतरिक प्रबंध एवं बाहरी व्यवहार में सैन्य नेतृत्व वाले राज्य महाशक्तिवाद पर आधारित है और यही आधारभूत पहला कारण है क्योंकि यह व्यवस्था कॉरपोरेट पार्टियों, राजनेताओं और अफसरशाहों को वास्तव में शक्ति सम्पन्न बनाती है जबकि आम नागरिकों को एक मिनट का लोकतंत्र (वोट डालने का समय) प्रदान करती है। यह एक मिनट का लोकतंत्र भी धनबल और जिसकी लाठी उसकी भैंस पर आधारित सामाजिक वातावरण के अधीन रहता है। यह कॉरपोरेट व्यवस्था खास तौर पर जनता को और सामान्य रूप में हर व्यक्ति को शक्ति सम्पन्न नहीं बनने देती और व्यवहार में जनता या व्यक्ति को संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों को भी विकृत कर देती है।

(ख) मानवाधिकारों की अवहेलना होने का दूसरा कारण चालबाजी युक्त

राजनीतिक मानदण्डों जो धन और बाहुबल एवं सामाजिक समस्याओं से कोई सरोकार न रखने वाले बेबुनियादी मुद्दों (जैसे–बाबरी मस्जिद बनाम राममंदिर का मसला, भारतीय मूल बनाम विदेशी मूल का प्रधानमंत्री, बहुसंख्यक धर्म की सेवा वाला धर्मनिरपेक्षतावाद, इत्यादि)से निर्देशित है।

(ग) तीसरा कारण है कि नये और पुराने गैर लोकतांत्रिक कानूनों का वजूद में रहना। इन कानूनों के सहारे राष्ट्र राज्य को समाज से ऊपर सम्पूर्ण वर्चस्व वाले अधिकार प्राप्त होते हैं, और इस व्यवस्था में सरकार को अर्धप्रभुत्वशाली स्वरूप प्रदान किया जाता है। इस व्यवस्था की कायमी के कारण ही भारत देश में राज्य एवं सरकार नजरबंदी के समस्त कानून, सहायक कानून तथा उपबंध बनाने की शक्ति रखते हैं, जिसके सहारे कार्यपालिका, न्यायपालिका तथा विशेष रूप से कानून लागू करने वाली एजेन्सियां (जैसे पुलिस एवं सेना) असीम कानूनी शक्तियों की मालिक बन जाती हैं। इन्हीं शक्तियों के आधार पर तलाशी लेने, पूछताछ करने यहाँ तक कि बिना वारंट कैद करने का अधिकार इन एजेन्सियों को मिल जाता है। कानून ऐसे बनाये गए हैं जो बड़े और छोटे लोगों से व्यवहार में भेद करते हैं। महिलाओं, अल्पसंख्यकों तथा अन्य कमजोर वर्गों से अन्यायपूर्ण भेदभाव करने वाले कानून गढ़े गए हैं।

(घ) कानून की व्यवस्था करने वाली तथा कानून को लागू करने वाली संस्थाओं का कार्य विशेषकर विकासशील देशों में निरर्थक साबित हुआ है। यह सब न्यायिक प्रक्रिया में विलम्ब और भारी भरकम खर्चों से स्पष्ट हो जाता है। न्यायपालिका द्वारा आग्रहपूर्वक न्यायालय की अवमानना के कानून को जारी रखना, शिखर के राजनेताओं और बड़े धनपतियों को लगभग कोई सजा नहीं मिलने में न्यायपालिका का हाल देखा जा सकता है। कानून के राज का लगातार विशाल पैमाने पर भंग किया जाना, सब क्षेत्रों में हिंसा और भ्रष्टाचार तथा विशेष रूप से हमारे देश की पुलिस द्वारा हिंसा और भ्रष्टाचार की संस्कृति के आधार पर कानून को समाज में लागू करना आदि की तुलना असली कानून लागू करवाने की विधि से की जा सकती है।

(ड़) पांचवां अतिमहत्वपूर्ण कारण है लोगों में कॉरपोरेट पूंजीवादी चेतना की मानसिकता बनना। कॉरपोरेट मानसिकता यह तर्क पेश करती है कि मानव समाज का विकास पूंजी बढ़ाने से होता है। तथा पूंजी का विकास पूंजीवादी क्षमता, सृजनशीलता से होता है। इसलिए कॉरपोरेटवादी दर्शन के अनुसार मानवाधिकार से सम्बन्धित हर बिन्दु–समानता, सामाजिक न्याय आदि–पूंजी के नीतिशास्त्र एवं रिवाजों के अधीन हैं।

VI गंभीर पुनर्विचार का विषय

भारत, दक्षिणी एशिया और विश्व स्तर पर मानवाधिकारों की स्थिति पर गंभीरता पूर्वक पुन: विचार करना जरूरी है। पिछले 5.5 दशकों से हमारे करोड़ों लोगों को भूख, बिमारी, संकट एवं दमन झेलना पड़ा है जबकि एक अल्प जनसंख्या पांच सितारा होटलों की मौज और ऐश्वर्यपूर्ण ऐसा जीवन जी रही है जिनके सामने पुराने बादशाहों का ऐशो आराम और शानोशौकत भी फीकी पड़ जाए। आज आम जन पूर्ण रूप से राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से वंचित हो चुका है।

इस अन्यायपूर्ण व्यवस्था को जो धन, अपराध और हिंसा पर टिकी है, उसे बदल कर लोक एवं पर्यावरण अभिमुख सामाजिक व्यवस्था कायम करने की जरूरत है।

एक न्याय-आधारित दुनिया में ही वास्तविक मानवाधिकारों को सुनिश्चित किया जा सकता है

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन (एन एच सी पी एम) मानता है कि वर्तमान दौर में मानव समुदाय एक अत्यधिक खतरनाक पर्यावरणीय-मानवीय संकट से ग्रसित है। चुनौती इतनी गंभीर है कि यदि इसका प्रत्युत्तर वास्तविक कार्यक्रम से नहीं दिया गया तो मानवता को बहुत ही गंभीर नुकसान उठाने पड़ेंगे। ऐसी विकट स्थिति में सबसे पहले तो मनुष्य जाति के भिन्न-भिन्न तबकों के बीच एक सम्पूर्ण एकता की आवश्यकता है और इस एकता की माँग है कि मानव समुदाय में विद्यमान सभी किस्मों के संघर्षों को समाप्त किया जाए। मानव समुदाय में एकता कायम करने तथा सभी किस्मों के संघर्षों को समाप्त करने के लिए एकमात्र रास्ता दुनिया में समस्त मानवाधिकारों को सुनिश्चित करने में तथा सभी प्रकार के विद्यमान अन्यायों को उखाड़ फेंके जाने में निहित है।

एन एच सी पी एम का नजरिया है कि सभी प्रकार के सामाजिक न्याय की बुनियाद पर एक न्याय आधारित दुनिया स्थापित करना निश्चित तौर पर संभव है और इसके लिए मौजूदा अन्यायपूर्ण कॉरपोरेट व्यवस्था को पुनर्गठित करने की जरूरत है।

मौजूदा अन्यायपूर्ण कॉरपोरेट व्यवस्था को न्यायपूर्ण व्यवस्था में पुनर्गठित करने एवं लोगों को सूचित करने, संगठित करने व कार्य करने के लिए निम्न 15 बिन्दु प्रस्तावित करता है। यह उन सभी लोगों को जो इन प्रस्तावित बिन्दुओं को विवेकशील और उचित समझते हैं उनसे निवेदन करता है कि वे इन प्रस्तावों के नीचे अपने हस्ताक्षर करें।

देश भर में या किसी क्षेत्र में जब कभी भी और जहाँ कहीं भी चुनाव होने वाले हों, यह आन्दोलन मतदाताओं से अपील करता है कि अपने-अपने इलाके के चुनाव लड़ने वाले प्रत्याशियों के समक्ष यह निवेदन करें कि वे इन न्यायपूर्ण बिन्दुओं के समर्थन में अपने हस्ताक्षर करें। यह उनकी ईमानदारी को जाँचने का मतदाताओं के लिए एक पैमाना होगा। जो इस पर हस्ताक्षर करते हैं वे मतदाताओं का समर्थन पाने लायक हैं और जो ऐसा करने में हिचकिचाते हैं, स्पष्टत: वे विवेकशील एवं न्याय के दृष्टिकोण से दूर हैं।

1. मानव जाति को हर समय और हर जगह पर्यावरण (यानि हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) को टिकाऊरखने के मूलभूत कार्य को थामे रखना चाहिए।
2. जिन्दा रहने के मानवीय अधिकार को शुद्ध हवा, शुद्ध पीने का पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित की जाए।
3. आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में 5 गुना से अधिक अन्तर) पर आधारित उचित समानता का मानवीय अधिकार हो।
4. विश्व के तमाम झगड़ों का शांतिपूर्ण समाधान होना चाहिए, विशेष तौर पर जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका समस्याओं का। जम्मू-कश्मीर के न्यायपूर्वक समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा और विदेश महकमों को भारत-पाक के ज्वाइंट कन्ट्रोल में दिया जाना चाहिए सुरक्षा एवं विदेश मामलों के अलावा सभी अन्य मसलों में जे के को पूर्ण स्वतंत्रता हो, जबकि इसके 9 नस्ली क्षेत्रों को अधिकतम

सम्भव स्वायत्तता होनी चाहिए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन एवं जॉर्डन के सम्बन्ध में भी कारगर होगा।

5. संयुक्त राष्ट्र संघ को पुनर्गठित करने के लिए सुरक्षा परिषद के पांच स्थायी सदस्यों की वीटो पॉवर समाप्त की जाए तथा किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए साधारण सभा के बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान की जाए।
6. विश्व-व्यापार संगठन, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाय प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है), को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति, जिसमें मानव और पर्यावरणीय पहलू उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्व वाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के 5 उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाए।
7. सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित किया जाए।
8. खेती से सम्बन्धित सभी लोगों की जीविका की सुरक्षा सहकारी कृषि व्यवस्था से सुनिश्चित की जाए।
9. शारीरिक व मानसिक दोनों प्रकार के श्रमिकों का सशक्तिकरण हो, जिसके अन्तर्गत संस्थानों, परियोजनाओं और कारखानों के प्रबन्ध में उनका एक तिहाई प्रतिनिधित्व सुनिश्चित हो।
10. उद्योग और सेवा के सभी क्षेत्रों पर से उद्योगपतियों और सरकार का एकाधिकार नियंत्रण खत्म करके तथा आम शेयरधारकों को दो तिहाई और मजदूरों को प्रबंधन में एक तिहाई हिस्सा देकर उनका लोकतांत्रीकरण किया जाए।
11. वित्तीय प्रबन्ध : कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबन्धन एवं नियंत्रण का पक्षधर है तो सरकारी क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियंत्रण का समर्थक है, पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर इन स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई सदस्य आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियंत्रण स्थापित हो। प्रोमोटर्स (प्रोत्साहक) शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध को समाप्त किया जाए।
12. प्रकृति-मानव केन्द्रित राजनीतिक प्रकिया लोगों द्वारा निर्देशित होनी चाहिये तथा उसका संचालन समर्पित प्रकृति-मानव केन्द्रित सामाजिक कार्यकर्ताओं (या उनके मोर्चे) द्वारा किया जाना चाहिए। चुनाव पूर्णतया स्वतंत्र हो जिसमें प्रत्येक को उम्मीदवार और मतदाता दोनों रूपों में भाग लेने का समान अधिकार है।
13. दलगत ढांचे को महत्व दिए बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करे) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्यसत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के एकाधिकार का खात्मा किया जाए। यदि मतदाता किसी भी विधानसभा या लोकसभा सदस्य को वापिस बुलाना चाहे

तो 1/5 मतदाताओं द्वारा लिखित में मांग करने पर पुन: चुनाव करवाया जाय।

14. प्रत्येक सांसद को दो करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये आवंटित करने का मौजूदा नियम हटाकर विकास से सम्बन्धित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्राम सभा सहित और इसके ऊपर कोई नहीं हो) के जरिए खर्च हों।
15. न्यायशास्त्र को पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों के हितों की सुरक्षा और संरक्षण करने के मूलभूत उसूल पर आधारित किया जाए। उपर्युक्त उसूल की अवहेलना करने पर अपराधी के साथ उसे सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल मानवीय क्रूरता और मृत्यु दण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधानों को निर्धारित किया जाए।

* * * * *

ट्रेड–यूनियनवाद पर प्रकृति–मानव केन्द्रित दृष्टिकोण की आम अवधारणा

1. मूलभूत अवधारणा

प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण मानता है कि पूंजी में दो तरफा घटनाक्रम शामिल है, यानि एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन और दूसरी तरफ मानवीय संसाधन। ऐसा इसलिए है क्योंकि पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों से ही मानव समुदाय का जीवन बनता है और उनके बिना मानव समाज के लिए किसी भी चीज का कोई मूल्य नहीं।

यह पूंजी की दो धारणाओं, यानि पूंजी का उदारवादी (कॉरपोरेट) सिद्धान्त तथा पूंजी के मार्क्सवादी सिद्धान्त को पूर्णतया अस्वीकार करती है। उदारवादी (कॉरपोरेट) सिद्धान्त मानता है कि पूंजी चार कारकों, यानि, तकनीकी, श्रम, कच्चा माल और पूंजी की उपज है जबकि मार्क्सवादी सिद्धान्त मानता है कि मजदूरों का अतिरिक्त मूल्य (मजदूरों के वास्तविक श्रम के मूल्य से कम दी गई मजदूरी जिसे पूंजीपति हड़प लेता है) ही पूंजी है। वास्तव में, दोनों सिद्धान्त व्यवहार में, धन या सम्पदा अथवा इसकी वृद्धि को पूंजी बताते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि उदारवादी और मार्क्सवादी दोनों सिद्धान्त विकास, प्रगति और समृद्धि (चाहे व्यक्तिगत हो या सामूहिक) का प्रतिनिधित्व पूंजी द्वारा ही करने में एकमत है। इसलिए सम्पूर्ण विश्व में सभी सरकारी बजटों, व्यापारिक लेखों-जोखों और व्यक्तिगत आय को विकास, प्रगति और समृद्धि का सूचकांक स्वीकार किया जाता है।

ऊपर बताई गई वास्तविकता से यह जरूरी है कि मजदूरों को एक तरफ (सोचने एवं व्यवहार में) आमतौर पर लोगों और खासतौर पर मजदूरों (मानसिक और शारीरिक श्रम करने वाले) के प्रति हमेशा जवाबदेह रहना चाहिये तथा दूसरी ओर पर्यावरण (या इसके संघटकों) के संवर्धन के लिए वचनबद्ध होना चाहिये। यह मूलभूत अवधारणा हर कहीं मजदूरों की सभी गतिविधियों में प्रदर्शित होनी चाहिये।

2. मजदूरों की तीन बुनियादी मांगें (सभी देशों में)

(क) मजदूरों का प्रबन्ध में 1/3 प्रतिनिधित्व का अधिकार हो।

(ख) प्रत्येक वंचित एवं बेरोजगार की सामाजिक सुरक्षा हो।

(ग) प्रत्येक देश में व्यक्तिगत आय में अधिकतम फर्क 1:5 का हो।

3. मुख्य विषय

मजदूरों को हर कहीं मजदूर अधीनता की समाप्ति के लिए और प्रबन्ध में श्रम-पूंजी भागीदारी स्थापित करने हेतु काम करना चाहिये ताकि कार्यशक्ति और नियन्त्रक स्टाफ के बीच समता कायम की जा सके।

4. मुख्य लक्षण

मजदूरों का मुख्य लक्षण समाज का हिस्सा होने के नाते आमतौर पर मानवता का और खासतौर पर श्रमिकों (उनके काम की गुणवत्ता के कारण) की भलाई का है। मजदूरों के संगठन व्यवसाय के अनुसार, यानि एक समान काम की प्रकृति तथा एक समान काम के हालात के आधार पर संगठित किये जाते हैं तथा ये नश्ल, जाति, धर्म, विभिन्न सांस्कृतिक ग्रुपों, राजनीतिक पार्टियों आदि के प्रभाव से मुक्त होते हैं। इसीलिए ही मजदूरों के संगठन ट्रेड यूनियन कहलाते हैं न कि कुछ और।

5. ट्रेड यूनियन आन्दोलन का ऐतिहासिक अनुभव

ट्रेड यूनियन आन्दोलन, अपने 200 वर्षों के लम्बे समय में सकारात्मक एवं नकारात्मक दो प्रकार के लक्षणों से चारित्रित रहा है।

सकारात्मक लक्षणों में : विभिन्न नश्लों, धर्मों, राष्ट्रों, उपराष्ट्रियताओं, सांस्कृतिक ग्रुपों आदि के मजदूरों को एक यूनियन में संगठित करके मानव की दृष्टि को व्यापक करना, सभी कामगार लोगों के लिए कई प्रकार के अधिकारों को प्राप्त करना जैसे (1) मजदूरों को एक यूनियन में संगठित होने का अधिकार (2) हड़ताल का अधिकार एवं सामूहिक सौदाकारी का अधिकार (3) मजदूरी एवं वेतन वृद्धि (4) काम के घण्टों में कमी (5) बालश्रम एवं छोटे बच्चों को काम पर लगाने पर रोक (6) कामगार महिलाओं को मातृत्व अवकास (7) आवास, बीमारी, शिशु सेवा केन्द्र, फैक्ट्री केन्टीन, शुद्ध वायु प्रणाली, सुरक्षा मानदण्ड, बीमा लाभ, अवकाश गृह, स्वास्थ्य सेवा केन्द्रों, श्रम कल्याण योजनाओं आदि के मामले में कामगार लोगों को सामाजिक सुरक्षा, शामिल है।

आज ट्रेड यूनियनें सभी प्रकार के ट्रेड और व्यवसायों की गतिविधियों और संगठन की एक आम अवधारणा बन गयी हैं, यानि किसानों, मध्यम वर्ग, व्यापारी और यहां तक कि बड़े पूंजीपतियों और एकाधिकारवादियों की भी। इस प्रकार आज समाज में ट्रेड यूनियन की भूमिका एवं स्थान सर्वव्यापी बन गया है।

ट्रेड यूनियन की बहुत सारी उपलब्धियों के बावजूद ट्रेड यूनियन आन्दोलन कुछ कमजोरियों का भी शिकार रहा है। ये कमजोरियां है :

⁂ट्रेड यूनियनों के नेता और गतिविधियां आमतौर पर स्थापित राजनीतिक पार्टियों से जुड़ी होती हैं जो मजदूरों को अपने राजनीतिक उद्देश्यों के लिए काम में लेते हैं।

⁂राजनीतिक प्रभुत्व वाली ट्रेड यूनियनें आमतौर पर मजदूरों की सामाजिक चेतना तथा खासतौर पर प्रत्येक देश में मजदूरों से सम्बन्धित कानूनों एवं नियमों की कानूनी शिक्षा प्रदान करने के अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य की बजाए अपने सदस्यों की व्यक्तिगत समस्याओं पर अधिक जोर देती है।

⁂राजनीतिक प्रभुत्ववाली ट्रेड यूनियनें कुछ निश्चित वामपंथी और दक्षिणपंथी एक तरफा धारणाओं से चरित्रित या प्रभावित है जैसे–

⁂वामपंथी धारणाएं कि मजदूर वर्ग मानवता का एकमात्र मुक्तिदाता है, श्रम और पूंजी विरोधी शक्तियां है, प्रबन्ध हमेशा मजदूर विरोधी होता है, मजदूरों को केवल अपनी मांगों से मतलब है, उत्पादकता से नही। मजदूरों को बहादुर (उत्तेजना फैलाने वाले) नेताओं की जरूरत है, उनके गलत बर्ताव की अनदेखी करना आदि।

⁂ट्रेड यूनियन को जाति, सम्प्रदाय और संकीर्ण लाईनों पर संगठित करने और यूनियनों को प्रबन्ध की आज्ञाकारी बनाने का दक्षिणपंथी व्यवहार।

6. ट्रेड यूनियनों का मुख्य कार्य

1. ट्रेड यूनियनों को 3 तरफा जुड़ी हुई गतिविधियां करने की जरूरत है (क) राजनीतिक, आर्थिक, कानूनी और सांस्कृतिक स्तर को ऊंचा उठाते हुए मजदूरों की सामाजिक चेतना को गहरा करना (ख) ट्रेड यूनियनों की जनतांत्रिक कार्यप्रणाली हेतु प्रयास करना (ग) मजदूरों की तात्कालिक और दीर्घ-परास की मांगों के आधार पर एवं एक धंधे में एक यूनियन के नियम से मेल बैठाते हुए, मजदूरों को संगठित करना।

2. मजदूरों की सामाजिक चेतना ऊंचा उठाने के लिए यह जरूरी है कि मजदूरों में ग्लोबल सामाजिक वास्तविकता एवं इसकी मांगों की पर्याप्त समझ पैदा की जाए।

3. ट्रेड यूनियनों के जनतांत्रिक कार्यकलाप के लिए यह जरूरी है कि हर वक्त और हर स्तर पर जनतांत्रिक सिद्धान्तों का पालन किया जावे। मजदूरों की प्रत्येक मांग के लिए यह कानूनी और शान्तिपूर्ण साधन अपनाने के लिए प्रेरित करता है। इसमें वार्ता, समझौता, मध्यस्थता और अन्त में हड़ताल शामिल है।

7. ट्रेड यूनियनों की मांगों का आम घोषणा-पत्र

1. कर्मचारियों को चुनाव लड़ने सहित राजनीतिक अधिकार।

2. श्रम को मानवीय पूंजी माना जावे न कि माल।

3. कार्यशक्ति का प्रबन्ध के मातहत की स्थिति को समाप्त करना, मजदूरों सहित लोगों को प्रबन्ध/प्रशासन में भागीदारी का संवैधानिक अधिकार प्रदान करना।

4. एक उचित सरकारी श्रमनीति का निर्माण करना जिसका उद्देश्य कामगारों एवं प्रबन्धकों को समान दर्जा देकर श्रम-पूंजी (कार्यशक्ति-प्रबन्ध) के बीच सौहार्द्धपूर्ण सम्बन्ध बनाना हो।

5. मजदूरों की क्षमता एवं योग्यताओं में वृद्धि करना।

6. श्रम विरोधी कानूनों के जरिए भारत को प्रतियोगी बनाने की भारत सरकार की नीति को वापस लेने की मांग करना।

7. सबसे नीचे और सर्वोच्च के बीच मजदूरी/वेतन का फर्क 1 : 5 रखने की मांग करना।

8. ट्रेड यूनियनों की मांगों का विशिष्ट घोषणा-पत्र

यह प्रत्येक यूनियन के मुताबिक अलग-अलग होगा।

9. ट्रेड यूनियन की कार्यशैली

(क) विचार एवं आचरण में नेतृत्व मजदूरों के साथ ट्रेड यूनियन आन्दोलन के प्रति हमेशा जवाबदेह हो।

(ख) मजदूर एवं प्रबन्ध लोगों के प्रति जवाबदेह हो।

(ग) मांगों का घोषणा-पत्र तर्क संगत होना चाहिये तथा मजदूरों की सलाह से तैयार हो एवं मजदूरों में पूरी तरह लोकप्रिय हो।

(घ) ट्रेड यूनियन कार्य मजदूरों से प्रतिदिन घनिष्ट सम्पर्क के जरिए किया जाए एवं ट्रेड यूनियन काम करते समय मजदूरों की सामाजिक चेतना बढ़े।

(ङ) ट्रेड-यूनियन गतिविधियों में जनतांत्रिक कायदों का कड़ाई से पालन किया जाए।

(च) प्रत्येक मजदूर को धैर्यपूर्वक सुना जाए तथा उसकी व्यक्तिगत, पारिवारिक और कार्यालय सम्बन्धी समस्याओं को जानने का प्रयास किया जाए।

(छ) ट्रेड यूनियनों के आम सदस्यों की नियमित बैठकें की जाए।

(ज) महिलाओं को ट्रेड यूनियन नेतृत्व में उचित प्रतिनिधित्व दिया जाए।

(झ) मजदूरों द्वारा हर कहीं पर्यावरण संरक्षण, समता, उत्पादकता, जनवाद एवं पारदर्शिता के मानदण्डों का पालन किया जाए।

10. ट्रेड यूनियनों का संगठनात्मक कार्य

एक संगठनात्मक रूप जो एक कार्यस्थल में एक यूनियन के सिद्धान्त पर अमल द्वारा मजदूरों के बीच अधिकतम सम्भव एकता की जरूरत पर जोर देता है। जहां एक यूनियन बनाना व्यवहारिक नहीं हो वहां तुरन्त एक न्यूनतम साझा कार्यक्रम के आधार पर विद्यमान सभी यूनियनों को एक संयुक्त फ्रण्ट में संगठित करने का प्रयास होना चाहिये।

11. प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल दो सर्वोच्च प्राथमिकताओं, यानि पर्यावरण एवं मानव का पक्षपोषण करता है तथा पांच सिद्धान्तों, यानि पर्यावरणीय संवर्द्धन, उचित समता (यानि, प्रत्येक वंचित एवं जरूरतमन्द को सामाजिक सुरक्षा, अतर्कसंगत वेतन असमानता को 1 : 5 के अनुपात में तर्कसंगत बनाना) जनता के नेतृत्ववाला लोकतंत्र (कॉरपोरेट पूंजीवादी समर्थक राजनीतिक पार्टियों एवं व्यवसायियों की जगह लोगों का सशक्तिकरण) तथा चौतरफा पारदर्शिता। ये पांच आयामी मूलभूत सिद्धान्त मानव की जैव-सामाजिक प्रकृति से मेल खाते हैं, यानि यह मनुष्य के निजी हित और उसके सामाजिक हित में समन्वय बैठाते हैं।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल परम्परागत राष्ट्रीय विकास मॉडलों यानि कॉरपोरेट नेतृत्व और सरकार निर्देशित की तुलना में विकास की समयानुकूल धारणा को पेश करता है। कॉरपोरेट नेतृत्ववाला विकास मॉडल केवल लाभ या उत्पादकता (जो केवल धनस्वामियों के हितों को सुनिश्चित करता है) को अपना एकमात्र उद्देश्य बनाता है जबकि सरकार निर्देशित विकास मॉडल उत्पादन के साधनों का केवल समाजीकरण (अथवा राष्ट्रीयकरण) को ही अपना लक्ष्य चुनता है (जो शासक राजनीतिज्ञों एवं अफसरों के हितों की सेवा करता है), ये दोनों परम्परावादी राष्ट्रीय मॉडल मानवता के जैव-सामाजिक चरित्र या निजी-हित एवं सामाजिक हित दोनों के विपरीत केवल निजी-हित की सेवा करते हैं। फिर वे पर्यावरण को कोई प्राथमिकता नहीं देते तथा आर्थिकता अथवा वृद्धि प्रक्रिया में लोकतांत्रिक और पारदर्शी मानदण्डों को भी कोई स्थान नहीं देते। आगे कॉरपोरेट मॉडल समता (अथवा सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया रद्द करता है जबकि

सरकार निर्देशित मॉडल राजनीतिक समानता एवं उत्पादकता की पूर्णतया अनदेखी करता है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल कॉरपोरेट नेतृत्व और राज्य आधारित दोनों विकास मॉडलों से उनके उद्देश्यों, प्रबन्ध और शैली में भिन्नता रखता है।

कॉरपोरेट मॉडल पूंजी एवं पूंजी के मालिकों का विकास करता है और राज्य मॉडल इसके शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के साथ मजदूर कूलीनता के हितों को आगे बढ़ाता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आमतौर पर लोगों और पर्यावरण के हितों की तथा खासतौर पर गरीबों और वंचित तबकों की सेवा पर आधारित है।

प्रबन्ध में, कॉरपोरेट सेक्टर एकाधिकारवादी कॉरपोरेट प्रबन्ध एवं नियंत्रण का पक्षपोषण करता है और राजकीय क्षेत्र एकाधिकारवादी अफरशाही प्रबन्ध एवं नियंत्रण का समर्थन करता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल में पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर लोकतांत्रिक प्रबन्ध एवं नियंत्रण की मान्यता है।

शैली में, अधिनायकवादी और गोपनीय कॉरपोरेट एवं राजकीय शैली के उलट प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल लोकतांत्रिक, पारदर्शिता और जवाबदेही की शैली पर आधारित है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल मानता है कि दोनों कॉरपोरेट और सरकार निर्देशित विकास मॉडलों का निम्नलिखित कदम उठाकर विकेन्द्रीकरण किया जाना चाहिये।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के सभी शेयरों को साधारण शेयर बनाया जावे। किसी को भी इन शेयरों का 0.5% शेयर से ज्यादा रखने की इजाजत नहीं हो। बहरहाल विशेष मामलों में राज्य को 1/5 भाग शेयर रखने की इजाजत हो। प्रोमोटर शेयर्स के नियम (जो अभी कॉरपोरेट सेक्टर में चालू है) को पूर्णतया रद्द किया जावे। प्रत्येक साधारण शेयर धारक का एक वोट होगा चाहे उसके साधारण शेयर की संख्या कितनी भी हो।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के प्रबन्ध को पूर्णतया जनतांत्रिक बनाया जावे। इस मामले में, साधारण शेयर धारकों को प्रबन्ध मण्डल में 2/3 प्रतिनिधत्व दिया जावे। प्रतिनिधित्व का 1/3 भाग सम्बन्धित कम्पनी के श्रमिकों के लिए आरक्षित हो। श्रमिकों का प्रतिनिधित्व शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के कामगारों में से हो जिन्हें साधारण शेयर धारकों जैसे ही अधिकार हो।

ऐसे अधिकरण जिनमें सरकार का 1/5 भाग साधारण शेयर हो उनके प्रबन्ध मण्डल में साधारण शेयर धारकों को 60% श्रमिकों का 30% तथा सरकार का 10% प्रतिनिधित्व हो।

प्रबन्ध मण्डल 3 वर्षों के लिए चुना जावे।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल का उपर्युक्त डेमोक्रेटिक सेक्टर दोनों एकाधिकारवादी कॉरपोरेट और राज्य चलित सेक्टरों से अधिक उत्पादक (सम्भवत: दोगुना) होगा। इसके (यानि डेमोक्रेटिक सेक्टर के) उच्च वृद्धि दर (या सम्पदा उत्पादन की दर) का कारण इसके (यानि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल के) वेतन में 1 : 5 के समतावादी फर्क के सुनिश्चित करने तथा प्रत्येक को जीवन के हर क्षेत्र में सामाजिक

सुरक्षा प्रदान करने, इसके लोगों और पर्यावरण को मूलभूत सिद्धान्त बनाने, इसके विश्व-शान्ति एवं सुरक्षा के पालन करने, इसके गांव से संयुक्त राष्ट्र स्तर एवं अन्य आर्थिक, वित्तीय एवं ग्लोबल व्यापारिक संस्थाओं तक में लोगों के सशक्तिकरण करने की राजनीति (खासकर महिलाओं, मजदूरों, और वैज्ञानिकों-तकनीकीविदों की), इसकी वास्तविक एवं तर्कसंगत आर्थिकता तथा इसकी मानवीय एवं पर्यावरणवादी संस्कृति के कारण मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के अपार विकास में निहित है।

सरकार निर्देशित सेक्टर की अव्यवहार्यता को भूतपूर्व सोवियत यूनियन के ढहने में और विश्व के समाजवादी देशों में इस मॉडल की अवहेलना में देखा जा सकता है। कॉरपोरेट सेक्टर की अदक्षता विश्वभर में कॉरपोरेट मॉडल में लगातार बढ़ रही असमानता, गरीबी, भूख, बेरोजगारी, बेघरबारता के बढ़ते ग्राफ और सबसे ऊपर लगातार गैर टिकाऊ संकट (अब यहाँ और कल वहाँ) में देखी जा सकती है।

पर्यावरणीय एवं मानवीय मामलों पर सामुहिक नियंत्रण की बढ़ती हुई लोगों की मांग, मानव समाज जिधर बढ़ रहा है उसकी दिशा बताती है।

कॉरपोरेट सेक्टर द्वारा सामाजिक जवाबदेही एवं मूल्यवादी व्यवहार के नये अपनाये जाने वाले दर्शन की मुद्रा भी कॉरपोरेट सेक्टर के अहस्तक्षेप के मूलभूत सिद्धान्त के कार्यशील नहीं होने को प्रदर्शित करता है, इसका मूलभूत सिद्धान्त जो आर्थिक विकास प्रक्रिया में प्रत्येक सामाजिक मान्यता की उपेक्षा करता है और जिसका एकमात्र उद्देश्य अधिकतम लाभ कमाना है। (नवम्बर, 2005)

* * * * *

आज का आतंकवाद

कॉरपोरेट महाशक्तिवाद की एक बुरी पैदावार

आतंकवाद आज दुनिया भर में कोलाहल भरा शब्द बन गया है। सम्पूर्ण कारपोरेट पूँजीवादी जगत की राजनीतिक (यानि, राष्ट्रीय राज्यों), आर्थिक (यानि, व्यापारिक घरानों) तथा सांस्कृतिक सस्थाओं (यानि, सभी नीति शास्त्र संबंधित संगठनों) ने इसे दुनिया के लोगों का दुश्मन नम्बर एक घोषित किया है।

अब तक, मुश्किल से ही किसी ने 9/11 से पहले इस खतरनाक भूत के बारे में सुना होगा जो अब सारी दुनिया को दुख दे रहा है। ऐसा दुष्ट घटनाक्रम 200 साल से अधिक समय (पूंजीवादी युग के दौरान) तक आम जनता से ओझल कैसे रहा यह एक रहस्य है।

न्यूयार्क में विश्व व्यापार केन्द्र पर धमाका होने के तीन दिन बाद अमेरिका के वर्तमान राष्ट्रपति जार्ज बुश ने घोषणा की कि इस हमले में आतंकवादियों का हाथ है तथा इस कायरतापूर्ण कार्यवाही का योजनाकार ओसामा बिन लादेन है।

इससे पहले अमेरिका की गुप्तचर सेवाओं ने ऐसी कोई सूचना नहीं दी थी फिर बुश को इतनी अत्यन्त गुप्त बात की सूचना कहाँ से मिली, यह आज तक कोई नहीं जानता। इस घटना की वास्तविकता को जानने की कभी किसी ने कोई कोशिश भी नहीं की है।फिर भी संयुक्त राष्ट्र संघ तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के साथ सभी राष्ट्रीय-राज्यों ने जार्ज बुश की ही राग में राग मिलाई है और ऐलान किया कि मानव समुदाय को मुख्य खतरा आतंकवाद से है।

यह एक दिलचस्प बात है कि संयुक्त राष्ट्रसंघ के यह ऐलान करने के चार वर्ष बाद भी कि दुनिया के लोगों का प्रमुख शत्रु आतंकवाद है उसने यानि यू.एन.ओ. ने यह उचित नहीं समझा कि आतंकवाद को परिभाषित किया जाए, ना ही अपने अस्तित्व के 60 साल के दौरान यह आवश्यक समझा कि आतंकवाद के बारे में स्पष्ट धारणा बनाई जाए। इस कार्य को न तो अमेरिका ने और ना ही किसी अन्य राष्ट्रीय राज्य ने अपने हाथ में लिया है। इससे पता चलता है कि धारणात्मक और समर्पण की दृष्टि से ये कितने गंभीर है तथा प्रतिपक्ष के प्रति इनकी क्या मनोवृति है।

2. आतंकवाद : इसका इतिहास, अर्थ, शैली एवं ढाँचा

यह सर्वविदित तथ्य है कि किसी भी घटनाक्रम से प्रभावी ढंग से तभी निपटा जा सकता है जब उसके उद्‌भव, पारिभाषिक चरित्र, व्यवहार एवम स्वरूप के बारे में पर्याप्त ज्ञान हो।

(क) आतंकवाद का इतिहास–छुटपुट घटना से वैश्विक मुद्दे तक

आतंकवाद ने अचानक ही दुनिया में केन्द्रीय स्थान ग्रहण कर लिया है। 11 सितम्बर 2001 को न्यूयार्क और वांशिगटन पर कायरतापूर्ण आतंकवादी हमले (जिसके लिए दुनिया के समस्त लोगों ने अमेरिका के लोगों, खास तौर पर पीड़ित परिवारों के प्रति दुख और सहानुभूति प्रकट की एवं आंतकवादियों की भर्त्सना की) से पहले मीडिया में आतंकवादी मुद्दा यदा कदा ही आता था। दुनियां में कही भी यह मुद्दा लोगों द्वारा ध्यान दिये जाने लायक कभी भी नहीं बना। जहाँ कहीं भी और जब कभी भी लोगों के सामने यह मुद्दा आया तो इसे छुट-पुट घटना के तौर पर ही लिया गया। यहाँ तक कि अमेरिका ने भी उस मुद्दे पर कभी कोई जोर नहीं दिया। इसने प्राय: इस शब्द का प्रयोग घटना दर घटना के अनुसार चुनिन्दा तौर पर ही उपयोग किया।

फिर भी, यह एक ध्यान देने योग्य तथ्य है कि अमेरिका स्वयं ने अपने प्रतिकूल शासकों के विरुद्ध चलाए गए गुप्त युद्धों में विभिन्न किस्मों के आतंकवादी ग्रुपों को उपयोग में लिया है। यहाँ तक कि अमेरिका ने ओसामा बिन लादेन और मुल्ला उमर को न्यूर्याक और वाशिंगटन पर 9/11 के आतंकवादी हमले का जिम्मेदार ठहराया है, वे एक दशक पहले तक अमेरिका के लिए अत्यधिक चहेते नेताओं में से थे, जिन्होंने तत्कालीन समय में अमेरिका की विरोधी महाशक्ति सोवियत युनियन के विरुद्ध अमेरिका की सैनिक रणनीति और आवश्यक धन की मदद से अफगानिस्तान को आजाद कराने वाले 'स्वतन्त्रता युद्ध' का नेतृत्व किया था।

1945 के बाद अमरीका (द्वितीय विश्व युद्ध में इसके नेतृत्व में विजय पाने के बाद यह दुनिया की मुख्य शक्ति बन गया) का व्यवहार यह दर्शाता है कि 1945 के बाद की दुनियां को अपनी पसन्द के मुताबिक शक्ल देने के लिए इसने (यानि अमेरीका ने) कॉरपोरेट किस्म के लोकतन्त्र एवं कानून व्यवस्था तक को फैलाने की कोई कोशिश नहीं की, बल्कि इसने दुनिया में कुछ बहुत ही भ्रष्ट, निरंकुश, अत्याचारी एवं सैन्यवादी शासकों जैसे, जेयरे के मोबुतु, इस्लामी रूढ़िवादियों जैसे, ईरान में रजा शाह पहलवी, इजराइल में यहुदी अन्धराष्ट्रवादी, दक्षिण अफ्रिका में मतान्ध नस्लवादी, पाकिस्तान में सैनिक तानाशाहों आदि को बढावा दिया।

भूत या वर्तमान में किसी भी देश ने इतना आक्रामक रवैया अख्तियार नहीं किया जितना अमेरीका ने किया है, जिसने दुनिया भर में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से दखलन्दाजी के रिकार्ड कायम किये हों। हिरोशिमा-नागासाकी पर इसके द्वारा क्रुरतापूर्ण परमाणु बम के हमले से दुनिया को आतंकित करने की इसने शुरूआत की और इसके बाद लगातार अन्य देशों के मामलों में दखलन्दाजी करने और मुश्किलें पैदा करने की कार्यवाहियां करता रहा है, जैसे 1950 के दशक में ईरान और मध्य अमेरिका में ,1960 के दशक में ब्राजील, क्यूबा और वियतनाम में, 1970 के दशक में चिली, दक्षिण अफ्रिका, निकारागुआ, एलसल्वाडोर और अफगानिस्तान में ,1980 के दशक में पनामा, हैती, अंगोला, लीबिया पर सीधा आक्रमण एवम ईरान-इराक युद्ध को भड़काया तथा 1990 के दशक में सोमालिया, युगोस्लाविया, कोसोवो तथा सुडान और अफगानिस्तान पर क्रूज मिसाइल का हमला। यह यही पर नहीं रूका बल्कि आगे जन समर्थक सरकारों को पलटने मे भी लगा रहा, जैसे 1960 में जेयरे में पैट्रिश लुमुम्बा की सरकार को गिराना तथा 1970 के दशक में ईरान में डा. मुस्सदक की सरकार को गिराना।

कुल मिलाकर उपर्युक्त सभी संघर्षों में आतंकवाद अमेरिका की देन रहा है।

(ख) आतंकवाद की परिभाषा

अन्तर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तर पर इस शब्द की कोई सर्व स्वीकृत परिभाषा मौजूद नहीं है। हो सकता है इसका कारण यह हो कि विभिन्न राष्ट्रीय राज्यों में इस शब्द की भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ अस्तित्व में है। इसके अनुरूप इस शब्द के विभिन्न किस्म के अर्थ मौजूद है (जैसे स्पेन का बास्क, पेरू का साइनिंग स्टार, म्यानमार के करेन विद्रोही, इराक, ईरान और तुर्की के कुर्द, दोनों अमेरीका में रेड इण्डियन्स और अन्य मूल निवासियों, श्रीलंका में लिट्टे, आयरलैण्ड में आई आर ए आदि के सम्बन्ध में) जो सम्बन्धित देशों के हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले अर्थ देते हैं। उदाहरण के लिए जे के मामले की भारतीय अवधारणा जेके समस्या को 'सीमा पार आतंकवाद' के नतीजे के रूप में चारित्रित करती है परन्तु पाकिस्तान इसी जेके समस्या को 'स्वतंत्रता संघर्ष' और इसके चलाने वालों को स्वतंत्रता सेनानी के अर्थ में लेता है। इसी प्रकार अरब/इजरायल, टर्की/ग्रीस, रूस/टर्की, इरान/अरब के खाड़ी देशों और इसी प्रकार अन्य बहुत से देशों के मामलों में विरोधाभाषी दृष्टिकोण पाया जाता है। स्पष्टतया, उपर्युक्त अराजक स्थिति यह माँग करती है कि आतंकवाद की तुरन्त लेकिन सर्वसम्मत परिभाषा दी जाए। संयुक्त राष्ट्र संघ बहुत लम्बे समय तक इस समस्या से असम्बन्धित रहा है जिसका मुख्य कारण अमेरिका और अन्य बड़ी शक्तियों का दबाव रहा है। परन्तु आज मामला इस स्थिति में पहुँच गया है जब संयुक्त राष्ट्र संघ को परिस्थितियों के दबाव के कारण इस प्रश्न को प्राथमिकता देनी होगी और आतंकवाद की सर्वसम्मत परिभाषा को खोज निकालने की कोशिश करनी होगी।

हमारे दृष्टिकोण से आतंकवाद जो प्राचीन और मध्ययुगीन सिद्धान्तों 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' और 'अन्त भला तो सब भला' की प्रेरणा से उभरा है, ये कहावतें इस धारणा को स्थापित करती है कि अपने उद्देश्यों को पाने के लिए आतंक का सहारा लिया जाए। वास्तव में आतंक एक पाशविक प्रवृत्ति है न कि मानवीय। चूंकि पशु केवल जैविक प्राणी है जबकि मनुष्य एक जैविक-सामाजिक प्राणी है। ऐतिहासिक साक्ष्य दर्शाते हैं कि मानवीय विकास के क्रूर, जंगली और बर्बर अवस्थाओं में आतंकवाद मौजूद रहा है। परन्तु

अब उभरते वैश्विक मानवीय समाज की प्रक्रिया में सामाजिक तौर पर आतंकवाद पूर्णतया अवांछित हो गया है।

आतंक मनुष्य की मूल प्रवृत्ति या आवेग का प्रतिनिधित्व नहीं करता, अत: इसकी धारणा में मानवीय प्रेरक मूल्यों का अभाव है। आतंकवाद का अपना कोई स्वतंत्र कार्यक्रम या एजेण्डा नहीं होता परन्तु विभिन्न किस्मों (जैसे धार्मिक, राजनीतिक, नस्ली आदि) में से आम तौर पर किसी के भी हथकंडों के रूप में काम आता रहता है। इस प्रकार पृथक तौर पर इसका अलग से कोई उद्देश्य नहीं होता, परन्तु इसे केवल तरीके या तकनीक के तौर पर काम में लिया जाता है।

वर्तमान परिस्थिति में आतंकवाद दो स्वरूपों में मौजूद है–(अ) सरकार विरोधी या गैर सरकारी समूहों द्वारा लागू किया जाने वाला आतंकवाद (ब) राजकीय आतंकवाद यानि राष्ट्रीय राज्यों द्वारा काम में लाया जाने वाला आतंकवाद। दोनों ही किस्मों की एक जैसी मानवीय प्रकृति और व्यवहार है, यद्यपि संगठनात्मक स्वरूप भिन्न है। गैर-सरकारी आतंकवाद किसी नियमों या प्रक्रियाओं को मानने के लिए बाध्य नहीं है और जब कोई सरकार, राजकीय आतंकवाद को अपनाती है तो वह बुनियादी राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय कानूनों, सम्मेलनों तथा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा सन् 1966 में आयोजित दो अधिवेशनों द्वारा पारित मानव अधिकारों का हनन करती है।

(ग) विश्व आतंकवाद : इसके मूलभूत लक्षण

विश्व आतंकवाद के आकार, ढाँचा, कार्यक्रम और व्यवहार पर नजर डालें तो हम पाते हैं कि 95 प्रतिशत आतंकवाद विभिन्न प्रकार के समूहों से निर्मित है जिनमें से प्रत्येक किसी न किसी देश से सम्बन्धित है। उनमें से लगभग सभी या तो धार्मिक, जातीय अथवा भाषाई अल्पसंख्यक समूह हैं। संगठनात्मक रूप से वे अपना गुप्त ढाँचा रखते हैं। उनका एक-सूत्रीय कार्यक्रम सम्बन्धित बहुमतवादी राष्ट्रीय राज्य से अलग होना अथवा अपनी पहचान से सम्बन्धित कुछ राजनैतिक-संवैधानिक मान्यता प्राप्त करना होता है। उनका तर्क है कि वे बहुमत प्रभुत्व सरकार के हाथों भेद-भाव का शिकार हैं। आगे कहते हैं कि वे सभी शान्तिपूर्ण उपायों को पूरी तरह काम में ले चुके हैं और सशस्त्र संघर्ष तो उनका अन्तिम सहारा है। इस तरह के लगभग सभी संघर्ष बहुधार्मिक या बहुजातीय देशों तक सीमित है। यहाँ यह जानना अतिमहत्वपूर्ण होगा कि वर्तमान विश्व में 5000 से अधिक बड़ी या छोटी सामाजिक पहचाने हैं।

बचे हुए 5 प्रतिशत आतंकवादियों का विशिष्ट लक्षण यह है कि उनका अन्तरराष्ट्रीय एजेण्डा (कुछ भिन्नता के साथ) होता है, लेकिन कोई मूलभूत इलाका नहीं होता, वे व्यक्तिगत लड़ाके के रूप में कार्यरत होते हैं, और वैचारिक राष्ट्रीय पहचान वाले ग्रुप को अपनी सेवाएँ मुफ्त देते हैं।

उपर्युक्तानुसार, यह है कि प्रत्येक बहुरंगी देश में बहुमतवादी राष्ट्रवाद का उस देश में आतंकवाद पैदा करने में ज्यादा योगदान है।

बहरहाल, राष्ट्रीय-राज्य आतंकवाद (विश्व के सभी देशों में) का सबसे निकृष्ट अमानवीय अपराध, हमारे ग्रह पृथ्वी के पर्यावरणीय संसाधनों का (चाहे राज्य अथवा चल रही सरकार की) वित्तीय जरूरतों को पूरा करने के लिए बर्बाद किया जा रहा है। पर्यावरणीय

आतंकवाद जो इस पृथ्वी पर सम्पूर्ण जैव-जगत के अस्तित्व को ही चुनौती पैदा करता है, यह मानवविरोधी आतंकवाद से अधिक जघन्य है। यदि कोई राष्ट्रीय राज्यों, खासकर विकसित और भूतपूर्व उपनिवेशी शक्तियों वाले राज्य के पिछले पर्यावरणीय रिकार्ड का सिंहावलोकन करें तो पाते हैं कि राष्ट्रीय-राज्य का पर्यावरणीय आतंकवाद ने अपने 200 वर्षों के अनोखे शासन में गम्भीर पारिस्थितिकी असंतुलन पैदा कर दिया जिसका मानव समुदाय को अब सामना है।

(घ) आतंकवाद का कारण

आतंकवाद के बुनियादी (अथवा दीर्घकालीन) कारण का जहाँ तक सवाल है यह राष्ट्र आधारित सामाजिक व्यवस्था और इसका मुख्य मानवीय प्रेरणा का कारक यानि स्वहित में निहित है। सामाजिक व्यवस्था और इसका मानवीय प्रेरणा कारक दोनों अपने 200 वर्षों के लम्बे राष्ट्रीय शासन के दौरान गैर टिकाऊ पर्यावरण, अन्याय और असमानता की व्यवस्था को आगे लाये हैं जहाँ ताकतवर कमजोर की पीठ पर सवार रहते हैं, गरीबों पर साधन सम्पन्न प्रभुत्व रखते हैं तथा धन और ताकत न्याय और सत्य के स्वीकृत मानदण्ड हैं।

यह दावा निम्नलिखित बिन्दुओं से पूर्णतया स्पष्ट है–

(अ) पर्यावरण की बिगड़ती हालत जिसमें संसाधनों–हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि के क्षय होने की स्थिति है।

(ब) संयुक्त राष्ट्र संघ जो दुनिया की सबसे उच्च निर्णय लेने वाली संस्था है तथा उसकी सुरक्षा परिषद् पर 5 सबसे अधिक परमाणु शक्ति सम्पन्न उन सैनिक देशों ने अधिकार जमा रखा है, जिन्हें वीटो पॉवर और स्थायी सदस्यता हासिल है।

(स) कुछ आर्थिक तौर पर सबसे अधिक शक्तिशाली राष्ट्रीय राज्यों (देशों) ने आई एम एफ और विश्व बैंक दोनों संस्थाओं में आर्थिक हैसियत के मुताबिक वोट की ताकत के आधार पर प्रभुत्व जमा रखा है।

(द) पाँच बड़ी परमाणु शक्तियों ने वास्तव में परमाणु एकाधिकार प्राप्त किया हुआ है जिसे सीटीबीटी के तहत गारण्टी प्राप्त है।

(य) कुछ मुट्ठी भर विकसित देश (जो दुनिया की आबादी का 15 प्रतिशत हैं) दुनिया के आर्थिक और वित्तीय संसाधनों के 80 प्रतिशत पर नियंत्रण किए हुए हैं, जबकि करीब 85 प्रतिशत दुनिया के लोग (जो 130 विकासशील देशों में रहते हैं) दुनिया के 20 प्रतिशत से कम संसाधनों पर जीवन बसर करते हैं।

(र) दुनिया के प्रत्येक राष्ट्रीय राज्य (देश) में और खास करके विकासशील देशों में जहाँ उनकी एक तिहाई आबादी गरीबी रेखा के नीचे रहती है–धनवानों और गरीबों के बीच अत्यधिक असमानता है।

(ल) प्रत्येक देश में जनवादी या संसदीय व्यवस्था भ्रष्ट और निरंकुश पार्टियों के प्रभुत्व में हैं और धन और सत्ता बल पर आधारित हैं–इस प्रकार अधिसंख्यक आम लोगों की शासन में कोई आवाज नहीं है।

(व) राष्ट्रीय व्यवस्था के मानवीय प्रेरक कारक स्वहित, एडम स्मिथ के बुनियादी सिद्धान्त, कि 'मनुष्य स्वभाव से ही स्वार्थी है', से निकला है जो सामाजिक हितों को पृष्ठभूमि में धकेल देता है।

वास्तव में, स्वहित पशु जगत में नैसर्गिक मूल प्रवृत्ति है, जबकि मनुष्य का जब से प्रादुर्भाव हुआ है, वह स्वभावत: जैविक-सामाजिक है। अर्द्धसामाजिक चरित्र की गुणात्मकता पशु प्रजाति से मानव प्रजाति की भिन्नता का एकमात्र गुण है। मनुष्य में जब सामाजिक पहलू नहीं रहता तो उसकी जीवन शैली पशु समान हो जाती है।

जब से धन और सत्ता प्रभुत्व में आए हैं यह स्वहित की उच्चतम स्थिति का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं, सारी दुनिया इन दो जीवनदायी अमृत के पीछे भाग रही है। इस धन और सत्ता को प्राप्त करने के व्यापार ने (जिसने गैर-टिकाऊ पर्यावरण व्यवस्था और अत्यधिक अन्याय व असमानता की मानव व्यवस्था खड़ी कर दी है) अब दुनिया को गम्भीरतम पर्यावरणीय और मानवीय बर्बादी के कगार पर ला खड़ा कर किया है।

आतंकवाद के तात्कालिक कारण का जहाँ तक सवाल है यह सामाजिक व्यवस्था को चलाने वाली संस्था अथवा सरकार में निहित है। स्वहित की दिशा से मार्गदर्शन लेकर राष्ट्रीय सरकारों के नेता (जो प्रत्येक देश में पार्टी व्यवस्था पर आधारित है) मुख्यतया अपनी धन सम्पदा को अधिकतम बनाने में और उचित एवं अनुचित तरीके से सत्ता पर कब्जा बनाए रखने में समर्पित है। उनके व्यवहार के मानक 'कहो कुछ करो कुछ' है।

इस चेतावनी भरी स्थिति में जबकि समझदार लोग उचित और तार्किक रास्ता खोजने में लगे हैं, तो भाग्यवादी, रहस्यवादी, प्रकृति से ऊपर (सुपर नेचुरेलिस्ट) तथा पौराणिक मतों के खिलाड़ी लोगों को गहरे समुद्र में धकेल रहे हैं जहाँ से वे कभी भी दुबारा नहीं उबर सकेंगे। इसमें से एक किस्म आतंकवाद है। (यानि यह एक प्रभाव है जिसका कारण राष्ट्रीय राज्य या उनकी सरकारों में निहित है।)

(ड़) आतंकवाद का तात्कालिक प्रत्युत्तर

आतंकवाद के तात्कालिक प्रत्युत्तर के मुद्दे को लें तो मानव समुदाय के लिए उचित रास्ता यह है कि आतंकवाद की चुनौती को वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सी संयुक्त राष्ट्र के जरिए निपटा जाए। संयुक्त राष्ट्र संघ में काफी गंभीर कमजोरियाँ होते हुए भी यह बड़ी एवम छोटी महाशक्तियों (आतंकवाद को मात देने में जिनका सबका साझा हित है) तथा अन्य राष्ट्रीय राज्यों की मदद से आज की परिस्थितियों के अनुकूल कुछ जगहों पर समझौतों से एवं कुछ जगहों पर अन्य तरीकों से यह समस्या का हल करने में क्षमतावान है।

ऐसा करने के लिए यह आवश्यक है कि संयुक्त राष्ट्र निम्न दो अन्तरसंबंधित बिन्दुओं पर ध्यान दे एवम अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उचित रणनीति तैयार करे।

प्रथमत: संयुक्त राष्ट्र को स्थानीय या विश्व स्तरीय आतंकवाद के मूल कारण को हटाना चाहिए जो विश्वभर में चल रहा सामाजिक अन्याय और असमानता के अलावा और कुछ नही है।

द्वितीयत: संयुक्त राष्ट्र को न्यायिक और व्यवहारिक कार्यक्रम और इसके लागू करने की योजना बनाकर समता, जनवाद, पारदर्शिता, उत्पादकता और पर्यावरणीय टिकाऊपन के आधार पर नई विश्व व्यवस्था की स्थापना करनी चाहिए।

एक मानवीय-पर्यावरणीय निर्देशित कार्यक्रम

हमारे दृष्टिकोण में ,आतंकवाद की सभी किस्मो का रणनीतिक जवाब विद्यमान राष्ट्रीय आधारित व्यवस्था को विश्वव्यापी स्तर पर एक वास्तविक और तर्कसंगत आधार पर पुनरसंरचना करना तथा समयानुकूल बनाना है। यह पुनरसंरचना और समयानुकूल प्रक्रिया को विद्यमान दो मूलभूत सामाजिक वास्तविकता, यानि गैर-टिकाऊ पर्यावरण और अन्याय एवं असमान मानवीय संबंध को सम्बोधित करते हुए–प्रकृति हितैषी और मानव हितैषी कार्यक्रम को अपनाना चाहिए जो कि नए उभर रहे ग्लोबेलाईजेशन की सामाजिक प्रक्रिया की मांग की भी पूर्ति कर सके।

संयुक्त राष्ट्र के घोषणा पत्र का दृष्टिकोण जो आज की दुनिया को राष्ट्रों के एक संघ के रूप में पेश करता है, इसके मुकाबले प्रकृति-मानव आधारित कार्यक्रम के दृष्टिकोण की मान्यता है कि दुनिया 'एक विश्व' है। 'एक विश्व' का दृष्टिकोण एक तरफ लोगों के हितों की सेवा करता है दूसरी तरफ पर्यावरण संरक्षण का ख्याल रखता है।

प्रकृति-मानव आधारित कार्यक्रम एक नए प्रकार के सामाजिक प्रबंध और विकास मॉडल की मांग करता है जो पांच आयामी प्राथमिकता यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, सामाजिक समानता (1:5 के आय में फर्क तथा सभी को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार) उत्पादकता, लोकतंत्र (सभी मामलो में लोगो का सशक्तिकरण) तथा पारदर्शिता पर कायम है। ये पाँच मूल सिद्धान्त मानव जाति के जैविक-सामाजिक प्रकृति के अनुकूल हैं, यानि मनुष्य के निजी हित और उसके सामाजिक हितों को जोड़ते हैं।

यह जनता-पर्यावरण आधारित विकास का मॉडल विकास की सामयिक धारणा का प्रतिनिधित्व करता है जबकि दो पारम्परिक राष्ट्रीय विकास मॉडल, यानि, कॉरपोरेट नेतृत्व वाला तथा सरकार निर्देशित मॉडल सामयिक नहीं है। जबकि कॉरपोरेट नेतृत्व वाला विकास मॉडल मुनाफा या उत्पादकता (जो केवल धन सम्पन्न लोगों के हितों को सुनिश्चित करता है) को अपने एकमात्र उद्देश्य के रूप में तवज्जो देता है। सरकार निर्देशित मॉडल उत्पादन के साधनों के समाजीकरण (या राष्ट्रीयकरण) को अपना एकमात्र लक्ष्य बनाता है (जो सत्ताधारी राजनीतिज्ञों और अफसरशाहों के हितों की सेवा करता है)। ये दोनों पारम्परिक राष्ट्रीय मॉडल मानव जाति के निजी हित की सेवा करते हैं और उसके जैविक-सामाजिक चरित्र की यानि निजी और सामाजिक दोनों हितों की सेवा नहीं करते हैं। पुन: ये दोनों पर्यावरण को किसी तरह की प्राथमिकता नहीं देते तथा आर्थिक या वृद्धि की प्रक्रिया में लोकतांत्रिक और पारदर्शी मानदण्डों को कोई स्थान नहीं देते। कॉरपोरेट मॉडल समता (सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया नकारता है जबकि सरकार निर्देशित सिद्धान्त राजनीतिक समता और उत्पादकता की पूर्णतया अनदेखी करता है।

मानव हितैषी और पर्यावरण हितैषी विकास के लिए सबसे पहले स्थिर और स्थायी शांति और सुरक्षा की आवश्यकता है। ऐसी शांति स्थापित करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रभुत्व, विशेषाधिकार, विशेष शक्ति प्रदान करने वाली राजनीति को रद्द किया जाए, विश्व में पूर्ण निशस्त्रीकरण करके और परमाणु हथियारों का पूर्ण नियंत्रण संयुक्त राष्ट्र को सौंपकर टकराव की पद्धति का अन्त किया जाए। विश्व में राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक असमानता का अन्त किया जाए और विकसित व विकासशील देशों के बीच अन्तर को पाटा जाए।

द्वितीय, मानव हितैषी और पर्यावरण हितैषी विकास एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था चाहता है जो सम्पूर्णतया जनवादी उसूलों, कार्यप्रणाली और ढाँचे पर आधारित हो। ऐसी सामाजिक व्यवस्था के लिए आवश्यक है कि यू एन ओ की व्यवस्था में विशेष वीटो शक्ति के नियम को समाप्त किया जाए और राष्ट्रीय राज्य के प्रबन्ध को–पार्टियों की केन्द्रीकृत शक्ति में आवश्यक कमी करने के साथ-साथ निर्णय लेने में लोगों को अधिकतम सम्भव शक्तिशाली बनाने के उसूल को सुनिश्चित करते हुए–पुनर्गठित किया जाए।

तृतीय, मानव हितैषी और पर्यावरण हितैषी विकास के लिए एक ऐसे तर्कसंगत और वास्तविक अर्थशास्त्र की मांग है जिसकी अवधारणाएँ, कानूनों और नियमों को दो उच्च प्राथमिकताओं (यानि मानवजाति और पर्यावरण) के तहत और पांच उसूलों (यानि पर्यावरण टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, जनवाद और पारदर्शिता) के मुताबिक ढालने की जरूरत है। मानव की जैव-सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एडम स्मिथ के 'निजी हित' के बुनियादी आर्थिक उसूल और मार्क्स के हर कहीं राजकीय राष्ट्रीयकरण का बुनियादी नियम, दोनों ही मानव की इस जैव-सामाजिक प्रकृति के लिए एक तरफा साबित हुए हैं।

चतुर्थ, मानव हितैषी और पर्यावरण हितैषी विकास जीवन के एक ऐसे रास्ते (या जीवन पद्धति) का आह्वान करता है जिसमें आधारभूत मानवीय और पर्यावरणीय मूल्य शामिल हों और जिससे लोगों के बीच तर्कसंगत, मानवीय और पर्यावरणीय सोच, व्यवहार और संगठन को बढ़ावा मिलता है।

पाँचवाँ, मानव हितैषी और पर्यावरणीय हितैषी विकास को वैज्ञानिक यथार्थवाद की धारणा चाहिए जिससे प्राकृतिक घटनाक्रम के अध्ययन और विश्लेषण की ठोस सूचना और आंकड़ों के आधार पर इकट्ठे किए गए वैज्ञानिक तथ्यों और सामाजिक वस्तुगतता की रोशनी में किया जाए।

अन्तिम तौर पर, पांचवें सवाल पर नजर डालें तो पुरानी सामाजिक व्यवस्था की प्रक्रिया में किसी भी पुनर्गठन और उसे सामयिक (आधुनिक) बनाने के लिए सम्पूर्ण वैधानिक कानूनी ढाँचे को आदमी की जैव-सामाजिक प्रकृति के आधार पर (यानि मानव के निजी हित के साथ उसके सामाजिक हित में समन्वय बैठाकर) ढाला जाए, इस प्रकार सामाजिक उन्नति को त्वरित करने के लिए एक वास्तविक मानवीय मनोवैज्ञानिक हालात या प्रेरक पहलू को कायम किया जाए।

सार में, ओसामा और मुल्ला उमर को पकड़ना अथवा मारना या अल-कायदा आतंकवादियों के कैम्पों को नष्ट करना समस्या को हल नहीं करेगा। क्योंकि बुराई को अधिक बुराई करके समाप्त नहीं किया जा सकता। यदि मानवता को आतंकवाद के खतरे से छुटकारा दिलाना है तो इसके (आतंकवाद के) मूल कारण को पहचानना होगा और वास्तविक सामाजिक नुस्खे द्वारा उन्मूलन करना होगा। (20.11.2005)

* * * * *

अपूर्व ढंग से बढ़ रही मानव जनसंख्या और घट रहे पर्यावरणीय संसाधन

मानव समुदाय को तत्काल गम्भीर चुनौती पेश कर रहे हैं

उपर्युक्त उल्लेखित दो तथ्य हमारे विश्व की विद्यमान दो तरफा वास्तविकता का चित्र पेश करते हैं।

(1)

मानव जनसंख्या वृद्धि के संबंध में स्थिति यह है कि यह हमारे समय की अति गंभीर समस्या बन चुकी है। मानव जनसंख्या वृद्धि के 10 लाख साल से अधिक पुराने इतिहास पर नजर डालने से यह स्थिति स्पष्ट हो जाती है।

10 लाख साल से अधिक समय तक मानव की जनसंख्या वृद्धि कछुआ चाल से बढ़ी। यह सन् 1800 में मात्र 1 अरब तक पहुँची। आगे यह 130 वर्षों में (यानि 1930 में) दुगुनी यानि दो अरब हुई, अगले 30 वर्षों (यानि 1960 में) तीन अरब तथा अगले 15 वर्षों (यानि 1975) में चार अरब तथा आगे के 11 वर्षों (यानि 1986) में पांच अरब हो गयी। आज विश्व जनसंख्या 6 अरब से अधिक (1 अरब 30 करोड़ विकसित देशों में तथा 4 अरब 70 करोड़ विकासशील देशों में) है। 9 करोड़ लोग प्रतिवर्ष बढ़ रहे हैं। अनुमान है कि विश्व जनसंख्या की वृद्धि एक मिनट में 179 की है (प्रत्येक 100 की संख्या में से 97 की जनसंख्या वृद्धि विकासशील देशों में हो रही है), इस चाल से यह सन् 2050 में दुगुनी (यानि 12.5 अरब) हो जायेगी। पृथ्वी की वहनीय क्षमता का अनुमान 8 अरब जनसंख्या को संभालने का है। यदि वर्तमान जनसंख्या वृद्धि की रफ्तार जारी रहती है तो इस शताब्दी के अन्त तक पृथ्वी पर मानव को सिर्फ सोने की जगह मिलेगी।

मानव समुदाय की वर्तमान अवस्था का असाधारण पहलू है कि इसकी अपूर्व ढंग से बढ़ रही संख्या के बावजूद इसके गुणों में गंभीर गिरवाट आ गई है। मानसिक तौर पर यह अत्यधिक स्वार्थी बन गया है, यह अपना सामाजिक पहलू छोड़ता जा रहा है। शारीरिक तौर पर मानव समुदाय का एक तिहाई भाग एच आई वी, कैंसर, बर्ड फ्लू, इत्यादि जैसी नई उभरी घातक बीमारियों से पीड़ित है, आधे से अधिक लोग हृदय, गुर्दों, लीवर और किडनी की परम्परागत बीमारियों की जकड़ में है, जबकि बाकी बचे 20 प्रतिशत लोग स्नायु संबंधी बीमारियों (तनाव ग्रस्त) के शिकार बन चुके हैं।

उपर्युक्त उल्लेखित मानव जनसंख्या वृद्धि की प्रक्रिया में ध्यान देने लायक विशिष्ट बिन्दू यह है कि 10 लाख साल से अधिक समय तक जनसंख्या वृद्धि दर बहुत ही धीमी और रूकी रही (1800 ईसवीं तक केवल 100 करोड़ तक ही पहुँची), परन्तु उसके बाद अचानक एक अद्वितीय छलांग लगाकर कॉरपोरेट पूंजीवादी शासन के नीचे मात्र 200 साल में 6 गुना बढ़ गई।

(2)

जहाँ तक पर्यावरणीय संसाधनों का सवाल है उनमें से सभी का पतन हो गया है।

(अ) सबसे पहले पर्यावरणीय घटक हवा को लेते हैं, जो सभी तरह के जैव-अस्तित्व के लिए अति आवश्यक है और ग्रह पृथ्वी के चारों तरफ लिफाफें के रूप में हमारे पर्यावरण

का निर्माण करती है। बुखारेस्ट में 1975 में पर्यावरण और विकास पर पहला सम्मेलन आयोजित होने के बाद के 30 साल के दौरान ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा तीन गुनी बढ़ चुकी है जिससे यह हवा प्रदूषित हो चुकी है।

(ब) पर्यावरणीय तत्व जल पर ध्यान दें, जो जैव जिन्दगी के लिए दूसरा अति आवश्यक तत्व है। हमारे 50 प्रतिशत से अधिक भू जल संसाधन का उपयोग कर लिया गया है, जबकि 60 प्रतिशत आर्द्र भूमि हम खो चुके हैं और एक चौथाई साफ पानी में रहने वाली प्रजातियाँ विलुप्त हो गई है।

(स) हमारे भोजन उत्पादन के लिए आवश्यक-उपजाऊ भूमि का दो तिहाई कृषि क्षेत्र गिरावट का शिकार हो चुका है। विश्व की आधी घास वाली भूमि का पतन हो गया है और विश्व के 50 प्रतिशत से अधिक जंगल नष्ट हो चुके हैं।

(द) 70 प्रतिशत पक्षियों की प्रजातियाँ, और 75 प्रतिशत समुद्री जीवों की प्रजातियाँ संख्या में कम हो चुकी है। 1000 वन्य-जीव प्रजातियाँ विलुप्त हो गई है तथा 12,000 प्रजातियों पर खतरा मंडरा रहा है।

(3)

हालिया वैज्ञानिक और तकनीकी उन्नति में कृषि, उद्योग और सूचना प्रौद्योगिकी में कुछ लाभदायक परिणामों के अलावा बहुत से मामलों में हमारे पर्यावरणीय संसाधनों पर उल्टा प्रभाव पड़ा है।

मानव संख्या में अधिक वृद्धि और उसके आवश्यक संसाधनों में कमी होने के बाद हमारे उत्पादक संसाधनों पर कैसे प्रभाव पड़ेगा इसको समझना मुश्किल नहीं है। उदाहरण के लिए, अगर एक किसान के पास केवल 10 गायों के लिए अपनी चरागाह भूमि पर घास पैदा होती है और वह किसान 20 गायों को उस पर चरने के लिए छोड़ देता है तो वे गायें न केवल सब घास खा जायेगी बल्कि अपने जिन्दा रहने की कोशिश में घास की जड़े भी खा जायेगी, जिससे सम्पूर्ण घास सदा के लिए समाप्त हो जायेगी। इसके बाद क्या होगा यह देख पाना मुश्किल नहीं होगा। गायें भूखमरी की शिकार हो जायेंगी, जिससे उनके विलुप्त होने का परिणाम भी सामने आ सकता है।

हमारी दुनिया की इस वक्त की जनसंख्या विश्व द्वारा इसके पालन-पोषण की क्षमता से अधिक है तथा यह पर्यावरणीय संसाधनों को चौंका देने वाली दर से नष्ट कर रही है। ऐसे साधारण किसान की तरह जो 20 गायों को घास चरने के लिए छोड़ देता है जबकि उस चरागाह पर 10 गायों के लिए टिकाऊ तरीके से चारे का प्रबन्ध चल सकता है। विश्व के हमारे कॉरपोरेट पूँजीवादी शासकों ने इस ग्रह की पालन क्षमता से अधिक आबादी को इस पर थोप दिया है और वे (यानि, कॉरपोरेट शासक) अपनी व्यवस्था को चलाये रखने के लिए हमारे इन संसाधनों को नष्ट कर रहे हैं जो हमारी पालना कर सकते हैं और हमारे बेटे-पोतों का पोषण कर सकते हैं।

वर्तमान कॉरपोरेट व्यवस्था के लालची शासक अपनी विशिष्ट प्रकार की अति चराई के माध्यम से पर्यावरणीय संसाधनों को नष्ट कर रहे हैं। उससे अरबों डालर कमा रहे हैं। दुर्भाग्य से यह नष्ट किया जा रहा पर्यावरण केवल मानव का ही नहीं है। यह दूसरे जैव-जगत का भी है। साफ है, हम एक साथ जीयेंगे या मरेंगे।

(4)

बढ़ती जनसंख्या के खतरे के बारे में विश्व 1960 के दशक तक सचेत हुआ, तब से तीन अन्तर्राष्ट्रीय जनसंख्या सम्मेलन बुखारेस्ट 1974, मैक्सिको 1984 तथा केयरो 1994 हुए। प्रथम सम्मेलन ने विकास यानि महिलाओं की भूमिका, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि को जनसंख्या नियन्त्रण का केन्द्र बिन्दु बनाया तथा सामाजिक कारक को द्वितीय स्थान पर धकेला। दूसरे सम्मेलन में आर्थिक कारक पर अधिक जोर दिया तथा शांति, सुरक्षा और पर्यावरण के हित में 'भूखमरी की समाप्ति' को केन्द्रीय विषय बनाया, पुन: सामाजिक कारक पर कम जोर दिया गया।

हाल ही केयरो सम्मेलन में कुछ निश्चित सामाजिक विषयों को अपनी रणनीति का आधार बनाने पर जोर दिया लेकिन सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा के सवाल को पीछे छोड़ दिया। इसने मुख्यत: निम्नलिखित बिन्दुओं पर जोर दिया–

(क) महिला जनसंख्या नीति का एक महत्त्वपूर्ण संघटक होने के नाते, महिलाओं का सशक्तिकरण, लिंग समानता या समान पारिवारिक भागीदारी (टकराव नहीं), संतान उत्पत्ति के अधिकार, शिशु और मातृत्व मृत्यु दर में कमी, शादी की आयु में वृद्धि, बच्चों के जन्म अन्तराल में वृद्धि, आदि को सम्मेलन ने अपना उद्देश्य बनाया।

(ख) 20 वर्षों में सभी को प्राथमिक शिक्षा खासकर के लड़कियों को।

(ग) परिवार नियोजन, सूचना और सेवाओं को सभी तक पहुँचाना।

(घ) गरीबी के हालात में भी संतानोत्पादन में कमी।

(ड़) धार्मिक रूढ़िवादियों द्वारा कुछ परम्परावादी पारिवारिक धारणाओं की व्यर्थता को थामे रखना जो गर्भपात पर बहस के दौरान प्रकट हुई।

(च) विश्व संसाधनों के बंटवारे पर उत्तर एवं दक्षिण के बीच बातचीत की आवश्यकता, विश्व संसाधनों का अब तक पश्चिमी विकास मॉडल एवं जीवन शैली द्वारा अति उपभोग एवं बर्बाद किया जाना।

ईसाई और मुस्लिम धार्मिक कट्टर पंथियों के अड़ियल रवैये के कारण तीन विवादास्पद विषयों–यानि गर्भपात, वयस्क यौनाचार और जनन स्वास्थ्य–पर सम्मेलन का अधिक समय लगा।

अन्तत: यह तय हुआ कि गर्भपात को परिवार नियोजन के उपायों में शामिल नहीं किया जावे और जिन देशों में यह कानूनी है वहाँ इसे सुरक्षित बनाया जावे। अन्य दो विषयों को सभी की संतुष्टि लायक संशोधित किया जावे।

धन के सवाल पर यह आम सहमति थी कि इस कार्यक्रम को लागू करने की कीमत 17 अरब डालर होगी । अमेरिका, जापान, जर्मनी, युरोपियन समुदाय आदि बहुत से विकसित देशों ने जनसंख्या संबंधी गतिविधियों पर धनराशि बढ़ाने का वादा किया।

(5)

उपर बताये गये जनसंख्या सम्मेलनों की सार्थकता और दिशा का क्या हुआ? क्या उनकी सिफारिशों और सुझावों ने जनसंख्या नियन्त्रण की प्रक्रिया में मदद की ?

तथ्य बताते हैं कि इन सम्मेलनों द्वारा प्रसारित कार्य योजनाओं और दुनियां की विभिन्न सरकारों द्वारा उन्हें लागू करने की जोर-शोर की आवाजों के बावजूद जनसंख्या समस्या की स्थिति लगातार खराब होती जा रही है। दुनिया में एक भी ऐसा बड़ा क्षेत्र नहीं

है जहाँ जनसंख्या वृद्धि की प्रक्रिया में नरमी अथवा रुकावट के संकेत हो।

उपर्युक्त 3 जनसंख्या सम्मेलनों की तकनीक और तरीकाकार काम करने में असफल क्यों हुए? सरल सा उत्तर है कि जनसंख्या समस्या की प्रकृति और इसके कारण को समझने में उनकी समझ वास्तविकता से मेल नहीं खाई। इस प्रकार, उनके हल वास्तविकता से मेल नहीं खाए और वे काम नहीं आए।

पहले सम्मेलन ने जनसंख्या नियन्त्रण के लिए विकास को केन्द्र बनाया। दूसरे सम्मेलन ने भूखमरी को समाप्त करने के नारे को केन्द्रीय विषय बनाया। तीसरे सम्मेलन ने जनसंख्या सम्मेलन का सर्वोच्च संघटक महिलाओं को मानने पर जोर दिया और मुख्यत: महिला संबंधी विषयों जैसे महिलाओं का सशक्तिकरण, लिंग समानता, संतानोत्पत्ति अधिकार, शादी की आयु में वृद्धि आदि को छुआ। किसी ने भी 10 लाख साल से भी अधिक समय में विभिन्न सामाजिक व्यवस्थाओं की मानव जनसंख्या की समस्या के ऐतिहासिक अनुभव से सीखने की कोशिश नहीं की।

(6)

मानव जनसंख्या समस्या के सम्पूर्ण ऐतिहासिक अनुभव पर नजरसानी करने पर हमारा दृष्टिकोण है कि भूतकाल में कम जनसंख्या वृद्धि दर का कारण पूर्व-पूँजीवादी (यानि, गण, कबीला और सामंती समाज जो 10 लाख वर्ष चले) समय में संयुक्त परिवार की व्यवस्था रही है, जो (यानि, संयुक्त परिवार) संकट के समय में प्रत्येक व्यक्ति की सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करती थी। 1950 के बाद जनसंख्या वृद्धि का तरीकाकार भी सामाजिक सुरक्षा की स्थिति में जनसंख्या वृद्धि दर में कमी को प्रमाणित करता है।

1950 के बाद जनसंख्या वृद्धि की समस्या पांच प्रकार के अनुभव प्रदान करती है।

पहला अनुभव विकसित देशों का है जो बताता है कि उच्च जन्म दर और उच्च मृत्युदर में गिरावट भौतिक और मानसिक विकास के सुधरे हालात में हुई जिसमें मानव आर्थिक जिन्दगी तथा बुढ़ापे में कुछ हद तक सामाजिक सुरक्षा महसूस करता है।

दूसरा अनुभव भूतपूर्व सोवियत संघ, जर्मनी, जापान और कुछ स्केन्डेनेवियन देशों का है जो संकेत देता है कि पूर्ण सामाजिक सुरक्षा और अच्छी स्वास्थ्य सेवा के हालात में जनसंख्या वृद्धि दर कम यहाँ तक कि शून्य तक गिर जाती है।

तीसरा अनुभव दक्षिण पूर्व और पूर्वी एशियन देशों का है जो बताता है कि आर्थिक विकास के साथ शिक्षा, स्वास्थ्य और परिवार नियोजन का आन्दोलन भी जनसंख्या वृद्धि दर को नीचे लाता है।

चौथा अनुभव बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल आदि का है जो दिखाता है कि परिवार नियोजन की प्रभावी योजना भी जनसंख्या वृद्धि दर को कुछ कम करती है।

पांचवा अनुभव अफ्रीका और दक्षिण एशिया में स्थित कुछ पिछड़े देशों का है जो बताता है कि निम्न आर्थिक स्थितियों में जनसंख्या नियन्त्रण का अप्रभावी कार्यक्रम जनसंख्या वृद्धि दर को उच्च स्तर पर रखता है।

उपर्युक्त अनुभव गवाह है कि खराब आर्थिक जीवन, बुढ़ापे तथा अच्छी स्वास्थ्य सेवा की कुछ निश्चित सामाजिक सुरक्षा की गारन्टी से संतुलित जनसंख्या वृद्धि दर को हासिल करना संभव है। यह अनुभव आगे दर्शाता है कि पूर्ण सामाजिक सुरक्षा के हालात में मानव स्वयं अपने बच्चे पैदा करने के बारे में ज्यादा परेशान नहीं होता।

(7)

बहरहाल, कॉरपोरेट पूंजीवाद के मूलभूत सिद्धांत शून्य जनसंख्या विकास दर और सभी को सामाजिक सुरक्षा की धारणा से मेल नहीं खाते।

शून्य जनसंख्या वृद्धि की धारणा बाजार के मांग और पूर्ति के नियम की कार्यवाही में विभेद का प्रतिनिधित्व करती है क्योंकि स्थिर जनसंख्या की मांग, पूर्ति के अनुनादी कॉरपोरेट पूंजीवादी कारक से लगातार पिछड़ेगी–इस प्रकार पूरी कॉरपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था को ठप्प कर देगी।

इसी प्रकार सभी को सामाजिक सुरक्षा का मानदण्ड इसके अन्य मूलभूत बाजार नियम से मेल नहीं खाता जो मजबूत को कमजोर पर हावी होने के समर्थ बनाता है। यदि सभी कमजोर सामाजिक सुरक्षा प्राप्त कर ले तो वे मजबूत के साथ बाजार प्रतियोगिता क्यों करेंगे। स्पष्टतया, सभी को सामाजिक सुरक्षा का मानदण्ड अमीरों की धन इकट्ठा करने की क्षमता पर उल्टा प्रभाव डालता है–इस प्रकार पूँजी की विकास दर को नीचे लाता है। बहरहाल, कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था कुछ सीमित मात्रा में सामाजिक सुरक्षा का मानदण्ड स्वीकार कर सकता है, जो विकसित देशों तक सीमित है, जबकि बहुसंख्यक विकासशील देशों को इस मानदण्ड से बाहर ही रखा है और इस प्रकार कॉरपोरेट व्यवस्था बेचने और खरीदने के लिए बाजार के प्रति समर्पित है।

आगे शून्य जनसंख्या वृद्धि और सभी को सामाजिक सुरक्षा का मानदण्ड कॉरपोरेट पूँजीवाद के अन्य मूलभूत सिद्धान्तों की तार्किकता को कमजोर करते हैं, जैसे-मानव की बुनियादी प्रकृति स्वार्थ की है, मानव का मुख्य चरित्र व्यक्तिवाद है, असमानता पूँजी के विकास का नियम है और इसी प्रकार के अन्य सिद्धान्त।

उपर्युक्त अध्ययन से यह आसानी से अनुमान लगाया जा सकता है कि अन्य मूलभूत सामाजिक घटनाक्रम की तरह कॉरपोरेट पूँजीवाद भी ऐसे किसी प्रस्ताव के साथ समझौता नहीं कर सकता जो अन्ततः इसको कमजोर बनाये। अतः कैसा भी जोखिम हो, कॉरपोरेट पूँजीवाद जनसंख्या वृद्धि की समस्या को प्रबंधित करने के लिए अपनी ही रणनीति को आगे बढ़ायेगा–एक रणनीति जो एक तरफ बढ़ी हुई जनसंख्या के लिए भोजन की आवश्यकता पूरा करने तथा दूसरी तरफ बढ़े हुए हाथों को अपने सामाजिक और उत्पादक दायरे में समायोजित करना–लेकिन इन दोनों कॉरपोरेट उद्देश्यों का अन्त असफलता में ही निकलेगा।

(8)

विश्व पर्यावरणीय संसाधनों की विद्यमान अवस्था, खासकर विश्व कृषि से संबंधित(यानि, भूमि, पानी, जलवायु, जैव-विविधता, वन आदि) तथ्य दशति हैं कि इस पर बढ़ता अतिरिक्त बोझ–चाहे आगे कितनी ही नयी तकनीकी खोजें हो, उसे किसी भी तात्कालिक उत्पादक उपयोग के लिये अनुपयुक्त बना देगा-इस प्रकार इसका परिणाम न सिर्फ नये जन्म लेते लोगों के लिए बल्कि सम्पूर्ण मानव जनसंख्या के लिए गंभीर कृषि संकट में निकलेगा। अतिरिक्त जनसंख्या सामाजिक एवं उत्पादन दायरे में कोई जगह नहीं पाते हुए विद्यमान भ्रांतियों एवं उलझनों को अधिक बढ़ायेगी। यह मानव समुदाय (जो 2050 के आसपास अपने क्रांतिक बिन्दू पर पहुँचेगा जब जनसंख्या 12.5 अरब हो जायेगी, जबकि हमारे ग्रह की क्षमता 8 अरब लोगों तक की है) के लिए न सिर्फ भोजन संकट होगा बल्कि कॉरपोरेट पूंजीवाद के लिए बहुत ही खतरनाक कुप्रबन्ध वाला अवसर होगा।

अनिवार्य तौर पर उस वक्त भूख मर रही जनता व्यवस्थागत परिवर्तन के लिए हो हल्ला कर रही होगी।

मामलों को ठीक ढंग से निपटाने और शांतिपूर्ण या निर्विघ्न संक्रमण के लिए क्या कोई शक्ति उभर पायेगी अथवा प्रत्येक मामला उथल-पुथल में दाखिल हो जायेगा जिसका परिणाम अनिवार्य तौर पर मानवता और अन्य जैव-जगत के खात्मे में निकलेगा। केवल समय ही बतायेगा कि हवा किस तरफ बहती है।

(9)

इस समस्या का तात्कालिक हल पाँच उसूलों की बुनियाद पर एक न्याय आधारित समाज की स्थापना करने में निहित है, यानि,

1. हर समय और हर स्थान पर पर्यावरण और लोगों को सर्वोच्चता देना,
2. लोगों के बीच भाई-चारे के मजबूत संबंध स्थापित करना,
3. कॉरपोरेट पूँजीवादी समर्थक राजनीतिक पार्टियों तथा व्यापारिक घरानों की जगह आम जनता का सशक्तिकरण करना,
4. प्रत्येक वंचित और गरीब व्यक्ति की सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करने और
5. बेतुके आय के अन्तर को 1:5 के अनुपात में तर्कसंगत बनाना।

(10)

इन समस्याओं का दीर्घकालीन हल वर्तमान कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था की जगह प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था कायम करने में निहित है।

(11)

हमारा वर्तमान कार्य 'अपूर्व ढंग से बढ़ रही मानव जनसंख्या और घट रहे पर्यावरणीय संसाधनों', इसके कारण और हल के बारे में लोगों की चेतना बढ़ाना है। (8.11.2005)

* * * * *

अमेरीकी महाशक्तिवाद

मानवता और पर्यावरण के विरुद्ध अपराध के अद्वितीय रिकार्ड का एक घटनाक्रम

अमेरीकी महाशक्तिवाद मात्र 60 वर्ष पुराना है। इसका जन्म इसकी प्रतिद्वन्द्वी महाशक्ति सोवियत संघ के साथ तब हुआ जब द्वितीय विश्व युद्ध (जो 1945 में समाप्त हुआ) में धुरी शक्तियों, जैसे जर्मनी, इटली, जापान इत्यादि पर मित्र शक्तियों, यानि अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, सोवियत संघ इत्यादि की विजय हुई। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद का युग एक तरफ अमेरिका के नेतृत्व में पश्चिमी धड़े (मुख्यतः पश्चिमी यूरोपीय देशों से गठित) और दूसरी तरफ सोवियत नेतृत्व वाले कम्युनिष्ट धड़े (मुख्यतः पूर्वी यूरोपीय देशों से गठित एवं साथ ही कुछ प्रारम्भिक वर्षों में चीन भी इसमें शामिल रहा) के बीच तीव्र कलह (शीत युद्ध) से जाना जाता है। अमेरिकी नेतृत्व वाले देशों की आर्थिकता स्वतंत्र बाजार तंत्र पर आधारित थी जबकि सोवियत समर्थक धड़े के देशों की आर्थिकता राज्य निर्देशित थी। वास्तव में, फिर भी दोनों पूंजी के सम्बन्ध में समान स्थिति अख्तियार करते हैं, यानि, पूंजी और इसकी वृद्धि को समाज में सर्वोच्च चीज स्वीकर करते हैं। इन दो

पूंजीवादी धड़ों के बीच अन्तर केवल यह था कि अमरीकी धड़े की सामाजिक व्यवस्था बहुपार्टी चुनावी प्रतियोगिता पर आधारित रही है, जबकि सोवियत धड़े की व्यवस्था एक पार्टी (यानि, कम्युनिष्ट) नेतृत्व वाले सामाजिक प्रबंध (और ऐसा भी केवल सैद्धान्तिक तौर पर ही माना जाता है, जबकि वास्तव में व्यवहारिक तौर पर कम्युनिष्ट पार्टी का नेता और उसका चुनिन्दा पोलिट ब्यूरो राज्य-सत्ता पर प्रभुत्व अपने नेता के अन्तिम श्वांस तक बनाए रखता है) पर कायम रही। आखिरकार दो धड़ों की प्रतियोगिता में सन् 1990 में सर्वसत्तात्मक एक दलीय सोवियत व्यवस्था धाराशायी हो गई। तभी से अमेरिका सर्वोच्च महाशक्ति बन गया और कुछ मध्यम दर्जे की महाशक्तियां, जैसे ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, चीन, रूस इत्यादि विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में संस्थापित हो गई।

अपने उद्भव से ही अमरीकी महाशक्तिवाद ने विश्व में सही और गलत को तय करने वाला परिभाषित उसूल अमेरीकी राष्ट्रीय सुरक्षा और राष्ट्रीय हितों को ही घोषित कर रखा है। इसका अर्थ है कि अमेरिकी सुरक्षा और राष्ट्रीय हित ही अमेरिकी लोकतंत्र, इसके कानून के राज, इसके खुलेपन और स्वतंत्रता, इसकी स्वतंत्र प्रेस की कार्यवाही, इसके मानवाधिकारों के व्यवहार, लिंग समानता, कैदियों से व्यवहार, इत्यादि–इन सबको तय करने वाला सारांश हैं। तब से लेकर यह (अमेरिका) कभी भी इस अति अन्धराष्ट्रवादी स्थिति से विचलित नहीं हुआ है और मानवता तथा पर्यावरण के विरुद्ध अपराध करने के लिए इस बहाने का हमेशा प्रयोग करता रहा है।

(1)

इसका पहला मानवता विरोधी अपराध वह था जब इसने जर्मन सेनाओं द्वारा पश्चिम बर्लिन में हथियार डाल देने और जापान सरकार द्वारा बिना शर्त तत्काल आत्मसमर्पण कर देने के साफ-साफ संकेत मिल रहे थे, उसी समय अमेरिका ने सम्पूर्ण दुनिया के लोगों को आतंकित करने के आपराधिक ईरादे से जापान के नागाशाकी और हिरोशिमा शहरों पर परमाणु हमला (दुनिया में मानव विरोधी पहली बड़ी कार्यवाही) बोल दिया जिसके परिणामस्वरूप हजारों लोग तत्काल मौत के ग्रास बन गये जबकि लाखों लोग जीवन भर के लिए शारीरिक और मानसिक तौर पर विकलांग, लंगड़े-लूले और अशक्त हो गये।

(2)

इसका मानवता के खिलाफ दूसरा अपराध वह था जब इसने विश्व प्रभुत्व के लिए सोवियत संघ से प्रतिद्वन्द्विता करते हुए अपने धड़े से अलग देशों पर नियंत्रण करने के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौर पर निरन्तर मुहिम चलाई। संक्षेप में, इसके द्वारा बहुत से देशों में हस्तक्षेप और दखलन्दाजी की सूची है। कुछ वर्णन करने लायक घटनाएं हैं, उदाहरण के लिए, 1950 के दशक में ईरान और मध्य अमेरीकी गणराज्यों में दखलन्दाजी, 1960 के दशक में ब्राजील, क्यूबा और वियतनाम में दखलन्दाजी, 1970 के दशक में चिली, दक्षिण अफ्रिका, निकारागुआ, अल-सल्वाडोर और अफगानिस्तान में हस्तक्षेप, 1980 के दशक में पनामा, हैती, अंगोला में दखलन्दाजी तथा लिबिया को सीधा निशाना बनाया एवं ईरान/इराक युद्ध को भड़काया, 1990 के दशक में सोमालिया, यूगोस्लाविया, कोसोवो में हस्तक्षेप किया एवं सूडान तथा अफगानिस्तान पर क्रूज मिसाइलों से हमला किया।

अमेरिका यहीं नहीं रुका, बल्कि इससे भी आगे कुछ जन-समर्थक सरकारों, जैसे 1960 के दशक में जेयरे में पैट्रिश लुमुम्बा की सरकार और 1970 के दशक में ईरान की डॉ.

मुस्सदक की सरकार को गिराने में मशगूल रहा तथा विश्व में कुछ अति भ्रष्ट, अन्यायिक, बर्बर और फौजी शासकों–जैसे, जेयरे का मोबुतु, इस्लामी रूढ़िवादियों, जैसे, ईरान में रजा शाह पहलवी, इजराइल में यहूदी अन्धराष्ट्रवदियों, दक्षिण अफ्रीका में रंग भेदवादी कट्टरवादियों, पाकिस्तान में फौजी तानाशाहों, इत्यादि–को थोपने में लगा रहा।

अमेरिका अपने लोकतंत्र को विश्व में सर्वोच्च बताता है, जबकि इसने विश्व में अपनी प्राथमिकताओं के अनुसार दुनिया को ढालने के लिए कहीं भी लोकतंत्र को फैलाने एवं कानून का राज कायम करने की कोशिश नहीं की, बल्कि, उल्टे पिछले 25 वर्षों के दौरान गैर-गोरी जनसंख्या वाले गरीब और कमजोर लगभग 10 देशों–जैसे, लिबिया, ग्रेनाडा, पनामा, सोमालिया, हैती, अफगानिस्तान, सूडान, ईराक, बोस्निया और युगोस्लाविया पर बमबारी की है।

आश्चर्यजनक रूप से, यह अमेरिका के अलावा और कोई नहीं था जिसने ओसामा और मुल्ला उमर जैसी बुराइयों को जन्म दिया, पाला-पोषा और विकसित किया। अमेरिका की सी आई ए ने सोवियत संघ के विरोध को संगठित करने के लिए ओसामा को अफगानिस्तान में नियुक्त किया और उस वक्त इसे महान धार्मिक नेता के रूप में उभारा।

अमेरिका ने सन् 2001 में अफगानिस्तान पर और सन् 2003 में ईराक पर हमला किया, जबकि इन दोनों देशों पर आक्रमण करने के किसी भी कारण का यह प्रमाण नहीं दे सका।

(3)

मानवता के खिलाफ अमेरिका का तीसरा अपराध है कि यह दुनिया की प्रतिवर्ष 39 ट्रिलियन डालर (यानि 390 खरब डालर) के कुल विश्व पूंजी उत्पादन में से लगभग एक तिहाई, यानि, 13 ट्रिलियन डालर (130 खरब डालर) पूंजी अकेला हासिल कर लेता है। कुल विश्व पूंजी में से अमेरिका के इस उच्च हिस्से पर अमेरिकी जनसंख्या के बहुत ही छोटे से भाग यानि, मुश्किल से 0.25 प्रतिशत का स्वामित्व और प्रबंधन है, जबकि विश्व की 3 अरब से अधिक जनसंख्या अत्यधिक गरीबी में जीवन बसर कर रही है।

(4)

मानवता के खिलाफ अमेरिका का चौथा अपराध है कि यह परमाणु, रासायनिक, जैविक और अन्य हथियारों का सबसे बड़ा निर्माता और जखीरेबाज है तथा विश्व में शस्त्र व्यापार का मुख्य व्यापारी है। विशेषज्ञों के आकलन के मुताबिक इसके जहरीले हथियारों के वर्तमान भण्डारों की संख्या इतनी अधिक है कि ये हमारे ग्रह पृथ्वी के टुकड़े-टुकड़े कर सकते हैं।

(5)

मानवता के खिलाफ अमेरिका का पांचवां अपराध है कि इसने पूंजी और सैनिक ताकत को समाज में निर्णायक पहलू बना दिया है और तदनुसार विभिन्न सामाजिक गतिविधियों और प्रक्रियाओं में अपने सभी संदिग्ध उद्देश्यों को हासिल करने के लिए यह धन और बाहुबल का उपयोग करता है।

(6)

मानवता के खिलाफ अमेरिका का छठा अपराध है कि यह सामाजिक विकास, राहत और पुनर्वास के कार्य को लोगों को सौंपने की बजाए, सैनिक बलों और पुलिस को लोगों की मदद के काम में शामिल करता है।

(7)

मानवता के खिलाफ अमेरिका का सातवां अपराध है कि सृजनशीलता और कार्य क्षमता के आवरण के नीचे यह सामाजिक सुरक्षा के उन मानवीय उसूलों को रद्द करता है, जिनके अनुसार गरीबी की रेखा के नीचे वाले लोगों की सामाजिक सुरक्षा की जाए, बेरोजगारों को उचित भत्ता दिया जाए और उच्चतम आय अन्तर को 1:5 की सीमा में लाने के नियम को आधार बनाकर आय को तर्कसंगत बनाया जाए।

(8)

मानवता के खिलाफ अमेरिका का आठवां अपराध है कि यह लोगों के हितों से ऊपर सैनिक और सिविल नौकरशाही के अधिकारों को प्राथमिकता देता है, जबकि तथ्य यह है कि सभी कॉरपोरेट राष्ट्रीय संविधानों में हर तरह की सामाजिक सत्ता का मूलस्रोत लोगों को माना गया है।

(9)

मानवता के खिलाफ अमेरिका का नवां अपराध यह है कि इसकी गुप्त राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक चालबाजियों से आज विश्व में एक अपूर्व अपराध, हिंसा और अव्यवस्था की लहर पैदा हो गई है, जिससे दुनिया के लोगों के बीच में असुरक्षा और अस्थिरता का माहौल पैदा हो गया है।

(10)

मानवता के खिलाफ अमेरिका का दसवां अपराध विश्व भर में निरन्तर मानवाधिकारों के हनन के रिकार्ड बनाने में है। यह इसके द्वारा विभिन्न देशों में किये जा रहे व्यवहार से देखा जा सकता है, जहाँ इसने आम आदमी के साथ अमानवीय व्यवहार किया है। पहले दिये गये उदाहरणों से यह भरपूर स्पष्ट होता है कि ज्यादातर देशों में जहाँ इसने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौर पर अपना नियंत्रण हासिल करने के लिए उनके मामलों में दखलन्दाजी की है वहाँ लोगों के साथ अमानवीय व्यवहार हुआ है। 'आतंक पर युद्ध' के इसके इस्तगासे और 'संदेहास्पद आतंकियों और कैदियों' के प्रति इसके व्यवहार के नवीनतम तथ्यों में इसके अमानवीय व्यवहार को देखा जा सकता है। अमेरिकी मुख्य धरती पर 'खुफिया विभाग की जासूसी' में असंख्य मानवाधिकारों का हनन किया जाता है, जबकि आम सामाजिक जीवन में अमेरिकी न्यायिक पैमाने की जरूरत के मुताबिक सामान्य व्यवस्था चलती हुई नजर आती है।

(11)

मानवता के खिलाफ अमेरिका का ग्यारहवां अपराध है कि यह संयुक्त राष्ट्र पर अपना एकल प्रभुत्व स्थापित करने के लिए लगातार प्रयत्नशील रहा है। परन्तु, यह अमेरिका-सोवियत प्रतिद्वन्द्विता के दिनों में सम्भव नहीं हो सका। फिर भी, सोवियत संघ के पतन के बाद भी संयुक्त राष्ट्र पर अमेरिका के प्रभुत्व की कोशिशों का संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के अन्य चार स्थायी सदस्यों ने प्रतिरोध किया। अफगानिस्तान और इराक पर हालिया अमेरिकी आक्रमण को भी संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद से किसी तरह की सकारात्मक प्रतिक्रिया नहीं प्राप्त हो सकी। फलत:, अमेरिका ने संयुक्त राष्ट्र को अपनी सभी अनुबंधित वित्तीय अनुदान राशि (पिछले 5 साल के लिए लगभग 4 अरब डालर की मात्रा) को देना रोक दिया है। अब संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में अमेरिकी प्रतिनिधि जॉन बोल्टन ने

धमकी दी है कि जब तक संयुक्त राष्ट्र के कानूनी ढांचे में अमेरिका द्वारा प्रस्तावित 700 संशोधनों के आधार पर पुनर्गठन नहीं किया जाता तब तक अमेरिका किसी भी तरह के बकाया वादे को पूरा नहीं करेगा।

(12)

मानवता के खिलाफ अमेरिका का बारहवां अपराध है कि संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में इसके नियुक्त सदस्य ने आठ मिलेनियम विकास लक्ष्यों, जिन्हें सन् 2000 के संयुक्त राष्ट्र मिलेनियम सम्मेलन (जिसमें संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्य शामिल थे) में सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया था–को रद्द करने के लिए संयुक्त राष्ट्र को कहा है। ये लक्ष्य हैं :

1. अति गरीबी और भुखमरी को समाप्त करना।
2. सार्वत्रिक प्राथमिक शिक्षा हासिल करना।
3. लिंग समानता को बढावा देना और महिलाओं का सशक्तिकरण करना।
4. बच्चों की मृत्युदर को कम करना।
5. मातृ-स्वास्थ्य में सुधार करना।
6. एच आई वी/एड्स, मलेरिया और अन्य बीमारियों का सामना करना।
7. टिकाऊपन सुनिश्चित करना।
8. विकास के लिए वैश्विक भागीदारी को विकसित करना।

अमेरिका द्वारा इन लक्ष्यों का विरोध करने का तर्क है कि ये लक्ष्य व्यवहारिक और हासिल नहीं किये जाने वाले हैं। परन्तु, इन्हें व्यवहारिक और हासिल करने लायक बनाने की बजाए यह इनका निषिद्ध करना और उन्हें रद्द करवाना चाहता है।

(13)

मानवता के खिलाफ अमेरिका का सबसे बड़ा अपराध इसका पर्यावरणीय आतंकवाद है, जिसने हमारे ग्रह पृथ्वी के पर्यावरण का सबसे अधिक नुकसान किया है। अमेरिका ग्रीन हाउस गैसों का सबसे बड़ा उत्पादक है, जो विश्व में इनका 30 प्रतिशत से अधिक प्रदूषण पैदा करता है और जो सम्पूर्ण मानवीय दुनिया द्वारा स्वीकृत क्योटो-प्रोटोकोल 1997 (क्योटो सन्धि-1997) को अनुमोदन करने से मना कर रहा है।

इसके अतिरिक्त यह विश्व के पर्यावरणीय संसाधनों के लिए अत्यधिक लालची है। इसका यह तर्क कि ग्रीन हाउस गैसों के उत्पादन स्तर में किसी भी तरह की कमी या इसके पर्यावरणीय संसाधनों के उपयोग में किसी तरह की कमी से अमेरिकी आर्थिकता को हानि पहुँचेगी। यह तर्क अत्यधिक विवेकहीन है जो केवल एक मानव-विरोधी नैसर्गिक सोच से ग्रसित है।

21वीं शताब्दी के शुरू से ही यह हर तरीके से विश्व के विभिन्न देशों में विद्यमान सभी महत्वपूर्ण पर्यावरणीय संसाधनों को नियंत्रण में करने की मुहिम छेड़े हुए है, इसके लिए यह पहले व्यापारिक चालों को उपयोग करता है और आखिरकार सैनिक ताकत का उपयोग करता है। (24-11-05)

* * * * *

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन-आन्दोलन (एन एच सी पी एम) का 'मानव जाति का भविष्य' विषय पर

जयपुर सम्मेलन 25-27 नवम्बर, 2005 की संक्षिप्त कार्यवाही रिपोर्ट

यह सम्मेलन प्रकृति-मानव केन्द्रित जन-आन्दोलन की नेपाल-भारत राष्ट्रीय इकाइयों द्वारा आयोजित तथा प्राथमिक तौर पर एन एच सी पी एम की राजस्थान इकाई द्वारा संगठित किया गया। सम्मेलन का जयपुर स्तरीय प्रबन्ध तीन सदस्यीय समिति– धर्मेन्द्रसिंह, तेजपालसिंह और इन्द्रसिंह–ने किया।

सम्मेलन का प्रारम्भ 'मानव जाति का भविष्य' शीर्षक वाले मुख्य दस्तावेज को पढ़कर किया गया। राजस्थान की आदरणीय राज्यपाल श्रीमती प्रतिभा पाटिल प्रथम वक्ता थीं जिन्होंने सम्मेलन का उद्घाटन किया। सम्मेलन में नेपाल, पश्चिम बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, मध्य प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, राजस्थान, पंजाब और जम्मू-कश्मीर के लगभग 300 प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

तीन दिवसीय सम्मेलन में कुल 8 सत्रों में 9 दस्तावेजों का अध्ययन किया गया, उन पर बहस हुई तथा उन्हें पारित किया गया। इन नौ दस्तावेजों के विषय मानव जाति का भविष्य, घटते पर्यावरणीय संसाधन एवं बढ़ती जनसंख्या, सार्क (दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन) को दरपेश सवाल, ट्रेड यूनियनवाद पर एन एच सी पी एम की आम अवधारणा, असमानता की स्थिति, मानवाधिकारों पर आम अवधारणा, आतंकवाद, मानव लिंग-समानता और अमेरिकी महाशक्तिवाद थे।

25 नवम्बर, 2005 को उद्घाटन सत्र में व्यक्त किये गये विचार (संक्षिप्त में):

श्रीमती प्रतिभा पाटिल ने कहा कि आज मानव जाति को पर्यावरण असंतुलन, अन्यायपूर्ण और असमानता वाली सामाजिक व्यवस्था और जनसंख्या वृद्धि की समस्या से सामना करना पड़ रहा है। इन समस्याओं से मुकाबले के लिए मनुष्य जाति को संकीर्ण सोच से बाहर निकलकर समस्त राष्ट्रों, धर्मों, समुदायों को मानवता के आधार पर संगठित होना होगा। डॉ. ओ.पी. महेन्द्रा ने कहा कि विश्व विकास एवं आधुनिकता के नाम पर मानव समाज पर्यावरण और मानव विरोधी अंधी आँधी में फंस गया है। अमीर अधिक अमीर तथा गरीब अधिक गरीब हो रहे हैं। भंवर जितेन्द्रसिंह ने कहा कि मानवता का भविष्य डरावना नजर आ रहा है। हमारी हवा प्रदूषित हो रही है, जल प्रदूषित और घट रहा है, जल बोतलों में बिक रहा है ऐसा न हो कि आने वाले समय में मनुष्य जल के लिए कत्ल करने लगे। जंगल खत्म हो रहे हैं, हमारा सरिस्का खत्म हो रहा है, शेर वहाँ से गायब हो गया। नेपाल के डा. डी.बी. सिंह ने कहा कि जयपुर सम्मेलन के माध्यम से हम अपने संसार की जटिल समस्या–पारिस्थितिक-जैविक संकट–को देखने जा रहे हैं। मानव जाति एवं समस्त जैव-जगत के लिए यह प्रलयकारी समस्या क्यों पैदा हो गई। इसमें हमारी (मानव जाति की) क्या गलत समझ और व्यवहार रहा और हम भविष्य में किस कार्यक्रम (एजेण्डे) पर चलें जिससे हमारे ग्रह पर जीवन चक्र कायम रह सके और मानव जाति अपने संभावित विनाश से बाहर निकल सके, इसकी शुरूआत मेरे पड़ौसी देश भारत से हो रही है और हम इसमें शामिल हैं, इस बात का हमें फख्र है। गांधीवादी नेता सवाई सिंह ने कहा कि मनुष्य प्रकृति के साथ ज्यादा छेड़छाड़ कर रहा है, इससे पर्यावरण

विनाश हो रहा है, अन्धाधुंध औद्योगिक विकास मानव विरोधी है। प्रकृति की सुरक्षा लोगों के हाथ में अधिकार देने से संभव है इसके लिए जन-आन्दोलन की जरूरत है। धर्मेन्द्रसिंह राठौड़ ने कहा कि सम्मेलन में पहुँचे नेपाल एवं देश के कोने-कोने से आये प्रतिनिधियों का मैं एन एच सी पी एम की राजस्थान एवं जयपुर इकाई की तरफ से स्वागत करता हूँ और आशा करता हूँ कि आपके विचार-विमर्श में सहयोगी समस्त भौतिक पहलुओं की पूर्ति करने में हम सक्षम होंगे और कमियों के लिए क्षमा प्रार्थी होंगे।

दिनांक 25 नवम्बर के द्वितीय सत्र में 'खुले और स्वतंत्र' कॉरपोरेट पूंजीवादी समाज में असमानता की स्थिति नामक दस्तावेज का अध्ययन तथा 26 नवम्बर को सार्क के सम्मुख सवाल, ट्रेड यूनियनवाद पर आम अवधारणा, अपूर्व ढंग से बढ़ रही जनसंख्या, मानवाधिकारों पर आम अवधारणा नामक शीर्षकों वाले दस्तावेज पढ़े गये और उन पर विचार-विमर्श हुआ। इसमें हस्त बहादुर के.सी., रूपलाल, आर.आर. परिहार, प्रकाश राव, ज्योतिर्मय गोस्वामी, मोहम्मद सलीम, रूपायन भट्टाचार्य, मोना सूर, देशराज, रामसिंह, सज्जनकुमार, इन्द्रसिंह, प्रहलाद सोगरा, रिद्धकरण, खेमसिंह, महावीरसिंह, डा. रणजीत, रामलाल पटेल, मन्नाराम, राजेन्द्र कुम्भज, रणवीरसिंह गुड्डा, जोया मित्रा, सुब्रतो धर, बीरबल, घनश्याम, उमेशचन्द्र गुप्ता, रमेशचन्द्र नेताजी, वेद व्यास, उमर खान, प्रीतमपाल, करतारचन्द, सुखदेवसिंह, मनीराम ने विचार व्यक्त किये। आर.पी. सराफ ने इन दस्तावेजों से उभरे कई सवालों पर अपनी व्याख्या एवं टिप्पणी प्रस्तुत की।

दिनांक 27 नवम्बर को तीन दस्तावेजों पर विचार-विमर्श हुआ। 'मानव लिंग समानता–एक उचित एवं न्यायिक समाज की पहली आवश्यकता' शीर्षक वाले दस्तावेज की व्याख्या के दौरान आर.पी. सराफ ने कहा कि अभी भी महिलाओं की 50% आबादी के साथ दास जैसा व्यवहार किया जाता है। समाज में ऐसी धारणा एवं आचरण विद्यमान है कि वंश पुरुष से ही चलता है। उदाहरण के लिए यह धारणा कि फसल उत्पादन के लिए बीज ही प्रमुख है एक तरफा धारणा है जबकि भूमि, वायु, पानी रूपी पर्यावरण बराबर जरूरी है। इसलिए वंश की पहचान अकेले पुरुष की बजाए माता और पिता दोनों से होनी चाहिए। सम्पत्ति, बैंक खाता आदि सभी में संयुक्त मालिकाना होना चाहिए। राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक मामलों में महिलाओं का 50% हिस्सा होना चाहिए। मानव इतिहास में लाखों साल मातृसत्ता अस्तित्व में रही तथा पितृसत्ता कुछ हजार साल से ही अस्तित्व में आई है। पितृसत्ता में पुरुष का प्रभुत्व रहा। अजीतसिंह ने सवाल किया कि मार्क्स ने भी स्त्री-पुरुष में समानता की बात कही है। हमारी और मार्क्स की बात में क्या फर्क है ? आर.पी. सराफ ने कहा कि मार्क्स की समानता की बात गलत नहीं थी परन्तु समानता लाने के लिए जिस तकनीकी को अपनाया गया वह बराबरी कायम नहीं कर सकी। सभी धर्मों में भी बराबरी की बातें कही गई हैं लेकिन आज की दुनिया में बराबरी हासिल करने के लिए प्रासंगिक एकीकृत कार्यक्रम की जरूरत है।

आतंकवाद के विषय पर आर.पी. सराफ ने व्याख्या की कि यह दुनिया के लोगों की मूल समस्या नहीं है। यह लोगों के लिए कोई मूल मुद्दा नहीं है। अमेरीकी महाशक्ति और राष्ट्रीय राज्य अपने आतंकी स्वभाव को तर्कसंगत करार देने एवं लोगों की मूल समस्याओं से ध्यान हटाने के लिए आतंकवाद का उपयोग कर रहे हैं। दुनिया में उत्पन्न 'ग्रुप आतंकवाद' महाशक्तिवाद या हर देश के राजकीय आतंकवाद की ही उपज है। यह विश्व स्तर पर महाशक्तिवाद के कारण से उत्पन्न एक प्रभाव है।

सम्मेलन में सुखदेवसिंह ने पंजाब में कृषि की स्थिति पर 25 दिसम्बर को मानशा में, फरवरी में बरनाला में, ट्रेड यूनियन मुद्दे पर लुधियाना में तथा पंजाब की सांस्कृतिक एकता पर 23 मार्च, 2006 को जालंधर में सम्मेलन आयोजित करने की सूचना दी। महावीर जोशी ने 11-12 फरवरी, 2006 को रावतसर, हनुमानगढ़ (राजस्थान) में 'कृषि संकट' पर सम्मेलन आयोजित करने की सूचना दी। मनीराम ने एन एच सी पी एम की मुहिम जनता में विचार-विमर्श एवं जन जागृति हेतु योजना स्थानीय एवं जिला स्तर पर बनाने का कहा। अन्य जन आन्दोलनों से दोस्ताना सम्बन्ध बनाने और उनके साथ मुद्दा आधारित संयुक्त मोर्चे बनाए जाने के विचार प्रस्तुत किये। आर.पी. सराफ ने कहा कि जन आन्दोलन तथा पुनरसंरचना शांतिपूर्ण रूपान्तरण से होगी, इसके लिए हर व्यक्ति, ग्रुप, पार्टी व संस्था से अन्तरक्रिया करनी होगी। इस आन्दोलन का तरीकाकार जनवादी होगा, इसमें किसी भी तरह का एकाधिकार नहीं होगा। संभव है इससे आने वाले 20 वर्षों में मानव जाति का एजेण्डा परिवर्तित हो जाए।

अन्त में अध्यक्ष मण्डल के सदस्य सरपंच सुखदेवसिंह ने सम्मेलन के समापन की घोषणा की तथा स्थानीय आयोजन के सदस्यों तथा सहयोगी सभी महानुभावों का आभार व्यक्त किया।

* * * * *

भारतीय कृषि गहरे संकट में इसका कारण नई दिल्ली की कॉरपोरेट पूंजीवादी कृषि नीति में निहित लोक-पर्यावरण नेतृत्व सहकारी आधार पर कृषि को संगठित करके किसानों का सशक्तिकरण करना ही आज एकमात्र रास्ता

1. भारत के कृषि संकट के मुख्य पहलू

I

कृषि, जिसमें फसल और पशुपालन, जंगलात, कृषि-जंगलात, कृषि-प्रोसेसिंग और मछली पालन शामिल है, यह भारत में सबसे बड़ा और विस्तृत धंधा है जो 24 करोड़ से अधिक लोगों को जीविका प्रदान करता है। इसका भारत के सकल घरेलू उत्पादन में 22 प्रतिशत हिस्सा है तथा भारत की समस्त जनसंख्या को खाद्य उत्पाद उपलब्ध करती है। यह उद्योगों के उपयोग के लिए कच्चा माल, जैसे कपास, जूट, गन्ना आदि की पूर्ति करती है। कृषि उद्योग जैसे खाद्य और फल-प्रोसेसिंग, विशेष तौर पर निर्यात के लिए महत्त्वता हासिल कर रहे हैं। भारत के विदेश व्यापार में चावल, कपास, कपड़ा, चाय, जूट, काजू, तम्बाकू, कॉफी आदि के रूप में कृषि का अच्छा खासा हिस्सा है।

भारत की परम्परागत कृषि के अन्तर्गत कृषि क्षेत्र के विस्तार के जरिए इसका उत्पादन बढ़ाने का हमेशा प्रयास रहा है परन्तु पारिस्थितिकी संकट के बाद के काल में कृषि की दिशा को पाँच स्तम्भीय उद्देश्यों–यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, लोकतंत्र एवं पारदर्शिता की ओर परिवर्तित करने की आवश्यकता है।

(क)

दुनिया के भौगोलिक क्षेत्र का भारत 2.4 प्रतिशत भाग है परन्तु इसे करीब दुनिया की 16 प्रतिशत आबादी को और 20 प्रतिशत से अधिक पशुधन को पालना पड़ता है। इससे यह प्रकट होता है कि भारत में भूमि तथा आदमी/पशु के बीच का अनुपात काफी असन्तुलित है। परन्तु यह वास्तविकता का केवल एक पक्ष है। वास्तविकता का दूसरा पक्ष यह है कि बहुत से बड़े और विकसित देशों के मुकाबले भारत में खेती योग्य भूमि की प्रतिशत बहुत अधिक है। उदाहरणार्थ कनाडा, आस्ट्रेलिया व चीन आकार में भारत के तिगुने हैं और रूस करीब 6 गुना बड़ा है परन्तु कृषि योग्य भूमि के मामले में ये भारत से कहीं पीछे हैं। चीन में कृषि योग्य भूमि करीब 100 मिलियन हैक्टेयर, आस्ट्रेलिया में 46.3 मिलियन हैक्टेयर, कनाडा में 45.8 मिलियन हैक्टेयर, रूस में 130 मिलियन हैक्टेयर, अमेरिका में 180 मिलियन हैक्टेयर है जबकि इनके मुकाबले भारत में 166 मिलियन हैक्टेयर भूमि कृषि योग्य है। भारत की भूमि का हिस्सा केवल 329 मिलियन हैक्टेयर है इसलिए प्रतिशत के हिसाब से कृषि योग्य भूमि का सबसे अधिक (यानि 50.5 प्रतिशत) भाग है। भारत भौगोलिक स्थिति की दृष्टि से भी आगे है, जहाँ पूरे साल सूर्य की रोशनी रहती है, यहाँ दो या दो से अधिक फसली पद्धति अपनाई जा सकती है।

(ख)

58 वर्ष की लम्बी कृषि प्रक्रिया की ओर मुड़कर देखें तो हम पाते हैं कि 1950 और 1960 के दशक में विशेष तौर पर 1965-66 तथा 1966-67 में खाद्य आपूर्ति की कमी के दो गंभीर काल देखे थे, आज हमने उस स्थिति से निजात पा ली है। बाद में हरित क्रांति से देश ने 1949 में अनाज का उत्पादन जो 54.92 मिलियन टन था उसे सन् 1997-98 में बढ़ाकर 194 मिलियन टन कर लिया, इससे 1951 में प्रति व्यक्ति अनाज की उपलब्धता जो 395 ग्राम थी वह 1980 में करीब 500 ग्राम हो गई। देश को खाद्य आयात निर्भरता को भी इसने समाप्त कर दिया। अनाज के अलावा अन्य खाद्य पदार्थों–जैसे, खाद्य तेल, दूध, माँस, फल, सब्जी आदि के उत्पादन में भी बढ़ोतरी हुई है। 1947 में 20 मिलियन हैक्टेयर सिंचित क्षेत्र जो भारत में था वह बढ़कर आज 55 मिलियन हैक्टेयर हो गया है।

(ग)

भारतीय कृषि की कुल वृद्धि दर को देखें तो यह पता लगता है कि 1970-95 के बीच भारतीय कृषि प्रक्रिया 2.1 प्रतिशत से बढ़ती रही है जबकि इसी काल में चीन की 6 प्रतिशत, मलेशिया की 7 प्रतिशत, थाईलैण्ड की 4.6 प्रतिशत और इन्डोनशिया की 3.7 प्रतिशत वृद्धि दर रही है। प्रति हैक्टेयर भारत का चावल उत्पादन 2576 किलोग्राम एशिया में सबसे कम है जबकि दुनिया का प्रति हैक्टेयर चावल का उत्पादन 3581 किलोग्राम है और चीन का 5859 किलोग्राम है। भारत में मक्का का प्रति हैक्टेयर उत्पादन 1474 किलोग्राम है जबकि दुनिया में इसका औसत प्रति हैक्टेयर उत्पादन 3257 किलोग्राम है। सूरजमुखी के उत्पादन में चीन की उत्पादकता तीन गुना अधिक है। भारत में गेहूं का प्रति हैक्टेयर उत्पादन 2420 किलोग्राम है जबकि चीन का 3318 किलोग्राम है। भारत में कपास का प्रति हैक्टेयर उत्पादन 246 किलोग्राम है जबकि इजरायल का 783 किलोग्राम व आस्ट्रेलिया का 1510 किलोग्राम है।

1947-48 में दुनिया के कुल कृषि उत्पादन में भारत की हिस्सेदारी 11 प्रतिशत थी परन्तु आज यह घटकर 9 प्रतिशत रह गई है।

(घ)

1990 से कृषि में संकट उत्पन्न हो रहा है। वास्तव में कृषि वृद्धि दर जनसंख्या वृद्धि दर से पिछड़ रही है। आज कृषि वृद्धि दर 1.66 प्रतिशत प्रति वर्ष है जबकि जनसंख्या वृद्धि 1.9 प्रतिशत प्रति वर्ष है। इस प्रकार अनाज का सुरक्षित भंडार साल दर साल घट रहा है। 1995 में अनाज की प्रति व्यक्ति सालाना उपलब्धता पराकाष्ठा पर थी जो 180 किलोग्राम थी वह 2001 में 176.5 किलोग्राम रह गई है। यद्यपि सरकारी आंकड़े गरीबी में कमी दर्शाते हैं जबकि किसानों पर राष्ट्रीय आयोग की दूसरी रिपोर्ट (अगस्त 2005, पेज 37) के अनुसार यह मानने के लिए भरपूर कारण है कि भूख की परिस्थिति में इजाफा हुआ है।

II

कृषि उत्पादन की प्रबन्ध प्रक्रिया पर नजर डालें तो पाते हैं कि इससे देश को भारी नुकसान उठाना पड़ा है। परिवहन एवं भंडारण की खराब सुविधाओं के परिणामस्वरूप प्रति वर्ष 20 प्रतिशत की हानि–जो 55 हजार करोड़ रुपये बनती है–उठानी पड़ती है। आज भारत फल व सब्जी में दुनिया का सबसे बड़ा उत्पादक है तथापि प्रोसेस्ड खाद्य के 30 हजार करोड़ रुपये के विश्व व्यापार में भारत का हिस्सा 1 प्रतिशत से अधिक नहीं है। इसका 40 प्रतिशत उत्पाद–जिसकी 23 हजार करोड़ रुपये कीमत है–प्रतिवर्ष खराब हो जाता है। देश में फल और सब्जियों के कुल उत्पादन का 2 प्रतिशत ही प्रोसेस्ड होता है जबकि अन्य विकासशील देशों में 40 प्रतिशत और विकसित देशों में 70 प्रतिशत प्रोसेस्ड होता है। उत्तर-पूर्व भारत में अनानास का भारी उत्पादन होता है, जिसके प्रोसेस होने के शानदार अवसर हैं परन्तु यह इसलिए कठिन हो जाता है, क्योंकि प्रभावी परिवहन व्यवस्था उपलब्ध नहीं है।

आगे, भारत में खाद्य प्रोसेसिंग उद्योग को कच्चे माल के उत्पादन से लेकर विपणन के स्तर तक आधुनिक वैज्ञानिक दिशा से एकीकृत कर संगठित नहीं किया गया है। उत्पादन के तरीके प्राय: परम्परागत हैं और इससे उत्पादन की क्षमता प्रभावित होती है।

बाजार तक पहुँच भी एक महत्वपूर्ण समस्या है। प्रतियोगिता में आगे निकलने की मांग है कि एक कार्यकुशल प्रोसेसिंग कड़ी मौजूद हो, उच्च गुणवत्ता की मांग पर आधारित उत्पादन किया जाए तथा बाजार के बिचौलियों की संख्या में कमी लाई जाए।

कई अध्ययन दर्शाते हैं कि बहुत से देशों में बेहतर कृषि व्यवहार के जरिये प्रोसेसिंग से माल खराब होने से बचाया जा सकता है और उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। इन रिपोर्टों के अनुसार दुनिया के शेष देशों का अनुभव दर्शाता है कि खाद्य प्रोसेसिंग उद्योग अधिक मुनाफा कमाने वाले उद्योगों में से एक उद्योग है।

III

प्राकृतिक संसाधनों, यानि जमीन, जल, जंगल तथा जैव विविधता आदि (जो फसल एवं पशु/आदमी की उत्पादकता की पूर्व आवश्यकता है) के टिकाऊपन की ओर ध्यान दें तो पाते हैं कि ये सभी और अधिक खराब हो गये हैं।

जहाँ तक भूमि संसाधनों का सम्बन्ध है भारत में यह 329 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र में फैला हुआ है जिसमें से 305 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र के बारे में रिपोर्ट हासिल है।

मोटे तौर पर यह तीन उपयोगों में वर्गीकृत है–

(क) कृषि क्षेत्र–करीब 180 मिलियन हैक्टेयर है जिसमें कुल खेती योग्य भूमि, वर्तमान पड़ती भूमि व अन्य खुली भूमि तथा जोताई से खराब हुई भूमि शामिल हैं। इस क्षेत्र में पिछले तीन दशकों से निरन्तर कुल बुआई योग्य 143 मिलियन हैक्टेयर का है।

(ख) पारिस्थितिकी क्षेत्र–करीब 102 मिलियन हैक्टेयर है जिसमें जंगल, विविध पेड़ की फसलें व बाग की जमीन, चारागाह और बंजर भूमि शामिल हैं।

(ग) गैर कृषि क्षेत्र–जिसमें गैर कृषि उपयोग की भूमि सहित कुल 22 मिलियन हैक्टेयर है।

वर्तमान आकलन दर्शाता है कि जोताई योग्य भूमि का 60 प्रतिशत मिट्टी क्षरण, सेम तथा लवण से ग्रसित है। बाकी 16 मिलियन हैक्टेयर भूमि नदी-नालों व खड्डों व दर्रों वाली है। ऐसी भारी मात्रा में भूमि की गिरावट समस्या की गंभीरता को प्रकट करती है।

पानी और हवा से करीब 1200 करोड़ टन ऊपरी सतह की मिट्टी का क्षरण प्रति वर्ष होता है। जबकि इस मिट्टी की करीब 50 मिलियन टन अनाज प्रति वर्ष पैदा करने की क्षमता है। करीब 18 मिलियन हैक्टेयर भूमि सेम और लवण से ग्रसित है। दुनिया के अन्य भागों में जहाँ 60 प्रतिशत चरागाह हैं वहाँ भारत में 40 प्रतिशत हैं, जिसमें दुनिया का 20 प्रतिशत पशुधन चरता है, इससे अत्यधिक चराई से जमीन बंजर हो जाती है। दुनिया के और किसी भी हिस्से के मुकाबले भारत में सबसे अधिक (450 मिलियन) पशुओं की संख्या है जो देश के प्राकृतिक संसाधनों की वहनीय क्षमता से कहीं अधिक है। उपजाऊ कृषि भूमि को गैर कृषि उपयोग में परिवर्तित करने पर भी यहां कोई रोक नहीं है। मिट्टी क्षरण को रोकने के लिए बंजर भूमि जल संग्रहण विकास कार्यक्रम का अभी विस्तृत तौर पर प्रभावशाली होना बाकी है।

पानी की समस्या तो और भी गम्भीर है। भारत प्रतिवर्ष वर्षा से 400 मिलियन हैक्टेयर मीटर के बराबर पानी प्राप्त करता है (1 हैक्टेयर मीटर पानी का वजन करीब 10000 टन के बराबर होता है) उपलब्ध 400 मिलियन हैक्टेयर मीटर पानी में से 187 मिलियन हैक्टेयर मीटर पानी औसतन नदियों में बह जाता है। इसमें से करीब 70 मिलियन हैक्टेयर मीटर पानी भूमिगत जल के रूप में मिलता है। प्रतिवर्ष वर्षा के पानी का 20 प्रतिशत ही उपयोग किया जा सकने वाला होता है, बाकी सारा समुद्र में चला जाता है। वर्षा के पानी का अगर 20 प्रतिशत और इकट्ठा किया जा सके तो इससे भारत को 80 मिलियन हैक्टेयर मीटर अतिरिक्त पानी उपलब्ध हो सकता है।

प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष 2400 घन मीटर पानी उपलब्ध होने के बावजूद इसका राज्यों एवं मौसम के मुताबिक उपलब्धता असमान है। कुछ राज्यों जैसे राजस्थान, मेघालय आदि में पानी की गम्भीरतम कमी है।

भारी तादाद में सतही पानी से सिंचाई करने के बनिस्पत भूमिगत पानी से सिंचाई की ओर मुड़ना एक अन्य परेशान करने वाला पहलू है। 1965-66 में जहाँ भूमिगत जल से 1/3 भूमि सिंचित होती थी वह आज 50 प्रतिशत के करीब पहुँच गई है। इसमें जल स्तर निरन्तर कम होता जा रहा है।

सबसे अधिक चिन्ताजनक स्थिति यह है कि कृषि रसायनों के अधिक उपयोग या रासायनिक फैक्ट्रियों से निकलने वाले प्रदूषित अपशिष्ट के पानी में मिलने से बहुत बड़े क्षेत्र में अधिक से अधिक पानी प्रदूषित होता जा रहा है।

पिछले 58 वर्षों में जंगलों के हालात तो बहुत ही खराब हो गये हैं। इस पूरे काल में जंगलों का आकार आधा ही रह गया है। इसके अलावा मानवीय और व्यापारिक गतिविधियों का दबाव जंगलों पर बढ़ता जा रहा है। यद्यपि भारत में जैव-विविधता एवं उष्ण स्थानों (जिनमें मूल्यवान जिन्स मौजूद हैं) वाले सम्पन्न क्षेत्र मौजूद हैं–मसलन, पूर्वी हिमालय का क्षेत्र तथा पश्चिमी घाट। जैव-विविधता जैव तकनीक (यानि वनस्पति के आनुवंशिक संसाधन) के विकास के लिए आधारभूत पोषक भंडार उपलब्ध करवाता है।

इस प्रकार यदि जल, जमीन, जंगल एवं वनस्पति आनुवंशिक संसाधनों के सिकुड़ने की समस्या पर ध्यान दिया जाए तो भारत की कृषि नीति टिकाऊ एवं वहनीय बन सकती है। पर्यावरणीय पहलुओं की वहनीय क्षमता असीमित नहीं है, इस तथ्य को कभी नजरअंदाज नहीं करना चाहिए।

IV

संकट के कृषि पहलू पर ध्यान दें तो यह कोई कम गम्भीर समस्या नहीं है। कृषि में मुनाफा कम होने की वजह से जमीन का ठेका (किराया) का मूल्य कम हो गया है। परिवारों के लगातार बढ़ने से कृषि भूमि लगातार विभाजित होती जा रही है, जिससे कृषि इकाई व्यावहारिक नहीं रही है। इस प्रकार 15 प्रतिशत से अधिक ग्रामीण जनसंख्या भूमिहीन हो गई है। भारत में 78 प्रतिशत खेत 2 हैक्टेयर से कम नाप के हैं तथा इनमें से 2 तिहाई 1 हैक्टेयर से भी कम सीमान्त जोत वाले हैं। इस प्रकार की जोतों का हिस्सा एवं उनका इलाका दिन दुना रात चौगुना बढ़ता जा रहा है। इसका अर्थ है कि अधिक से अधिक साधारण एवं मध्यम जोत सीमान्त जोत में बदलती जा रही है। जाने माने कृषि अर्थशास्त्री के अनुसार पंजाब में एक सीमान्त जोत पर आधारित किसान परिवार की आमदनी राज्य सरकार के चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारी के मासिक वेतन से भी कम है तथा 2 हैक्टेयर से छोटी जोत वाले किसान की आमदनी राज्य सरकार में बाबू की मासिक वेतन से भी कम है। इस प्रकार भूमिहीन, सीमान्त एवं छोटे किसान ग्रामीण मानव संसाधन का लगभग 85 प्रतिशत हिस्सा है। इस विशाल ग्रामीण मानव संसाधन की समस्याओं पर ध्यान देने से भारतीय कृषि समतामूलक बन सकती है।

V

इस कृषि संकट का मानव संबंधित पहलू अत्यन्त गम्भीर है। जनसंख्या वृद्धि रोकने से भी नहीं रुक रही है। गरीबी बढ़ती जा रही है। बेरोजगारी का विस्तार हो रहा है। शिक्षा (विशेष तौर पर प्राथमिक स्तर पर), स्वास्थ्य देखभाल तथा ढांचागत सुविधाएँ खराब हालत में हैं तथा गरीबी, बेरोजगारी, अज्ञान एवं अन्धविश्वासों की वजह से ग्रामीण क्षेत्र में हतोत्साहित करने वाला वातावरण हावी है। खेतीहर मजदूरों तथा सीमान्त एवं छोटे किसानों के हालात दिन ब दिन खराब होते जा रहे हैं।

VI

कृषि संकट के सामाजिक और आर्थिक पहलू पर नजर डालें तो पाते हैं कि यह लाभदायक धंधा नहीं रहा है। कृषि उत्पादकता गिर रही है जबकि कृषि निवेश सामग्री की कीमतें लगातार बढ़ती जा रही हैं। कर्जदारी तेजी से बढ़ रही है।

इस निराशाजनक एवं हताशभरी स्थिति का कोई हल सामने दिखाई नहीं देने के कारण आम तौर पर किसान आत्महत्या का अतिवादी कदम उठा रहे हैं।

इस प्रकार उन राज्यों में जो तुलनात्मक तौर पर वाणिज्यिक कृषि के अगुवा हैं और अधिक विकसित हैं, उनमें 1995-2005 के बीच 10000 किसानों ने आत्महत्या की है। इनमें से अधिकांश सीमान्त और छोटे किसान हैं जिनके पास संसाधन कम है तथा जिन्होंने कृषि निवेश के लिए कर्जा लिया था संसाधनों की कमी वाले किसानों की आत्महत्या यह इंगित करती है कि अत्यधिक वाणिज्यिक एवं कृषि प्रतियोगिता वाले क्षेत्रों में सामुदायिक संवेदनशीलता एवं सामाजिक सहयोग का रचनातंत्र तार-तार हो चुका है।

हालिया 2005 की राष्ट्रीय सैम्पल सर्वे रिपोर्ट दर्शाती है कि 40 प्रतिशत किसान यह धंधा छोड़ना चाहते हैं। इसलिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि मीडिया ने भूख तथा व्यथित किसानों वाले इलाकों पर ध्यान केन्द्रित करना शुरू कर दिया है। उदाहरणार्थ, राष्ट्रीय पत्रिका आउटलुक का 4 जुलाई 2005 के अंक के मुख पृष्ठ पर 'भारतीय किसान की मौत' शीर्षक से छपे लेख में इस तथ्य को उजागर किया गया है कि दरिद्रता, अत्यधिक कर्जदारी, फसल बर्बादी रूपी बुरे जाल में फँसे किसान का भविष्य अंधकार में है।

2. भारत के कृषि संकट पर सरकारी बयान

किसानों पर अपनी द्वितीय रिपोर्ट (अगस्त 2005) में राष्ट्रीय आयोग द्वारा दी गई टिप्पणी

हमारा कृषि संकट बहुत गम्भीर स्थिति में है। खाद्य उत्पादन की वृद्धि दर जनसंख्या वृद्धि दर से कम हो गई है। कृषि में 4 प्रतिशत वृद्धि दर तक पहुँचने के लिए हमें बागवानी एवं पशुपालन की वृद्धि दर का लक्ष्य 8 प्रतिशत रखना होगा। इसके लिए सिंचाई, पशुपालन, मछली पालन, फसल कटाई के बाद की तकनीक, ग्रामीण ऊर्जा आपूर्ति और संचार साधनों में भारी निवेश की जरूरत है। पिछली तीन पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि में निवेश सकल राष्ट्रीय उत्पादन के 13 प्रतिशत के स्तर पर रुका पड़ा है। यदि हम इन आंकड़ों के गर्भ में छिपे चेहरों पर नजर डालें तो सीमान्त और छोटी जोत के किसानों, भूमिहीनों के 40 करोड़ बच्चे, महिलाएँ और पुरुषों के व्यथित चेहरे सामने आते हैं।

राष्ट्रीय विकास परिषद की पांचवीं बैठक (27-28 जून, 2005) में प्रस्तुत किये गए बिन्दु

प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहनसिंह

''पिछले कई सालों से हमारी कारगुजारी का एक विशेष परेशान करने वाला पहलू यह है कि 1990 के दशक के मध्य के बाद से कृषि में वृद्धि मन्द हो गई है। 1980 से 1996 तक कृषि में वृद्धि 3.2 प्रतिशत रही है। नवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान यह मन्द होकर 2.1 प्रतिशत रह गई। दसवीं पंचवर्षीय योजना की रणनीति की आधारशिला कृषि में वृद्धि दर कम होने के रुझान को वृद्धि दर का लक्ष्य 4 प्रतिशत तक हासिल करने की रखी गई थी, परन्तु वास्तव में कृषि में कारगुजारी और अधिक खराब होती नजर आती है तथा योजना के पहले तीन सालों में यह वृद्धि दर 1.5 प्रतिशत से अधिक होने की संभावना नजर नहीं आती। इसको ठीक करने की सर्वोत्तम प्राथमिकता कायम करनी होगी, ...आने वाले दस सालों में हमारी यह आकांक्षा होनी चाहिए कि हमारा कृषि उत्पादन दुगुना हो जाए।''

श्री शरद पंवार, कृषि, खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति, उपभोक्ता मामले एवं जन वितरण मंत्रालय के केन्द्रीय मंत्री :

''कुछ राज्यों में किसानों की आत्महत्याओं की दुखद घटनाएँ बहुत ही चिन्ताजनक घटनाएँ हैं, इसके लिए फसल बर्बादी, लगातार मानसून में कमी, निरन्तर सूखा, चढ़ता कर्जा, एक ही फसल उगाना, भूमि ठेके (किराये) पर देना, आदि कुछ मुख्य कारण नजर आते हैं। ....76 प्रतिशत पीड़ित वर्षा आधारित खेती पर निर्भर थे और 78 प्रतिशत छोटे और सीमान्त किसान थे.... 2000-01 में 76 प्रतिशत तथा 2002-03 में 82 प्रतिशत पीड़ित परिवारों ने गैर संस्थागत स्रोतों से कर्जा लिया था, इन कर्जों पर 24 से 36 प्रतिशत तक ब्याज की दर देय थी जबकि संस्थागत ऋणों की ब्याज दर 9 से 12 प्रतिशत ही थी।''

''किसानों के लिए पशुधन वाला क्षेत्र भी बहुत महत्वपूर्ण है ताकि उन्हें अतिरिक्त आमदनी हो सके। अध्ययनों से पता चलता है कि उन इलाकों में जहाँ डेयरी जैसी गतिविधियों से अतिरिक्त आमदनी करने के अवसर हैं वहाँ व्यवहारत: किसानों की आत्महत्याएँ नहीं के बराबर है....परन्तु यह भी तथ्य है कि हमारे यहाँ के पशुओं की उत्पादकता दुनिया के सबसे कम उत्पादकता वाले देशों में से एक है।''

''कृषि क्षेत्र संविधान के सातवें परिशिष्ट में राज्य सूची में दर्ज है, इसलिए राज्य सरकारों की प्रथम जिम्मेदारी है कि वे कृषि को विकसित एवं प्रोमोट करें तथा इसका उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाएँ। .....सभी राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों को आवंटित कुल राशि में कृषि एवं उसकी सहायक गतिविधियों पर हिस्सेदारी दसवीं पंचवर्षीय योजना में मात्र 6.46 प्रतिशत है तथा 2003-04 की वार्षिक योजना में इनका हिस्सा 5.62 प्रतिशत ही है।''

डॉ. मोंटेकसिंह अहलूवालिया, उपाध्यक्ष, योजना आयोग :

''1980-81 के काल में कृषि वृद्धि दर 3.2 प्रतिशत थी जो बाद में 1995-96 में घटकर औसतन 2 प्रतिशत से भी कम हो गई। आर्थिक क्षेत्र में रोजगार के अवसर वांछित स्तर तक नहीं पहुँच पाये हैं। पिछले तीन सालों में संगठित क्षेत्र में सम्पूर्ण दृष्टि से देखें तो रोजगार कम हुआ है..... भूमिगत जल के उपयोग की स्थिति भी बहुत परेशान करने वाली है। भूमिगत जल दोहन अत्यधिक होने से कई क्षेत्रों में जल स्तर की गिरावट चुनौती देने वाली है। वर्तमान में वर्षा से सिंचित होने वाला क्षेत्र जोत योग्य क्षेत्र का दो तिहाई हिस्सा बनता है और इसलिए इन क्षेत्रों में जल संरक्षण और जल प्रबंध की समन्वित रणनीति विकसित करनी आवश्यक हो गई है।''

इस प्रकार, हमारी कृषि संकट की अवस्था में है। खाद्य उत्पादन की वृद्धि दर, जनसंख्या वृद्धि दर की तुलना में नीचे आ गई है। कृषि में 4 प्रतिशत वृद्धि दर हासिल करने के लिए हमें बागवानी और पशुपालन में 8 प्रतिशत वृद्धि दर का उद्देश्य रखना होगा। ये लक्ष्य हम कैसे हासिल करने जा रहे हैं ? यह करने के लिए सिंचाई, पशुपालन, मछली पालन, फसल निकालने के बाद की तकनीक, ग्रामीण ऊर्जा आपूर्ति और संचार क्षेत्रों में अधिक निवेश की आवश्यकता है। पिछली तीन पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान कृषि क्षेत्र में निवेश सकल घरेलू उत्पाद (जी एन पी) के 13 प्रतिशत स्तर पर स्थिर चल रही है।

कृषि संकट के संबंध में प्रधानमंत्री व अन्य द्वारा सुझाए गये उपचार

कृषि संकट के खास कारणों का पता लगाये बिना प्रधानमंत्री एवं कृषि व खाद्य मंत्री दोनों ने कृषि संकट से उबरने के लिए तरीके सुझाए हैं। कृषि से संबंधित गतिविधियों की समस्त शृंखलाओं में निवेश बढ़ाने की आवश्यकता पर जोर दिया है तथा जल के संबंध में कुशल तकनीक को प्रोत्साहित करने पर बल दिया है। वर्तमान तकनीकी कवायद से उबरने के लिए रणनीतिक अनुसंधान एवं प्रसार पर गहरा ध्यान केन्द्रित करने का उन्होंने आह्वान किया है।

कृषि एवं खाद्य मंत्री ने बाजार के ढाँचा तंत्र के विकास पर तथा ठेका खेती एवं सीधे विपणन के अनुकूल बाजार कानूनों को लागू करने के लिए अधिकतम ध्यान केन्द्रित करने की वकालात की है। उन्होंने राष्ट्रीय बागवानी मिशन बनाये जाने एवं उसे सफल करने के लिए भी वकालत की है जिसके लिए दसवीं पंचवर्षीय योजना के पूरे होने में शेष रहे हिस्से के लिए 2300 करोड़ रुपये योजना के लिए संरक्षित कर रखे हैं।

कृषि संकट को केवल वृद्धि दर के दृष्टिकोण से नहीं देखा जाना चाहिए। यदि हम आंकड़ों के पीछे छिपे चेहरों पर नजर डालें तो सीमान्त और छोटी जोत के किसानों, भूमिहीनों के 40 करोड़ बच्चे, महिलाएँ और पुरुषों के दुखी चेहरे सामने आते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि हम गरीबी से उत्पन्न भूख या कुपोषण को घटाने में, शिशु एवं माता की मृत्यु दर तथा बड़ी बिमारियों को नियंत्रित करने के क्षेत्र में संयुक्त राष्ट्र संघ सहस्राब्दी विकास लक्ष्य को पाने में सफल नहीं हो पा रहे हैं।

स्पष्टत: चालू कृषि संकट से उबरने के लिए वर्तमान सरकार के तीन नेताओं का दृष्टिकोण यह है कि ''आनुवंशिक इंजीनियरिंग पर आधारित दूसरी हरित क्रांति की जादू की छड़ी के जरिए हम इस संकट से उभर जायेंगे।'' निस्संदेह, पहली हरित क्रांति द्वारा विकसित नये बीजों ने कृषि उत्पादन में बढोतरी की थी। परन्तु दीर्घकालीन रूप में इस रणनीति ने पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों दोनों को नुकसान पहुँचाया है। निश्चय ही यदि रासायनिक तकनीक पर किये गये भारी खर्च को जैविक तकनीक को उन्नत करने के लिए निवेशित किया जाता तो वर्तमान में जो खाद्य उत्पादन बढ़ा है, उससे भी ज्यादा उत्पादन हम प्राप्त कर सकते थे। हरित क्रांति या अन्य कोई तकनीक पर्यावरण और मानवीय समाज दोनों के लिए कृषि को वहनीय एवं लाभदायक बनाने की प्रभावी रणनीति प्रदान करेगी या नहीं, यह इस बात पर निर्भर करता है कि लोग किस प्रकार की सामाजिक व्यवस्था स्थापित करते हैं, यानि, क्या वह व्यवस्था कुछ विशेषाधिकारयुक्त निजी व्यक्तियों के लाभ के लिए कार्य करेगी या पूरी मानव जाति के लिए कार्य करेगी।

3. भारत में कृषि संकट के कारण

(अ) अल्पकालीन कारण

उपर्युक्त संकट का अल्पकालीन कारण मौजूदा कॉरपोरेट एकाधिकारी रसायन आधारित कृषि तकनीक में निहित है। इस तकनीक का बुनियादी कृषि निवेश यानि उर्वरक, रोगनाशक एवं कीटनाशक अत्यधिक रासायनिक है जो एक तरफ मिट्टी में मौजूद जैविक पोषक तत्वों को नष्ट करता है एवं फसल समर्थक जीवों को समाप्त कर देता है, नतीजतन मिट्टी की गुणवत्ता में कमी आती है और अन्ततोगत्वा उसे बंजर भूमि में बदल देती है तथा दूसरी तरफ पानी की अत्यधिक खपत के जरिए जल संसाधनों में कमी आती

है। पंजाब में इस रासायनिक खेती की तकनीक के लागू हुए 40 सालों (1964-2004) में इस तकनीक ने कृषि के सभी मुख्य घटकों, यानि, पर्यावरणीय संसाधन, मानवीय स्वास्थ्य, फसल उत्पादकता, वित्तीय वृद्धि, कृषि ढांचा आदि को नुकसान पहुंचाया है। उन सभी देशों में जहां रसायन आधारित कृषि तकनीक को उपयोग किया गया है वहां समान किस्म के नकारात्मक प्रभाव व्यवहार में दिखाई पड़ते हैं। रसायन आधारित कृषि तकनीक की अत्यधिक कारगुजारी ने 21वीं सदी के शुरू में ही कृषि को मृत्युशैया पर ला खड़ा किया है। फिर भी मौजूदा विश्व कारपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था के सभी उच्चस्थ नियंत्रणकर्ताओं द्वारा यह मानने के बजाए कि उनकी प्रतिपादित रासायनिक कृषि नीति की धारणाएं एवं भूमिका समग्र रूप से नकारात्मक रही है, उल्टा इस वास्तविकता को छुपाने में अति उत्साह से लगे हुए हैं। और यह प्रचारित कर रहे हैं कि रासायनिक कृषि तकनीक की मौजूदा खेती की सभी कमियां नई खोजी जा चुकी आनुवंशिक परिष्करण (जेनेटिक मोडिफिकेशन या जीएम) या प्रजनन परिवर्तन की तकनीक द्वारा ठीक कर दी जाएगी।

यह ध्यान देने योग्य है कि रासायनिक खेती की सम्पूर्ण वास्तुकला कृषि सम्बन्धित अगुवा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के साथ जुड़ी लोक-हितैषी संस्थाओं (राकफेलर फाउन्डेशन, फोर्ड फाउन्डेशन इत्यादि, जैसी संस्थाएं) द्वारा सोची समझी गई तथा उत्पादित की गई, जिनका (बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का) शुरू से लेकर आज तक लगातार इस रासायनिक खेती की तकनीक पर एकाधिकार चला आ रहा है। समस्त संसार में कारपोरेट पूंजीवादी नेतृत्व वाली सरकारों ने अपने अपने राष्ट्रीय कृषि क्षेत्रों एवं नीतियों में आधारशिला के रूप में इस रासायनिक खेती की तकनीक को जबसे इसका उद्भव हुआ है तबसे इसे अपनाया है।

रासायनिक तकनीक की शुरूआत से ही कारपोरेट पूंजीवादी सरकार तथा व्यापारियों के नेता यह कहते और प्रचारित करते आ रहे हैं कि 20वीं शताब्दी की यह हरित क्रांति है। वे इसे लगातार चरित्रित करते रहे हैं कि यह मानवता को सदा के लिए भूख से मुक्त करेगी और हमेशा के लिए खाद्य सुरक्षा प्रदान करेगी। परन्तु ये सभी बड़बोले दावे धाराशायी हो गये हैं। इस चमत्कारिक कृषि तकनीक के लागू होने के 40 साल बाद भी कृषि के क्षेत्र में दुनिया के सामने भयानक समस्याएं मुंह बाये खड़ी हैं।

भारतीय कृषि संकट के पीछे अन्य बराबर महत्व का कारण अव्यवहारिक और गैर न्यायपूर्ण जोत सीमाओं की पद्धति में निहित है, जो इसकी कृषि की वृद्धि और सामाजिक समता के रास्ते में बाधा पेश कर रही है, जबकि सरकार को इसके कारपोरेट पूंजीवादी कृषि के जाल में किसानों को अपने चालबाजी भरे कारपोरेट पूंजीवादी जरियों–जैसे ठेका खेती, वित्तीय और बाजार सुविधाओं इत्यादि–के माध्यम से फंसाने का अवसर प्रदान कर रही है।

(ब) दीर्घकालीन कारण

भारतीय कृषि संकट का दीर्घकालीन कारण भारत की विद्यमान कारपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था और इसके विकास कार्यक्रम में निहित है जो सूचना-प्रौद्योगिकी, निर्माण उद्योग, सेवा और ढांचागत क्षेत्रों को प्राथमिकता पर रखता है और खेती को तीसरा दर्जे का स्थान देता है। यह भारतीय किसान के साथ सभी कृषि मुद्दों–यानि, वित्त, कृषि उद्योग, कृषिकारी ढांचागत सुविधाओं, निर्यात, अन्वेषण–के मामले में सौतेला व्यवहार करता है। यह

जमीन की जोतों के छोटे होते जाने की अनदेखी करते हुए अब विभिन्न धोखाधड़ी भरे कदमों के माध्यम से भारतीय कृषि व्यवसाय को कारपोरेट उद्यम में तब्दील करने की बेतहाशा कोशिश कर रहा है।

4. भारतीय कृषि संकट का समाधान

भारतीय कृषि संकट का समाधान खेती का जैविक तरीका अपनाने और कृषि के लोक-पर्यावरण आधारित सहकारीकरण के माध्यम से भारतीय किसानों के सशक्तिकरण करने में निहित है।

(अ) अल्पकालिक समाधान

अल्पकालीन समाधान रसायन आधारित तकनीकी एवं नई पैदा हुई आनुवंशिक परिष्करण (जेनेटिकली मॉडिफाईड) जी एम या जनन परिवर्तन (या ट्रांसजेनिक) तकनीकी की जगह, बीजों, खादों, रोगनाशकों, कीटनाशकों के मामलों में जैविक-तकनीकी अपनाने में निहित है।

(ब) दीर्घकालीन समाधान

भारतीय कृषि का दीर्घकालीन हल भारतीय किसानों को लोक-पर्यावरण आधारित सहकारी खेती को दो चरणों में संगठित करके उनका सशक्तिकरण करने में निहित है। इन दो चरणों में अन्तर यह है कि पहले चरण में किसी भी सहकारी खेती के विभिन्न सदस्यों का हिस्सा उनके भू-स्वामित्व के आधार पर तय किया जायेगा जबकि दूसरे चरण में उनका आधार समतावादी आय सिद्धान्त (जिसमें अधिकतम आय अन्तर 1:2 होगा) के आधार पर तय किया जाएगा न कि समानता के आधार पर।

हमारे विचार में निम्नलिखित लोक-पर्यावरण नेतृत्व में सहकारी कृषि मॉडल भारतीय कृषि संकट से निकलने का हमें तात्कालिक एवं दीर्घकालिक रास्ता प्रदान करता है।

(क) भारत का कृषि क्षेत्र स्वाभाविकतया दो अन्तरसंबंधित भागों–यानि, किसान समुदाय का सामाजिक मानवीय पहलू और कृषि की पैदावार प्रणाली–से बना हुआ है। दोनों अन्तरसंबंधित हैं। एक के बिना दूसरे का अध्ययन कहीं भी एक वास्तविक तस्वीर पेश नहीं करता।

(ख) भारतीय किसान समुदाय का सामाजिक संगठन लोक-पर्यावरण समर्थक सहकारिता के उसूलों पर आधारित होना चाहिए, जिसके अनुसार विद्यमान सभी खेतिहर इकाइयों को संगठित (एकीकृत) किया जा सकता है और अपनी अपनी इकाई (खेती) पर मालिकाना हक में कोई तब्दीली किए बगैर लोक-पर्यावरण नेतृत्व सहकारिता आधार वाली कृषि प्रक्रिया में भागीदार बनाया जा सकता है।

(ग) प्रथमत: भारतीय कृषि की प्रणाली को कृषि-क्षेत्रीय (या कृषि जलवायु) आधार पर वर्गीकृत किया जाना चाहिए। इस तरह का वर्गीकरण निम्नलिखित कृषि क्षेत्रीय (या कृषि जलवायु) इलाकों से निर्मित हो सकता है–(क) पहाड़ी कृषि क्षेत्र, (ख) शुष्क कृषि क्षेत्र, (ग) तटीय कृषि क्षेत्र, (घ) सिंचित कृषि क्षेत्र, (ड़) क्षयग्रस्त या खराब कृषि क्षेत्र, और (च) मत्स्य पालन, जमीन और समुद्री दोनों हिस्सों पर।

(घ) प्रत्येक कृषि क्षेत्र को ऐसे विभिन्न कृषि जलवायु जोनों में विभाजित किया जाए, जिनमें से प्रत्येक जोन स्वाभाविक तौर पर एक या दो विशिष्ट फसलों के उत्पादन के

अनूकूल हो। भूमि की प्रकृति के खिलाफ फसलों को ठोंसने की विद्यमान प्रणाली से कम फसल और घटिया गुणवत्ता वाला उत्पादन होता है। ऐसे ज्यादातर जोनों या क्षेत्रों को कृषि और बागवानी विभागों के रिकार्ड में पहले से ही चिह्नित किया हुआ है। बचे हुए क्षेत्रों को तत्काल कृषि विशेषज्ञों के साथ अन्तरक्रिया और स्थानीय किसानों के अनुभवों को बांटकर मूल्यांकन किया जा सकता है। ऐसी प्रणाली गुणवत्ता और उत्पादकता के रूप में उत्तम परिणाम देगी।

(ड़) प्रत्येक कृषि जलवायु क्षेत्र (जोन) में एक विशिष्ट फसल सहकारी कृषि सोसायटी बनाई जाए जिसमें सभी किसानों (छोटे और बड़े भूमि मालिकों) को निचली इकाई से लेकर ऊपर की इकाई तक में शामिल किया जाए। उनमें से प्रत्येक किसान अपनी अपनी जोत (खेती) के मुताबिक अपना हिस्सा प्राप्त करेगा।

(च) प्रत्येक क्षेत्रीय सहकारी कृषि सोसायटी क्षेत्र से सम्बन्धित कच्चे माल या एक अथवा दो विशिष्ट फसलों में अतिरिक्त मूल्य वृद्धि के लिए इसके कृषि जलवायु जोन में एक प्रासंगिक कृषि प्रोसेसिंग उद्योग की स्थापना करें। यह आवश्यक मात्रा की अच्छी गुणवत्ता और कम कीमत उत्पाद को कम से कम परिवहन खर्च पर मुहैया करवायेगी। कृषि उद्योग से संबंधित जोन की आर्थिकता को मजबूती देगा और बेरोजगारों को रोजगार प्रदान करेगा।

(छ) प्रत्येक विशिष्ट फसल सहकारी कृषि सोसायटी संबंधित जोन में अपने उत्पाद को सुरक्षित रखने के लिए शीत-घरों के साथ बाजार का बुनियादी ढांचा विकसित करे ताकि भारत के अन्य भागों और विदेशों के खरीददारों को आकर्षित किया जा सके।

(ज) प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रीय सहकारी कृषि सोसायटी कानून के तौर पर विभिन्न खेती कार्यों की आवश्यकतानुसार अपने ही क्षेत्र के अन्दर के मजदूरों को रोजगार देगी। इसके अलावा, यह सरकार से अपील करेगी कि कृषि मजदूरों की निम्नलिखित न्यायपूर्ण मांगों को पूरा करे (क) प्रत्येक कृषि कामगार के लिए 50,000 रुपये बीमा राशि जमा की जाए, जिसमें सम्बन्धित राज्य व केन्द्र सरकार बराबर हिस्सा प्रदान करें, (ख) कृषि मजूदरों के लिए बुढापा पेंशन योजना शुरू की जाए, (ग) ग्रामीण गृह निर्माण योजना के तहत भूमिहीनों के लिए कार्यस्थल पर घर की व्यवस्था की जाए और (घ) पीने के पानी, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं की सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जाए।

(झ) प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रीय (जोनल) सहकारी कृषि सोसायटी ग्रामीण ढांचे के जनवादीकरण के लिए निम्नलिखित कदम उठाने की सरकार से अपील करे।

* ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और ढांचागत संरचना का विकास किया जाए।

* ग्रामीण जनता के ज्ञान और दक्षता को विकसित किया जाए।

* विशिष्ट फसल जोनल कृषि सहकारी सोसायटियों के लिए कारगर कीमत नीति, उचित राष्ट्रीय बाजार, दीर्घावधि ऋण, निर्यात सुविधाएं, इत्यादि सुनिश्चित की जाएं।

* भिन्न-भिन्न ग्रामीण विकास योजनाओं जैसे आई आर डी पी, जवाहर रोजगार योजना, इन्दिरा आवास योजना, आदि के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में खर्च होने वाले फंड के उचित उपयोग के लिए गाँव की चुनिन्दा कमेटियों को उस फंड की निगरानी करने के लिए अधिकृत किया जाए।

* नौकरशाही कानून और इसकी नीति पर आधारित आज के सहकारी आन्दोलन का लोक-पर्यावरण निर्देशित कानून और इसकी नीति के द्वारा पूर्णतया जनवादीकरण किया जाए।

* महिलाओं को जमीन सहित अपने पति की समस्त जायदाद में सह-मालिक बनाना और उन्हें सभी चुनावी संस्थाओं में 50 प्रतिशत आरक्षण देना।

* हर पंचायत (इसके सभी सदस्यों) को हर 6 महीने बाद (या साल में दो बार) अपने हलके का दौरा करने और अपने वोटरों की आम सभा के सामने 6 महिने का रिकार्ड बहस और टिप्पणियों के लिए पेश करने की कानूनी जिम्मेदारी निश्चित करके वोटरों के आगे जवाबदेह बनाना।

(ञ) प्रत्येक फसल विशिष्ट जोनल सहकारी कृषि सोसायटी को उचित समय पर अपने अतिरिक्त उत्पाद को बेचने एवं अपने आवश्यक खेती निवेश को खरीदने के लिए अपना एक किसान केन्द्रित बाजार तंत्र (यानि प्रबंध प्रणाली) की स्थापना करनी चाहिए। इन दोनों तरह के आदान-प्रदान में यह इसकी सौदाकारी ताकत को बढ़ायेगी और संबंधित फार्म की लाभसीमा में बढ़ोतरी करेगी। प्रत्येक बाजार तंत्र अपने बाजार अनुसंधान और जाँच पड़ताल विभाग की स्थापना करेगा।

(ट) प्रत्येक विशिष्ट फसल जोनल सहकारी सोसायटी सरकार से एक व्यावसायिक कमेटी के गठन की अपील करे जिसमें जोनल फसल विशेषज्ञ, जोनल फसल वैज्ञानिक, किसानों के प्रतिनिधि तथा बाजार विभाग के प्रतिनिधि शामिल हो। कमेटी विशिष्ट फसल की समस्याओं पर विचार विमर्श के लिए जरूरत के अनुसार मिटिंग बुलाती रहे। क्षेत्र विशेष-फसल विशेषज्ञों की कमेटी संबंधित विशिष्ट फसल की समस्याओं का हल निकालने में अधिक सक्षम होगी।

(ठ) प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रिय सहकारी सोसायटी केन्द्र और राज्य सरकार से अपील करे कि वे कृषि क्षेत्र के लिए अपने अपने बजट विनियोजन में बढ़ोतरी करे।

(ड) खेतीबाड़ी को मानव और पर्यावरण समर्थक बनाने के लिए प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रीय सहकारी सोसायटी शुरूआत में 2 तरह की तकनीकी–जैविक और एकीकृत तकनीक (यानि, एक ऐसी तकनीक जो जैविक तकनीक और रसायन आधारित तकनीक दोनों का उपयोग करे)–के आधार पर खेती की जाए। बाद के दौर में क्षेत्र के एक हिस्से में जैविक आधार पर खेती की जाएगी और क्षेत्र के दूसरे भाग में एकीकृत तकनीक का रास्ता अपनाया जाएगा।

(ढ) जल उपयोग क्षमता को अधिकतम करने के लिए, जल निकासी/जल पुनरभरण अनुपात को उचित स्तर पर कायम रखा जाए। सभी पर्यावरणीय संसाधनों–यानि, हवा, पानी, भूमि, जैव विविधता और जंगलों के संवर्द्धन के लिए हर तरह के प्रयास किए जाए।

(ण) इसकी विशिष्ट फसल के बाद प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रीय सहकारी सोसायटी को डेयरी विकास को हाथ में लेना चाहिए जो इसकी अगली सबसे महत्वपूर्ण गतिविधि होगी। दूध बेचने के अलावा यह इसकी प्रोसेसिंग और दूध व दुग्ध उत्पाद के निर्यात में संलग्न होगा। डेयरी उद्योग के साथ साथ सहायक स्कीमों, जैसे मधुमक्खी पालन, मछली पालन, गन्ने से खांडसारी और गुड़ बनाना, शुष्क क्षेत्रों में कृषि जंगलात, तेल और दवा उपयोगी पौधों (जैसे सनाय, गुग्गल, ईसबगोल, मेहंदी, इत्यादि) और पड़त

भूमि में भेड़ पालन (उदाहरणतया, राजस्थान), इत्यादि को तत्काल लागू किया जाए– इस प्रकार कृषक की अल्प आमदनी को बढ़ाने में इन्हें सहायक बनाया जाए।

(त) किसान समुदाय कुछ निम्नतम आय के स्तर को (फसल नष्ट होने की स्थिति में) सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक सहकारी कृषि सोसायटी को सरकार से मांग करनी चाहिए कि वह प्रभावी फसल बीमा योजना लागू करे।

(थ) विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) द्वारा अस्वीकृत सभी तरह की यानि, गैर कानूनी कृषि सब्सिडी या वित्तीय स्वीकृति (जैसा कि अमेरिका और युरोपीय समुदाय द्वारा किया जाता है) को बंद करके विश्व व्यापार के लिए एक समतल (सबके लिए समान) व्यापार मैदान तैयार करना। सभी सहकारी कृषि सोसायटियों को भारत के साथ-साथ विश्व भर में उचित व्यापार के पक्ष में खड़े रहना चाहिए।

(द) ठेका खेती तरीकाकार अल्प विकसित देशों के निगमीकरण के लिए कारपोरेट पूंजीवादी साधन मात्र है। इस समझ के साथ अगर किसी सहकारी कृषि सोसायटी को ऐसे किसी ठेके में लाभ नजर आता है तो ऐसे सौदे में हाथ डालने में कोई हानि नहीं है, बशर्ते कि 2 सावधानी भरे कदम साथ-साथ उठाये जाए। एक कदम है कि ऐसे ठेके की जांच परख कानूनी विशेषज्ञ द्वारा करवाई जाए। और दूसरा कि राज्य ऐसे ठेके को उचित और न्यायिक ढंग से लागू करने का दायित्व लेता है या नहीं।

(ध) अंतिम, लेकिन अधिक महत्वपूर्ण भारतीय किसान की गंभीर ऋणग्रस्तता के सवाल के मद्देनजर, जिसके कारण भारत में 10 हजार किसान आत्महत्या कर चुके हैं, सभी सहकारी कृषि सोसायटियों की तरफ से राज्य एवं केन्द्र सरकारों से अपील की जानी चाहिए कि वह नीचे लिखी 3 मांगों को पूरा करे:–1. सन् 2006 से पहले के सभी ऋण जो भारत में रहने वाले किसानों (ग्रामीण भूमिहीन सहित) पर बकाया है, चाहे वे संस्थागत है या गैर संस्थागत, उन्हें माफ किये जाए। 2. किसानों को सस्ता ऋण प्रदान करने के लिए प्रावधान तैयार करना, जिसमें सम्पूर्ण संस्थागत (सरकारी या अर्द्ध सरकारी) ऋण का 30 प्रतिशत किसानों को तथा 10 प्रतिशत ग्रामीण भूमिहीनों और शहरी गरीबों को दिया जाए, जबकि सभी गैर संस्थागत ऋण प्रतिबंधित किये जाए, और 3. भारत में सहकारी आधार पर कृषि की पुनरसंरचना की जाए (जो भारत में विद्यमान भूमि जोतों में विघ्न नहीं डालेगा और गुणवत्ता, उत्पादकता और लाभदायकता के क्षेत्र में कारपोरेट खेती की तुलना में अधिक श्रेष्ठ सिद्ध होगी, जबकि कारपोरेट खेती छोटे व बड़े सभी किसानों को अपनी भूमि से बेदखल कर देगी और उन्हें बेरोजगार कामगारों के समूह में तब्दील कर देगी)। आगे, यह सहकारी आधारित खेती, सोवियत सामुदायिक खेती (जिसमें कामगार ट्रेड यूनियन अधिकारों तक से भी वंचित कर दिया गया था) के भी ठीक उलट जनवादी समानता और सर्जनात्मक उसूलों की जीवन्तता स्थापित करेगी।

5. वर्तमान कार्य

उपर्युक्त विश्लेषण उन सभी का आह्वान करता है जो इसकी दिशा और कार्यक्रम से सहमत हैं वे तीन तरफा कार्य करें। ये हैं–भारतीय कृषि को दरपेश गंभीर संकट, इसके कारण और समाधान के बारे में किसानों के बीच जागरूकता पैदा करना और उसे ठीक करने के लिए उन्हें प्रेरित करना।

6. वर्तमान कॉरपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था को बदलने की सामाजिक आवश्यकता

मानव समाज में कृषि को उचित स्थान दिलाने के लिए यह आवश्यक है कि मौजूदा पूंजी (यानि, धन और सम्पत्ति) निर्देशित कॉरपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था (जिसकी एक मात्र प्राथमिकता पूंजीपतियों के मुनाफे को अधिकतम करने में सहायता करने के लिए इसकी–यानि, कॉरपोरेट व्यवस्था की–विशेष प्रिय दोगलेपन की शैली–यानि, कहना कुछ और करना कुछ का अनुसरण करने वाली व्यवस्था) के स्थान पर प्रकृति-मानव निर्देशित सामाजिक व्यवस्था कायम करना, जिसकी दो सर्वोच्च प्राथमिकताएं यानि पर्यावरण और मानव है तथा जो पांच मूलभूत सिद्धान्तों यानि पर्यावरण संवर्धन, उचित समानता (यानि कारपोरेट पूंजीवादी राजनीतिक पार्टियों और व्यापारिक घरानों के स्थान पर जनता का सशक्तिकरण करना, प्रत्येक वंचित और गरीब व्यक्ति की सामाजिक सुरक्षा करना तथा आमदनी के बेतुके फर्क को 1:5 के तर्कसंगत फर्क की सीमा में लाना), उत्पादकता (या वृद्धि दर), जनता के नेतृत्व वाले जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता की पालना करती है। और जिसमें कृषि–जो एक तरफ मानव के भोजन एवं स्वास्थ्य से जुड़ी है और दूसरी तरफ सभी पर्यावरणीय संसाधनों, यानि, भूमि, जल, जलवायु, जैव-विविधता, जंगलों के उचित विकास से संबंध रखती है–को अधिकतम महत्वपूर्ण स्थान पर स्वीकार करते हुए सामाजिक विकास मॉडल में इसे प्रथम स्थान दिया जाए। (10.03.2006)

* * * * *

पंजाब के सामने विकराल कृषि संकट
इसका कारण राज्य और केन्द्र सरकारों की किसान विरोधी नीतियों में निहित
इसका एकमात्र हल
लोक-पर्यावरण-नेतृत्व सहकारी खेती के आधार पर पंजाबी किसानों के सशक्तिकरण में अन्तर्निहित

1. पंजाब का बहुआयामी खेतीबाड़ी संकट

(A)

पंजाब भारत के सबसे छोटे राज्यों में से एक है। जिसका भौगोलिक क्षेत्र भारत के कुल क्षेत्र का 1.5 प्रतिशत है और कृषि क्षेत्र का 2.6 प्रतिशत है। संसार के भाग के तौर पर पंजाब दुनिया के भौगोलिक हिस्से का 0.0003 प्रतिशत हिस्सा घेरता है।

20वी सदी के हरित क्रान्ति के बाद के 25 सालों (1970-95) के दौरान आम तौर पर विश्व में और खास तौर पर भारत में अनाज के उत्पादन में पंजाब एक मॉडल रहा है। यह पूरे संसार के कुल उत्पादन में से गेहूं का 2.77 प्रतिशत, चावल का 2.04 प्रतिशत और कपास का 2.05 प्रतिशत पैदा करता रहा है। राष्ट्रीय स्तर पर कुल राष्ट्रीय कृषि पैदावार का यह 9 प्रतिशत पैदा करता है जिसमें से राष्ट्रीय पैदावार का 21 प्रतिशत गेहूं, 10 प्रतिशत

चावल और 15 प्रतिशत कपास पैदा करता है। यह पिछले ढाई दशक से केन्द्रीय अनाज भण्डार में चावल 50 प्रतिशत और गेहूं 70 प्रतिशत का योगदान देता आ रहा है। आगे सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से भोजन की कमी वाले क्षेत्रों के लिए अन्तर-राज्य खाद्यान की आपूर्ति का 95 प्रतिशत भाग इसी राज्य से भरे भंडार से पूरा किया जाता है। स्पष्टतया, भारत की राष्ट्रीय खाद्यान सुरक्षा के आत्म निर्भरता की धारणा का अवलम्बन बहुत हद तक पंजाब पर टिका है।

(B)

1947 में भारत विभाजन और आजादी के समय भारतीय पंजाब (यह तब वर्तमान पंजाब, हरियाणा और हिमाचल राज्यों एवं चण्डीगढ़ संघीय क्षेत्र के भागों से गठित था) अनाज की कमी वाला क्षेत्र था। सन् 1951 में अनाज का उत्पादन केवल 19.9 लाख टन के करीब था, जिसमें से गेहूँ 11 लाख टन और चावल 1.1 लाख टन था। उस समय राज्य का कुल वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद 1970-71 की कीमतों के आधार पर केवल 655 करोड़ रुपये था, जिसमें से कृषि उत्पादन का हिस्सा 54.4 प्रतिशत था। यद्यपि उस समय भी फसल पद्धति में अनाज की फसलों का प्रभुत्व था जो 68 प्रतिशत क्षेत्र में बोई जाती थी, तब भी मुख्यतया असिंचित क्षेत्रों में दाले व मोटे अनाज 38 प्रतिशत क्षेत्रों में बोये जाते थे। उस समय शुद्ध फसली क्षेत्र 3544 हजार हैक्टेयर और कुल फसली क्षेत्र 4170 हजार हैक्टेयर था, जहां फसली तीव्रता केवल 118 प्रतिशत थी। रासायनिक खादें और पेस्टीसाइड्स किसानों द्वारा उपयोग में नहीं ली जाती थी, ट्युबवैल कहीं विरले ही नजर आते थे और राज्य में टैक्टर की ज्यादा जानकारी नहीं थी। केवल 52.3 प्रतिशत क्षेत्र ही सिंचित था और जमीन की जोते बिल्कुल छोटी-छोटी थी।

सन् 1950 में पंजाब राज्य (जिसमें उस समय हरियाणा भी शामिल था) ने वृद्धि के रास्ते पर चलना शुरू करते हुए भूमि जोतों को इकट्ठा करना जरूरी समझा, क्योंकि भाखडा नांगल नहर प्रणाली के माध्यम से प्राप्त नहरी सिंचाई पानी के उपयोग के लिए इसे पहली पूर्व शर्त माना गया था। साथ ही साथ भाखड़ा हाईडल प्रोजेक्ट से प्राप्त बिजली आपूर्ति होने से संगठित भूमि पर ट्यूबवैल लगाने को प्रोत्साहन मिला, जिसने नहरी जल आपूर्ति के साथ पूरक सिंचाई की सुविधा को सुनिश्चित कर दिया। तब भी, 1960-61 में कृषि का राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में हिस्सा (जो राज्य के कुल सकल घरेलू उत्पाद का 54.01 प्रतिशत था) स्थिर कीमत पर केवल 473.7 करोड़ रूपये था। अनाज का उत्पादन बढ़ कर 31.6 लाख टन पहुंचा जिसमें से गेहू 17.4 लाख टन था और चावल 2.5 लाख टन था। मोटा अनाज और दालों का उत्पादन 18.4 लाख टन हुआ। सिंचित क्षेत्र में बढ़ोतरी शुद्ध बोवाई क्षेत्र का 54 प्रतिशत भाग थी और फसली तीव्रता 121 प्रतिशत तक पहुँच गई।

फसल पद्धति में अभी तक गेहूं का ही प्रभुत्व था, जो राज्य की फसली क्षेत्र के 29.6 प्रतिशत क्षेत्र में बोई जाती थी, दालें 19.08 प्रतिशत, मोटे अनाज 10.52 प्रतिशत और कपास 9.4 प्रतिशत क्षेत्र में बोई जाती थी। कुल फसली क्षेत्र और शुद्ध बोवाई क्षेत्र क्रमश 4170 हजार हेक्टेयर व 3544 हजार हैक्टेयर से बढ़कर 4732 हजार हेक्टेयर व 3757 हजार हेक्टेयर हुआ जो बहुत कम बढ़ोतरी थी।

उत्पादकता भी बढ़नी शुरू हुई परन्तु बहुत कम मात्रा में 1960-61 में गेहूं की उपज केवल 1.244 टन प्रति हैक्टेयर, चावल की उत्पादकता केवल 1 टन प्रति हैक्टेयर अमेरिकन

कपास 0.269 टन प्रति हैक्टेयर और गन्ना केवल 36.54 टन प्रति हैक्टेयर उत्पादकता देता था। यह हालात केवल थोड़े सुधार के साथ लगातार 1960 के दशक के मध्य तक जारी रहे।

(C)

कृषि पैदावार में पहली छलांग 1965-66 में तब लगी जब हरित क्रांति तकनीक के साथ गेहूँ की ज्यादा उत्पादन देने वाली मैक्सिकन किस्म पंजाब में पहली बार लाई गई। दूसरी बड़ी छलांग 1970 के दशक के बीच उस वक्त लगी जब चावल की बौनी किस्में आई और इसके साथ ही चावल के उत्पादन में कई गुना बढ़ोतरी हुई।

पिछले 30 वर्षों (1970-2000) के दौरान पंजाब में अनाज की पैदावार 20 लाख टन से बढ़कर 2 करोड़ 40 लाख टन पहुंच गई। जिसका अर्थ है इसमें 12 गुना वृद्धि हुई है।

2001-2002 में कुल अनाज उत्पादन (अनाज और दालें) 2 करोड़ 49 लाख टन पैदा हुआ। परन्तु यह नजर आता है कि गेहूं और चावल का उत्पादन उच्चतम स्तर पर पहुंच चुका है और दूसरी फसलों के लिए रकबे में काफी कमी आ चुकी है। आज पंजाब के कुल 5.04 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र में से 4.21 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र जोत के अधीन है। इसका अर्थ है कि 84 प्रतिशत क्षेत्र जोत के अधीन है। फसली तीव्रता जो 1947-48 में 118 प्रतिशत थी, वह आज बढ़कर 185 प्रतिशत हो गई है। 1950-51 में 53 प्रतिशत सिंचाई योग्य क्षेत्र आज बढ़कर 94 प्रतिशत हो गया। इस प्रकार पंजाब की खेतीबाड़ी गेहूं चावल मुख्य फसली चक्र, बहुत खुले पानी और बहुत ज्यादा रसायनों (नदीन-नाशक और किडेमार दवाईयों व रासायनिक खादें) के उपयोग से चरित्रित है।

फिर भी, उपर्युक्त वर्णित खुशगवार तथ्य कहानी का केवल मात्र एक पक्ष है।

(D)

उपर्युक्त कहानी का दूसरा पक्ष अधिक दुखदायी तथ्यों से चिह्नित है। वह है, पंजाब के कृषि उत्पादन में उदाहरणीय बढोतरी के बाद आज पंजाब की कृषि को बहुत-बहुत गम्भीर समस्याओं से सामना करना पड़ रहा है। इसकी गेहूँ, चावल, कपास, गन्ना और मक्की आदि की पैदावार घट रही है। इसके पर्यावरणीय पैदावारी तत्व–जैसे मिट्टी, पानी, जंगल, जैव विविधता आदि बहुत ज्यादा दबाव में है। इसकी ग्रामीण आर्थिकता ज्यादा से ज्यादा गैर बराबरी वाली हो रही है। यहाँ पर जोत योग्य भूमि बढने की कोई सम्भावना नहीं है। बहुत ज्यादा फसली जमीन जोत के अधीन आ गई है। फसली तीव्रता बहुत ऊंचे स्तर पर पहुँच चुकी है। कृषि निवेश सामग्री की खपत राष्ट्रीय स्तर से ज्यादा यानि 170 किग्रा है। बढती हुई आबादी के साथ जमीनी जोत के छोटे होने के कारण कृषि छोटे और बहुत छोटे किसानों के लिए घाटे का सौदा बन गई है। कृषि निवेश सामग्री और मजदूरी की दरें बढने के कारण खेती लागत बढ़ गई है। 1975-76 से 2001-2002 तक के आंकड़ों के अनुसार गेहूँ की लागत 7 गुना, कपास की लागत 8 गुना और चावल की लागत 11 गुना बढ़ गई है। कृषि लागत के बढने से किसान कर्जे के बोझ तले दब गया है। पंजाब के ऊपर कुल कृषि कर्ज सन् 1997 में 5701 करोड़ रुपये था जो बढ़कर सन् 2003 में 12494 करोड़ रुपये हो गया। जिसका वार्षिक ब्याज 2500 करोड़ रुपये बनता है, इसका अर्थ है कि फसली पैदावार की कुल पैदावार का यह 15 प्रतिशत बनता है। पंजाब कृषि की बढ़ती अव्यावहारिकता ने ग्रामीण-शहरी खाई को बढ़ा दिया, युवाओं के बीच नशाखोरी और

अवसाद को बढ़ा दिया, परिवारों में तनाव उत्पन्न कर दिया, बढ़ते अपराधों–जैसे डकैती, चोरी, धन कमाने के गैर कानूनी साधनों ने राज्य की सम्पूर्ण आर्थिकता को प्रभावित किया, जिसका परिणाम भारत में दूसरे राज्यों की तुलना में प्रति व्यक्ति आय कम होने में निकला है और बड़ी संख्या में किसानों ने आत्महत्याएं (सरकारी तौर पर सन् 2004 में 2116, जबकि पंजाब के कुछ किसान संगठन यह संख्या 13000 बताते हैं) की है। इस सबसे एक प्रखर पर्यवेक्षक को पंजाब का कृषि परिदृश्य स्पष्ट हो जाता है।

अब यह अत्यधिक स्पष्ट है कि, हालांकि पंजाब में हरित क्रान्ति ने भारत में खाद्यान्न सुरक्षा हासिल करने में बड़ा योगदान दिया है परन्तु इसने पंजाब के प्राकृतिक और मानव संसाधनों को गम्भीर नुकसान पहुँचाया है।

(E)

पंजाब के लिए मानव विकास रिपोर्ट 2004 जो राज्य सरकार की पहलकदमी और सहयोग के साथ संयुक्त राष्ट्र विकास प्रोग्राम और योजना आयोग के साथ मिलकर तैयार की गई है, यह रिपोर्ट हमें कुछ आश्चर्यजनक आंकड़े प्रदान करती है। यह दर्शाती है कि 1961 से 1991 तक खेती काश्तकारों का प्रतिशत तेजी से (46 से 31 प्रतिशत) घटा है। इन्हीं सालों में खेत मजदूरों की प्रतिशत मात्रा में काफी वृद्धि (10 से 23 प्रतिशत) हुई है। जबकि 1951 में खेती करने वालों में खेत मजदूरों का अनुपात 8 प्रतिशत था। साफ है कि यह उल्टा रूझान केवल 1960 के बाद आई हरित क्रान्ति के बाद शुरू हुआ है।

रिपोर्ट के अनुसार खेत मजदूरों में गणनीय वृद्धि छोटे और बहुत छोटे किसानों के कंगाल होने का नतीजा है। उस समय से अब खेती जोत तीन गुना छोटी हो गई है। हालिया रिपोर्ट के अनुसार 5 एकड़ से कम खेती की जोत व्यावहारिक नहीं रही है। छोटे और बहुत छोटे किसानों के लिए दो टाइम की रोटी कमाने के लिए बनाई गई योजनाएँ फेल हो गई है और सरकार के ऐसे कदम उन्हें प्रभावित नहीं कर सके। इसका नतीजा यह निकला कि हर घर का जीव विदेशों में जाने के लिए हर जायज व नाजायज तरीके का सहारा ले रहा है। अन्यथा किसी भारतीय शहर में रोजगार ढूंढ रहा है।

रिपोर्ट के अनुसार ज्यादा पैदावार देने वाली फसली विभिन्नता समय की मांग है क्योंकि गेहूँ का उत्पादन मामूली ही बढ रहा है। और चावल का उत्पादन ठहराव की स्थिति में है तथा कपास का उत्पादन घट रहा है। क्योंकि इन समस्त फसलों की प्रति एकड़ कीमतों में ठहराव है, कृषि निवेश की सामग्री की लागतें बेहद बढ़ गई है जिसका नतीजा ना सिर्फ किसानों के ऊपर कर्ज का बोझा बढ़ने में निकला है। बल्कि प्रदेश के कृषि विकास पर उल्टा असर पड़ा है। इसके अलावा कुछ और नकारात्मक असर, जैसे कि भूमिगत पानी के स्तर का गिरना भी पैदा हो गया है। इसी तरह ठेका काश्तकारी को पूंजी एवं तकनीक हासिल करने के लिए प्राईवेट क्षेत्र की भागीदारी की आवश्यकता है। सिर्फ यही काफी नहीं है बल्कि जब तक किसान अपने हित को सुरक्षित नहीं समझता तब तक वह इस योजना में हिस्सेदार नहीं बन सकता। जाहिर है कि इस स्कीम के तहत होने वाली फसलों को सुरक्षित मंडी की जरूरत है।

इस रिपोर्ट का बुनियादी नुक्ता एक वास्तविकता पर आधारित बुनियादी नीति की मांग करता है जो एक ऊंची और टिकाऊ तरक्की की दर प्रदान कर सकें। कृषि क्षेत्र में कई वर्षों से उठाए गए कदम वो नतीजे नहीं दे सके जिनकी जरूरत है।

(F)

उपर्युक्त तथ्यों की रोशनी में यह कहा जा सकता है कि आज पंजाब की कृषि को बहुत ही गम्भीर बहुआयामी संकट का सामना करना पड़ रहा है।

प्रथमत:, प्राकृतिक संसाधनों के खराब होने के कारण संकट का पर्यावरणीय पहलू ज्यादा गम्भीर हो गया है। उपजाऊ जमीन खराब हो गई है। जल स्रोत (पृथ्वी के ऊपर और भूमिगत) घट गये हैं। पानी का खारापन और सेम बढ़ रही है। औद्योगिक कचरा, जैसे नाईट्रेट, सल्फेट क्लोराइड के कारण पानी प्रदूषित हो रहा है और पीने के लिए नुकसानदायक हो गया है। जंगल का कवर (जो कि शिवालिक पहाड़ियों तक ही सीमित है) सिकुड़ रहा है। यह अब केवल प्रदेश के क्षेत्रफल का 5 प्रतिशत रह गया है, जबकि यह 20 प्रतिशत होना चाहिए। यहाँ तक कि 10 प्रतिशत जंगल का कवर भी गैर सेहतमंद वातावरण को जाहिर करता है।

दूसरा, संकट का मानवीय पहलू भी कम गम्भीर नहीं है। आबादी बढ़ रही है, गरीबी ज्यादा हो रही है, बेरोजगारी में बढ़ोतरी हो रही है, शिक्षा (खासतौर पर प्राईमरी स्तर पर), स्वास्थ्य सुविधाएँ और ढांचागत सुविधाएँ बुरी हालत में है। ग्रामीण इलाकों में शिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी, अज्ञानता, अन्धविश्वास आदि के कारण निराशा का वातावरण है। खेत मजदूरों और छोटे किसानों की हालत खराब हो रही है।

तीसरा, संकट का तृतीय पहलू यह है कि प्रदेश में कृषि एक फायदेमंद धंधा नहीं रही है। कृषि की पैदावार दर गिर रही है जबकि कृषि निवेश सामग्री की दरें लगातार बढ़ रही है। राज्य की प्रति व्यक्ति एवं कुल कृषि पैदावार दर राष्ट्रीय औसत से काफी कम है। कपास, गन्ना और मक्की की फसलों में कमी का रूझान है, गेहूँ और चावल उत्पादन में ठहराव है, गेहूँ-चावल फसली चक्र की वजह से प्रति एकड़ वास्तविक आमदनी (1981-82 के आधार से) नीचे आ गई है, देश में पंजाब के चावलों का आकर्षण (खासतौर से सरकारी तौर पर खरीदे गये चावल के गुणवत्ता नियमों के घटिया होने के कारण) पहले जैसा नहीं रहा है। पंजाब का किसान गेहूँ-चावल फसली चक्र में फंसा हुआ है, अत: उसको इस चक्र से निकलने का कोई रास्ता दिखाई नहीं दे रहा है, तेजी के साथ बढ़ रहा कर्ज उन्हें आत्महत्या की तरफ धकेल रहा है।

चतुर्थ, संकट की कृषिकारी हदें भी नजर आने लगी है। कृषि मुनाफे में गिरावट के कारण भूमि का किराया मूल्य घट गया है। परिवारों के बड़े आकार के कारण भूमि का बंटवारा भी हो रहा है। लगातार भूमि जोतों का घटता आकार उन्हें एक साधारण परिवार की औसत आवश्यकताओं को पूरा करने लायक उत्पादन करने के लिए अक्षम बना रहा है–इस प्रकार उन्हें अव्यवहारिक इकाई में बदल रहा है। वर्तमान में राज्य की ऐसी जोतों (4 एकड़ से कम क्षेत्र वाली) की कुल संख्या कुल भूमि जोत की लगभग दो तिहाई भाग बनती है। इसका अर्थ है, राज्य के दो तिहाई किसान सीमान्त और छोटे किसान हैं, जिनका जीवन निर्वाह कंगाली में हो रहा है। अगर इनमें कृषि मजदूरों (जिनमें अधिकतर गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बसर कर रहे हैं) की संख्या जोड़ दी जाए तो ये पंजाब में ग्रामीण आबादी का लगभग 90 प्रतिशत भाग बन जाते हैं।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि इस संकट का समूचा आर्थिक पहलू बहुत ही चिंताजनक है। राज्य में आम विकास की गति मंद हुई है। वार्षिक औसत दर में गिरावट

आई है। राज्य की आर्थिकता में असंतुलन है। राज्य की जीडीपी में ज्यादा हिस्सा कृषि का है। जबकि कृषि को इससे कोई ज्यादा लाभ नहीं पहुँच रहा है। बाकी राज्यों के मुकाबले में पंजाब के अन्दर कोई बड़े वर्णन योग्य केन्द्रीय प्रोजेक्ट नहीं है। पंजाब को मिलने वाली केन्द्रीय सहायता देश भर में सबसे कम है। देश के दूसरे भागों से कोई बड़ा निजी निवेश भी पंजाब में नहीं हुआ है। औद्योगिक पिछड़ेपन का मुख्य कारण पैसे की कमी है। छोटे उद्योगों की कमजोर कारगुजारी का एक कारण ऊंची बैंक ब्याज दर है। तथा शूगर उद्योग (जिसमें करीब 20 शूगर मिलें शामिल हैं) की काफी बुरी स्थिति है।

2. पंजाब कृषि संकट के निहित कारण

(A) अल्पकालीन कारण

उपर्युक्त संकट का अल्पकालीन कारण मौजूदा कारपोरेट एकाधिकारवादी रसायन आधारित कृषि तकनीक में निहित है। इस तकनीक का बुनियादी कृषि निवेश यानि उर्वरक, रोगनाशक एवं कीटनाशक अत्यधिक रासायनिक है जो एक तरफ मिट्टी में मौजूद जैविक पोषक तत्वों को नष्ट करता है एवं फसल समर्थक जीवों को समाप्त कर देता है, नतीजतन मिट्टी की गुणवत्ता में कमी आती है और अन्ततोगत्वा उसे बंजर भूमि में बदल देती है। तथा दूसरी तरफ पानी की अत्यधिक खपत के जरिए जल संसाधनों में कमी आती है। पंजाब में इस रासायनिक खेती की तकनीक के लागू हुए 40 सालों (1964-2004) में इस तकनीक ने कृषि के सभी मुख्य घटकों, यानि, पर्यावरणीय संसाधन, मानवीय स्वास्थ्य, फसल उत्पादकता, वित्तीय वृद्धि, कृषि ढांचा आदि को नुकसान पहुंचाया है। उन सभी देशों में जहां रसायन आधारित कृषि तकनीक का उपयोग किया गया है। वहां समान किस्म के नकारात्मक प्रभाव व्यवहार में दिखाई पड़ते हैं। रसायन आधारित कृषि तकनीक की अत्यधिक कारगुजारी ने 21वीं सदी के शुरू में ही कृषि को मृत्युशैया पर ला खड़ा किया है। फिर भी मौजूदा विश्व कारपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था के सभी उच्चस्थ नियंत्रणकर्ताओं द्वारा यह मानने के बजाए कि उनकी प्रतिपादित रासायनिक कृषि नीति की धारणाएँ एवं भूमिका समग्र रूप से नकारात्मक रही है, उल्टा इस वास्तविकता को छुपाने में अति उत्साह से लगे हुए हैं। और यह प्रचारित कर रहे हैं कि रासायनिक कृषि तकनीक की मॉजूदा खेती की सभी कमियां नई खोजी जा चुकी आनुवंशिक परिष्करण (जेनेटिक मोडिफिकेशन या जीएम) या प्रजनन परिवर्तन की तकनीक द्वारा ठीक कर दी जाएगी।

यह ध्यान देने योग्य है कि रासायनिक खेती की सम्पूर्ण वास्तुकला कृषि सम्बन्धित अगुवा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के साथ जुड़ी लोक-हितैषी संस्थाओं (राकफेलर फाउंडेशन, फोर्ड फाउंडेशन इत्यादि जैसी संस्थाएं) द्वारा सोची समझी गई तथा उत्पादित की गई, जिनका (बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का) शुरू से लेकर आज तक लगातार इस रासायनिक खेती की तकनीक पर एकाधिकार चला आ रहा है। समस्त संसार में कारपोरेट पूंजीवादी नेतृत्व वाली सरकारों ने अपने राष्ट्रीय कृषि क्षेत्रों एवं नीतियों में आधारशिला के रूप में इस रासायनिक खेती की तकनीक को जबसे इसका उद्भव हुआ है तब से इसे अपनाया है।

रासायनिक तकनीक की शुरूआत से ही कारपोरेट पूंजीवादी सरकार तथा व्यापारियों के नेता यह कहते और प्रचारित करते आ रहे हैं कि 20वीं शताब्दी की यह 'हरित क्रान्ति' है। वे इसे लगातार चरित्रिक करते रहे हैं कि मानवता को सदा के लिए भूख से मुक्त करेगी और हमेशा के लिए खाद्य सुरक्षा प्रदान करेगी। परन्तु ये सभी बड़बोले दावे धाराशाही हो

गये हैं। इस चमत्कारिक कृषि तकनीक के लागू होने के 40 साल बाद भी कृषि में दुनिया के सामने भयानक समस्याएँ मुंह बाये खड़ी हैं।

पंजाब कृषि संकट के पीछे अन्य बराबर महत्वता वाला कारण इसकी भूमि जोतों की अव्यवहारिक इकाई और अनुचित पद्धति में निहित है, जो इसकी कृषि वृद्धि और सामाजिक समता के रास्ते में बाधा डाल रही है।

पंजाब के कृषि संकट का एक पूरक कारण इसकी खेती में चावल गेहूँ चक्र वाली फसल पद्धति का रिवाज भी है। परन्तु अब रासायनिक खेती के सभी प्रचारक इस पूरक कारण को कृषि संकट के मूल कारण के तौर पर पेश कर रहे हैं। इसकी अप्रासंगिकता इस तथ्य में देखी जा सकती है कि एशिया, अफ्रीका, लैटिन अमेरिका और यूरोप के सभी फसली विविधता वाले कृषि क्षेत्रों में भी रासायनिक खेती के एक समान दुष्प्रभाव सामने आये हैं।

खेती के विकास का माध्यम यदि विभिन्न फसलें पैदा करने (विविधकरण) के कारण होता तो विविधकरण खेती वाले देशों और क्षेत्रों में रासायनिक खेती का प्रभाव पंजाब के कृषि अनुभव से पूर्णतया अलग होता।

तथापि, पंजाब की गेहूँ चावल फसल पद्धति की बड़ी जिम्मेदारी केन्द्र व राज्य सरकारों की है। केन्द्र की जिम्मेदारी इस तथ्य में निहित है कि कृषि उत्पादन की राष्ट्रीय वृद्धि दर को बढ़ाने में दयनीय असफलता के बाद केन्द्र सरकार ने अपने खाद्य भंडार की जरूरतों को पूरा करने के लिए पंजाब और हरियाणा की खेती पर विभिन्न कीमतों और बाजार प्रलोभनों के जरिए अतिरिक्त भार डालने का सरल रास्ता अपनाया। यद्यपि 1980 के शुरू से ही यह साफ होने लगा था कि पंजाब में गम्भीर कृषि संकट पैदा हो रहा है। सरकार के अपने कृषि विशेषज्ञों के अनुसार यह संकट गेहूँ-चावल फसल पद्धति चक्र का प्रभाव है, केन्द्र सरकार ने इस उभरते गम्भीर खतरे को पंजाब के लोगों से छुपाया तथा अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए पंजाब की खेती का दोहन जारी रखा। आज भी केन्द्र सरकार उसी रास्ते पर है और पंजाब के लोगों को इस बात के लिए प्रेरित नहीं कर रही है कि गेहूँ-चावल फसल चक्र के तरीके के स्थान पर अधिक लाभदायक तथा उचित फसल विविधता का रास्ता अपनाया जाए। राज्य सरकार इस मायने में जिम्मेदार रही है कि उसने पंजाबियों को इस खतरे की गम्भीरता के बारे मे सूचित नहीं किया और ना ही इस चुनौती से निपटने के लिए कोई कार्यक्रम बनाया तथा ना हीं पंजाब की खेती और उसके किसानों को बर्बाद होने से बचाने के लिए केन्द्र सरकार को समय रहते उचित कदम उठाने के लिए कहा।

अन्य सभी कारण जैसे संसाधनों और निवेश के उपयोग में कुशलता और निपुणता की कमी, कमजोर ढांचागत सुविधाएँ (जैसे बिजली, परिवहन, भंडारण इत्यादि), अपर्याप्त ऋण सेवाएँ, सूदखोरी की अधिक ब्याज दरें, अपर्याप्त फसल बीमा सेवा, भारत के कुल निर्यात में कृषि का न के बराबर हिस्सा, किसानों की आवश्यकताओं के अनुसार शोध में कमी, किसानों को आधुनिक खेती की तकनीक तथा बाजार की कीमतों के बारे में सूचना न मिलना, कृषि विपणन व्यवस्था का कमजोर होना, ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा में कमी, गरीबी, बेरोजगारी, पुराने पड़ चुके रीति रिवाज, इत्यादि कृषि के कुप्रबंध की अभिव्यक्तियां हैं।

(B) दीर्घकालीन कारण

पंजाब के कृषि संकट का दीर्घकालीन कारण भारत की मौजूदा कारपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था में निहित है, जो अपने विकास कार्यक्रम में पहली प्राथमिकता सूचना प्रौद्योगिकी, उद्योग, सेवा और ढाँचागत सुविधाओं को देती है, जबकि कृषि को तीसरे स्थान पर धकेलती है। पंजाब के किसानों के साथ सभी कृषिकारी मुद्दों–यानि, वित्त, कृषि उद्योग, कृषिकारी ढाँचागत सुविधाओं, निर्यात, अनुसन्धान, भूमि की छोटी होती जोतों की अनदेखी करना, निम्नतम समर्थन मूल्य, इत्यादि–पर निष्ठुर व्यवहार करती है तथा अब बेतहाशा कोशिश में है कि पतनशील कृषिकारी व्यवस्था को विभिन्न भ्रामक कदमों के माध्यम से कारपोरेट उद्यम में तब्दील कर दिया जाए।

पंजाब में कृषि संकट का हल

(A) अल्पकालीन हल

पंजाब के कृषि संकट का अल्पकालीन हल रासायनिक आधारित तकनीकी के साथ-साथ हालिया उभरी जी एम या ट्रांसजेनिक तकनीकी के स्थान पर जैविक तकनीकी (यानि, बीजों, खादों, पेस्टीसाइड्स, इनसैक्टीसाइड, इत्यादि मामलों में जैविक तकनीकी) को अपनाने में निहित है। 40 वर्ष लम्बे अनुभव के चलते रासायनिक आधारित कृषि तकनीक के नुकसानदायक परिणामों से पंजाब का किसान भली भांति अवगत हो चुका है। अब उन्हें आनुवंशिक परिवर्तित (जी.एम.) या ट्रांसजेनिक खेती के कितने घातक प्रभाव हैं इसके बारे में जानने की आवश्यकता है और दूसरी तरफ जैविक खेती के पर्यावरण मानव समर्थक स्वभाव को अच्छी तरह पहचानने की आवश्यकता है।

(अ) जी.एम. तकनीकी

जी.एम. तकनीकी के सम्बन्ध में, विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) ने कृषि क्षेत्र में दुनिया की कृषि समस्याओं के हल के लिए इसे बड़ी छलांग के रूप में मान्यता दी है। व्यापार बाजार, वित्तीय संस्थाओं, संयुक्त राष्ट्र एवं सभी राष्ट्रीय सरकारों ने इसका समर्थन किया है।

यह याद करना दिलचस्प रहेगा कि 40 साल पहले जब रसायन आधारित खेती की तकनीक सामने आई थी तब विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) एवं अन्य कृषि विशेषज्ञों ने इसकी प्रशंसा की थी। उस समय रासायनिक तकनीक को 20वीं शताब्दी की हरित क्रान्ति उद्घोषित किया गया था।

अब यह बिल्कुल स्पष्ट है कि इस रसायन आधारित तकनीक और इसके उत्पादों ने करीब करीब सभी पर्यावरणीय पहलुओं (जमीन, पानी, जैव विविधता, मौसम, जंगल आदि) तथा मानवीय स्वास्थ्य को भारी नुकसान पहुँचाया है, जबकि मुट्ठी भर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को ही एकमात्र लाभ पहुँचाया है जिनका इस तकनीक पर लगातार एकाधिकार चला आ रहा है और इनके उत्पादों (रासायनिक उर्वरक, रोगनाशक व कीटनाशक दवाइयों) पर दुनिया की करीब करीब सभी सरकारों से प्रतिवर्ष अरबों डालर का अनुदान प्राप्त किया जाता रहा है। पर्यावरणीय संसाधनों के क्षीण होने के तथ्य को सारी दुनिया के जाने माने सभी कृषि विशेषज्ञों (एफएओ सहित) ने अब स्वीकार कर लिया है।

अत्यधिक युक्तिसंगत वर्णन किये जाने योग्य तथ्य यह है कि किसी भी कृषि एजेन्सी या विशेषज्ञ ने उंगली उठाकर यह मांग नहीं की कि कम से कम प्रयोगशाला के स्तर पर

रासायनिक कृषि तकनीक को जांचा जाए। प्रत्येक ने चुपचाप एक नये कृषियुग के उग्रदूत के रूप में इसे स्वीकार कर लिया। परन्तु अब इसकी कारगुजारी के 40 वर्ष बाद कृषि को वर्तमान बहुपक्षीय संकट से उभारने के लिए इनमें से प्रत्येक एक नया सूत्र खोजने में लगे हुए हैं।

पुनः, जीएम या ट्रांसजेनिक (परा प्रजनन) का नया फार्मूला इन्हीं बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा दिया गया है जो इन्हीं कम्पनियों में कार्यरत कृषि विशेषज्ञों द्वारा की गई खोज पर आधारित है। परन्तु इस समय स्थिति पूर्व की स्थिति से बिल्कुल भिन्न है। यद्यपि विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) के और कुछ अन्य विशेषज्ञों ने विश्व की कृषि समस्याओं के हल के रूप में उपर्युक्त तकनीक का स्वागत करना शुरू किया है। परन्तु दुनिया का आधा वैज्ञानिक समुदाय तथा सभी पर्यावरणीय एवं मानववादी समुदायों ने जीएम तकनीक को यह चरित्रिक करते हुए इसका विरोध किया है कि यह पर्यावरण एवं मानव के लिए हानिकारक है। दुनिया के कारपोरेट समुदाय और उसके चहेतों की इच्छा है कि विश्व समुदाय नई कृषि तकनीक को रसायन आधारित तकनीक की तरह ही चुपचाप स्वीकार कर ले।

प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण मानता है कि कृषि विशेषज्ञों, पर्यावरणविदों और मानवाधिकार ग्रुपों, किसानों तथा अन्य रुचि रखने वाले लोगों द्वारा निम्न बिन्दुओं पर प्रत्येक देश के विभिन्न भागों और क्षेत्रों में विश्वव्यापी बहस चलाई जाए।

(क) क्या कृषि को बाजार आधारित या पर्यावरण-मानव आधारित होना चाहिए।

(ख) दुनिया के विभिन्न भागों और क्षेत्रों में मौजूद विश्वव्यापी भूख और कुपोषण का कारण कहां निहित है। दुनिया के लोगों का 1/5 भाग की भूख का कारण अपर्याप्त खाद्य उत्पादन है या अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था।

(ग) एक न्यायपूर्ण और उचित कृषि नीति को कोई कैसे परिभाषित करे।

(ब) जैविक कृषि

उपर्युक्त दृष्टिकोण मानता है कि जैविक खेती एक ऐसी उत्पादन पद्धति का प्रतिनिधित्व करती है जिसमें एक तरफ सभी पर्यावरणीय संसाधनों की उचित सुरक्षा और उसका संवर्द्धन किया जाता है और दूसरी तरफ मानवीय हितों की सेवा करती है और उन्हें पूरा करती है। जैविक खेती का मुख्य लक्षण निम्नलिखित हो सकते हैं।

(i) परिभाषा

सरल परिभाषा के रूप में जैविक खेती कृषि उत्पादन की एक व्यवस्था है जो सभी कृत्रिम निवेशों के उपयोग को प्रतिबंधित करता है, मिट्टी को उपजाऊबनाता है तथा फसल चक्र के विविधिकरण को आवश्यक बनाता है एवं बहु फसल, घासचारा एवं फसल व पशुओं के बीच पूरक एकता की तकनीक अपनाता है। यह कृषि जलवायु व्यवस्था, स्वास्थ्य, जैव विविधता सहित जैविक चक्रों एवं मिट्टी की जैविक गतिविधि को संवर्द्धित एवं विकसित करता है जैविक खेती का उचित प्रबंध जल प्रदूषण को घटाता है या समाप्त करता है तथा खेत में पानी और मिट्टी को संरक्षित करने में मदद करता है।

कुछ विकसित देशों में मसलन जर्मनी, फ्रांस ने जल प्रदूषण की समस्या का हल करने के रूप में जैविक तकनीक को काम में लेने के लिए किसानों पर दबाव डाला है या अनुदान का सहारा लिया है।

बहुत से देशों के कृषि क्षेत्र में जैविक खेती का महत्व बढ़ता जा रहा है, बिना इस पर ध्यान दिए कि उनका विकास स्तर क्या है, तथापि अभी तक जैविक खेती एक छोटा उद्योग ही है। आस्ट्रिया और स्वीट्जरलैण्ड में जैविक खेती का प्रतिनिधित्व खाद्य व्यवस्था में 10 प्रतिशत है जबकि अमेरिका, फ्रांस, जापान व सिंगापुर में इसकी वृद्धि दर 20 प्रतिशत सालाना से अधिक हो चुकी है।

विकासशील दुनिया के लिए जैविक उत्पादों की मांग ने नये निर्यात अवसरों को भी पैदा किया है। विभिन्न खाद्य पदार्थों की साल भर माँग बनी रहने से किसी भी देश के लिए यह असम्भव हो गया है कि वह अपनी सभी जैविक खाद्य की जरूरतों को घरेलू उत्पादों से पूर्ण कर सके। बहुत से विकासशील देशों ने जैविक उत्पादों के लिए इन आकर्षक बाजारों की जरूरतों को पूरा करना शुरू कर दिया है। मसलन, यूरोप के शिशु खाद्य उद्योगों की पूर्ति के लिए उष्णकटिबंधीय फल, दक्षिण अफ्रीका के लिए जिम्बाब्वे की जड़ी बूटियां, यूरोपीय समुदाय के लिए अफ्रीकी कपास, नीदरलैण्ड के लिए चीन की चाय और जापान के लिए चीन की सोयाबीन निर्यात होती है।

(ii) शुरूआती दौर

तार्किक तौर पर किसान यह अनुभव करते हैं कि कृत्रिम निवेशों को नकारने से एवं उनकी खेती को जैविक उत्पादन में बदलने से उन्हें उत्पादकता में कुछ नुकसान उठाना पड़ता है। पूर्णतया जैविक गतिविधि स्थापित करने से पहले (मसलन, लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में वद्धि, नाईट्रोजन पोषित गांठदार जड़ें) सामान्य तौर पर रोगाणुओं को समाप्त करने एवं उपजाऊपन की समस्या बनी रहेगी। कहीं कहीं जैविक उत्पादन को सम्भव बनाने के लिए जलवायु व्यवस्था पुन: स्थापित करने में सालों लग सकते हैं। ऐसे मामलों में शुरूआत में अन्य टिकाऊ तरीकों–जो कृत्रिम रसायनों के न्यायिक उपयोग की इजाजत देते हैं, अधिक अनुकूल रहेंगे। एक रणनीति के अनुसार किस्तों में खेतों को जैविक उत्पादन के लिए तब्दील किया जा सकता है ताकि सम्पूर्ण खेती को दाव पर न लगाना पड़े। अधिकांश अध्ययनों ने पाया है कि परम्परागत खेती की बनिस्पत जैविक खेती के लिए काफी मात्रा में श्रम निवेश की जरूरत है। इसलिए जैविक खेती में विशेष तौर पर पाई जाने वाली फसल विविधता एवं उनकी विभिन्न बोवाई तथा कटाई समय सारणी श्रम की मांग का अधिक समान वितरण कर सकती है जिससे रोजगार को स्थायित्व प्रदान करने में मदद मिल सकती है। जैसा कि सभी कृषि व्यवस्थाओं में है, उत्पादन में विविधता आय के अवसरों को बढ़ा देती है तथा परिवार के भोजन में स्वास्थ्य रक्षक खनिज एवं विटामिन की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है जैसा कि फलों के मामले में है। यह फसलों के बड़े स्तर पर होने वाले नुकसान के जोखिम को भी कम करता है।

तथापि, जैविक खेती वाले किसानों को भारी अनिश्चितता का सामना है। उत्तरी अमेरिका के 73 प्रतिशत जैविक खेती करने वाले किसानों के अनुसार सूचनाओं का अभाव जैविक तब्दीली में एक बड़ी बाधा है। विस्तार अधिकारी जैविक तरीकों के लिए मुश्किल से ही पर्याप्त प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं तथा अध्ययन यह बताते हैं कि वे कभी कभी किसानों को जैविक खेती करने के लिए हतोत्साहित भी करते हैं और आगे, विकासशील देशों में संस्थागत समर्थन नहीं के बराबर है। सम्पूर्ण उत्पादन के दौरान किसानों को मदद देने योग्य पेशेवर संस्थाएँ, उत्पादन के बाद एवं विपणन प्रक्रिया बहुत से विकासशील देशों में अस्तित्व में ही नहीं है। ऐसे हालात में यह बहुत ही मुश्किल है कि काश्तकार किसान

आवश्यक श्रम निवेश करे एवं परिवर्तन काल की कठिनाइयों का भार उठाए, जबकि उसे यह गारण्टी ना हो कि जब जैविक उत्पादन के लाभ मिलने लगेंगे तब बाद के सालों में उसे भूमि में काश्तकारी से हटाया नहीं जाएगा।

(iii) प्रभावकारी लाभांश

विशेष तौर पर, जैविक निर्यात प्रभावशाली लाभांश सहित बिकते हैं, प्राय: समान तरह के गैर जैविक उत्पादों की तुलना में 20 प्रतिशत अधिक कीमत पर जैविक उत्पाद बिकते हैं। फिर भी अन्ततोगत्वा जैविक उत्पादों का लाभ बदलता रहता है तथा कुछ अध्ययनों का मूल्यांकन है कि इसका लाभ दीर्घ काल में मिलता है। तथापि उचित हालात में जैविक खेती से बाजार में मिलने वाले लाभ के बल पर परिवार की आय बढ़ाकर स्थानीय खाद्य सुरक्षा में योगदान मिल सकता है। फिर भी, इस आकर्षक बाजार में प्रवेश पाना इतना आसान नहीं है। किसान एवं कृषि व्यापारी अपने उत्पादों को विकसित देशों में बेचना चाहते हैं उनके लिए आम तौर पर आवश्यक हो जाता है कि वे जैविक प्रमाण पत्र एजेन्सी को किराये पर ले और प्रतिवर्ष जाँच के द्वारा यह पुष्ट करवायें कि इसका उत्पाद विभिन्न व्यापारिक साझेदारों द्वारा स्थापित मानदंडों के अनुकूल है।

(iv) पर्यावरणीय उपलब्धियाँ

अधिकांश जैविक किसानों का प्रेरणा स्रोत आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति के अलावा भी है–इनका उद्देश्य जमीन, पशु एवं पौधों में अन्तरक्रिया को बढ़ाना, प्राकृतिक पोषण एवं ऊर्जा प्रवाह को संरक्षित करना तथा जैव विविधता को विकसित करना है ये सभी बिंदु टिकाऊ खेती के लिए योगदान करने वाले हैं।

इनमें जल-जमीन में क्षरण, ठोसपन, खारेपन एवं गिरावट के अन्य कारणों से मुकाबला करने के लिए बहुत सी जल एवं मिट्टी की सुरक्षा एवं संरक्षण की तकनीकों को अपनाया जाता है। इनके द्वारा फसल चक्र, जैविक खाद एवं घास के उपयोग से मिट्टी की संरचना का विकास होता है तथा मिट्टी में हृष्ट-पुष्ट सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या बढ़ती है। मिश्रित एवं कड़ीबद्ध फसल बोवाई से अधिक समय तक लगातार मिट्टी ढकी रहती है और इस प्रकार वर्षा, हवा और सूर्य से क्षरण के लिए मिट्टी का नंगा रहना बहुत कम समय के लिए ही हो पाता है।

जैविक किसान कृत्रिम (रासायनिक) रोग नाशकों की बनिस्पत प्राकृतिक रोगाणु नियंत्रकों मसलन, जैविक नियंत्रक गुण वाले पौधों का भी उपयोग करते हैं। कृत्रिम रोग नाशकों का जब गलत उपयोग होता है तब लाभदायक जीवों को भी ये समाप्त कर देते हैं, रोगाणु प्रतिरोध क्षमता घटा देते हैं और प्राय: जल जमीन को प्रदूषित कर देते हैं। जहरीले कृत्रिम रोगाणुनाशकों जो अनुमानत: प्रतिवर्ष तीस लाख लोगों को जहर से ग्रसित करते हैं–का उपयोग कम करने से किसान परिवारों का स्वास्थ्य अच्छा होने की तरफ बढेगा। कृत्रिम नाइट्रोजन उर्वरकों (रासायनिक खादों) का उपयोग समाप्त करने से पानी में नाईट्रोजन प्रदूषण का जोखिम काफी हद तक कम हो जाएगा जबकि फसल चक्र परिवर्तन का रोगाणुओं और बिमारियों को नियंत्रित करने एवं उपजाऊपन को बनाए रखने वाला विस्तृत रूप से काम आने वाला तरीका पहले से चला आ रहा है। अधिकांश प्रमाणीकरण के कार्यक्रम खनिज उर्वरकों के उपयोग पर रोक लगाते हैं जबकि खेतों में जैविक खाद पैदा करने में मदद करने के लिए यह एक आवश्यक सहायक है। फिर भी खेत से बाहर के

प्राकृतिक एवं जैविक उर्वरकों मसलन, रॉक फास्फेट, पोटाश, गुवानों, समुद्री शैवाल, बूचड़खाने के उप उत्पाद, जमीनी चूना, पत्थर, लकड़ी की राख का भी उपयोग किया जाता है।

अन्त में फसल चक्र खाद्य फसलों की विविधता, चारा एवं कम प्रयुक्त पौधों को संवर्द्धित करता है जो कुल मिलाकर खेत में उत्पादन और उपजाऊपन को विकसित करते हैं, इसके अलावा खेत में पौधों के आनुवंशिक संसाधनों को संरक्षित करने में मदद दे सकता है। इस व्यवस्था में पशुओं को जोड़ने से मांस, अण्डे, दूध उत्पाद, इसी तरह भारवाही पशु शक्ति के जरिये आय में बढोतरी होती है। इस व्यवस्था में तीन फसलें एवं खेत पर वन उपज को जोड़ने से छाया मिलेगी एवं वायु प्रवाह में रुकावट उपलब्ध होगी, जबकि भोजन, आय, ईंधन और लकड़ी भी उपलब्ध होगी। जैविक कृषि की विविधता में कृषि व मछली पालन का जुड़ाव भी हो सकता है।

(v) जैविक खेती–हजारों वर्षों की परम्परागत खेती

वास्तव में जैविक खेती कोई नया आविष्कार नहीं है यह परम्परागत कृषि उत्पादन का तरीका है जो पिछले 10 हजार सालों के व्यवहार से वर्तमान स्तर तक विकसित हुआ है। 40 साल पहले यह दुनिया में प्रभुत्वकारी कृषि उत्पादन की व्यवस्था थी। फिलहाल कारपोरेट और सत्ताधारियों को जैविक खेती रास नहीं आ रही है।

(B) पंजाबी किसानों के सशक्तिकरण के आधार पर पंजाब कृषि संकट का दीर्घकालीन हल

उपर्युक्त तथ्य बताते हैं कि दो वैकल्पिक तकनीकी–जीएम और जैविक में से कोई भी तत्काल लागू नहीं की जा सकती है। जीएम तकनीकी को लागू करना सम्भव नहीं है क्योंकि विश्व जनमत और खासकर वैज्ञानिक समुदाय की राय इस पर विभाजित है। और जैविक तकनीकी के सामने बाधा यह आ रही है कि रासायनिक आधारित खेती को जैविक खेती में बदलने में लम्बा समय लगेगा। समस्या का हल दीर्घकालिक प्रासंगिक रास्ते से किया जा सकता है।

हमारे नजरिये से, पंजाब कृषि संकट से बाहर निकलने का तात्कालिक के साथ-साथ दीर्घकालिक रास्ता हमें निम्नलिखित फार्मूला प्रदान कर सकता है।

पंजाब के कृषि संकट का दीर्घकालीन हल कृषि के लोक-पर्यावरण नेतृत्व सहकारीकरण में निहित है, जो दो चरणों से गठित हो, उन दो चरणों में अन्तर यह होगा कि जहाँ प्रथम चरण में किसी सहकारी फार्म के विभिन्न सदस्यों के शेयर (अंश) उनकी अपनी भूमि की जोत के आधार पर तय किये जाएँ, जबकि दूसरे चरण में आय का उसूल समता (जिसमें उच्चतम आय का अन्तर 1:2 के अनुपात में हो) पर आधारित होगा, न कि बराबरी पर।

(क) पंजाब का कृषि क्षेत्र स्वाभाविकतया दो अन्तरसंबंधित पहलुओं से गठित है, यानि, कृषक समुदाय के मानवीय सामाजिक पहलू और कृषि की पैदावार प्रणाली से बना हुआ है। दोनों अंतरसंबंधित है। एक के बिना दूसरे का अध्ययन एक वास्तविक तस्वीर पेश नहीं करता।

(ख) पंजाब के किसान समुदाय का सामाजिक संगठन पर्यावरण और मानव समर्थक सहकारी उसूलों पर आधारित होना चाहिए, जिसके अनुसार सभी विद्यमान कृषि इकाइयों

पर्यावरण एवं मानव नेतृत्व सहकारी आधार पर खेती की प्रक्रिया में अपनी-अपनी ईकाई (खेती) पर मालिकाना हक में कोई तब्दीली किये बगैर इकट्ठी व शामिल की जा सकती है।

(ग) पंजाब कृषि की पद्धति को विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रों (जोन्स) को विकसित करने के आधार पर संगठित किया जाना चाहिए। जिनमें से प्रत्येक जोन स्वाभाविक तौर पर एक या दो विशिष्ट फसलों के उत्पादन के अनुकूल होता है। मिट्टी की प्रकृति के खिलाफ थोपी गई फसल की वर्तमान प्रणाली में कम फसल और घटिया गुणवत्ता वाली फसल होना स्वाभाविक है। ऐसे अधिकतर जोन्स या क्षेत्रों को कृषि और बागवानी विभागों के रिकार्डों में पहले से ही चिह्नित कर रखा है। बाकी बचे क्षेत्रों को कृषि विशेषज्ञों से अन्तरक्रिया करके एवं स्थानीय किसानों के अनुभवों के आधार पर तत्काल चिह्नित किया जा सकता है। इस तरह की पद्धति गुणवत्ता और उत्पादकता के रूप में उत्तम उपलब्धि हासिल करेगी।

(घ) प्रत्येक कृषि जलवायु क्षेत्र (जोन) में एक विशिष्ट फसल सहकारी कृषि सोसायटी बनाई जाए जिसमें सभी किसानों (छोटे और बड़े भूमि मालिकों) को निचली इकाई से लेकर ऊपर की इकाई तक में शामिल किया जाए। उनमें से प्रत्येक किसान अपनी-अपनी जोत (खेती) के मुताबिक अपना हिस्सा प्राप्त करेगा।

(ड़) प्रत्येक क्षेत्रीय सहकारी कृषि सोसायटी क्षेत्र से सम्बन्धित कच्चे माल या एक अथवा दो विशिष्ट फसलों में अतिरिक्त मूल्य वृद्धि के लिए इसके कृषि जलवायु जोन में एक प्रासंगिक कृषि प्रोसेसिंग उद्योग की स्थापना करें। यह आवश्यक मात्रा की अच्छी गुणवत्ता और कम कीमत उत्पाद को कम से कम परिवहन खर्च पर मुहैया करवायेगी। कृषि उद्योग सम्बन्धित जोन की आर्थिकता को मजबूती देगा और बेरोजगारों को रोजगार प्रदान करेगा।

(च) प्रत्येक विशिष्ट फसल सहकारी कृषि सोसायटी संबंधित जोन में अपने उत्पाद को सुरक्षित रखने के लिए शीत-घरों के साथ बाजार का बुनियादी ढांचा विकसित करे ताकि भारत के अन्य भागों और विदेशों के खरीददारों को आकर्षित किया जा सके।

(छ) प्रत्येक फसल विशिष्ट जोनल सहकारी कृषि सोसायटी को उचित समय पर अपने अतिरिक्त उत्पाद को बेचने एवं अपने आवश्यक खेती निवेश को खरीदने के लिए अपना एक किसान केन्द्रित बाजार तंत्र (यानि प्रबंध प्रणाली) की स्थापना करनी चाहिए। इन दोनों तरह के आदान प्रदान मे यह इसकी सौदाकारी ताकत को बढायेगी और सम्बन्धित फार्म की लाभ सीमा में बढोतरी करेगी। प्रत्येक बाजार तंत्र अपने बाजार अनुसंधान और जाँच पड़ताल विभाग की स्थापना करेगा।

(ज) प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रीय सहकारी कृषि सोसायटी कानून के तौर पर विभिन्न खेती कार्यों की आवश्यकतानुसार अपने ही क्षेत्र के अन्दर के मजदूरों को रोजगार देगी। इसके अलावा, यह सरकार से अपील करेगी कि कृषि मजदूरों की निम्नलिखित न्यायपूर्ण मांगों को पूरा करे (क) प्रत्येक कृषि कामगार के लिए 50,000 रुपये बीमा राशि जमा की जाए, जिसमें सम्बन्धित राज्य व केन्द्र सरकार बराबर हिस्सा प्रदान करें, (ख) कृषि मजूदरों के लिए बुढापा पेंशन योजना शुरू की जाए, (ग) ग्रामीण गृह निर्माण योजना के तहत भूमिहीनों के लिए कार्यस्थल पर घर की व्यवस्था की जाए और (घ) पीने के पानी, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं की सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जाए।

(झ) प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रीय (जोनल) सहकारी कृषि सोसायटी ग्रामीण ढांचे के जनवादीकरण के लिए निम्नलिखित कदम उठाने की सरकार से अपील करे।

* ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और ढांचागत संरचना का विकास किया जाए।

* ग्रामीण जनता के ज्ञान और दक्षता को विकसित किया जाए।

* विशिष्ट फसल जोनल कृषि सहकारी सोसायटियों के लिए कारगर कीमत नीति, उचित राष्ट्रीय बाजार, दीर्घावधि ऋण, निर्यात सुविधाएं, इत्यादि सुनिश्चित की जाएं।

* भिन्न-भिन्न ग्रामीण विकास योजनाओं जैसे आई आर डी पी, जवाहर रोजगार योजना, इन्दिरा आवास योजना, आदि के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में खर्च होने वाले फंड के उचित उपयोग के लिए गाँव की चुनिन्दा कमेटियों को उस फंड की निगरानी करने के लिए अधिकृत किया जाए।

* नौकरशाही कानून और इसकी नीति पर आधारित आज के सहकारी आन्दोलन का लोक-पर्यावरण निर्देशित कानून और इसकी नीति के द्वारा पूर्णतया जनवादीकरण किया जाए।

* महिलाओं को जमीन सहित अपने पति की समस्त जायदाद में सह-मालिक बनाना और उन्हें सभी चुनावी संस्थाओं में 50 प्रतिशत आरक्षण देना।

* हर पंचायत (इसके सभी सदस्यों) को हर 6 महीने बाद (या साल में दो बार) अपने हलके का दौरा करने और अपने वोटरों की आम सभा के सामने 6 महिने का रिकार्ड बहस और टिप्पणियों के लिए पेश करने की कानूनी जिम्मेदारी निश्चित करके वोटरों के आगे जवाबदेह बनाना।

(ञ) प्रत्येक विशिष्ट फसल जोनल सहकारी सोसायटी सरकार से एक व्यावसायिक कमेटी के गठन की अपील करे जिसमें जोनल विशेषज्ञ, जोनल फसल वैज्ञानिक, किसानों के प्रतिनिधि तथा बाजार विभाग के प्रतिनिधि शामिल हो। कमेटी विशिष्ट फसल की समस्याओं पर विचार विमर्श के लिए जरूरत के अनुसार मीटिंग बुलाती रहे। क्षेत्र विशेष-फसल विशेषज्ञों की कमेटी सम्बन्धित विशिष्ट फसल की समस्याओं का हल निकालने में अधिक सक्षम होगी।

(ट) प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रीय सहकारी सोसायटी केन्द्र और राज्य सरकार से अपील करे कि वे कृषि क्षेत्र के लिए अपने-अपने बजट विनियोजन में बढोतरी करे।

(ठ) पंजाब खेतीबाड़ी को मानव और पर्यावरण समर्थक बनाने के लिए प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रीय सहकारी सोसायटी शुरूआत में 2 तरह की तकनीकी–जैविक और एकीकृत तकनीक (यानि एक ऐसी तकनीक जो जैविक तकनीक और रसायन आधारित तकनीक दोनों का उपयोग करे)–के आधार पर खेती की जाए। बाद के दौर में क्षेत्र के एक हिस्से में जैविक आधार पर खेती की जाएगी और क्षेत्र के दूसरे भाग में एकीकृत तकनीक का रास्ता अपनाया जाएगा।

(ड) जल उपयोग क्षमता को अधिकतम करने के लिए, जल निकासी/जल पुनरभरण अनुपात को उचित स्तर पर कायम रखा जाए। सभी पर्यावरणीय संसाधनों–यानि, हवा, पानी, भूमि, जैव विविधता और जंगलों के संवर्द्धन के लिए हर तरह के प्रयास किये जाए।

(ढ) इसकी विशिष्ट फसल के बाद प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रीय सहकारी सोसायटी को डेयरी विकास को हाथ में लेना चाहिए जो इसकी अगली सबसे महत्वपूर्ण गतिविधि होगी। दूध बेचने के अलावा यह इसकी प्रोसेसिंग और दूध व दुग्ध उत्पाद के निर्यात में संलग्न होगा। डेयरी उद्योग के साथ-साथ सहायक स्कीमों, जैसे मधुमक्खी पालन, मछली पालन, गन्ने से खाण्डसारी और गुड़ बनाना, शुष्क क्षेत्रों में कृषि जंगलात, तेल और दवा उपयोगी पौधों (जैसे सनाय, गुग्गल, ईसबगोल, मेहन्दी, इत्यादि) और पड़त भूमि में भेड़पालन (उदाहरणतया राजस्थान), इत्यादि को तत्काल लागू किया जाए। इस प्रकार कृषक की अल्प आमदनी को बढ़ाने में इन्हें सहायक बनाया जाए।

(ण) पंजाब में फसल नष्ट होने की स्थिति में किसान समुदाय के कुछ निम्नतम आय के स्तर को सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक सहकारी कृषि सोसायटी को सरकार से मांग करनी चाहिए कि वह प्रभावी फसल बीमा योजना लागू करे।

(त) विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) द्वारा सभी तरह की अस्वीकृत यानि, गैर कानूनी कृषि सब्सिडी या वित्तीय स्वीकृति (जैसा कि अमेरिका और यूरोपीय समुदाय द्वारा किया जाता है) को बंद करके विश्व व्यापार के लिए एक समतल (सबके लिए समान) व्यापार मैदान तैयार करना। पंजाब की सभी सहकारी कृषि सोसायटियों को भारत के साथ-साथ विश्व भर में उचित व्यापार के पक्ष में खड़े रहना चाहिए।

(थ) ठेका खेती तरीकाकार अल्प विकसित देशों की खेती के निगमीकरण के लिए कारपोरेट पूंजीवादी साधन मात्र है। इस समझ के साथ अगर किसी सहकारी कृषि सोसायटी को ऐसे किसी ठेके में लाभ नजर आता है तो ऐसे सौदे में हाथ डालने में कोई हानि नहीं है, बशर्ते कि 2 सावधानी भरे कदम साथ-साथ उठाये जाए। एक कदम है कि ऐसे ठेके की जाँच परख कानूनी विशेषज्ञ द्वारा करवाई जाए। और दूसरा कि राज्य ऐसे ठेके को उचित और न्यायिक ढंग से लागू करने का दायित्व लेता है या नहीं।

(द) कृषि की अति महत्वपूर्ण स्थिति (जो एक तरफ मानव भोजन और स्वास्थ्य से संबंधित है और दूसरी तरफ सभी पर्यावरणीय संसाधनों, यानि, भूमि, पानी, मौसम, जैव-विविधता, जंगल, इत्यादि के उचित विकास से जुड़ी है) के मद्देनजर पंजाब की सभी सहकारी कृषि सोसायटियों को राज्य व केन्द्र सरकार से भारत के विकास मॉडल में जैविक-निर्देशित कृषि को–निवेश, ग्रामीण ऋण, कम लाभांश पर फसल बीमा, निर्यात, प्रासंगिक तकनीकी, जैव बीजों और जैव-इनपुट, भूमि सुधार, इत्यादि के मामले में–प्रथम प्राथमिकता देने की अपील की जानी चाहिए।

(ध)अन्तिम, लेकिन महत्वपूर्ण, भारतीय किसान की गम्भीर ऋणग्रस्तता के सवाल के मद्देनजर, जिसके कारण भारत में 10 हजार किसान आत्महत्या कर चुके हैं, पंजाब की सभी सहकारी कृषि सोसायटियों की तरफ से राज्य एवं केन्द्र सरकारों से अपील की जानी चाहिए कि वह नीचे लिखी 3 मांगों को पूरा करे–(i) सन् 2006 से पहले के सभी ऋण जो भारत में रहने वाले किसानों (ग्रामीण भूमिहीन सहित) पर बकाया है, चाहे वे संस्थागत है या गैर संस्थागत, उन्हें माफ किये जाए। (ii) किसानों को सस्ता ऋण प्रदान करने के लिए प्रावधान तैयार करना, जिसमें सम्पूर्ण संस्थागत (सरकारी या अर्द्ध सरकारी) ऋण का 30 प्रतिशत किसानों को तथा 10 प्रतिशत ग्रामीण भूमिहीनों और शहरी गरीबों को दिया जाए, जबकि सभी गैर संस्थागत ऋण प्रतिबंधित किये जाए, और (iii) भारत में सहकारी आधार पर कृषि की पुनरसंरचना की जाए (जो भारत में विद्यमान भूमि जोतों में

विघ्न नहीं डालेगा और गुणवत्ता, उत्पादकता और लाभदायकता के क्षेत्र में कारपोरेट खेती की तुलना में अधिक श्रेष्ठ सिद्ध होगी, जबकि कारपोरेट खेती छोटे व बड़े सभी किसानों को अपनी भूमि से बेदखल कर देगी और उन्हें बेरोजगार कामगार समूह में तब्दील कर देगी)। आगे, यह सहकारी आधारित खेती, सोवियत सामुदायिक खेती (जिसमें कामगारों को ट्रेड यूनियन अधिकारों तक से भी वंचित कर दिया गया था) के भी ठीक उलट जनवादी समानता और सर्जनात्मक उसूलों की जीवंतता स्थापित करेगी।

आगे के कार्य

उपर्युक्त वर्णित प्रोग्राम को व्यवहार में लागू करने के लिए निम्नलिखित तीन बिन्दुओं की पूर्ति करना अति आवश्यक है।

एक बिन्दु, लोगों में, खासकर किसानों के बीच जागृति पैदा करना है कि यह प्रोग्राम कैसे पंजाब की कृषि में विद्यमान संकट का एक उचित और वास्तविक प्रत्युत्तर की नुमाइंदगी करता है और हमें व्यवहार में लागू करने के लिए हमसे संगठित होने की मांग करता है।

दूसरा बिन्दु, पंजाब कृषि के सम्बन्ध में ऊपर वर्णित प्रोग्राम के आधार पर पंजाब के सभी किसान संगठनों को सहमत और प्रोत्साहित करके किसानों की एक ही यूनियन का गठन करना। और उसके बाद इसको लागू करने और धरातल पर उतारने के लिए कार्य योजना तैयार करना।

तीसरा बिन्दु, पंजाब में आने वाले चुनावों में एक उद्देश्यपूर्ण और प्रभावी भूमिका अदा करना है। जिसका उद्देश्य विधान सभा में सहकारी खेती मॉडल के समर्थकों को अधिक संख्या में पहुँचाना है। और इसका प्रभावी पक्ष उन सभी को एक समूह या लॉबी में संगठित करने में निहित है, फिर चाहे वे किसी भी पार्टी या व्यक्ति से जुड़े हुए हो।

वर्तमान कॉरपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था को बदलने की सामाजिक आवश्यकता

मानव समाज में कृषि को उचित स्थान दिलाने के लिए यह आवश्यक है कि पूंजी (यानि, धन और सम्पत्ति) निर्देशित कॉरपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था और इसके दोगलेपन की शैली (यानि कहना कुछ और करना कुछ) वाली व्यवस्था को बदलकर और उसके स्थान पर प्रकृति-मानव निर्देशित सामाजिक व्यवस्था कायम करना, जिसकी दो सर्वोच्च प्राथमिकताएँ यानि, पर्यावरण और मानव है तथा जो पाँच मूलभूत सिद्धान्तों यानि, पर्यावरण संवर्द्धन, उचित समानता (यानि कारपोरेट पूंजीवादी राजनीतिक पार्टियों और व्यापारिक घरानों के स्थान पर जनता का सशक्तिकरण करना, प्रत्येक वंचित और गरीब व्यक्ति की सामाजिक सुरक्षा करना तथा आमदनी के बेतुके फर्क को 1:5 के तर्कसंगत फर्क की सीमा में लाना), उत्पादकता (या वृद्धि दर), जनता के नेतृत्व वाले जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता की पालना करती है। और जिसमें कृषि–जो एक तरफ मानव के भोजन एवं स्वास्थ्य से जुड़ी है और दूसरी तरफ सभी पर्यावरणीय संसाधनों, यानि, भूमि, जल, जलवायु, जैव विविधता, जंगलों के उचित विकास से सम्बन्ध रखती है–को अधिकतम महत्वपूर्ण स्थान पर स्वीकार करते हुए सामाजिक विकास मॉडल में इसे प्रथम स्थान दिया जाए। 01.03.06

* * * * *

विश्व कृषि और आगे का मार्ग

(1)

विश्व कृषि की अवधारणा न तो संहिताबद्ध है और न ही सुपरिभाषित धारणा है। यह इसलिए है क्योंकि आज विश्व कृषि एक ही इकाई के रूप में अस्तित्व में नहीं है और यह किसी एक केन्द्र के तहत प्रबन्धित नहीं है। वास्तव में आज यह विद्यमान सभी राष्ट्रीय राज्यों में कृषि की भिन्न-भिन्न राष्ट्रीय इकाइयों के एक समूह के रूप में नजर आती है। हालांकि, संयुक्त राष्ट्र ने अपने उद्भव से ही खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ ए ओ) सहित कई विशिष्ट एजेन्सियों (जैसे आई एल ओ, डब्ल्यू एच ओ, यूनेस्को, इत्यादि) की स्थापना की है। स्पष्टतया, एफ ए ओ को विश्व कृषि क्षेत्र के विभिन्न आयामों में सहायता देने और अगुवाई करने के लिए निर्मित किया गया था। परन्तु पिछले 60 वर्ष का इतिहास दर्शाता है कि यह विभिन्न विश्व कृषि समस्याओं को हल करने में सहायक या अगुवाई की भूमिका अदा करने में बुरी तरह असफल हो चुका है।

(A)

1945 में दूसरे विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद मुख्य युद्ध प्रभावित क्षेत्रों–जैसे सम्पूर्ण एशिया और यूरोपीय महाद्वीप, मध्य-पूर्व का पूर्ण भाग तथा अफ्रीका का कुछ क्षेत्र–जिनमें कृषि ढाँचे को गंभीर क्षति पहुँची थी, उन्हें तकनीकी और वित्तीय सहायता की आवश्यकता थी। यह सही है कि उस समय खाद्य एवं कृषि संगठन की मात्र शुरूआत भर थी, फिर भी उस अवस्था में उचित कृषि सलाह देना, इसकी क्षमता से परे नहीं था। यूरोप-अमेरिका की 13 अरब डालर मार्शल योजना के माध्यम से पुन: बहाल हो सका और जापान उस समय के शासक अमेरिकी सैनिक-प्रशासन द्वारा बचाया जा सका, परन्तु एशिया, मध्य-पूर्व और अफ्रीका के भागों में गरीबी और भूखमरी ने भारी संताप मचाया।

(B)

अगला अवसर 1960-70 के दशक में तब आया जब उपनिवेशक व्यवस्था समाप्त हुई और एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के बहुत से नव-स्वतन्त्र देश उभरे, जिन्हें अपने सामन्ती सह उपनिवेशी कृषि ढाँचे को संगठित करने का कोई अनुभव हासिल नहीं था। ऐसे में जबकि खाद्य एवं कृषि संगठन ने पहले की तरह रहना मुनासिब समझा, तब नव-उत्थान सामन्त विरोधी परन्तु कृषक-खेतीहर आधारित कृषि मॉडल के रूप में रास्ता सामने आया जिसका अनुसरण साम्यवादियों एवं निर्गुट आन्दोलनकारियों ने किया।

(C)

तथापि, विभिन्न कृषि मुद्दों पर खाद्य एवं कृषि संगठन ने कभी भी कारपोरेट पूँजीवादी समर्थक रूझान रखने की प्रवृत्ति को प्रकट करने में कभी भी हिचकिचाहट नहीं की। यह इनकी विभिन्न सैद्धान्तिक स्थापनाओं एवं व्यवहार से प्रमाणित होता है। उदाहरणार्थ : इसके द्वारा प्रस्तावित ढाँचागत कार्यक्रम शुरू ही इस दृष्टिकोण को प्रतिपादित करते हुए होता है कि कृषि एवं खाद्य संगठन (एफ ए ओ) 'कारपोरेट प्रबन्ध' को मान्यता देता है। दुनिया का अनुभव यह दर्शाता है कि कारपोरेट प्रबन्ध मनुष्य जीवन के लिए साधन-साध्य या सब कुछ पूंजी वृद्धि को ही मानता है। इसके कार्यक्रम के अन्य सभी उद्देश्य, जैसे खाद्य एवं कृषि की वहनीय (सस्टेनेबल) व्यवस्था, ज्ञान का आदान-प्रदान, नीति एवं

इसकी हिमायत, विकेन्द्रीकरण, संयुक्त राष्ट्र संघ का सहयोग एवं कार्यक्रम क्रियान्विति–कारपोरेट नजरिये से निर्देशित होते हैं।

(2)

इसी प्रकार खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ ए ओ) का समस्त व्यवहार यह दर्शाता है कि कैसे यह कृषि मुद्दों को जो आज के सन्दर्भ में कारपोरेट ढाँचे के भीतर हल नहीं किये जा सकते हैं उन सभी को टालता रहा है। उदाहरणार्थ : सभी विकासशील देशों में शुरू से छोटी जोत के प्रश्न को इस तथ्य के बावजूद कि इन छोटी जोतों का 3/4 भाग पहले से ही बाजार के दृष्टिकोण से अव्यवहारिक हो गई हैं फिर भी इस सवाल पर कभी विचार-विमर्श नहीं किया गया।

विकासशील देशों की कृषि को वित्त की कमी की एक अन्य समस्या का भी सामना है, तथापि खाद्य एवं कृषि संगठन ने इस बिन्दु पर अपनी सोच कभी जाहिर नहीं की है।

विभिन्न विकासशील देशों में अपर्याप्त ढाँचागत विकास तथा विभिन्न कृषि उद्योगों को चालू करने का एक अन्य मुद्दा है जिस पर ध्यान दिया जाना चाहिए। इस पर खाद्य एवं कृषि संगठन प्राय: यह सुझाव देता रहता है कि इस क्षेत्र में कारपोरेट सेक्टर को प्रवेश करना चाहिए।

इस प्रश्न पर विकासशील देशों को कृषि विकास के लिए कौनसा मॉडल अपनाना चाहिए, अपने नजरिए के अनुसार खाद्य एवं कृषि संगठन निरन्तर चुप्पी कायम किये हुए है। विकासशील देशों में भिन्न-भिन्न भूमि के वर्तमान सन्दर्भ में कारपोरेट विकल्प चलने वाला नहीं है और कोई भी गैर कारपोरेट युक्ति खाद्य एवं कृषि संगठन को पसन्द नहीं है। विकासशील देशों के सामने जो मुद्दे हैं उन पर खाद्य एवं कृषि संगठन का उपर्युक्त उदासीन व्यवहार 1960 के दशक की हरित क्रांति के दौर में कारपोरेट पूंजीवादी निर्मित तकनीक एवं अन्य निवेश (जैसे रासायनिक खाद रोगनाशक, कीटनाशक दवाइयां आदि) को बेचने में इसकी सक्रिय भूमिका के व्यवहार के बिल्कुल विपरीत है। यह खाद्य एवं कृषि संगठन ही था जिसने हरित क्रांति को कृषि के इतिहास में एक नये युग की शुरूआत होना चारित्रित किया था, तथापि आज खाद्य एवं कृषि संगठन को यह मानना पड़ रहा है कि कृषि उत्पादन में असाधारण उन्नति के बावजूद प्राकृतिक संसाधनों–जमीन, जल, जंगल, जैव-विविधता, हवा आदि–को नुकसान हुआ है, फिर भी यह इसका दोष हरित क्रांति के तकनीक कार्यक्रम को नहीं मानता बल्कि इसका दोषी किसानों को मानता है जिन्होंने इस तकनीक का जरूरत से ज्यादा उपयोग किया है। जबकि दुनिया भर का अनुभव यह दर्शाता है कि रसायन आधारित संसाधनों ने विशेषज्ञों द्वारा संचालित कृषि अनुसंधान फार्मों में भी प्राकृतिक संसाधनों के ह्रास का परिणाम सामने आया है।

हाल ही उभरी जी एम बायो तकनीक को शुरू में खाद्य एवं कृषि संगठन ने यह घोषित किया कि द्वितीय हरित क्रांति का जन्म हो गया है, परन्तु बाद में इसके नजरिए का बड़ी संख्या में वैज्ञानिकों द्वारा सख्त विरोध करने पर अब यह संगठन उपदेश दे रहा है कि यह हरित क्रांति वाली तकनीक समस्त विश्व की आबादी को 2030 तक आवश्यक सुरक्षित भोजन उपलब्ध करवाने की क्षमता रखती है।

(3)

जुलाई 2005 के अन्त में खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा जारी टिप्पणी–जिसे इसकी वैश्विक परिप्रेक्ष्य अध्ययन इकाई द्वारा तैयार किया गया है–में कहा गया है:''यद्यपि

वैश्विक फसल उत्पादन की वार्षिक वृद्धि दर घटने की आशा है, तथापि वैश्विक फसल की कुल अनुमानित 57 प्रतिशत वृद्धि (पीपी 95-96) 2030 में जनसंख्या वृद्धि से अधिक होगी।

विश्व खाद्य उत्पादन के बारे में खाद्य एवं कृषि संगठन के उपर्युक्त वर्णित आशावाद के मुकाबले में अनुसंधानकर्ता वैज्ञानिकों द्वारा एक रिपोर्ट तैयार की गई है जो 9-10-2005 की 'नेचर' पत्रिका में प्रकाशित हुई है, जिसमें कहा गया है कि मौसम परिवर्तन के कारण विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में बेजा असर डालने की संभावना है जिससे छूत वाली बिमारियां और अधिक होगी तथा कृषि को नुकसान होगा। वे क्षेत्र जो सबसे अधिक खतरे की स्थिति में हैं उनमें प्रशान्त एवं हिन्द महासागर के तटीय क्षेत्र तथा सब-सहारा अफ्रीका शामिल है। इन भविष्यवाणियों का यह भी अनुमान है कि बहुत से देशों में मौसम का व्यवहार अत्यधिक अनिश्चित रहेगा जो गुजारे लायक खेती की कमर तोड़ देगी तथा कुपोषण की स्थिति को ओर बढ़ा देगा।

(4)

आइये, अब खाद्य एवं कृषि संगठन के धारणात्मक पक्ष पर नजर डालें। इसने बहुत से एक तरफा सिद्धान्तों को अपनाया हुआ है जो वास्तविकता को न केवल विकृत रूप में देखते हैं बल्कि यह कृषि उद्देश्यों को भी नुकसान पहुँचाते हैं।

(A)

शुरूआती तौर पर, खाद्य एवं कृषि संगठन की आज की वैश्विक खाद्य सुरक्षा तथा 2030 तक की वैश्विक खाद्य सुरक्षा की अवधारणा एक तरफा विश्लेषण पर आधारित है, इसने कारपोरेट पूर्ति पक्ष के नजरिए को अपनाया है जो किसी राज्य की सम्पूर्ण आपूर्ति को उस राज्य की मौजूदा सम्पूर्ण जनसंख्या से भाग देने पर आधारित है। यदि प्रति व्यक्ति आपूर्ति विशेषज्ञों द्वारा निर्धारित स्तर के बराबर या उससे ऊपर है तो वह राज्य खाद्य सुरक्षित माना जाता है। यह तरीका किसी देश या पूरे विश्व में गरीबी, भूख और वंचितपन के स्तर को न तो नाप पाता है और न ही नाप पायेगा, क्योंकि धन के प्रभुत्व वाली हमारी दुनिया में खाद्य सुरक्षा का प्रश्न क्रय शक्ति का प्रश्न है। यदि किसी व्यक्ति की जेब में धन है तो वह बाजार में कोई भी वस्तु प्राप्त कर सकता है, यहाँ खाली जेब न केवल न्यूनतम खाद्य आवश्यकता से वंचित करती है बल्कि अपराधी होने के सन्देह में प्राय: उसे जेल की हवा खानी पड़ती है। धन की पूजा वाले इस विश्व में सभी वंचितों को कानून के अपराधी होने की नजर से देखा जाता है। आपूर्ति पक्ष का नजरिया केवल किसी निश्चित समाज के सभी लोगों की खाद्य सुरक्षा या असुरक्षा को अभिव्यक्त करता है। इन सभी में भोजन केवल उन लोगों को ही मिलता है जिनके पास उसको खरीदने की क्षमता है। यहाँ वे सभी जो भोजन नहीं खरीद पाते हैं वे कूड़े के ढेर में अपना भोजन तलाश करने के लिए मजबूर हो जाते हैं।

सारे विश्व का अनुभव दर्शाता है कि विश्व में गरीब और भूखे लोगों का निष्पक्ष आकलन प्रत्येक देश में केवल परिवार के आधार पर ही किया जा सकता है और उसके बाद इसे वैश्विक स्तर पर संकलित किया जाना चाहिए। वर्तमान विश्व में खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा 850 मिलयिन भूखे लोगों का वर्तमान आकलन को संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा बनाये गये विशेषज्ञों के ग्रुप से पुनर्मूलयांकन करवाये जाने की आवश्यकता है।

(B)

खाद्य एवं कृषि संगठन की अगली धारणा पर नजर डालें तो हम पाते हैं कि 'भूख गरीबी का कारण एवं प्रभाव दोनों है' (जैसा कि खाद्य एवं कृषि संगठन के दस्तावेज जिसका शीर्षक है 'खाद्य एवं कृषि संगठन सुधार इकीसवीं सदी के लिए एक दृष्टिकोण', अध्याय 2, पेज 5, ऊपर से नीचे की ओर 17वीं व 18वीं पंक्ति में कहा गया है), यह न केवल पुन: एक पक्षीय धारणा है बल्कि यह अत्यधिक कपटपूर्ण विचार है। इस वाक्यांश का वास्तविक पक्ष इस वाक्य में निहित है कि गरीबी का प्रभाव भूख है, परन्तु इस उलट-पुलट वाक्यांश की असत्यता इस वाक्य में निहित है कि गरीबी का कारण भी भूख है। सामान्य आदमी की तो बात ही क्या है, कारपोरेट पूंजीवादी भी यह जानते हैं कि भूख और गरीबी का कारण उनकी वर्तमान कारपोरेट व्यवस्था में निहित है, जो कि उनकी व्याख्या के अनुसार मौजूदा कारपोरेट व्यवस्था अकुशल एवं आलसी होने की वजह से गरीब और भूख से पीड़ित व्यक्ति को अवसर प्रदान नहीं करती है।

(C)

खाद्य एवं कृषि संगठन के मिशन की ओर मुड़ते हैं, एफ ए ओ का संविधान यह सुनिश्चित करता है कि मानवता भूख से मुक्त रहेगी। इस संगठन के नजरिए में भोजन का अधिकार इसके आदेश पत्र का केन्द्रीय बिन्दु है।

भोजन के अधिकार को मूलभूत अधिकार के रूप में बहुत पहले संयुक्त राष्ट्र गठित होने के बाद के वर्षों में ही मान्यता मिल गई थी। 10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ की साधारण सभा द्वारा अपनाई गई मानव अधिकार पर सार्वभौमिक घोषणा के अनुच्छेद-25 में कहा गया है–''प्रत्येक व्यक्ति को ऐसा जीवन स्तर प्राप्त करने का अधिकार होगा जिसमें उसके स्वयं व उसके परिवार का कल्याण तथा भोजन सहित पर्याप्त स्वास्थ्य सुविधा हासिल रहेगी।''

मानव अधिकार के सार्वभौमिक घोषणा के 18 वर्ष बाद आर्थिकता, सामाजिकता एवं सांस्कृतिक अधिकारों पर अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिज्ञापत्र (आई सी ई एस सी आर), जिसे 150 देशों द्वारा अभिपुष्ट किया गया, जो एक प्रभावी सार्थक कदम था जिसमें भोजन के अधिकार को निर्धारित नियमावली का उद्देश्य बनाया गया तथा संबंधित राज्यों के लिए इस मूल्य को बाध्यकारी माना गया। आई सी ई एस सी आर ने मानव अधिकार के सिद्धान्तों को मान्यता देने से भी आगे बढ़कर कार्य किया : यानि, इसने इन अधिकारों को मान्य मानदण्डों में हस्तांतरित कर दिया। यह प्रतिज्ञापत्र 16 दिसम्बर, 1966 को संयुक्त राष्ट्र संघ की साधारण सभा में अपनाया गया।

संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ ए ओ), जिसका गठन 1945 में हुआ तथा 1948 में जिसे विशेषज्ञ एजेन्सी का दर्जा प्राप्त हुआ, जिसने 1965 में अपने संविधान में संशोधन करते हुए अपने आदेश पत्र में भोजन के अधिकार को केन्द्र बिन्दु बनाया।

यद्यपि अपने केन्द्रीय नारे को आगे बढ़ाने में एफ ए ओ ने बहुत ही कम काम किया।

1990 के दशक के मध्य में कुछ सरकारों तथा बहुत से गैर-सरकारी संगठनों की इस माँग पर कि भोजन के अधिकार की धारणा पर विचार-विमर्श किया जाए तथा इसे विस्तृत रूप में प्रतिपादित किया जाए, इस पर सन् 1996 में रोम में प्रथम विश्व खाद्य सम्मेलन आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में रोम घोषणा के रूप में पर्याप्त भोजन अधिकार प्राप्त करने के अधिकार तथा भूख से मुक्ति पाने के मूलभूत अधिकार को पुन: पुष्ट

किया गया। इस सम्मेलन में सबसे महत्वपूर्ण निर्णय यह लिया गया कि 2015 तक कुपोषितों की संख्या घटाकर आधी कर दी जायेगी।

1996 के विश्व खाद्य सम्मेलन में 2015 तक कुपोषितों की संख्या घटाकर आधी करने के लक्ष्य के तुरन्त बाद ही यह साबित हो गया कि संसाधनों की कमी और राजनीतिक इच्छा शक्ति के अभाव के कारण यह लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सकता। सन् 2001 में एक अन्य विश्व खाद्य सम्मेलन–राजनीतिक इच्छा शक्ति तथा इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आवश्यक संसाधनों को चिह्नित करने के नजरिए से–आयोजित किया गया। फिर भी, इन दो सम्मेलनों के बावजूद कमोबेश वही स्थिति बनी रही।

खाद्य एवं कृषि संगठन के भोजन के अधिकार के केन्द्रीय नारे को व्यवहारिक बनाने एवं तत्पश्चात् दोनों विश्व खाद्य सम्मेलनों द्वारा इसको लागू करने को सुनिश्चित करने की असफलता के पीछे कारण यह रहा कि मौजूदा कारपोरेट के विकास का सिद्धान्त यह मानता है कि मानव अधिकार के झंडे तले सुरक्षा जाल एवं आय का गरीबों की ओर स्थानान्तरण मात्र धन की बर्बादी है, क्योंकि उससे कोई मुनाफा नहीं होता, और इस प्रकार मानव अधिकार का नजरिया कारपोरेट विकास प्रक्रिया में बाधक बनता है।

(5)

हम खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ ए ओ) से अपील करते हैं कि सबसे पहले हमारे वर्तमान विश्व की बुनियादी वास्तविकता को जानने की कोशिश करनी चाहिए और केवल इसकी वास्तविकता को जानने के बाद ही इसे प्रासंगिक पहलकदमियां लेनी चाहिए।

वर्तमान विश्व की कारपोरेट पूंजीवादी प्रकृति को जानते हुए हमारा मत है कि मौजूदा विशाल गरीबी, भूख, कुपोषण आदि इस व्यवस्था के आवश्यक उत्पाद हैं तथा इस व्यवस्था के चौखटे में इनका उन्मूलन नहीं किया जा सकता।

हमारे मतानुसार एफ ए ओ के लिए यह बेहतर होगा कि मौजूदा व्यवस्था के चौखटे में वे पहलकदमियां जो लाभदायक नहीं हो सकती हैं उनकी बजाए वास्तव में इसे प्रासंगिक विषय यानि कृषि की मौजूदा स्थिति के बारे में जानने की कोशिश करनी चाहिए और तब इसे दीर्घकालीन और तात्कालिक उद्देश्य निर्धारित करने चाहिए तथा बुनियादी रणनीति एवं तात्कालिक नीति तैयार करनी चाहिए।

और इन सभी के जरिए इसके विभिन्न भागों में जो बेहूदी गलतियां क्रियाशील हैं उन्हें हटाने की कार्यवाही की जाए–इस प्रकार एक न्यायपूर्ण व्यवस्था कायम की जाए।

एफ ए ओ को खुद अपनी व्यवहार की पद्धति पर नजर डालने की कोशिश करनी चाहिए, जिसने भारत में हाल के पिछले 10 सालों के दौरान 10,000 किसानों द्वारा आत्महत्या किये जाने पर उनकी सहानुभूति में एक शब्द भी नहीं कहा और न ही भारतीय सरकार को यह अपील की कि भारतीय किसान समुदाय को जिन समस्याओं से सामना है उन पर गंभीरता से ध्यान दे।

इसको इस तथ्य को भी जानना चाहिए कि भारत में एक ताजातरीन नेशनल सैम्पल सर्वे (एन एस एस ओ-2005) के अनुसार 40 प्रतिशत भारतीय किसानों ने यह इच्छा जाहिर की है कि यदि उन्हें विकल्प में अन्य रोजगार करने का अवसर उपलब्ध हो तो वे कृषि धंधे को छोड़ने के लिए तैयार हैं और दुनिया के किसान समुदाय का चौथाई भाग अकेले भारत में निवास करता है।

(6)

हम दृढ़तापूर्वक यह मानते हैं कि कृषि सहकारीकरण के दो चरणों–यानि, तात्कालिक और दीर्घकालिक–के जरिए दुनिया के सभी देशों में अब जिन कृषि समस्याओं से सामना है उनसे मानव-पर्यावरण निर्देशित कार्यक्रम के आधार पर उचित रूप से निपटा जा सकता है। इन दोनों (यानि तात्कालिक व दीर्घकालीन चरण) में अन्तर यह है कि जबकि पहले चरण में चल रही वर्तमान रसायन आधारित खेती तथा नई उभरी जी एम या ट्रांसजेनिक (परा-प्रजनन) तकनीक के स्थान पर जैविक तकनीक प्रतिस्थापित की जायेगी और किसी भी सहकारी खेती के विभिन्न सदस्यों की अंशधारिता उनकी भूमि के हिस्से के आधार पर निर्धारित की जाएगी, जबकि दूसरे चरण में केवल जैविक तकनीक–चाहे वह पारम्परिक या कुछ अधिक विकसित तकनीक लिए हो–काम में ली जाएगी और सदस्यों की अंशधारिता आय के समता सिद्धान्त (जिसमें अधिकतम आय का अन्तर 1:2 के अनुपात में होगा) पर आधारित होगी, न कि समानता के आधार पर।

(7)

हमारे दृष्टिकोण में विकासशील देशों में कृषि के विकास के लिए निम्न फारमूला हमें तात्कालिक के साथ-साथ दीर्घकालीन कार्यक्रम प्रदान कर सकता है।

(क) कृषि क्षेत्र हर कहीं स्वाभाविकतया दो अन्तरसंबंधित भागों–यानि, किसान समुदाय का सामाजिक मानवीय पहलू और कृषि की पैदावार प्रणाली–से बना हुआ है। दोनों अन्तरसंबंधित हैं। एक के बिना दूसरे का अध्ययन कहीं भी एक वास्तविक तस्वीर पेश नहीं करता।

(ख) किसान समुदाय का सामाजिक संगठन लोक-पर्यावरण समर्थक सहकारिता के उसूलों पर आधारित होना चाहिए, जिसके अनुसार विद्यमान सभी खेतिहर इकाइयों को संगठित (एकीकृत) किया जा सकता है और अपनी अपनी इकाई (खेती) पर मालिकाना हक में कोई तब्दीली किए बगैर लोक-पर्यावरण नेतृत्व सहकारिता आधार वाली कृषि प्रक्रिया में भागीदार बनाया जा सकता है।

(ग) प्रथमत: कृषि की प्रणाली को कृषि-क्षेत्रीय (या कृषि जलवायु) आधार पर वर्गीकृत किया जाना चाहिए। इस तरह का वर्गीकरण निम्नलिखित कृषि क्षेत्रीय (या कृषि जलवायु) इलाकों से निर्मित हो सकता है–(i) पहाड़ी कृषि क्षेत्र, (ii) शुष्क कृषि क्षेत्र, (iii) तटीय कृषि क्षेत्र, (iv) सिंचित कृषि क्षेत्र, (v) क्षयग्रस्त या खराब कृषि क्षेत्र, और (vi) मत्स्य पालन, जमीन और समुद्री दोनों हिस्सों पर।

(घ) प्रत्येक कृषि क्षेत्र को ऐसे विभिन्न कृषि जलवायु जोनों में विभाजित किया जाए, जिनमें से प्रत्येक जोन स्वाभाविक तौर पर एक या दो विशिष्ट फसलों के उत्पादन के अनूकूल हो। भूमि की प्रकृति के खिलाफ फसलों को ठोंसने की विद्यमान प्रणाली से कम फसल और घटिया गुणवत्ता वाला उत्पादन होता है। ऐसे ज्यादातर जोनों या क्षेत्रों को कृषि और बागवानी विभागों के रिकार्ड में पहले से ही चिह्नित किया हुआ है। बचे हुए क्षेत्रों को तत्काल कृषि विशेषज्ञों के साथ अन्तरक्रिया और स्थानीय किसानों के अनुभवों को बांटकर मूल्यांकन किया जा सकता है। ऐसी प्रणाली गुणवत्ता और उत्पादकता के रूप में उत्तम परिणाम देगी।

(ड़) प्रत्येक कृषि जलवायु क्षेत्र (जोन) में एक विशिष्ट फसल सहकारी कृषि सोसायटी बनाई जाए जिसमें सभी किसानों (छोटे और बड़े भूमि मालिकों) को निचली

इकाई से लेकर ऊपर की इकाई तक में शामिल किया जाए। उनमें से प्रत्येक किसान अपनी अपनी जोत (खेती) के मुताबिक अपना हिस्सा प्राप्त करेगा।

(च) प्रत्येक क्षेत्रीय सहकारी कृषि सोसायटी क्षेत्र से सम्बन्धित कच्चे माल या एक अथवा दो विशिष्ट फसलों में अतिरिक्त मूल्य वृद्धि के लिए इसके कृषि जलवायु जोन में एक प्रासंगिक कृषि प्रोसेसिंग उद्योग की स्थापना करें। यह आवश्यक मात्रा की अच्छी गुणवत्ता और कम कीमत उत्पाद को कम से कम परिवहन खर्च पर मुहैया करवायेगी। कृषि उद्योग से संबंधित जोन की आर्थिकता को मजबूती देगा और बेरोजगारों को रोजगार प्रदान करेगा।

(छ) प्रत्येक विशिष्ट फसल सहकारी कृषि सोसायटी संबंधित जोन में अपने उत्पाद को सुरक्षित रखने के लिए शीत-घरों के साथ बाजार का बुनियादी ढांचा विकसित करे ताकि भारत के अन्य भागों और विदेशों के खरीददारों को आकर्षित किया जा सके।

(ज) प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रीय सहकारी कृषि सोसायटी कानून के तौर पर विभिन्न खेती कार्यों की आवश्यकतानुसार अपने ही क्षेत्र के अन्दर के मजदूरों को रोजगार देगी। इसके अलावा, यह सरकार से अपील करेगी कि कृषि मजदूरों की निम्नलिखित न्यायपूर्ण मांगों को पूरा करे (i) प्रत्येक कृषि कामगार के लिए 50,000 रुपये बीमा राशि जमा की जाए, जिसमें सम्बन्धित राज्य व केन्द्र सरकार बराबर हिस्सा प्रदान करें, (ii) कृषि मजूदरों के लिए बुढापा पेंशन योजना शुरू की जाए, (iii) ग्रामीण गृह निर्माण योजना के तहत भूमिहीनों के लिए कार्यस्थल पर घर की व्यवस्था की जाए और (iv) पीने के पानी, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं की सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जाए।

(झ) प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रीय (जोनल) सहकारी कृषि सोसायटी ग्रामीण ढांचे के जनवादीकरण के लिए निम्नलिखित कदम उठाने की सरकार से अपील करे।

* ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और ढांचागत संरचना का विकास किया जाए।

* ग्रामीण जनता के ज्ञान और दक्षता को विकसित किया जाए।

* विशिष्ट फसल जोनल कृषि सहकारी सोसायटियों के लिए कारगर कीमत नीति, उचित राष्ट्रीय बाजार, दीर्घावधि ऋण, निर्यात सुविधाएं, इत्यादि सुनिश्चित की जाएं।

* भिन्न-भिन्न ग्रामीण विकास योजनाओं जैसे आई आर डी पी, जवाहर रोजगार योजना, इन्दिरा आवास योजना, आदि के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में खर्च होने वाले फंड के उचित उपयोग के लिए गाँव की चुनिन्दा कमेटियों को उस फंड की निगरानी करने के लिए अधिकृत किया जाए।

* नौकरशाही कानून और इसकी नीति पर आधारित आज के सहकारी आन्दोलन का लोक-पर्यावरण निर्देशित कानून और इसकी नीति के द्वारा पूर्णतया जनवादीकरण किया जाए।

* महिलाओं को जमीन सहित अपने पति की समस्त जायदाद में सह-मालिक बनाना और उन्हें सभी चुनावी संस्थाओं में 50 प्रतिशत आरक्षण देना।

* हर पंचायत (इसके सभी सदस्यों) को हर 6 महीने बाद (या साल में दो बार) अपने हलके का दौरा करने और अपने वोटरों की आम सभा के सामने 6 महिने का रिकार्ड

बहस और टिप्पणियों के लिए पेश करने की कानूनी जिम्मेदारी निश्चित करके वोटरों के आगे जवाबदेह बनाना।

(ञ) प्रत्येक फसल विशिष्ट जोनल सहकारी कृषि सोसायटी को उचित समय पर अपने अतिरिक्त उत्पाद को बेचने एवं अपने आवश्यक खेती निवेश को खरीदने के लिए अपना एक किसान केन्द्रित बाजार तंत्र (यानि प्रबंध प्रणाली) की स्थापना करनी चाहिए। इन दोनों तरह के आदान-प्रदान में यह इसकी सौदाकारी ताकत को बढ़ायेगी और संबंधित फार्म की लाभसीमा में बढ़ोतरी करेगी। प्रत्येक बाजार तंत्र अपने बाजार अनुसंधान और जाँच पड़ताल विभाग की स्थापना करेगा।

(ट) प्रत्येक विशिष्ट फसल जोनल सहकारी सोसायटी सरकार से एक व्यावसायिक कमेटी के गठन की अपील करे जिससे जोनल फसल विशेषज्ञ, जोनल फसल वैज्ञानिक, किसानों के प्रतिनिधि तथा बाजार विभाग के प्रतिनिधि शामिल हो। कमेटी विशिष्ट फसल की समस्याओं पर विचार विमर्श के लिए जरूरत के अनुसार मिटिंग बुलाती रहे। क्षेत्र विशेष-फसल विशेषज्ञ विशेषज्ञों की कमेटी संबंधित विशिष्ट फसल की समस्याओं का हल निकालने में अधिक सक्षम होगी।

(ठ) प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रीय सहकारी सोसायटी केन्द्र और राज्य सरकार से अपील करे कि वे कृषि क्षेत्र के लिए अपने अपने बजट विनियोजन में बढ़ोतरी करे।

(ड) खेतीबाड़ी को मानव और पर्यावरण समर्थक बनाने के लिए प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रीय सहकारी सोसायटी शुरूआत में 2 तरह की तकनीकी–जैविक और एकीकृत तकनीक (यानि, एक ऐसी तकनीक जो जैविक तकनीक और रसायन आधारित तकनीक दोनों का उपयोग करे)–के आधार पर खेती की जाए। बाद के दौर में क्षेत्र के एक हिस्से में जैविक आधार पर खेती की जाएगी और क्षेत्र के दूसरे भाग में एकीकृत तकनीक का रास्ता अपनाया जाएगा।

(ढ) जल उपयोग क्षमता को अधिकतम करने के लिए, जल निकासी/जल पुनरभरण अनुपात को उचित स्तर पर कायम रखा जाए। सभी पर्यावरणीय संसाधनों–यानि, हवा, पानी, भूमि, जैव विविधता और जंगलों के संवर्द्धन के लिए हर तरह के प्रयास किए जाए।

(ण) इसकी विशिष्ट फसल के बाद प्रत्येक विशिष्ट फसल क्षेत्रीय सहकारी सोसायटी को डेयरी विकास को हाथ में लेना चाहिए जो इसकी अगली सबसे महत्वपूर्ण गतिविधि होगी। दूध बेचने के अलावा यह इसकी प्रोसेसिंग और दूध व दुग्ध उत्पाद के निर्यात में संलग्न होगा। डेयरी उद्योग के साथ साथ सहायक स्कीमों, जैसे मधुमक्खी पालन, मछली पालन, गन्ने से खांडसारी और गुड़ बनाना, शुष्क क्षेत्रों में कृषि जंगलात, तेल और दवा उपयोगी पौधों (जैसे सनाय, गुग्गल, ईसबगोल, मेंहदी, इत्यादि) और पड़त भूमि में भेड़ पालन (उदाहरणतया, राजस्थान), इत्यादि को तत्काल लागू किया जाए इस प्रकार कृषक की अल्प आमदनी को बढ़ाने में इन्हें सहायक बनाया जाए।

(त) किसान समुदाय कुछ निम्नतम आय के स्तर को फसल नष्ट होने की स्थिति में सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक सहकारी कृषि सोसायटी को सरकार से मांग करनी चाहिए कि वह प्रभावी फसल बीमा योजना लागू करे।

(थ) विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) द्वारा अस्वीकृत सभी तरह की यानि, गैर कानूनी कृषि सब्सिडी या वित्तीय स्वीकृति (जैसा कि अमेरिका और युरोपीय समुदाय

द्वारा किया जाता है) को बंद करके विश्व व्यापार के लिए एक समतल (सबके लिए समान) व्यापार मैदान तैयार करना। सभी सहकारी कृषि सोसायटियों को भारत के साथ-साथ विश्व भर में उचित व्यापार के पक्ष में खड़े रहना चाहिए।

(द) ठेका खेती तरीकाकार अल्प विकसित देशों के निगमीकरण के लिए कारपोरेट पूंजीवादी साधन मात्र है। इस समझ के साथ अगर किसी सहकारी कृषि सोसायटी को ऐसे किसी ठेके में लाभ नजर आता है तो ऐसे सौदे में हाथ डालने में कोई हानि नहीं है, बशर्ते कि 2 सावधानी भरे कदम साथ-साथ उठाये जाए। एक कदम है कि ऐसे ठेके की जांच परख कानूनी विशेषज्ञ द्वारा करवाई जाए। और दूसरा कि राज्य ऐसे ठेके को उचित और न्यायिक ढंग से लागू करने का दायित्व लेता है या नहीं।

(ध) अंतिम, लेकिन अधिक महत्वपूर्ण विकासशील देशों के किसान की गंभीर ऋणग्रस्तता के सवाल के मद्देनजर, सभी सहकारी कृषि सोसायटियों की तरफ से संबंधित देशों की सरकारों से अपील की जानी चाहिए कि वह नीचे लिखी 3 मांगों को पूरा करे–1. किसानों (ग्रामीण भूमिहीन सहित) के सभी ऋण चाहे वे संस्थागत है या गैर संस्थागत, उन्हें माफ किये जाए। 2. किसानों को सस्ता ऋण प्रदान करने के लिए प्रावधान तैयार करना, जिसमें सम्पूर्ण संस्थागत (सरकारी या अर्द्ध सरकारी) ऋण का 30 प्रतिशत किसानों को तथा 10 प्रतिशत ग्रामीण भूमिहीनों और शहरी गरीबों को दिया जाए, जबकि सभी गैर संस्थागत ऋण प्रतिबंधित किये जाए, और 3. सहकारी आधार पर कृषि की पुनरसंरचना की जाए (जो विद्यमान भूमि जोतों में विघ्न नहीं डालेगा और गुणवत्ता, उत्पादकता और लाभदायकता के क्षेत्र में कारपोरेट खेती की तुलना में अधिक श्रेष्ठ सिद्ध होगी, जबकि कारपोरेट खेती छोटे व बड़े सभी किसानों को अपनी भूमि से बेदखल कर देगी और उन्हें बेरोजगार कामगारों के समूह में तब्दील कर देगी)। आगे, यह सहकारी आधारित खेती, सोवियत सामुदायिक खेती (जिसमें कामगार ट्रेड यूनियन अधिकारों तक से भी वंचित कर दिया गया था) के भी ठीक उलट जनवादी समानता और सर्जनात्मक उसूलों की जीवन्तता स्थापित करेगी।

(8)

विकसित देशों में बड़े कॉरपोरेट फार्मों के मालिकों को उचित मुआवजा चुकाने के बाद लोक-पर्यावरण निर्देशित सहकारी कानूनों द्वारा इनके शेयरों को आम आदमी को बेचकर इन्हें सहकारी फार्मों में तब्दील कर दिया जाए।

(9)

उपर्युक्त विश्लेषण उन सभी से तीन तरफा कार्य को अंजाम देने का आह्वान करता है जो इसकी दिशा और कार्यक्रम से सहमत हैं। वह कार्य है, कृषि को दरपेश गहरे संकट, इसके कारण और हल के बारे में किसानों के बीच जागरूकता पैदा करे और उन्हें प्रेरित करे।

(10)

मानव समाज में कृषि को उचित स्थान दिलाने के लिए यह आवश्यक है कि मौजूदा पूंजी (यानि, धन और सम्पत्ति) निर्देशित कॉरपोरेट पूंजीवादी व्यवस्था (जिसकी एक मात्र प्राथमिकता पूंजीपतियों के मुनाफे को अधिकतम करने में सहायता करने के लिए इसकी–यानि, कॉरपोरेट व्यवस्था की–विशेष प्रिय दोगलेपन की शैली–यानि, कहना

कुछ और करना कुछ का अनुसरण करने वाली व्यवस्था) के स्थान पर प्रकृति-मानव निर्देशित सामाजिक व्यवस्था कायम करना, जिसकी दो सर्वोच्च प्राथमिकताएं यानि पर्यावरण और मानव है तथा जो पांच मूलभूत सिद्धान्तों, यानि पर्यावरण संवर्धन, उचित समानता (यानि कारपोरेट पूंजीवादी राजनीतिक पार्टियों और व्यापारिक घरानों के स्थान पर जनता का सशक्तिकरण करना, प्रत्येक वंचित और गरीब व्यक्ति की सामाजिक सुरक्षा करना तथा आमदनी के बेतुके फर्क को 1:5 के तर्कसंगत फर्क की सीमा में लाना), उत्पादकता (या वृद्धि दर), जनता के नेतृत्व वाले जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता की पालना करती है। और जिसमें कृषि–जो एक तरफ मानव के भोजन एवं स्वास्थ्य से जुड़ी है और दूसरी तरफ सभी पर्यावरणीय संसाधनों, यानि, भूमि, जल, जलवायु, जैव-विविधता, जंगलों के उचित विकास से संबंध रखती है–को अधिकतम महत्वपूर्ण स्थान पर स्वीकार करते हुए सामाजिक विकास मॉडल में इसे प्रथम स्थान दिया जाए।

15.03.2006

* * * * *

इतिहास में कृषि का क्रमिक विकास

कृषि की धारणा

कृषि विज्ञान और उद्योग दोनों की द्योतक है।

विज्ञान के तौर पर यह उस सिद्धान्त को प्रतिपादित करती है, जो मिट्टी से विभिन्न प्रकार की फसलों–यानि, अनाज, वाणिज्यिक फसलों, फल, साग-सब्जी आदि के उत्पादन करने, कृषि संसाधनों, जैसे भूमि, पानी, जैव-विविधता, जंगल को विकसित करने एवं अन्य कृषि गतिविधियों, जैसे पशुपालन, मधुमक्खी पालन, मुर्गी पालन, मछली पालन, कृषि आधारित वन, कृषि आधारित उद्योग आदि को प्रोत्साहित करने के ज्ञान को प्रकट करता है।

उद्योग के तौर पर यह उत्पादन की एक ऐसी व्यवस्था को इंगित करता है जो अपने आर्थिक, वित्तीय, राजनीतिक और सांस्कृतिक आयामों के साथ विभिन्न कृषि उत्पादों को पैदा करने और प्रबंधित करने की जिम्मेदारी लेती है तथा कृषि से संबंधित सभी धंधों को संगठित करती है।

कृषि का उत्थान

कृषि करीब 10,000 साल पहले मानव समाज में उभरी जब विशेष परिस्थितियों ने पौधों और पशुओं को पालने लायक खोज की संभावनाएं पैदा कर दी। उस समय हिम युग समाप्त हो रहा था। ग्लेशियर तेजी से सिकुड़ रहे थे। आगे की कुछ सहस्राब्दियों में (एक सहस्राब्दी यानि एक हजार साल का समय) देखा गया कि घुमन्तू अभिनूतन (प्लाइस्टोसीन) जीव जन्तु निरन्तर विलुप्त होते चले गए। जबकि ये जीव-जन्तु पुरा पाषाण युगीन (पुरातन पाषाण काल) शिकारियों की भोजन आपूर्ति करते थे। इससे मानवजाति के लिए खास किस्म की वनस्पति और पशु संसाधनों को उपयोग में लाने के ज्ञान की नई परिस्थितियां पैदा होने लगी।

कृषि की खोज हो जाने के बाद भी यह मानव जीवन में तत्काल प्रधानता का स्थान नहीं ग्रहण कर पाई। शुरू की पाँच सहस्राब्दियों तक पशुपालन (यानि, पशुओं को पालतू

बनाना और पालना) मनुष्य जीवन की मुख्य धारा बनी रही क्योंकि यह प्रारम्भिक कृषि इस योग्य अभी नहीं बनी थी कि जिससे मानव की भोजन जरूरतें पूरी हो सकें। दस हजार साल से पहले के काल में मानव पूर्णतया भोजन इकट्ठा करने और भोजन के लिए शिकार करने पर निर्भर था।

ईसा पूर्व पाँचवीं से चौथी सहस्राब्दी में कृषि सामाजिक व्यवस्था में प्राथमिकता पर आई। जब मनुष्य के कृषि ज्ञान में बढोतरी हुई तथा कृषि अधिक उत्पादक बनी तथा हालात ऐसे बने जिससे मानव जाति जल-संसाधनों के आसपास बसने योग्य हुई, उस समय हमारे ग्रह की कुल आबादी करीब 10 मिलियन (1 करोड़) थी।

अब भी पशुओं को पालतू बनाना और कृषि दोनों धंधे दुनिया के विभिन्न देशों में भिन्न-भिन्न मात्रा में मौजूद थे।

पुरातात्विक प्रमाण यह इंगित करते हैं कि सबसे पहले जिन लोगों ने वन-उत्पादों के अत्यधिक संग्रहण के जरिए कुछ हद तक स्थायी जीवन जीना प्रारम्भ किया, उन्हीं समुदायों ने खेती करना शुरू किया। आज के आदिवासियों के निरीक्षण से मूल्यांकन करें तो यह अन्दाज लगाया जा सकता है कि उस समय के मानव समुदायों ने जंगली पौधों और उनके गुणों के बारे में कुछ हद तक जानकारी हासिल कर ली थी।

करीब 6000 वर्ष ईसा पूर्व घरेलू वनस्पति उत्पादन के दो शुरूआती बड़े केन्द्र अस्तित्व में आये। जिनमें से एक दक्षिण-पश्चिम एशिया था, यानि उपजाऊ अर्द्ध चन्द्राकार क्षेत्र के रूप में वर्णित इलाका जो मेसोपोटामिया के उपजाऊमैदानों से लेकर सिरिया से होते हुए मध्यसागर के पूर्वी तटों के नीचे तक मिश्र की नील घाटी की हद तक फैला हुआ था; तथा दूसरा इलाका, अमेरिका के दोनों महाद्वीपों में स्थित था जो उत्तरी मैक्सिको से लेकर दक्षिणी अमेरिका के उत्तरी भाग तक फैला था।

उद्योग के रूप में अपने प्रादुर्भाव से कृषि समय-समय पर कृषि औजारों, निवेश तथा फसलों के विविधिकरण में सुधार करने की प्रक्रिया के जरिए बेहतर होती गई। काल निर्धारण रेडियो कार्बन तकनीक दर्शाती है कि मेसोपोटामिया के मैदानों में शुरूआती बोए जाने वाले अनाज में अपरिष्कृत मोटा दाना एमर (यानि, टी डिकोकम, जो बोए जाने वाले गेहूँ की सभी अन्य प्रजातियों का पूर्वज है तथा जंगली गेहूँ का अपरिष्कृत मोटे दाने का वंशज है) तथा अपरिष्कृत छोटा दाना इनकोर्न (यानि, टी एगिलोपोइडस, जो अपरिष्कृत जंगली गेहूँ के छोटे दाने का वंशज है) शामिल है। जल्दी ही खेती का यह ज्ञान दुनिया में एक जगह से दूसरी जगह लगातार चरवाहों और किसानों के स्थानान्तरण से फैल गया। ईसा पूर्व की तीसरी व चौथी सहस्राब्दियों में हम पाते हैं कि मिश्र, ईरान, सिंधु घाटी, चीन, यूरोप के भागों, इत्यादि में कृषक समुदाय का प्रादुर्भाव हुआ।

दोनों अमेरिका में कृषि के प्रादुर्भाव का अपना इतिहास है। पुरातात्विक प्रमाण बताते हैं कि मैक्सिको के उत्तर-पूर्वी भाग में प्राथमिक खेती करीब 6000 वर्ष ईसा पूर्व उन लोगों में उभरी जो मुख्यतया भोजन इकट्ठा करने और शिकार पर निर्भर थे। शुरूआती फसलों में लौकी, मिर्च तथा सेम की फली शामिल थी। मक्का तो बहुत बाद में प्रचलन में आई। मक्का की शुरू की एक किस्म (जंगली ज्वार से व्युत्पन्न) का करीब 3000 वर्ष ईसा पूर्व में प्रादुर्भाव हुआ। दुनिया के इस भाग में कृषक समुदाय के प्रादुर्भाव एवं फैलाव में (लगभग 1500 वर्ष ईसा पूर्व तक) 3000 वर्षों से अधिक समय लगा।

मिसीसिप्पी घाटी तथा पेरूवियन तटीय प्रदेश में मैक्सिकन क्षेत्र से पहले पौधों की बोवाई के विस्तार का पता लगता है। पेरूवियन तटीय प्रदेश में बोए जाने वाले पौधों की एक शृंखला–गुद्देदार तरकारियां, मिर्च, पेठा, कपास, इत्यादि–2200 वर्ष ईसा पूर्व के आसपास नजर आने लगी। मिसीसिप्पी घाटी के उत्तरी भाग में 1000 वर्ष ईसा पूर्व से पहले अन्य पौधों के समूह–मक्की, गुद्देदार तरकारी, गुद्देदार सरसफल और सूरजमुखी– की खेती होना मालूम पड़ती है। अमेजन तथा ओरिनोको के जंगलों में 1000 वर्ष ईसा पूर्व के लगभग उष्णकटिबंधीय जड़ों वाली फसलें–मीठा व खारा मैनिओक (Manioc) और सूत–पैदा होने लगा।

भोजन इकट्ठा करने से शिकार करने और उसके बाद चरवाहा और कृषक होने तक के परिवर्तन में 10 से 20 लाख साल का वक्त लग गया, यह एक महान ऐतिहासिक परिवर्तन का द्योतक था क्योंकि इसने अपने पुरातन से मध्ययुगीन स्थिति तक मानव सभ्यता में एक मूलभूत परिवर्तन की अगुवाई की है। इसने मानव को भोजन के लिए कृषि पर ज्यादा निर्भर बनाया तथा साथ ही मनुष्य के अस्तित्व को ज्यादा सुरक्षित बनाया। भोजन इकट्ठा करने और शिकार की गतिविधि के मुकाबले में मानवीय श्रम कम कठिनाई वाला हो गया। स्वाभाविक तौर पर इसने मनुष्य प्रजाति की वृद्धि दर को आगे बढाया।

कृषि का विकास

शुरू की कृषि तकनीक खुदायी वाली लकड़ी और कुदाली थी। उसके बाद औजारों और फसलों दोनों के संबंध में समय-समय पर मानवीय व्यवहारिक अनुभव से लगातार इसमें बेहतरी होती गई।

विश्वास किया जाता है कि ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में मेसोपोटामिया के क्षेत्र में हल की तकनीक का प्रादुर्भाव हुआ। हल की मौजूदगी ने यह आवश्यक बना दिया कि भूमि काश्तकारी की कुछ व्यवस्था बनाई जाए और कृषि को अधिक विविध रूपों में विकसित किया जाए। लोहे के फाल वाला हल का 400 वर्ष ईसा पूर्व के आसपास उद्भव हुआ। प्रारम्भ में घोड़े द्वारा चालित हलों से आड़ी-तिरछी जोताई का शुभारम्भ किया गया। जिसके परिणामस्वरूप सम्पूर्ण यूरोप में ईसा की पहली चार शताब्दियों के दौरान छोटे नरम गद्देदार (पोले) खेतों की व्यवस्था सामने आई। कुछ समय के बाद इस काश्तकारी व्यवस्था की जगह खुली जोताई काश्तकारी व्यवस्था ने ले ली, जिसमें भोंडे हलों और पट्टी जोताई का उपयोग शामिल था। यह एक सहकारी व्यवस्था थी जिसमें भूमि पर कार्य हल की सहायता से साझे रूप में किया जाता था और भूमि पर मालिकाना हक व्यक्तिगत था। मध्यकाल में भूमि का मालिक राजा या सामन्त अथवा चर्च होते थे तथा ग्रामीण समुदाय इनके अधीन कार्य करता व रहता था और इसके उत्पाद का 1/2 या 1/3 भाग भू सामन्त को देता था।

बहुत शताब्दियों तक विश्व के उद्योगों में कृषि अविवादित रूप से नेतृत्वकारी स्थिति में रही है। कुछ सीमित क्षेत्रों में उत्खनन या वाणिज्यिक धंधे ही कृषि से महत्वपूर्ण बन पाये।

19वीं और 18वीं शताब्दी की औद्योगिक क्रांति (जिसके परिणामस्वरूप शहरी केन्द्रों का उद्भव हुआ तथा भू दास मजदूरों की जगह उजरती मजदूरों ने ले ली एवं इसके साथ-साथ भोजन की माँग बढ़ती चली गई) के साथ-साथ कृषि और जनसंख्या क्षेत्र में नये बदलाव हुए।

कृषि के क्षेत्र में खुला क्षेत्र काश्तकारी व्यवस्था की जगह बन्द क्षेत्र काश्तकारी प्रणाली प्रतिस्थापित हुई, कृषि माल में बदल गई और बाजार से जुड़ गई; और सभी खाली भूमि जोत के अधीन ले ली गई। इन सारे बदलावों से कृषि उत्पादकता में बढोतरी हुई, परन्तु कुल मिलाकर परम्परागत खेती ही प्रभुत्व में रही।

अधिक उत्पादन और आसान मानवीय श्रम के साथ मानव जनसंख्या संगीन रफ्तार से बढ़ती चली गई। अब, परम्परागत कृषि बढ़ती जनसंख्या की भोजन जरूरत को पूरा करने में पिछड़ने लगी। परन्तु यह कमी कृषि क्षेत्र का विस्तार करके पूरी की जाने लगी।

ऐतिहासिक तौर पर भूतकाल में वन और चरागाह भूमि पर अतिक्रमण ने कृषक समुदाय को भोजन उत्पादन को बढ़ाने का सीधा रास्ता प्रदान किया। विश्व स्तर पर पिछले 200 सालों से अधिक समय के दौरान कुल काश्त योग्य भूमि में 600 मिलियन हैक्टेयर से 1500 मिलियन हैक्टेयर तक की वृद्धि हुई। हालांकि अनुमान दर्शाते हैं कि विश्व स्तर पर क्षयग्रस्त और बंजर भूमि में सुधार करके कृषि योग्य भूमि को 1500 मिलियन हैक्टेयर से बढ़ाकर 2100 मिलियन हैक्टेयर तक बढ़ाया जा सकता है, जबकि भारत सहित एशिया में कृषि योग्य भूमि में 10 प्रतिशत से कम बढ़ोतरी की संभावना है।

हालांकि यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि विश्व स्तर पर पिछले 50 वर्षों में अनाज का उत्पादन कृषि भूमि विस्तार के जरिए केवल मात्र 8 प्रतिशत बढ़ाया गया जबकि बाकी 92 प्रतिशत उत्पादन सिंचाई तकनीक और अधिक उत्पादन कृषि तकनीक अपनाकर बढ़ाया गया। विश्व स्तर पर लगभग 46 प्रतिशत अनाज का उत्पादन सिंचित क्षेत्र से प्राप्त होता है। सिंचित क्षेत्र 1950 में 80 मिलियन हैक्टेयर था जो 1993 में 240 मिलियन हैक्टेयर तक बढ़ गया।

स्पष्टतया, अनाज उत्पादन बढ़ोतरी कृषि रकबे में विस्तार के द्वारा करने के अवसर बहुत कम होने को हर कोई देख सका और समझ सका कि भविष्य में कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए भूमि विस्तार के बजाए विज्ञान और तकनीक की वृद्धि से इसे पूरा किया जा सकेगा। एक बार पुनः, मानवीय बुद्धि और सहज ज्ञान के बल पर मानव जाति इस बाधा को पार कर पाई। परम्परागत खेती को अधिक उत्पादन देने वाले बीजों की किस्मों, रासायनिक खादों, जहरीले पेस्टीसाइडस, सिंचाई सुविधाओं में बढ़ोतरी इत्यादि के माध्यम से नई तकनीक वाली खेती में तब्दील कर दिया गया।

25 वर्ष अबाधित वृद्धि के साथ हरित क्रांति चलती रही। परन्तु 1990 में यह स्थिरता के दौर में प्रवेश कर गई।

वर्तमान कृषि

विश्व का कुल कृषि क्षेत्र 5 अरब हैक्टेयर है। इसमें से लगभग 1.5 अरब हैक्टेयर (30.4 प्रतिशत) कृषि योग्य भूमि है और इस भूमि में स्थायी रूप से फसलों की बुआई होती है, बाकी बची दो तिहाई भूमि का उपयोग पशुओं के चरागाह के रूप में होता है। प्रत्येक देश में फसल की उपज भिन्न-भिन्न मात्रा में होती है। पिछले 10 सालों (1990-2000) से अधिक समय से वृद्धि दर 0.3 प्रतिशत से कम हो रही है।

दक्षिण एशिया की कुल कृषि भूमि में से कृषि योग्य तथा स्थायी फसल वाली भूमि का अनुपात (91.5 प्रतिशत) सबसे अधिक है, यद्यपि पुनरावलोकन समय के दौरान पाया

गया कि फसल वृद्धि दर बहुत ही धीमी, यानि, 0.2 प्रतिशत थी। क्षेत्र में, भारत और बंगलादेश का यह अनुपात बहुत ऊँचा, यानि, क्रमश: 94% और 93.3 प्रतिशत है। कैरीबियन क्षेत्र भी दक्षिण एशिया का अनुसरण करता है।

ऐसा ही परिदृश्य उभरता है जब कुल कृषि क्षेत्र में से केवल कृषि योग्य भूमि के हिस्से पर नजर डाली जाती है। एक बार पुन:, दक्षिण एशिया में बड़ा हिस्सा बंगलादेश और भारत के कारण है। स्थायी फसल के मामले में दक्षिण एशिया दशक से सबसे अधिक वृद्धि (10.7% तक) वाला क्षेत्र है और उसका अंश 4.5 प्रतिशत है। इस क्षेत्र के अन्दर के देशों में श्री लंका का इसकी भूमि में से स्थायी फसल का अनुपात सबसे अधिक यानि 43.3 प्रतिशत है, जबकि बाकी बचे देशों में यह अनुपात 1.8% और 4.4% के बीच बहुत निम्न अंश वाला है।

विश्व में, कुल कृषि क्षेत्र में से स्थायी चरागाह भूमि का हिस्सा 69.6 प्रतिशत है। दक्षिण एशिया में यह 8.5 प्रतिशत है और पिछले पुनरमूल्यांकन के दौरान इसमें 2 प्रतिशत गिरावट दर्ज की गई थी। क्षेत्रीय समूहों में केवल कैरीबियन क्षेत्र का हिस्सा 69 प्रतिशत से कम प्रदर्शित हुआ। महाद्वीपीय समूहों में, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका का क्रमश: 81.4% और 80.4% तक उच्च स्तरीय शेयर है।

विश्व स्तर पर प्रति कृषि मजदूर कृषि क्षेत्र का औसत 3.8 हैक्टेयर हिस्सा आता है। इसमें क्षेत्रीय और आर्थिक समूहों के बीच काफी अन्तर है। इसमें विकसित देशों में 37.6 हैक्टेयर जितना बड़ा क्षेत्र रिकार्ड किया गया है, जबकि यह क्षेत्र उत्तर और केन्द्रीय अमेरिका में 30.5 हैक्टेयर बनता है। दक्षिण एशिया में प्रति कृषि मजदूर सबसे कम भूमि, यानि 0.7 हैक्टेयर है। इससे कृषि भूमि पर क्षेत्र में बढ़ती कृषिकारी जनसंख्या के दबाव की व्याख्या की जा सकती है। भूटान और नेपाल में कुल जनसंख्या का क्रमश: 93.8% और 93.1% हिस्सा कृषिकारी जनसंख्या का है जो उच्चतम है।

अनुक्रिया सूचक दर्शाता है कि कृषि भूमि के प्रति हैक्टेयर कृषि उत्पादन का मूल्य दक्षिण एशिया में उच्चतम, यानि, 720.6 डालर है। सब-सहारा अफ्रीका निरन्तर निम्नतम मूल्य, यानि, 71.6 डालर दर्शाता है। दक्षिण एशिया में उच्च मूल्य का कारण उच्च फसली तीव्रता तथा दुनिया के बाकी क्षेत्रों के बनिस्पत कुल कृषि भूमि में स्थायी चरागाह का क्षेत्र छोटा होने में निहित हो सकता है।

इसके उलट कृषि सकल घरेलू उत्पाद प्रति कृषि मजदूर का अनुक्रिया सूचक दर्शाता है कि दक्षिण एशिया सभी क्षेत्रों में द्वितीय निम्नतम बिन्दु पर है, यानि, सबसे नीचे सब-सहारा अफ्रीका केवल 315 अमेरिकी डालर पर है जबकि दक्षिण एशिया 404 अमेरिकी डालर मूल्य के साथ द्वितीय निम्नतम बिन्दु पर है।

दुनिया में, लगभग 0.3 अरब हैक्टेयर भूमि सिंचित है जो कुल कृषि भूमि का 5.4 प्रतिशत भाग बनता है। 1990 के दशक मे वृद्धि 4.4 प्रतिशत हुई थी। कृषि योग्य एवं स्थायी फसल भूमि में सिंचित भूमि का हिस्सा 17.8% है जो 4.8% की दर से बढ़ रहा है। विश्व की कृषि भूमि में एशिया का हिस्सा 33.2 प्रतिशत बनता है, और इसका 12.8 प्रतिशत (0.2 अरब हैक्टेयर) सिंचित है। दक्षिण एशिया में सिंचित भूमि का हिस्सा उच्चतम है जो 35 प्रतिशत है तथा इसमें 8.1 प्रतिशत की रिकार्ड वृद्धि शामिल है। खास करके पाकिस्तान और बंगलादेश में कुल कृषि भूमि में से काफी बड़ा हिस्सा सिंचित भूमि का है।

वैश्विक स्तर पर, कृषि क्षेत्र के प्रति हैक्टेयर में पशुधन की संख्या पशुधन इकाइयों (एल यू) में 0.33 थी। क्षेत्रीय समूहों के बीच, दक्षिण एशिया में प्रति हैक्टेयर एल यू 1.09 की उच्चतम हद तक अंकित है और उसके बाद कैरीबियन में एल यू प्रति हैक्टेयर 0.77 है। स्थायी चरागाहों के प्रति हैक्टेयर जीवित पशुओं की संख्या भी इसी के समान परिदृश्य प्रस्तुत करती है। कुल मिलाकर औसत 0.48 एल यू प्रति हैक्टेयर है, इसके साथ ही दक्षिण एशिया में अधिकतम आंकड़े 12.84 प्रतिवेदित है और कैरीबियन दूसरी रैंकिंग के साथ 1.91 पर खड़ा है। निकट पूर्व और उत्तरी अफ्रीका स्थायी चरागाह और कृषि क्षेत्र दोनों में प्रति हैक्टेयर जानवरों की संख्या क्रमश: 0.19 और 0.15 के निम्नतम स्तर पर दर्शाती है। दक्षिण एशिया को अपने पशुधन की संख्या वृद्धि पर निगरानी रखने की आवश्यकता हो सकती है, ताकि पशुधन की संख्या का विस्तार तेज गति से नहीं हो, इसे सुनिश्चित किया जा सके।

आज दुनिया की आबादी 6.5 अरब आंकी जाती है जिसमें से 50 प्रतिशत आबादी कृषि में लगी हुई है। मनुष्य का करीब-करीब 99 प्रतिशत भोजन भूमि से प्राप्त होता है। इससे यह प्रकट होता है कि मानवीय अस्तित्व के लिए भूमि एवं अन्य प्राकृतिक संसाधन–पानी, जंगल, जैव-विविधता आदि–कितने महत्वपूर्ण हैं।

रोम में (नवम्बर 1996 में) खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा आयोजित विश्व खाद्य सम्मेलन ने यह प्रतिबद्धता जताई कि विश्व को खाद्य सुरक्षा प्रदान की जाएगी तथा सभी लोगों को सुरक्षित एवं पोषित भोजन प्राप्त करने का अधिकार होगा। इस सम्मेलन ने यह घोषणा भी की कि दुनिया भर से भूख को मिटा दिया जाएगा तथा वर्ष 2015 तक भूखे लोगों की संख्या को आधा कर दिया जाएगा।

फिर भी, उपर्युक्त 1996 विश्व खाद्य सम्मेलन में इंगित लक्ष्य तथा 2001 विश्व खाद्य सम्मेलन में पुन: दोहराये जाने के बावजूद यह साबित हुआ है कि इसे हासिल नहीं किया जा सकता क्योंकि इस कदम की उपयोगिता एवं लाभ के मसले पर सत्ताधारी कारपोरेट एवं व्यवसायिक क्षेत्र के अन्दर गंभीर मतभेद है।

* * * * *

सन् 1995-2005 के दौरान भारत के दस हजार किसानों ने आत्महत्याएं क्यों की

तथा

भारत के 40 प्रतिशत किसान खेती क्यों छोड़ना चाहते हैं

सन् 2000 में राष्ट्रीय कृषि नीति की घोषणा करने एवं विश्व के नेताओं के सम्मेलन में सहस्राब्दी विकास लक्ष्य अपनाए जाने के बाद भारत के कृषि मंत्रालय ने भारतीय किसानों की आर्थिक एवं सामाजिक ताजा हालात को जानने के अपने फैसले के आधार पर राष्ट्रीय सैम्पल सर्वे संगठन (एन एस एस ओ) को किसानों के बारे में व्यापक सामाजिक सर्वेक्षण करने को कहा, जिसमें उनके शैक्षणिक स्तर, जीवन स्तर, कृषि शैली, किसानों के पास उत्पादक संसाधन, जागृति एवं आधुनिक तकनीकी संसाधनों की उपलब्धता और उन तक किसानों की पहुँच, कर्जदारी तथा अन्य संबंधित मुद्दों को सर्वेक्षण के लिए शामिल किया गया। जुलाई 2002 से जून 2003 तक के समय का किसानों की परिस्थिति

का मूल्यांकन सर्वेक्षण नेशनल सैम्पल सर्वे संगठन (एन एस एस ओ) द्वारा किया गया, इस सर्वे में देश भर में फैले 6638 से अधिक गाँवों के 51770 परिवारों को शामिल किया गया।

यद्यपि इस सर्वेक्षण में भारत के विभिन्न प्रान्तों के किसान परिवारों के विभिन्न पहलुओं को उजागर किया गया है, लेकिन हमने इस लेख में किसान परिवारों की केवल आय-व्यय की स्थिति को दर्शाने की कोशिश की है जिससे आज के भारत के किसान की क्या स्थिति है, इसका खुलासा हो सकेगा।

इस सर्वेक्षण के अनुसार अखिल भारतीय स्तर पर एक किसान परिवार की औसत वार्षिक आय 25380 रुपये थी, जिसमें खेती, मजदूरी, पशुपालन एवं गैर-कृषि धंधे की आय शामिल है। यहाँ दिलचस्प बात यह है कि कुल आय में से खेती से होने वाली आमदनी केवल 45 प्रतिशत के करीब है तथा बाकी आमदनी अन्य स्रोतों से है, जिसमें मजदूरी की आय शामिल है जो करीब 39 प्रतिशत बनती है। स्पष्टतया, प्रत्येक किसान परिवार की खेती से होने वाली वार्षिक आमदनी केवल 11628 रुपये के करीब है। जहाँ तक खेती के औसत वार्षिक व्यय का संबंध है, इस सर्वे के अनुसार अखिल भारतीय स्तर पर प्रत्येक परिवार का खेती पर होने वाला खर्च 8791 रुपये होता है।

खेती पर होने वाले औसत खर्च (8791 रुपये) को यदि खेती पर होने वाली आमदनी (11,628 रुपये) में से घटा कर दिया जाए तो एक किसान परिवार की शुद्ध आय (यानि, खेती व्यवसाय की आय) अखिल भारतीय स्तर पर केवल 2837 रुपये ही है। प्रत्येक प्रान्तीय स्तर पर यदि हम देखें तो यह स्थिति और भी बदतर है। आन्ध्र प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान और तमिलनाडु में तो यह स्थिति दहलाने वाली है, क्योंकि किसान की शुद्ध आय यहाँ नकारात्मक है, यानि खेती पर होने वाला वार्षिक खर्च खेती से होने वाली वार्षिक आय से अधिक है। आसाम, जम्मू-कश्मीर और पंजाब के अलावा अन्य सभी राज्यों में किसान परिवार की वार्षिक शुद्ध आय 4000 रुपये से कम है। वास्तव में उड़ीसा, उत्तर प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल में प्रति किसान परिवार की यह शुद्ध आय 1000 रुपये से कम है।

ऋणग्रस्तता (संस्थागत या गैर-संस्थागत स्रोतों से किसान परिवारों द्वारा लिये गये ऋण का हिस्सा जो लेखे-जोखों में इंगित है) तथा ऋण का बोझ (प्रत्येक किसान परिवार द्वारा लिये गये ऋण की रुपयों में संख्या) उन सभी प्रान्तों में अधिक पाया गया है जहाँ किसान परिवार की आय से खपत पर होने वाला खर्च अधिक है (सर्वेक्षण रिपोर्ट की सारणी देखें)। जम्मू-कश्मीर और आसाम के अलावा उपर्युक्त अनुसार यह देखने में आया है कि शेष सभी प्रान्तों में किसान परिवार की आय की बनिस्पत तुलनात्मक रूप में उनका खपत खर्च अधिक है। यह साफ तौर पर उन किसान परिवारों की ऋणग्रस्तता की स्थिति से झलकता है जहाँ आसाम और जम्मू-कश्मीर के अलावा शेष सभी प्रान्तों में प्रति किसान परिवार पर ऋण बहुत अधिक है। आन्ध्र प्रदेश, हरियाणा, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु और यू पी के किसान संभवतया इसलिए बहुत अधिक ऋणग्रस्त हैं क्योंकि किसान परिवारों की आय इतनी भी नहीं है कि वे खपत पर होने वाले खर्च को वहन कर सकें। वास्तव में प्रति परिवार पर औसत कर्ज तुलनात्मक विकसित प्रान्त जैसे, आन्ध्र प्रदेश, हरियाणा, केरल, पंजाब तथा तमिलनाडु में 24000 रुपये से 42000 रुपये तक है।

स्पष्टतया इस लेख ने किसान क्यों आत्महत्याएं करते हैं, इस प्रश्न का पर्याप्त जवाब दे दिया है। स्थिति मूल्यांकन सर्वेक्षण रिपोर्टों में से एक रिपोर्ट यह भी इंगित करती है कि यदि चयन करने की छूट दी जाए तो 40 प्रतिशत किसान खेती छोड़कर कोई अन्य जीविका अपनाने को तैयार हैं (एन एस एस ओ 2005 : 11) ये सभी स्पष्ट दर्शाते हैं कि किसान महान विपत्ति से घिरे हैं। ये सभी घटनाक्रम कारपोरेट नेतृत्व वाली वाणिज्यिक खेती का अपरिहार्य परिणाम है।

आनुवंशिक परिवर्तित (जी एम) खाद्य : अजन्मे बच्चों को क्षति पहुँचा सकते हैं

ट्रिब्यून 12.01.2006, पेज 11

चौंकाने वाले नये अनुसंधान के सुझाव के अनुसार गर्भावस्था में जो महिला आनुवंशिक परिवर्तित (जी एम) भोजन खाती है वह अपने अजन्मे बच्चे को खतरे में डालती है।

रूस की विज्ञान अकादमी के शीर्षस्थ वैज्ञानिक द्वारा किये गए अध्ययन में पाया गया कि जिन चूहों को परिवर्तित सोया का भोजन दिया गया उनके आधे से अधिक बच्चे जीवन के पहले तीन सप्ताह में ही मर गये तथा इन मरने वाले बच्चों की संख्या सामान्य भोजन करने वाली माताओं के मरने वाले बच्चों से छः गुना अधिक थी। जी एम सोया खाने वाली माताओं के बच्चे सामान्य भोजन खाने वाली माताओं के बच्चों की तुलना में बहुत कम वजन वाले थे और उनकी संख्या भी छः गुना अधिक थी।

हाल ही में अध्ययन की गई रिपोर्टों में से एक अनुसंधान रिपोर्ट जो प्रकाशन के लिए तैयार की गई है–जिसमें इस भय को दोहराया है कि आनुवंशिक परिवर्तित (जी एम) भोजन मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। इतालवी अनुसंधान में पाया गया कि परिवर्तित सोया से चुहिया के लीवर व अग्नाशय दुष्प्रभावित हुए। परिवर्तित मटरों के विकास में लगे दसियों सालों के प्रयास को आस्ट्रेलिया को छोड़ना पड़ा, जब एक सरकारी अध्ययन में यह पाया गया कि परिवर्तित मटर फेफड़ों को नुकसान पहुँचाने का कारण है।

पिछले साल मई में जैव तकनीक के दिग्गज मोनसैन्टो की एक गुप्त रिपोर्ट को इस अनुसंधान रिपोर्ट ने उद्घाटित किया जिसमें यह दर्शाया गया था कि जिन चूहों को आनुवंशिक परिवर्तित मक्की की पौष्टिक खुराक खिलाई गई थी, उन चूहों की किडनी छोटी थी तथा ब्लड शैल की मात्रा अधिक थी, जो यह इंगित करते हैं कि उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता को हानि पहुँचना सम्भव है–बनिस्पत उन चूहों के जिन्होंने उसी प्रकार की परम्परागत मक्कई का भोजन किया।

पिछले साल के अन्त में अपने रोम स्थित मुख्यालय में संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन ने एक कार्यशाला आनुवंशिक परिवर्तित खाद्य सुरक्षा पर आयोजित की। उस कार्यशाला में उन वैज्ञानिकों ने उद्बोधन किया जिनके अनुसंधानों में स्वास्थ्य को खतरा पहुँचने के बारे में चिन्ता जाहिर की गई। इसके बावजूद विश्व व्यापार संगठन द्वारा अगले महिने बुश प्रशासन की इस कोशिश को समर्थन किये जाने की आशा है जिसके जरिये यूरोपियन देशों पर आनुवंशिक परिवर्तित (जी एम) खाद्य को अपनाने का दबाव बनाया जा रहा है।

रूसी अनुसंधान ने यह चेतावनी दी है कि पहले से चले आ रहे विपरीत लोकमत पर इसका विस्फोटक असर होगा। रूसी विज्ञान अकादमी की हायर नरवस एक्टीवीटी और न्यूरो फिजियोलोजी संस्था में डॉ. इरीना इरमाकोवा द्वारा किये गये अनुसंधान के बारे में विश्वास किया जाता है कि यह अजन्मे बच्चों पर आनुवंशिक परिवर्तित खाद्य के प्रभावों को परखने का प्रथम अनुसंधान है।

मादा चूहों के गर्भ धारण से दो सप्ताह पूर्व से, गर्भ धारण के समय, बच्चे जन्म के समय तथा उनके पालन-पोषण के दौरान मोनसैन्टो द्वारा उत्पादित आनुवंशिक परिवर्तित सोयाबीन (जिसमें पेस्टीसाइड के प्रतिरोध का गुण था) के आटे को उनके भोजन में मिलाकर वैज्ञानिकों द्वारा दिया गया... जबकि अन्य मादा चूहों को गैर-आनुवंशिक परिवर्तित सोया दिया गया तथा मादा चूहों के तीसरे ग्रुप को सोया न देकर अन्य भोजन दिया गया।

डॉ. इरिना इरमाकोवा ने पाया कि जिन चूहों को परिवर्तित सोया खिलाया गया था उनके बच्चों में 36 प्रतिशत अत्यधिक कम वजन वाले थे, इसकी तुलना में अन्य ग्रुपों के बच्चे 6 प्रतिशत ही कम वजन वाले थे। अधिक चेतावनी भरा व विचलित करने वाला तथ्य यह है कि जो माताएं आनुवंशिक परिवर्तित खुराक पर निर्भर थी उनके बच्चों के जन्म होने के तीन सप्ताह के अन्दर ही 55.6 प्रतिशत बच्चे मर गये, इसकी तुलना में जिनको साधारण सोया खिलाया गया था उनके 9 प्रतिशत बच्चे ही मरे और जिनको सोया खिलाया ही नहीं गया उन माताओं के बच्चे 6.8 प्रतिशत ही मरे।

डॉ. इरमाकोवा ने बताया कि ''चूहों का आकृति-विज्ञान एवं जैव-रासायनिक ढाँचा मनुष्यों से काफी मिलता-जुलता है और इसलिए यह नतीजे काफी परेशान करने वाले हैं।'' उनके अनुसार ''ये नतीजे माताओं और उनके होने वाले बच्चों पर खतरे को इंगित करते हैं।''

पर्यावरणवादियों का कहना है कि – यद्यपि ये प्रारम्भिक नतीजे हैं–परन्तु संभवत: ये नतीजे इतने गम्भीर हैं कि इनका ध्यान रखा जाना चाहिए। पर्यावरणीय औषधियों की अमेरिकन अकादमी ने अमेरीका के राष्ट्रीय स्वास्थ्य संस्थान को तुरन्त निष्पक्ष जाँच-पड़ताल को प्रायोजित करने के लिए कहा है।

अमेरिका में मोनसैन्टो सोया को बड़े पैमाने पर खाया जाता है। ब्रिटिश भोजन में या तो बहुत ही थोड़ा या कोई भी आनुवंशिक परिवर्तित उत्पाद शामिल नहीं है, यद्यपि माँस के लिए पाले जाने वाले पशुओं के भोजन के लिए इस सोया का आयात किया जाता है।

इंग्लैण्ड के मोनसैण्टो के कारपोरेट मामलों के निदेशक टोनी कूम्बस का कहना है कि ''प्रकाशित, पुनरविचारित रिपोर्टों की तह में जाकर, निष्पक्ष किये गए वैज्ञानिक अध्ययनों के भरे पूरे प्रमाण यह दर्शाते हैं कि आनुवंशिक तौर पर तैयार किया गया सोया चूहों तथा अन्य सभी अध्ययन की गई पशु प्रजातियों द्वारा सुरक्षित तौर पर खाया जा सकता है।'' (दी इन्डीपेडेन्ट)

मिट्टी के कटाव पर विशेषज्ञ चिन्तित

पंजाब कृषि विश्वविद्यालय के मृदा विभाग के दो कृषि वैज्ञानिक हरमिन्दरसिंह उप्पल तथा गुरजीतसिंह ने मिट्टी के कटाव को रोकने के लिए प्रभावी कदम उठाने तथा भूसंरक्षण को मजबूत करने का आह्वान किया है।

चेतावनी भरा तथ्य यह था कि प्रतिवर्ष प्रति हैक्टेयर 16.35 टन मिट्टी नष्ट होती जा रही है।

जंगलों के नष्ट होने, अत्यधिक चराई, स्थानान्तरित कृषि, शुष्क फसली खेती और नदी-नालों के रास्ता बदलने सहित बहुत से कारणों से भूमि का क्षरण हुआ है। विशेषज्ञ कहते हैं कि नदी-नाले, खड्ड व दर्रों और दरारों के बनने से भूमि कटाव होता है और खेती योग्य भूमि को नुकसान पहुँचता है। कभी-कभी सम्पूर्ण ऊपर की मिट्टी हट जाती है तथा अन्य अवसरों पर मिट्टी कटाव आंशिक रूप से होता है, मिट्टी कटाव के कारण नदियों में बाढ आती है, कहीं मिट्टी का जमाव हो जाता है, मिट्टी की उत्पादकता प्रभावित होती है तथा सतह के नीचे का जल स्तर घट जाता है। उप्पल का कहना है कि मिट्टी का गम्भीर कटाव उस क्षेत्र का चरित्र है जहाँ भारी वर्षा होती है तथा भूमि का प्रबन्ध ठीक नहीं है। सामान्य तौर पर भौगोलिक मिट्टी का कटाव भी एक धीमी व लम्बी प्रक्रिया है जो मिट्टी के हटने और बनने के बीच सन्तुलन को सुनिश्चित करती है। मिट्टी के कटाव को रोकने और नियंत्रित करने के लिए वैज्ञानिक कृषि शास्त्रीय एवं यान्त्रिक दोनों तरीके अपनाने का सुझाव देते हैं। पानी के बहाव, मिट्टी के कटाव तथा पौधों की पोषकता कम होने से रोकने के लिए समान स्तर की भूमि वाली खेती अपनाकर कृषि शास्त्रीय तरीका काम में लिया जा सकता है। दूसरा यांत्रिक एवं इंजीनियरिंग का व्यापक तौर पर काम में आने वाले तरीके में विभिन्न प्रकार के खड्डे खोदना तथा अतिरिक्त पानी के बहाव को रोकने के लिए कगार निर्माण करना एवं मिट्टी को बहाकर ले जाने वाले पानी की गति को रोकने के लिए बाँध का निर्माण करना शामिल है।

पंजाब में जंगल का क्षेत्र देश में सबसे कम

भारत के वन सर्वेक्षण की 2005 की ताजा प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार पंजाब में घने जंगलों का क्षेत्र बहुत भारी तादाद यानि, 80600 हैक्टेयर घट गया है। सन् 2001 में जंगल के क्षेत्र के रूप में पंजाब प्रान्त का स्थान भारत के अन्य प्रान्तों के बीच 11वां रह गया था, फिर भी दो सालों में इसकी स्थिति गिर कर देश में सबसे नीचे पहुँच गई है। इस रिपोर्ट के अनुसार पंजाब के जंगल का क्षेत्र देश में अब सबसे निम्नतम है। पंजाब के कुल क्षेत्रफल का 3.14 प्रतिशत जंगल का क्षेत्र है जो रेगिस्तानी राज्य राजस्थान से भी नीचे है जहाँ कुल क्षेत्र में जंगल का क्षेत्र 4.62 प्रतिशत है। जबकि स्थिति यह रही है कि सैकड़ों करोड़ रुपये जंगल लगाने के कार्यक्रमों में विदेशी बैंकों से कर्ज लेकर लगाए गये हैं।

यह रिपोर्ट कुछ चौंकाने वाले तथ्य भी प्रकट करती है। सबसे अधिक प्रभावित जिले जहाँ जंगल का क्षेत्र 2001 से 2003 के बीच क्षीण हुआ है उनमें फिरोजपुर में 11 प्रतिशत, अमृतसर में 106 प्रतिशत, होशियारपुर में 84 प्रतिशत, भटिण्डा में 76 प्रतिशत, गुरुदासपुर में 21 प्रतिशत तथा लुधियाना में 55 प्रतिशत जंगल कम हुआ है।

2001 की सर्वे रिपोर्ट के अनुसार पूरे प्रान्त के कुल जंगल के क्षेत्र का 22 प्रतिशत जंगल क्षेत्र होशियारपुर जिले में था, तथापि दो वर्षों में इस जिले का जंगल 18 प्रतिशत कम हो गया है। होशियारपुर में घने जंगल का क्षेत्र 51 वर्ग किलोमीटर कम हो गया है।

* * * * *

अधिक जनसंख्या 'क्या ग्रह के लिए मुख्य चुनौती है'

दो अगुवा वैज्ञानिकों के अनुसार तेज गति से बढ़ रही विश्व जनसंख्या के विषय की उपेक्षा के चलते जलवायु परिवर्तन और वैश्विक प्रदूषण की समस्या से ठीक ढंग से निपटा नहीं जा सकता।

प्रोफेसर जॉन गुइलेबॉड और ब्रिटिश अन्टार्कटिक सर्वे के निदेशक प्रोफेसर क्रिस राप्ले ने हाल ही में अपनी निराशा इस तथ्य में प्रकट की कि ग्रह को बचाने के लिए समर्पित कई संगठनों के कार्यक्रम से जनसंख्या वृद्धि का विषय छूट चुका है।

वैज्ञानिकों का कहना है कि अगर हमारे ग्रह पर बढ़ती मानवीय जनसंख्या जैसे मार्मिक मसले का हल निकाला गया होता तो विश्व के सामने मौजूद अन्य बहुत सी समस्याओं के सम्बन्ध में वास्तविक प्रगति की जा सकती थी।

प्रोफेसर गुइलेबॉड ने कहा ''यह कमरे में ऐसा हाथी है जिसके बारे में कोई बात करना नहीं चाहता''.... ''अगर हम मानव जनसंख्या को परिवार नियोजन जैसे मानवीय तरीके से कम नहीं करेंगे तो प्रकृति हमारे लिए इस काम को हिंसा, महामारी अथवा भूखमरी के तरीके से कम करेगी।''

प्रोफेसर गुइलेबॉड ने कहा कि उसने 40 साल पहले मानव जनन के क्षेत्र का अध्ययन करना तय किया, क्योंकि खास करके अधिक जनसंख्या से उत्पन्न होने वाली समस्याओं पर विचार करना था।

उनकी बात जलवायु परिवर्तन से अंटाकर्टिका पर पड़ने वाले प्रभाव के विशेषज्ञ प्रोफेसर राप्ले द्वारा भी प्रतिध्वनित की गई, जिन्होंने बताया कि इस वर्ष 7.6 करोड़ लोग बढ़ेंगे, जबकि पृथ्वी पर 6 अरब 50 करोड़ लोग पहले से ही रह रहे हैं, जो कि 1960 में जितने लोग थे उसकी दुगुनी संख्या है।

संयुक्त राष्ट्र ने अनुमान लगाया है कि विश्व जनसंख्या इस शताब्दी के मध्य तक 9 अरब से ज्यादा हो जायेगी, जिसके हिसाब से प्रतिदिन 2 लाख लोग अतिरिक्त जुड़ते जा रहे हैं। प्रोफेसर राप्ले ने कहा कि चाहे हम प्रति व्यक्ति प्रदूषण उत्सर्जन की मात्रा को चमत्कारिक हद तक कम भी कर दें तो भी बढ़ती जनसंख्या के लिए आवश्यक अतिरिक्त संसाधनों का बोझ हमारे ग्रह की जीवनदायी व्यवस्था पर अत्यधिक तनाव और दबाव खड़ा कर देगा।

प्रोफेसर राप्ले बी बी सी वेबसाइट के लिए एक लेख में कहते हैं, ''यद्यपि वातावरण में मानवीय उत्सर्जन को कम करना निस्संदेह अति महत्वपूर्ण है, परन्तु किसी भी तरह और सभी पैमानों से मानव पर्यावरणीय 'पदचिह्न' का असर घटा भी दें तो भी यह सच्चाई है कि प्रत्येक व्यक्ति का इसमें योगदान शून्य नहीं किया जा सकता है। केवल व्यक्तियों की संख्या कम करके ही इसे नीचे लाया जा सकता है, जबकि प्रति व्यक्ति पर्यावरणीय उत्सर्जन कम करने से काम नहीं चल सकता।''

''इसलिए यदि हम विश्वास करते हैं कि मानव 'फुट प्रिंट' का आकार गंभीर समस्या है और इसके बहुत प्रमाण हैं–तब एक तर्कसंगत विचार होगा कि प्रति व्यक्ति फुट प्रिंट कम करने के लिए कई तरह के उपाय करने के साथ-साथ यह अति आवश्यक है कि जनसंख्या प्रबंध के मसले को सम्बोधित किया जाए।''

प्रोफेसर राप्ले ने कहा कि ''मानव जनसंख्या में विस्फोटक वृद्धि और पर्यावरण पर उसके सहगामी प्रभाव के बारे में वातावरण परिवर्तन से सम्बन्ध रखने वाले बहुत से लोगों ने अत्यधिक अनदेखी का रुख अपनाया है और उसने कहा कि इस विषय के लिए यह विस्फोटक गलती है, जिसमें गम्भीर और भावनात्मक-नीतिशास्त्र, नैतिकता, समता और व्यावहारिकता के मसले निहित हैं।''

''यह विषय इतना विवादास्पद है कि यह महान टिकाऊ विकास के वाद-विवाद के क्षेत्र में उपेक्षित बन गया है – जो सार्वजनिक या नीति क्षेत्र में कभी बिरले ही बहस में आता है।''

''ऐसी अन्तरशिक्षण वाली मिटिंगें–जिनमें सम्बोधित किया जाता है कि हमारा ग्रह कैसे एक एकीकृत सम्पूर्ण इकाई के रूप में कार्य करता है, इनमें जनसांख्यिक और जनसंख्या विशेषज्ञ आम तौर पर अपनी अनुपस्थिति से इस मुद्दे की महत्वता को समाप्त कर देते हैं।''

आदर्श जनसंख्या न्यास के सह प्रमुख रहे प्रोफेसर गुइलेबॉड ने कहा कि विकासशील दुनिया की पर्यावरणीय समस्याओं पर विचार-विमर्श करते हुए लगभग 25 वर्ष पहले परिवार नियोजन लागू करने का फैसला राजनीतिक तौर पर गलत हो गया। प्रोफेसर गुइलेबॉड कहते हैं कि अगर मौसम परिवर्तन को रोकना था और हमारे ग्रह पर प्रत्येक व्यक्ति का जीवन स्तर यूरोप के समान बनाना था तो विश्व जनसंख्या को करीब दो तिहाई कम करने की आवश्यकता थी।

सद्भाव संरक्षण संस्था डब्ल्यू.डब्ल्यू.एफ. तथा वाशिंगटन स्थित वर्ल्डवाच संस्थान द्वारा पर्यावरणीय मूल्यांकन में पाया कि अब मानव प्रति वर्ष प्रतिस्थापित की जा सकने वाले नवीनीकरण संसाधनों का लगभग 20 प्रतिशत अधिक शोषण करता है।

प्रोफेसर गुइलेबॉड कहते हैं कि इसका अर्थ है सन् 2050 में जब मानव जनसंख्या 9 अरब हो जायेगी, उस समय मानव को इतने प्राकृतिक संसाधनों की आवश्यकता होगी जो हमारे ग्रह पृथ्वी जैसे चार से अधिक ग्रह ही पूरी कर सकते हैं।

''आंकड़े दर्शाते हैं कि ग्लोबल वार्मिंग (वैश्विक उष्माकरण) को रोकने के हमारे प्रयासों में केवल जीवन के तरीके और तकनीकी पर जोर देना और जनसंख्या की अनदेखी करना हमारी मूर्खता है।'' उसने आगे कहा, ''हमें जलवायु परिवर्तन के साथ-साथ, इस परिवर्तन को करने वाले मानवों और उनकी संख्या के बारे में सोचने की आवश्यकता है।''

कुछ पर्यावरणवादी तर्क करते हैं कि मानव संख्या नहीं बल्कि प्राकृतिक संसाधनों का सापेक्ष उपयोग और कार्बन-डाई आक्साइड के उत्सर्जन जैसे कचरे के उत्पादन का विषय अधिक महत्वपूर्ण है। वे सुझाव देते हैं कि हमारा ग्रह 9 अरब की आबादी या इससे भी अधिक आबादी को वहन कर सकता है, यदि प्रत्येक व्यक्ति की ऊर्जा उपयोग वाली जीवन शैली बदल दी जाए, यानि, जैविक ईंधन के बजाए नवीनीकरण की जा सकने वाली ऊर्जा पर आधारित कम ऊर्जा तीव्रता की जीवन शैली प्रत्येक व्यक्ति द्वारा अपनाई जाए।

लेकिन प्रोफेसर गुइलेबॉड कहते हैं, ''हमें तुरन्त ही मानव संख्या को स्थिर करने और कम करने की जरूरत है। संयुक्त राष्ट्र के 2050 के लिए किए गये अनुमान के मुताबिक, उस समय की 9 अरब की आबादी की ऊर्जा जरूरतों को–इस ग्रह को अस्वीकृत हद तक नुकसान किए बिना तथा मानव को दुर्दशा में धकेले बिना–पूरी करना नामुमकिन होगा।

भीड़ से ठसाठस पृथ्वी

❊ मानव जनसंख्या अभी 6.5 अरब है तथा 2050 तक बढ़कर 9 अरब से ज्यादा होने वाली है।

❊ मानव जनसंख्या जो 1960 में 3 अरब थी, यह बढ़कर 50 वर्षों से भी कम समय में दुगुनी हो गई है।

❊ चीन 1.3 अरब से अधिक जनसंख्या के साथ सर्वोच्च आबादी वाला देश है। 1.1 अरब के साथ भारत दूसरे नम्बर पर है।

❊ सन् 2030 तक 1.5 अरब की आबादी के साथ भारत के चीन से आगे निकलने की उम्मीद है।

❊ प्रत्येक तीन लोगों में से एक जीवित व्यक्ति की आयु 20 वर्ष से कम है, जिसका अर्थ है जनसंख्या वृद्धि लगातार जारी रहेगी, क्योंकि अधिक संख्या में बच्चे वयस्क होंगे।

❊ ब्रिटेन की जनसंख्या 6 करोड़ है, अनुमान किया जाता है कि अगले 25 वर्षों में 70 लाख की वृद्धि होगी और लगभग 1 करोड़ से अधिक की वृद्धि अगले 60 वर्षों में मुख्यत: अप्रवास के कारण होगी।

❊ यह लुटन (आबादी 1,84,000) जैसे 57 अतिरिक्त शहरों के बराबर है।

इस कालम के पढ़ने की समाप्ति तक अनुमानत: 100 बच्चे इस दुनिया में जन्म ले चुके हैं। *दी इण्डिपेंडेन्ट*

❊ ❊ ❊ ❊ ❊

टिप्पणी

पाकिस्तान के कुछ मित्रों का एक पत्र नेचर-ह्युमन सेन्ट्रिक व्यूप्वाइंट को मिला हैं। उन्होंने नेचर-ह्युमन सेन्ट्रिक पीपल्स मूवमेन्ट (एन एच सी पी एम) की लाईन से संबंधित कुछ सवालों को उठाया है। यहाँ हम उपर्युक्त वर्णित पत्र के मूल पाठ व उसमें वर्णित प्रश्नों पर हमारा मत प्रकाशित कर रहे हैं।

पत्र का मूल पाठ

प्रिय श्री सज्जन,

आशा है कि आप ठीक एवं स्वस्थ होगें।

घनश्यामजी हमसे विश्व सामाजिक मंच (डब्लू एस एफ) में मिले इससे पहले श्री जवाहरलाल हमारे पास आए। दोनों मित्रों ने एन एच सी पी एम की नई धारणाओं की व्याख्या की। विश्व सामाजिक मंच का हमारा सेमीनार इस मायने में सफल था कि पंजीकरण रेकार्ड के अनुसार इस सेमीनार में 110 लोगों ने भाग लिया था। विश्व सामाजिक मंच में कुल मिलाकर माहौल मेले जैसे था परन्तु, हमारे सेमीनार में अधिकांश भागीदारों ने चर्चा व प्रश्न करने में सक्रिय भाग लिया।

विश्व सामाजिक मंच के अलावा, हमने छोटे-छोटे ग्रुपों में भी विचार-विमर्श किया। एन एच सी पी एम के लिए हमने जिन व्यक्तियों से सम्पर्क किया वो लगभग सभी वाम विचारधारा से संबंधित थे। विचार-विमर्श में उनके कुछ सवाल थे जिनके उत्तर की आवश्यकता हैं।

1. बिना राजनीतिक पार्टी के परिवर्तन कैसे हो सकता हैं.....

2. जब पूंजीपतियों का अपना वर्गहित हैं तो वे अपना हित मात्र शांतिपूर्ण तरीके से प्रभावित करने से कैसे छोड़ देगें। वर्ग संघर्ष एवं सशस्त्र क्रांति ही अधिक उचित उपाय नजर आता है।

3. आय में 1:5 के अन्तर का अर्थ हैं पूंजीपतियों की निवेश करने में कोई रूचि न रहना.....इसलिए यह स्वाभाविक हैं कि वे उन स्थानों, क्षेत्रों या देशों में निवेश करेंगे जहां अधिक लाभ मिलें, नेचर-हुमन सेन्ट्रिक विचार वाले उद्योग एवं अन्य जगह निवेश खो देगा जिससे वृद्धि दर एवं विकास का स्तर नीचे गिर जायेगा।

4. यदि राज्य फैक्ट्री व अन्य संस्थानों को नियंत्रित नहीं करेगा तो वर्तमान पूँजी मालिको को कैसे हटाया जा सकेगा।

5. वर्तमान में जीवों की समाप्ति का खतरा बहुत अधिक प्रभावी मुद्दा नजर नहीं आता। भूतकाल में भी बहुत से दार्शनिकों का यह मत रहा हैं परन्तु यह ग्रह अभी भी निवास करने योग्य हैं तथा योरोप व अमेरिका जैसे विकसित देश, इस ग्रह को संरक्षित रखने का कोई न कोई रास्ता निकाल ही लेंगे.....चूंकि वर्तमान में यह खतरा इतना चुनौतिपूर्ण नहीं है इसलिए लोग हमारी बात पर ध्यान नहीं देंगे।

6. संक्षेप में, नेचर-हुमन सेन्ट्रिक पीपल्स मूवमेन्ट की कार्ययोजना स्पष्ट नहीं हैं इसलिए हमारे बहुत से मित्र और अधिक स्पष्टता चाहते हैं।

वैश्वीकरण और विशाल कॉरपोरेटरों द्वारा हमारे क्षेत्रों पर आक्रमण के इस युग में मात्र शांतिपूर्ण तरीकों से हम उनके कार्यक्रम को कैसे बदल सकते हैं।

मैं आशा करता हूँ कि आप हमारी समस्या को समझ गए होगें। हमें अधिक साहित्य की आवश्यकता हैं या इन मुद्दों पर गहराई से विचार-विमर्श करने की आवश्यकता हैं ताकि एक सुस्पष्ट सहमति पर पहुंचा जा सकें कृपया हमारा मार्ग दर्शन करें कि क्या किया जाए तथा आगे कैसे बढ़ा जाए।

आदर के साथ

बरकत

उपर्युक्त वर्णित प्रश्नों पर हमारी राय निम्न हैं

प्रकृति–मानव केन्द्रित बुनियादी धारणा

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन की यह दृढ़ मान्यता है कि दो अन्तरक्रियाओं के आधार पर मानव समाज अपना अस्तित्व रखता हैं, विकसित होता हैं तथा परिवर्तित होता हैं। एक अन्तरक्रिया प्रकृति और मानव समाज के बीच और दूसरी अन्तरक्रिया स्वयं मानव समाज के अन्दर हो रही हैं।

प्रकृति के इस विशाल भंडार से पहली अन्तरक्रिया के जरिए मानव समुदाय अपने अस्तित्व सहित सभी आवश्यकताओं की पूर्ति करता हैं और दूसरी तरफ सम्पूर्ण मानव समुदाय (जहां प्रत्येक सदस्य व्यक्तिगत तथा सामाजिक दोनों स्तर पर भिन्न-भिन्न मानसिक, शारीरिक तथा भावनात्मक आवेगों से चरित्रित हैं) के सामाजिक प्रबन्ध–आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, वैचारिक आदि–से सम्बन्धित हैं।

स्पष्टतया, उपर्युक्त बुनियादी नजरिया हमें इस लायक बनाता हैं कि मनुष्य समाज में प्राकृतिक संसाधन और मानव संसाधन दोनों एक बहुत ही महत्वपूर्ण घटनाक्रम हैं

जबकि प्रत्येक अन्य घटनाक्रम (यानि पूँजी, व्यापारिक माल, तकनीक, औजार इत्यादि) जो मानव-समाज में क्रियाशील हैं, वे चाहे कितने ही महत्वपूर्ण क्यों न हों, उनका महत्व दोयम दर्जे का हैं।

प्रथम प्रश्न (यानि, राजनीतिक दल के बिना परिवर्तन कैसे हो सकता हैं) के संबंध में, ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता हैं कि पूंजीवाद के पहले की अवस्थाओं में अर्थात् घूमन्तू मानव झुण्ड, गण समाज, कबीला तथा सामन्ती अवस्था में कोई राजनीतिक दल नहीं रहा हैं। इन सभी सामाजिक अवस्थाओं में मनुष्य का स्वभाव दो सहज वृतियों यानि एक तरफ व्यक्तिगत और दूसरी तरफ सामाजिक से चरित्रित रहा हैं। मनुष्य में व्यक्तिगत सहज वृत्ति का आधार उसकी वैयक्तिक-जैविक अस्तित्व में निहित हैं जबकि सामाजिक वृति उसके सामाजिक जीवन यानि अन्य मनुष्यों के साथ रहते हुए जीना, परिवार के रूप में तथा अन्य बहुत से स्वरूपों–आर्थिक, सांस्कृतिक या वैचारिक–में जिन्दगी गुजारना।

मनुष्य का पहला सामाजिक समूह, यानि घुमन्तू मानव झुण्ड का नेतृत्व वह व्यक्ति करता था जो उस झुण्ड के अन्य सभी सदस्यों से शारीरिक रूप में अधिक बलशाली होता था जिसमें खतरों से सामना करने के लिए अधिक बहादुरी होती थी। दूसरी सामाजिक संरचना यानि गण समाज, जो लाखों वर्षों तक रहा हैं, इसके प्रथम में मातृसत्तात्मक प्रबन्ध था जहां दादी मां सर्वोच्च सत्ता के स्थान पर स्थापित थी। समय के साथ मातृसत्ता के स्थान पर पितृसत्ता आ गई, जहां गण का वरिष्ठतम पुरुष सदस्य सर्वोच्च स्थान पर पदस्थापित रहा। तृतीय सामाजिक संरचना, यानि कबिलाई समाज का नेतृत्व कबीले के मुखिया द्वारा किया गया। चतुर्थ सामाजिक संरचना, यानि सामन्ती सामाजिक संगठन में सामन्ती राजशाही का वर्चस्व रहा। इन सभी सामाजिक संरचनाओं का अस्तित्व लाखों वर्षों तक रहा हैं जिसमें मानव अस्तित्व का करीब-करीब सम्पूर्ण काल तथा 300 वर्षों से जारी मौजूदा सड़ रहा पूंजीवादी संरचना समाहित है। इन सभी सामाजिक संरचनाओं में प्रत्येक संरचना कभी युद्ध और कभी शांति के दौर से गुजरी हैं, जैसे-जैसे मनुष्य समाज कदम ब कदम एक वैश्विक इकाई की ओर कदम बढ़ाता गया हैं वैसे-वैसे शांति का पहलू अधिक वांछनीय हो गया हैं। और आखिरकार, इन सामाजिक संरचनाओं में से हरेक का राजनीतिक दलों के बिना अपना-अपना विशिष्ट दृष्टिकोण, राजनीति, आर्थिकता, संस्कृति आदि से चरित्रित रहे हैं। प्रथम तीन पूंजीवादी राज्य, यानि हालैंड (1595), ब्रिटेन (1648) और फ्रांस (1789) के प्रादुर्भाव के काल में कोई राजनीतिक दल अस्तित्व में नहीं था। नये उभर रहे पश्चिमी यूरोपीय पूंजीवादी राज्यों में जब पूंजीवादी लोकतांत्रिक ढांचे बनने शुरू हुए तब लोकतंत्र के वाहक के रूप में अपने-अपने राज्यों में पूंजी मालिकों ने राजनीतिक दलों का गठन शुरू किया। पूंजीवाद के काल में उपनिवेशी तथा अर्द्धउपनिवेशी चरणों से गुजरते-गजरते सत्ताधारी राजनीतिक पार्टियों का क्षरण अपराध, भ्रष्टाचार तथा प्रतिक्रियावाद के मुख्य औजार के रूप में हो गया। और आज ये राजनीतिक पार्टियां सभी किस्म की सामाजिक बुराइयों का गढ़ बन गई हैं।

प्रकृति-मानव केन्द्रित राजनीति की मान्यता हैं कि एक ऐसी लोकतांत्रिक व्यवस्था कायम हो जो पूर्णतया लोकतांत्रिक उसूलों, क्रियाकलापों और ढांचे पर आधारित हो। इस प्रकार के मॉडल के लिए निर्णय लेने में अधिकतम सम्भव लोकसशक्तिकरण तथा

दलीय केन्द्रित ढांचे का चहुंमुखी गैर-सशक्तिकरण करने की आवश्यकता हैं। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए यहाँ निम्न बिन्दु दिये जा रहे हैं जो इसमे मददगार हो सकते हैं।

पार्टी टिकट के बनिस्पत लोगों द्वारा निर्धारित लोक उम्मीदवार।

किसी भी उम्मीदवार के लिए कोई जमानती राशि जमा नहीं करवाई जाए।

सभी तरह के चुनावों में सरकार खर्चा उठाए।

नकरात्मक मत देने का अधिकार हों।

कुल मतदाताओं में से 50 प्रतिशत मतदान होना जरूरी हों।

जीतने वाले उम्मीदवार के लिए मतदान हुए मतों में से 50 प्रतिशत मत पाना आवश्यक हो।

चुने हुए उम्मीवाद को वापिस बुलाने का अधिकार हों।

चुना हुआ सदस्य कार्यपालिका के पद पर लगातार दो सत्र तक ही रह सकता हैं।

द्वितीय प्रश्न (कि जब पूंजीपतियों का अपना वर्ग हित है तो वे अपना हित मात्र शांतिपूर्ण तरीके से प्रभावित करने से कैसे छोड़ देगें..... वर्ग संघर्ष एवं सशस्त्र क्रांति ही अधिक उचित उपाय नजर आता हैं)के संबंध में, विज्ञान और इतिहास दर्शाता हैं कि एकता और संघर्ष दोनों जो एक दूसरे के एकदम विपरीत असर वाले दो भिन्न-भिन्न किस्म के तरीकाकार हैं जो प्रथम, किसी प्रक्रिया में मात्रात्मक और गुणात्मक परिवर्तन लाते हैं और उसके बाद एक नई प्रक्रिया के रूप में तब्दीली ले आते हैं।

मसलन, एक निश्चित समय की मानवीय सामाजिक इकाइयां अपने तात्कालिक सामाजिक रचनातंत्र के साथ जब सामंजस्य या शान्तिपूर्ण संबंध या एकता कायम करती हैं तो वे उस समाज को विकास की तरफ ले जाती हैं, जबकि निश्चित सामाजिक इकाईयों तथा तात्कालिक सामाजिक रचनातंत्र के बीच असामंजस्य यां संघर्ष अथवा अशान्तिपूर्ण संबंध कायम होते है तो सामाजिक बिखराव की और ले जाते हैं। पुन: , कृषिकारी सामाजिक संरचना से औद्योगिक सामाजिक संरचना में बदलाव हालैंड (1595), ब्रिटेन (1648) तथा फ्रांस (1789) में इनकी पुरानी व नई सामाजिक इकाईयों में संघर्ष के जरिए आया तथा जर्मनी (1848), जापान (1880), रूस, पोलैंड, हंगरी, आस्ट्रिया, स्वीडन एवं नोर्वे में यह बदलाव उनकी नई पुरानी सामाजिक इकाइयों के बीच बातचीत और समझौता या एकता के जरिये आया।

आगे, विभिन्न सामाजिक इकाइयों के बीच संघर्ष (दुश्मनी) ने मौजूदा सामाजिक इकाइयों, जैसे, यू एस एस आर, यूगोस्लाविया, चैकोस्लोवाकिया इत्यादि को तोड़ दिया, जबकि विभिन्न सामाजिक इकाइयों के बीच सामंजस्य या एकता ने नई सामाजिक संरचनाओं जैसे, यूरोपियन युनियन, एशियन, सार्क आदि को जन्म दिया हैं।

स्पष्टतया, ये दोनों सिद्धान्त जो परिवर्तन के लिए केवल मात्र संघर्ष या गैर शान्तिपूर्ण तरीके पर जोर देता हैं तथा दूसरा एकता या शान्तिपूर्ण तरीके पर जोर देता हैं, एक तरफा हैं।

पहले दो प्रश्नों (जिन पर ऊपर रोशनी डाली जा चुकी है) से जुड़ा हुआ ही सातवां प्रश्न हैं (यानि वैश्वीकरण और विशाल कॉरपोरेटरों द्वारा हमारे क्षेत्रों पर आक्रमण के इस

युग में मात्र शान्तिपूर्ण तरीकों से हम उनके कार्यक्रम को कैसे बदल सकते हैं) इस प्रश्न में दो बिन्दु हैं जिन्हें उनके उचित परिप्रेक्ष्य में समझना आवश्यक हैं, यानि (क) वैश्वीकरण क्या हैं तथा (ख) हमारे क्षेत्रों पर बड़े कॉरपोरेटरों का हमला हैं, हम उनके कार्यक्रमों को शान्तिपूर्ण तरीके से कैसे बदल सकते हैं।

वैश्वीकरण के मुद्दे के संबंध में, इसका तात्पर्य यह हैं कि वैश्विक मानव समुदाय की गतिविधि भूमण्डलीय हो गई हैं, यानि मानव गतिविधि राष्ट्रीय स्तर से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर में तब्दील हो गई हैं। यह स्थिति दो नये पहलुओं के उभरने से हुई हैं। पहला, दूरसंचार, इंटरनेट तथा सूचना तकनीकी की वजह से मानव के बीच संचार प्रकाश की गति से संभव हो गया हैं। दूसरा, ध्वनि से तेज गति वाली तकनीक के उभरने के कारण मनुष्य का भौतिक सम्पर्क आवाज की गति से भी तेज होने लगा हैं। इन दो तरफा सम्पर्क के अस्तित्व में आने से मौजूदा राष्ट्रीय राज्यों को अन्तरनिर्भर राज्यों में तब्दील करने की आवश्यकता हो गई हैं। अन्तरनिर्भर राज्यों की पहली जरूरत इनके बीच मौजूद सभी तनाव और टकराहट के बिन्दुओं को समाप्त करने की हैं इन राज्यों के बीच एक पुख्ता शान्ति स्थापित करने की हैं।

इस नई वास्तविकता के प्रादुर्भाव के साथ ही सामाजिक विकास के लिए शान्ति एक पूर्व शर्त बन गई हैं क्योंकि सभी प्रकार के युद्ध निरर्थक हो गए हैं। यह इस तथ्य में देखा जा सकता हैं कि अफगानिस्तान और इराक में अमेरिका के प्राणघातक हमले अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में असफल रहे हैं। जबकि अमेरिका इन देशों की बनिस्पत सैनिक व आर्थिक तौर पर कई गुना ताकतवर हैं। आणविक मुद्दे पर अमेरिका के हाल ही के ईरान के विरुद्ध दी गई सैनिक शक्ति पर अधिक जोर देना तथा वर्ग संघर्ष एवं हथियार बन्द क्रांति को उचित साधन माना अवास्तविक हैं।

दुनिया में मौजूदा शक्ति सन्तुलन की स्थिति में यह पूर्णतया सम्भव हैं कि वर्तमान कॉरपोरेट शासन की जगह कुछ स्थानों पर जहां लोगों में एक निश्चित स्तर की जागृति पैदा हो गई हैं वहां लोगों का शासन कायम किया जा सकें। कुछ देशों में जैसे, लातिनी, अमेरिका में बोलिविया एवम् वेनेज्वेला, अफ्रीका में कांगों, केन्या एवं अन्य कई देशों में ऐसा परिवर्तन पहले ही हो चुका हैं, यद्यपि इन देशों में नये उभरे शासक बाजार आधारित कॉरपोरेट मॉडल का ही अनुसरण कर रहे हैं। इन किस्मों से प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल बिल्कुल अलग हैं और उसकी सफलता की काफी उम्मीद हैं, यदि प्रकृति-मानव केन्द्रित सामाजिक व्यवस्था को स्थापित करने के लिए जागृत एवम् प्रेरित किया जाए।

तीसरे प्रश्न (आय में 1:5 के अन्तर का अर्थ है पूंजीपतियों की निवेश करने में कोई रूचि न रहना..... इसलिए यह स्वाभाविक हैं कि वे उन स्थानों, क्षेत्रों या देशों में निवेश करेगें जहां अधिक लाभ मिले, नेचर-हुमन सेन्ट्रिक विचार वाले उद्योग व जगह, निवेश खो देगा जिससे वृद्धि दर एवं विकास का स्तर नीचे गिर जायेगा) के संबंध में, हमारी यह पक्की राय हैं कि यह सामाजिक तौर पर उठाया जाने वाला न्यायिक कदम आम आदमी में नई स्फूर्ति पैदा कर देगा। यदि इस जन स्फूर्ति को आगे जन-प्रेरणा में विकसित कर दिया जाए तो लोग प्रकृति-मानव केन्द्रित एजेन्डा तथा इसके सामाजिक न्याय के कार्यक्रम के लिए समर्पित प्रचारक तथा मजबूत रक्षक बन जायेंगे।

स्पष्टतया, ऐसे जागृत लोगों का आर्थिक वृद्धि दर नई ऊँचाइयों तक बढ़ाने के लिए आगे और गोलबन्द किया जा सकता हैं। हमारा अनुमान है कि प्रकृति-मानव केन्द्रित सामाजिक व्यवस्था कायम होने पर एक या दो देशों में भी बहुत थोड़े से समय में वृद्धि को दुगुना किया जा सकता हैं। ऐसे देश को कॉरपोरेट पूंजी से आर्थिक मदद लेने की कोई जरूरत नहीं पड़ेगी।

आगे, जैसा कि प्रकृति-मानव केन्द्रित बुनियादी धारणा के तहत ऊपर कहा गया हैं, हमारी पूंजी की धारणा मूलतया कॉरपोरेट और साम्यवादी धारणाओं से बिल्कुल भिन्न हैं। हम धन, पूंजी और दौलत को केवल विनिमय का माध्यम समझते हैं और वित्त के तौर पर इसे परिभाषित करते हैं।

उपर्युक्त प्रश्न (पूंजीपतियों का निवेश में कोई रूचि न रहना..... जिससे विकास दर एवं विकास गिर जायेगा) में बताया गया नजरिया पूंजीवादी तथा साम्यवादी मॉडल का हैं ना कि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल का।

चतुर्थ प्रश्न के संबंध में (यानि, यदि राज्य फैक्ट्री व अन्य संस्थाओं को आगे नियंत्रित नहीं करेगा तो वर्तमान पूंजी मालिकों को कैसे हटाया जा सकेगा) प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यूप्वाइंट बाजार आधारित कारपोरेट पूंजीवादी मॉडल तथा राजकीय मिल्कियत वाले कॉरपोरेट पूंजीवादी मॉडल दोनों को अमान्य करता हैं। ये दोनों मॉडल जिन्दगी के सभी पहलूओं–राजनीतिक, आर्थिक एवम् सांस्कृतिक–में मानव का उद्देश्य वृद्धि दर या मुनाफे को ही सब कुछ मानते हैं।

कॉरपोरेट विकास मॉडल उत्पादकता (जो धन और धनपतियों के हितों को सुनिश्चित करता है) को अपना एक मात्र उद्देश्य निर्धारित करता हैं। जबकि सरकार निर्देशित मॉडल समाजवादीकरण (या राष्ट्रीयकरण) को उत्पादन का एक मात्र लक्ष्य चुनता हैं (जो शासक राजनीतिज्ञों एवं अफसरों के हितों की सेवा करता है) ये दोनों परम्परावादी मॉडल मानवजाति के जैव-सामाजिक चरित्र यानि, नीजि और सामाजिक सम्मिलित हितों के उलट केवल निजी-हित की सेवा करते हैं। पुन: ये दोनों पर्यावरण तथा आर्थिक या विकास की प्रक्रिया में लोकतांत्रिक तथा पारदर्शिता के मानदण्डों को कही भी जगह नहीं देते।

आगे, कारपोरेट पूंजीवादी मॉडल समानता (या सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया नकारता हैं जबकि सरकार निर्देशित मॉडल राजनीतिक समता तथा उत्पादकता की उपेक्षा करता है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल कॉरपोरेट चलित और राज्य आधारित दोनों विकास मॉडलों से उनके उद्देश्य, प्रबंध और शैली के मामलों में भिन्नता रखता हैं।

कॉरपोरेट मॉडल पूंजी एवं पूंजी मालिकों को विकसित करने के लिए और राज्य मॉडल इसके शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के साथ मजदूर कूलीनता के हितों को आगे बढ़ाता हैं, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आमतौर पर लोगों और पर्यावरण के हितों की तथा खासतौर पर गरीबों और वंचित तबकों की सेवा पर आधारित है।

प्रबंध में कॉरपोरेट सेक्टर एकाधिकारवादी कॉरपोरेट प्रबंध एवं नियंत्रण का पक्षपोषण करता हैं। और राजकीय क्षेत्र एकाधिकारवादी अफसरशाही प्रबंध एवं नियंत्रण का समर्थन

करता हैं, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल जन आधारित सहकारी कम्पनियों का लोकतांत्रिक या सहकारी प्रबंध एवं नियंत्रण का हामी है।

शैली में, अधिनाकयवादी और गोपनीय कॉरपोरेट एवं राजकीय शैली के उलट, प्रकृति-मानव केन्द्रित सहकारी विकास मॉडल लोकतांत्रिक, पारदर्शिता और जवाबदेही की शैली पर आधारित हैं।

प्रकृति-मानव केन्द्रित सहकारी विकास मॉडल इस पर दृढ़ हैं कि कारपोरेट एवं सरकारी नेतृत्व वाले मॉडलों की इजारेदारी तोड़ने के लिए निम्नलिखित कदम रखे जाएं।

कॉरपोरेट या राज्य चलित पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों में सभी शेयरों का साधारण शेयर करार दिया जाए। इन शेयरों के 0.5 प्रतिशत से अधिक शेयर रखने की किसी को स्वीकृति न दी जाए। यद्यपि, किन्हीं विशेष मामलों में सरकार को 1/5 साधारण शेयर रखने की स्वीकृति दी जा सकती हैं। प्रोमोटर्स (प्रोत्साहक) शेयरों (कॉरपोरेट क्षेत्र में अब छाये हुए) को पूर्णतया रद्द किया जाए। सभी साधारण शेयरधारी का एक वोट होगा चाहे उसके साधारण शेयर संख्या में कितने ही हों।

कॉरपोरेट पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के प्रबन्ध को पूर्णतया लोकतांत्रिक बनाया जाए। इस मामले में साधारण शेयरधारकों को प्रबन्ध मण्डल में दो-तिहाई प्रतिनिधित्पव दिया जाए। बाकी बचा एक-तिहाई प्रतिनिधित्व का उस कम्पनी से सम्बन्धित मजदूरों के लिए आरक्षित रखा जाए। मजूदर प्रतिनिधियों का चुनाव आम मजदूरों और कर्मचारियों दोनों में से किया जाए, जिन्हें साधारण शेयर धारकों के समान सभी अधिकार होगें।

ऐसे उद्यम जिनमें साधारण शेयरों के 1/5 भाग पर सरकार का नियंत्रण हों, उनके प्रबन्ध मण्डल में सभी शेयरधारकों का प्रतिनिधित्व निम्न क्रम में रखा जाए-साधारण शेयर धारकों को 60 प्रतिशत, मजदूरों का 30 एवं सरकार को 10 प्रतिशत।

प्रबन्ध मण्डल को तीन साल के काल के लिए चुना जाए।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल का उपर्युक्त वर्णित सहकारी जनवादी क्षेत्र इजारेदारी वाले कॉरपोरेट और सरकार संचालित दोनों क्षेत्रों की तुलना में कहीं अधिक उत्पादक (संभवत: दोगुना) होगा। पहले यानि (यानि जनवादी क्षेत्र) की वृद्धि दर (या सम्पदा उत्पादन की दर) अधिक होने का कारण इसके (यानि जनवादी क्षेत्र) की वृद्धि दर (या सम्पदा उत्पादन की दर) अधिक होने का कारण इसके (यानि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल के) अत्यधिक विकसित मानवीय और पर्यावरणीय संसाधनों के अति विकास का कारण इसके द्वारा 1:5 के अन्तर के साथ समतावादी आय सुनिश्चित करने और जीवन के सभी क्षेत्रों में सब लोगों के लिए सामाजिक सुरक्षा को मूलभूत अधिकार बनाने, इसके द्वारा लोगों व पर्यावरण को मुख्य प्राथमिकताओं में रखने के मूलभूत सिद्धान्त, विश्व शान्ति सुरक्षा के प्रति इसकी वचनबद्धता, इसके द्वारा गांव से लेकर विश्व स्तर तक और अन्य सभी आर्थिक, वित्तीय और व्यापारिक वैश्विक संगठनों में लोगों (खासकर महिलाओं, मजदूरों और वैज्ञानिकों, तकनीकीविदों) के सशक्तिकरण करने, इसकी वास्तविक और तर्कसंगत आर्थिकता तथा इसके मानवीय व पर्यावरणीरय सांस्कृतिक मूल्यों में निहित हैं।

सरकार-नियंत्रित क्षेत्र की अव्यावहारिकता को पहले के सोवियत संघ के पतन में और इस मॉडल को विश्व के भूतपूर्व समाजवादी देशों द्वारा नकारने में देखा जा सकता हैं। कॉरपोरेट क्षेत्र के गैर-प्रभावित होने को भी लगातार बढ़ रही असमानता, गरीबी, भूखमरी, बेरोजगारी, बेघरबारता और सबसे ऊपर संसार भर में कारपोरेट मॉडल के निरन्तर गैर-टिकाऊ संकट (कभी यहाँ और कभी वहां घटित होने वाले संकट) में देखा जा सकता हैं।

पर्यावरणीय और मानवीय मसलों पर मानव समूह (या लोगों) के नियंत्रण या प्रबन्ध की बढ़ती मांग और भूमिका दर्शाती हैं कि मानव समाज किस दिशा में बढ़ रहा हैं।

कॉरपोरेट क्षेत्र के हालिया अख्तियार किये सामाजिक जवाबदेही और नैतिक व्यवहार के दर्शन से भी जाहिर होता हैं कि कॉरपोरेट क्षेत्र के लोक कल्याण के मूलभूत सिद्धान्त कारगर नहीं हो रहे हैं, जिससे आर्थिक विकास प्रक्रिया (जिसका एकमात्र उद्देश्य अधिकतम लाभ हैं) में प्रत्येक क्षतिपूर्ति की उपेक्षा की जाती हैं।

इसके पांचवें प्रश्न (यानि, जीवों की समाप्ति का खतरा बहुत अधिक प्रभावी मुद्दा नजर नहीं आता। भूतकाल में भी बहुत से दार्शनिकों का यह मत रहा हैं परन्तु यह ग्रह अभी भी निवास करने योग्य हैं तथा यूरोप व अमेरिका जैसे विकसित देश, इस ग्रह को संरक्षित रखने का कोई न कोई रास्ता निकाल ही लेंगे.....चूंकि वर्तमान में यह, खतरा इतना चुनौतिपूर्ण नहीं है इसलिए लोग हमारी बात पर ध्यान नहीं देगें) की ओर आते हैं, इस सामान्यकरण का निम्नलिखित वैज्ञानिकों की राय तथा विभिन्न तथ्यों की रोशनी में कोई आधार नहीं रहता।

वैज्ञानिक विशेषज्ञों की राय

सन् 2000 में विश्व में ख्यातिनाम वैज्ञानिकों ने अपने वक्तव्य में जोर दिया कि मानव समुदाय यदि शीघ्र ग्रीन हाउस गैसों के उत्पादन को नहीं रोकता तो वैश्विक गर्मी से 21वीं सदी के अन्त तक पृथ्वी जीव जगत के लिए गैर टिकाऊ बन जाएगी।

टिकाऊ विकास पर 2002 का संयुक्त राष्ट्र जोन्हान्सबर्ग सम्मेलन ने पर्यावरण विनाश तथा मानवीय संसाधनों के पतन की घातक समस्या को स्वीकार किया।

2002 की वर्ल्ड की वॉच संस्था की रिपोर्ट में 10 जनवरी को पर्यावरण पर विश्व के अगुवा विचारकों ने कहा कि अर्न्तराष्ट्रीय पर्यावरण कान्फ्रेंस जिसे पृथ्वी सम्मेलन कहा तब से 10 वर्षों में विश्व की प्राकृतिक व्यवस्था पर घातक दबाव पड़ा है। यह दबाव ग्लोबल वार्मिंग के प्रकोप से मछलियों एवं ताजे पानी के स्रोंतों के पतन में हुआ।

संयुक्त राष्ट्र के विश्व वन्य जीव कोष (डब्लू. डब्लू. एफ) का 2002 के अध्ययन ने चेतावनी दी हैं कि यदि मानव समुदाय (खासकर धनीदेश तथा धनी लोगों) ने अतिउपभोग तथा बर्बाद करने वाली अपनी जीवनशैली को नहीं बदला तो हमारी पृथ्वी 2050 तक मानव जीवन के लिए गैरटिकाऊ बन जायेगी।

2003 में विश्व के प्रमुख वैज्ञानिकों के रोम सम्मेलन ने सावधान किया कि यदि पर्यावरण पतन खराब करने की प्रक्रिया को कम समय में ही सुधारा नहीं गया तो आने वाले समय में पृथ्वी जीवों के रहने के लिए पूर्ण रूप से गैरटिकाऊ बन जायेगी।

जनवरी, 2004 के 'नेचर' विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित एक लेख कहता हैं कि ''आने वाले 50 वर्षों में जलवायु परिवर्तन के कारण पृथ्वी के एक चौथाई जानवर और वनस्पतियों

के गायब होने की संभावना हैं।'' अन्य वैज्ञानिक विशेषज्ञ भी जो अपने आप को किसी समय सीमा में नहीं बांधते, पर्यावरणीय परिस्थिति को बहुत ज्यादा खतरनाक स्वीकार करते हैं।

इंग्लैण्ड के डोरचेस्टर में पारिस्थितिक और जल विज्ञान के केन्द्र प्राकृतिक पर्यावरण अनुसंधान परिषद की मार्च, 2004 की रिपोर्ट कहती हैं: ''जीवन के इतिहास में एक षष्टम महाविलुप्ती की घटना अब हमारे ऊपर पुन: होने जा रही हैं। जीवों एवं वनस्पतियों की जीवित प्रजातियों की ऐसी महाविलुप्ती समय-समय पर पहले हो चुकी हैं। इंग्लैण्ड का डोरचेस्टर केन्द्र कहता हैं कि पूर्व की पांच विलुप्तियां प्राकृतिक कारणों से हुई हैं जबकि छठी विलुप्ति का कारण मानव क्रिया कलाप लगता हैं।''

अन्य प्रमाणित तथ्य

ग्लोबल उत्सर्जन की गर्मी सोखने वाली ग्रीन हाउस कार्बन डाई आक्साइड गैस, जिसे लगभग सभी वैज्ञानिक वैश्विक ऊष्माकरण का कारण मानते हैं, पिछले 10 वर्षों में 9% से ज्यादा बढ़ गई हैं।

19वीं शताब्दी (जब से वैश्विक तापमान शुरू हुआ) से अब तक 1990 का दशक सबसे गर्म दशक रिकार्ड किया गया, और वैज्ञानिकों ने पिछली शताब्दी में वैश्विक समुद्र-स्तर में 110-20 सेमी की वृद्धि दर्ज की हैं।

रिपोर्ट कहती हैं कि अमेरिका की तापवृद्धि 1990 से 2000 के बीच 18% बढ़ी हैं।

सम्मेलन में जबकि विश्व की जैव-विविधता की सुरक्षा को उजागर किया था, रिपोर्ट में कहा कि जीवों की विलुप्ती को रोकने के कदम में सुरक्षा की सर्वोच्च आवश्यकता हैं। फ्लोरा और फ्यूना के अस्तित्व के कृषि, पशुचारण, खनन, आवास तथा शहरी विस्तार से बचाना सबसे उच्च चुनौती हैं।

रिपोर्ट कहती है कि विश्व के जंगल जो खत्म हो रही जीव प्रजातियों के लिए रहने का मुख्य स्थान हैं, 1990 के दशक में लगातार गायब हो रहे हैं। संयुक्त राष्ट्र के खाद्य और कृषि संगठन की जंगल संसाधन अनुमान 2000 के अनुसार 1990 से जंगल क्षेत्र विश्व स्तर पर 2.2% की दर से घट रहा हैं।

रियो कान्फ्रेंस के बाद कोरल रीफ्स, जो समुद्री जीवों का मुख्य आवास है, भी खराब हो गया। पृथ्वी सम्मेलन के समय 10% से अब तक कोरल रीफ्स–प्रदूषण, समुद्र के पानी के गर्म होने, खनन और मछली पकड़ने से–27 प्रतिशत भाग को भारी नुकसान पहुंचा हैं।

जीव सम्पदा में कोरल रिफ्स का दूसरा स्थान हैं, इस प्रकार के घातक नुकसान से बहुत सी प्रजातियों को भारी परेशानी उठानी पड़ रही हैं, ऐसा रिपोर्ट में कहा है।

छठे सवाल (यानि, संक्षेप में नेचर-ह्युमन सेन्ट्रिक पीपल्स मूवमेन्ट की कार्ययोजना स्पष्ट नहीं है इसलिए हमारे बहुत से मित्र और अधिक स्पष्टता चाहते हैं।) के बारे में स्थिति जानने के लिए निम्नलिखित कार्ययोजना जो नेचर-ह्युमन सेंट्रिक पीपल्स मूवमेन्ट के प्रोगाम और संविधान में दर्ज है, का अध्ययन करना जरूरी है।

* * * * *

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन (एन एच सी पी एम) का परिप्रेक्ष्य सभी चीजों पर पर्यावरणीय-मानवीय नजरिये से दृष्टिपात करना

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन के चार-स्तरीय मुख्य कार्य

1. लोगों में प्रकृति-मानव केन्द्रित जागृति को तीव्रता से फैलाने पर ध्यान केन्द्रित किया जाए। जनजागृति के स्तर को जनप्रेरणा के स्तर तक बढ़ाया जाए और इस जनप्रेरणा को लोगों के तर्कसंगत सोच के स्तर में परिवर्तित किया जाए तथा अन्तत: एक तर्कसंगत मानव एवं प्रकृति-मानव केन्द्रित मानवीय समुदाय के स्तर तक विकसित करने की कोशिश की जाए। यह प्रक्रिया सर्वप्रथम स्वयं से शुरू की जाए।

2. विशेष तौर पर लोगों में प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम की धारणा को लोकप्रिय बनाया जाए जिससे लोग सही व गलत में फर्क करने के योग्य बन सके।

3. आम तौर पर उन उसूलों पर चला जाए ताकि हम जो कुछ भी करें, वह हमें लक्ष्य प्राप्ति की ओर ले जाए।

4. जनता में आशावाद की भावना को विकसित किया जाए एवं इस भावना को उस स्तर तक बढ़ाया जाए, जिससे लोगों में आत्मविश्वास बने कि ये मौजूदा गैर-टिकाऊ विश्व को बदल सकते हैं और एक बेहतर भविष्य का निर्माण कर सकते हैं।

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन का संगठनात्मक ढाँचा

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन का सात स्तरीय ढाँचा है–(क) सदस्यता: जो कोई भी इसके कार्यक्रम, संगठनात्मक शैली एवं नियमों को स्वीकार करता है वह इसका सदस्य बन सकता है। यहाँ, वंचित, गरीब, बेरोजगार, नेक और समझदार लोगों को सदस्य बनाने की आवश्यकता है। (ख) गाँव/शहर के वार्ड स्तर की इकाइयाँ (ग) पंचायत स्तर की इकाइयाँ एवं (घ) तहसील (या ब्लॉक) (ड़) जिला (च) राज्य व (छ) राष्ट्रीय स्तर की इकाइयाँ गठित करना। प्रत्येक इकाई निम्न पदाधिकारियों से गठित है– अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, सचिव एवं कोषाध्यक्ष।

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन की संगठनात्मक शैली

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन की शैली निम्न सिद्धान्तों पर आधारित होगी–

1. सिद्धान्त को व्यवहार से जोड़ा जाए एवं इसके विपरीत व्यवहार को सिद्धान्त से जोड़ा जाए।
2. साधनों को साध्य से जोड़ा जाए एवं इसके विपरीत साध्य को साधनों से जोड़ा जाए।
3. सचेत रहकर अपने अहम को प्रबन्धित किया जाए जिससे हर जगह शालीनतापूर्ण व्यवहार हो।
4. हर परिस्थिति में न्यायसंगत रहा जाए।
5. सभी किस्म की गतिविधियों में लोकतांत्रिक शैली अपनाई जाए।

6. सभी प्रकार की गतिविधियों में शान्तिपूर्ण तरीके लागू करने के सिद्धान्त को अपनाए जाए, विवादों को बातचीत और विचार-विमर्श के तरीके से सुलझाया जाए।
7. निर्णय लेने में मुख्य तरीका आम सहमति का रखा जाए।
8. ऊपर से लेकर नीचे तक सभी संगठनात्मक, इकाइयों का चुनाव किया जाए। हर वर्ष चुनाव करवाए जाएं। कोई भी व्यक्ति किसी भी पद पर एक बार से अधिक नहीं रहे।
9. सभी स्तर पर स्वतंत्र एवं खुलकर बहस की जाए।
10. आम दिशा तय करने एवं उसे लागू करने के सभी सदस्यों को शामिल करना सुनिश्चित किया जाए।

प्रकृति–मानव केन्द्रित जन आन्दोलन के मुख्य कार्य को लागू करने की गतिविधि

ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि हर जन आन्दोलन को अपना लक्ष्य प्राप्त करने के लिए एक विशिष्ट जनजागृति, प्रेरणा एवं चेतना की आवश्यकता होती है। हमारे इस आन्दोलन ने भी उपर्युक्त ऐतिहासिक स्वीकृत मांग को किसी भी जन आन्दोलन की सफलता के लिए अति महत्वपूर्ण कार्य के तौर पर अपनाया है।

हमारी राय में आज के समय में जनजागृति को बढ़ाने के लिए दो चीजें अति आवश्यक हैं–

(क) अपने प्रकृति-मानव हितैषी कार्यक्रम के बारे में पर्याप्त समझ रखना (किसी भी प्रश्न का जवाब देने लायक) तथा (ख) सामाजिक चेतना, विशिष्ट समस्याओं, राजनीतिक प्रतिबद्धताओं, सांस्कृतिक मूल्यों एवं हमारे निश्चित श्रोताओं, लक्षित सामाजिक समूह या व्यक्ति की प्रचलित मन:स्थिति के बारे मे काफी ज्ञान होना।

यहाँ दृढ़तापूर्वक दिमाग में रखना आवश्यक हैं कि वर्तमान जन चेतना का स्तर, सामाजिक गलत का निर्णय लेने के लिए आम तौर पर, एक तीन तरफा मापदण्ड, यानि धन, सत्ता एवं ताकत (मुख्य तीन आयामी कारपोरेट उद्देश्य) को अपनाता है। इस संबंध में हमारा मुख्य कार्य उपर्युक्त अर्द्ध सत्य को प्रकृति-मानव हितैषी, मसलन, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता (आय में 1:5 के फर्क के साथ), उत्पादकता, लोकतंत्र एवं पारदर्शिता के 5 स्तरीय वास्तविक सिद्धान्तों से तुलना करके नकारना चाहिए। लेकिन यह लोगों से हमारी श्रृंखलाबद्ध अन्तरक्रिया करने के बाद हो पाएगा, उसमें कुछ समय लगेगा।

जहाँ तक जन जागृति की मुहिम का सवाल है, इसे इन सामाजिक समूहों के बीच शुरूआत करने की आवश्यकता है जो मौजूदा व्यवस्था द्वारा नजरअन्दाज किए गए हैं तथा जिनके हित प्रकृति मानव हितैषी कार्यक्रम से मेल खाते हैं। ये समूह मुख्य तौर पर हैं : गांव और शहर के गरीब, बेघर, बेरोजगार, विधवाएं, महिलाएँ (जो गरीब तबके की हो), कामकाजी बालक, लड़कियाँ, अपंग, सफाई कर्मचारी, खेत मजदूर, बन्धक मजदूर, असंगठित मजदूर (जैसे निर्माण में लगे मजदूर, रिक्शा चालक आदि), जनजाति, कैदी, विचारधीन कैदी, बूढ़े लोग (जिनकी देखभाल करने वाला कोई न हो), लंपट तत्व (जैसे कि भिखमंगे आदि), फैक्ट्री मजदूर, कार्यालय कर्मचारी, विद्यार्थी अल्पसंख्यक आदि। इन समूह को मोटे तौर पर चार किस्मों में वर्गीकृत किया जा सकता है-(i) समूह विशेष (ii) क्षेत्र-विशेष (iii) समस्या-विशेष और (iv) ट्रेड यूनियन विशेष।

किसी उपेक्षित लक्षित समूह का कार्यक्रम तैयार करते समय यह ध्यान रखना समान रूप से वांछित है कि इसके अन्य सम्बन्धित लक्षणों–यानि, राजनीतिक प्रतिबद्धता, सांस्कृतिक मूल्य, प्रचलित मन:स्थिति, आदि पर ध्यान रखा जाए।

प्रत्येक लक्षित समूह की सामाजिक चेतना को जगाने के लिए यह आवश्यक है कि हमारी उनसे बातचीत सरल एवं आसानी से समझ में आने वाली हो जो इन तीन पहलुओं–यानि, समूह विशेष की समस्याओं की बदइन्तजामी तथा आम तौर पर आम लोगों को एवं खास तौर पर लक्षित समूहों को राजनीति, विकास, संस्कृति व सुरक्षा के क्षेत्र में प्रकृति-मानव हितैषी कार्यक्रम कैसे सकारात्मक तरीके से प्रभावित करेगा–को जोड़े।

निर्धारित लक्षित समूहों के साथ कुछ अवसरों पर थोड़ी मुलाकातों के बाद अगला तार्किक कदम उनकी अपनी अगुवा टीम का चुनाव कराया जाना चाहिए, जिससे इन समूह के बाकी बचे सदस्यों को और आगे लामबन्द करने का कार्य पूरा किया जा सके।

निश्चित स्तर पर सामाजिक जागृति और संगठन विकसित होने पर प्रत्येक लक्ष्य समूह से संबंधित समस्याओं को सम्बन्धित अधिकारियों के समक्ष रखा जाना चाहिए तथा जनमत के दबाव को इस्तेमाल करते हुए उन समस्याओं को हल करवाया जाए। मुद्दों को उजागर करने के लिए तथा उनको हल करवाने के लिए हमारा रास्ता तर्कसंगत, शान्तिपूर्ण एवं सहयोगात्मक होना चाहिए।

आम जनता को गोलबन्द करने के लिए प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन (एन एच सी पी एम) निम्न मुद्दों को हाथ में लेगा–

प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम के यथार्थवादी एवं तर्क आधारित सिद्धान्तों से लैस करने का प्रयास करना।

प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम की राजनीति, आर्थिकता, संस्कृति एवं सुरक्षा के सिद्धान्तों की रोशनी में विभिन्न समस्याओं का विश्लेषण करके जनता की समझ को बढ़ाना।

विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं–जैसे ग्रीन हाउस गैसों की खतरनाक मात्रा को कम करने, बढ़ते प्रदूषण और घटते जल संसाधनों, खेती योग्य भूमि के स्तर में गिरावट और भूमि-क्षरण, बड़े स्तर पर वनों के कटाव, बहुत-सी जैव-प्रजातियों के विलुप्त होने, खनिजों व अन्य प्राकृतिक उत्पादों के अति उपभोग और बर्बादी जैसी समस्याओं के उचित प्रबन्धन और उन्हें विकसित करने के प्रभावी कदम उठाने के लिए जनता को सरकार पर दबाव डालने के लिए गोलबन्द करना।

सरकार जनता को न्याय प्रदान करें, इस हेतु सरकार पर दबाव डालने के लिए जनता को तैयार करना ताकि तेजी से बढ़ती हुई सामाजिक बुराईयों, जैसे असमानता और गरीबी, विभिन्न प्रकार के राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक मानव अधिकारों के उल्लघंन, पर्यावरणीय और मानवीय विकास पर धन के विषयों, सत्ता और बल जैसे कारपोरेट अभिमुख प्रेरणादायक फार्मूलों और प्रोत्साहक प्रमेयों के नकारात्मक प्रभावों से जनता को बचाया जा सके।

सीमित पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों का टिकाऊ तरीके से उपयोग करना।

नीचे से ऊपर तक और ऊपर से नीचे तक या व्यक्ति से मानव समुदाय तक और मानव समुदाय से व्यक्ति तक का एक टिकाऊ सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करना।

अनुसूचित जाति एवं जनजाति के मौजूदा (या पारम्परिक) जीविकोपार्जन की सुरक्षा करना और रोजगार के नये अधिक अवसर प्रदान करना।

लिंग समानता के लिए महिला अधिकारों को मानव अधिकारों की तरह समझने और महिलाओं को वैचारिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से शक्तिशाली बनाने के लिए समाज को संवेदनशील व जागरूक करना।

संगठित और असंगठित श्रमिकों का सशक्तिकरण करना।

सामाजिक आन्दोलनों में लगे सभी संगठनों (स्वयंसेवी या गैर-सरकारी संगठनों) और भारत या दुनिया के किसी भी देश में जनता के बीच काम करने वाले लोगों से भाईचारे के संबंध बनाना।

लोगों को मानसिक और सामाजिक रूप से स्वतंत्र बनाना

विभिन्न तौर-तरीकों से पर्यावरणीय एवं मानवीय समस्याओं पर शान्तिपूर्ण आन्दोलनों को शुरू करना जैसे जुलूसों और जनसभाओं को संगठित करना, संगोष्ठियों और वर्कशॉपों का आयोजन, भिन्न-भिन्न विषयों पर विभिन्न प्रकार की प्रशिक्षण कक्षाएं आयोजिक करना, सांस्कृतिक कार्यक्रमों को प्रस्तावित करना, विभिन्न जन समस्याओं के समाधान के लिए सरकार के समक्ष प्रतिवेदन प्रस्तुत करना।

विभिन्न राष्ट्रों की जनता के बीच भाईचारा, दोस्ती, सदाशयता, सहयोग, आपसी सम्मान के संबंधों को मजबूत करना।

विश्व के समस्त जन आन्दोलनों के साथ पक्की एकता को अभिव्यकत करना।

सभी प्रकार के अंधविश्वास और प्रतिक्रियावादी विचारों और व्यवहार को मानने से इंकार करना।

विश्व के संसाधनों को पर्यावरणीय प्रोत्साहन एवं मानवीय विकास के लिए उपयोग करना।

शिक्षा एवं स्वास्थ्य के लिए जनता और पर्यावरण समर्थक दृष्टिकोण अख्तियार करना और कारपोरेट व्यवसाय की प्रचलित खुदगर्जी आधारित शिक्षा एवं खराब स्वास्थ्य की नकारात्मक भूमिका को उजागर करना।

यही कार्य करने का समय है

आप प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन के सदस्य बनकर, अपनी टिप्पणियां और राय भेजकर तथा अपनी विशेषज्ञता का लाभ देकर इनमें भागीदार बन सकते हैं।

प्रकृति-मानव केन्द्रित राह अपनाओं। प्रकृति-मानव केन्द्रित जन-आन्दोलन की पहलकदमियों से जुड़ो, क्योंकि वे पर्यावरण और जनता के हित में हैं।

* * * * *

कामगारों के आन्दोलन को दरपेश चुनौतियां और उनका समाधान

1. कामगार और कार्य बल (Work force) के बारे में धारणा

कार्य बल शब्द का तात्पर्य किसी देश में (विश्व में भी) कामगार लोगों की वह संख्या है जो अपने परिवारों सहित अपना जीवन चला रहे हैं। भारत में कुल कामगार शक्ति 40 करोड़ की है। जिन पर 70 करोड़ लोग निर्भर हैं। इस कामगार शक्ति में 3 करोड़ संगठित मजदूर हैं। बचे हुए 37 करोड़ असंगठित मजदूरों में 24 करोड़ कृषि समुदाय के हैं (जिसकी बहुसंख्या स्वतन्त्र किसान की है और कुछ हिस्सा कृषि मजदूरों का है) इसमें से शेष बचे हुए 13 करोड़ कामगार अनौपचारिक क्षेत्र में लगे हुए हैं।

2. ट्रेड युनियन की अवधारणा

ट्रेड यूनियन शब्द का आम तौर पर अर्थ एक ट्रेड के सदस्यों की संस्था है जो उनके अधिकारों की रक्षा करती है।

3. ट्रेड युनियन आन्दोलन की उत्पत्ति

ट्रेड युनियन आन्दोलन का उद्गम अभी हाल ही का है। इसकी उत्पत्ति अचानक नहीं हुई है। बल्कि पश्चिमी यूरोप में, खासतौर पर इंग्लैण्ड में, 19वीं शताब्दी के प्रथम चतुर्थांश में औद्योगिक मजदूरों में उस समय उभरा जब मजदूरों ने बेहतर जिन्दगी व बेहतर काम की स्थिति के लिए संघर्ष किया तो उस परिस्थिति ने मजदूरों का कोई संगठन बनाने की सामाजिक आवश्यकता को जन्म दिया।

मजदूर वर्ग स्वयं औद्योगिक तकनीकी, उसकी कार्य संस्कृति तथा सांगठनिक उसूलों के उत्थान की उपज है। यह नया औद्योगिक तन्त्र (उस समय का भाप आधारित मशीनी तकनीकी वाला तन्त्र, उसका एक ही स्थान पर बहुआयामी कार्य स्वरूप तथा संगठन जो कार्य प्रक्रिया में अन्तरसंबंधित कार्य को करने वाले मजदूरों से गठित था) माँग करने लगा था कि नये श्रम संबंधों (या औद्योगिक संबंधों) को मजदूरों और उद्योगपतियों के मध्य निर्धारित किया जाए। क्योंकि पुराने किस्म के जमींदार और अर्द्धदास के अधिनस्थता वाले कृषि श्रम संबंध (जो पशु-चालित हल तकनीक पर आधारित था, विशाल एवं भिन्न भागों की जमीन पर खेती कार्य फैला हुआ था तथा एक व्यक्ति का संगठन जमीन से जुड़ा हुआ था) नई औद्योगिक तकनीक की जरूरतों को पूरा नहीं करते थे। नतीजतन, पुराने श्रम संबंधों (जहाँ अर्द्ध कृषि-दास जमीन से बंधा हुआ था तथा अन्ततः जमीदार से बंधा हुआ था) की जगह नये श्रम संबंधों ने ले ली। ये नये श्रम संबंध फैक्ट्री मालिक और मजदूर के बीच मजदूरी से जुड़े संबंध पर आधारित थे जहाँ मजदूर कहीं भी जाने और स्वीकृत मजदूरी पर काम करने के लिए स्वतंत्र हो गया।

4. ट्रेड यूनियन आन्दोलन का ऐतिहासिक विकास

ट्रेड यूनियन आन्दोलन के आरम्भ में ही खासतौर पर मजदूरों और आमतौर पर मेहनतकश लोगों की जिन्दगी में उसने सकारात्मक भूमिका निभाई है। इसने विभिन्न नस्ल, धार्मिक समुदायों, संस्कृति और क्षेत्रीय समूहों आदि के मजदूरों को एक यूनियन में एकताबद्ध कर उनके मानवीय नजरिये को विस्तार देने में योगदान दिया है। इसने

मेहनतकश लोगों को, विशेषतौर पर मजदूरों और कर्मचारियों तथा असंगठित मजदूरों के बहुत से अधिकारों को प्राप्त करने में भारी मदद की है। इन अधिकारों में शामिल हैं, एक यूनियन में मजदूरों को एकताबद्ध होने का अधिकार, हड़ताल करने और सामूहिक सौदेबाजी का अधिकार, मजदूरी और वेतन में बढ़ोतरी, काम के घण्टों में कमी, बाल श्रमिकों तथा नाबालिगों के श्रम पर पाबन्दी, मेहनतकश महिलाओं के लिए मातृत्व अवकाश, मकान की सुविधा, बीमारी सुविधा, शिशु देखभाल केन्द्र, फैक्ट्री केण्टीन, शुद्ध हवा की व्यवस्था, सुरक्षा प्रबन्ध, बीमा लाभ, मनोरंजन केन्द्र, स्वास्थ्य केन्द्र, श्रम कल्याण योजनाएँ आदि मामलों में मेहनतकश लोगों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान की है।

150 वर्ष पहले ट्रेड यूनियनों को वैधानिक संस्थाओं के रूप में मान्यता नहीं मिली थी क्योंकि फैक्ट्री मालिक ट्रेड यूनियनों के गठन का विरोध करते थे। शुरूआत में मजदूरों को ट्रेड यूनियन अधिकारों को प्राप्त करने के लिए एक लम्बा संघर्ष करना पड़ा तथा उसमें भारी कुर्बानी देनी पड़ी और आज ट्रेड यूनियनें न केवल कानूनी मान्यता लिए हुए हैं बल्कि विकास प्रक्रिया में एक प्रबल शक्ति के रूप में मान्यता प्राप्त है। इसी बीच ट्रेड यूनियनवाद सभी ट्रेड और धन्धों–जिसमें फैक्ट्री तथा ऑफिस जाने वाले लोग, किसान, मध्यम वर्ग, व्यापारी इत्यादि शामिल है–की आम कार्य प्रणाली और संगठित करने वाली इकाई बन चुकी है। इस प्रकार समाज में ट्रेड यूनियन का स्थान और भूमिका और अधिक बढ़ गई है।

बहुत-सी उपलब्धियों के बावजूद ट्रेड यूनियन आन्दोलन भी कुछ कमजोरियों से ग्रसित हैं, जो निम्न हैं–

ट्रेड यूनियनें मुख्यतया गैर-श्रमिक संगठनकर्ताओं (जो आमतौर पर राजनीतिक पार्टियों से आते हैं) के नेतृत्व और नियन्त्रण में है जो उनकी यूनियन के लिए काम करते हुए अपनी पार्टी द्वारा चलाए जा रहे ट्रेड यूनियन केन्द्र से सम्बद्ध कर देते हैं। ये विभिन्न केन्द्र मजदूरों को भिन्न-भिन्न राजनीतिक खण्डों में विभाजित रखते हैं और उनको अपना वोट बैंक समझते हैं।

5. कामगार आन्दोलन की वर्तमान दशा और उसके समक्ष चुनौतियाँ

श्रम के सम्पूर्ण इतिहास में मेहनतकश शायद ही इतना निराश रहा हो जितनी हताशा में आज वह है। आई एल ओ की हालिया रिपोर्ट के अनुसार इन दिनों दुनिया के मजदूर एक बात में संगठित है 'तनाव का रिकार्ड स्तर।' दुनियां के पांच अगुवा विकसित देशों यानि, अमेरिका, इंग्लैण्ड, जर्मनी, पौलेण्ड, फिनलैण्ड के कार्यस्थलों पर तनाव से संबंधित एक सर्वे में अन्तराष्ट्रीय श्रम संगठन आई एल ओ ने पाया कि मजदूरों में चिन्ता, क्रोध और अवसाद का स्तर नियन्त्रण से बाहर है। मंदी, छटनी, छोट उद्योगों का बड़े में एकीकरण, छोटी अवधि के ठेके और उच्च उत्पादकता की मांग ने पिछले 10 वर्षों में उनकी बर्दाश्त सीमा को समाप्त कर दिया है, कई मजदूरों को चिड़चिड़ा बना दिया है और कई मानसिक संतुलन खोने की सीमा पर है।

मनोदशा बिगड़ने के दो तरफा कारण रिपोर्ट में हैं, लोग नई तकनीक को अपनाने में कठिनाई महसूस करते हैं तथा वे लगातार कार्य व्यवहार में बदलाव से तालमेल नहीं कर पाते।

मानसिक स्वास्थ्य के विश्व फेडरेशन ने अक्टूबर, 2000 में चेतावनी दी कि 2020 तक तनाव और मानसिक असंतुलन, सड़क दुर्घटनाओं, एड्स और हिंसा के मामलों से आगे निकल जायेंगे तथा कार्य समय के नुकसान का प्राथमिक कारण बन जायेंगे।

6. कामगार आन्दोलन को दरपेश चुनौतियों का मुख्य कारण

कामगार आन्दोलन को दरपेश चुनौतियों का मुख्य कारण कामगारों और ट्रेड युनियनों का भ्रष्ट और अपराधी राजनीतिक दलों और राजनीतिज्ञों के प्रति वफादारी एवं ताबेदारी में निहित है जो कारपोरेट व्यापार, कारपोरेट राजनीति एवम् कारपोरेट व्यवस्था के हितों की पक्के तौर पर सेवा करते हैं। इस प्रकार चोरी-चोरी हर समय और हर स्थान पर कामगार आन्दोलन की जड़ें खोदते हैं और उसे छिन्न-भिन्न करते हैं। मजदूरों में एकता नहीं होना, अनुशासन की कमी होना, इत्यादि अन्य सभी कारणों की अहमियत दोयम दर्जे की है।

7. समस्याओं से निकलने का रास्ता

मजदूरों को लगातार दरपेश तनाव, भुखमरी तथा वंचितपन से निकलने का रास्ता ट्रेड यूनियन पर प्रकृति-मानव केन्द्रित आम अवधारणा अपनाने में निहित है।

मूलभूत अवधारणा

प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण मानता है कि पूंजी में दो तरफा घटनाक्रम शामिल है, यानि एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन और दूसरी तरफ मानवीय संसाधन। ऐसा इसलिए है क्योंकि पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों से ही मानव समुदाय का जीवन बनता है और उनके बिना मानव समाज के लिए किसी भी चीज का कोई मूल्य नहीं।

यह पूंजी की दो धारणाओं, यानि पूंजी का उदारवादी (कॉरपोरेट) सिद्धान्त तथा पूंजी के मार्क्सवादी सिद्धान्त को पूर्णतया अस्वीकार करती है। उदारवादी (कॉरपोरेट) सिद्धान्त मानता है कि पूंजी चार कारकों, यानि, तकनीकी, श्रम, कच्चा माल और पूंजी की उपज है जबकि मार्क्सवादी सिद्धान्त मानता है कि मजदूरों का अतिरिक्त मूल्य (मजदूरों के वास्तविक श्रम के मूल्य से कम दी गई मजदूरी जिसे पूंजीपति हड़प लेता है) ही पूंजी है। वास्तव में, दोनों सिद्धान्त व्यवहार में, धन या सम्पदा अथवा इसकी वृद्धि को पूंजी बताते हैं।

ऐसा इसलिए है क्योंकि उदारवादी और मार्क्सवादी दोनों सिद्धान्त विकास, प्रगति और समृद्धि (चाहे व्यक्तिगत हो या सामूहिक) का प्रतिनिधित्व पूंजी द्वारा ही करने में एकमत है।

इसलिए सम्पूर्ण विश्व में सभी सरकारी बजटों, व्यापारिक लेखों-जोखों और व्यक्तिगत आय को विकास, प्रगति और समृद्धि का सूचकांक स्वीकार किया जाता है।

ट्रेड यूनियनों को जाति, सम्प्रदाय तथा संकीर्ण लाइनों पर संगठित करने का दक्षिणपंथी व्यवहार ट्रेड यूनियनों को मेनेजमेन्ट का पिछलग्गू बनाती है।

8. ट्रेड यूनियनों का मुख्य कार्य

1. ट्रेड यूनियनों को 3 तरफा जुड़ी हुई गतिविधियां करने की जरूरत है (क) राजनीतिक, आर्थिक, कानूनी और सांस्कृतिक स्तर को ऊंचा उठाते हुए मजदूरों की सामाजिक चेतना को गहरा करना (ख) ट्रेड यूनियनों की जनतांत्रिक कार्यप्रणाली हेतु प्रयास करना (ग) मजदूरों की तात्कालिक और दीर्घ-परास की मांगों के आधार पर एवं एक धंधे में एक यूनियन के नियम से मेल बैठाते हुए, मजदूरों को संगठित करना।

2. मजदूरों की सामाजिक चेतना ऊंचा उठाने के लिए यह जरूरी है कि मजदूरों में

ग्लोबल सामाजिक वास्तविकता एवं इसकी मांगों की पर्याप्त समझ पैदा की जाए।

3. ट्रेड यूनियनों के जनतांत्रिक कार्यकलाप के लिए यह जरूरी है कि हर वक्त और हर स्तर पर जनतांत्रिक सिद्धान्तों का पालन किया जावे। मजदूरों की प्रत्येक मांग के लिए यह कानूनी और शान्तिपूर्ण साधन अपनाने के लिए प्रेरित करता है। इसमें वार्ता, समझौता, मध्यस्थता और अन्त में हड़ताल शामिल है।

9. ट्रेड यूनियनों की मांगों का आम घोषणा–पत्र

1. कर्मचारियों को चुनाव लड़ने सहित राजनीतिक अधिकार।

2. श्रम को मानवीय पूंजी माना जावे न कि माल।

3. कार्यशक्ति का प्रबन्ध के मातहत की स्थिति को समाप्त करना, मजदूरों सहित लोगों को प्रबन्ध/प्रशासन में भागीदारी का संवैधानिक अधिकार प्रदान करना।

4. एक उचित सरकारी श्रमनीति का निर्माण करना जिसका उद्देश्य कामगारों एवं प्रबन्धकों को समान दर्जा देकर श्रम-पूंजी (कार्यशक्ति-प्रबन्ध) के बीच सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध बनाना हो।

5. मजदूरों की क्षमता एवं योग्यताओं में वृद्धि करना।

6. श्रम विरोधी कानूनों के जरिए भारत को प्रतियोगी बनाने की भारत सरकार की नीति को वापिस लेने की मांग करना।

7. सबसे नीचे और सर्वोच्च के बीच मजदूरी/वेतन का फर्क 1 : 5 रखने की मांग करना।

10. ट्रेड यूनियनों की मांगों का विशिष्ट घोषणा–पत्र

यह प्रत्येक यूनियन के मुताबिक अलग-अलग होगा।

11. ट्रेड यूनियन की कार्यशैली

(क) विचार एवं आचरण में नेतृत्व हमेशा मजदूरों के साथ-साथ ट्रेड यूनियन आन्दोलन के प्रति जवाबदेह हो।

(ख) मजदूर एवं प्रबन्ध लोगों के प्रति जवाबदेह हो।

(ग) मांगों का घोषणा-पत्र तर्क संगत होना चाहिये तथा मजदूरों की सलाह से तैयार हो एवं मजदूरों में पूरी तरह लोकप्रिय हो।

(घ) ट्रेड यूनियन कार्य मजदूरों से प्रतिदिन घनिष्ट सम्पर्क के जरिए किया जाए एवं ट्रेड यूनियन काम करते समय मजदूरों की सामाजिक चेतना बढ़े।

(ङ) ट्रेड-यूनियन गतिविधियों में जनतांत्रिक कायदों का कड़ाई से पालन किया जाए।

(च) प्रत्येक मजदूर को धैर्यपूर्वक सुना जाए तथा उसकी व्यक्तिगत, पारिवारिक और कार्यालय सम्बन्धी समस्याओं को जानने का प्रयास किया जाए।

(छ) ट्रेड यूनियनों के आम सदस्यों की नियमित बैठकें की जाए।

(ज) महिलाओं को ट्रेड यूनियन नेतृत्व में उचित प्रतिनिधित्व दिया जाए।

(झ) मजदूरों द्वारा हर कहीं पर्यावरण संरक्षण, समता, उत्पादकता, जनवाद एवं पारदर्शिता के मानदण्डों का पालन किया जाए।

12. ट्रेड यूनियनों का संगठनात्मक कार्य

एक संगठनात्मक रूप जो एक कार्यस्थल में एक यूनियन के सिद्धान्त पर अमल द्वारा मजदूरों के बीच अधिकतम सम्भव एकता की जरूरत पर जोर देता है। जहां एक यूनियन बनाना व्यवहारिक नहीं हो वहां तुरन्त एक न्यूनतम् साझा कार्यक्रम के आधार पर विद्यमान सभी यूनियनों को एक संयुक्त फ्रण्ट में संगठित करने का प्रयास होना चाहिये।

13. प्रकृति–मानव केन्द्रित विकास मॉडल

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल दो सर्वोच्च प्राथमिकताओं, यानि पर्यावरण एवं मानव का पक्षपोषण करता है तथा पांच सिद्धान्तों, यानि पर्यावरणीय संवर्द्धन, उचित समता (यानि, प्रत्येक वंचित एवं जरूरतमन्द को सामाजिक सुरक्षा, अतर्कसंगत वेतन असमानता को 1 : 5 के अनुपात में तर्कसंगत बनाना) जनता के नेतृत्ववाला लोकतंत्र (कॉरपोरेट पूंजीवादी समर्थक राजनीतिक पार्टियों एवं व्यवसायियों की जगह लोगों का सशक्तिकरण) तथा चौतरफा पारदर्शिता। ये पांच आयामी मूलभूत सिद्धान्त मानव की जैव-सामाजिक प्रकृति से मेल खाते हैं, यानि यह मनुष्य के निजी हित और उसके सामाजिक हित में समन्वय बैठाते हैं।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल परम्परागत राष्ट्रीय विकास मॉडलों यानि कॉरपोरेट नेतृत्व और सरकार निर्देशित की तुलना में विकास की समयानुकूल धारणा को पेश करता है। कॉरपोरेट नेतृत्ववाला विकास मॉडल केवल लाभ या उत्पादकता (जो केवल धनस्वामियों के हितों को सुनिश्चित करता है) को अपना एकमात्र उद्देश्य बनाता है जबकि सरकार निर्देशित विकास मॉडल उत्पादन के साधनों का केवल समाजीकरण (अथवा राष्ट्रीयकरण) को ही अपना लक्ष्य चुनता है (जो शासक राजनीतिज्ञों एवं अफसरों के हितों की सेवा करता है), ये दोनों परम्परावादी राष्ट्रीय मॉडल मानवता के जैव-सामाजिक चरित्र या निजी-हित एवं सामाजिक हित दोनों के विपरीत केवल निजी-हित की सेवा करते हैं। फिर वे पर्यावरण को कोई प्राथमिकता नहीं देते तथा आर्थिकता अथवा वृद्धि प्रक्रिया में लोकतांत्रिक और पारदर्शी मानदण्डों को कोई भी स्थान नहीं देते। आगे कॉरपोरेट मॉडल समता (अथवा सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया रद्द करता है जबकि सरकार निर्देशित मॉडल राजनीतिक समानता एवं उत्पादकता की पूर्णतया अनदेखी करता है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल कॉरपोरेट नेतृत्त्व और राज्य आधारित दोनों विकास मॉडलों से उनके उद्देश्यों, प्रबन्ध और शैली में भिन्नता रखता है।

कॉरपोरेट मॉडल पूंजी एवं पूंजी के मालिकों का विकास करता है और राज्य मॉडल इसके शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के साथ मजदूर कुलीनता के हितों को आगे बढ़ाता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आमतौर पर लोगों और पर्यावरण के हितों की तथा खासतौर पर गरीबों और वंचित तबकों की सेवा पर आधारित है।

प्रबन्ध में, कॉरपोरेट सेक्टर एकाधिकारवादी कॉरपोरेट प्रबन्ध एवं नियंत्रण का पक्षपोषण करता है और राजकीय क्षेत्र एकाधिकारवादी अफरशाही प्रबन्ध एवं नियंत्रण का समर्थन करता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल में पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर लोकतांत्रिक प्रबन्ध एवं नियंत्रण की मान्यता है।

शैली में, अधिनायकवादी और गोपनीय कॉरपोरेट एवं राजकीय शैली के उलट प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल लोकतांत्रिक, पारदर्शिता और जवाबदेही की शैली पर आधारित है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल मानता है कि दोनों कॉरपोरेट और सरकार निर्देशित विकास मॉडलों का निम्नलिखित कदम उठाकर विकेन्द्रीकरण किया जाना चाहिये।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के सभी शेयरों को साधारण शेयर बनाया जावे। किसी को भी इन शेयरों का 0.5% शेयर से ज्यादा रखने की इजाजत नहीं हो। बहरहाल विशेष मामलों में राज्य को 1/5 भाग शेयर रखने की इजाजत हो। प्रोमोटर शेयर्स के नियम (जो अभी कॉरपोरेट सेक्टर में चालू है) को पूर्णतया रद्द किया जावे। प्रत्येक साधारण शेयर धारक का एक वोट होगा चाहे उसके साधारण शेयर की संख्या कितनी भी हो।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के प्रबन्ध को पूर्णतया जनतांत्रिक बनाया जावे। इस मामले में, साधारण शेयर धारकों को प्रबन्ध मण्डल में 2/3 प्रतिनिधित्व दिया जावे। प्रतिनिधित्व का 1/3 भाग सम्बन्धित कम्पनी के श्रमिकों के लिए आरक्षित हो। श्रमिकों का प्रतिनिधित्व शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के कामगारों में से हो जिन्हें साधारण शेयर धारकों जैसे ही अधिकार हो।

ऐसे अधिकरण जिनमें सरकार का 1/5 भाग साधारण शेयर हो उनके प्रबन्ध मण्डल में साधारण शेयर धारकों को 60% श्रमिकों का 30% तथा सरकार का 10% प्रतिनिधित्व हो। प्रबन्ध मण्डल 3 वर्षों के लिए चुना जावे।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल का उपर्युक्त डेमोक्रेटिक सेक्टर दोनों एकाधिकारवादी कॉरपोरेट और राज्य चलित सेक्टरों से अधिक उत्पादक (सम्भवत: दोगुना) होगा। इसके (यानि डेमोक्रेटिक सेक्टर के) उच्च वृद्धि दर (या सम्पदा उत्पादन की दर) का कारण इसके (यानि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल के) वेतन में 1 : 5 के समतावादी फर्क के सुनिश्चित करने तथा प्रत्येक को जीवन के हर क्षेत्र में सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने, इसके लोगों और पर्यावरण को मूलभूत सिद्धान्त बनाने, इसके विश्व-शान्ति एवं सुरक्षा के पालन करने, इसके गांव से संयुक्त राष्ट्र स्तर एवं अन्य आर्थिक, वित्तीय एवं ग्लोबल व्यापारिक संस्थाओं तक में लोगों के सशक्तिकरण करने की राजनीति (खासकर महिलाओं, मजदूरों, और वैज्ञानिकों-तकनीकीविदों की), इसकी वास्तविक एवं तर्कसंगत आर्थिकता तथा इसकी मानवीय एवं पर्यावरणवादी संस्कृति के कारण मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के अपार विकास में निहित है।

सरकार निर्देशित सेक्टर की अव्यवहार्यता को भूतपूर्व सोवियत यूनियन के ढहने में और विश्व के समाजवादी देशों में इस मॉडल की अवहेलना में देखा जा सकता है। कॉरपोरेट सेक्टर की अदक्षता विश्वभर में कॉरपोरेट मॉडल में लगातार बढ़ रही असमानता, गरीबी, भूख, बेरोजगारी, बेघरबारता के बढ़ते ग्राफ और सबसे ऊपर लगातार गैर टिकाऊ संकट (अब यहाँ और कल वहाँ) में देखी जा सकती है।

पर्यावरणीय एवं मानवीय मामलों पर सामुहिक नियंत्रण की बढ़ती हुई लोगों की मांग, मानव समाज जिधर बढ़ रहा है उसकी दिशा बताती है।

कॉरपोरेट सेक्टर द्वारा सामाजिक जवाबदेही एवं मूल्यवादी व्यवहार के नये अपनाये जाने वाले दर्शन की मुद्रा भी कॉरपोरेट सेक्टर के अहस्तक्षेप के मूलभूत सिद्धान्त के कार्यशील नहीं होने को प्रदर्शित करता है, इसका मूलभूत सिद्धान्त जो आर्थिक विकास प्रक्रिया में प्रत्येक सामाजिक मान्यता की उपेक्षा करता है और जिसका एकमात्र उद्देश्य अधिकतम् लाभ कमाना है।

* * * * *

प्रकृति–मानव केन्द्रित जन आन्दोलन (एन एच सी पी एम) द्वारा आयोजित बरनाला (पंजाब), श्रीगंगानगर, हनुमानगढ़ (राजस्थान) आदि के विभिन्न सम्मेलनों में किसान समुदाय की बुनियादी जरूरतों से संबंधित निम्नलिखित बिन्दु उभरें–

1. किसान प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यापक दृष्टिकोण के तहत सहकारिता अपनायें।
2. किसानों के 2006 के अन्त तक के सभी कर्जे माफ किये जायें।
3. कृषि को फायदेमन्द धंधा बनाया जाए, सिंचित क्षेत्र में प्रति बीघा कम से कम 10000/- रु. की आय सुनिश्चित की जाए। जबकि बिरानी क्षेत्र की प्रति बीघा कम से कम 5,000/- रु. आय सुनिश्चित की जाये।
4. सभी किसान परिवारों जिनके सदस्यों ने आत्महत्या की है उन्हें 20 लाख रुपये प्रति परिवार दिये जायें।
5. कृषि को विकसित करने के लिए सबसे अधिक उचित रास्ता सहकारी जैविक खेती को घोषित किया जाए।
6. भारत में सभी क्षेत्रों में होने वाले कुल वार्षिक निवेश का 50 प्रतिशत भाग कृषि में निवेश किया जायें।
7. औद्योगिक और खेत मजदूरों सहित सभी संगठित क्षेत्र के मजदूरों को संगठित होने में किसान सहयोग करें।
8. ग्लोबल वार्मिंग (धरती पर गर्मी बढ़ना) को रोक कर हमारे मौसम चक्र व हिमालय के गलेशियरों (बर्फ के पहाड़ों) के समाप्त होने के खतरे से निपटने के लिए पर्यावरण संरक्षण की अन्तर्राष्ट्रीय कार्यवाही को तेज करने में भारत सरकार पहलकदमी ले। इसी से हमारी गंगा, यमुना, रावी, व्यास, सतलज, ब्रह्मपुत्र जैसी नदियों को मौसमी नदियां बनने से बचाया जा सकता है और हमारी नहरी सिंचाई व्यवस्था को कायम रखकर उत्तरी भारत की कृषि और पेयजल व्यवस्था को बचाया जा सकता है।
9. केन्द्र, राज्य व स्थानीय स्तर पर नहरी सिंचाई पानी वितरण व्यवस्था को न्यायपूर्ण, समानता व तर्कसंगत बनाने एवं भ्रष्टाचार से मुक्त करने के लिए प्रबन्ध व्यवस्था में किसानों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए तथा कृषि क्षेत्र से जुड़े तमाम मसलों (सिंचाई सहित) के निराकरण के लिए किसान न्यायालयों की स्थापना की जाए।
10. भारत में उपर्युक्त मांगों को किसान समुदाय का आधारभूत प्रोग्राम माना जाए।
11. भारत में जहां कहीं संभव हो, वहां उपर्युक्त कार्यक्रम के आधार पर प्रकृति-मानव समर्थक संयुक्त किसान फ्रंट गठित किये जावें।

12. किसानों की उपर्युक्त मांगों के आधार पर राजनीतिक प्रक्रिया को बदलने और नेतृत्व देने की कार्यवाही होनी चाहिए।
13. किसानों की उपर्युक्त मांगों के पक्ष में अखिल भारतीय स्तर पर हस्ताक्षर अभियान चलाया जाए।

* * * * *

अमेरिकी महाशक्ति आतंकवाद

दुनिया के लोगों को तात्कालिक चुनौती पेश कर रहा है

उपर्युक्त दो लाइनें दुनिया के सामने हालिया दरपेश मुख्य चुनौती की ओर इंगित कर रही है। यह मुख्य चुनौती कैसे है, इसकी उत्पत्ति के स्रोत क्या है और इससे किस तरीके से निपटा जा सकता है–यह निम्नलिखित तथ्य सामग्री के अध्ययन के बाद ही स्पष्ट होगा।

महाशक्ति की अवधारणा एक शक्ति की द्योतक है जो दूसरी विद्यमान शक्तियों की तुलना में उच्च या अधिक शक्तिशाली है और आतंकवाद का विचार एक ऐसे घटनाक्रम का इजहार करता है जो लोगों को आतंकित कर भयभीत करता है या हिंसक तरीकों से उन पर शासन करता है या चाहे संयुक्त राष्ट्र के चौखटे में अथवा कुछ दूसरे अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में विश्व के देशों की बहुसंख्या द्वारा लिए गये निर्णयों की अवज्ञा करते हुए मनमानी चलाता है।

सभी विद्यमान शक्तियों में अमेरिका अधिक शक्तिशाली है, इसलिए यह एक महाशक्ति है तथा यह अपना प्रभुत्व मुख्यतया सैनिक साधनों के जरिए लागू करता है (जैसे कि बीसवीं सदी में करीब 50 देशों में तथा इक्कीसवीं सदी के शुरू होते ही अफगानिस्तान व इराक में इसके द्वारा की गई क्रूर हत्याएँ) तथा बहुसंख्यक देशों द्वारा लिये गये निर्णयों का मनमाने ढंग से उल्लंघन करता है–इसी कारण यह आतंकवाद का हौव्वा खड़ा करता है।

अमेरिका का महाशक्तिवादी आतंकवाद हाल ही उत्पन्न हुआ एक घटनाक्रम है। 1990 में इसकी विरोधी महाशक्ति सोवियत युनियन के ढह जाने के बाद यह दुनिया में एकल महाशक्ति के रूप में रह गया है जबकि कुछ मध्यम दर्जे की महाशक्तियाँ–जैसे ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, चीन, जापान, रूस आदि – दुनिया के विभिन्न भागों में संस्थापित हैं।

इसके उद्भव के समय से अमेरिकी महाशक्तिवादी आतंकवाद ने यह घोषणा कर रखी है कि अमेरिकी राष्ट्रीय सुरक्षा एवं अमेरिकी राष्ट्रीय हित दुनिया में सही और गलत की पहचान के लिए परिभाषित सिद्धान्त है। इसलिए अमेरिकी सुरक्षा और राष्ट्रीय हित अमेरिका के लोकतन्त्र के सार–इसके कानून और व्यवस्था, इसका खुलापन और स्वतन्त्रता, इसकी स्वतन्त्र प्रेस की कार्यशैली, मानवअधिकारों का व्यवहार, लिंग समानता, कैदियों के साथ व्यवहार आदि–को निर्धारित करेगा। उस समय से यह अपनी अति अन्धराष्ट्रवादी स्थिति से विचलित नहीं हुआ तथा हमेशा अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए एवं अपने द्वारा किये जा रहे आतंकवाद को छुपाने के लिए इस अति अन्धराष्ट्रवाद का बहाना लेता रहा है।

अमेरिका की पहली गंभीर एकपक्षीय आतंकवादी गतिविधि–दुनिया के वैज्ञानिक समुदाय तथा 90 प्रतिशत से अधिक राष्ट्रीय राज्यों की हमारे ग्रह पृथ्वी पर घातक पर्यावरणीय संकट पैदा होने की लगभग सर्वसम्मत राय को खारिज करने में जाहिर होती है। ढेर सारे तथ्य : ग्रीन हाउस गैसों (जी एच जी'एस) के आयतन का लगातार बढ़ना, दुनियां के जल संसाधनों का घटना, भारी मात्रा में जंगल कटना, 60 प्रतिशत से अधिक खेती योग्य भूमि का क्षय होना, बहुत सी जैव-प्रजातियों का नष्ट होना तथा अन्य प्राकृतिक उत्पादों का गैर-वहनीय उपयोग होना,यह इंगित करते हैं कि इन सभी घटनाक्रमों ने मानव प्रजाति के साथ-साथ अन्य जैव-घटनाक्रम के सामने अस्तित्व का संकट पैदा कर दिया है। वैज्ञानिक समुदाय शुरू से ही हमारे पर्यावरणीय पहलुओं की खराब होती जा रही स्थितियों के बारे में चेतावनी देता रहा है। विभिन्न पर्यावरणीय मुद्दों पर कई प्रसिद्ध वैज्ञानिकों ने पहले ही बहुत सारी रिपोर्टें जारी की हुई है, इन बहुत सारी रिपोर्टों में इस संकट के परिपक्व होने के बारे में जिन्होंने कालावधि की गणना की है उनमें से दो रिपोर्टों का यहाँ विशेष उल्लेख करना जरूरी है। पहली चेतावनी सन् 2000 में दुनियां के 6000 प्रसिद्ध वैज्ञानिकों द्वारा दी गई है। जिन्होंने यह जोर दिया है कि थोड़े से समय में यदि ग्रीन हाउस गैसों (जी एच जी'एस) का उत्पादन मनुष्य समुदाय ने बन्द नहीं किया तो इक्कीसवीं शताब्दी के अन्त तक वैश्विक उष्माकरण (ग्लोबल वार्मिंग) की प्रक्रिया के कारण यह पृथ्वी जैव-जगत के रहने लायक नहीं रहेंगी। दूसरी रिपोर्ट 2002-संयुक्त राष्ट्र संघ की डब्ल्यू-डब्ल्यू एफ. का अध्ययन है–जिसने यह चेतावनी दी है कि यदि मानव समुदाय (विशेषतौर पर धनी राष्ट्र और धनी लोग) अपनी एय्याशीपूर्ण और फिजूलखर्ची वाली जीवन शैली का त्याग नहीं करते हैं तो हमारा ग्रह पृथ्वी आगे आने वाले 50 वर्षों में मानव जीवन के लिए गैर-टिकाऊ बन जायेगा। अन्य वैज्ञानिक/विशेषज्ञ जो किसी समय-सारणी से प्रतिबद्ध नहीं हैं, यह स्वीकार करते हैं कि पर्यावरणीय परिस्थिति अत्यधिक चेतावनी भरी है।

मानवता के खिलाफ अमेरिका का सबसे बड़ा अपराध इसका पर्यावरणीय आतंकवाद है, जिसने हमारे ग्रह पृथ्वी के पर्यावरण का सबसे अधिक नुकसान किया है। अमेरिका ग्रीन हाऊस गैसों का सबसे बड़ा उत्पादक हैं, जो विश्व में इनका 30 प्रतिशत से अधिक प्रदुषण पैदा करता है और जो सम्पूर्ण मानवीय दुनिया द्वारा स्वीकृत क्योटो-प्रोटोकोल 1997 (क्योटों संधि-1997) को अनुमोदन करने से मना कर रहा है। इसके अतिरिक्त यह विश्व के पर्यावरणीय संसाधन के लिए अत्यधिक लालची है। इसका यह तर्क कि ग्रीन हाऊस गैसों के उत्पादन स्तर में किसी भी तरह की कमी या इसके पर्यावरणीय संसाधनों के उपयोग में किसी तरह की कमी से अमेरिकी आर्थिकता को हानि पहुँचेगी। यह तर्क अत्यधिक विवेकहीन है जो केवल एक मानव-विरोधी नैसर्गिक सोच से ग्रसित है।

21वीं शताब्दी के शुरू से ही यह हर तरीके से विश्व के विभिन्न देशों में विद्यमान सभी महत्वपूर्ण पर्यावरणीय संसाधनों को नियंत्रण में करने की मुहिम छेड़े हुए हैं, इसके लिए यह पहले व्यापारिक चालों को उपयोग करता है और आखिरकार सैनिक ताकत का उपयोग करता है।

द्वितीय अमेरिकी एकपक्षीय गंभीर आतंकवादी गतिविधि मानव विकास से संबंधित सभी वैश्विक संस्थाओं–जैसे-संयुक्त राष्ट्र संघ, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन आदि द्वारा इंगित हमारे विकास मॉडल (जो मुख्य रूप से असहनीय

असमानता, गैर बराबरी, गरीबी और अन्याय से चरित्रित) के अवहनीय होने से इन्कार करना है।

2002 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट अभिव्यक्त करती है कि दुनिया के 1% सबसे अधिक धनवान दुनिया के 75% सबसे गरीब लोगों की कुल आय से ज्यादा आय प्राप्त करते हैं। 2001 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट लिखती है, विकासशील देशों के 460 करोड़ लोगों में से 35 करोड़ से ज्यादा अशिक्षित है, लगभग 100 करोड़ लोग पीने के स्वच्छ पानी से वंचित है और 240 करोड़ लोगों को समुचित शौच सुविधा उपलब्ध नहीं है। लगभग 3 करोड़ 20 लाख लड़के व लड़कियां स्कूल नहीं जाते। 5 साल से कम आयु के 1 करोड़ 10 लाख बच्चे निरोधक बीमारियों से मर जाते हैं जो प्रतिदिन 30 हजार से अधिक है। 1 अरब 20 करोड़ लोग एक डॉलर से कम और 2 अरब 80 करोड़ 2 डालर से कम प्रतिदिन आय पर जीते हैं। इस प्रकार वंचितपन विकासशील देशों तक ही सीमित नहीं है। ओ ई सी डी (आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन) के देशों में 13 करोड़ से अधिक लोगों की कमजोर आय है। 3 करोड़ 40 लाख बेरोजगार है और वयस्क कार्यकारी अशिक्षा की औसत दर 15% है। रिपोर्ट आगे व्यक्त करती है कि अमेरिका की सर्वोच्च 10% अमीर आबादी (जो करीब 2 करोड़ 50 लाख है) की आय विश्व के सबसे गरीब 43% (करीब 200 करोड़) लोगों की संयुक्त आय से ज्यादा है। 1999 की मानव विकास रिपोर्ट कहती है कि 1990 के दशक के अंत में दुनिया की आबादी के ऊपर के 20% लोगों एवं नीचे के 20% लोगों के बीच उपभोग एवं नियंत्रण क्रमश: विश्व जी डी पी का 86% व 1%, विश्व टेलिफोन लाईन का (जो आज का बुनियादी संचार साधन है) 75% तथा 1.5%, विश्व निर्यात का 82% व 1% तथा विदेशी निवेश का 86% तथा 1% भाग था। 1996 की संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट बताती है कि विश्व के सबसे धनवान मात्र 3 व्यक्ति 48 अल्पविकसित देशों की संयुक्त जी डी पी के बराबर सम्पदा रखते हैं, विश्व के 225 सबसे धनवान व्यक्तियों के पास 10 खरब डालर से ज्यादा सम्पत्ति है जो विश्व के 47% गरीबों (जिनकी संख्या 250 करोड़ है) की कुल आय है। विश्व के 32 सबसे धनवान व्यक्तियों की सम्पदा दक्षिण एशिया (भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान तथा मालद्वीप) तथा ईरान एवं अफगानिस्तान की संयुक्त जी डी पी से ज्यादा है।

रुचिकर बात है कि एक ऐतिहासिक आर्थिक विशेषज्ञ के अनुसार दिल्ली के मुगल सम्राटों (जहाँगीर, शाहजहाँ आदि) की आय अपनी सत्ता के उच्चतम काल में आज की कीमतों के आधार पर 15000 रुपये सालाना हुआ करती थी।

तीसरी, अमेरिकी गंभीर आतंकवादी गतिविधि हाल ही में पुनर्गठित रूढ़िवादी रुझानों जैसे हिन्दुत्व, अखिल इस्लामवाद, बुद्धवादी निर्वाण, ईसाइयत, मुक्त व्यापार का पश्चिमी दर्शन तथा राज्य-प्रबन्धित मार्क्सवादी सर्वहारा दिवास्वप्न को गुपचुप संजाये रखना है ताकि लोगों के बीच विभिन्न प्रकार की भ्रांतियों को पैदा किया जा सके। विभिन्न प्रकार की धार्मिक रूढ़िवादिता भिन्न-भिन्न धार्मिक ग्रुपों के बीच घृणा पैदा करती है तथा लोगों की मानसिकता को कट्टरता की तरफ धकेलती हैं। मुक्त बाजार दर्शन के समर्थक लोगों को उपभोक्तावादी तथा वाणिज्यिकरण की ओर ले जाते हैं एवं राज्य-नेतृत्व वाला साम्यवादी यूटोपिया पब्लिक सेक्टर के गुणगान की ओर ले जाता है।

चौथा, अमेरिकी एकपक्षीय गंभीर आतंकवादी गतिविधि रोजाना बढ़ रहे खतरों यानि हिंसा, अपराध, भ्रष्टाचार, महिलाओं ओर बच्चों का उत्पीड़न और अल्पसंख्यकों

का दमन करना, आदिवासी तथा मूल निवासियों के जीने के साधनों को समाप्त करना, विभिन्न प्रकार के असंगठित मजदूरों (जो दुनियां के कामगारों का लगभग 40 प्रतिशत भाग) की दयनीय हालातों का रोज और अधिक खराब होते जाना, तथा सारी दुनियां में व विशेषतौर पर पारस्परिक लोकतान्त्रिक देशों (जैसे ब्रिटेन और अमेरिका) में मानव अधिकारों और नागरिक स्वतन्त्राओं पर बढ़ रहे हमलों, इत्यादि की अनदेखी करने से जाहिर होती है।

पांचवीं, अमेरिका की एकपक्षीय गंभीर आतंकवादी गतिविधि–विश्व आतंकवाद को दुनियां के लोगों के लिए मुख्य खतरे के रूप में पेश करना है, जो कि हटिंग्टन की पुस्तक 'सभ्यताओं का टकराव' से निर्देशित है इस पुस्तक में सभ्यताओं की टकराहट को इस तरह से चिन्हित किया है कि यह एक तरफ इस्लामी रूढ़िवाद (अमेरिका के अनुसार जो केवल मतान्ध इस्लामवादी ही हैं) एवं दूसरी तरफ मानवीय हितों के साथ ही साथ पश्चिमी राजनीतिक लोकतन्त्र एवं मुक्त बाजार की आर्थिकता वाले शुद्ध इसाई धर्म की मिशनरी भावना के बीच का संघर्ष है। इस मनगढ़न्त कथा के आधार पर अमेरिका ने ना केवल दुनियां के सभी धर्मों बल्कि दुनियां के लोगों के लिए भी इस्लामी रूढ़िवाद को छाँटकर एक खतरे के रूप में घोषित किया है। अमेरिका के इस कपट जाल के चलते-चलते ही इसका निहित स्वार्थ दुनिया के सामने प्रकट होने लगा है।

छठी, अमेरिकी एकपक्षीय आतंकवादी गतिविधि सभी रणनीतिक पहलुओं–(1) विश्व के प्राकृतिक संसाधन (2) विश्व बाजार (3) वैज्ञानिक-तकनीकी अनुसंधान (4) अत्यधिक विनाशक एवं उच्चतम निपुणता वाले हथियारों की स्पष्ट उद्देश्य वाली सैनिक रणनीति (5) मुद्रा सहित विश्व आर्थिकता, (6) संयुक्त राष्ट्र संघ एवं सुरक्षा परिषद तथा (7) सभी प्रकार की अन्तरराष्ट्रीय संस्थाएं, जैसे विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन, खाद्य एवं कृषि संगठन, यूनेस्को, विश्व स्वास्थ्य संगठन आदि–पर प्रथम स्थान बनाए रख कर नई उभर रही विश्व व्यवस्था में एकमात्र अमेरिकी वर्चस्व को स्थापित करने के बुनियादी उद्देश्य को हासिल करना है।

सातवीं, अमेरिका की एकपक्षीय गंभीर आतंकवादी गतिविधि इसके भूमंडलीय उद्देश्यों के संदर्भ में उन सभी स्थानों पर जो विशेष महत्व रखते हैं (जैसे इराक और अफगानिस्तान) वहाँ अव्यवस्था और अराजकता पैदा करना है।

आठवीं, अमेरिका की एकपक्षीय गंभीर आतंकवादी गतिविधि अमेरिका के विरोधी महाशक्तिवादी प्रतियोगी जैसे रूस, चीन आदि को अलग-अलग करना, कमजोर करना, छिन्न-भिन्न करना एवं अन्त में उनकी महाशक्ति को समाप्त कर देना है। अमेरिका ने पहले ही भारत, जापान, आस्ट्रेलिया आदि में अपनी चीन विरोधी परियोजना स्थापित की हुई है तथा रूस के सहयोगी जैसे यूक्रेन, बायलोरसिया, ताजिकिस्तान आदि को फुस्लाकर रूस के साथ भी वैसा ही करना चाहता है जैसा चीन के साथ कर रहा है।

नवीं, अमेरिका की एकपक्षीय गंभीर आतंकवादी गतिविधि सभी असली और शैक्षिक मानववादी तथा पर्यावरणवादी जन आन्दोलनों को दुर्बल बनाना है।

दसवीं, अमेरिका की एकपक्षीय गंभीर आतंकवादी गतिविधि प्रत्येक वाजिब शान्ति आन्दोलन को हर समय और हर जगह छिन्न-भिन्न करने की है। इसके साथ-साथ यह दुनियां में विभिन्न तनाव बिन्दुओं–जैसे, जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन, डायफोर आदि–वाले भिन्न-भिन्न देशों के बीच हल की सभी सच्ची गतिविधियों को नुकसान पहुंचाने की

कोशिश करना है तथा विभिन्न देशों के बीच कई सीमा व क्षेत्रीय विवाद एवं सांस्कृतिक व स्वराज पाने के लिए बहुत से लोगों के नस्ली संघर्षों के हल के मामले में चालाकी से अपना ऐसा हल थोपने की कोशिश करना है जिससे उसका प्रभुत्व सुनिश्चित होता हो।

उपर्युक्त तथ्य इस बात के सूचक हैं कि कैसे अमेरिकी महाशक्ति आतंकवाद दुनिया के लोगों को तात्कालिक चुनौती पेश कर रहा है।

(3)

अमेरिकी महाशक्ति आतंकवाद का मूलभूत (या दीर्घकालीन) कारण विद्यमान राष्ट्र आधारित कॉरपोरेट पूंजीवादी सामाजिक व्यवस्था और इसके मुख्य मानवीय प्रेरक पहलू, यानि, स्वहित में निहित है। सामाजिक व्यवस्था और इसके मानवीय प्रेरक पहलू, दोनों ने अपने-अपने 200 साल से अधिक लम्बे राष्ट्रीय शासन के दौरान पर्यावरणीय गैर-टिकाऊपन, अन्यायिक और असमान व्यवस्था खड़ी की है, जहाँ ताकतवर कमजोर की पीठ पर सवार है और गरीब पर अमीर हावी है एवं पैसे और सत्ता, न्याय व सच्चाई के स्वीकृत मानदण्ड बने हुए हैं।

कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था के स्वहित (निजी स्वार्थ) वाले मानवीय प्रेरक पहलू का प्रादुर्भाव एडम स्मिथ के सिद्धान्त से हुआ है, इस सिद्धान्त के मुताबिक मनुष्य का स्वभाव स्वार्थी होता है इसने स्वहित (यानि स्वार्थी स्वभाव) के पूरक पहलू यानि मनुष्य के सामाजिक हित को पीछे धकेल दिया।

वास्तव में स्व-हित पशुजगत का बुनियादी स्वभाव है, जबकि मनुष्य का जबसे होमोसेपियन के रूप में प्रादुर्भाव हुआ, तब से उसकी प्रकृति जैव सामाजिक है। अर्द्ध सामाजिक होने का उसका एकमात्र गुण मनुष्य प्रजाति को पशुप्रजाति से भिन्नता प्रदान करता है। जब मनुष्य में सामाजिक पहलू नहीं रहता, तब उसकी जीवन शैली एक पशु के रूप में बदल जाती है।

तब धन और सत्ता अधिकतम स्वहित का प्रतिनिधित्व करती है, पूरी दुनिया अब इन दो 'जीवनदायी अमृत' के पीछे भाग रही है। धन और सत्ता पाने के इस व्यापार ने अधिकतम् गैर-टिकाऊ मानव व्यवस्था लाकर अब दुनिया को गंभीरतम पर्यावरणीय और मानवीय बर्बादी के कगार पर ला खड़ा किया है।

आतंकवाद का अल्पकालीन (या तात्कालिक) कारण इस सामाजिक व्यवस्था की संचालक एजेन्सी या सरकार में निहित है। अपने स्वहित से निर्देशित कारपोरेट पूंजीवादी सरकारों के नेता (प्रत्येक देश में पार्टी व्यवस्था पर आधारित) मुख्यतया पूँजी मालिकों की सम्पत्ति के साथ अपनी सम्पत्ति को अधिकतम सीमा तक बढ़ाने के लिए समर्पित हैं और उचित या अनुचित साधनों (यानि, हिंसा, अपराध, भ्रष्टाचार इत्यादि) से सत्ता पर काबिज रहते हैं। उनके व्यापार का मानक मापदण्ड है ''कहना कुछ और करना कुछ ओर।''

(4)

अमेरिकी महाशक्ति आतंकवाद की समस्या का अल्पकालीन (या तात्कालिक) हल पाँच सिद्धान्तों–यानि, (1) हर समय और हर स्थान पर पर्यावरण और लोगों को सर्वोच्चता देना, (2) लोगों के बीच भाईचारे के मजबूत संबंध स्थापित करना, (3) कारपोरेट पूंजीवादी समर्थक राजनीतिक पार्टियों तथा व्यापारिक घरानों की जगह आम

जनता का सशक्तिकरण करना, (4) प्रत्येक वंचित और गरीब व्यक्ति की सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करने और (5) बेतुके आय के अन्तर को 1:5 के अनुपात में तर्कसंगत बनाने की बुनियाद पर एक न्याय आधारित समाज की स्थापना करने में निहित है।

(5)

अमेरिकी महाशक्ति आतंकवाद की समस्या का बुनियादी (या दीर्घकालीन) हल वर्तमान कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था की जगह प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था को लाने में निहित है।

संयुक्त राष्ट्र के घोषणा-पत्र का दृष्टिकोण जो आज की दुनिया को राष्ट्रों के एक संघ के रूप में पेश करता है, इसके मुकाबले प्रकृति-मानव आधारित कार्यक्रम के दृष्टिकोण की मान्यता है कि दुनिया 'एक विश्व' है। 'एक विश्व' का दृष्टिकोण एक तरफ लोगों के हितों की सेवा करता है दूसरी तरफ पर्यावरण संरक्षण का ख्याल रखता है।

प्रकृति-मानव आधारित कार्यक्रम एक नए प्रकार के सामाजिक प्रबंध और विकास मॉडल की मांग करता है जो पांच आयामी प्राथमिकता यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, सामाजिक समानता (1:5 के आय में फर्क तथा सभी को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार) उत्पादकता, लोकतंत्र (सभी मामलों में लोगों का सशक्तिकरण) तथा पारदर्शिता कायम करना है। ये पाँच मूल सिद्धान्त मानव जाति के जैविक- सामाजिक प्रकृति के अनुकूल हैं, यानि मनुष्य के निजी हित और उसके सामाजिक हितों को जोड़ते हैं।

यह नया मॉडल दो परम्परागत राष्ट्रीय व्यवस्थाओं के उलट सामाजिक विकास और उन्नति की नई धारणा का प्रतिनिधित्व करता है। कारपोरेट बाजार-नेतृत्व तथा कारपोरेट सरकार-निर्देशित (जो प्राय: कम्युनिस्ट मॉडल कहलाता है) दोनों मॉडल लाभप्रदता, उत्पादकता या वृद्धि दर को सामाजिक विकास या उन्नति का एक मात्र पैमाना समझते हैं, जबकि इसके उलट प्रकृति-मानव आधारित कार्यक्रम (एजेन्डा) पैसे या पूंजी को समाज में सर्वोच्च वस्तु मानने की धारणा को पूर्णतया रद्द करता है और मानता है कि केवल पर्यावरणीय संवर्द्धन और समस्त लोगों की बेहतरी ही समाज में सर्वोच्च चीज का प्रतिनिधित्व करने वाला एकमात्र पैमाना है। पैसा या पूँजी केवल विनिमय के माध्यम का प्रतिनिधित्व करते हैं और इससे परे इसका कोई मूल्य नहीं है।

मानव-हितैषी और पर्यावरण हितैषी विकास के लिए सबसे पहले स्थिर और स्थायी शांति और सुरक्षा की आवश्यकता है। ऐसी शांति स्थापित करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रभुत्व, विशेषाधिकार, विशेष शक्ति प्रदान करने वाली राजनीति को रद्द किया जाए, विश्व में पूर्ण निशस्त्रीकरण करके और परमाणु हथियारों का पूर्ण नियन्त्रण संयुक्त राष्ट्र को सौंपकर टकराव की पद्धति का अन्त किया जाए। विश्व में राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक असमानता का अन्त किया जाए और विकसित व विकासशील देशों के बीच अन्तर को पाटा जाए।

द्वितीय, मानव हितैषी और पर्यावरण हितैषी विकास एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था चाहता है जो सम्पूर्णतया जनवादी उसूलों, कार्यप्रणाली और ढाँचे पर आधारित हो। ऐसी सामाजिक व्यवस्था के लिए आवश्यक है कि यू एन ओ की व्यवस्था में विशेष वीटो शक्ति के नियम को समाप्त किया जाए और राष्ट्रीय राज्य के प्रबन्ध को पार्टियों की केन्द्रीकृत शक्ति में आवश्यक कमी करने के साथ-साथ निर्णय लेने में लोगों को अधिकतम् संभव शक्तिशाली बनाने के उसूल को सुनिश्चित करते हुए पुनर्गठित किया जाए।

तृतीय, मानव हितैषी और पर्यावरण हितैषी विकास के लिए एक ऐसे तर्कसंगत और वास्तविक अर्थशास्त्र की मांग है जिसकी अवधारणाएँ, कानूनों और नियमों को दो उच्च प्राथमिकताओं (यानि मानवजाति और पर्यावरण) के तहत और पांच उसूलों (यानि पर्यावरण टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, जनवाद और पारदर्शिता) के मुताबिक ढालने की जरूरत है। मानव की जैव-सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एडम स्मिथ के 'निजी हित' के बुनियादी आर्थिक उसूल और मार्क्स के हर कहीं राजकीय राष्ट्रीयकरण का बुनियादी नियम, दोनों ही मानव की इस जैव-सामाजिक प्रकृति के लिए एक तरफा साबित हुए है।

चतुर्थ, मानव हितैषी और पर्यावरण हितैषी विकास जीवन के एक ऐसे रास्ते (या जीवन पद्धति) का आह्वान करता है जिसमें आधारभूत मानवीय और पर्यावरणीय मूल्य शामिल हों और जिससे लोगों के बीच तर्कसंगत, मानवीय और पर्यावरणीय सोच, व्यवहार और संगठन को बढ़ावा मिलता हो।

पांचवा, यह वैज्ञानिक वास्तविकतावाद पर आधारित है जो प्राकृतिक घटनाक्रम का अध्ययन एवं विश्लेषण वैज्ञानिक तथ्यों की रोशनी में तथा सामाजिक मामलों का अध्ययन एवं विश्लेषण ठोस सूचनाओं एवं आंकड़ों की बुनियाद पर करता है।

अंतिम तौर पर यह जरूरी है कि किसी भी पुरानी सामाजिक व्यवस्था की प्रक्रिया में किसी भी पुनर्गठन और इसे सामयिक बनाने के लिए सम्पूर्ण संवैधानिक-कानूनी ढांचे को आदमी की जैव-सामाजिक प्रकृति के आधार पर (यानि मानव के निजी हित के साथ उसके सामाजिक हित में समन्वय बैठाकर) बनाया जावे। इस प्रकार सामाजिक उन्नति को त्वरित करने के लिए एक वास्तविक मानवीय मनोवैज्ञानिक अनुकूलन या प्रेरक पहलू को आगे लाया जाए।

(6)

हमारा वर्तमान कार्य अमेरिकी महाशक्ति आतंकवाद की समस्या, इसका कारण और हल के बारे में लोगों की जागरूकता बढ़ाना है। (24.03.2006)

* * * * *

विश्व सामाजिक मंच (वि.सा.मं.)

I

(अ) संक्षिप्त इतिहास

25 जनवरी से 30 जनवरी, 2001 तक ब्राजील के पोर्टो एलेग्रे शहर में विश्व सामाजिक मंच का पहला सम्मेलन आयोजित किया गया था। जनवरी 2002 में दूसरे विश्व सामाजिक मंच के सम्मेलन में 15000 पंजीकृत प्रतिनिधियों तथा कुल 131 देशों के 55000 लोगों ने उसमें भाग लिया था। उस सम्मेलन में विश्व सामाजिक मंच की सोच एवं गतिविधि के मार्गदर्शन के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय परिषद् का गठन किया गया था। विश्व सामाजिक मंच का तीसरा सम्मेलन ब्राजील के पोर्टो एलेग्रे शहर में जनवरी, 2003 में आयोजित किया गया था। इस सम्मेलन में अन्तर्राष्ट्रीय परिषद् ने यह निर्णय लिया था कि परिषद् की अगली मिटिंग सन् 2004 में भारत में रखी जायेगी। यह मिटिंग पहली बार ब्राजील से बाहर रखी गई।

मुम्बई 2004 में करीब 100000 प्रतिनिधियों ने विश्व सामाजिक मंच के इस सम्मेलन में भाग लिया था।

जनवरी 2005 में विश्व सामाजिक मंच की वार्षिक मिटिंग ब्राजील के पोर्टो एलेग्रे शहर में हुई जिसमें 120000 डेलीगेटों ने भाग लिया।

इस वार्षिक मिटिंग में एक वैश्विक कार्यक्रम के स्थान पर 2006 में बहुकेन्द्रित विश्व सामाजिक मंच के आयोजन की प्रक्रिया अपनाकर विकेन्द्रीकरण करने को बढ़ावा देने का निर्णय लिया। जनवरी 2006 में बहुकेन्द्रित कार्यक्रम के तौर पर काराकास, वेनेजुएला, बोमाको (माली) में तथा मार्च 2006 में कराची में आयोजित किये गए एवं नवम्बर 2006 में यह कार्यक्रम दिल्ली में होना है।

विश्व सामाजिक मंच का अगला वैश्विक कार्यक्रम 20 जनवरी से 25 जनवरी 2007 के बीच में केन्या के नैरोबी शहर में होने वाला है।

(ब) विश्व सामाजिक मंच के कुछ अवांछनीय व्यवहार

उपरोक्त वर्णित विश्व सामाजिक मंच की बैठकें कुछ अवांछित व्यवहार को इंगित करती हैं जिन पर विशेष ध्यान दिया जाना आवश्यक है–

1. पहली, वार्षिक बैठकों में भाग लेने वाले आन्दोलनों और ग्रुपों के नाम विश्व सामाजिक मंच प्रकट नहीं करता।

2. द्वितीय, सामाजिक मंच की किसी भी वार्षिक मिटिंग पर होने वाले अरबों डालर खर्च को हमेशा छिपाया जाता है।

3. तृतीय, विश्व सामाजिक मंच की बैठकों में भाग लेने के लिए विश्व के विभिन्न भागों से और विशेष तौर पर अमेरिका और यूरोप से आने वाले 50-60 हजार डेलीगेट्स पर हवाई यात्रा के अरबों डालर खर्च के स्रोत को गुप्त रखा जाता है।

4. चतुर्थ, विश्व सामाजिक मंच की किसी भी वार्षिक प्रक्रिया के खर्च का लेखा परीक्षण (ऑडिट) नहीं किया जाता है और इस प्रकार यह गुप्त रहता है।

5. पांचवां, विश्व सामाजिक मंच विभिन्न सामाजिक आन्दोलनों, नेटवर्कों तथा गैर सरकारी संगठनों से रचित है जो विभिन्न कारपोरेट सरकारों तथा कारपोरेट इमदादी चैरिटेबल ट्रस्टों द्वारा वित्त-पोषित है।

कोई भी प्रक्रिया जो गुप्तता लिए हुए हो वह हमेशा कुछ न कुछ संदिग्धता भरी होती है यह कल्पना करना कोई कठिन कार्य नहीं है।

II

विश्व सामाजिक मंच के एजेण्डे की प्रासंगिकता एवं औचित्य

विश्व सामाजिक मंच की वास्तविक प्रकृति को जानने के लिए उसके एजेण्डे की प्रासंगिकता और औचित्य को हमारे विश्व के वास्तविक हालात के सन्दर्भ में समझना आवश्यक है। यह एजेण्डा विश्व सामाजिक मंच के सिद्धान्तों के घोषणापत्र (सीओपी) में समाहित है जिनका इसके सभी घटकों को पालन करना आवश्यक है।

सिद्धान्तों का घोषणापत्र (सीओपी)

परिचय या प्रस्तावना

ब्राजीलियन संगठनों की कमेटी ने विश्व सामाजिक मंच बनाने का प्रादुर्भाव किया और इसका प्रथम सम्मेलन पोर्टो एलेग्रे में जनवरी 25 से 30, 2001 में आयोजित किया।

इस मंच की अपेक्षाओं और परिणामों के मूल्यांकन के बाद इस कमेटी ने यह आवश्यक समझा कि इस पहल को लगातार बनाए रखने के लिए मार्गदर्शक सैद्धान्तिक घोषणापत्र द्वारा इसे विधिसम्मत बनाया जाये। यद्यपि, इस घोषणापत्र में जो सिद्धान्त रखे गये वे उन निर्णयों का संकलन था जिनके तहत पोर्टो एलेग्रे में सम्मेलन आयोजित हुआ एवं उसकी सफलता सुनिश्चित हुई, तथापि ब्राजीलियन संगठनों की कमेटी ने इन निर्णयों की पहुँच को और विस्तार देना मुनासिब समझा एवं निर्णयों की तार्किकता के आधार पर आगे के लिए दिशा परिभाषित कर दी, वे सभी जो विश्व सामाजिक मंच की प्रक्रिया में भाग लेना चाहते हैं तथा इस मंच के नये संस्करण आयोजित करना है वे इन सिद्धान्तों का आदर करेंगे, यह आशा रखी गई।

उपरोक्त वर्णित परिचयात्मक पैरा में जो कहा गया है उसे दूसरे शब्दों में सिद्धान्तों के घोषणापत्र की प्रस्तावना भी कहा जा सकता है। इस पर निम्न बिन्दु गम्भीरता से विचारणीय हैं। किसी भी दस्तावेज की प्रस्तावना उसकी दिशा या मूलभूत सिद्धान्त को परिभाषित करती है जो हर समय व हर एक पर बाध्यकारी होती है।

परिचय या प्रस्तावना पर हमारी टिप्पणी

विश्व सामाजिक मंच के सिद्धान्तों के घोषणापत्र पर हमारी पहली आम टिप्पणी यह है कि इस घोषणापत्र को ब्राजील के संगठनों द्वारा बनाई गई एक कमेटी ने ही बनाया है, इस कमेटी ने ही विश्व सामाजिक मंच का प्रादुर्भाव किया यानि जनवरी25 से जनवरी 30, 2001 में पोर्टो एलेग्रे शहर में प्रथम विश्व सामाजिक मंच का सम्मेलन आयोजित किया। आगे, प्रस्तावना का यह कथन है कि वे सभी जो विश्व सामाजिक मंच की प्रक्रिया में भाग लेने की इच्छा रखते हैं एवं इस मंच के नये सम्मेलन आयोजित करना चाहते हैं वे इन सिद्धान्तों का आदर करेंगे, तथा इसके अलावा विश्व सामाजिक मंच से सम्बन्धित सभी लोगों के लिए ये सिद्धान्त मार्गदर्शक रहेंगे। सन् 2001 से विश्व सामाजिक मंच के 6 वार्षिक सम्मेलन हो चुके हैं परन्तु इस कमेटी द्वारा बनाए गए घोषणापत्र को मंजूर करने के लिए किसी भी सम्मेलन के सामने नहीं रखा गया। और न ही विश्व सामाजिक मंच के किसी भी वार्षिक सम्मेलन ने यह मांग की है कि एक कमेटी द्वारा बनाये गये इस दस्तावेज को अन्तिम तौर पर स्वीकृत करने के लिए विश्व सामाजिक मंच के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के सम्मुख इसे रखा जाए। क्या उपरोक्त वर्णित शैली लोकतांत्रिक नजरिए को अभिव्यक्त करती है। निश्चय ही यह शैली केवल फासिस्ट सोच एवं अधिनायकवादी कार्यशैली को दर्शाती है।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र का पहला उसूल

सभ्य समाज के वे ग्रुप और आन्दोलन जो नव-उदारवाद तथा पूँजी के प्रभुत्व और हर प्रकार के साम्राज्यवाद के विरुद्ध हैं एवं मनुष्य समाज के अन्दर तथा मनुष्य जाति व पृथ्वी के बीच लाभदायक सम्बन्ध बनाने की दिशा के तहत एक वैश्विक समाज का निर्माण करने के लिए प्रतिबद्ध हैं, इन सबके लिए विश्व सामाजिक मंच विचार विमर्श, विचारों का लोकतांत्रिक वाद-विवाद, प्रस्तावों की रचना, अनुभवों का मुक्त आदान-प्रदान एवं प्रभावी क्रियाकलापों को अन्तरसंबंधित करने के लिए एक खुला मंच प्रदान करता है।

हमारी टिप्पणी

पहला सिद्धान्त जो यह कहता है कि विश्व सामाजिक मंच विचार-विमर्श, विचारों के लोकतांत्रिक वाद-विवाद, अनुभवों का मुक्त आदान-प्रदान, प्रस्तावों की रचना आदि के लिए बातचीत करने का खुला स्थान है। हम यह पाते हैं कि उपरोक्त वर्णित प्रस्तावना जो विश्व सामाजिक मंच के किसी भी सत्र को यह इजाजत नहीं देता कि सिद्धान्तों के घोषणापत्र के किसी भी सिद्धान्त को संशोधित किया जा सके, ऐसी स्थिति में उपरोक्त वर्णित लोकतांत्रिक शैली स्वत: ही निषेध हो जाती है। आगे, पहला सिद्धान्त यह भी कहता है कि विश्व सामाजिक मंच सभ्य समाज के उन ग्रुपों और आन्दोलनों को जो नव उदारवाद एवं पूँजी के वैश्विक प्रभुत्व और हर किस्म के साम्राज्यवाद के विरुद्ध हैं उन्हें अन्तरसंबंधित करेगा। विश्व सामाजिक मंच पहले से ही उन समाजिक आन्दोलनों, नेटवर्कों तथा गैर-सरकारी संगठनों से गठित है जो विश्व कारपोरेट सरकारों से एवं कारपोरेट समर्थित दानदाता ट्रस्टों से वित्त पोषित है, क्या ऐसे ग्रुप नव उदारवाद एवं पूँजी के वैश्विक प्रभुत्व और किसी भी किस्म के साम्राज्यवाद का विरोध कर सकते हैं? क्या ऐसे ग्रुप लोगों को लामबन्द कर सकते हैं? क्या ऐसे ग्रुप यह जानते हैं कि नव उदारवाद एवं साम्राज्यवादी किस्म की पूँजी भूतकाल की बात हो चुकी है? आज, विकसित एवं विकासशील दोनों तरह के देशों में पूँजी कारपोरेट किस्म के रूप में संचालित है।

अन्तिम तौर पर, पहले सिद्धान्त का यह नारा कि विश्व सामाजिक मंच मनुष्य जाति के अन्दर एवं मनुष्य जाति व पृथ्वी के बीच में लाभदायक सम्बन्ध बनाने की दिशा के तहत एक वैश्विक समाज का निर्माण करेगा, यह केवल मात्र लोगों को अपने पक्ष में लुभाने के लिए एक प्रचारात्मक एवं आडम्बरपूर्ण नारा है। शायद, विश्व सामाजिक मंच खुद यह नहीं जानता कि वह मनुष्य जाति के अन्दर तथा मनुष्य जाति व पृथ्वी के बीच में किस किस्म का लाभदायक सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है। एक ऐसा संगठन (जैसा कि विश्व सामाजिक मंच) जो हमारे ग्रह पृथ्वी पर एक तरफ पर्यावरणीय गिरावट से मनुष्य जाति पर आने वाले अत्यधिक घातक खतरे से तथा दूसरी तरफ 70 प्रतिशत लोगों के अमानवीय, दुखी एवं दयनीय जिन्दगी से बिल्कुल अनभिज्ञ है, वह मनुष्य जाति के अन्दर तथा पृथ्वी और मनुष्य जाति के बीच लाभदायक सम्बन्ध कैसे बना सकता है।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र का दूसरा उसूल

पोर्टो एलेग्रे में आयोजित विश्व सामाजिक मंच समय और स्थान के सन्दर्भ में एक स्थानीय घटनाक्रम था परन्तु अब से पोर्टो एलेग्रे में यह निश्चित घोषणा करने के बाद कि 'एक दूसरी दुनिया संभव है', यह विकल्पों को हासिल करने व निर्माण करने की एक स्थायी प्रक्रिया बन गई है, जिसमें इसके समर्थक घटनाक्रम परिवर्तन नहीं कर सकते हैं।

हमारी टिप्पणी

दूसरा उसूल कहता है कि अब से दूसरी दुनिया संभव है का नारा विकल्पों को हासिल करने व निर्माण करने की एक स्थायी प्रक्रिया बन गई है जिससे इसके समर्थित घटनाक्रम बदल नहीं सकते हैं। परन्तु ध्यान देने योग्य दिलचस्प बात यह है कि पिछले 6 वर्षों में यह एक भी विकल्प बताने में असफल रहा है।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र का तीसरा उसूल

विश्व सामाजिक मंच एक वैश्विक प्रक्रिया है। सभी मिटिंगें जो इस प्रक्रिया के भाग के तहत की जाती हैं उनका आयाम अन्तर्राष्ट्रीय है।

हमारी टिप्पणी

तीसरा उसूल अन्तर्राष्ट्रीय आयाम को विश्व सामाजिक मंच का एक आयाम दर्शित करता है न कि प्राथमिक आयाम। जिसका अर्थ है कि यह किसी परिस्थिति में किसी उद्देश्य को वास्तविक हालात से हटकर अपना सकता है।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र का चौथा उसूल

विश्व सामाजिक मंच में प्रस्तावित विकल्प–वैश्वीकरण की प्रक्रिया जो विशाल बहुराष्ट्रीय कारपोरेशनों की कमान में एवं राष्ट्रीय सरकारों की सह अपराधिता के साथ कारपोरेशन्स के हितों की सेवा में संलग्न सरकारों एवं अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के विरोध में है। ये विकल्प विश्व इतिहास की एक नई मंजिल के तौर पर वैश्वीकरण के साथ एकात्मकता सुनिश्चित करेंगे। ये विकल्प सभी देशों के सभी नागरिकों–नर व नारी–के सार्वभौम मानवाधिकारों तथा पर्यावरण का सम्मान करेंगे और सामाजिक न्याय, समानता तथा जनता की सर्वप्रभुसम्पन्नता की सेवा में अन्तर्राष्ट्रीय जनवादी व्यवस्था एवं संस्थाओं के रूप में कार्यरत रहेंगी।

हमारी टिप्पणी

चौथा उसूल एक नई भ्रांति प्रस्तुत करता है। उदारवाद और साम्राज्यवाद का उल्लेख किये बगैर यह कहता है कि विश्व सामाजिक मंच वैश्वीकरण के खिलाफ है और यह स्पष्ट नहीं करता है कि क्या मंच के अनुसार नव-उदारवाद एवं साम्राज्यवाद, वैश्वीकरण के समरूप हैं अथवा इसके उलट वैश्वीकरण ही नव-उदारवाद व साम्राज्यवाद है। शाब्दिक तौर पर विश्व का वैश्वीकरण केवल किसी घटनाक्रम के वैश्विक चरित्र को इंगित करता है, वैश्वीकरण किसी चीज के आकार और विस्तार के अलावा और कोई ठोस चीज को नहीं दर्शाता है। इसलिए नव-उदारवाद या साम्राज्यवाद के स्थान पर वैश्वीकरण को नहीं रखा जा सकता है।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र का पांचवां उसूल

विश्व सामाजिक मंच विश्व के सभी देशों के सभ्य समाज के संगठनों और आन्दोलनों को ही इकट्ठा करता है और जोड़ता है परन्तु यह मंच विश्व सभ्य समाज की प्रतिनिधि संस्था हो, ऐसी इसकी कामना नहीं है।

हमारी टिप्पणी

इसका पांचवां उसूल एक भ्रामक विचार है। यह मंच हर समय और हर जगह एक कमेटी द्वारा तैयार किये गए सिद्धान्तों के घोषणापत्र को हुबहू बाध्यकारी मानता है, व्यवहार में इससे जुड़े संगठनों और आन्दोलनों को यह बाध्य करता है कि वे व्यवहारिक तौर पर पूर्णतया अनुशासित एवं एकीकृत संस्था के बतौर काम करें।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र का छठा सिद्धान्त

विश्व सामाजिक मंच के सम्मेलन इस मंच की तरफ से एक संगठन के तौर पर नहीं आयोजित किये जाते हैं। इसलिए इस मंच की ओर से कोई भी व्यक्ति अधिकृत नहीं होता

जो सभी भागीदारों की ओर से उनके मन्तव्य के प्रतिनिधित्व का दावा कर सके। मंच के सम्मेलनों में भाग लेने वाले मंच के सांगठनिक रूप के तौर पर कोई निर्णय वोट या अनुमोदन के तौर पर किसी घोषणा या क्रियान्विति का कोई प्रस्ताव जो सबको अथवा बहुमत को प्रतिबद्ध करता हो, इस तरह का निर्णय नहीं ले सकेंगे और ना ही यह स्थापित किया जा सकेगा कि यह प्रस्ताव मंच के संगठन के तौर पर लिए गये हैं। इस प्रकार मंच में जो शक्तियां निहित हैं उस पर अंगुली उठाने का कोई अधिकार मंच के सम्मेलनों में भाग लेने वाले भागीदारों को नहीं होगा और ना ही मंच की यह मंशा है कि जो संगठन और आन्दोलन मंच के सम्मेलनों में भाग लेंगे वे केवल मंच के दायरे में ही अन्तर-संबंध बनाये या गतिविधि करें।

हमारी टिप्पणी

छठा सिद्धान्त भी एक भ्रमित-प्रस्तावना है, जब कभी भी समान दृष्टिकोण वाले किसी निश्चित एजेण्डे पर विचार-विमर्श करने के लिए एकत्रित होते हैं तो वे या तो किसी बात पर सहमत होते हैं या असहमत होते हैं, वे बहुमत की सहमति को चाहे निर्णय के रूप में परिभाषित नहीं कर सकें परन्तु वास्तव में तो बहुमत की सहमति की ही भावना रहती है। और व्यवहारिक तौर पर तो विश्व सामाजिक मंच की प्रक्रिया में यह हो रहा है। ब्राजील की संगठनात्मक समिति पहले से ही विश्व सामाजिक मंच के शीर्ष केन्द्र का काम कर रही है जबकि दो नये अन्य केन्द्र–यानि, विश्व सामाजिक मंच की अन्तर्राष्ट्रीय परिषद् तथा सचिवालय–उभर कर सामने आये हैं।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र का सातवां सिद्धान्त

फिर भी, मंच के सम्मेलनों में भाग लेने वाले संगठन या संगठनों के समूहों का यह अधिकार सुनिश्चित रहेगा कि वे एकल तौर पर या अन्य भागीदारों के सहयोग से जो घोषणा या गतिविधि तय करेंगे उसको सम्मेलन की मिटिंगों के दौरान विचार-विमर्श में ला सकेंगे। विश्व सामाजिक मंच अपने मौजूदा उपलब्ध साधनों के साथ उन निर्णयों को बड़े पैमाने पर प्रसारित करने के लिए वचनबद्ध रहेगा और ऐसा करने के लिए उन संगठनों पर अपनी मर्जी नहीं थोपेगा और ना ही निंदा या रुकावट पैदा करेगा। परन्तु संगठन या संगठनों का समूह जैसा निर्णय लेंगे उनके विचार-विमर्श को वैसे के वैसा ही पेश किया जायेगा।

हमारी टिप्पणी

सातवां सिद्धान्त कोई अन्वेषण नहीं है, आम तौर पर सभी लोकतांत्रिक ईदारे इसकी पालना करते हैं कुछ लोकतांत्रिक संगठन तो उन मिटिंगों के विचार-विमर्श में जो असहमति के विचार सामने आते हैं उनको भी प्रकाशित करते हैं।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र का आठवां सिद्धान्त

विश्व सामाजिक मंच एक बहुल, विविध, गैर-सम्प्रदाय, गैर-सरकारी और गैर-पार्टी सन्दर्भ वाला है जो विकेन्द्रीकरण की तर्ज पर उन संगठनों और आन्दोलनों को जोड़ने में लगा हुआ है जो दूसरी दुनिया के निर्माण के लिए स्थानीय स्तर से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक ठोस गतिविधियों में लगे हुए हैं।

हमारी टिप्पणी

आठवां सिद्धान्त भी इसका मिथ्या वचन है। जब कभी भी विश्व सामाजिक मंच अलग-अलग समूहों या इकाइयों को साथ लाने की कोशिश करता है तब इसकी कारगुजारी केन्द्रीय या बुनियादी ग्रुप (किसी चीज के महत्त्वपूर्ण भाग) की तरह रहती है।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र का नौवां सिद्धान्त

विश्व सामाजिक मंच हमेशा के लिए बहुलवाद (अनेकत्व) और विविध गतिविधियों एवं संगठनों व आन्दोलनों को शामिल करने के विभिन्न तरीकों को अपनाने वाला खुला मंच बना रहेगा जिससे इसमें भागीदारी सुनिश्चित रहे। इसके साथ ही यह मंच लिंग विभिन्नता, नस्लों, संस्कृतियों, पीढ़ियों और शारीरिक क्षमताओं के अन्तर का भेद किए बगैर इन सबके लिए खुला मंच है, परन्तु शर्त यह है कि वे सब सिद्धान्तों के घोषणापत्र से बंधे हों। कोई पार्टी प्रतिनिधित्व अथवा सैनिक संगठन इस मंच में भागीदारी नहीं कर सकेगा। सरकारी नेता या विधानपालिका के सदस्य जो इस घोषणापत्र को स्वीकार करते हैं उनको उनकी व्यक्तिगत हैसियत में भागीदारी के लिए निमंत्रित किया जा सकता है।

हमारी टिप्पणी

नवां सिद्धान्त एक दोगली धारणा है। जहाँ एक तरफ यह घोषणा करता है कि विभिन्न ग्रुपों और आन्दोलनों के विचार और गतिविधियों की बहुलता और विविधता के लिए मंच खुला है तो दूसरी तरफ विचार और गतिविधि की इस स्वतंत्रता पर अपने सिद्धान्तों के घोषणापत्र को मानने की अनिवार्यता की शर्त थोप कर सभी सम्बन्धित ग्रुपों और आन्दोलनों को बांधता है, इस तरह यह कथन एक पाखंड मात्र बनता है।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र का दसवां सिद्धान्त

विश्व सामाजिक मंच आर्थिकता, विकास और इतिहास के बारे में तथा राज्य द्वारा हिंसा के साधन से सामाजिक नियंत्रण कायम रखने वाले सभी तरह के अधिनायकवादी व पराजयवादी विचारों की खिलाफत करता है। यह मानवाधिकारों का सम्मान करता है, यह वास्तविक जनवाद के व्यवहार, भागीदारी वाले लोकतंत्र, शान्तिपूर्ण संबंधों की वकालत करता है, यह सभी लोगों, नस्लों, लिंग के मध्य एकता और समता का समर्थक है और एक मनुष्य द्वारा दूसरे मनुष्य पर प्रभुत्व एवं वशीकरण के सभी रूपों की निंदा करता है।

हमारी टिप्पणी

दसवां सिद्धान्त एक जनवादी विचार को पेश करता है परन्तु इसका सिद्धान्तों का घोषणापत्र अधिनायकवादी नजरिया अख्तियार करके इस विचार को निष्प्रभावी बना देता है।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र का ग्यारहवां सिद्धान्त

वाद-विवाद के तौर पर विश्व सामाजिक मंच एक वैचारिक आन्दोलन है जो पूँजी के रचनातंत्र एवं उसके प्रभुत्व के औजारों पर, उसके प्रभुत्व पर पार पाने एवं प्रतिरोध करने के साधनों और गतिविधियों पर और पूँजीवादी वैश्वीकरण की प्रक्रिया अपने नस्ली, लैंगिक एवं पर्यावरणीय विनाशकारी आयामों के कारण अन्तर्राष्ट्रीय तौर पर तथा देशों के

अन्दर सामाजिक असमानता व बहिष्करण की समस्या पैदा कर रही है। मंच समस्याओं को हल करने के वैकल्पिक प्रस्तावों पर अविलम्ब अपने विचार रखता है एवं उन विचारों के नतीजों को पारदर्शी तरीके से प्रसारित करता है।

हमारी टिप्पणी

ग्यारहवां सिद्धान्त एक तरफ विश्व सामाजिक मंच की अपनी पाली-पोषित धारणा–नव उदारवाद एवं साम्राज्यवाद (जैसा कि सिद्धान्त नम्बर एक में जोर दिया गया है) को नजरअन्दाज करता है तो दूसरी तरफ पूँजीवादी प्रभुत्व एवं पूँजीवादी वैश्वीकरण की धारणा को नव उदारवाद एवं साम्राज्यवाद के समकक्ष होने की धारणा पेश करता है। यह और अधिक तर्कसंगत और युक्तियुक्त होता यदि पूँजीवादी प्रभुत्व और पूँजीवादी वैश्वीकरण को कारपोरेट पूँजीवादी प्रभुत्व एवं कारपोरेट पूँजीवादी वैश्वीकरण लिखा जाता, क्योंकि पूँजी की कारपोरेट रूपी किस्म ही केवल मात्र पूँजी की वह किस्म है जो आज दुनिया में सर्वत्र छाई हुई है।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र का बारहवां सिद्धान्त

अनुभवों के आदान-प्रदान के ढाँचे के तौर पर विश्व सामाजिक मंच अपने भागीदारी संगठनों एवं आन्दोलनों की समझ व आपसी मान्यता को प्रोत्साहित करता है, तथा उनके बीच में आदान-प्रदान को विशेष महत्व देता है और खास करके वर्तमान लोगों एवं भविष्य की पीढ़ियों और प्रकृति की जरूरतों को पूरा करने के लिए मंच आर्थिक गतिविधियों एवं राजनीतिक क्रियाओं के निर्माण से सम्बन्धित अनुभवों के आदान-प्रदान को विशेष महत्व देता है।

हमारी टिप्पणी

बारहवां सिद्धान्त हालांकि अनुभवों के आदान-प्रदान पर जोर देता है तथा विश्व सामाजिक मंच अपने भागीदारी संगठनों एवं आन्दोलनों की समझ व आपसी मान्यता को प्रोत्साहित करता है तथा उनके बीच में आदान-प्रदान को विशेष महत्व देता है और खास करके वर्तमान लोगों एवं भविष्य की पीढ़ियों और प्रकृति की जरूरतों को पूरा करने के लिए मंच आर्थिक गतिविधियों एवं राजनीतिक क्रियाओं के निर्माण से सम्बन्धित अनुभवों के आदान-प्रदान को विशेष महत्व देता है–तथापि यह मंच समान समूहों द्वारा संयुक्त कार्यवाही करने की आवश्यकता पर जोर देने में शर्म महसूस करता है।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र का तेरहवां सिद्धान्त

अन्तरसंबंधों के सन्दर्भ में विश्व सामाजिक मंच निजी एवं सार्वजनिक जीवन में समाज के संगठनों और आन्दोलनों के बीच रिश्तों को मजबूत करना एवं राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय तौर पर नये सम्बन्ध बनाना चाहता है। यह सम्बन्ध राज्य द्वारा की जा रही हिंसा एवं दुनिया में चल रही अमानवीय प्रक्रिया का प्रतिरोध करने के लिए सामाजिक अहिंसा की प्रक्रिया की क्षमता को बढ़ायेगा तथा इन संगठनों और आन्दोलनों द्वारा उठाये जा रहे मानवीय कदमों को सुदृढ़ करेगा।

हमारी टिप्पणी

तेरहवां सिद्धान्त वर्तमान दुनिया में चल रही अमानवीयकरण की प्रक्रिया एवं मानवीयकरण की प्रक्रिया के बारे में भ्रम पैदा करता है। अमानवीयकरण के सम्बन्ध में यह

मंच इस अमानवीयकरण की प्रक्रिया को राज्य द्वारा की जा रही हिंसा का प्रतिफल बताता है परन्तु मंच यह इंगित करने में असफल है कि राज्य कमजोर एवं मध्यम श्रेणी के पूँजीपतियों का राज्य है या उच्चतम विकसित कारपोरेट पूँजीपतियों का राज्य है। इसे स्पष्ट करने के बजाए यह इसको गड्ड-मड्ड कर देता है। मानवीयकरण के बिन्दु पर इस मंच का कहना है कि मानवीयकरण की प्रक्रिया विश्व सामाजिक मंच से जुड़े हुए संगठनों और आन्दोलनों द्वारा उठाये गये कदमों का प्रतिफल है। विश्व सामाजिक मंच की इस स्वीकृति के बावजूद कि मानवीयकरण की प्रक्रिया इससे जुड़े हुए आन्दोलनों की देन है, फिर भी यह मंच इन जीवन और मरण के मुद्दों पर इन आन्दोलनों को आज भी विभाजित रहने का आदेश देता है।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र का चौदहवां सिद्धान्त

विश्व सामाजिक मंच एक प्रक्रिया है जो इसमें भाग लेने वाले आन्दोलनों और संगठनों द्वारा की जाने वाली गतिविधियों को स्थानीय स्तर से राष्ट्रीय स्तर तक स्थित रखता है तथा पृथ्वी ग्रह के नागरिकों के मुद्दों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सन्दर्भ में सक्रिय भागीदारी चाहता है तथा इस मंच ने भाईचारे वाली नई दुनिया बनाने के लिए जो प्रयोग किये हैं उनके अनुभवों से जो परिवर्तनमुखी व्यवहार सामने आये हैं उनको वर्तमान वैश्विक एजेण्डे में यह मंच जुड़वाना चाहता है।

हमारी टिप्पणी

चौदहवें सिद्धान्त का कथन है कि इसमें भाग लेने वाले आन्दोलनों और संगठनों द्वारा की जाने वाली गतिविधियों को स्थानीय स्तर से राष्ट्रीय स्तर तक स्थित रखता है तथा पृथ्वी ग्रह के नागरिकों के मुद्दों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सन्दर्भ में सक्रिय भागीदारी चाहता है, यह बहुत ही हास्यास्पद है कि यह मंच इन संगठनों और आन्दोलनों को अलगाव में रखकर अपनी-अपनी गतिविधियां करने के लिए कहता है तथा ऐसा कोई प्रयास नहीं करता है जिससे यह संगठन और आन्दोलन एकबद्ध होकर एवं आपसी सहयोग से गतिविधि कर सकें।

सिद्धान्तों के घोषणापत्र पर हमारी आम टिप्पणी

विश्व सामाजिक मंच के सिद्धान्तों का घोषणापत्र अपने आदर्श समाज की मूलभूत बातों को, यानि, इसकी विचारधारा, संस्कृति, आर्थिकता, राजनीति आदि मूलभूत सिद्धान्तों को अपने घोषणापत्र में दर्ज करने को पूर्णतया नजरअन्दाज करता है।

III

विश्व सामाजिक मंच द्वारा विश्व वास्तविकताओं की पूर्णतया अनदेखी

विश्व सामाजिक मंच का असली चरित्र मौजूदा दुनिया की असली वास्तविकताओं को मंच द्वारा नजरअन्दाज करने के तथ्यों में देखा जा सकता है। नजरअन्दाज किये गये तथ्य निम्न हैं–

1. विश्व सामाजिक मंच विश्व की दो तरफा मुख्य वास्तविकताओं की पूर्णतया अनदेखी करता है। मुख्य वास्तविकता यह है कि एक तरफ हमारे पृथ्वी ग्रह के प्राकृतिक पर्यावरण का प्रदूषित होना तथा दूसरी तरफ मनुष्य के सामाजिक वातावरण (यानि, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, वैचारिक, आदि) में गिरावट आना। ये दोनों चुनौतियां अत्यधिक खतरनाक हैं जो मनुष्य के अस्तित्व को खतरा पैदा कर रही हैं, परन्तु इन दो

तरफा वास्तविकताओं को विश्व सामाजिक मंच के सिद्धान्तों के घोषणापत्र एवं इसके अन्य श्रेणीबद्ध दस्तावेजों में कोई स्थान नहीं दिया गया है।

2. इसके एजेण्डे में विश्व शांति तो नदारद ही है, यद्यपि पर्यावरण एवं सामाजिक-मानवीय चुनौतियों से निपटने के लिए शांति स्थापित करना पहली आवश्यकता है।

3. पूँजी की मौजूदा वास्तविकता के बारे में इसका गलत दृष्टिकोण है। यह पूँजी को मुद्रा या धन के रूप में परिभाषित करता है। वास्तव में पूँजी के दो कारक हैं यानि, मानव और पर्यावरण।

4. वर्तमान कारपोरेट पूँजीवादी विश्व व्यवस्था की मुख्य संस्थाओं–यू एन, आई एम एफ, वर्ल्ड बैंक, विश्व व्यापार संगठन और अन्य संयुक्त राष्ट्र के संगठन एवं राज्य की प्रधान संस्थाएं, जैसे–विधायिका, न्यायपालिका, प्रशासन, आदि में मौजूद अन्यायपूर्ण नियमों के प्रति मंच चुप्पी रखता है। इसका मतलब है कि यह मंच इन सभी संस्थाओं को संवैधानिक और कानूनी तौर पर निष्पक्ष और न्यायपूर्ण मानता है।

5. सभी प्रकार के वंचितों (जो दुनिया की आबादी का 50 प्रतिशत है) की सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार का दर्जा देने, आमदनी के अन्तर को 1:5 से अधिक नहीं बढ़ने देने, सुरक्षा खर्च में कमी करने एवं लोगों का और विशेषकर महिलाओं का सशक्तिकरण करने, आदि मुद्दों की यह मंच पूर्णतया उपेक्षा कर देता है।

6. मौजूदा कारपोरेट विकास मॉडल जो वर्तमान में दुनिया के लोगों को कुचल रहा है–मंच इस पर चुप्पी साधे हुए है जबकि इसके पास इसका कोई विकल्प भी नहीं है।

7. मंच के कार्यक्रम में विश्व के मौजूदा ज्वलनशील विवाद जैसे, जे के, फिलीस्तीन, सोमालिया-इथोपिया, सूडान-डाफोर, श्रीलंका-तमिल, इत्यादि एकदम गायब हैं।

8. भ्रष्टाचार, अपराध, हिंसा, आदि के विरुद्ध अभियान चलाने से यह मंच पूर्णतया बचता रहता है।

9. सुरक्षा परिषद् में वीटो पावर के सिद्धान्त को समाप्त कर तथा दुनिया में अधिकांश शक्तिशाली कारपोरेट पूँजीवादी देशों को विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन, आदि वित्तीय संस्थाओं में आर्थिक आधार पर विशेष अधिकार प्राप्त हैं, जिन्हें समाप्त कर चल रही विश्व व्यवस्था को बदलने के प्रति इस मंच की कोई दिलचस्पी नहीं है।

10. दुनिया भर में सभी प्रकार के युद्ध, आणविक हथियार और हथियारों के व्यापार को बन्द करने की माँग करने से यह मंच पूर्णतया बचता है।

IV

मौजूदा विश्व कारपोरेट व्यवस्था द्वारा थोपी गई विद्यमान विश्व विपदाओं से बाहर निकलने का रास्ता प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम में निहित

मौजूदा विश्व कारपोरेट (यह न तो नव-उपनिवेशवादी है और ना ही साम्राज्यवादी) पूँजीवादी व्यवस्था विद्यमान विश्व विपदाओं का कारण है और इन (यानि, विश्व विपदाओं) को प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम के आधार पर विद्यमान विश्व कारपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था की पुनरसंरचना (या आधुनिक बनाकर) करके एक वास्तविक प्रत्युत्तर दिया जा सकता है और दिया जाना है। इस कार्यक्रम में निम्नलिखित बिन्दु शामिल हैं–

समाजशास्त्र (यानि, मानव समाज का अध्ययन) : प्रकृति-मानव केन्द्रित

समाजशास्त्र की मान्यता है कि मनुष्य प्रकृति के वृहद् दायरे में अन्य असंख्य घटनाक्रमों जो प्रत्येक अपने गुण और मात्रा लिए हुए हैं, की तरह ही एक खास प्रकार की प्रजाति है। इसका अस्तित्व अन्य प्राकृतिक घटनाक्रमों के साथ अन्तरसंबंधित व अन्तरक्रिया के तहत है। मानव समाज में परिवर्तन और विकास दो तरफा अन्तरक्रिया यानि एक तरफ प्रकृति और मानव समाज के बीच तथा दूसरी तरफ खुद मानव समाज के अन्दर की वजह से है। ये दो अन्तरक्रियाएं दर्शाती हैं कि समाज के विकास के दो मुख्य कारक प्रकृति और मानवजाति है।

इसका यह विश्वास है कि मनुष्य जैव-सामाजिक है तथा इसका दो तरफा चरित्र है, एक तरफ जैविक तो दूसरी तरफ सामाजिक। जैविक चरित्र का पहलू मानव समुदाय के व्यक्तिगत अस्तित्व को प्रतिबिम्बित करता है; जो निजी हित से चिह्नित है जबकि सामाजिक पक्ष का पहलू उसके सामाजिक जीवन को दर्शाता है, जिसका चरित्र सामाजिक हित वाला है। कारपोरेट पूँजीवाद का यह सिद्धान्त कि मनुष्य केवल आत्म केन्द्रित प्राणी है, एक एकतरफा धारणा है। इसी प्रकार कम्युनिस्टों का यह सिद्धान्त कि मनुष्य केवल सामाजिक प्राणी है, उसके जैविक पहलू को ढक देता है। पशु जगत का मूल स्वभाव निजी हित का है जबकि क्रमिक विकास से होमोसेपियन के रूप में मनुष्य का उद्भव हुआ तबसे उसकी प्रकृति जैव-सामाजिक है। अर्द्ध सामाजिक चरित्र ही वह एकमात्र गुण है जो मनुष्य प्रजाति और पशुओं के बीच अन्तर को दर्शाता है। यदि मनुष्य सामाजिक पहलू से वंचित हो जाए तो वह अपने नजरिए व शैली में पशु के समान रह जाता है।

यह सामाजिक जीवन को एक प्रक्रिया का दर्जा देता है जो मानवीय प्रकृति के तीन बराबर महत्व के आयामों जैसे अस्तित्वात्मक (यानि जीवन की सुरक्षा की प्रकृति), मनोवैज्ञानिक (यानि विचार करने और कार्य करने की स्वतंत्रता की उत्कंठा) तथा सामाजिकता (यानि सभी भौतिक और मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं में समानता व न्याय की मजबूत अन्त:प्रेरणा) से गठित है।

इसका सोचना है कि 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' का सिद्धान्त आज के समय में अनुपयोगी (गैर उत्पादक) हो गया है क्योंकि मौजूदा सामाजिक वास्तविकता विभिन्न देशों तथा विभिन्न सामाजिक नस्ली समुदायों के बीच सहयोग की माँग करती है ताकि उनके एक वैश्विक मानवीय इकाई में एकीकृत होने का रास्ता हमवार हो सके।

इसका मानना है कि साधन और साध्य दोनों समान रूप से महत्वपूर्ण है तथा इन दोनों की पवित्रता हर समय और हर जगह कायम रखनी चाहिए।

दृष्टि : हमारे ग्रह की तथा 21वीं सदी के राष्ट्र-राज्यों की अन्तरनिर्भर सामाजिक वास्तविकता, हमें प्रकृति-मानव केन्द्रित एक विश्व की दृष्टि प्रदान करते हैं। जबकि 1945 का संयुक्त राष्ट्र चार्टर सम्प्रभुसत्ता व स्वतंत्र राष्ट्र की एक ऐसी दृष्टि देता है जो विद्यमान वास्तविकता के उलट है।

मूलभूत सिद्धान्त : ऊपर वर्णित दृष्टि के मूलभूत सिद्धान्त में सर्वप्रथम लोगों एवं पर्यावरण को ग्लोबल क्रियाकलापों के केन्द्र में रखा जाना चाहिए यानि एक तरफ लोगों के हितों की सेवा करना तथा दूसरी तरफ पर्यावरण का उन्नयन और संरक्षण करना।

पर्यावरणीय उन्नयन व संरक्षण के इस मूलभूत सिद्धान्त को सभी प्रकार की प्रक्रियाओं में ध्यान में रखना एवं अमल में लाना होगा। यानि मानव समाज में इसकी सार्वत्रिक प्रासंगिकता रहेगी।

वैश्विक व्यवस्था : प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टि के मूलभूत सिद्धान्त तथा पर्यावरण-मानव प्राथमिकता माँग करती है कि संयुक्त राष्ट्र एक जनवादी आधारित तरीके एवं संगठन के रूप में पुनर्गठित हो। लेकिन संयुक्त राष्ट्र जैसा आज है, इस गुण की कमी रखता है। संयुक्त राष्ट्र की साधारण सभा का ढाँचा व कार्यप्रणाली बिल्कुल लोकतांत्रिक है। लेकिन दूसरी शीर्ष निर्णयकारी इकाई अर्थात् सुरक्षा परिषद् जो अत्यधिक अनुचित तथा पूर्णरूपेण अप्रजातांत्रिक कायदों–जैसे सैनिक दृष्टि से सबसे ताकतवर देशों के लिए स्थायी सदस्यता व विशेष वीटो पावर–से चरित्रित है।

स्पष्ट तौर से, इस वक्त इस संगठन के पूर्ण लोकतांत्रिकरण की किसी भी तरह की कोशिश को पांच सदस्यीय विशेषाधिकार क्लब के भारी विरोध का सामना करना पड़ेगा। इसलिए वर्तमान ग्लोबल शक्ति संतुलन को ध्यान में रखते हुए यह दिखता है कि सुरक्षा परिषद् के पूर्ण जनवादीकरण में कुछ और समय लगेगा। थोड़े समय के लिए जब तक चल रहे शक्ति संतुलन में परिवर्तन हो तब तक स्थायी सदस्यता का नियम रखते हुए विशेष वीटो-पॉवर का नियम हटा लेना चाहिए। सुरक्षा परिषद् की बाकी सभी सीटें साधारण सभा द्वारा चुनाव के जरिए भरी जानी चाहिए।

धनवान देशों का अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष व विश्व बैंक के ऊपर नियंत्रण कम हो तथा सबसे गरीब देशों को विश्व व्यापार संगठन में अधिक अधिकार दिये जाएं।

पूँजी की अवधारणा : प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त का मानना है कि पूँजी दो तरफा घटनाक्रमों से गठित है, यानि एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन तथा दूसरी तरफ मानव संसाधन। ऐसा इसलिए है क्योंकि पर्यावरणीय एवं मानव संसाधन ही मानव समुदाय के जीवनदाता हैं तथा इनके बिना मानवजाति के लिए किसी भी चीज का कोई मूल्य नहीं है। इस प्रकार यह पैसे (या वित्त) को पूँजी मानने की धारणा को दृढ़ता से अस्वीकार करती है। आगे, पैसा या वित्त (कारपोरेट या कम्युनिस्ट सिद्धान्तों द्वारा जिसे पूँजी कहा जाता है) भी इन्हीं दो संसाधनों–जो मानसिक व शारीरिक श्रम, प्राकृतिक कच्चा माल व तकनीकी औजारों के रूप में एकबद्ध है–की उपज है। स्पष्टतया, वित्त के सभी संघटक–श्रम, तकनीक एवं कच्चा माल–पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों द्वारा उपलब्ध होता है। पैसा केवल विनिमय के माध्यम या बाजार के एक औजार का प्रतिनिधित्व करता है, फिर भी यह अति महत्त्वपूर्ण कृति समाज में सर्वोच्चता (यानि पूँजी) के दर्जे के योग्य नहीं है।

विकास मॉडल : जन-पर्यावरण प्राथमिकता का मूलभूत सिद्धान्त (जो मानव विकास के लिए अति आवश्यक है) एक नये प्रकार के विकास मॉडल की माँग करता है, जो पांच स्तरीय बुनियादी सिद्धान्तों–यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता (आय में 1:5 की भिन्नता के साथ सभी के लिए सामाजिक सुरक्षा का मूलभूत अधिकार सुनिश्चित करके), उत्पादकता, जन-नेतृत्व वाला जनवादी और चौतरफा पारदर्शिता–पर टिके हैं। ये पांच स्तरीय बुनियादी सिद्धान्त मानव के जैव-सामाजिक चरित्र से मेल खाते हैं, अर्थात् यह मनुष्य के निजी हित को सामाजिक हित से जोड़ते हैं।

जन-पर्यावरण आधारित विकास मॉडल दो रूढिवादी राष्ट्रीय विकास मॉडलों, यानि कारपोरेट-नेतृत्व वाले मॉडल और सरकार निर्देशित मॉडल की तुलना में विकास की समयानुकूल धारणा प्रस्तुत करता है। कारपोरेट-नेतृत्व वाला विकास मॉडल केवल लाभ या उत्पादकता (जो केवल धन के स्वामियों का हित सुरक्षित करता है) को एक मात्र लक्ष्य

बनाता है जबकि सरकार निर्देशित मॉडल उत्पादन के साधनों का एक मात्र उद्देश्य समाजीकरण (या राष्ट्रीयकरण) को चुनता है (जो शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के हितों की सेवा करता है)। ये दोनों पारम्परिक राष्ट्रीय मॉडल मनुष्य के जैव-सामाजिक चरित्र के उलट केवल निजी हित को ही पूरा करते हैं, जैव-सामाजिक चरित्र निजी हित और सामाजिक हित दोनों को जोड़ता है। फिर, वे दोनों पर्यावरण को कोई प्राथमिकता नहीं देते और आर्थिकता या विकास प्रक्रिया में लोकतंत्र और पारदर्शिता के मानदंडों के पालन को कोई स्थान नहीं देते हैं; आगे जबकि कारपोरेट मॉडल समता (अथवा सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया अस्वीकार करता है वहीं सरकार निर्देशित मॉडल राजनीतिक समानता और उत्पादकता को पूर्णतया नकारता है।

यह मॉडल कारपोरेट नेतृत्व वाले मॉडल और राज्य आधारित मॉडल, दोनों से उनके उद्देश्यों, प्रबंध और शैली के मामलों में भिन्नता रखता है।

कारपोरेट मॉडल पूँजी एवं पूँजी के मालिकों का विकास करता है और राज्य मॉडल इसके शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के साथ मजदूर कुलीनता के हितों को आगे बढ़ाता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आम तौर पर लोगों और पर्यावरण के हितों की तथा खास तौर पर गरीबों और वंचितों की सेवा पर आधारित है।

प्रबंध में, कारपोरेट सेक्टर एकाधिकारवादी कारपोरेट प्रबंध एवं नियंत्रण का पक्षपोषण करता है और राजकीय क्षेत्र एकाधिकारवादी अफसरशाही प्रबंध एवं नियंत्रण का समर्थन करता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल में स्थायी कारपोरेटरों की जगह संयुक्त कमेटियों द्वारा चुनी गई पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों द्वारा लोकतांत्रिक प्रबंध एवं नियंत्रण की मान्यता है। जहाँ स्थायी कारपोरेटरों की जगह प्रत्येक चुनी गई संयुक्त कमेटी में 2/3 सदस्य साधारण शेयरधारियों द्वारा चुने हुए होंगे तथा 1/3 सदस्य मजदूरों द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि होंगे।

शैली में, अधिनायकवादी और गोपनीय कारपोरेट एवं राजकीय शैली के उलट प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल लोकतांत्रिक पारदर्शिता और जवाबदेही की शैली पर आधारित है।

वैश्विक शांति और सुरक्षा : प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल को सर्वप्रथम स्थायी और टिकाऊ शांति एवं सुरक्षा की आवश्यकता है। इस प्रकार की शांति की स्थापना के लिए यह जरूरी है कि प्रभुत्व, विशेषाधिकार एवं विशेष शक्तियों की राजनीति को छोड़ा जाये, परमाणु शस्त्रों पर पूरा नियंत्रण संयुक्त राष्ट्र का करके पूर्ण निशस्त्रीकरण द्वारा टकराव और सैनिक समाधान की नीति को समाप्त किया जाये, राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक असमानताओं को मिटाया जाये, विकसित एवं विकासशील देशों के बीच विकास का फर्क एवं अमीर और गरीब के बीच खाई को हटाया जाये।

राजनीति : प्रकृति-मानव केन्द्रित राजनीति को एक ऐसी राजनीति की आवश्यकता है जो पूर्ण लोकतांत्रिक सिद्धान्तों, गतिविधियों और ढांचे पर आधारित हो। इस प्रकार की राजनीति संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था में विशेष वीटो शक्तियों के कानून को समाप्त करे और निर्णय लेने में लोगों का अधिकतम संभव शक्तिरकण को सुनिश्चित करे तथा पार्टी-केन्द्रित शक्ति का आवश्यक मात्रा में कमी करे।

अर्थशास्त्र : प्रकृति-मानव केन्द्रित आर्थिकता एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता की माँग करती है, जिसकी धारणाएं, कानून और नियम पहले बताई गई दो

उच्च प्राथमिकताओं (यानि मानव और पर्यावरण) तथा पांच उसूलों (यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, लोकतंत्र तथा पारदर्शिता) की रोशनी में बनाये जाने की आवश्यकता है। एडम स्मिथ का 'स्वहित' वाला मूलभूत आर्थिक सिद्धान्त और मार्क्स का प्रत्येक चीज का राज्य राष्ट्रीयकरण का बुनियादी आर्थिक नियम दोनों मानव की जैव-सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एकतरफा है। लेकिन विडम्बना है कि दोनों मॉडल विकास, समृद्धि और उन्नति को मौद्रिक वृद्धि के रूप में मापते हैं न कि मानव और पर्यावरणीय विकास के सन्दर्भ में।

मूल्य प्रणाली : प्रकृति-मानव केन्द्रित मूल्य प्रणाली एक ऐसे जीवन के तरीके (या जीवन शैली) की माँग करती है जो बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों को समाहित करे और लोगों में तर्कसंगत मानवतावादी एवं पर्यावरणीय सोच, व्यवहार व संगठन को बढ़ावा दे।

पहचान : पहचान का प्रधान रूप अन्तर्राष्ट्रीयवाद बनता है जिसमें राष्ट्रीयता और नस्ली पहचान उपप्रधान है।

लोक प्रेरक पहलू : पर्यावरणीय मानवतावाद मुख्य लोक प्रेरक पहलू है जिसके साथ कुछ मानवतावादी रुझान शामिल हैं।

अवधारणा : प्रकृति-मानव केन्द्रित अवधारणा वैज्ञानिक वास्तविकता पर आधारित है जो प्रकृति के घटनाक्रमों का अध्ययन एवं व्याख्या वैज्ञानिक तथ्यों की रोशनी में तथा सामाजिक घटनाक्रमों का अध्ययन एवं व्याख्या मान्यता प्राप्त सूचना एवं आंकड़ों के आधार पर करता है। इसकी मान्यता है कि प्रकृति और समाज में परिवर्तन लाने में एकता और संघर्ष दोनों उत्प्रेरक का काम करते हैं, इनमें से प्रत्येक निश्चित हालात में कभी पहले और कभी दूसरे स्थान पर होता है।

सामाजिक सुरक्षा का मूल अधिकार संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रतिज्ञा-पत्र द्वारा सुनिश्चित हो, जो सभी देशों के लिए अनिवार्य तौर पर मान्य हो। सामाजिक सुरक्षा पर संयुक्त राष्ट्र प्रतिज्ञा-पत्र को लागू करने के लिए होने वाले खर्च का 50 प्रतिशत हिस्सा संबंधित राज्य द्वारा तथा 50 प्रतिशत हिस्सा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा खर्च किया जावे। संयुक्त राष्ट्र महासभा तुरन्त उच्च अधिकार प्राप्त संयुक्त राष्ट्र टिकाऊ विकास परिषद का गठन करे तो एक तरफ पर्यावरणीय स्रोतों के संरक्षण एवं संवर्धन तथा दूसरी तरफ मानव संसाधनों के विकास के लिए ग्लोबल ऑथिरिटी की तरह कार्य करे। यह परिषद् पर्यावरणीय एवं मानवीय उन्नति के सन्दर्भ में मूलभूत अन्तर्राष्ट्रीय सुधार लागू करेगी। इस परिषद् का वित्तीय प्रबंध (क) प्रत्येक देश के सैनिक बजट का 30 प्रतिशत अनिवार्य बचत से (ख) ग्लोबल टैक्स जैसे विश्व व्यापार, तेल, कोयला, संचार उपग्रह, वायु यातायात, अंटार्टिका खनन, समुद्र तल खनन, महासागरीय यातायात पर टैक्स आदि से आयेगा। संयुक्त राष्ट्र महासभा इस राजस्व को संयुक्त राष्ट्र तथा संबंधित देशों में बाँटने की प्रणाली तय करेगी जहां अल्प विकसित देशों का विशेष ध्यान रखा जायेगा।

प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त हमें न केवल कारपोरेट और कम्युनिस्ट सिद्धान्तों और पर्यावरणीय तथा मानवीय संसाधनों की उनकी अपनी-अपनी व्यवस्थाओं से उत्पन्न चुनौतियों से मुकाबला करने के योग्य बनायेगा बल्कि भविष्य में प्राकृतिक और मानवीय संसाधनों के न्यायिक उपयोग का रास्ता प्रदान करेगा।

V

एक न्याय-आधारित दुनिया सम्भव है
(प्रकृति-मानव केन्द्रित अल्पकालीन कार्यक्रम)

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आंदोलन (एन एच सी पी एम) मानता है कि इस समय मानव समुदाय को एक बहुत खतरनाक पर्यावरणीय व मानवीय संकट का सामना करना पड़ रहा है। यह चुनौती इतनी गंभीर है कि यदि इसका उत्तर वास्तविक कार्यक्रम से नहीं दिया जाता है तो इसके नतीजे में मानवीय हितों को बहुत ही खतरनाक परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं। सर्वप्रथम ऐसी गंभीर परिस्थिति से निपटने के लिए यह आवश्यक है कि मानव जाति के विभिन्न समुदायों के बीच में पूर्ण एकता कायम हो और एकता के पहलु की यह मांग है कि मानव समुदाय के अन्दर सभी प्रकार की टकराहटों को समाप्त किया जाये। मानव समुदाय की एकता कायम करने का एकमात्र रास्ता इसमें निहित है कि दुनिया में मौजूद सभी प्रकार के अन्याय को समाप्त किया जाए।

एन एच सी पी एम का यह दृष्टिकोण है कि न्यायसंगत दुनिया सभी प्रकार के सामाजिक न्याय की बुनियाद पर स्थापित करना निश्चित तौर पर संभव है। इसके लिए वर्तमान अन्यायपूर्ण कॉरपोरेट व्यवस्था को पुनर्गठित करने की आवश्यकता है।

वर्तमान अन्यायपूर्ण कॉरपोरेट व्यवस्था को एक न्यायपूर्ण आधार पर पुनर्गठित करने के लिए एन एच सी पी एम 15 बिन्दु जनता को सूचित करने, संगठित होने और काम करने के लिए प्रस्तुत करता है। इन 15 बिन्दुओं को उचित समझने वाले लोगों से यह निवेदन करता है कि वे इन बिन्दुओं को मजबूती, तहेदिल और सुस्पष्टता से आम जनता के बीच प्रसारित करें।

जब कभी भी किसी इलाके अथवा देश में चुनाव हो रहे हों वहाँ एन एच सी पी एम मतदाताओं से अपील करता है कि वे इन 15 सिद्धांतों को उम्मीदवारों की सच्चाई जानने का मानदण्ड बनाए। मतदाता उम्मीदवारों से इन बिन्दुओं के समर्थन में हस्ताक्षर करने का अनुरोध करे। जो इन पर हस्ताक्षर करते हैं वे उम्मीदवार जनता के समर्थन के हकदार हैं और जो इन पर हस्ताक्षर करने से हिचकिचाते हैं वे न्यायिक और तर्कसंगत दृष्टिकोण से परे हैं।

1. मानव जाति को हर समय और हर जगह पर्यावरण (यानि हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) को टिकाऊरखने के मूलभूत कार्य को थामे रखना चाहिए।

2. जिन्दा रहने के मानवीय अधिकार को शुद्ध हवा, शुद्ध पीने का पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित की जाए।

3. आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में 5 गुना से अधिक अन्तर) पर आधारित उचित समानता का मानवीय अधिकार हो।

4. विश्व के तमाम झगड़ों का शांतिपूर्ण समाधान होना चाहिए, विशेष तौर पर जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका समस्याओं का। जम्मू-कश्मीर के न्यायपूर्वक समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा और विदेश महकमों को भारत-पाक के ज्वाइंट कन्ट्रोल में दिया जाना चाहिए जबकि बाकी सभी मामलों (रक्षा और विदेश मामलों के अलावा) में जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र होना चाहिए जबकि इसके 9 नस्ली क्षेत्रों में से प्रत्येक

को अधिकतम संभव स्वायत्तता प्रदान की जाए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन एवं जॉर्डन के सम्बन्ध में भी कारगर होगा।

5. संयुक्त राष्ट्र संघ को पुनर्गठित करने के लिए सुरक्षा परिषद के पांच स्थायी सदस्यों की वीटो पॉवर समाप्त की जाए तथा किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए साधारण सभा के बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान की जाए।

6. विश्व-व्यापार संगठन, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाय प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है), को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति जिसमें मानव और पर्यावरणीय पहलू उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्व वाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के 5 उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाए।

7. सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित किया जाए।

8. खेती से सम्बन्धित सभी लोगों की जीविका की सुरक्षा सहकारी कृषि व्यवस्था से सुनिश्चित की जाए।

9. शारीरिक व मानसिक दोनों प्रकार के श्रमिकों का सशक्तिकरण हो, जिसके अन्तर्गत संस्थानों, परियोजनाओं और कारखानों के प्रबन्ध में उनका एक तिहाई प्रतिनिधित्व सुनिश्चित हो।

10. उद्योग और सेवा के सभी क्षेत्रों पर से उद्योगपतियों और सरकार का एकाधिकार नियंत्रण खत्म करके तथा आम शेयरधारकों को दो तिहाई और मजदूरों को प्रबंधन में एक तिहाई हिस्सा देकर उनका लोकतांत्रीकरण किया जाए।

11. वित्तीय प्रबन्ध : कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबन्धन एवं नियंत्रण का पक्षधर है तो सरकारी क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियंत्रण का समर्थक है, पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर इन स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई सदस्य आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियंत्रण स्थापित हो। प्रोमोटर्स (प्रोत्साहक) शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध को समाप्त किया जाए।

12. प्रकृति-मानव केन्द्रित राजनीतिक प्रकिया लोगों द्वारा निर्देशित होनी चाहिये तथा उसका संचालन समर्पित प्रकृति-मानव केन्द्रित सामाजिक कार्यकर्ताओं (या उनके मोर्चे) द्वारा किया जाना चाहिए। चुनाव पूर्णतया स्वतंत्र हो जिसमें प्रत्येक को उम्मीदवार और मतदाता दोनों रूपों में भाग लेने का समान अधिकार है।

13. दलगत ढांचे को महत्व दिए बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करे) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्यसत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के एकाधिकार का खात्मा किया जाए। यदि मतदाता किसी भी विधानसभा या लोकसभा सदस्य को वापिस बुलाना चाहे तो 1/5 मतदाताओं द्वारा लिखित में मांग करने पर पुन: चुनाव करवाया जाय।

14. प्रत्येक सांसद को दो करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये आवंटित करने का मौजूदा नियम हटाकर विकास से सम्बन्धित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्राम सभा सहित और इसके ऊपर कोई नहीं हो) के जरिए खर्च हों।

15. न्यायशास्त्र को पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों के हितों की सुरक्षा और संरक्षण करने के मूलभूत उसूल पर आधारित किया जाए। उपर्युक्त उसूल की अवहेलना करने पर अपराधी के साथ उसे सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल मानवीय क्रूरता और मृत्यु दण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधानों को निर्धारित किया जाए।

VI

अपील

हम उन सभी से अपील करते हैं जो एक साथ आने तथा एक साझा वास्तविक कार्यक्रम तय करने और एक ही मंच से संघर्ष छेड़ने के विभिन्न विचारों को अख्तियार करते हुए इस दुनिया को तर्कसंगत और न्यायिक आधार पर बदलने में दिलचस्पी रखते हैं।

आर.पी. सराफ, संपादक

* * * * *

दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन के प्रत्येक सदस्य देश में प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन के विचार-विमर्श के लिए प्रोग्राम का मसौदा

I

सार्क की दयनीय कारगुजारी

दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) लगभग 150 करोड़ आबादी वाला विश्व में सबसे बड़ा क्षेत्रीय संगठन है। सार्क दक्षिण एशिया के सात देशों का आर्थिक संगठन है। यह संगठन 8 दिसम्बर 1985 को भारत, पाकिस्तान, बंगलादेश, श्रीलंका, नेपाल, मालदीव व भूटान द्वारा बनाया गया था।

सार्क की अत्यधिक उल्लेखनीय जमीनी वास्तविकता आज की दुनिया में इसके मामलों की गड़बड़ स्थिति से देखी जा सकती है। जहाँ एक तरफ यह अपने मानवीय और प्राकृतिक संसाधनों की बहुत भारी विकास की क्षमता से सराबोर है, वहीं दूसरी ओर यह विश्व का अत्यधिक पिछड़ा और गरीब क्षेत्र बना हुआ है। इसके सकारात्मक पक्ष हैं, यह एक भौगोलिक निकटता वाला क्षेत्र है, यहाँ समस्त मानव समुदाय का ऐसा चौथाई हिस्सा निवास करता है जो एक ही मूल और साझे इतिहास व सामाजिक नस्ली रिश्तों से जुड़े हुए हैं, यहाँ 70 करोड़ प्रभावी उपभोक्ता हैं, यहाँ अमेरिका के बाद द्वितीय सबसे लम्बी रेलवे लाइन (92256 किलोमीटर से अधिक) बिछी है, यहाँ दुनिया का सबसे बड़ा सिंचित क्षेत्र (लगभग 68 करोड़ हैक्टेयर) है, यहाँ बड़ी संख्या में विज्ञान व तकनीकी ज्ञाता मौजूद हैं जो कई विकसित क्षेत्रों से भी अधिक हैं और जैव-विविधता व प्राकृतिक संसाधनों का विपुल भंडार समेटे हुए हैं। उपरोक्त हालात एक सुसम्पन्न दक्षिण एशिया

समुदाय विकसित करने और सार्क देशों का एक आत्म संतुष्ट समाज विकसित करने का आधार प्रदान करता है।

फिर भी, इस क्षमता के बावजूद यह सम्पूर्ण क्षेत्र और इसका प्रत्येक देश चौतरफा निराशाजनक परिदृश्य पेश करता है। इस शताब्दी की शुरूआत से विकसित देशों के साथ तुलना करने पर हम पाते हैं कि दक्षिण एशिया के देश अब दो आयामी संकट, यानि मानवीय और पर्यावरणीय संकट में फंस चुके हैं जिसने यहाँ के लोगों को अमानवीय दशा में धकेल दिया है।

जहाँ तक मानवीय पहलू का सवाल है, दक्षिण एशिया के 50 करोड़ से अधिक लोग प्रतिदिन 1 डालर से नीचे के स्तर पर जीवन निर्वाह कर रहे हैं। ये सभी गरीबी की रेखा के नीचे हैं। 41 प्रतिशत से अधिक दक्षिण एशियाई लोग अनपढ़ हैं, एक तिहाई बेघरबार हैं, 40 प्रतिशत अर्द्ध बेरोजगार हैं, एक तिहाई लोग शुद्ध पीने के पानी और अन्य स्वास्थ्य सेवाओं से वंचित हैं और तीन चौथाई लोगों को शौच सुविधा नहीं मिलती है। पाँच साल से छोटे 53 प्रतिशत बच्चों का वजन कम है। लगभग 10 करोड़ बच्चे–जो 5 से 14 साल के बीच की उम्र के हैं–मजदूरी करते हैं। महिलाओं के हालात अत्यधिक दयनीय हैं। पूरे विश्व में दक्षिण एशिया लिंग भेद आधारित हिंसा में सबसे ऊपर है।

इस क्षेत्र के लोगों की औसत वार्षिक आय 680 डालर है जो तीन दशक पहले विश्व के सबसे गरीब अफ्रीका के सब-सहारा क्षेत्र की वार्षिक आय 700 डालर से भी कम है। प्रत्येक देश की अलग-अलग भी राष्ट्रीय आय विश्व में सबसे कम है, जिसमें भूटान की 250 डालर और भारत की 640 डालर है।

गरीबी की समस्या कुछ अन्य सामाजिक वंचितपन की वजह से और गम्भीर हो जाती है। उदाहरणार्थ, दक्षिण एशिया के 14 करोड़ बच्चों के लिए प्राथमिक स्कूलों की जरूरत है, 75 करोड़ लोगों के लिए स्वास्थ्य सुविधा और 99 करोड़ लोगों के लिए शुद्ध पीने के पानी की जरूरत है, 8 करोड़ 70 लाख बच्चों के लिए पोषक भोजन की जरूरत है जबकि 28 करोड़ 70 लाख विवाहित जोड़ों के लिए परिवार नियोजन सुविधाओं की जरूरत है।

इस क्षेत्र में विश्व की सबसे अधिक झगड़ा पीड़ित जनसंख्या भी निवास करती है, यह दक्षिण एशियाई देशों में लगभग 7 करोड़ 10 लाख है।

जहाँ तक घातक बिमारियों का सम्बन्ध है, यह क्षेत्र अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक संख्या में एच आई वी/एड्स, कैन्सर और टी बी के मरीजों से भरा है। पिछले 5 दशक से अधिक समय में इसके प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक क्षय हुआ है, क्षेत्र की स्थिति इसकी गवाह है। जंगल नष्ट होने की तेज गति के परिणामस्वरूप अब जंगल का कवर केवल भूमि क्षेत्र के 15 प्रतिशत भाग तक रह गया है। इस क्षेत्र के कुछ अत्यधिक प्राकृतिक बर्बादी के उदाहरण, जैसे बाढ़ और सूखा इसके बिगड़ते जलवायु-तंत्र से सीधे जुड़े हुए हैं। ग्रीन हाउस गैसों के प्रभाव के कारण ग्लोबल वार्मिंग के गम्भीर दुष्प्रभाव तटीय क्षेत्रों, जैसे मालदीव, श्रीलंका और बांगलादेश पर बहुत अधिक पड़ने की संभावना है।

II

सार्क की अरुचिकर कारगुजारी का कारण कहाँ निहित है?

इसके दो तरफा कारण हैं। एक यह है कि भारत के 'बड़े भाई' वाले नजरिये और धौसपट्टी के तरीकों ने क्षेत्र के बाकी बचे छोटे देशों (जिनकी आबादी भारत की जनसंख्या

की लगभग एक तिहाई बनती है) को आतंकित कर रखा है। उदाहरण के लिए, पिछले 60 साल से जम्मू-कश्मीर के विलय के सवाल को अपने-अपने पक्ष में हल करने के लिए भारत व पाकिस्तान एक दूसरे से झगड़ रहे हैं। इस दौरान इन्होंने 4 घातक युद्ध लड़े हैं, परन्तु मुद्दा अभी तक अनसुलझा पड़ा है। पिछले 17 सालों से नई दिल्ली के खिलाफ कश्मीर घाटी में खाड़कू संघर्ष जारी है जिसका अभी तक अंत नजर नहीं आता। हालांकि सन् 2004 से जम्मू-कश्मीर पर भारत-पाक टकराव को कम करने के सम्बन्ध में कई सकरात्मक कदम उठाये गए हैं जिनमें भारत-पाक के बीच शांति वार्ताएं तथा दोनों तरफ से विश्वास निर्माण के कई कदम उठाए गए हैं। परन्तु उनकी राजनीतिक मजबूरी अभी तक इस मसले के वास्तविक और न्यायिक हल के रास्ते में निरन्तर बाधा बनी हुई है। जेके विवाद के अलावा भारत पाक के बीच अन्य तनाव बिन्दुओं में शामिल हैं–सर क्रीक, भारत-पाकिस्तान के बीच सिंधु जल संधि, बुलर बैराज और सियाचीन ग्लेशियर। आगे, भारत और बंगलादेश के बीच गंगा जल और बंगलादेश में चकमा आदिवासी मसलों पर, भारत-बंगला सीमा के बिन्दु पर विवाद, भारत के पूर्वी प्रदेशों को आवश्यक सामान और भौतिक सहायता पहुँचाने के लिए परिवहन सुविधाएं प्रदान करने के मामले में बंगलादेश की मनाही, भारत में बंगलादेशी शरणार्थियों का मुद्दा, इत्यादि सभी पर तनाव है। ऊपर से सामान्य सम्बन्ध दिखाई देते हुए भी भारत व श्रीलंका के सम्बन्धों में आपसी विश्वास की कमी है। क्योंकि, यह भारत ही था जिसने शुरू में श्रीलंका में सिंहल विरोधी संघर्ष में तमिल खाड़कुओं को मदद दी थी। और अब वर्तमान में श्रीलंका व भारत के तमिलों के सम्बन्ध में यह नरम रुख अख्तियार करता है। भारत व श्रीलंका के बीच अन्य विवादास्पद बिन्दु हैं, हिन्द महासागर में एक दूसरे के क्षेत्र में मछली पकड़ने को लेकर विवाद तथा अन्य विवाद। नेपाल के साथ जो भारत के मधुर सम्बन्ध नहीं है वह भारत-नेपाल मित्रता संधि 1950 को लेकर है जो ब्रिटिश पद्धति के अनुसार भारत को क्षेत्रीय महाशक्ति के रूप में क्रियाशील होने की शक्ति प्रदान करता है। इसके अलावा कालापानी का मुद्दा, इसके साथ ही पानी का बंटवारा तथा बिजली परियोजनाओं से सम्बन्धित समस्याएं भी तनाव का कारण हैं। भूटान, भारत से इसलिए नाराज है, क्योंकि भारत, भूटान में नेपाली प्रवासियों के विरुद्ध जो सख्त कदम भूटान लेना चाहता है उसमें भारत मददगार बनने को तैयार नहीं है तथा भारत द्वारा भूटान के साथ उपनिवेशी किस्म की ताबेदारी संधि (जिसको जनवरी 2007 में मामूली तौर पर संशोधित किया गया) भी नाराजगी का कारण है। मालद्वीव इसलिए चिंतित है, क्योंकि भारत उसकी सुरक्षा के प्रति पूर्णतया अनदेखी करता है। सार्क द्वारा अपने उद्देश्यों को हासिल करने में असफल होने का बुनियादी कारण कारपोरेट सिद्धान्त और व्यवहार के विरोधाभास में निहित है। जबकि यह क्षेत्र में व्यापार एवं अन्य सामाजिक, आर्थिक बिन्दुओं के विकास के लिए संकल्पित है (जिसके लिए सभी की यह आवश्यकता है कि उनके बीच पारस्परिक मित्रता की राजनीति, आर्थिकता एवं सांस्कृतिक सम्बन्ध हों)। व्यवहार में इसके सदस्य देश आपस में व्यापार एवं आर्थिक क्षेत्र में बैर रखते हैं। राजनीतिक मुद्दों पर टकराहट का रवैया रखते हैं तथा सांस्कृतिक मामलों में धर्म आधारित नजरिया रखते हैं। इस प्रकार,किसी भी क्षेत्र में कोई भी महत्वपूर्ण उपलब्धि हासिल नहीं हो सकी है तथा अन्य क्षेत्रीय कारपोरेट एसोसियेशनों के मुकाबले में सार्क सीमान्त खिलाड़ी ही रह गया है।

III

दुनिया में अन्य कारपोरेट आर्थिक या व्यापारिक धड़ों का समग्र अनुभव

यद्यपि सार्क की कारगुजारी कमजोर रही है, तथापि उपरोक्त आकलन से यह अर्थ नहीं निकाला जा सकता कि दुनिया में विभिन्न अन्य कारपोरेट क्षेत्रीय व्यापार या आर्थिक गठबंधनों ने ऐसी प्रगति हासिल की है जिससे क्षेत्रीय या विश्वव्यापी मानव समुदाय के हितों की सेवा हुई हो। केवल इसका यही अर्थ है कि दुनिया में अन्य क्षेत्रीय व्यापार या आर्थिक गठबंधनों ने उनके कारपोरेट एजेण्डे (यानि, कारपोरेट व्यापार तथा आर्थिकता) एवं इसके सह सम्बन्धित दो अन्य एजेण्डे यानि, कारपोरेट राजनीति एवं संस्कृति के मुख्य पहलुओं के मध्य सम्बन्धों को ठीक तरह से निपटाया है। वास्तव में इनकी प्रगति तीन मुख्य कारपोरेट क्षेत्रों (क) व्यापार की वृद्धि, (ख) क्षेत्रीय तौर पर राजनीतिक तनाव में कमी और (ग) उदार बहुआयामी संस्कृति का निर्माण के रूप में हुई है। व्यापार की वृद्धि ने इनकी अपनी-अपनी कारपोरेट पूँजी की मात्रा में वृद्धि की है। राजनीतिक तौर पर इनके क्षेत्रीय तनावों की कमी ने इनके अपने-अपने पारस्परिक वाणिज्यिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्धों को विस्तार दिया है और एक उदार बहुआयामी संस्कृति के निर्माण ने इनके कारपोरेट सामाजिक घनिष्टता को और अधिक मजबूत किया है। सामूहिक तौर पर, इन तीनों कदमों ने सम्बन्धित क्षेत्रीय एवं वैश्विक कारपोरेट पूँजी तथा इसके सामाजिक, आर्थिक ढाँचे को विकसित करने में मदद की है।

इनकी कारगुजारी का मानव समुदाय पर कुल असर के तौर पर देखा जाए तो एक तरफ अपने कारपोरेट केन्द्रित एजेण्डे को लागू करते हुए इन्होंने अपनी कारपोरेट पूंजी के भंडार को एक ऊंचे दर्जे तक बढ़ा लिया है, परन्तु दूसरी तरफ मनुष्य के सामने घातक एवं खतरनाक चुनौतियां पैदा कर दी हैं। ये चुनौतियां इतनी घातक हैं कि सम्पूर्ण मानव-प्रजाति द्वारा समय रहते वास्तविकता के आधार पर सामूहिक तौर पर मुकाबला नहीं किया जाता है तो ये चुनौतियां अन्ततोगत्वा थोड़े से समय में सभी प्राणियों को सम्पूर्ण विनाश की ओर ले जाएगी।

IV

मानव जाति के सामने विभिन्न कारपोरेट क्षेत्रीय या व्यापारिक ब्लॉकों द्वारा पैदा की गई चुनौतियां

इन चुनौतियों को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है। पहली श्रेणी में दो अत्यधिक विनाशकारी चुनौतियां शामिल हैं, दूसरी श्रेणी में 9 खतरनाक चुनौतियां हैं तथा तीसरी श्रेणी में मनुष्य की सामाजिक जिन्दगी से सम्बन्धित 9 नुकसानदायक चुनौतियां अंगीकार की हुई हैं।

पहली श्रेणी की चुनौतियां

पृथ्वी पर सभी किस्म की जैविक जिन्दगी के लिए अत्यधिक मारक चुनौतियों में पहली श्रेणी सबसे ज्यादा घातक है। यहाँ हमारे ग्रह पृथ्वी पर पर्यावरण ह्रास की बढोतरी से उत्पन्न प्रथम चुनौती मानवता एवं सभी किस्मों की जैव जिन्दगी (जो इस ग्रह पर अस्तित्वमान है) के लिए अत्यधिक घातक व विनाशकारी खतरा उत्पन्न कर रही है। यह पर्यावरणीय विकृति मुख्य तौर पर ग्रीन हाउस गैसों के कारण हैं जिसका 95 प्रतिशत भाग कारपोरेट पूँजी की ऊर्जा उत्पादन की व्यवस्था से पैदा हो रहा है। पर्यावरण के प्रदूषण का

स्तर इतना अधिक हो गया है कि यदि समय रहते इसे नहीं रोका गया तो 21वीं सदी के अंत तक पृथ्वी पर मौजूद सभी प्रकार की जैव जिन्दगी को समाप्त कर सकता है। यह चुनौती एक या दो दशाब्दी के बाद व्यवहारिक शक्ल अख्तियार कर सकती है और यह विनाश का क्रम सम्भवत: शताब्दियों तक चल सकता है। इससे बचने का कोई रास्ता नहीं है जब तक कि मानव समाज मौजूदा कारपोरेट व्यवस्था, इसके एजेण्डे और इसके सभी औजारों को उखाड़ फेंक न दें तथा इस ग्रह पर मौजूद विभिन्न प्रकार की जिन्दगियों को बचाने के लिए नई वास्तविकता के आधार पर एक नये व्यवहारिक एजेण्डे के जरिए मूल रूप से भिन्न प्रकार के समाज का निर्माण ना करले। जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा नियुक्त विश्व के वैज्ञानिकों के अन्तर सरकारी पैनल की हालिया रिपोर्ट जो फरवरी 2007 में प्रकाशित की गई है, यह हमारे पर्यावरण की उपरोक्त वर्णित स्थिति को बयान करती है।

द्वितीय विनाशकारी चुनौती एक परमाणु युद्ध की सम्भावना में मौजूद है, जिसके लिए आठों परमाणु शक्तियां (यानि पांच महाशक्तियां जो संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद् के स्थाई सदस्य हैं, यानि, यू एस ए, यू के, रूस, चीन व फ्रांस तथा तीन क्षेत्रीय शक्तियां, भारत, पाकिस्तान एवं इजराइल) बहुत ही खतरनाक किस्म के परमाणु हथियारों का निर्माण एवं उत्पादन बेहताशा करने में लगे हुए हैं और आपस में तथा अन्य गैर परमाणु शक्तिशाली देशों के साथ मिलकर प्रतिद्वन्द्वी गठजोड़ खड़े कर रहे हैं। हमारी दुनिया की दो बड़ी आणविक महाशक्तियां–यू एस ए और चीन–बाह्य अन्तरिक्ष तक को आणविक हथियारों से लैस करने की होड़ में लिप्त हैं।

द्वितीय श्रेणी की चुनौतियां

द्वितीय श्रेणी की अत्यधिक खतरनाक चुनौतियां भी मानव समुदाय के लिए पर्याप्त रूप से नुकसानदायक, क्षतिकारक एवं दुखदायी हैं।

यहाँ पहली चुनौती कारपोरेट व्यक्तिवाद के सिद्धान्त और व्यवहार से आ रही है जिसने मनुष्य को निज हित केन्द्रित बना दिया है। इसके प्रणेता एडम स्मिथ के प्रस्तावित सिद्धान्त कि ''मनुष्य स्वभाव से स्वार्थी है''–पर चलते हुए कारपोरेट पूंजीवाद ने वह हर तरीका अपनाने की कोशिश की जिससे प्रत्येक मनुष्य में निजी हित के रुझान का एकमात्र स्वभाव पैदा हो और विकसित हो, और इस प्रकार इसने ऐतिहासिक तौर पर विकसित मनुष्य के दो तरफा स्वभाव–यानि जैव-सामाजिक होने–को विकृत किया है। मनुष्य के दो तरफा स्वभाव–यानि, जैव सामाजिक–होने का मतलब है कि जैविक रूप से जीने के लिए मनुष्य व्यक्तिनिष्ठ है परन्तु अपने सामूहिक या सामाजिक जीवन के लिए अन्तरनिर्भरता का स्वभाव लिए हुए है (वह एक परिवार, ग्रामीण समुदाय, शहरी या वैश्विक समुदाय हो सकता है)।

द्वितीय चुनौती मनुष्य के मौजूदा निजी हितवादी रुझान से उत्पन्न यौन विकृति की ओर झुकाव की बुराई है जो सम-लैंगिकता, विलासिता के लिए विवाह, एक सदस्यीय परिवारों के व्यवहार में अभिव्यक्त हो रहा है, यह प्रक्रिया विपरीत लिंगों के माध्यम से मानव सन्तति के रूप में प्राकृतिक प्रक्रिया के क्रमिक विकास को नुकसान पहुँचाता है।

तीसरी चुनौती कारपोरेट राजकीय-आतंकवाद (मुख्यतया अमेरिका) द्वारा पैदा की गई अव्यवस्था से उभर रही है। यह चुनौती गैर जिम्मेदार एवं हास्यास्पद सिद्धान्त 'सभ्यताओं की टकराहट' के सिद्धान्त से मार्गदर्शित है तथा मुस्लिम समुदाय को रूढ़िवादी

ब्रांड घोषित करते हुए उस पर सीधा आक्रमण कर रहा है, जबकि यह चोरी-चोरी अन्य सभी धार्मिक रूढ़िवाद एवं उनकी रूढ़िवादी ताकतों को प्रोत्साहित कर रहा है।

चौथी चुनौती कारपोरेट की निजी हित केन्द्रित व्यवस्था से उत्पन्न पांच महाशक्तियों एवं तीन क्षेत्रीय शक्तियों के आणविक एकाधिकार से पैदा हुई है।

पांचवीं चुनौती, जनसंख्या वृद्धि है जो 2050 तक मानव समाज को गम्भीरतम खतरा पैदा कर देगी क्योंकि उस समय तक जनसंख्या 9 अरब से अधिक हो जाएगी, जबकि पृथ्वी की वहनीय क्षमता 8 अरब की ही है।

छठी चुनौती, बढ़ रहे कृषि संकट से उपज रही है, जिसके कारण खाद्य उत्पादन की धीमी वृद्धि तथा लगातार बढ़ रही मनुष्य की खाद्य आवश्यकताओं के मध्य भारी अन्तर पैदा होने की संभावना है।

सातवीं चुनौती, थोड़े से लोगों के पास दुनिया की दौलत के इकट्ठे होने की प्रक्रिया से पैदा हो रही है। यहाँ 2 प्रतिशत कारपोरेटर्स दुनिया की 50 प्रतिशत दौलत पर नियंत्रण रखते हैं तथा ऊपर के 10 प्रतिशत धनवानों के पास दुनिया की 85 प्रतिशत दौलत है (2006, यू एन डी पी रिपोर्ट के अनुसार)। जबकि 50 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा के नीचे हैं तथा 20 प्रतिशत गरीबी रेखा से थोड़े से ही ऊपर है एवं 20 प्रतिशत अत्यधिक धनाढ्य एवं वंचित लोगों के बीच मध्यम श्रेणी का स्थान रखते हैं (गैर सरकारी अनुमानों के मुताबिक)। इसने समाज को दो भागों में विभाजित कर दिया है यानि 10 प्रतिशत धनाढ्यों की तुलना में 20 प्रतिशत मध्यम श्रेणी एवं 70 प्रतिशत गरीबी की रेखा से मात्र ऊपर या नीचे हैं।

आठवीं चुनौती, अद्वितीय बेरोजगारी वृद्धि से पैदा हो रही है जो अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की 2006 की रिपोर्ट से जाहिर होती है।

नौवीं चुनौती, संयुक्त राष्ट्र संघ एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं, जैसे, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय और इसी प्रकार की अन्य वैश्विक संस्थाओं पर पाँच महाशक्तियों के एकाधिकार से पैदा हो रही है।

तीसरी श्रेणी की चुनौतियां

तीसरी श्रेणी की चुनौतियां कारपोरेट निर्देशित राष्ट्रीय संविधानों एवं कानूनों के उल्लंघन के कारण पैदा हो रही है। यदि इनको समय रहते रोका नहीं गया तो ये समाज में हिंसा का बीजारोपण कर सकती हैं और हालात को और खराब कर सकती है। यहाँ पहली चुनौती वंचितपन, गरीबी, बेरोजगारी, तंगहाली, राज्य दमन, स्वास्थ्य एवं शैक्षणिक सुविधाओं की कमी, शुद्ध पीने के पानी की कमी, मल-निकासी, घर, वृद्धावस्था में सुरक्षा, इत्यादि समस्याओं से आ रही है। दूसरी चुनौती कारपोरेट के प्रत्येक वायदे और कारगुजारी के गैर-टिकाऊपन की बढ़ोतरी में निहित है। तीसरी चुनौती मनुष्य सहित प्रत्येक वस्तु के बाजारीकरण होने में निहित है। चौथी चुनौती प्रत्येक देश के एजेण्डे में सेना को प्राथमिकता देने वाली अवधारणा और व्यवहार से पैदा हो रही है।

पांचवीं चुनौती, दुनिया में मानवाधिकारों के उल्लंघन के अद्वितीय स्तर तक खराब होने की देन है। छठी चुनौती, दुनिया भर में प्रतिदिन अपराध और भ्रष्टाचार के मामलों में बढ़ोतरी से आ रही है। सातवीं चुनौती, दुनिया में विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय, अन्तर-नस्लीय, अन्तर-संस्कृति, आदि तनाव बिन्दुओं की देन है, जैसे, जेके विवाद, फिलीस्तीन का सवाल, इत्यादि। आठवीं चुनौती, पहले से फल-फूल रहा काला धन और माफिया गैंग

का सामाजिक जिन्दगी की सभी शाखाओं (विशेषकर सरकारी क्षेत्र में) के अन्दर चलन में निहित है।

V
बचने का रास्ता

उपरोक्त आकलन से यह साफ-साफ जाहिर होता है कि मानव समुदाय इतिहास के इस मोड़ पर जिन्दगी और मौत रूपी संकट से सामना कर रहा है। स्पष्टतया, यह (यानि, मानव समुदाय) कोई रास्ता खोज निकालने की कोशिश में लगा हुआ है। अब तक सभी तरह के हल जो बहुत से चिन्तकों द्वारा विभिन्न हल करने वाले फारमूलों के रूप में लाये गये हैं वे सब इस जीने-मरने के संकट का कारण मानवीय गतिविधियां हैं, इस विचार पर जोर देते हैं और प्रत्येक विचारक मौजूदा कारपोरेट व्यवस्था के ढाँचे में ही समस्या को हल करने पर बल देते हैं।

उपरोक्त पैरा तीन प्रश्न सामने रखता है–यह जीने-मरने का संकट किस स्थिति में है, इसको किसने पैदा किया है और इसका वास्तविकता के आधार पर व्यवहारिक समाधान क्या हो।

पहले सवाल को लेते हैं, कि दुनिया के लोगों में इस बात पर सर्वसम्मति है कि यह संकट अत्यधिक खतरनाक, घातक और मारक है, ऐसे संकट का सामना इतिहास में मनुष्य को आज तक नहीं करना पड़ा है।

दूसरे सवाल के बारे (संकट के कारण) में उपरोक्त सभी अध्ययन लोगों को इसके लिए दोषी ठहराते हैं क्योंकि जन गतिविधि के कारण यह संकट पैदा हुआ है परन्तु सभी साक्ष्य यह साफ-साफ जाहिर करते हैं कि यह दो तरफा संकट–यानि, पर्यावरणीय या मानवीय–सरकारों के मूलभूत कारपोरेट नजरिए तथा बुनियादी कारपोरेट नीतियों की देन हैं। फिर भी, सभी प्रकार के मत यह स्वीकार करते हैं कि पर्यावरणीय प्रदूषण ग्रीन हाउस गैसों (जी एच जी एस) द्वारा पैदा हुआ है, जिनको विश्व संस्थाओं और राष्ट्रीय राज्यों की सरकारी तौर पर स्वीकृति के अनुसार इन गैसों का 95 प्रतिशत भाग दुनिया भर की सरकारों द्वारा पैदा किया गया है। इसी प्रकार, सभी मानवीय समस्याएं–गरीबी, बेरोजगारी, तंगहाली, राज्य दमन, स्वास्थ्य एवं शैक्षणिक सुविधाओं में कमी, शुद्ध पीने के पानी, मल-निकासी, मकान, वृद्धावस्था सुरक्षा, आदि में कमी–विभिन्न कारपोरेट सरकारों की नीतियों (ये कुल नीतियां विश्व कारपोरेट व्यवस्था को गठित करती हैं) की देन हैं।

तीसरे प्रश्न के बारे में, यानि संकट के हल के बारे में, क्या समस्या के कारण को समस्या के हल के तौर पर लिया जा सकता है। प्रत्येक सहज बुद्धि कारण को हल बनाने की प्रस्तावना को निरस्त करती है। सभी मानवीय तर्कसंगतता, युक्तिसंगतता, बुद्धिमता, रचनात्मकता, सरल हृदयता यह माँग करती है कि पर्यावरण सह मानवीय दो तरफा संकट को पर्यावरण और मानवीय पहलुओं के माध्यम से हल किया जाना चाहिए, ये दोनों पहलू मानवीय समाज की दो बुनियादी शक्तियां हैं।

हमारी तरफ से, हम दृढ़तापूर्वक यह विश्वास करते हैं कि इस संकट से निकलने का रास्ता सामाजिक विकास के प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल में निहित है। इस मॉडल की मान्यता है कि पर्यावरण और मानवतावादी वास्तविक एवं न्यायपूर्ण सिद्धान्त के आधार पर मानव समाज का पुनगर्ठन किया जा सकता है। प्रकृति-मानव केन्द्रित नजरिए के तहत

वैज्ञानिक और तर्कसंगत दृष्टिकोण से प्रेरित तथा पूर्णतया वैज्ञानिक तकनीकी ज्ञान (पुराने तथा अत्याधुनिक सहित) से लैस लोग प्रकृति-मानव केन्द्रित ढाँचे के दायरे में संगठित होकर वह कमाल करके दिखा सकते हैं जिसको अब तक के मानव इतिहास ने कभी नहीं सुना या देखा है।

VI
सार्क का तात्कालिक एजेण्डा

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन का यह मानना है कि वर्तमान चहुँमुखी घातक पर्यावरणीय-मानवीय वैश्विक संकट से निकलने के लिए सार्क को मौजूदा जमीनी हकीकतों के अनुरूप एक तात्कालिक कार्यक्रम की आवश्यकता है।

इस क्षेत्र की पहली जमीनी हकीकत यह है कि सार्क के सात सदस्यों के बीच लगातार तनावपूर्ण एवं अविश्वसनीय वातावरण (जो इसके पिछले लड़ाकू इतिहास और सार्क देशों के सत्ताधारी विभिन्न ग्रुपों के बीच मौजूद संकीर्ण नीतियों से उत्पन्न हुआ है) बना हुआ है।

इस जमीनी हकीकत की यह माँग है कि निम्न कदम उठाये जाए–

(क) सार्क के सभी सदस्यों के बीच शांति और मित्रता की एक संधि हो और यह घोषित किया जाए कि वे एक दूसरे के साथ कोई युद्ध नहीं करेंगे और आगे सभी बड़े और छोटे विवादों को सदस्यों के बीच में तथा सार्क के अलावा अपने अन्य सटे हुए पड़ौसियों के बीच के विवादों को शांतिपूर्ण तरीके से हल करेंगे।

(ख) सार्क देश संयुक्त सुरक्षा एवं साझा विदेश नीति अपनायें।

(ग) जेके विवाद, जो कि भारत व पाकिस्तान के बीच सबसे बड़ा अन्तर्राष्ट्रीय ज्वलन्त विवाद है तथा दुनिया व दक्षिण एशिया में एक उबाल वाला बिन्दु है जिसे हल किया जाए। यहाँ न्याय व वास्तविकता पर आधारित एक समाधान यह हो सकता है कि 21वीं सदी की अन्तरनिर्भरता की भावना के अनुकूल एक आपसी समझौते का फार्मूला अपनाया जाए जो न्यायप्रियता और निष्पक्षता से तीनों पक्षों–यानि, भारत-पाकिस्तान और जम्मू कश्मीर के लोगों के हितों से मेल खाता हो।

(घ) दो या दो से अधिक सार्क सदस्यों के बीच सभी प्रकार के विवादों–सीमा, आर्थिक, सांस्कृतिक, आदि–को तर्क व तथ्यों के आधार पर हल किया जाए।

(ड़) भारत और पाकिस्तान को तत्काल परमाणु विहीन करते हुए विश्व के सभी देशों से अपील करनी चाहिए कि वे सभी परमाणु सम्पन्न देशों के पास मौजूदा सभी तरह के परमाणु हथियारों के भंडारों को संयुक्त राष्ट्र की देखरेख में निष्क्रिय व समाप्त करने की माँग करे।

(च) 21वीं सदी की अन्तरनिर्भर दुनिया के तर्क पर जोर देते हुए यह कहा जाए कि महाशक्ति के एक पक्षीय या सह महाशक्तिवाद के प्रभुत्व का अब दुनिया में कोई स्थान नहीं रहा है जो ईराकी लोगों के हाथों द्वारा अमेरिका की पिटाई से देखा जा सकता है जिसकी पुष्टि अफगानिस्तान में भी शीघ्र ही होने वाली है और यह इस बात से भी साबित है कि दुनिया के लोग विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं, जैसे, संयुक्त राष्ट्र संघ, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन, आदि को लोकतांत्रिक एवं तर्कसंगत बनाए जाने की माँग उठा रहे हैं।

सार्क की दूसरी जमीनी हकीकत यह है कि सम्पूर्ण क्षेत्र एवं इसका प्रत्येक देश चहुंमुखी सामाजिक, आर्थिक तौर पर दयनीय तस्वीर प्रस्तुत करते हैं। यह स्थिति माँग करती है कि सम्पूर्ण क्षेत्र में और इसके प्रत्येक देश में चहुँमुखी सामाजिक और आर्थिक प्रगति की राह अपनाई जाए। संक्षेप में, इसके लिए निम्न कदम उठाए जाने की आवश्यकता है–

(क) विभिन्न सार्क देशों के बीच में सभी प्रकार के यातायात के रास्ते–थल, जल और वायु– के रास्ते खोले जाएं।

(ख) विभिन्न सार्क देशों द्वारा साझा नदियों, जुड़े हुए जंगलों, चरागाहों और सीमा से लगे उनके खेती योग्य क्षेत्रों को संयुक्त उपक्रमों द्वारा काम में लिया जाए।

(ग) सार्क देशों के बीच में मालों का मुक्त आदान-प्रदान हो।

(घ) सार्क देशों के बीच लोगों की मुक्त आवाजाही हो।

(ड़) सभी सार्क देशों के बीच एक ऊर्जा ग्रिड हो।

(च) पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना करने के लिए तथा पर्यावरण के विभिन्न घटकों को पुनर्जीवित करने के लिए सभी सार्क देशों हेतु एक ही पर्यावरण आयोग बनाया जाए।

(छ) सभी सार्क देशों में किसानों के सशक्तिकरण करने वाली कृषि नीति को लागू किया जाए।

(ज) प्रत्येक सार्क देश में एक जैसी औद्योगिक नीति बनाई जाए जो मजदूरों एवं आम आदमी का सशक्तिकरण करती हो।

(झ) सम्पूर्ण सार्क क्षेत्र में लोक-हितैषी सूचना-तकनीक से सम्बन्धित सेवाएं दी जाएं।

(ञ) सार्क क्षेत्र में मजदूर हितैषी श्रमिक आन्दोलन विकसित किया जाए जिसमें राजनीतिक पार्टियों की कोई दखलन्दाजी नहीं हो।

(ट) प्रत्येक सार्क देश में बेरोजगारी की समस्या से निपटा जाए तथा प्रत्येक बेरोजगार को युक्तियुक्त बेरोजगारी भत्ता दिया जाए।

सार्क की तीसरी जमीनी हकीकत यह है कि कुछ पुराना धार्मिक संकीर्णतावाद लगातार जारी है तथा धार्मिक संकीर्णतावाद की कुछ नई किस्में उभर कर सामने आई हैं। इस प्रकार के पिछड़े दृष्टिकोण के अस्तित्व को चौतरफा मौजूद अपराध, माफिया गैंग, भ्रष्टाचार, काला धन, मानवाधिकारों की खराब होती स्थिति, चहुँमुखी वंचितपन, बढ़ती गरीबी, कुपोषण, तंगहाली, राजकीय दमन तथा स्वास्थ्य व शिक्षा सुविधाओं, साफ पीने के पानी, मल-निकासी, मकान, वृद्धावस्था की सुरक्षा, आदि में कमी इस दृष्टिकोण को मजबूती देती है।

सार्क की जमीनी हकीकत के लिए निम्नलिखत कदम उठाने की आवश्यकता है–

(1) सार्क देशों में एक सार्क आयोग स्थापित किया जाए जो सभी प्रकार की सामाजिक बुराइयों, जैसे, अपराध, माफिया गैंग, भ्रष्टाचार, काले धन, आदि के कारणों का पता लगाए।

(2) एक सार्क आयोग स्थापित किया जाए जो गरीब लोगों (जो गरीबी की रेखा के नीचे और उसके तत्काल ऊपर के लोगों) के वंचितपन–यानि, भूख, कुपोषण, तंगहाली इत्यादि के कारण के बारे में जाँच करे।

(3) तीसरा, एक मानवाधिकार आयोग स्थापित किया जाए जो प्रकृति-मानव केन्द्रित नजरिए से मानवाधिकारों के घोषणापत्र तैयार करे, जिसे बाद में सार्क का प्रत्येक सदस्य देश विचार करे, स्वीकृत करे, संवैधानिक एवं कानूनी स्वरूप दे।

(4) सम्पूर्ण सार्क क्षेत्र में प्रकृति-मानव केन्द्रित शिक्षा व्यवस्था विकसित की जाए जो विद्यार्थी को सोच और व्यवहार में प्रकृति-मानव नजरिया प्रदान करे।

VII

अल्पकालीन कार्यक्रम

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आंदोलन (एन एच सी पी एम) मानता है कि इस समय मानव समुदाय को एक बहुत खतरनाक पर्यावरणीय व मानवीय संकट का सामना करना पड़ रहा है। यह चुनौती इतनी गंभीर है कि यदि इसका उत्तर वास्तविक कार्यक्रम से नहीं दिया जाता है तो इसके नतीजे में मानवीय हितों को बहुत ही खतरनाक परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं। सर्वप्रथम ऐसी गंभीर परिस्थिति से निपटने के लिए यह आवश्यक है कि मानव जाति के विभिन्न समुदायों के बीच में पूर्ण एकता कायम हो और एकता के पहलु की यह मांग है कि मानव समुदाय के अन्दर सभी प्रकार की टकराहटों को समाप्त किया जाये। मानव समुदाय की एकता कायम करने का एकमात्र रास्ता इसमें निहित है कि दुनिया में मौजूद सभी प्रकार के अन्याय को समाप्त किया जाए।

एन एच सी पी एम का यह दृष्टिकोण है कि न्यायसंगत दुनिया सभी प्रकार के सामाजिक न्याय की बुनियाद पर स्थापित करना निश्चित तौर पर संभव है। इसके लिए वर्तमान अन्यायपूर्ण कॉरपोरेट व्यवस्था को पुनर्गठित करने की आवश्यकता है।

वर्तमान अन्यायपूर्ण कॉरपोरेट व्यवस्था को एक न्यायपूर्ण आधार पर पुनर्गठित करने के लिए एन एच सी पी एम 15 बिन्दु जनता को सूचित करने, संगठित होने और काम करने के लिए प्रस्तुत करता है। इन 15 बिन्दुओं को उचित समझने वाले लोगों से यह निवेदन करता है कि वे इन बिन्दुओं को मजबूती,तहेदिल और सुस्पष्टता से आम जनता के बीच प्रसारित करें।

जब कभी भी किसी इलाके अथवा देश में चुनाव हो रहे हों वहाँ एन एच सी पी एम मतदाताओं से अपील करता है कि वे इन 15 सिद्धांतों को उम्मीदवारों की सच्चाई जानने का मानदण्ड बनाए। मतदाता उम्मीदवारों से इन बिन्दुओं के समर्थन में हस्ताक्षर करने का अनुरोध करे। जो इन पर हस्ताक्षर करते हैं वे उम्मीदवार जनता के समर्थन के हकदार हैं और जो इन पर हस्ताक्षर करने से हिचकिचाते हैं वे न्यायिक और तर्कसंगत दृष्टिकोण से परे हैं।

1. मानव जाति को हर समय और हर जगह पर्यावरण (यानि हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) को टिकाऊरखने के मूलभूत कार्य को थामे रखना चाहिए।

2. जिन्दा रहने के मानवीय अधिकार को शुद्ध हवा, शुद्ध पीने का पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित किया जाए।

3. आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में 5 गुना से अधिक अन्तर) पर आधारित उचित समानता का मानवीय अधिकार हो।

4. विश्व के तमाम झगड़ों का शांतिपूर्ण समाधान होना चाहिए, विशेष तौर पर जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका समस्याओं का। जम्मू-कश्मीर के न्यायपूर्वक समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा और विदेश महकमों को भारत-पाक के ज्वाइंट कन्ट्रोल में दिया जाना चाहिए जबकि बाकी सभी मामलों (रक्षा और विदेश मामलों के अलावा) में जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र होना चाहिए जबकि इसके 9 नस्ली क्षेत्रों को अधिक से अधिक स्वायत्तता होनी चाहिए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन एवं जॉर्डन के सम्बन्ध में भी कारगर होगा।

5. संयुक्त राष्ट्र संघ को पुनर्गठित करने के लिए सुरक्षा परिषद के पांच स्थायी सदस्यों को प्राप्त वीटो पॉवर समाप्त की जाए तथा किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए साधारण सभा के बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत साधारण सभा को प्रदान की जाए।

6. विश्व-व्यापार संगठन, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाय प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है), को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति जिसमें मानव और पर्यावरणीय पहलू उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्व वाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के 5 उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाए।

7. सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित किया जाए।

8. खेती से सम्बन्धित सभी लोगों की जीविका की सुरक्षा सहकारी कृषि व्यवस्था से सुनिश्चित की जाए।

9. शारीरिक व मानसिक दोनों प्रकार के श्रमिकों का सशक्तिकरण हो, जिसके अन्तर्गत संस्थानों, परियोजनाओं और कारखानों के प्रबन्ध में उनका एक तिहाई प्रतिनिधित्व सुनिश्चित हो।

10. उद्योग और सेवा के सभी क्षेत्रों पर से उद्योगपतियों और सरकार का एकाधिकार नियंत्रण खत्म करके तथा आम शेयरधारकों को दो तिहाई और मजदूरों को प्रबंधन में एक तिहाई हिस्सा देकर उनका लोकतांत्रीकरण किया जाए।

11. वित्तीय प्रबन्ध : कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबन्धन एवं नियंत्रण का पक्षधर है तो सरकारी क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियंत्रण का समर्थक है, पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर इन स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई सदस्य आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियंत्रण स्थापित हो। प्रोमोटर्स (प्रोत्साहक) शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध को समाप्त किया जाए।

12. प्रकृति-मानव केन्द्रित राजनीतिक प्रकिया लोगों द्वारा निर्देशित होनी चाहिये तथा उसका संचालन समर्पित प्रकृति-मानव केन्द्रित सामाजिक कार्यकर्ताओं (या उनके

मोर्चे) द्वारा किया जाना चाहिए। चुनाव पूर्णतया स्वतंत्र हो जिसमें प्रत्येक को उम्मीदवार और मतदाता दोनों रूपों में भाग लेने का समान अधिकार है।

13. दलगत ढांचे को महत्व दिए बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करे) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्यसत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के एकाधिकार का खात्मा किया जाए। यदि मतदाता किसी भी विधानसभा या लोकसभा सदस्य को वापिस बुलाना चाहे तो 1/5 मतदाताओं द्वारा लिखित में मांग करने पर पुन: चुनाव करवाया जाय।

14. प्रत्येक सांसद को दो करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये आवंटित करने का मौजूदा नियम हटाकर विकास से सम्बन्धित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्राम सभा सहित और इसके ऊपर कोई नहीं हो) के जरिए खर्च हों।

15. न्यायशास्त्र को पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों के हितों की सुरक्षा और संरक्षण करने के मूलभूत उसूल पर आधारित किया जाए। उपर्युक्त उसूल की अवहेलना करने पर अपराधी के साथ उसे सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल मानवीय क्रूरता और मृत्यु दण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधानों को निर्धारित किया जाए।

VIII

दीर्घकालीन कार्यक्रम

मानव समाज का प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल

1. मानव समाज के प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल का मानना है कि मानव समाज में पर्यावरण और मानव जाति दोनों बहुत ही मूल्यवान घटनाक्रम हैं। यह दोनों इसकी सामाजिक पूँजी (सर्वोच्च वस्तु) है, इन दोनों (यानि, पर्यावरणीय-मानवीय संसाधन) में वृद्धि से विकास, सम्पन्नता एवं प्रगति होती है तथा सोचने, कहने, करने और संगठित होने के लिए यह निर्देशक सिद्धान्त का कार्य करता है।

2. यह हर समय और सब जगह पर्यावरण (यानि, हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) संवर्धन के मूलभूत कार्य का मजबूती से समर्थन करता है।

3. यह प्रत्येक व्यक्ति के जैव-सामाजिक अस्तित्व के अधिकार को शुद्ध हवा, साफ पीने के पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित करने का समर्थक है।

4. यह आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में अधिकतम 5 गुणा अन्तर) पर आधारित उचित समानता के मूलभूत मानवीय अधिकार का समर्थक है।

5. यह विश्व शान्ति का मजबूती से पक्षपोषण करता है और विश्व के सभी विवादों खासकरके जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका इत्यादि के सीधे शांतिपूर्ण हल के मार्ग का समर्थक है। जम्मू-कश्मीर के न्यायपूर्ण समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा एवं विदेश महकमों को भारत-पाक सहराज्य के संयुक्त नियन्त्रण में सौंपा जाना चाहिए जबकि बाकी सभी मामलों (रक्षा और विदेश मामलों के अलावा) में जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र होना चाहिये जबकि इसके नौ नश्ली क्षेत्रों में से प्रत्येक को अधिकतम संभव स्वायत्तता प्रदान

की जाए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन और जोर्डन के संबंध में भी कारगर होगा।

6. यह संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के 5 स्थायी सदस्यों के वीटों पावर को समाप्त करते हुए विश्व व्यवस्था के पुनर्गठन करने एवं किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए संयुक्त राष्ट्र की केन्द्रीय सभा को साधारण बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान करने की मांग करता है। कुछ समय दौरान, विश्व के विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों के लोगों के मतदान से निर्वाचित संविधान सभा द्वारा रचित संविधान के आधार पर संयुक्त राष्ट्र का पुनर्गठन किया जाए।

7. यह विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाए प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर पुनर्गठित करने तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है) को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति बनाने की हिमायत करता है जिसमें मानवीय और पर्यावरणीय पहलु उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्ववाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के पांच उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाता है।

8. यह सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50% प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित करने का समर्थक है।

9. यह खेती को सहकारिता के आधार पर सुसंगठित करने को प्रोत्साहित करता है तथा खेती से संबंधित सभी लोगों की जीविका को सुनिश्चित करने का समर्थक है।

10. यह श्रमिकों (शारीरिक और मानसिक दोनों) के सशक्तिकरण के लिए जोरदार आवाज उठाता है, जिसके अनुसार सभी संस्थानों, परियोजनाओं एवं कारखानों के प्रबंध में उनके (श्रमिकों के) एक तिहाई चुने हुए प्रतिनिधियों की भागीदारी सुनिश्चित करने का पक्षधर है।

11. यह सभी औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों के विकेंद्रीकरण की वकालत करता है जिसके अनुसार कॉरपोरेट और राजकीय मोनोपोली नियन्त्रण समाप्त करते हुए एवं उन्हें साधारण शेयरधारकों (दो तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) तथा मजदूरों (एक तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) के द्वारा प्रबंधित किया जाए।

12. यह वित्त नियन्त्रण के लिए लोकतांत्रिक प्रबंध और नियन्त्रण को प्रस्तावित करता है। कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबंधन एवं नियन्त्रण का पक्षधर है तो राजकीय क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का समर्थक है। जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियन्त्रण का हामी है। प्रोमोटर्स शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध की मिल्कियत को समाप्त किया जाए।

13. यह दृढ़ता से विश्वास करता है कि राजनीतिक प्रक्रिया लोगों के नेतृत्व में हों तथा उसका संचालन समर्पित सामाजिक कार्यकर्ताओं के माध्यम से किया जाए। चुनाव

पूर्णतया स्वतंत्र हो जिसमें प्रत्येक को उम्मीदवार और मतदाता दोनों रूपों में भाग लेने का समान अधिकार है।

14. यह प्रत्येक देश में प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण के आधार पर कॉरपोरेट पूँजीवादी निर्देशित संविधान तथा न्यायशास्त्र को पुनर्गठित करने का प्रस्ताव रखता है।

15. दलगत ढाँचे को महत्व दिये बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार के लिए (जो विधान सभा चुनाव के सिलसिले में एक हजार और लोकसभा के सिलसिले में 5 हजार मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करे) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्यसत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के एकाधिकार का खात्मा किया जाए। यदि मतदाता किसी भी विधानसभा या लोकसभा सदस्य को वापिस बुलाना चाहें तो 1/5 मतदाताओं द्वारा लिखित में मांग करने पर पुन: चुनाव करवाया जाए।

16. यह प्रत्येक सांसद को 2 करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये अपने चुनावी क्षेत्र के विकास खर्च के लिए आवंटित करने के मौजूदा नियम को हटाकर विकास से संबंधित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्रामसभा सहित और इसके ऊपर कोई नहीं) के जरिए खर्च करने को प्रोत्साहित करती है।

17. यह मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के हितों की रक्षा एवं संवर्धन के मूलभूत सिद्धान्त का मजबूती से पक्षधर है। उपर्युक्त उसूल की किसी तरह से अवहेलना करने पर अपराधी को सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल दण्ड दिया जाए। दण्ड में मानवीय क्रूरता और मृत्युदण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधान शामिल हो सकते हैं ।

18. यह गांव/वार्ड से अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक 6 स्तरों पर सामाजिक जीवन के तीन मूलभूत पहलुओं–राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक–के प्रबन्ध की शक्ति लोगों को देकर उनके सशक्तिकरण (या जनता के नेतृत्व वाला शासन) को प्रस्तावित करता है।

19. इसका राजनीतिक पहलू माँग करता है कि 6 स्तर पर (यानि, अंतर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय, राज्य या क्षेत्रीय, जिला, ब्लॉक और गाँव)राजनीतिक सभा का गठन किया जाए जो लोकतान्त्रिक व्यवस्था पर कायम रहे तथा पूर्णतया लोकतान्त्रिक उसूलों, गतिविधियों और ढाँचे पर आधारित हो। ऐसा मॉडल निर्णय लेने में भी अधिकतम सम्भव लोक सशक्तिकरण के सिद्धान्त को लागू करना आवश्यक बना देता है।

20. इसके आर्थिक पहलू की आवश्यकता है कि एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता के लिए पाँचों स्तर पर विकास सभाएँ स्थापित की जाएं जिसकी धारणाएँ, कानून एवं नियम पुर्वोक्त दो उच्चस्थ प्राथमिकताओं (यानि, मानवजाति और पर्यावरण) तथा पाँच सिद्धान्तों (यानि, पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जन-नेतृत्वकारी लोकतन्त्र तथा चहुंमुखी पारदर्शिता) की रोशनी में बनाए जाएं। मनुष्य की जैव-सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एडम स्मिथ का 'निजी हित' आधारित बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त तथा हर चीज का राज्य द्वारा राष्ट्रीयकरण करने के मार्क्सवादी बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त, ये दोनों एक तरफा है। परन्तु, विडम्बना यह है कि दोनों मनुष्य और पर्यावरण विकास के सन्दर्भ की बजाए विकास, सम्पन्नता तथा प्रगति को धन वृद्धि के रूप में नापते हैं।

21. इसके सांस्कृतिक पहलू की आवश्यकता है कि पाँचों स्तर पर सांस्कृतिक सभाएं स्थापित की जाएं।यह ऐसे जीने के तरीके (या जीवन शैली) की माँग करता है जो बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों से भरपूर हों तथा लोगों के बीच में तर्कसंगत मानवतावाद एवं पर्यावरणवादी चिन्तन, व्यवहार एवं संगठन को विकसित करता हो।

22. पाँचों स्तरों पर राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक सभाओं द्वारा बनाये गये कार्यक्रमों और नीतियों को लागू करने के लिए अपने-अपने राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक क्षेत्र के आयोगों का चुनाव करना। सम्बन्धित राजनीतिक आर्थिक और सांस्कृतिक आयोग पाँचों स्तरों पर प्रत्येक राजनीतिक, विकासोन्मुख और सांस्कृतिक प्रक्रिया के अपने-अपने विशेषज्ञ आयोगों का चुना करें। राजनीतिक विशेषज्ञों का आयोग राजनीतिक मुद्दों, जैसे–कानून और व्यवस्था, अपराध रोकथाम, न्यायिक कार्यवाही से सम्बन्ध रखे; विकास विशेषज्ञों का आयोग आर्थिक, वित्तीय मसलों, जैसे–विकास योजना, कृषि, उद्योग, सेवाएं, वित्त और बजट को देखे और सांस्कृतिक विशेषज्ञों का आयोग शिक्षा, स्वास्थ्य, नैतिक मूल्यों एवं अन्य सांस्कृतिक विषय, जैसे–भाषा, संगीत, नृत्य, सिनेमा उद्योग आदि पर ध्यान दें।

23. यह पर्यावरणीय मानवतावाद को मुख्य जन प्रेरक पहलू के तौर पर आगे लाता है, साथ ही विभिन्न क्षेत्रों और जगहों पर प्रचलित कुछ अन्य मानवीय रुझानों को अंगीकार करता है।

24. यह अन्तर्राष्ट्रीय मानववाद को व्यक्ति की पहचान का मुख्य उसूल होने पर जोर देता है, साथ ही राष्ट्रीयता और नस्लीयता को दूसरे स्थान पर रखता है जबकि धार्मिक पहलू को व्यक्तिगत मामले का एक मुद्दा मात्र समझता है।

25. पूँजी के बारे में प्रकृति-मानव केन्द्रित अवधारणा की मान्यता है कि पूँजी में दो तरफा घटनाक्रम शामिल हैं, यानि एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन और दूसरी तरफ मानवीय संसाधन। ऐसा इसलिए हैं क्योंकि पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों से ही मानव समुदाय का जीवन बनता है और उनके बिना मानव समाज के लिए किसी भी चीज का कोई मूल्य नहीं है। इस प्रकार, यह धारणा पूंजी को पैसे (या वित्त) के तौर पर समझने की अवधारणा को दृढ़ता से रद्द करती है। आगे, पैसा या वित्त (जिसे कारपोरेट और कम्युनिस्ट सिद्धान्त पूंजी कहते हैं) भी इन्हीं 2 संसाधनों से उत्पन्न होता है जो मानव के मानसिक और शारीरिक श्रम के साथ प्राकृतिक कच्चे माल और तकनीकी औजारों के मेल का एक रूप है। स्पष्टतया, वित्त (या पूंजी) के सभी घटक–यानि, श्रम, तकनीकी और कच्चा माल–पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों द्वारा प्रदान किये जाते हैं। पैसा मात्र विनिमय के माध्यम या बाजार के औजार का प्रतिनिधित्व करता है। फिर भी, इस अति महत्वपूर्ण क्रिया को मानव समाज में उच्चतम दर्जे की पदवी नहीं दी जा सकती है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यूप्वाइंट द्वारा तैयार किया गया

सम्पादक-आर.पी. सर्राफ
Tel. : 0091-98882-43217
Email : saraf_rp@rediffmail.com

* * * * *

वैश्विक उष्माकरण या मौसम परिवर्तन की चुनौती

I

जीवन या मौत की चुनौती

हमारे ग्रह पृथ्वी पर मानव समुदाय सहित समस्त जैव-जीवन के सामने उपरोक्त घातक चुनौती मुँह बाए खड़ी है। मौसम परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र अन्तर सरकारी पैनल द्वारा प्रस्तुत चार रिपोर्टों तथा वर्ल्ड वाइड फंड एवं विश्व वैज्ञानिकों के अन्तर-सरकारों के आयोग, आदि अन्य सभी की रिपोर्टों में वैश्विक उष्माकरण का मूल कारण विश्व की सरकारों की ऊर्जा उत्पादन की तकनीक को बताया है और कहा है कि मानव समुदाय या तो इस चुनौती को चकनाचूर करके स्वयं सहित जैव-जीवन को बचा लेगा या आधे-अधूरे मन से अपने को विभाजित रखते हुए और अधिक गहरे संकट में फंसता चला जायेगा और अन्य जैव-जीवन सहित अपने को हमेशा के लिए नष्ट कर लेगा। इसके अलावा और कोई रास्ता नहीं है।

II

यह घातक चुनौती केवल 250 वर्ष पहले से ही शुरू हुई

यू एन आई पी सी सी रिपोर्ट बहुत साफ तौर पर यह बयान करती है कि लगभग 300 वर्ष पूर्व जबसे पूँजीवाद आया, उससे पहले पृथ्वी ग्रह प्रदूषण विहीन था। सन् 1750 से प्रदूषण की शुरूआत हुई। विशेषज्ञों की रिपोर्ट यह बताती है कि ग्रीन हाउस गैसों (कार्बन-डाई आक्साइड, मिथेन एवं नाइट्रो-ऑक्साइड) के सकेन्द्रण में बढ़ोतरी का मुख्य कारण जीवाष्म ईंधन को उपयोग में लेना तथा भूमि उपयोग के तरीकों में परिवर्तन करने में निहित है। कार्बन-डाई-आक्साइड में बढ़ोतरी जीवाष्म ईंधन उपयोग करने से हुई है तथापि मिथेन एवं नाइट्रो-ऑक्साइड का सकेन्द्रण कृषि के कारण हुआ है। विशेष तौर पर सन् 2005 में कार्बन-डाई-ऑक्साइड का सकेन्द्रण बढ़ कर 379 पी पी एम (पार्ट पर मिलियन) हो गया जबकि यह सन् 1750 में 280 पी पी एम ही था। यह पिछले 650,000 सालों में केवल 180 पी पी एम से 300 पी पी एम तक ही पहुँचा था अत: वर्तमान बढ़ोतरी स्वाभाविक बढ़ोतरी से कहीं अधिक है।

III

इस घातक चुनौती का जन्मदाता कारपोरेट क्षेत्र इसको हल करने वाला नहीं हो सकता

अभी पिछले 50 सालों में ही वैज्ञानिक विशेषज्ञों ने यह महसूस करना शुरू किया कि हमारे पर्यावरण में कुछ खोट हो रहा है। इसका नतीजा यह हुआ कि दुनिया में दूरदर्शी लोगों ने यह जोर देना शुरू किया कि मानव समुदाय को टिकाऊ जीवन, वृद्धि एवं विकास के नजरिए को अपनाना चाहिए।

पिछले चार दशकों में सन्निकट महाविध्वंस से बचने के लिए कार्यशील रणनीति तय करने हेतु टिकाऊ विकास पर कई उच्च स्तरीय सम्मेलन हुए हैं परन्तु आज तक ये सभी सम्मेलन शून्य ही साबित हुए हैं।

सन् 1972 (स्टाकहोम सम्मेलन) से शुरू करते हुए हेलसिंकी (1989), लन्दन (1992), रियो सम्मेलन (1992), क्योटो सम्मेलन (1997), टिकाऊ विकास पर विश्व

सम्मेलन, जोहान्सर्ब (2002) हुए हैं। 2004 और 2005 में स्टाकहोम एवं मान्ट्रियल में सम्मेलन किए गये तथा 2007 की ताजा बर्लिन कान्फ्रेन्स सहित इन सभी सम्मेलनों ने कोई लाभदायक योगदान नहीं किया है।

स्पष्टतया, सत्ताधारी कारपोरेट राजनीतिज्ञों एवं व्यापारिक क्षेत्रों द्वारा उपरोक्त प्रस्तुत रणनीति ने ना तो जी एच जी एस (ग्रीन हाउस गैसों) को सीमित या कम किया है और ना ही लोगों को जागरुक किया है और ना ही संगठित किया है। इन सभी उच्च स्तरीय सम्मेलनों में लोगों को सूचना विहीन और असंगठित रख कर अमेरिका ने सम्मेलनों में लिए गये बुनियादी निर्णयों को इन्कार करके एक मुख्य अपराधी की भूमिका निभाई है तथा इन सभी उच्च स्तरीय सम्मेलनों की जड़ें खोदी है और इन्हें प्रभावहीन बनाया है। इस प्रकार दुनिया भर में लोगों को भ्रमित किया है तथा मानवीय हितों को नुकसान पहुँचाया है।

उपरोक्त के आधार पर यह नतीजा निकलता है कि सत्ताधारी एवं अगुवा कारपोरेट विचारक, विशेषज्ञ, राजनीतिज्ञ, अर्थशास्त्री एवं सांस्कृतिक विशिष्ट वर्ग ने पारिस्थितिक-जैविक संकट के जीने-मरने वाले सवाल को न तो उचित प्रत्युत्तर दिया है और न ही दे सकते हैं जो कि वास्तव में पूर्व में इन्हीं की पर्यावरण विरोधी और मानव विरोधी गतिविधियों से पैदा हुआ है। इसलिए, इस ग्रह और वर्तमान जैव-जीवन की वस्तुगत आवश्यकता केवल यह है कि सभी भिन्न-भिन्न किस्मों की मानवीय और पर्यावरणीय शक्तियों को आगे आकर एक सर्वमान्य कार्यक्रम के आधार पर अपने आपको एकबद्ध करना चाहिए तथा हमारे पर्यावरण को बचाने एवं वैश्विक उष्माकरण से मुकाबला करने के लिए एक ही मंच पर लोगों को संगठित करना चाहिए।

IV

पर्यावरणीय-मानवीय कार्यक्रम से सम्बन्धित सिद्धान्त

हम दृढ़तापूर्वक यह मानते हैं कि हमारे ग्रह पर रहने वाले लोग ही वह एकमात्र शक्ति व स्रोत हैं जो हमारी पृथ्वी पर जैव-जीवन को बचा सकते हैं तथा हमारे ग्रह पर कोई परिवर्तन ला सकते हैं तथा लोग केवल तभी एक सकारात्मक भूमिका निभा सकते हैं जब उन्हें स्पष्ट, न्यायपूर्ण, निष्पक्ष एवं तर्कसंगत कार्यक्रम के आधार पर उचित तौर पर संगठित किया जाए। हमारी नजर में इस आवश्यकता की पूर्ति करने वाला कार्यक्रम प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन के कार्यक्रम में मिल सकता है। संक्षेप में, जो निम्न प्रकार है– पहला, समाज में सबसे महत्त्वपूर्ण चीज लोग एवं प्राकृतिक संसाधन हैं, इसके अलावा कोई भी चीज सबसे महत्त्वपूर्ण नहीं है। जबकि कारपोरेट पूँजीवाद यह झूठी धारणा रखता है कि समाज में सबसे मूल्यवान वस्तु केवल पूँजी है। दूसरा, सबसे पहले यह आवश्यक है कि हर समय और हर जगह वहनीय पर्यावरण (यानि हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता आदि) के मूलभूत मानवीय लक्ष्य को दृढ़तापूर्वक थामा जाए। तीसरा, हमारा अगला सिद्धान्त यह है कि लोगों का चहुँमुखी संवैधानिक सशक्तिकरण किया जाए।

(1) आर्थिक सशक्तिकरण : स्वच्छ हवा, शुद्ध पीने का पानी, पोष्टिक भोजन, मकान, वस्त्र तथा मुफ्त चिकित्सा सुविधा एवं शिक्षा आदि के सम्बन्ध में प्रत्येक को मूल अधिकार प्रदान करते हुए सामाजिक सुरक्षा को सुनिश्चित करके लोगों का आर्थिक सशक्तिकरण किया जाए।

मुट्ठी भर अमीर श्रेणी तथा विशाल बहुमत वाली गरीब श्रेणी के बीच आये भयंकर विभाजन के बीच आर्थिक सामंजस्य लाने के लिए 1:5 आय अन्तर के आधार पर निष्पक्ष समानता सुनिश्चित की जानी चाहिए।

(2) राजनीतिक सशक्तिकरण : राजनीतिक प्रक्रिया पर लोगों का नेतृत्व होना चाहिए तथा समर्पित सामाजिक कार्यकर्ताओं या उनके मंचों द्वारा संचालित की जानी चाहिए। चुनाव सभी प्रकार से स्वतन्त्र हो जहाँ हर एक को चुनाव प्रक्रिया में खड़े होने व वोट देने का अधिकार हो।

चुनाव में प्रत्येक व्यक्तिगत उम्मीदवार के लिए राज्य की ओर से धन खर्च करने के नियम को लागू करके भ्रष्ट एवं धन व सत्ता लोभी राजनीतिक दलों के राज्य सत्ता के एकाधिकार को समाप्त करना चाहिए।

विकास के लिए दिये जाने वाला सारा धन चुनी हुई जन विकास समितियों (ग्राम सभा सहित और उसके ऊपर कोई नहीं) के द्वारा खर्च किया जाना चाहिए, प्रत्येक लोकसभा सदस्य को 2 करोड़ रुपये तथा प्रत्येक विधान सभा सदस्य को लाखों रुपये अपने-अपने क्षेत्र में विकास पर खर्च करने के मौजूदा नियम को रद्द किया जाए।

यदि 1/5 मतदाता विधान सभा या लोकसभा सदस्य को वापिस बुलाने की लिखित माँग करते हैं तो यह अधिकार देकर लोगों का सशक्तिकरण किया जाना चाहिए। चुनाव लड़ने से पहले राजनीतिक दलों को लोगों द्वारा प्रायोजित उम्मीदवारों में से अपना उम्मीदवार बनाना होगा। लोगों द्वारा प्रायोजित उम्मीदवार वह माना जायेगा जो विधान सभा क्षेत्र में एक हजार मतदाताओं के हस्ताक्षरों तथा लोक सभा क्षेत्र में पाँच हजार मतदाताओं के हस्ताक्षर प्राप्त करेगा।

(3) सांस्कृतिक सशक्तिकरण : जीवन जीने के तरीके (जीवन शैली) से सम्बन्धित है, जिसमें लोगों के बीच बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्य समाहित होते हैं तथा तर्कसंगत मानवीय एवं पर्यावरणीय सोच, व्यवहार एवं संगठन को संवर्द्धित किया जाता है।

(4) महिला सशक्तिकरण : संसद, विधान सभा तथा प्रशासन, इसके साथ-साथ संगठित बड़े उद्योगों की नौकरियों में महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण देकर महिला सशक्तिकरण किया जाए। धीरे-धीरे यह सिद्धान्त एक नियम बन जाना चाहिए जो सभी सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में लागू हो।

(5) मजदूर सशक्तिकरण : संगठित क्षेत्र में, सभी किस्म के बड़े उद्योगों, संस्थाओं, परियोजनाओं एवं फैक्ट्रियों के प्रबंध करने वाले बोर्ड में एक तिहाई प्रतिनिधित्व मजदूरों को दिया जाए। ये एक तिहाई प्रतिनिधि मजदूरों के संगठनों के एकल मजदूर फ्रंट द्वारा चुनकर भेजे जाए। छोटे और मध्यम उद्योगों में सम्बन्धित मजदूरों से चुने गये प्रतिनिधियों का मंच प्रत्येक सम्बन्धित प्रबन्धमण्डल में सलाहकार बोर्ड की हैसियत रखेगा।

(6) असंगठित मजदूरों का सशक्तिकरण : फुटकर क्षेत्र में, लघु स्तर के निजी व्यापार में लगे सभी मजदूरों को सभी जगह (यानि, शहर, कस्बे व ग्रामीण इलाकों में) युनियनों में संगठित किया जाना चाहिए और उन्हें कम ब्याज पर ऋण दिया जाए, मुक्त बाजार की सभी तरह की सुविधाएं मुहैया करवाई जाए, एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिए मुफ्त वाहन (ट्रालर) उपलब्ध करवाये जाएं या बड़े शहरों के बाजारों में किराया मुक्त छोटी दुकानें मुहैया करवाई जाएं।

(7) किसानों का सशक्तिकरण : ग्रामीण क्षेत्र में, समस्त किसानों–चाहे वे धनी किसान हों या भूमिहीन किसान हों–को राज्य की मूल नीति के रूप में सहकारी खेती के आधार पर संगठित किया जाए। ऐसी प्रत्येक सहकारी समिति को अपना बाजार तन्त्र विकसित करने के लिए आवश्यक सरकारी सहायता मुहैया करवाई जाए, जरूरी कृषि निवेश सामग्री सस्ती दरों पर उपलब्ध करवाई जाए तथा इसकी ऋण व्यवस्था सहकारी ऋण एजेंसियों से ऋण प्राप्त कर निर्मित की जाए।

(8) जीवन के हर पहलू में न्याय, समानता और निष्पक्षता के मानवीय मूलभूत लक्ष्य को संवर्द्धित किया जाए।

(9) दुनिया में, विशेष तौर पर जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन, श्रीलंका आदि में सभी विवादों को शान्तिपूर्ण तरीकों से हल किया जाए। जम्मू-कश्मीर के न्यायपूर्ण हल के सम्बन्ध में एक संयुक्त भारत-पाक सहराज्य को जम्मू-कश्मीर की सुरक्षा, विदेश मामले एवं मुद्रा के मसले सौंप दिये जाएं, अन्य सभी मामलों में जम्मू-कश्मीर के विभिन्न नस्लीय, सांस्कृतिक एवं भाषाई क्षेत्रों को उनका अपना शासन यानि पूर्ण स्वराज्य दिया जाना चाहिए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण प्रबन्ध पाकिस्तान प्रशासित जम्मू-कश्मीर, इजराइल, फिलीस्तीन तथा जोर्डन में भी लागू किया जा सकता है।

(10) संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद के स्थायी पाँच सदस्यों के वीटो पावर को समाप्त किया जाए तथा किसी भी मुद्दे का निर्णय करने के लिए केवल बहुमत के आधार पर संयुक्त राष्ट्र की महासभा को पूर्ण अधिकार दिया जाए।

(11) यह विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाए प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर पुनर्गठित करने तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है) को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति बनाने की हिमायत करता है जिसमें मानवीय और पर्यावरणीय पहलू उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्ववाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के पांच उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाता है।

(12) यह सभी औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों के जनवादीकरण की वकालत करता है जिसके अनुसार कॉरपोरेट और राजकीय मोनोपोली नियन्त्रण समाप्त करते हुए एवं उन्हें साधारण शेयरधारकों (दो तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) तथा मजदूरों (एक तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) के द्वारा प्रबंधित किया जाए।

(13) वित्त प्रबंध : यह वित्त नियन्त्रण के लिए लोकतांत्रिक प्रबंध और नियन्त्रण को प्रस्तावित करता है। कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबंधन एवं नियन्त्रण का पक्षधर है तो राजकीय क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का समर्थक है। जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियन्त्रण का हामी है। प्रोमोटर्स शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध की मिल्कियत को समाप्त किया जाए।

(14) न्यायशास्त्र को पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों के हितों की सुरक्षा और संरक्षण करने के मूलभूत उसूल पर आधारित किया जाए। उपर्युक्त उसूल की अवहेलना करने पर अपराधी के साथ उसे सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल मानवीय क्रूरता और मृत्यु दण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधानों को निर्धारित किया जाए।

V

वैश्विक उष्माकरण या जलवायु परिवर्तन को तात्कालिक जवाब

जलवायु परिवर्तन पर अन्तर-सरकारों के पैनल की तीसरी रिपोर्ट में कहा गया है कि ''तापमान वृद्धि को 2^0 सेन्टीग्रेड तक रोकने के लिए वार्षिक सकल घरेलू उत्पाद के केवल 0.12 प्रतिशत ही खर्च होता है। बड़ी जलवायु क्षति के खतरे को कम करने के लिए यह मामूली कीमत है।

अब प्रश्न यह उठता है कि जलवायु क्षति की मरम्मत करने के कार्य को कौन संगठित करे। जलवायु संकट को पैदा करने वाला तो कारपोरेट क्षेत्र है तथा अब तक पर्यावरण में जो परिवर्तन हुए हैं उसके बारे में सभी बड़ी शक्तियां उचित उत्तर देने में आज तक असफल रही हैं, ऐसी परिस्थिति में यह ज्यादा उचित रहेगा कि वर्तमान जलवायु क्षति की मरम्मत के काम को सुरक्षा परिषद या जी-आठ ग्रुप को सौंपने की बजाए संयुक्त राष्ट्र महासभा को सौंपा जाए क्योंकि इन दोनों में तो बड़ी कारपोरेट शक्तियों के निहित स्वार्थ का प्रभुत्व है। महासभा में जहाँ निर्णय बहुमत के आधार पर लिया जाता है वहाँ महाशक्ति या धनी राष्ट्रों के प्रभुत्व की संभावना कम रह जाती है।

VI

आणविक शक्तियों एवं धनी देशों के लिए तात्कालिक कार्य

पहला तात्कालिक कार्य यह है कि वैश्विक उष्माकरण की जीवन-मरण की चुनौती को ध्यान में रखते हुए मानव समुदाय को वर्तमान आणविक शक्तियों से यह माँग करनी चाहिए कि वे अपने पास मौजूद सभी आणविक भंडारों को तथा जनसंहार के अन्य खतरनाक हथियारों को तुरन्त नष्ट करें और भविष्य में किसी भी जनसंहारक हथियार को नहीं बनाने का वादा करें। आगे, वे अपने पिछले सुरक्षा बजट की 50 प्रतिशत राशि को प्रतिवर्ष संयुक्त राष्ट्र की महासभा को सुपुर्द करें। पुनः, संयुक्त राष्ट्र महासभा को यह वादा करना चाहिए कि वह दुनिया में मौजूद सभी अन्तर-देशीय विवादों को 6 महिनों के अन्दर-अन्दर हल करेगा।

उपरोक्त कार्य को पूरा करने की पालना में निम्न कदम उठाये जाने चाहिए–

संयुक्त राष्ट्र महासभा को तुरन्त एक शक्ति सम्पन्न संयुक्त राष्ट्र टिकाऊ विकास परिषद का गठन करना चाहिए जो एक तरफ वैश्विक उष्माकरण का मुकाबला करने के लिए तथा पर्यावरणीय संसाधनों को सुरक्षित एवं संवर्द्धित करने और दूसरी तरफ मानव संसाधनों को विकसित करने के लिए वैश्विक उच्च अधिकार प्राप्त प्राधिकारी के तौर पर कार्य करेगी। इस परिषद को पर्यावरण एवं मानवीय विकास के सम्बन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मूलभूत सुधार के लिए कानून बनाना चाहिए। इस परिषद की वित्त पूर्ति वैश्विक टैक्स जैसे–विश्व व्यापार पर टैक्स एवं तेल, कोयला, संचार उपग्रह, वायुयात्रा, अन्टार्कटिका खनन, समुद्र तल खनन, समुद्री परिवहन आदि, प्राकृतिक संसाधानों के

उपयोग पर टैक्स से हासिल होगी; इस वैश्विक राजस्व को संयुक्त राष्ट्र एवं उसके सदस्य राज्यों के बीच बँटवारे के लिए संयुक्त राष्ट्र महासभा अपनी योजना बनायेगी जिसमें अति अल्प विकसित देशों का विशेष तौर पर ध्यान रखा जाएगा।

– आर. पी. सराफ, सम्पादक - नेचर-हुमन सेन्ट्रिक व्यूप्वाइंट
Email : saraf_rp@rediffmail.com

* * * * *

जम्मू-कश्मीर समस्या के सम्बन्ध में एक वास्तविक, टिकाऊ एवं तर्कसंगत नजरिया

I
मुद्दा

दिन-ब-दिन यह साफ होता जा रहा है कि नई दिल्ली और इस्लामाबाद जम्मू-कश्मीर के सम्बन्ध में किसी न किसी समझौते के फार्मूले की तरफ बढ़ रहे हैं। जम्मू-कश्मीर समस्या के हल के सम्बन्ध में मुशर्रफ द्वारा हाल ही दिये गये चार बिन्दु और उन पर मनमोहनसिंह का सकारात्मक प्रत्युत्तर भी महत्वपूर्ण घटना है। स्पष्टतया, एक नई हवा न केवल इस उपमहाद्वीप में बल्कि पूरे दक्षिण एशिया में बहनी शुरू हो गई है।

ऐसा क्या है जिससे ऐतिहासिक तौर पर इन दो विरोधियों में एक उभरती हुई नई समझ जन्म ले रही है? पिछले 60 सालों के अनुभवों से क्या उन्होंने यह सबक ले लिया है कि टकराहट की राजनीति ने उन दोनों को नुकसान पहुँचाया है और इसलिए टकराहट विहीन, सम्बन्ध आज के समय की माँग है?

या इस समय कुछ नये तथ्य उभर आये हैं जो जम्मू-कश्मीर समस्या को हल करने के लिए एक नये समझौतावादी नजरिए की माँग कर रहे हैं जिसके बिना भारत और पाकिस्तान एक असम्भव परिस्थिति में फंस के खड़े रह जायेंगे और आगे की ओर कोई कदम नहीं बढ़ा सकेंगे।

II
जरा पीछे मुड़ कर देखें

पीछे की ओर देखते हैं तो जम्मू-कश्मीर समस्या उतनी ही पुरानी है जितना 1947 पूर्व का एकीकृत भारत का विभाजन जो भारत व पाकिस्तान नाम के दो देशों में बँट गया। इस विभाजन को किसने प्रेरित किया? स्पष्टतया, इस उपमहाद्वीप में सबसे शक्तिशाली तीन शक्तियां–यानि ब्रिटिश शासक, गांधी मार्गदर्शित कांग्रेस और जिन्नाह के नेतृत्व में मुस्लिम लीग–जो तत्कालीन ब्रिटिश उपनिवेशी काल में भारत की तीन प्रमुख राजनीतिक ताकतों के अलावा और कौन हो सकता था? अंग्रेज यह सोचते थे कि एकीकृत भारत में से दो देशों का निर्माण करना इस उपमहाद्वीप के बाजार और आर्थिकता पर ब्रिटेन अपना शिकंजा कायम रखने योग्य बना रहेगा–चाहे भारत एक ढीले-ढाले सहराज्य में गठित किया जाये जिसमें दो तरह की बहुसंख्यक आबादी वाले क्षेत्र हों, एक हिन्दू बहुसंख्यक और दूसरा मुस्लिम बहुसंख्यक, अथवा भारत को दो स्वतंत्र देशों में विभाजित किया जाए, जिसमें से एक का चरित्र हिन्दू बहुसंख्यक हो व दूसरा मुस्लिम बाहुल्य वाला हो। तथापि कांग्रेस का अखण्ड भारत का नजरिया और मुस्लिम लीग का भारत के विभिन्न

ग्रुपों की बहुसंख्यक वाले क्षेत्रों और मुस्लिम बाहुल्य वाले क्षेत्रों से गठित भारत का एक ढीले-ढाले सहराज्य के नजरिए ने इन दोनों दृष्टिकोणों के बीच कभी न भरी जाने वाली दरार पैदा कर दी। स्वाभाविक तौर पर भारत दो भागों में विभाजित हो गया।

पिछले 60 सालों में इस उपमहाद्वीप का सम्पूर्ण इतिहास भारत और पाकिस्तान के बीच न खत्म होने वाली टकराहट का इतिहास रहा है। इन दोनों ने भिन्न-भिन्न समय (1947, 1965 और 1971 में) तीन भयंकर युद्ध लड़े हैं–इससे इन दोनों को जान और माल की शकल में बहुत भारी नुकसान उठाना पड़ा है। 1971 का भारत-पाक युद्ध की अधिक महत्वपूर्ण बात यह रही है कि पाकिस्तान के दो टुकड़े हुए–यानि पूर्व में प्रभुत्व सम्पन्न बंगलादेश बना और पश्चिम में पुराने पाकिस्तान का करीब-करीब आधा–पंजाब, सिंध, बलूचिस्तान और उत्तर-पश्चिम पठान क्षेत्र से गठित–पाकिस्तान रह गया।

अमेरिका और यूरोप द्वारा भारत और पाकिस्तान की कारगुजारी के बारे में चाहे कितने ही ऊंचे और बड़बोले दावे किये गये हों, संयुक्त राष्ट्र संघ की विभिन्न वार्षिक रिपोर्टों में इन दोनों को तीसरे दर्जे के विकसित देशों के रूप में चारित्रित किया है जिनकी एक तिहाई आबादी से अधिक जनसंख्या गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन कर रही है और जहाँ पर कोई स्वास्थ्य सुविधा उपलब्ध नहीं है, अनपढ़ता बढ़ रही है, मकान व शौच सुविधाओं, आदि से लोग वंचित हैं।

III
वर्तमान तथ्यों पर दृष्टिपात (नजरसानी)

मौजूदा तौर पर, हम एक ऐसी दुनिया में रह रहे हैं जहाँ देश अन्तरनिर्भर हो गये हैं, जहाँ एक देश की सुरक्षा सीमाएँ लगने वाले पड़ौसी देशों की सुरक्षा पर निर्भर है, जहाँ तथाकथित सम्प्रभुतासम्पन्न एवं अन्तरनिर्भर देश का विकास अपने पड़ौसियों के बीच आर्थिक वृद्धि और लोकतंत्र के फैलाव व गहनता से जुड़ा हुआ है, जहाँ सभी किस्म का महाशक्तिवाद, रूढिवाद, मतान्धता एवं संकीर्णता (धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक) गतिरोध में हैं, जहाँ पर्यावरणीय (यानि ग्लोबल वार्मिंग या मौसम परिवर्तन) एवं मानवीय चुनौतियों से मुकाबला करने के लिए गतिविधियों में भारी गति प्राप्त की है तथा इन सबसे ऊपर जहाँ मानव समाज के लिए प्रकृति और मानवता ही सब-कुछ है–यह धारणा प्रबल होती जा रही है।

जम्मू-कश्मीर समस्या के सम्बन्ध में उपरोक्त भूतकाल एवं वर्तमान के तथ्य भारत-पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों से यह माँग करते हैं कि निम्न क्रियात्मक मॉडल को अपनाया जाय जिससे जम्मू-कश्मीर समस्या के न्यायपूर्ण एवं तर्कसंगत हल को तलाशने का आधार तैयार किया जा सके–

1. तमाम किस्म के सैनिक समाधानों को रद्द किया जाए।

2. भारत और पाकिस्तान दोनों देशों के बीच युद्ध नहीं करने के समझौते पर हस्ताक्षर किये जाए।

3. शांतिपूर्ण रास्ता एवं शांतिपूर्ण हल का मार्ग अपनाया जाए।

4. प्रत्येक देश की एकता और अखण्डता बनाये रखने की प्रतिज्ञा की जाए।

5. अपनी ही प्राथमिकताओं पर अड़े ना रहा जाए–यानि जम्मू-कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है जिसे किसी भी सूरत में हस्तान्तरित नहीं किया जा सकता, या पाकिस्तान का जम्मू-कश्मीर को अपनी जीवन रेखा बनाना, आदि छोड़ा जाए।

6. जम्मू-कश्मीर में हिंसा के स्वर को कम करना एवं सभी प्रकार के मानवाधिकारों के उल्लंघन को रोकना।

7. जम्मू-कश्मीर के सम्बन्ध में सभी प्रकार के साम्प्रदायिक समाधानों को नकारना।

8. जम्मू-कश्मीर समस्या का निपटारा तीनों पक्षों (यानि, भारत, पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोग) के हितों में सामंजस्य बैठाने वाला हो तथा तीनों के लिए एक साझा भविष्य देखता हो।

IV

हमारा भविष्य क्या माँग करता है

भविष्य की ओर देखें तो हमारा भविष्य एक सशक्त, आपस में भली-भाँति गुंथा हुआ तथा उसके टिकाऊपन पर आधारित सार्क के निर्माण में निहित है, जो अपने पिछले 22 साल के अस्तित्व (1985 में गठित) से आज तक क्रियाविहीन एवं मृतप्राय: जैसा है। सार्क का क्रियाविहीन और गैर-टिकाऊ होने का मुख्य कारण जम्मू-कश्मीर पर लगातार चले आ रहे भारत-पाक के बीच विवाद और टकराहट में निहित है। जब तक इन दोनों देशों के बीच (सार्क के मुख्य खिलाड़ी) जम्मू-कश्मीर समस्या का समाधान वास्तविकता एवं न्यायपूर्ण आधार पर नहीं निकाला जाए तब तक दक्षिण एशिया (भारत और पाकिस्तान सहित) का भविष्य अनिश्चित और अन्धकारपूर्ण रहेगा।

V

जम्मू-कश्मीर के सम्बन्ध में एक वास्तविक एवं व्यवहारिक कार्यक्रम

जम्मू-कश्मीर के सम्बन्ध में एक वास्तविक एवं व्यवहारिक कार्यक्रम वही हो सकता है जो दुनिया में देशों के बीच नई उभर रही अन्तरनिर्भरता (1980 से) की मूल वास्तविकता से प्रारम्भ किया जाए, इस वास्तविकता ने देशों को अन्तरनिर्भर बना दिया है तथा इस प्रकार ये देश सभी आवश्यक सामाजिक पहलुओं के साझे हितों से चरित्रित हैं। यह मूल वास्तविकता परम्परा से चले आ रहे सिद्धान्त; कि प्रत्येक राष्ट्र राज्य सम्प्रभुसत्ता सम्पन्न है तथा इसका हमजोली पारम्परिक सिद्धान्त कि उन लोगों (जिनका इतिहास, नस्ल, भाषा, संस्कृति, भौगोलिक सीमा तथा साझा भविष्य है) के आत्मनिर्णय के अन्तर्निहित अधिकार को नकारती है। संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद् द्वारा जम्मू-कश्मीर के सम्बन्ध में सुझाए गये सभी फार्मूले राष्ट्रीय राज्य की सम्प्रभु सम्पन्नता की पुरानी अवधारणा पर आधारित है। और इसी प्रकार आत्मनिर्णय या पूर्ण आजादी प्राप्त करने वाले सभी सिद्धान्तों पर आधारित हल जो कश्मीर में उठाये गये हैं, वे सभी निश्चित लोगों को आत्मनिर्णय के अधिकार की पुरानी अवधारणा से उभरे हैं।

VI

यहाँ से हमें अब जाना किधर है

उपरोक्त विश्लेषण दर्शाता है कि जम्मू-कश्मीर समस्या के वास्तविक हल का रास्ता त्रिपक्षीय–यानि, भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों के बीच–वार्ता में निहित है। जम्मू-कश्मीर समस्या का समुचित उत्तर त्रिपक्षीय हल में है–यानि, भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों द्वारा हल की तलाश करना तथा इन तीनों पक्षों का भविष्य परस्पर विकास में अन्तर्निहित है।

VII

एक वास्तविक, व्यवहारिक एवं तर्कसंगत प्रस्ताव

हमारे नजरिए से, निम्न प्रस्ताव जम्मू-कश्मीर विवाद से जुड़े तीनों पक्षों–यानि, भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों–की भावनाओं का संतोषजनक हल के लिए एक वास्तविक, व्यावहारिक और तर्कसंगत आधार प्रदान करता है।

भारत और पाकिस्तान की अपनी-अपनी राष्ट्रीय आकांक्षाओं व हितों का संतुलन जम्मू-कश्मीर के तीन महत्वपूर्ण विषयों–यानि, सुरक्षा, विदेशी मामले और मुद्रा–को संयुक्त रूप से भारत-पाक सहराज्य के संवैधानिक स्वरूप को सुपुर्द करके कायम किया जा सकता है।

भारत की तरफ वाले जम्मू-कश्मीर के लोगों की आकांक्षाओं और हितों को जम्मू-कश्मीर को स्वतंत्र संघीय राज्य बनाकर पूरा किया जा सकता है। यह संघीय राज्य सुरक्षा, विदेशी मामले और मुद्रा को छोड़कर सभी मामलों में कार्य कर सकेगा और छोड़े हुए तीनों विषय भारत-पाक सहराज्य द्वारा सम्भाले जायेंगे। संघीय राज्य की अपनी संघीय विधान सभा होगी यह विधान सभा अपने क्षेत्र में 6 जोनल विधानसभाओं द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित होगी तथा इसका कार्य पर्यावरणीय समस्याओं और मानवीय मुद्दों तथा संवैधानिक-कानूनी मसलों से सम्बन्धित होगा। इसके 6 स्वशाषी क्षेत्र–(1) लद्दाख, (2) कारगिल, (3) कश्मीर घाटी, (4) जम्मू क्षेत्र, (5) पूंछ-राजौरी तथा (6) चिनाब घाटी–होंगे।

पाकिस्तान की तरफ वाले जम्मू-कश्मीर के लोगों की क्षेत्रीय आकांक्षाओं और हितों को पाकिस्तान प्रशासित क्षेत्र में स्वतंत्र संघीय राज्य बनाकर पूरा किया जा सकता है। इसकी अपनी संघीय विधानसभा होगी जो दो क्षेत्रीय विधानसभाओं के चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित होगी तथा उनका कार्य पर्यावरणीय समस्याओं, मानवीय मुद्दों एवं संवैधानिक-कानूनी मसलों से सम्बन्धित होगा, इसके दो स्वशासित क्षेत्र पूंछ, भीम्बर, मीरपुर, आदि होंगे, यानि (1) पठवारी बोली वाला क्षेत्र, और (2) बाल्टीस्तान एवं गिलगित यानि उत्तरी क्षेत्र।

जम्मू-कश्मीर के विभिन्न क्षेत्रीय मंडलों की नस्ली, भाषाई एवं सांस्कृतिक आकांक्षाओं व राजनीतिक, आर्थिक हितों को उन्हें पूर्णतया स्वशासन तथा प्रत्येक क्षेत्रीय मंडल को एक क्षेत्रीय विधानसभा प्रदान कर समायोजित किया जा सकता है।

अंत में, भारत व पाकिस्तान दोनों वर्तमान में विभाजित जम्मू-कश्मीर के दोनों भागों को 10 वर्ष में संयुक्त भारत-पाक सहराज्य में एकबद्ध करने के लिए प्रतिबद्ध हैं।

कश्मीरी पंडितों के जातीय समुदाय को कश्मीर घाटी में पुन: बसाया जाए तथा उनको बसाने की सम्पूर्ण योजना को पंडित समुदाय की सहमति के लिए उनके सामने रखा जाए।

पश्चिमी पाकिस्तानी शरणार्थियों की 1947 से चली आ रही 60 साल पुरानी माँग को–जम्मू क्षेत्र के स्थायी निवासी की मान्यता प्रदान करके–पूरा किया जाए।

VIII

उपरोक्त प्रस्ताव के सम्बन्ध में कुछ आम सिद्धान्त

पहला सिद्धान्त यह जोर देता है कि भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों की तिकड़ी की एक ही जड़ें हैं, उनका भूतकाल साझा रहा है, वर्तमान में एक जैसी समस्याओं से दो-चार हैं तथा इनका भविष्य भी साझा है।

द्वितीय, यह मानता है कि भारत व पाकिस्तान दोनों को सभी मुख्य वैश्विक समस्याओं, जम्मू-कश्मीर सहित–सर्वोच्च वैश्विक ज्वलंत समस्या पर एक साझे भविष्य का नजरिया अपनाना चाहिए।

तृतीय, इसका कहना है कि भारत व पाकिस्तान दोनों को सभी महाशक्तियों, मुख्यतया अमेरिका के साथ सभी तरह के राजनीतिक गठजोड़ों से अपने आपको अलग कर लेना चाहिए।

चतुर्थ, इसके मुताबिक भारत व पाकिस्तान दोनों की सरकारें अपने-अपने यहाँ उच्चतम विधायी संस्थाओं से ताजा जनादेश प्राप्त करें कि जम्मू-कश्मीर के दोनों विभाजित भागों के सम्बन्ध में वैदेशिक एवं सुरक्षा की नीतियों के मामले में उनकी अपनी-अपनी विदेश एवं सुरक्षा नीतियों में सामंजस्य बैठायें।

पंचम्, यह प्रस्तावित करता है कि जम्मू-कश्मीर के सम्बन्ध में भारत-पाक का पहला संयुक्त कदम युद्ध-वर्जन संधि पर हस्ताक्षर करने का होना चाहिए, साथ ही इससे जुड़े हुए लक्ष्य के बारे में यह घोषणा भी करनी चाहिए कि 6 महीने के अन्दर-अन्दर दोनों तरफ सभी प्रकार के परमाणु हथियारों के सम्पूर्ण जखीरे को नष्ट करने के काम को भी सम्पन्न कर लिया जाएगा।

छठा, इसका मानना है कि जम्मू-कश्मीर के दोनों हिस्सों (यानि, एक भारतीय संघ के अन्दर तथा दूसरा पाकिस्तानी सीमाओं के अन्दर) की सीमाएं खुली रहेंगी, जिससे लोगों एवं माल का दोनों तरफ आना-जाना मुक्त रहेगा, निरन्तर परस्पर सम्पर्क बनाया रखा जाए तथा निर्धारित समय के अन्दर सम्बन्धित आपसी समस्याओं के सम्बन्ध में संयुक्त सम्मेलन किये जाए।

IX

उपरोक्त प्रस्तावों का व्यापक विस्तार तथा चहुँमुखी लाभ

उपरोक्त सूत्र से तीनों सम्बन्धित पक्षकारों के हित तो साधे जाते ही हैं परन्तु उससे भी आगे इन तीनों पक्षकारों के साथ ही साथ सम्पूर्ण विश्व समुदाय को भी अन्य बहुत से तरीकों से लाभ मिल सकता है।

यह फार्मूला विश्व समुदाय के अनुकूल है क्योंकि इससे अत्यधिक खतरनाक वैश्विक ज्वलंत समस्याओं में से एक समस्या समाप्त हो जाती है।

यह सूत्र दक्षिण एशिया समुदाय के लिए लाभदायक है क्योंकि इससे साझा बाजार के विकास के रास्ते से बाधा हट जायेगी।

यह फार्मूला भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लागों की और आगे सेवा करता है क्योंकि आर्थिक विकास में ये तीनों समान साझेदार बनते हैं जिसमें भारत और पाकिस्तान समान वित्तीय सहयोग प्रदान करते हैं जबकि जम्मू-कश्मीर राज्य का अंशदान उनके प्राकृतिक संसाधनों के रूप में रहेगा। जम्मू-कश्मीर के लोगों को दो देशों के

नागरिक बनने तथा व्यापार की सुविधाएं प्राप्त करने के रूप में भी अतिरिक्त लाभ मिलेगा।

कुल मिलाकर, भारत-पाक सहराज्य एक सामाजिक मॉडल का प्रतिनिधित्व करता है जो भारत, पाकिस्तान ओर जम्मू-कश्मीर के लोगों का साझा भविष्य सुनिश्चित करता है, जम्मू-कश्मीर समस्या को त्रिपक्षीय समस्या के रूप में लेता है, भारत और पाकिस्तान के बीच भाईचारा बनाता है तथा उनके राष्ट्रीय हितों में सामंजस्य बैठता है, जम्मू-कश्मीर के लोगों के मसलों का भारत व पाकिस्तान के लोगों के मसलों के बीच संतुलन कायम करने, जम्मू-कश्मीर की नस्ली-क्षेत्रीय पहचानों की इच्छाओं और हितों का उचित ध्यान रखना, भारत, पाकिस्तान और जेके के लोगों का नजदीक व साथ लाने का प्रयास करना, सार्क की एकता को मजबूत करना तथा दुनिया में शान्ति एवं स्थायित्व को सुनिश्चित करता है। वैश्विक दिशा वाले विकास मॉडल का यह एक नया प्रयोग होगा, जो यह दिखायेगा कि किस प्रकार भिन्न-भिन्न राष्ट्रों के अलग-अलग राष्ट्रीय हितों में कैसे सामंजस्य बैठा सकता है तथा भिन्न-भिन्न नस्लों की अलग-अलग आकांक्षाओं व मसलों के बीच समन्वय बैठा सकता है।

X

भारत–पाक शांति प्रक्रिया में मुख्य बाधा

वर्तमान में भारत-पाक शांति प्रक्रिया में मुख्य बाधाओं में पहली बाधा, भविष्य के किसी भी हल में अमेरिका महाशक्ति के हितों को समायोजित करने में निहित है, तथा दूसरी बाधा भारत और पाकिस्तान की माँगों को समायोजित करने में निहित है ताकि उनके अपने-अपने राष्ट्रीय वोट-बैंक (मतदातागण) संतुष्ट हो सकें।

XI

जम्मू–कश्मीर से सम्बन्धित पहला संयुक्त भारत–पाक एजेण्डा

1. जम्मू-कश्मीर पर पहली सरकारी भारत-पाक द्विपक्षीय बैठक को जम्मू-कश्मीर सीमा के दोनों तरफ के मानवाधिकार उल्लंघनों के बिन्दुओं पर सर्वोच्च ध्यान दिया जाना चाहिए। यहाँ, भारत और पाकिस्तान की प्रत्येक सरकार को अपने-अपने विशेष मानवाधिकार आयोग गठित करने चाहिए ताकि सम्बन्धित पीड़ितों को न्याय मिल सके। सभी मानवाधिकार संगठनों से दिल खोलकर सहयोग प्राप्त करने के गम्भीर प्रयास करने चाहिए, विशेष तौर पर कश्मीर घाटी के कानूनविदों द्वारा बनाए गए मानवाधिकार संगठनों से सहयोग लिया जाए। खाड़कुओं द्वारा मानव अधिकारों के उल्लंघन के सम्बन्ध में क्षतिपूर्ति सम्बन्धित सरकारों द्वारा अदा की जाए, जिनके क्षेत्र में मानवाधिकारों का उल्लंघन हुआ है। दोनों सरकारें मानवाधिकारों के विरुद्ध बनाये गये सभी कानूनों को निरस्त करने का वादा करें, जिन्होंने जम्मू-कश्मीर के दोनों भागों में सेना को विशेष शक्तियां प्रदान की हुई हैं।

2. दोनों सरकारें संयुक्त रूप से सभी खाड़कू ग्रुपों के संयुक्त नेतृत्व को बातचीत के लिए आमंत्रित करें तथा उनको आश्वस्त करें कि उनके पुनर्वास, भविष्य के जीवन तथा समाज में सम्मानित स्थान दिये जाने की वे पूर्ण जिम्मेदारी लेते हैं।

3. जम्मू-कश्मीर के दोनों भागों में पूर्ण असैन्यीकरण किया जाना चाहिए। सभी प्रकार के सैन्य बलों को या तो सीमाओं पर तैनात किया जाए अथवा सीमा के नजदीक बैरकों में भेजा जाए।

4. लोगों का संवैधानिक सशक्तिकरण करना प्रशासनिक व्यवस्था का बुनियादी सिद्धान्त होना चाहिए। यहाँ, लोगों के उस मुख्य भाग–जिन पर सबसे पहले और तुरन्त ध्यान दिया जाना चाहिए, वे निम्न हैं–

(क) संसद, विधान सभा तथा प्रशासन, इसके साथ-साथ संगठित बड़े उद्योगों की नौकरियों में महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण देकर महिला सशक्तिकरण किया जाए। धीरे-धीरे यह सिद्धान्त एक नियम बन जाना चाहिए जो सभी सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में लागू हो।

(ख) संगठित क्षेत्र में, सभी किस्म के बड़े उद्योगों, संस्थाओं, परियोजनाओं एवं फैक्ट्रियों के प्रबंध करने वाले बोर्ड में एक तिहाई प्रतिनिधित्व मजदूरों को दिया जाए। ये एक तिहाई प्रतिनिधि मजदूरों के संगठनों के एकल मजदूर फ्रंट द्वारा चुनकर भेजे जाए। छोटे और मध्यम उद्योगों में सम्बन्धित मजदूरों से चुने गये प्रतिनिधियों का मंच प्रत्येक सम्बन्धित प्रबन्धमण्डल में सलाहकार बोर्ड की हैसियत रखेगा।

(ग) फुटकर क्षेत्र में, लघु स्तर के निजी व्यापार में लगे सभी मजदूरों को सभी जगह (यानि, शहर, कस्बे व ग्रामीण इलाकों में) युनियनों में संगठित किया जाना चाहिए और उन्हें कम ब्याज पर ऋण दिया जाए, मुक्त बाजार की सभी तरह की सुविधाएं मुहैया करवाई जाए, एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिए मुफ्त वाहन (ट्रालर) उपलब्ध करवाये जाएं या बड़े शहरों के बाजारों में किराया मुक्त छोटी दुकानें मुहैया करवाई जाएं।

(घ) ग्रामीण क्षेत्र में, समस्त किसानों–चाहे वे धनी किसान हों या भूमिहीन किसान हों–को राज्य की मूल नीति के रूप में सहकारी खेती के आधार पर संगठित किया जाए। ऐसी प्रत्येक सहकारी समिति को अपना बाजार तन्त्र विकसित करने के लिए आवश्यक सरकारी सहायता मुहैया करवाई जाए, जरूरी कृषि निवेश सामग्री सस्ती दरों पर उपलब्ध करवाई जाए तथा इसकी ऋण व्यवस्था सहकारी ऋण एजेंसियों से ऋण प्राप्त कर निर्मित की जाए।

नेचर-ह्युमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट के सम्पादक आर पी सराफ द्वारा तैयार किया गया
email: saraf_rprediffmail.com
Ward No. 4, Samba, J & K

* * * * *

सेवामें,

माननीय महासचिव
संयुक्त राष्ट्र संघ
न्यूयार्क

प्रिय श्रीमान्,

ग्लोबल वार्मिंग या जलवायु परिवर्तन पर बाली (इंडोनेशिया) में संयुक्त राष्ट्र विश्व सम्मेलन-2007 के संबंध में संलग्न अपील आपके अनुग्रहपूर्वक अध्ययन के लिए भेजी गई है। इस अपील का प्रमुख विचार जोर देता है कि मानव समुदाय को इसके इतिहास में जलवायु परिवर्तन की अत्यधिक घातक जीवन या मौत की चुनौती से सामना करना पड़ रहा है। हमारे विचार से इस संकट का बुनियादी कारण विद्यमान गैर-न्यायिक और अतर्कसंगत कारपोरेट सामाजिक व्यवस्था में अन्तरनिहित है, जबकि तात्कालिक कारण

इसकी पर्यावरण-विरोधी एवं मानव-विरोधी कारपोरेट नीतियों में निहित है, साथ ही इसका समाजशास्त्रीय कारण एडम स्मिथ के अतर्कसंगत आर्थिक सिद्धान्त–कि ''मनुष्य स्वभाव से स्वार्थी है''–में मौजूद है, यह प्रस्ताव मनुष्य के जैव-सामाजिक चरित्र की वास्तविकता के उलट है। इस संकट का एक वास्तविक उत्तर हमारे विचार से केवल प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम (एजेण्डे) से ही प्राप्त किया जा सकता है। मान्यवर महोदय से निवेदन है कि कृपा करके संलग्न अपील प्रत्येक देश के माननीय सरकार प्रमुख को उनके अध्ययन और आवश्यक व्यवस्था के लिए उपलब्ध करवाई जाए।

अत्यधिक सम्मान और शुभकामनाओं के साथ एवं प्रत्याशा में आपको धन्यवाद!
कृपया पावती भेजें।

आपका भवदीय
आर.पी. सर्राफ
सम्पादक
नेचर-ह्यूमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट
Email:saraf_rp@rediffmail.com

* * * * *

वैश्विक उष्माकरण या मौसम परिवर्तन की चुनौती को प्रत्युत्तर देने के प्रश्न पर राष्ट्रीय सरकारों के राष्ट्राध्यक्षों को संयुक्त राष्ट्र विश्व सम्मेलन-2007 में यू एन के महासचिव के जरिए प्रस्तुत की गई अपील

दीवार पर लिखी इबारत बहुत साफ है
'जियो या मरो'
जो तुम्हें पसन्द है उसका चयन करो
हकीकत किसी तीसरे चयन के लिए कोई गुंजाइश नहीं छोड़ती
राष्ट्रीय सरकारों के पिछले 35 वर्ष (1972-2007) का व्यवहार तो दूसरे चयन की ओर ले गया है

वर्तमान बाली(इंडोनेशिया)सम्मेलन हमें अंतिम मौका प्रदान कर रहा है
मेहरबानी करके इस अवसर को हाथ से न जाने दिया जाए तथा
कोशिश की जाए कि यह सम्मेलन हमारे भविष्य को
सुरक्षित रखने में एक मोड़ साबित हो

हमारे ग्रह पृथ्वी और इसके जैव-जीवन को बचाने की
कुछ संभावना अभी भी मौजूद है
बशर्ते कि मानव समुदाय तत्काल एक वास्तविक एवं प्रासंगिक प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम (एजेण्डे) को अपनाए

1. वैश्विक उष्माकरण या मौसम परिवर्तन की एक घातक चुनौती हमारे ग्रह पृथ्वी पर मंडरा रही है

यह अपील ऐसे समय में आपको सम्बोधित की जा रही है जब इस पृथ्वी पर मानव समुदाय सहित अन्य जैव-घटनाक्रमों को मानव अस्तित्व के सम्पूर्ण इतिहास में वैश्विक उष्माकरण या मौसम परिवर्तन की सबसे गंभीर चुनौती से मुकाबला है। मोटे तौर पर, यह दो आयामी संकट है, यानि एक तरफ सामान्यतया पर्यावरणीय गिरावट का संकट एवं खास करके इसके प्रत्येक घटक का संकट होना और दूसरी तरफ आम तौर पर वर्तमान समाज (जो एक 'स्वतंत्र और खुला जनवाद' कहलाता है और अपने दो शताब्दियों से अधिक पुराने सिद्धान्त और व्यवहार के साथ चल रहा है) के मनुष्यत्व के गुणों से वंचित होने (अमानवीयकरण) का संकट और इसके प्रत्येक सामाजिक पहलू यानि समाजशास्त्रीय या वैचारिक या सैद्धान्तिक दृष्टि या आधारभूत नजरिया, लोगों का विश्वास और प्रेरणा, मानवीय प्रजनन प्रक्रिया या मानव जनसंख्या की समस्या, मानवीय लिंग संबंधों और पुरुष व स्त्री के बीच अनुपात, इसके अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय और स्थानीय पहलुओं के अन्तर्गत राजनीतिक प्रदर्शन और आर्थिक उन्नति और संस्कृति के सभी घटकों, यानि शिक्षा, विज्ञान और तकनीकी, भाषा, कला (संगीत, नृत्य, अभिनय, स्थापत्यकला, मूर्तिकला, रंगसाजी, दस्तकारी, इत्यादि), व्यवहार, बातचीत का तरीका, पहनावा, इत्यादि के अमानवीयकरण का संकट है।

यह चुनौती इतनी गंभीर और भयानक है कि यदि मानव जाति ने कम से कम संभव समय में इसको हल नहीं किया तो यह चुनौती पृथ्वी पर मौजूद समस्त जैव-प्रक्रिया को उथल-पुथल कर देगी।

मौसम परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र के अन्तरसरकारी पैनल (यू एन आई पी सी सी) की हालिया मिटिंग (12-17 नवम्बर, 2007) ने सख्त चेतावनी प्रसारित की है कि वैश्विक उष्माकरण या मौसम परिवर्तन की चुनौती के गंभीर प्रभावों को उलटने के लिए विश्व सरकारों के पास अब कुछ थोड़े से वर्ष ही बचे हैं।

अपने उद्भव के समय से ही मनुष्य समुदाय को अनगिनत संकटों से वास्ता पड़ा है। और यह अपनी तर्कसंगतता, प्रवीणता तथा सहज बुद्धि के जरिए उन संकटों का मुकाबला करने में हमेशा सफल रहा है।

यह सर्वविदित है कि प्रत्येक संकट एक ओर जहाँ खतरा प्रस्तुत करता है वहीं दूसरी तरफ वह एक अवसर भी प्रदान करता है। मनुष्य समुदाय ने हमेशा संकट को अवसर के रूप में लेकर खतरे का मुकाबला किया है और इस प्रकार सभी संकटों से उभरता गया है।

मनुष्य समुदाय का पहले के सभी संकटों से उभरने के योग्य होने तथा प्रत्येक संकट को अवसर में बदलने का कारण इस तथ्य में निहित है कि मनुष्य समुदाय ने हमेशा उन संकटों का प्रबन्ध करने के लिए इस वैज्ञानिक फारमूले का अनुकरण किया है कि सबसे पहले प्रत्येक संकट के संबंधित चरित्र एवं कारण का विश्लेषण किया जाए। प्रत्येक समस्या के सम्बन्ध में मानव का सम्पूर्ण ऐतिहासिक अनुभव यह दर्शाता है कि केवल किसी समस्या की प्रकृति और कारण को चिह्नित करने के बाद ही कोई उस समस्या को उचित तौर पर हल कर सकता है।

(अ) वैश्विक उष्माकरण या मौसम परिवर्तन (पर्यावरणीय ह्रास) का मुद्दा

वैश्विक उष्माकरण या मौसम परिवर्तन का मुद्दा यह दर्शाता है कि हमारा ग्लोब गर्म होता जा रहा है और हमारा मौसम गर्म होने की तरफ परिवर्तित होता जा रहा है। यह हमारे मौसम में तेजी से बदलाव आने के कारण हो रहा है। मौसम का अर्थ है कि किसी स्थान या शरीर के सन्दर्भ में तापक्रम की स्थिति (यानि गर्म या ठण्डा)। वायु एक तरल है जिसकी हम श्वांस लेते हैं। यह गैसों, जैसे, आक्सीजन, नाइट्रोजन, आर्गन, हाइड्रोजन, कार्बन-डाई-आक्साइड, मिथेन, नाइट्रो-ऑक्साइड आदि का मिश्रण है। जब इन गैसों के संयोगी अनुपात में परिवर्तन आता है। यदि मौसम किसी एक निश्चित बिन्दु से परे गर्म या ठण्डा हो जाता है तो उस हालत में कोई जैव-जीवन अस्तित्व में नहीं रह सकता। अब ग्रीन हाउस गैसों (यानि, कार्बन-डाई-आक्साइड, मिथेन एवं नाइट्रो-आक्साइड इत्यादि) में वृद्धि के कारण हमारा मौसम निरन्तर गर्म होता जा रहा है और हम तेजी से ऐसी स्थिति की ओर बढ़ रहे हैं जहाँ हमारे ग्रह पर किसी भी प्रकार के जैव-जीवन का अस्तित्व में रहना असम्भव हो जायेगा।

हमारे ग्रह पृथ्वी पर मानव सहित सम्पूर्ण जैव-जीवन के लिए यह मरणान्तक चुनौती अब मानव समुदाय के सामने मुँह बाए खड़ी है। वैश्विक उष्माकरण पर यू एन आई पी सी सी द्वारा 4 रिपोर्टें प्रस्तुत की गई हैं जिनमें यद्यपि विश्व सरकारों की ऊर्जा उत्पादक तकनीक को बुनियादी कारण के तौर पर चिह्नित किया गया है और कहा है कि मानव समुदाय अपने आपको एक इकाई के रूप में एकबद्ध करके या तो इस चुनौती को चकनाचूर कर खुद को एवं अन्य जैव-घटनाक्रम को बचा लेगा या अपने आपको विभाजित रखते हुए तथा आधे-अधूरे मन से प्रयास करते हुए अन्य जैव-जीवन के साथ-साथ अपने आपको भी हमेशा के लिए नष्ट कर लेगा। इसके अलावा और कोई रास्ता नहीं है।

(i) मौसम परिवर्तन की यह घातक चुनौती पिछले केवल 250 वर्ष पहले से ही शुरू हुई है

यू एन आई पी सी सी रिपोर्ट बहुत साफ तौर पर यह बयान करती है कि लगभग 300 वर्ष पूर्व जबसे पूँजीवाद आया, उससे पहले पृथ्वी ग्रह प्रदूषण विहीन था। सन् 1750 से प्रदूषण की शुरूआत हुई। विशेषज्ञों की रिपोर्ट यह बताती है कि ग्रीन हाउस गैसों (कार्बन-डाई आक्साइड, मिथेन एवं नाइट्रो-ऑक्साइड) के सकेन्द्रण में बढ़ोतरी का मुख्य कारण जीवाष्म ईंधन को उपयोग में लेना तथा भूमि उपयोग के तरीकों में परिवर्तन करने में निहित है। कार्बन-डाई-आक्साइड में बढ़ोतरी जीवाष्म ईंधन उपयोग करने से हुई है तथापि मिथेन एवं नाइट्रो-ऑक्साइड का सकेन्द्रण कृषि के कारण हुआ है। विशेष तौर पर सन् 2005 में कार्बन-डाई-ऑक्साइड का सकेन्द्रण बढ़ कर 379 पी पी एम (पार्ट पर मिलियन) हो गया जबकि यह सन् 1750 में 280 पी पी एम ही था। यह पिछले 6,50,000 सालों में केवल 180 पी पी एम से 300 पी पी एम तक ही पहुँचा था अत: वर्तमान बढ़ोतरी स्वाभाविक बढ़ोतरी से कहीं अधिक है।

आई पी सी सी द्वारा अनुमानित निम्नतम स्थायीकरण स्तर के लिए वर्तमान परिदृश्य के अनुसार और हालिया विज्ञान के साथ मेल खाता हुआ दीर्घकालीन उद्देश्य हासिल करने के लिए, जहाँ अगले 10-15 सालों में गैसों का उत्सर्जन अपने उच्चतम बिन्दु पर पहुँचेगा और उसके बाद 2050 तक सन् 2000 के उत्सर्जन स्तर से 50 प्रतिशत कम के स्तर

पर लाना होगा। यह वायुमंडल में उत्सर्जन के स्तर को लगभग 450 पी पी एम CO_2 के बराबर स्थिर करेगा और इसी के अनुरूप ताप में बढ़ोतरी 2-2.4^0 सैटी. पर स्थिर कर देगा।

कुछ वैज्ञानिकों का यह विश्वास है कि औद्योगिक अवस्था के पहले के स्तर से 2^0 सैटी.वैश्विक औसत तापमान का बढ़ना वह चरम बिन्दु होगा जिसके आगे विनाशी और दुरुस्त न किये जा सकने वाले नुकसान का खतरा पैदा हो जायेगा।

पिछली शताब्दी में ग्लोब का औसत तापक्रम 0.74^0 सैटी. बढ़ा है, यह पृथ्वी के इतिहास में सबसे अधिक तथा सबसे तीव्र गति से उष्माकरण के रुख को दर्शाता है जिसे वैज्ञानिकों ने पहचाना है।

कुछ ग्रीन हाउस गैसें वायुमण्डल में 50 हजार वर्ष तक मौजूद रहेंगी।

अभी पिछले 50 सालों में ही वैज्ञानिक विशेषज्ञों ने यह महसूस करना शुरू किया कि हमारे पर्यावरण में कुछ खोट हो रहा है। इसका नतीजा यह हुआ कि दुनिया में दूरदर्शी लोगों ने यह जोर देना शुरू किया कि मानव समुदाय को टिकाऊजीवन, वृद्धि एवं विकास के नजरिए को अपनाना चाहिए।

पिछले चार दशकों में सन्निकट महाविध्वंस से बचने के लिए कार्यशील रणनीति तय करने हेतु टिकाऊ विकास पर कई उच्च स्तरीय सम्मेलन हुए हैं परन्तु आज तक ये सभी सम्मेलन शून्य ही साबित हुए हैं।

सन् 1972 (स्टाकहोम सम्मेलन) से शुरू करते हुए हेलसिंकी (1989), लन्दन (1992), रियो सम्मेलन (1992), क्योटो सम्मेलन (1997), टिकाऊ विकास पर विश्व सम्मेलन, जोहान्सर्ब (2002) हुए हैं। 2004 और 2005 में स्टाकहोम एवं मान्ट्रियल में सम्मेलन किए गये तथा 2007 की ताजा बर्लिन कान्फ्रेन्स सहित इन सभी सम्मेलनों ने कोई लाभदायक योगदान नहीं किया है।

स्पष्टतया, सत्ताधारी कारपोरेट राजनीतिज्ञों एवं व्यापारिक क्षेत्रों द्वारा उपरोक्त प्रस्तुत रणनीति ने ना तो जी एच जी एस (ग्रीन हाउस गैसों) को सीमित या कम किया है और ना ही लोगों को जागरुक किया है और ना ही संगठित किया है। इन सभी उच्च स्तरीय सम्मेलनों में लोगों को सूचना विहीन और असंगठित रख कर अमेरिका ने सम्मेलनों में लिए गये बुनियादी निर्णयों को इन्कार करके एक मुख्य अपराधी की भूमिका निभाई है तथा इन सभी उच्च स्तरीय सम्मेलनों की जड़ खोदी है और इन्हें प्रभावहीन बनाया है। इस प्रकार दुनिया भर में लोगों को भ्रमित किया है तथा मानवीय हितों को नुकसान पहुँचाया है।

उपरोक्त के आधार पर यह नतीजा निकलता है कि सत्ताधारी एवं अगुवा कारपोरेट विचारक, विशेषज्ञ, राजनीतिज्ञ, अर्थशास्त्री एवं सांस्कृतिक विशिष्ट वर्ग ने पारिस्थितिक-जैविक संकट के जीने-मरने वाले सवाल को न तो उचित प्रत्युत्तर दिया है और न ही दे सकते हैं जो कि वास्तव में पूर्व में इन्हीं की पर्यावरण विरोधी और मानव विरोधी गतिविधियों से पैदा हुआ है। इसलिए, इस ग्रह और वर्तमान जैव-जीवन की वस्तुगत आवश्यकता केवल यह है कि सभी भिन्न-भिन्न किस्मों की मानवीय और पर्यावरणीय शक्तियों को आगे आकर एक सर्वमान्य कार्यक्रम के आधार पर अपने आपको एकबद्ध करना चाहिए तथा हमारे पर्यावरण को बचाने एवं वैश्विक उष्माकरण से मुकाबला करने के लिए एक ही मंच पर लोगों को संगठित करना चाहिए।

(ii) पर्यावरण ह्रास के अन्तरनिहित कारण तथा हमारे पर्यावरण के सभी घटकों के ह्रास द्वारा इसकी अभिव्यक्ति

पर्यावरण ह्रास का मुख्य कारण ग्रीन हाउस गैसों द्वारा वातावरण को प्रदूषित करने में निहित है। ये गैसें मौजूदा रसासन आधारित थर्मल पावर चलित पूँजीवादी तकनीक (निर्माणी, कृषि और सूचना उद्योग, आदि से संबंधित) से पैदा हुई हैं। अब यह ह्रास उन सभी घटकों जिनसे हमारा यह पर्यावरण बना है–जैसे, हवा, पानी, जमीन, जैव-विविधता (जंगल सहित)–के ह्रास में प्रकट हो रहा है। संक्षिप्त में जिसका विवरण निम्न है।

वायु

(अ) आज हमारे ग्रह पर वायु प्रदूषण जैव-जीवन के लिए मुख्य चुनौती बना हुआ है। यह एक बड़ा हत्यारा बन गया है जिससे प्रतिवर्ष 40 लाख लोग मर रहे हैं।

(ब) कार्बन और अन्य ग्रीन हाऊस गैसों (जैसे कार्बनडाइ-आक्साइड, मिथेन, क्लोरोफ्लोरोकार्बन, इत्यादि) का पिछले 3 दशक के दौरान उत्सर्जन तीन गुना बढ़ चुका है जो ग्लोबल वार्मिंग (वैश्विक उष्माकरण) और जलवायु परिवर्तन करके समस्त जैव-जीवन के लिए गंभीर चुनौती पैदा कर रहा है।

(स) अमेरिका अकेला, एक तिहाई गीन हाऊस गैसें उत्सर्जित करता है जो विश्व का सबसे मुख्य प्रदूषक का स्थान लिए हुए है।

जल

(अ) विश्व की 50 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या को अब रोजाना के लिए आवश्यक शुद्ध जल की भारी कमी का सामना है।

(ब) विश्व की आद्रभूमि के 60 प्रतिशत से अधिक भाग का नाश हो चुका है और साफ जल की 10000 प्रजातियों का एक चौथाई भाग विलुप्त हो गया है।

(स) दूषित पानी से लगभग 30 लाख लोग प्रतिवर्ष मर जाते हैं।

भूमि

(अ) विश्व के आधे से अधिक जंगल नष्ट हो चुके हैं। जंगल नष्ट होने की दर अब 90,000 वर्ग किलोमीटर प्रतिवर्ष है। ये अगले 25 वर्षों में विलुप्त हो सकते हैं।

(ब) अब विश्व की कृषि भूमि के दो तिहाई भाग की उपजाऊ भूमि क्षयग्रस्त हो गई है।

(स) विश्व के आधे से अधिक घास के मैदान साफ हो गये। भारत को अब एक तिहाई चारे की कमी पड़ रही है।

वन्य जीवन

(अ) लगभग 1000 प्रजातियां विलुप्त हो गई है और 12000 प्रजातियां खतरे की सूची में है।

(ब) विश्व के लगभग 75 प्रतिशत समुद्री मछली पकड़ने के क्षेत्रों में अत्यधिक मछलियाँ पकड़ ली गई है तथा पूर्ण उपयोग में ले ली गई है। उत्तरी अमेरिका में मछली की 10 प्रजातियाँ 1990 में ही विलुप्त हो गई थी।

(स) चिड़ियों की जानी पहचानी 9946 प्रजातियों में से 70 प्रतिशत संख्या में घट गई हैं।

लोग

(अ) सन् 1930 के बाद लगभग 400 करोड़ लोग विश्व में और शामिल हो गये हैं। सन् 1930 में विश्व की आबादी 200 करोड़ थी जो बढ़कर सन् 2000 में 600 करोड़ के ऊपर पहुँच गई।

(ब) अगले 10 सालों में विश्व में 100 करोड़ और अधिक लोग शामिल हो जायेंगे।

(iii) पृथ्वी के आकाश मण्डलों पर प्रभाव

आगे, पर्यावरणीय गिरावट का प्रभाव हमारे ग्रह पृथ्वी के 5 मुख्य आकाश मण्डलों पर भी पड़ा है। ये है -

1. जैव-मण्डल - (यानि, जंगल सहित पृथ्वी की सतह और वायुमण्डल का वह भाग जिसमें जीव-जगत रहता है और विचरण करता है।)

2. जल मण्डल - यानि, जल से आच्छादित पृथ्वी की सतह का भाग।

3. स्थल मण्डल : यानि, पृथ्वी की परत और पृथ्वी के ऊपरी आवरण का ठोस चट्टानी भाग।

4. भू-मण्डल - यानि इसकी ऊपरी सतह को छोड़कर पृथ्वी की सम्पूर्ण भौगोलिक संरचना।

5. वायुमण्डल - यानि, पृथ्वी के चारों तरफ गैसों का लिफाफा जो नीचे लिखी 5 परतों से बना हुआ है।

(अ) ट्रोपोस्फेयर (क्षोभमंडल), यानि भूमध्य रेखा पर लगभग 18 किलोमीटर (11 मील) तथा ध्रुवों पर लगभग 6 किलोमीटर (4 मील) मोटी सबसे नीचे की वायुमण्डलीय परत जिसमें आम तौर पर हवा का ताप लगभग 6.50 सेल्सियस प्रति किलोमीटर ऊंचाई के साथ घटता जाता है।

(ब) स्ट्राटोस्फेयर (समतामण्डल), यानि क्षोभमंडल और मध्यमंडल के बीच स्थित वायुमण्डलीय परत।

ओजोन मण्डल, यानि, समतापमण्डल का वह क्षेत्र जहाँ ओजन का सकेन्द्रण अधिकतम (गहन) है। यहाँ ग्रीन हाउस गैसों द्वारा अवशोषित पराबैंगनी किरणों द्वारा ओजोन परत के एक तिहाई से ज्यादा भाग को नष्ट कर दिया गया है।

(स) मध्यमण्डल, यानि समतापमण्डल और तापीय मण्डल के बीच की वायुमण्डलीय परत।

(द) थर्मोस्फेयर (तापीय मण्डल), यानि मध्यमण्डल और बाह्यमण्डल के बीच की वायुमण्डलीय परत।

(य) ब्राह्यमण्डल, यानि पृथ्वी के वायुमण्डल की ब्राह्यतम परत। यह पृथ्वी की सतह से लगभग 400 किलोमीटर ऊपर तक फैली है।

चारों मण्डल (यानि, जैव मण्डल, जल मण्डल, स्थलमण्डल, और वायुमण्डल) सीधे प्रभावित होते हैं जबकि पांचवा मण्डल (यानि, भूमण्डल) जो द्रव्यमान और ऊर्जा

(जिसकी परिणति भूकम्पों की आवृति में होती है) की गति के सम्बन्ध में अन्य चार मण्डलों के साथ अन्तक्रिया के माध्यम से प्रभावित होता है।

पिछले कुछ वर्ष दुनिया भर में प्राकृतिक विपदाओं का एक रिकार्ड प्रस्तुत करते हैं। क्रिसमस सप्ताह के प्रथम दिन सुनामी ने सुमात्रा, भारत और श्रीलंका इत्यादि के तटीय इलाकों से टकराकर उन्हें तबाह किया, जापान, ताइवान, चीन, और दक्षिण पूर्वी एशिया में प्रशान्त महासागरीय प्रचण्ड तूफान, मैक्सिकों की खाड़ी में उठे महाचक्रवातों ने क्यूबा, कैरीबियन द्वीपों, मैक्सिकों और अमेरिका के तटों पर विप्लव मचाया, 4 से 6 अक्टूबर मुम्बई, ग्वाटेमाला, एल सल्वाडोर और मैक्सिको में घातक बाढ़ और किचड़ की फिसलन से हुआ नुकसान, आंध्र और तमिलनाडू में चक्रवात, हिमालय की स्थानभ्रष्टता वाली रेखा के साथ-साथ गैर मुक्त दबाव के चलते 8 अक्टूबर को कश्मीर में मुज्जफराबाद के नजदीक आया भूकम्प, इन सभी में अति बर्बादी हुई, इनसे लाखों लोग मारे गये और इनके रास्ते में जो भी चीज आई इसे नष्ट कर दिया। यह प्रकृति का तीव्र प्रकोप है। इसी समय दौरान मनुष्य अपनी स्थानीय बर्बादियों में भी उलझा रहा है, जैसे अक्टूबर 2005 में बाली विस्फोटों का दूसरा दौर और 7 जुलाई के लंदन विस्फोट।

यह इतना ही सब कुछ नहीं है। पहले से मौजूद विपदायें, जैसे, कैन्सर, एच आई वी/एडस, इत्यादि के अलावा दुनिया में नई प्रदूषण आधारित बिमारियों के और जुड़ने का खतरा पैदा हो गया है। इन शक्तिशाली महान विपत्तियों को रोकने के लिए केवल अच्छे की आशा करना काफी नहीं है। यह एक और अलग बर्बादी है जो हमारे सामने आ रही है।

(ब) आम तौर पर वर्तमान मानव समाज और खास तौर पर इसके प्रत्येक सामाजिक पहलू में अमानवीयकरण की चुनौती

यह घातक पर्यावरणीय-जैविक चुनौती का अन्य पक्ष है जिससे आज मानव समाज सामना कर रहा है। यह (यानि, सामान्यतया मानव समाज का और खास तौर पर इसके प्रत्येक सामाजिक पहलू का अमानवीयकरण) इतना खतरनाक है कि अगर इसके संभवतम संक्षिप्त समायावधि के अन्दर-अन्दर सुधारा नहीं गया तो यह पर्यावरणीय चुनौती को और अधिक तीव्र कर देगा जो इस पृथ्वी पर मानव सहित सभी जैव-जीवन का अपरिहार्य तौर पर संहार कर देगी।

स्पष्टतया, उपर्युक्त पैरा तीन खोजी सवालों को उठाता है। पहला सवाल है : मनुष्यत्व के गुणों से वंचित होने (अमानवीयकरण) का क्या अर्थ है। दूसरा सवाल है : वे कौनसे तथ्य हैं जो वर्तमान मानव समाज में अमानवीयकरण के द्योतक है और तीसरा सवाल है कि कैसे अमानवीयकरण की प्रक्रिया उग्र पर्यावरणीय संकट को और अधिक तीव्र कर देगी जिसका परिणाम विद्यमान मानव समाज के विनाश में निकलेगा।

पहले सवाल के सम्बन्ध में, अमानवीकरण किसी घटनाक्रम या प्रक्रिया में विद्यमान मानवीय गुणों, मूल्यों या चरित्र से वंचित होने या उलट जाने का अर्थ ही है। यहाँ मुख्य पहलू यह है कि मनुष्य अपने मानसिक सोच और व्यवहारिक-गतिविधि में एक तर्कसंगत प्राणी है जिसने निश्चित जमीनी वास्तविकता के अनुरूप सही और गलत में भेद करने की तकनीक को अख्तियार करके अपनी तर्कसंगतता को विकसित किया है। निस्संदेह, लम्बे ऐतिहासिक मानवीय कूच के दौरान बहुत कमियाँ और यहाँ तक कि भारी गलतियाँ

हुई हैं परन्तु गंभीर भटकावों के बावजूद मनुष्य हमेशा सही रास्ते की तरफ लौटता रहा है। हम आशा करते हैं कि मनुष्य इस वक्त भी सही प्रक्रिया को दोहरायेगा।

अत: वर्तमान मानव समाज या विश्व के सभी देशों में अब चल रहे तथाकथित 'स्वतंत्र और खुले जनवाद' में अमानवीयकरण के मुख्य पहलू क्या हैं।

प्रथमत:, इसका मुख्य लक्षण यह है कि जहाँ इसके संस्थापक या निर्माणकर्ता, यानि पश्चिमी पूँजीवादी वर्ग इसे स्वतंत्र और खुले जनवाद की संज्ञा देता है परन्तु वास्तव में और व्यवहार में यह हमारे ग्रह पर विद्यमान अभी तक की सभी सभ्यताओं में से सबसे अधिक क्रूर और जंगली सामाजिक व्यवस्था है।

यह वही सभ्यता है जिसने नागासाकी और हिरोशिमा (जापान) में दुनिया की सम्पूर्ण आबादी को आंतकित करने के लिए आम आदमी के खिलाफ अमानवीय परमाणु बम्ब का पहली बार प्रयोग करके हजारों लोगों को मौत के घाट उतार दिया एवं लाखों लोगों को जीवन भर के लिए अपंग व अशक्त बना दिया। यह घटना 1945 में तब हुई जब जापानी पक्ष आत्मसमर्पण के साफ संकेत दे रहा था और अमेरिका दुनिया में एकमात्र परमाणु ताकत था और कॉरपोरेट पूँजीवादी देशों में सबसे अधिक आर्थिक तौर पर विकसित और सैनिक तौर पर ताकवर देशों में शामिल था। अब पाँच महाशक्तियों (चीन, रूस, ब्रिटेन और फ्रांस के साथ सबसे ऊपर अमेरिका) के पास इतनी बड़ी संख्या में परमाणु हथियारों का जखीरा है जो हमारे ग्रह पृथ्वी को टुकड़े टुकड़े कर सकता है।

यहाँ एक स्वाभाविक सवाल पैदा होता है कि एक स्वतंत्र और खुले जनवाद को इतने बड़े परमाणु हथियारों के भंडार के निर्माण की आवश्यकता क्यों पड़ी। इसका उचित कारण है कि हमारी वर्तमान व्यवस्था कॉरपोरेट पूंजीवादी वर्ग द्वारा स्वतन्त्र एवं खुले जनवाद के तरीके से चलाई जाती है जो वास्तव में एक अमानवीय, अन्यायिक और अनुचित व्यवस्था है जिसमें कमजोर पर ताकतवर तथा गरीब पर अमीर हावी रहते हैं। इस व्यवस्था में पैसा, ताकत और विशेषाधिकार, राष्ट्र स्तर से लेकर विश्व स्तर तक सच्चाई और न्याय के स्वीकृत मानदण्ड हैं।

यह तथ्य प्रथमत: सभी विश्व संस्थानों के सिद्धान्त और कार्यशैली से स्पष्ट है। उदाहरण के लिए संयुक्तराष्ट्र और इसकी एजेन्सियां 1945 के चार्टर द्वारा संचालित होती है जो कि सैनिक तौर पर विश्व के सर्वोच्च शक्तिशाली 5 राज्यों–यानि अमेरिका, चीन, ब्रिटेन, फ्रांस और रूस को वीटों अधिकार एवं चुनिंदा सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता देता है। स्पष्टत: इस प्रकार के विशेषाधिकार पूर्णतया भेदभावपूर्ण और अन्याय पर आधारित है क्योंकि यह शेष 180 संयुक्त राष्ट्र सदस्यों की भूमिका को कम करता है। नैतिक और कानूनी तौर पर यह विश्व व्यापी रूप से स्वीकृत राजनीतिक समानता के सिद्धान्त–यानि एक इकाई एक वोट–का सार्वभौमिक मानक और प्रत्येक राष्ट्र के मानवाधिकार को नकारता है। जब संयुक्त राष्ट्र विभिन्न राज्यों में मानवधिकारों के उल्लघंन के आधार पर हस्तक्षेप करता है तो वह स्वयं तर्कसंगत आधार पर पुनर्संरचना क्यों नहीं करता जो उसे नये युग के मुताबिक प्रासंगिक बनाता है।

द्वितीयत: इसी तरह की अतार्किक एवं अलोकतांत्रिक शैली 2 अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों–आई एम एफ और विश्व बैंक में प्रचलित है जहाँ आर्थिक महत्व ही प्रत्येक सदस्य की मतशक्ति तय करता है। इस प्रकार ये संस्थाएं निश्चित तौर पर वित्तीय रूप से

विकसित देशों खासकर अमेरिका जो कुल मतशक्ति का 26 प्रतिशत मताधिकार रखता है, द्वारा संचालित है।

तृतीयत: नई रचित सी टी बी टी व्यवस्था 5 बड़ी परमाणु शक्तियों को परमाणु शस्त्रों पर स्वाभाविक एकाधिकार प्रदान करती है। इस प्रकार यह उन्हें विश्व का अजेय अधिपति बनाती है।

चतुर्थ, कुछ विकसित देश, मुश्किल से विश्व जनसंख्या का 15 प्रतिशत, आज विश्व की 80 प्रतिशत भौतिक और वित्तीय संसाधनों पर नियन्त्रण रखते हैं। 130 विकासशील देशों में रहने वाले विश्व के 85 प्रतिशत लोगों के लिए 20 प्रतिशत से कम संसाधन छोड़ते हैं।

पंचम् महिलाएं विश्व जनसंख्या का आधा भाग पूरी दुनिया में लगातार गलत व्यवहार एवं बुरे बर्ताव की शिकार हो रही है।

षष्ठम, प्रत्येक देश की राष्ट्रीय परिस्थिति चल रही विश्व व्यवस्था से ज्यादा अलग नहीं है। 190 से अधिक देशों में उनको विभिन्न भौतिक स्थिति, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और सामाजिक आर्थिक हालात के बावजूद सामाजिक जीवन की गुणवत्ता में कुछ रूपान्तरण के साथ बहुत बड़ी समानता है, खासकर विकासशील देशों में। उदाहरण के लिए लगभग सभी देशों (चाहे विकसित हो या विकासशील) में राजनीतिक प्रक्रिया पर धन की शक्ति का प्रभुत्व है। विकासशील देशों में यह बाहुबल और आदिकालीन मानदण्डों को साथ लिए हुए है। आर्थिक प्रक्रिया आमतौर पर गलाकाटू प्रतियोगिता, सट्टेबाजी और कालाबाजारी से चलित है। बेईमानी के मानक हर कहीं व्यवहार के सर्वमान्य मानदण्ड बने हुए हैं।

सप्तम, लगभग हरके देश में, भारी बहुमत की तुलना में, कुछ थोड़े से लोग विशेषाधिकार रखते हैं। प्रत्येक जगह विधायक विशेष संसदीय अधिकारों के तहत आम कानूनों से स्वतंत्र हैं। विकासशील देशों में शासक ग्रुप अकसर कानून का दुरुपयोग करके दण्ड से मुक्त हो जाता है। दुनियों में कहीं भी न्यायपालिका लोगों के प्रति जवाबदेह नहीं है। उल्टे किसी भी आलोचना को चुप करने के लिए यह सर्वत्र अदालत की अवमानना कानून का विशेषाधिकार रखती है। सरकारी गोपनीयता कानून लगभग सभी देशों में विद्यमान है जो अफसरशाही को सभी मामले ढकने और लोगों पर सवार होने एवं उनके साथ दुर्व्यवहार करने का अधिकार देता है। कानून लागू करने वाली संस्थाएँ दुनिया भर में व्यापक अधिकार रखती है। तीसरी दुनियां में वे इस प्रकार व्यवहार करते है जैसे वे स्वयं ही कानून हो। हर कहीं कानून धनवान और कानून तोड़ने वालों का पक्ष लेता हैं और गरीबों एवं वंचितों के विरूद्ध पक्षपाती है।

अष्टम्, अमेरिका आज दुनिया का निर्विरोध पुलिसमैन बन गया है। अफगानिस्तान में अकेले हाथों से अमेरिका की सैनिक सफलता के बाद यह अधिक एकपक्षीय और युद्धकारी बन गया है। अब, इसने आरोपित आतंकवाद के खिलाफ बेमियादी युद्ध की घोषणा कर दी है। जबकि आतंकवाद को न तो संयुक्त राष्ट्र या अन्य किसी यू.एन. सदस्य ने अभी तक परिभाषित किया है। इसके हमले के प्रथम लक्ष्य में तथाकथित 'दुष्ट राज्य' यानि इराक, ईरान, उत्तरी कोरिया इत्यादि शामिल हैं जो संयुक्त राष्ट्र के सदस्य हैं और

जिन्हें किसी भी तर्क से आतंकवादी चरित्रित नहीं किया जा सकता। हालिया अमेरिका द्वारा घोषित आक्रमण योजना को विश्वभर में अस्वीकृति मिली है जिसमें चीन, रूस तथा यूरोपीय समुदाय शामिल हैं। परन्तु जहाँ तक अमेरिका का सवाल है वह अभी तक अपनी नई युद्ध परियोजना को रोकने के लिए तैयार नहीं है।

नवम्, घातक पारिस्थितिक-जैविक संकट के साथ अमेरिका के नेतत्व वाला विश्व कारपोरेट विकास मॉडल गम्भीर संकट में है। कारपोरेट मुनाफा गिर रहा है। बहुत सारी उच्च कारपोरेट कम्पनियां, खास करके अमेरिका में बड़ी-बड़ी धोखाधड़ियों और जालसाजियों में शामिल पाई गई है। कारपोरेट मॉडल का यह दावा कि ये कम्पनियाँ सम्पत्ति सर्जन और सम्पन्नता व उन्नति करने वाले सामाजिक संस्थान है–गलत साबित हुआ है।

दशम्, विकास प्रक्रिया के सामने अभूतपूर्व संकट है, यह मानवजाति को गम्भीर चुनौती पेश कर रही है। धनी-निर्धन के बीच बढ़ रही विभाजन अद्वितीय स्तर पर पहुँच चुका है। गरीबी और बेरोजगारी तेजी से बढ़ रही है। सैनिक बजट–जो टिकाऊ विकास का शोषक है–तेजी से बढ़ रहे हैं, जबकि सामाजिक विकास पर खर्चे घट रहे हैं। विश्व में भ्रष्टाचार, अपराध, हिंसा और आत्महत्याओं का क्षेत्र तेजी से बढ़ रहा है, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र और उनकी कार्यपालिकाओं को भी अपने दायरे में ले रही है। मानव अधिकारों की अवहेलना, अल्पसंख्यकों और अन्य कमजोर तबकों के खिलाफ भेदभाव तथा महिलाओं के ऊपर दमन लगातार बढ़ रहे हैं। नस्ली तनाव ऊंचाई पर है। भिन्न-भिन्न तरह की रूढ़ीवादी धारणाएं, नई और पुरानी दोनों, लोगों को गलत दिशा दे रही हैं और फूट डाल रही हैं।

आज हम एक ऐसी दुनियां में रह रहे हैं जहाँ बेईमान कॉरपोरेट राजनीति, कालाधन और जी हजूरी का व्यवहार सबसे अधिक फायदे के धन्धे बन गये हैं जो वर्तमान में चल रही स्वतन्त्र और खुले जनवाद तथा इसके 'कानून के राज' को चरितार्थ करने का पैमाना है।

उपर्युक्त वर्णित सभी गंभीर चुनौतियाँ और खतरनाक आशंकाएँ मानव समाज के भीतर और मानव व प्रकृति के बीच असांमजस्य को प्रतिबिम्बित करती है। आवश्यक तौर पर ये मानव समुदाय की अमानवीय अवस्था को इंगित करते हैं।

स्पष्टतया, मानव समाज की ऐसी अमानवीय अवस्था कुछ महाशक्तियों और उनके अपने-अपने सहयोगियों के नेतृत्व में जिनका भिन्न-भिन्न देशों में शासन होने की वजह से कॉरपोरेट शक्तियों को यह अवसर मिला कि उन्होंने अधिकतम धन इकट्ठा करने और सत्ता के एकाधिकार की अपनी कॉरपोरेट प्राथमिकता का अनुसरण करते हुए लोगों को सभी जरियों से कारपोरेट फूटग्रस्त कार्यक्रम में धकेल दिया है, जिससे हर कहीं माफिया झगड़े, सभ्यता के युद्ध, धार्मिक झगड़े, वंश-दुश्मनी, जाति-विवाद, नस्ली तनावों, राष्ट्रीय झगड़े, इत्यादि पैदा होते हैं।

उपर्युक्त वर्णित तथ्य प्रकृति-मानव निर्देशित लोगों के कंधों पर यह भारी दायित्व सौंपते हैं कि वे चल रहे इस संकट के घातक परिणामों की अपनी समझ को गहरा करें, इसके वास्तविक कारण को जानने की कोशिश करें तथा एक वास्तविक कार्यक्रम अपनाकर अपनी सामर्थ्य के मुताबिक जवाब देने के लिए जो कुछ कर सकते हैं वह अवश्य करें।

2. पर्यावरणीय गिरावट और सामाजिक अमानवीयकरण का बुनियादी कारण

विश्व में सभी कॉरपोरेट संस्थानों, यानि यू.एन., विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन, राष्ट्रीय राज्यों और मुख्य सामाजिक वैज्ञानिक, विद्वान और योजनाकार यह घोषणा करने में एकमत हैं कि चल रहा पर्यावरणीय-जैविक संकट मानव गतिविधि का परिणाम है। परन्तु इनमें से किसी ने भी जन गतिविधि की धारणा को परिभाषित नहीं किया है। ना ही विश्व सम्मेलनों-यानि, पर्यावरण और विकास पर 1972-स्टाकहोम विश्व सम्मेलन, 1992-रीयो यू.एन. सम्मेलन और टिकाऊ विकास पर 2002 जोहान्सबर्ग यूएन सम्मेलन-ने इस सवाल को छुआ है। जबकि टिकाऊविकास के कार्यक्रम को अख्तियार करते हुए इन सम्मेलनों में गैर-टिकाऊमानवीय तौर-तरीकों और जीवन-शैली पर केवल हल्का उल्लेख मात्र किया गया है परन्तु आज के हालात में विभिन्न प्रकार, रचना या आकृति में चल रही मानवीय व्यवस्था के विशिष्ट ढांचे को चिन्हित करने से गुरेज किया गया है। स्पष्टतया, उपर्युक्त वर्णित सभी मुख्य सामाजिक अभिनेता इस आवश्यक बिन्दु को बिल्कुल अस्पष्ट छोड़ते हुए प्रत्येक मनुष्य पर बराबर का दोष मढते हैं। इस आडम्बरपूर्ण सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक मानव एक प्रदूषक है परन्तु प्रत्येक व्यक्ति इस सच्चाई को जानता है कि प्रदूषण पैदा करने की जिम्मेदारी उन्हीं लोगों पर जाती है जो प्रदूषण पैदा करने वाली फैक्ट्रियों व खेती के मालिक हैं, ना कि उनमें काम करने वाले मजदूरों पर।

ऐतिहासिक अनुभव दर्शाता है कि मानवजाति, उसकी जीवन पद्धति या जीने का तरीका या अन्य कोई गतिविधि हमेशा से ही एक संगठित, यानि समाज के रूप में विद्यमान रही है। मानव इतिहास में गण, कबीला, सामन्ती राज्य और औद्योगिक सामाजिक ढाँचा इत्यादि विभिन्न तरह की सामाजिक व्यवस्थाएँ रही हैं। प्रत्येक सामाजिक ढाँचा अपनी सामाजिक व्यवस्था (संवैधानिक और कानूनी उसूलों सहित) के रूप में पहचाना जाता है जिसमें उस समाज को पहचानने वाले आधारभूत पहलू कानूनी और संवैधानिक उसूल होते हैं।

आज मानव समुदाय एक वैश्विक कॉरपोरेट व्यवस्था में निवास कर रहा है जो बहुत से राष्ट्रीय राज्यों से गठित और संचालित हैं। उनमें से सभी अपने सोच, व्यवहार और संगठन में एक ही तरह के कॉरपोरेट उसूलों का अनुसरण करते हैं। उनके बीच अन्तर केवल उनके अपने-अपने क्षेत्र और आबादी के आकारों का ही है। सामाजिक स्तर पर वे एक जैसी विचारधारा, राजनीति, आर्थिकता, संस्कृति और सुरक्षा पद्धति का अनुसरण करते हैं। संबंधित सामाजिक व्यवस्था से अलग या स्वतन्त्र कोई भी मानवीय गतिविधि, जीवन का तरीका या जीवन शैली नहीं होती है।

उपर्युक्त तथ्यों की रोशनी में यह कहा जा सकता है कि विद्यमान कॉरपोरेट व्यवस्था अब दुनिया को हिला रहे वर्तमान खतरनाक संकट का आधार है। इस आधार की गलतियों के लिए आवश्यक है कि इस व्यवस्था के समस्त चार आयामों–यानि, समाजशास्त्रीय धारणाओं, व्यवस्थागत उसूलों, संचालक मानदण्डों और ऐतिहासिक अनुभव-का समुचित अध्ययन किया जाए।

(i) समाजशास्त्रीय दोष

समाजशास्त्रीय मूल कारण एडम स्मिथवादी तथा मार्क्सवादी विकास मॉडलों (ये दोनों ही मॉडल विश्व के विभिन्न भागों में चल रही राष्ट्रीय राज्य व्यवस्था, जो अब पीछे हट रही है, के दो प्रामाणिक विकास पद्धतियों के रूप में कार्यरत रही है) की एक तरफा दार्शनिक समझ में निहित है। यह एकतरफा समझ है कि अपने ग्रह पर और यहां तक कि ब्रह्माण्ड में प्रकृति की व्यवस्था में मनुष्य सर्वश्रेष्ठ घटनाक्रम है। स्पष्टत: यह लोगों को मानव समाज और इसकी प्रत्येक वस्तु का एकमात्र निर्माणकर्त्ता पेश करता है। यह इस सामाजिक सच्चाई को दरकिनार करता है कि मानव समाज में परिवर्तन और विकास दो तरफा अन्तरक्रिया-एक तरफ प्रकृति और मानव समाज के बीच और दूसरी तरफ मानव समाज के अन्दर-अन्तरक्रिया से होता है।

दूसरा मूल समाजशास्त्रीय कारण मानव प्रकृति के संबंध में एडम स्मिथ और मार्क्सवादी विकास मॉडल की एकतरफा समझ में निहित है। एडम स्मिथ का आर्थिक मॉडल यह मानता है कि मानव समुदाय की प्रकृति निजी स्वार्थ की है। मार्क्सवादी आर्थिक सिद्धान्त मनुष्य की प्रकृति के प्रश्न पर दिग्भ्रमित धारणा रखती है। प्रथम, मनुष्य की प्रकृति सामाजिक है इस पर जोर देती है और अगले ही क्षण निरपेक्ष सामाजिक होने के गुण को औद्योगिक सर्वहारा (जो इस सिद्धान्त के अनुसार मानव समाज का मुक्तिदाता है) में तब्दील कर देता है और अन्तिम तौर पर सामाजिक चरित्रता के समस्त एकाधिकार को कम्युनिस्ट पार्टी में निहित कर देता है। इस दृष्टिकोण के तहत मानव समाज को सामाजिक तौर पर तब्दील करने की क्षमता अकेली कम्युनिस्ट पार्टी में ही समझता है।

वास्तव में, तथापि मानव समुदाय का दुतरफा चरित्र है, एक तरफ जैविक चरित्र और दूसरी तरफ सामाजिक चरित्र। जैविक चरित्र का पहलू मानव समुदाय के व्यक्गित अस्तितत्व को प्रतिबिम्बत करता है, जबकि सामाजिक चरित्र का पहलू उसके सामाजिक जीवन, कार्यशैली और संगठन को इंगित करता है।

(ii) व्यवस्थागत दोष

बुनियादी व्यवस्थागत दोष कारपोरेट व्यवस्था के उद्देश्य से पैदा होता है जो अधिकतम लाभ और अधिकतम वृद्धि दर को इसके विकास का एकमात्र उद्देश्य बताता है। उदारवादी और मार्क्सवादी दोनों धारणाएं यह स्वीकार करती हैं कि सामाजिक सम्पन्नता और प्रगति को जाँचने का एकमात्र मापदण्ड वृद्धि दर है। अधिकतम वृद्धि दर पाने की अपनी खोज में इन दोनों ने पर्यावरण और मानवीय विकास के पहलुओं को बर्बादी के कगार पर ला खड़ा किया है।

द्वितीय, सामाजिक सम्पन्नता और प्रगति को मापने का एकमात्र मापदण्ड मौद्रिक वृद्धि को मानने का सार्वभौमिक स्वीकृत नियम सबसे अधिक नुकसानदेह व्यवस्थागत खामी है। सामाजिक उन्नति के पहलू को रुपया-पैसा के रूप में परिभाषित करने से धन बटोरने की मनुष्य की महत्त्वकांक्षा को अत्यधिक प्रज्वलित किया है। यह आज के तथ्यों के मद्देनजर स्पष्ट है कि लगभग प्रत्येक मनुष्य की मुख्य प्रेरणा रुपया-पैसा बन गया है। जो उसके परिप्रेक्ष्य, मानसिकता, उद्देश्य, प्राथमिकता तथा साधन व मानदण्ड को तय करता है।

तब धन और सत्ता अधिकतम स्वहित का प्रतिनिधित्व करती है, पूरी दुनिया अब

इन दो 'जीवनदायी अमृत' के पीछे भाग रही है। धन और सत्ता पाने के इस व्यापार ने अधिकतम गैर-टिकाऊ मानव व्यवस्था लाकर अब दुनिया को गम्भीरतम पर्यावरणीय और मानवीय बर्बादी के कगार पर ला खड़ा किया है।

वास्तव में, स्व-हित पशु जगत का बुनियादी स्वभाव है, जबकि मनुष्य का जबसे होमोसेपियन के रूप में प्रादुर्भाव हुआ, तब से उसकी प्रकृति जैव-सामाजिक है। अर्द्ध सामाजिक होने का उसका एकमात्र गुण मनुष्य प्रजाति को पशु प्रजाति से भिन्नता प्रदान करता है। जब मनुष्य में सामाजिक पहलू नहीं रहता, तब उसकी जीवन शैली एक पशु के रूप में बदल जाती है।

(iii) परिचालन खामियाँ

मुख्य परिचालन खामी का सम्बन्ध इसकी संचालन एजेन्सी या सरकार से है। एकमात्र निजी हित की स्थायी धारणा के निर्देशन के तहत राष्ट्रीय सरकारों (प्रत्येक देश में पार्टी व्यवस्था पर आधारित) के नेतागणों का मुख्य ध्यान अपने लिए सही या गलत तरीके से धन बटोरने और लगातार सत्ता अपने हाथों में रखने में लगा रहता है और जनहित या अन्य पर्यावरणीय-जैविक मुद्दों पर कोई गौर नहीं करता है। उनकी खास जीवन शैली कहना कुछ और करना कुछ की है। वे हमेशा गरीबों और वंचितों के लिए आँसू बहाते हैं, परन्तु हर समय अमीर और प्रभुत्वशाली लोगों का हित साधते हैं।

उपर्युक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि जब तक वर्तमान सामाजिक व्यवस्था और इसके विकास के पैमाने के स्थान पर टिकाऊ, न्यायपूर्ण और समता के मॉडल को न लाया जाए, तब तक असमानता और गरीबी की अत्यधिक खतरनाक सामाजिक चुनौती को प्रभावी उत्तर देने की क्षीण सम्भावना रहती है।

(iv) विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था का ऐतिहासिक अनुभव

वर्तमान पर्यावरणीय-जैविक संकट की जड़ विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था में कैसे है यह इसके 200 वर्षों के भूतकालीन तथा वर्तमान इतिहास (जो औद्योगिक क्रांति की शुरुआत से विभिन्न विकास चरणों–औद्योगिक, प्रतियोगी, उपनिवेशी और उत्तर-उपनिवेशी–से गुजरते हुए अब ग्लोबल चरण में प्रवेश किया है) से देखी जा सकती है।

प्रथमत:, यह (यानि, कॉरपोरेट इतिहास) कॉरपोरेट विकास मॉडल की गैर-टिकाऊ कार्यवाही–एक तरफ पर्यावरणीय संसाधनों का दुरुपयोग और बर्बादी तथा दूसरी ओर मानवीय संसाधनों के साथ अमानवीय बर्ताव को दिखाता है। इसका नतीजा आज पर्यावरणीय संसाधनों के क्षरण और मानवीय संसाधनों के दरिद्र होने में निकला है, जो हमारे ग्रह पर घातक जैव-पारिस्थितिकी संकट का कारण है।

द्वितीयत:, यह मानव समाज में प्रेरक तत्व के तौर पर स्वहित के अपने समाजशास्त्र को आगे लाता है। इसने चारों तरफ स्वार्थ की प्रेरणा को पैदा किया, इस प्रकार व्यक्तिगत लालच और प्राप्ति के रुझान को अधिकतम हद तक बढ़ाया तथा सामाजिक हितों की अन्य मानवीय प्रवृत्तियों को नकारा।

तृतीयत:, यह प्रत्येक समय और स्थान में ''जिसकी लाठी उसकी भैंस'' की अपनी राजनीति को समाज की स्थिरता, सुरक्षा एवं व्यवस्था को बनाये रखने का एकमात्र सामाजिक सिद्धान्त प्रस्तुत करता है।

इस प्रकार यह किसी भी कीमत पर उचित या अनुचित साधनों से ताकत हासिल करने की मानसिकता तैयार करता है, जो राजनैतिक प्रक्रिया को अपराधीकरण की ओर ले जाता है। आगे, 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' की राजनीति व्यक्तियों के साथ-साथ समाज में तनाव, झगड़ों और युद्ध-उन्माद की मनोवृत्ति को बढ़ावा देती है। यह कमजोर पर ताकतवर के प्रभुत्व का एक सामाजिक वातावरण पैदा करती है-इस प्रकार यह अपने विश्व प्रभुत्व की स्थापना की भूमिका तैयार करता है।

चतुर्थ, यह सामाजिक विकास का एकमात्र निर्धारक अधिकतम लाभ को अपना बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त के तौर पर प्रस्तुत करता है, इस प्रकार यह सभी सामाजिक हितों की उपेक्षा करता है चाहे वो पर्यावरण, सामाजिक न्याय, उचितता, समता, उदारता आदि सहित कोई भी हो। आगे, अधिकतम लाभ के एकमात्र उद्देश्य के साथ स्वहित के समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के मेल से पूरे विश्व में धन कमाने की होड़ मच गई है, मुख्य रूप से भ्रष्ट और भद्दे तरीकों से। धन-हड़पने के व्यापार में कारपोरेट क्षेत्र की भूमिका को विश्व की सर्वोच्च बहुराष्ट्रीय कम्पनियों (विशेषकर अमेरिका आधारित कम्पनियों) के हालिया धोखों और घोटालों से देखा जा सकता है।

पंचम, यह सभी प्रकार के दोगले मानदण्डो जैसे ''कहना कुछ और करना कुछ'' को स्वीकृति देता है, और इन्हें बाजार के नियमों और सत्ता ढाँचे की जरूरत के नाम पर जायज ठहराता है।

षष्ठम् यह सभी प्रकार की रूढ़ीवादी धारणाओं और तकनीकों को काम में लेता है जो इसे आर्थिक और राजनीतिक उद्धेश्यों की मजबूती में मदद देता है जबकि लोगों को संकीर्ण एवं उग्रवादी लाईन में विभाजित करता है।

अन्तिम, लेकिन बहुत ही महत्वपूर्ण, कारपोरेट आधारित टिकाऊ विकास मॉडल, टिकाऊ विकास की बहुआयामी प्रक्रिया को दुर्बल बनाता है, यह कारपोरेटों को विश्व पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों को प्रदूषित और शोषित करने की सुविधाएँ प्रदान करता है-इस प्रकार मौसम परिवर्तन के संकट को एक खतरनाक बिन्दु पर ले आया है।

3. वैश्विक उष्माकरण या मौसम परिवर्तन की चुनौती से बाहर निकलने का रास्ता

उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि इतिहास के इस पड़ाव पर मानव समुदाय के सामने जीने या मरने की चुनौती मुँह बाये खड़ी है। दुनिया के लोगों में करीब-करीब सर्वसम्मति है कि यह चुनौती अत्यधिक खतरनाक, घातक और मृत्युदायक है जिसका सामना मनुष्य प्रजाति को इतिहास में कभी नहीं करना पड़ा है। परन्तु, इस चुनौती के कारण और हल पर अधिकतम बहुमत वाला दृष्टिकोण और छोटे से अल्पमत ग्रुप के दृष्टिकोण के बीच मूलभूत अन्तर मौजूद है।

अधिकतम बहुमत वाले दृष्टिकोण–जो पिछले सौ सालों से चले आ रहे बाजार की अगुवाई वाले पूँजीवाद (जो अब कारपोरेट पूँजीवाद की स्थिति में है) के नजरिये–से प्रभावित लोगों का मानना है कि इस चुनौती (यानि, ग्रीन हाउस गैसों–जी एच जी एस– की मात्रा में बढ़ोतरी) का कारण जन गतिविधि में है–यह विचार आई पी सी सी द्वारा तथा यू एन ओ तथा सभी राष्ट्रीय सरकारों को सार-संक्षेप में प्रस्तुत चार रिपोर्टों में प्रतिपादित की गई है, जिसमें एक तरफ तो यह बताया गया है कि ग्रीन हाउस गैसों (यानि, कार्बन-

डाई-आक्साइड, मिथेन तथा नाइट्रो-आक्साइड) की मात्रा में बढ़ोतरी का कारण जन गतिविधियों में निहित है तथा दूसरी ओर सभी विशाल मात्रा में ऊर्जा उत्पादन करने वाले राज्यों से यह अपील की गई है कि वे थर्मल ऊर्जा का उत्पादन रोक दें, क्योंकि वास्तव में यह 95 प्रतिशत ग्रीन हाउस गैसों का उत्पादन कर रहे हैं।

अधिकतम बहुमत कारपोरेट दृष्टिकोण के दोहरे मापदण्ड वाले उपरोक्त कथन के उलट एक छोटे अल्पमत 'प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण'–जो भारत, पाकिस्तान, नेपाल और भूटान में स्थित अत्यधिक प्रेरित ग्रुप है–का दृढ़तापूर्वक यह कहना कि एकाधिकारवादी कारपोरेट सेक्टर, चाहे उसका नेतृत्व राष्ट्रीय राज्य करता हो या बड़े व्यापारिक कारपोरेट घरानों द्वारा प्रबंधित हो–यही सब एकमात्र सभी ग्रीन हाउस गैसों के अकेले जनक हैं। इस कथन के अनुसार कारपोरेट ऊर्जा सेक्टर अपने थर्मल ऊर्जा उत्पादन को न कभी कम करेगा और न रोकेगा जब तक कि वह प्राकृतिक संसाधनों, जैसे, सौर, वायु, जल आदि नवीनीकरण योग्य संसाधानों से सस्ती दरों पर साफ सुथरी ऊर्जा उत्पादन तकनीक हासिल ना करलें। परन्तु तब तक हमारे इस ग्रह पृथ्वी पर वैश्विक उष्माकरण या मौसम परिवर्तन की चुनौती अनपलट की स्थिति में पहुँच जायेगी। वास्तव में मुनाफा आधारित बाजार-नेतृत्व वाला कारपोरेट नजरिया, जो इस मृत्युदायक संकट को पैदा करने वाला एकमात्र कारण है वह नजरिया इस समस्या का कभी हल नहीं बन सकता है। वास्तविक हल केवल हकीकत पर आधारित प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण को अपनाकर ही प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए हम यहाँ इस नजरिये का पूर्ण विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं।

(अ) प्रकृति–मानव केन्द्रित नजरिए के आधारभूत सिद्धान्त

1. प्रकृति-मानव केन्द्रित समाजशास्त्र का मानना है कि हमारी पृथ्वी पर और मानव समाज में प्रकृति और मानव, ये दोनों अत्यधिक महत्वपूर्ण कारक हैं। ये समाज की पूँजी है और इनके बिना किसी चीज का कोई मूल्य नहीं है। मौजूदा पूँजी, चाहे वह धन के रूप में या माल के रूप में प्रचलित है, यह विनिमय का केवल एक माध्यम है। यह अत्यधिक केन्द्रित धन बड़े स्तर पर माल का संग्रह या स्टॉक मार्केट शेयर के रूप में अस्तित्व में है।

2. मनुष्य समाज में परिवर्तन और विकास दो तरफा अन्तरक्रिया–एक तरफ प्रकृति और मानव समाज के बीच और दूसरी तरफ मानव समाज के अन्दर अन्तरक्रिया–के कारण होता है। ये दो अन्तरक्रियाएँ दर्शाती हैं कि मानव संसाधन और पर्यावरणीय संसाधन उच्चतम मूल्यवान वस्तु हैं अर्थात् समाज की पूँजी हैं। धन या मुद्रा के संग्रह का मौजूदा पूँजीवादी सिद्धान्त एक गलत सिद्धान्त है, क्योंकि धन या मुद्रा विनिमय का मात्र एक साधन है।

3. लोगों के बीच में भाईचारे का एक मजबूत बंधन स्थापित करना।

4. कारपोरेट पूँजीवादी समर्थक भ्रष्ट राजनीतिक पार्टियों और व्यापारिक घरानों के बनिस्पत लोगों का सशक्तिकरण करना।

5. प्रत्येक वंचित एवं जरूरतमंद व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना।

6. असमान आय के फर्क को 1:5 के दायरे में लाकर उसे तर्कसंगत बनाना।

7. कदम-ब-कदम सत्ता के ढाँचे तथा संयुक्त राष्ट्र संघ एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों तथा राष्ट्रीय राज्यों की कार्यप्रणाली में जनवादी परिवर्तन लाना।

(ब) प्रकृति–मानव केन्द्रित फौरी कार्यक्रम

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आंदोलन (एन एच सी पी एम) का मानना है कि चहुंमुखी खतरनाक पर्यावरणीय-मानवीय वैश्विक संकट के मद्देनजर दुनिया को एक ऐसे फौरी एजेंडा की जरूरत है, जो मौजूदा जमीनी हकीकतों के अनुरूप हो।

दुनिया की पहली जमीनी हकीकत धरती पर सभी जैव घटनाक्रमों के लिए आबोहवा संबंधी परिवर्तन, जिंदगी या मौत की चुनौती होना है।

इस मामले में स्वाभाविक तौर पर समस्या यह है कि आबोहवा को हुई क्षति को दुरुस्त करने का काम कौन करे। आबोहवा संबंधी परिवर्तन के संकट का जनक चूंकि कारपोरेट क्षेत्र है और सभी प्रमुख कारपोरेट ताकतें चूंकि अतीत में हुए पर्यावरण संबंधी परिवर्तनों के प्रति उचित रुख अपनाने में अभी तक नाकाम रही हैं इसलिए ज्यादा उचित यही रहेगा कि आबोहवा को दुरुस्त करने का काम संयुक्त राष्ट्र महासभा के हवाले किया जाए, सुरक्षा परिषद या जी-8 समूह या बड़े कारपोरेट कारोबारी हलकों के नहीं। तीनों पर कारपोरेट निहित स्वार्थों का कब्जा है, जो ग्लोबल वार्मिंग अथवा आबोहवा संबंधी परिवर्तनों के संकट के असली जनक हैं। महासभा में फैसले बहुमत के आधार पर लिए जाते हैं, इसलिए इसमें महाशक्तियों अथवा धनी देशों के प्रभुत्व की कम संभावना है। संयुक्त राष्ट्र महासभा की प्रत्येक बैठक अपने सदस्यों में से अपना सभापति चुनेगी और संयुक्त राष्ट्र महासचिव महासभा के प्रवक्ता के रूप में काम करेंगे।

दुनिया की दूसरी जमीनी हकीकत, दुनिया के विभिन्न देशों में तनाव के विभिन्न बिन्दुओं का मौजूद होना है। इस मामले में संयुक्त राष्ट्र महासभा को निम्न कदम उठाने चाहिए।

दुनिया के सभी देशों के बीच शांति एवं मित्रता की ऐसी संधि कराना जिसमें यह घोषणा हो कि वे अपने बीच छोटे या बड़े सभी झगड़ों का समाधान शांतिपूर्ण तरीकों से करेंगे।

दुनिया की तीसरी जमीनी हकीकत दुनिया को पेश आ रहे मुद्दों को लेकर दुनिया के विभिन्न देशों खासकर बड़ी ताकतों के बीच विभिन्न विभाजक और अलग-अलग रुखों और नजरियों का होना है।

इस मामले में काम, सभी विवादों का शांतिपूर्ण ढंग से समाधान करना है ताकि दुनिया में पुख्ता शांति स्थापित हो सके। वजह यह है कि विश्व शांति, आबोहवा संबंधी परिवर्तनों की चुनौती से निबटने के लिए मूल आवश्यकता है।

आगे, देशों को इस बात पर मनाने के लिए हर प्रयास किया जाना चाहिए कि वे शांति एवं मित्रता पर आधारित विदेश नीति पर चलें।

इस मामले में संयुक्त राष्ट्र महासभा को कुछ पग उठाकर दुनिया में पुख्ता शांति स्थापित करने की जिम्मेदारी लेनी चाहिए। ये हैं–दुनिया में सभी विवादों खासकर जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन, श्रीलंका, डायफोर, इत्यादि का शांतिपूर्ण समाधान। जम्मू-कश्मीर समस्या के न्यायपूर्ण समाधान की स्थिति में इस इलाके की रक्षा, विदेशी मामलों और मुद्रा संबंधी समस्याओं के काम की जिम्मेदारी एक संयुक्त भारत-पाक सह स्वामित्व को दी जाए। बाकी सभी मामलों में पाकिस्तान प्रशासन वाले जम्मू-कश्मीर समेत जम्मू-कश्मीर के विभिन्न सांस्कृतिक तथा भाषाई क्षेत्रों का मुक्कमल स्वशासन होना चाहिए।

फिलीस्तीन, डायफोर, श्रीलंका इत्यादि के मामले में भी इसी प्रकार की न्यायपूर्ण व्यवस्था की जाए।

दुनिया की चौथी जमीनी हकीकत परमाणु शक्तियों के पास परमाणु हथियारों का विशाल भंडार होना है।

इस मामले में संयुक्त राष्ट्र महासभा को मौजूदा परमाणु शक्तियों से यह तकाजा करने की जिम्मेदारी लेनी चाहिए कि ग्लोबल वार्मिंग की जिन्दगी या मौत की चुनौती को देखते हुए उन्हें सभी परमाणु हथियारों के भंडार और जनसंहार के अन्य खतरनाक हथियारों को तत्काल नष्ट कर देना चाहिए। और भविष्य में उन्हें जनसंहार का कोई भी हथियार न बनाने का वादा करना चाहिए।

दुनिया की पांचवीं जमीनी हकीकत, हर देश में ऐसी ताकतवर सेना की बड़े पैमाने पर मौजूदगी है जिसकी आज की दुनिया में कोई भूमिका नहीं है। इसलिए संयुक्त राष्ट्र महासभा को दुनिया में देशों के बीच सभी विवादों का समाधान छह महीने की अवधि के भीतर करने की जिम्मेदारी लेनी चाहिए। यह कार्य पूरा करने के बाद महासभा को सभी देशों से कहना चाहिए कि वे अपने सैन्य बजटों पर खर्च बन्द करदें।

और सभी देशों को अपना पचास प्रतिशत रक्षा खर्च दो साल के भीतर और अगला 50 प्रतिशत पाँच वर्ष के भीतर बन्द कर देना चाहिए।

भंग सेना के सभी जवानों को उन्हीं वेतनमानों पर समान नौकरियां प्रदान की जानी चाहिए जो उन्हें रक्षा विभाग में पहले प्राप्त थी।

दुनिया की छठी जमीनी हकीकत, हर देश में राष्ट्रीय विकास का अपना मॉडल होना है। इस मामले में संयुक्त राष्ट्र महासभा को एक उच्चाधिकार प्राप्त संयुक्त राष्ट्र सतत विकास परिषद का गठन करना चाहिए तो एक तरफ राष्ट्रीय विकास के सभी मॉडलों का एकीकरण करके ग्लोबल वार्मिंग का मुकाबला करने और पर्यावरण सम्बन्धी संसाधनों को संरक्षित रखने तथा उन्हें प्रोत्साहित करने के लिए और दूसरी तरफ मानवीय संसाधनों के विकास के लिए वैश्विक अथॉर्टी के रूप मे काम करे। परिषद को पर्यावरण सम्बन्धी और मानवीय उन्नति के सम्बन्ध में मूलभूत अन्तरराष्ट्रीय सुधारों के नियम बनाने चाहिए। परिषद के लिए वित्त का प्रबन्ध विश्व व्यापार, तेल, कोयला, उपग्रह-संचार, विमानयात्रा, अंटार्टिका-खनन, समुद्र तल के खनन, सामुद्रिक परिवहन इत्यादि सरीखे वैश्विक कराधान से होगा। संयुक्त राष्ट्र महासभा अपने और सदस्य देशों के बीच उक्त वैश्विक राजस्व के वितरण के लिए ऐसी योजना बनायेगी जिसमें न्यूनतम विकसित देशों को विशेष रियायत दी जाएगी।

दुनिया की सातवीं जमीनी हकीकत, विकसित और अल्प विकसित देशों के बीच पक्षपाती व्यापार का मौजूद होना है। इस मामले में विश्व व्यापार संगठन को ऐसे केन्द्र के रूप में काम करना चाहिए जो यह देखे कि अमीर और गरीब देशों के बीच व्यापार न्यायपूर्ण आधार पर हो।

दुनिया की आठवीं जमीनी हकीकत, कम विकसित देशों की वित्तीय जरूरत से सम्बन्धित है। इस मामले में अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक को चौकस रहना चाहिए कि विभिन्न प्रकार के देशों के बीच वित्त का न्यायोचित वितरण हो।

दुनिया की नवीं जमीनी हकीकत, दुनिया के विभिन्न भागों में उत्पन्न हो रहा जल संकट है। इस मामले में संयुक्त राष्ट्र को एक नये विश्व जल आयोग का गठन करना चाहिए जो पानी की कमी वाले विभिन्न इलाकों में लोगों को जरूरी न्यूनतम पानी की आपूर्ति का प्रबंध करे।

दुनिया की दसवीं जमीनी हकीकत यह है कि घटते खाद्य उत्पादन की संभावना को देखते हुए संयुक्त राष्ट को एक ऐसी खाद्य नीति बनाने के लिए खाद्य एवं कृषि संगठन से अनुरोध करना चाहिए जिनके अन्तर्गत खाद्यान्न की कमी वाले इलाकों में खाद्य वस्तुएँ मुहैया करवाने के लिए व्यावहारिक कदम उठाए जाएं।

दुनिया की ग्यारहवीं जमीनी हकीकत, दुनिया के लोगों की खाद्य जरूरतें पूरी करने के लिए कृषि में सुधार और उसे आधुनिक बनाने की है। इस मामले में विभिन्न देशों में समस्त कृषक समुदाय को प्रेरित किया जाए कि वह कृषि को सहकारी आधार पर संगठित करे।

दुनिया की बारहवीं जमीनी हकीकत, विभिन्न देशों खासकर अल्प विकसित देशों में गरीबी में वृद्धि होना है। इस मामले में गरीबी की समस्या से निपटने के लिए प्राथमिकता के तौर पर व्यावहारिक कदम उठाने की जरूरत है।

दुनिया की तेरहवीं जमीनी हकीकत यह है कि सभी देशों को अपराध, भ्रष्टाचार जैसी बढ़ रही सामाजिक बुराइयों का उन्मूलन करने के अलावा साफ-सफाई, आवास, वृक्षों की सुरक्षा इत्यादि पर न्यायोचित ध्यान देना चाहिए।

दुनिया की चौदहवीं जमीनी हकीकत, दुनिया के लगभग सभी देशों में मानवाधिकार उल्लंघनों के मुद्दे पर गंभीरतापूर्वक ध्यान देने की है।

दुनिया की पन्द्रहवीं जमीनी हकीकत यह है कि शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य छात्रों में मानवीय मूल्यों के साथ-साथ पर्यावरण सम्बन्धी मूल्य विकसित करना होना चाहिए, न कि उनमें व्यक्तिपूजा की भावना का विकास करना, जैसा कि आज हो रहा है।

दुनिया की सोलहवीं जमीनी हकीकत, मानवीय स्वास्थ्य की बिगड़ती दशा है। इस मामले में उचित यह है कि सभी देश मानव स्वास्थ्य को मूल अधिकार के तौर पर मान्यता दें।

दुनिया की सतरहवीं जमीनी हकीकत धार्मिक कट्टरवाद अथवा आतंकवाद से खतरे का मौजूद होना है, जिसका मुकाबला हमारे विचार से सैन्य तरीकों से नहीं बल्कि मानवीय तथा पर्यावरण से जुड़े मूल्यों से किया जाना चाहिए।

दुनिया की अठारहवीं जमीनी हकीकत यह है कि बेरोजगारी की समस्या हर क्षेत्र–चाहे विकसित हो या अल्प विकसित–में बढ़ रही है। अपेक्षतया उच्च विकास दरों वाले देशों तक में रोजगार सृजन की धीमी गति से ऐसे इलाके में पच्चास करोड़ बेरोजगार या आंशिक बेरोजगार पैदा किए हैं जहाँ कुल मिलाकर 1.7 अरब श्रमिक हैं। एशियाई विकास बैंक के अध्ययन का आकलन है कि 1980 वाले दशक में चीन में 1% रोजगार उत्पन्न करने के लिए 3% विकास दर की जरूरत पड़ी जबकि अगले दशक में वैसा ही परिणाम पाने के लिए 8% विकास दर की जरूरत हुई। इसका मतलब यह है कि बिगड़ते पर्यावरण के विशाल क्षेत्र में रोजगार के नए तरीके तलाशे जाने चाहिए।

दुनिया की उन्नीसवीं जमीनी हकीकत बढ़ती विश्व जनसंख्या का लगातार बने रहना है, जो आबोहवा सम्बन्धी परिवर्तनों की चुनौती जितनी ही खतरनाक है। विशेषज्ञ रिपोर्टों के अनुसार जनसंख्या की मौजूदा विकास दर का परिणाम यह होगा कि सन् 2050 तक दुनिया के समस्त भू-भाग पर 9.2 अरब लोगों को रहना पड़ेगा। इसका समाधान एक ऐसा तर्कसंगत और न्यायोचित समाज स्थापित करने में निहित है जो सभी को सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करते हुए बुढ़ापे या किसी अन्य असुरक्षा की स्थिति में स्वजनों को गारंटी के तौर पर प्रेरणादायी तत्व न माने।

अंतिम लेकिन सर्वाधिक महत्वपूर्ण जमीनी हकीकत यह है कि हमारे ग्रह के लोग इस ग्रह में परिवर्तन लाने और इस धरती पर जैव प्रणाली को बचाने वाली एकमात्र शक्ति एवं एकमात्र स्रोत हैं। और लोग सकारात्मक भूमिका तभी निभा सकते हैं जब उन्हें एक स्पष्ट, उचित, न्यायपूर्ण और तर्कसंगत मॉडल के आधार पर समुचित तरीके से संगठित किया जाय। ऐसा वांछित मॉडल हमारे विचार में एन एच सी पी एम के एजेंडा में पाया जा सकता है, जो संक्षेप में निम्नलिखित है–

पहला, समाज में सबसे महत्त्वपूर्ण चीज लोग एवं प्राकृतिक संसाधन हैं, इसके अलावा कोई भी चीज सबसे महत्त्वपूर्ण नहीं है। जबकि कारपोरेट पूँजीवाद यह झूठी धारणा रखता है कि समाज में सबसे मूल्यवान वस्तु केवल पूँजी है। दूसरा, सबसे पहले यह आवश्यक है कि हर समय और हर जगह वहनीय पर्यावरण (यानि हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता आदि) के मूलभूत मानवीय लक्ष्य को दृढ़तापूर्वक थामा जाए। तीसरा, हमारा अगला सिद्धान्त यह है कि लोगों का चहुँमुखी संवैधानिक सशक्तिकरण किया जाए।

(1) आर्थिक सशक्तिकरण : स्वच्छ हवा, शुद्ध पीने का पानी, पोष्टिक भोजन, मकान, वस्त्र तथा मुफ्त चिकित्सा सुविधा एवं शिक्षा आदि के सम्बन्ध में प्रत्येक को मूल अधिकार प्रदान करते हुए सामाजिक सुरक्षा को सुनिश्चित करके लोगों का आर्थिक सशक्तिकरण किया जाए।

मुट्ठी भर अमीर श्रेणी तथा विशाल बहुमत वाली गरीब श्रेणी के बीच आये भयंकर विभाजन के बीच आर्थिक सामंजस्य लाने के लिए 1:5 आय अन्तर के आधार पर निष्पक्ष समानता सुनिश्चित की जानी चाहिए।

(2) राजनीतिक सशक्तिकरण : राजनीतिक प्रक्रिया पर लोगों का नेतृत्व होना चाहिए तथा समर्पित सामाजिक कार्यकर्ताओं या उनके मंचों द्वारा संचालित की जानी चाहिए। चुनाव सभी प्रकार से स्वतन्त्र हो जहाँ हर एक को चुनाव प्रक्रिया में खड़े होने व वोट देने का अधिकार हो।

चुनाव में प्रत्येक व्यक्तिगत उम्मीदवार के लिए राज्य की ओर से धन खर्च करने के नियम को लागू करके भ्रष्ट एवं धन व सत्ता लोभी राजनीतिक दलों के राज्य सत्ता के एकाधिकार को समाप्त करना चाहिए।

विकास के लिए दिये जाने वाला सारा धन चुनी हुई जन विकास समितियों (ग्राम सभा सहित और उसके ऊपर कोई नहीं) के द्वारा खर्च किया जाना चाहिए, प्रत्येक लोकसभा सदस्य को 2 करोड़ रुपये तथा प्रत्येक विधान सभा सदस्य को लाखों रुपये अपने-अपने क्षेत्र में विकास पर खर्च करने के मौजूदा नियम को रद्द किया जाए।

यदि 1/5 मतदाता विधान सभा या लोकसभा सदस्य को वापिस बुलाने की लिखित माँग करते हैं तो यह अधिकार देकर लोगों को सशक्तिकरण किया जाना चाहिए। चुनाव लड़ने से पहले राजनीतिक दलों को लोगों द्वारा प्रायोजित उम्मीदवारों में से अपना उम्मीदवार बनाना होगा। लोगों द्वारा प्रायोजित उम्मीदवार वह माना जायेगा जो विधान सभा क्षेत्र में एक हजार मतदाताओं के हस्ताक्षरों तथा लोक सभा क्षेत्र में पाँच हजार मतदाताओं के हस्ताक्षर प्राप्त करेगा।

(3) सांस्कृतिक सशक्तिकरण : जीवन जीने के तरीके (जीवन शैली) से सम्बन्धित है, जिसमें लोगों के बीच बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्य समाहित होते हैं तथा तर्कसंगत मानवीय एवं पर्यावरणीय सोच, व्यवहार एवं संगठन को संवर्द्धित किया जाता है।

(4) महिला सशक्तिकरण : संसद, विधान सभा तथा प्रशासन, इसके साथ-साथ संगठित बड़े उद्योगों की नौकरियों में महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण देकर महिला सशक्तिकरण किया जाए। धीरे-धीरे यह सिद्धान्त एक नियम बन जाना चाहिए जो सभी सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में लागू हो।

(5) मजदूर सशक्तिकरण : संगठित क्षेत्र में, सभी किस्म के बड़े उद्योगों, संस्थाओं, परियोजनाओं एवं फैक्ट्रियों के प्रबंध करने वाले बोर्ड में एक तिहाई प्रतिनिधित्व मजदूरों को दिया जाए। ये एक तिहाई प्रतिनिधि मजदूरों के संगठनों के एकल मजदूर फ्रंट द्वारा चुनकर भेजे जाए। छोटे और मध्यम उद्योगों में सम्बन्धित मजदूरों से चुने गये प्रतिनिधियों का मंच प्रत्येक सम्बन्धित प्रबन्धमण्डल में सलाहकार बोर्ड की हैसियत रखेगा।

(6) असंगठित मजदूरों का सशक्तिकरण : फुटकर क्षेत्र में, लघु स्तर के निजी व्यापार में लगे सभी मजदूरों को सभी जगह (यानि, शहर, कस्बे व ग्रामीण इलाकों में) युनियनों में संगठित किया जाना चाहिए और उन्हें कम ब्याज पर ऋण दिया जाए, मुक्त बाजार की सभी तरह की सुविधाएं मुहैया करवाई जाए, एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिए मुफ्त वाहन (ट्रालर) उपलब्ध करवाये जाएं या बड़े शहरों के बाजारों में किराया मुक्त छोटी दुकानें मुहैया करवाई जाएं।

(7) किसानों का सशक्तिकरण : ग्रामीण क्षेत्र में, समस्त किसानों–चाहे वे धनी किसान हों या भूमिहीन किसान हों–को राज्य की मूल नीति के रूप में सहकारी खेती के आधार पर संगठित किया जाए। ऐसी प्रत्येक सहकारी समिति को अपना बाजार तन्त्र विकसित करने के लिए आवश्यक सरकारी सहायता मुहैया करवाई जाए, जरूरी कृषि निवेश सामग्री सस्ती दरों पर उपलब्ध करवाई जाए तथा इसकी ऋण व्यवस्था सहकारी ऋण एजेंसियों से ऋण प्राप्त कर निर्मित की जाए।

(8) जीवन के हर पहलू में न्याय, समानता और निष्पक्षता के मानवीय मूलभूत लक्ष्य को संवर्द्धित किया जाए।

(9) यह सभी औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों के जनवादीकरण की वकालत करता है जिसके अनुसार कॉरपोरेट और राजकीय मोनोपोली नियन्त्रण समाप्त करते हुए एवं उन्हें साधारण शेयरधारकों (दो तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) तथा मजदूरों (एक तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) के द्वारा प्रबंधित किया जाए।

(10) वित्त प्रबंध : यह वित्त नियन्त्रण के लिए लोकतांत्रिक प्रबंध और नियन्त्रण को प्रस्तावित करता है। कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबंधन एवं नियन्त्रण का पक्षधर है तो राजकीय क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का समर्थक है। जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियन्त्रण का हामी है। प्रोमोटर्स शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध की मिल्कियत को समाप्त किया जाए।

(11) न्यायशास्त्र को पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों के हितों की सुरक्षा और संरक्षण करने के मूलभूत उसूल पर आधारित किया जाए। उपर्युक्त उसूल की अवहेलना करने पर अपराधी के साथ उसे सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल मानवीय क्रूरता और मृत्यु दण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधानों को निर्धारित किया जाए।

(स) प्रकृति-मानव केन्द्रित अल्पकालीन कार्यक्रम

प्रकृति मानव केन्द्रित जन आंदोलन (एन एच सी पी एम) मानता है कि इस समय मानव समुदाय को एक बहुत खतरनाक पर्यावरणीय व मानवीय संकट का सामना करना पड़ रहा है। यह चुनौती इतनी गंभीर है कि यदि इसका उत्तर वास्तविक कार्यक्रम से नहीं दिया जाता है तो इसके नतीजे में मानवीय हितों को बहुत ही खतरनाक परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं। सर्वप्रथम ऐसी गंभीर परिस्थिति से निपटने के लिए यह आवश्यक है कि मानव जाति के विभिन्न समुदायों के बीच में पूर्ण एकता कायम हो और एकता के पहलु की यह मांग है कि मानव समुदाय के अन्दर सभी प्रकार की टकराहटों को समाप्त किया जाये। मानव समुदाय की एकता कायम करने का एकमात्र रास्ता इसमें निहित है कि दुनिया में मौजूद सभी प्रकार के अन्याय को समाप्त किया जाए।

एन एच सी पी एम का यह दृष्टिकोण है कि न्यायसंगत दुनिया सभी प्रकार के सामाजिक न्याय की बुनियाद पर स्थापित करना निश्चित तौर पर संभव है। इसके लिए वर्तमान अन्यायपूर्ण कॉरपोरेट व्यवस्था को पुनर्गठित करने की आवश्यकता है।

वर्तमान अन्यायपूर्ण कॉरपोरेट व्यवस्था को एक न्यायपूर्ण आधार पर पुनर्गठित करने के लिए एन एच सी पी एम 15 बिन्दु जनता को सूचित करने, संगठित होने और काम करने के लिए प्रस्तुत करता है। इन 15 बिन्दुओं को उचित समझने वाले लोगों से यह निवेदन करता है कि वे इन बिन्दुओं को मजबूती,तहेदिल और सुस्पष्टता से आम जनता के बीच प्रसारित करें।

जब कभी भी किसी इलाके अथवा देश में चुनाव हो रहे हों वहाँ एन एच सी पी एम मतदाताओं से अपील करता है कि वे इन 15 सिद्धांतों को उम्मीदवारों की सच्चाई जानने का मानदण्ड बनाए। मतदाता उम्मीदवारों से इन बिन्दुओं के समर्थन में हस्ताक्षर करने का अनुरोध करे। जो इन पर हस्ताक्षर करते हैं वे उम्मीदवार जनता के समर्थन के हकदार हैं और जो इन पर हस्ताक्षर करने से हिचकिचाते हैं वे न्यायिक और तर्कसंगत दृष्टिकोण से परे हैं।

1. मानव जाति को हर समय और हर जगह पर्यावरण (यानि हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) को टिकाऊरखने के मूलभूत कार्य को थामे रखना चाहिए।

2. जिन्दा रहने के मानवीय अधिकार को शुद्ध हवा, शुद्ध पीने का पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित की जाए।

3. आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में 5 गुना से अधिक अन्तर) पर आधारित उचित समानता का मानवीय अधिकार हो।

4. विश्व के तमाम झगड़ों का शांतिपूर्ण समाधान होना चाहिए, विशेष तौर पर जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका समस्याओं का। जम्मू-कश्मीर के न्यायपूर्वक समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा और विदेश महकमों को भारत-पाक के ज्वाइंट कन्ट्रोल में दिया जाना चाहिए जबकि बाकी सभी मामलों (रक्षा और विदेश मामलों के अलावा) में जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र होना चाहिए जबकि इसके 9 नस्ली क्षेत्रों को अधिक से अधिक स्वायत्तता होनी चाहिए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन एवं जॉर्डन के सम्बन्ध में भी कारगर होगा।

5. संयुक्त राष्ट्र संघ को पुनर्गठित करने के लिए सुरक्षा परिषद के पांच स्थायी सदस्यों की वीटो पॉवर समाप्त की जाए तथा किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए साधारण सभा के बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान की जाए।

6. विश्व-व्यापार संगठन, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाय प्रकृति मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है), को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति जिसमें मानव और पर्यावरणीय पहलू उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्व वाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के 5 उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाए।

7. सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित किया जाए।

8. खेती से सम्बन्धित सभी लोगों की जीविका की सुरक्षा सहकारी कृषि व्यवस्था से सुनिश्चित की जाए।

9. शारीरिक व मानसिक दोनों प्रकार के श्रमिकों का सशक्तिकरण हो, जिसके अन्तर्गत संस्थानों, परियोजनाओं और कारखानों के प्रबन्ध में उनका एक तिहाई प्रतिनिधित्व सुनिश्चित हो।

10. उद्योग और सेवा के सभी क्षेत्रों पर से उद्योगपतियों और सरकार का एकाधिकार नियंत्रण खत्म करके तथा आम शेयरधारकों को दो तिहाई और मजदूरों को प्रबंधन में एक तिहाई हिस्सा देकर उनका लोकतांत्रीकरण किया जाए।

11. वित्तीय प्रबन्ध : कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबन्धन एवं नियंत्रण का पक्षधर है तो सरकारी क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियंत्रण का समर्थक है, पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर इन स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई सदस्य आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियंत्रण स्थापित हो।

प्रोमोटर्स (प्रोत्साहक) शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध को समाप्त किया जाए।

12. प्रकृति मानव केन्द्रित राजनीतिक प्रकिया लोगों द्वारा निर्देशित होनी चाहिये तथा उसका संचालन समर्पित प्रकृति-मानव केन्द्रित सामाजिक कार्यकर्ताओं (या उनके मोर्चे) द्वारा किया जाना चाहिए। चुनाव पूर्णतया स्वतंत्र हो जिसमें प्रत्येक को उम्मीदवार और मतदाता दोनों रूपों में भाग लेने का समान अधिकार है।

13. दलगत ढांचे को महत्व दिए बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करे) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्यसत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के एकाधिकार का खात्मा किया जाए। यदि मतदाता किसी भी विधानसभा या लोकसभा सदस्य को वापिस बुलाना चाहे तो 1/5 मतदाताओं द्वारा लिखित में मांग करने पर पुन: चुनाव करवाया जाय।

14. प्रत्येक सांसद को दो करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये आवंटित करने का मौजूदा नियम हटाकर विकास से सम्बन्धित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्राम सभा सहित और इसके ऊपर कोई नहीं हो) के जरिए खर्च हों।

15. न्यायशास्त्र को पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों के हितों की सुरक्षा और संरक्षण करने के मूलभूत उसूल पर आधारित किया जाए। उपर्युक्त उसूल की अवहेलना करने पर अपराधी के साथ उसे सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल मानवीय क्रूरता और मृत्यु दण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधानों को निर्धारित किया जाए।

(द) प्रकृति-मानव केन्द्रित दीर्घकालीन कार्यक्रम

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन का दृष्टिकोण है कि चल रहे घातक संकट का बुनियादी हल मौजूदा कारपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था के स्थान पर प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था लाने में निहित है, जिसका उद्देश्य, सिद्धान्त, तरीकाकार और संगठन दो उच्च प्राथमिकताएँ–यानि, पर्यावरण और मनुष्य–लिए हुए हैं और जो पाँच बुनियादी उसूलों–यानि, पर्यावरणीय संवर्द्धन, उचित समानता (यानि, प्रत्येक वंचित एवं जरूरतमंद व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा तथा अतर्कसंगत आय के अन्तर को 1:5 के आय का अन्तर स्थापित कर इसे तर्कसंगत बनाना), उत्पादकता (या वृद्धि दर), लोक नेतृत्व जनवाद (यानि, कारपोरेट पूँजीवादी समर्थित राजनीतिक पार्टियों एवं व्यापारिक घरानों की बनिस्पत लोगों का सशक्तिकरण करना) तथा चहुँमुखी पारदर्शिता–का पालन करता है। प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं–

1. मानव समाज के प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल का मानना है कि मानव समाज में पर्यावरण और मानव जाति दोनों बहुत ही मूल्यवान घटनाक्रम हैं। यह दोनों इसकी सामाजिक पूँजी (सर्वोच्च वस्तु) है, इन दोनों (यानि, पर्यावरणीय-मानवीय संसाधन) में वृद्धि से विकास, सम्पन्नता एवं प्रगति होती है तथा सोचने, कहने, करने और संगठित होने के लिए यह निर्देशक सिद्धान्त का कार्य करता है।

2. यह हर समय और सब जगह पर्यावरण (यानि, हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) संवर्धन के मूलभूत कार्य का मजबूती से समर्थन करता है।

3. यह प्रत्येक व्यक्ति के जैव-सामाजिक अस्तित्व के अधिकार को शुद्ध हवा, साफ पीने के पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित करने का समर्थक है।

4. यह आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में अधिकतम 5 गुणा अन्तर) पर आधारित उचित समानता के मूलभूत मानवीय अधिकार का समर्थक है।

5. यह विश्व शान्ति का मजबूती से पक्षपोषण करता है और विश्व के सभी विवादों खासकरके जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका इत्यादि के सीधे शांतिपूर्ण हल के मार्ग का समर्थक है। जम्मू-कश्मीर के न्यायपूर्ण समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा एवं विदेश महकमों को भारत-पाक सहराज्य के संयुक्त नियन्त्रण में सौंपा जाना चाहिए जबकि बाकी सभी मामलों (रक्षा और विदेश मामलों के अलावा) में जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र होना चाहिये जबकि इसके नौ नश्ली क्षेत्रों में से प्रत्येक को अधिकतम संभव स्वायत्तता प्रदान की जाए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन और जोर्डन के संबंध में भी कारगर होगा।

6. यह संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के 5 स्थायी सदस्यों के वीटों पावर को समाप्त करते हुए विश्व व्यवस्था के पुनर्गठन करने एवं किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए संयुक्त राष्ट्र की केन्द्रीय सभा में साधारण बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान करने की मांग करता है। कुछ समय दौरान, विश्व के विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों के लोगों के मतदान से निर्वाचित संविधान सभा द्वारा रचित संविधान के आधार पर संयुक्त राष्ट्र का पुनर्गठन किया जाए।

7. यह विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाए प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर पुनर्गठित करने तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है) को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति बनाने की हिमायत करता है जिसमें मानवीय और पर्यावरणीय पहलु उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्ववाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के पांच उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाता है।

8. यह सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50% प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित करने का समर्थक है।

9. यह खेती को सहकारिता के आधार पर सुसंगठित करने को प्रोत्साहित करता है तथा खेती से संबंधित सभी लोगों की जीविका को सुनिश्चित करने का समर्थक है।

10. यह श्रमिकों (शारीरिक और मानसिक दोनों) के सशक्तिकरण के लिए जोरदार आवाज उठाता है, जिसके अनुसार सभी संस्थानों, परियोजनाओं एवं कारखानों के प्रबंध में उनके (श्रमिकों के) एक तिहाई चुने हुए प्रतिनिधियों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए।

11. यह सभी औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों के विकेंद्रीकरण की वकालत करता है जिसके अनुसार कॉरपोरेट और राजकीय मोनोपोली नियन्त्रण समाप्त करते हुए एवं उन्हें साधारण शेयरधारकों (दो तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) तथा मजदूरों (एक तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) के द्वारा प्रबंधित किया जाए।

12. यह वित्त नियन्त्रण के लिए लोकतांत्रिक प्रबंध और नियन्त्रण को प्रस्तावित करता है। कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबंधन एवं नियन्त्रण का पक्षधर है तो राजकीय क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का समर्थक है। जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियन्त्रण का हामी है। प्रोमोटर्स शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध की मिल्कियत को समाप्त किया जाए।

13. यह प्रत्येक सांसद को 2 करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये अपने चुनावी क्षेत्र के विकास खर्च के लिए आवंटित करने के मौजूदा नियम को हटाकर विकास से संबंधित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्रामसभा सहित और इसके ऊ पर कोई नहीं) के जरिए खर्च करने को प्रोत्साहित करती है।

14. यह प्रत्येक देश में प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण के आधार पर कॉरपोरेट पूँजीवादी निर्देशित संविधान तथा न्यायशास्त्र को पुनर्गठित करने का प्रस्ताव रखता है।

15. यह मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के हितों की रक्षा एवं संवर्धन के मूलभूत सिद्धान्त का मजबूती से पक्षधर है। उपर्युक्त उसूल की किसी तरह से अवहेलना करने पर अपराधी को सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल दण्ड दिया जाए। दण्ड में मानवीय क्रूरता और मृत्युदण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधान शामिल हो सकते हैं ।

16. इसका पक्का विश्वास है कि मानव समाज की सभी संघटक प्रक्रियाओं–यानि, पर्यावरणीय, मानवीय और वैज्ञानिक तकनीकी–पर लोगों का नियंत्रण होना चाहिए और उन्हीं द्वारा संचालित होनी चाहिए।

17. यह गांव/वार्ड से राष्ट्रीय स्तर तक पाँच स्तरों पर सामाजिक जीवन के तीन पहलुओं–राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक–के प्रबन्ध की शक्ति लोगों को देकर उनके सशक्तिकरण (या जनता के नेतृत्व वाला शासन) को प्रस्तावित करता है।

18. लोगों के सशक्तिकरण की प्रक्रिया चुनाव के तरीके से तय की जाए जो पूर्णतया स्वतंत्र हो और जहाँ प्रत्येक को उम्मीदवार के तौर पर भागीदारी करने का अधिकार है तथा मतदाता के रूप में अपनी राय जाहिर करने का अधिकार है। यह दलगत ढांचे को महत्व दिये बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा चुनाव के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करें) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्य सत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के राजकीय एकाधिकार का खात्मा करने का पक्षधर है। सम्बन्धित मतदाताओं को वापिस बुलाने का अधिकार हो जिसके तहत किसी सभा सदस्य के मतदाताओं का 1/5 भाग अगर लिखित में पुन: चुनाव की मांग इस आधार पर करें कि उपर्युक्त सदस्य अपने मतदाताओं का विश्वास खो चुका है।

19. राजनीतिक पहलू माँग करता है कि पाँचों स्तर (यानि, राष्ट्रीय, राज्य या क्षेत्रीय, जिला, ब्लॉक और गाँव) पर राजनीतिक सभा का गठन किया जाए जो लोकतान्त्रिक व्यवस्था पर कायम रहे तथा पूर्णतया लोकतान्त्रिक उसूलों, गतिविधियों

और ढाँचे पर आधारित हो। ऐसा मॉडल निर्णय लेने में भी अधिकतम सम्भव लोक सशक्तिकरण के सिद्धान्त को लागू करना आवश्यक बना देता है।

20. आर्थिक पहलू की आवश्यकता है कि एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता के लिए पाँचों स्तर पर विकास सभाएँ स्थापित की जाएं जिसकी धारणाएँ, कानून एवं नियम पुर्वोक्त दो उच्चस्थ प्राथमिकताओं (यानि, मानवजाति और पर्यावरण) तथा पाँच सिद्धान्तों (यानि, पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जन-नेतृत्वकारी लोकतन्त्र तथा चहुंमुखी पारदर्शिता) की रोशनी में बनाए जाएं। मनुष्य की जैव-सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एडम स्मिथ का 'निजी हित' आधारित बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त तथा हर चीज का राज्य द्वारा राष्ट्रीयकरण करने के मार्क्सवादी बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त, ये दोनों एक तरफा है। परन्तु, विडम्बना यह है कि दोनों मनुष्य और पर्यावरण विकास के सन्दर्भ की बजाए विकास, सम्पन्नता तथा प्रगति को धन वृद्धि के रूप में नापते हैं।

21. सांस्कृतिक पहलू की आवश्यकता है कि पाँचों स्तर पर सांस्कृतिक सभाएं स्थापित की जाएं।यह ऐसे जीने के तरीके (या जीवन शैली) की माँग करता है जो बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों से भरपूर हों तथा लोगों के बीच में तर्कसंगत मानवतावाद एवं पर्यावरणवादी चिन्तन, व्यवहार एवं संगठन को विकसित करता हो।

22. पाँचों स्तरों पर राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक सभाओं द्वारा बनाये गये कार्यक्रमों और नीतियों को लागू करने के लिए अपने-अपने राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक क्षेत्र के विशेषज्ञों के आयोगों का चुनाव करना। राजनीतिक विशेषज्ञों का आयोग राजनीतिक मुद्दों, जैसे–कानून और व्यवस्था, अपराध रोकथाम, न्यायिक कार्यवाही से सम्बन्ध रखे; विकास विशेषज्ञों का आयोग आर्थिक, वित्तीय मसलों, जैसे–विकास योजना, कृषि उद्योग, सेवाएं, वित्त और बजट को देखे और सांस्कृतिक विशेषज्ञों का आयोग शिक्षा, स्वास्थ्य, नैतिक मूल्यों एवं अन्य सांस्कृतिक विषय, जैसे–भाषा, संगीत, नृत्य, सिनेमा उद्योग आदि पर ध्यान दें।

23. प्रत्येक चुनी हुई संस्था अपने प्रभाव क्षेत्र में चाहे वह निचले स्तर की हो या ऊपर के स्तर की हो सम्प्रभुसत्ता सम्पन्न होगी। किसी भी समय दो चुनी हुई संस्थाओं या सार्वजनिक संस्थाओं के मध्य मतभेद उत्पन्न हो तो सम्बन्धित इकाइयाँ अपने-अपने प्रतिनिधि समूहों को नियुक्त करेंगी जो बातचीत के जरिए सम्बन्धित प्रश्न का हल निकालेंगी। यदि मामला आपस में तय हो जाता है तो वह फैसला मान्य होगा। यदि दोनों पक्ष साझे निर्णय पर सहमत नहीं होते तो मसला सम्बन्धित लोगों द्वारा जनमतसंग्रह से हल किया जाएगा।

24. इसका मानना है कि किसी भौगोलिक इकाई की आन्तरिक सुरक्षा का प्रश्न सम्बन्धित लोगों द्वारा ही देखा जाए। विभिन्न भौगोलिक इकाइयों की सीमा-सुरक्षा का मुद्दा सुरक्षा एजेन्सी द्वारा देखा जाए तथा यह सुरक्षा एजेन्सी सम्बन्धित लोगों द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा स्वीकृत नियमों के अनुसार बनाई जाए।

25. समाज में प्रत्येक प्रदूषण फैलाने वाली तकनीक का संचालन यह नहीं होने देगी चाहे उस तकनीक में कितनी भी ज्यादा उत्पादक क्षमता हो।

4. तात्कालिक कार्य

मौसम परिवर्तन के घातक संकट की मूलभूत वास्तविकता, जिसने अब हमारी पृथ्वी को हिलाकर रख दिया है, यह लोगों में इस तथ्य की तुरन्त जागृति की माँग करता

है कि मनुष्य जाति और अन्य जैव-घटनाक्रमों के सामने अब–जीवन या मृत्यु–की घातक चुनौती मुँह बाए खड़ी है।

आगे, इसकी जरूरत यह है कि लोगों को इस तथ्य के बारे में सचेत किया जाए कि ''जीवन और मृत्यु'' की उक्त चुनौती का कारण मौजूदा अमानवीय कारपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था तथा इसके अमानवीय संचालकों जो केवल मात्र अपने स्वार्थी निजी हितों के अलावा और किसी हित से प्रेरित नहीं हैं–में निहित है।

तृतीयत:, यह लोगों को इस तथ्य के बारे में जागृत करना आवश्यक बनाता है कि इस खतरनाक चुनौती का वास्तविक हल अल्पकालिक तथा दीर्घकालिक प्रकृति-मानव निर्देशित कार्यक्रम में मौजूद है।

चतुर्थ, यह प्रकृति-मानव केन्द्रित अन आन्दोलन के हिस्सेदार के तौर पर उन सभी को संगठित होने का आह्वान करता है जो उक्त वर्णित तीन बिन्दुओं से सहमत हैं।

पंचम, यह पर्यावरणवादी एवं मानवतावादी आन्दोलनों तथा भारत व दुनिया के अन्य देशों की जनता से जुड़े हुए सभी लोगों से भाईचारे के सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक समझता है। 19 नवम्बर, 2007

आर.पी. सर्राफ, सम्पादक
प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यूपाइंट द्वारा तैयार एवं संकलित
Email:saraf_rp@reddifmail.com

* * * * *

वर्तमान कारपोरेट आधारित बाजार-नेतृत्व वाले अन्तर्राष्ट्रीय संस्थानों और राष्ट्रीय राज्यों में मामलों की विद्यमान वास्तविक स्थिति को प्रदर्शित करते कुछ तथ्य

1. दुनिया में सबसे अधिक भ्रष्ट गतिविधि के क्षेत्र कौनसे हें? भ्रष्टाचार से अत्यधिक प्रभावित क्षेत्र और संस्थाएं–(पैमाना-1=बिल्कुल भ्रष्ट नहीं; 5=अत्यधिक भ्रष्ट) राजनीतिक पार्टियां=4.0; संसद/विधानसभा=3.7; पुलिस=3.6 (स्रोत, न्यू इन्टरनेशनलिस्ट, दिसम्बर, 2006, अंक 396)

2. जैमेका गलीनर न्यूज (संडे/अप्रेल 15, 2007) के अनुसार विश्व बैंक प्रमुख भ्रष्टाचार कांड में शामिल।

3. विश्व बैंक के अन्तर्राष्ट्रीय मामलों के निदेशक श्रीमान् विनय भार्गव स्वीकार करते हैं कि विश्व बैंक को अनुचित नीतियों और व्यवहार के चलते भ्रष्ट चरित्रित किया जाता है। (स्रोत, गाउन्टलेट न्यूज)

4. ट्रांसपेरेन्सी इन्टरनेशनल के अनुसार सन् 2006 की भ्रष्ट आचरण की तालिका में भारत का स्थान 70वां है।

5. भारतीय आर्थिकता में काला धन वास्तव में दिमाग झकझोरने वाला है; एक परिमित आकलन के मुताबिक काला धन का घटक भारतीय आर्थिकता में सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जी एन पी) का 50% से 60% के बीच है। (स्रोत, हिन्दुस्तान टाइम्स, 13.03.2007)

6. काला धन और भ्रष्टाचार एक दूसरे को बढ़ाते हैं : मिस्टर एन विट्ठल (केन्द्रीय निगरानी आयुक्त) ने राजनीति, व्यापार एवं अफसरशाही में भ्रष्टाचार की जड़ काले धन को समाप्त करने के लिए रणनीतियाँ प्रस्तुत की हैं। (स्रोत, हिन्दू, अगस्त 8, 2001)

7. हालिया, दुनिया में सबसे धनी 1% लोगों के पास इतना धन है जितना धन नीचे की 57% आबादी के पास है।

8. 'दो शिखर' अमीर और गरीब : 1997 में, एक ध्रुव जिसका प्रतिनिधित्व 2.4 बिलियन लोग करते हैं जिनकी वार्षिक औसत आय 1000 डालर से कम है, इस जनसंख्या में भारत, इण्डोनेशिया तथा चीन के ग्रामीण लोग भी शामिल हैं एवं यह दुनिया की 42% आबादी है। इस ग्रुप की आय दुनिया की पी पी पी आय की 9% है। दूसरा ध्रुव 500 मिलियन लोगों का है जिसकी सालाना औसत आय 11500 डालर से अधिक है। इस ग्रुप में अमेरिका, जापान, जर्मनी एवं ब्रिटेन शामिल हैं। संयुक्त रूप में यह दुनिया की आबादी का 13% है, फिर भी, इनकी आमदनी दुनिया की पी पी पी आय की 45% है। (स्रोत, यू एन डी पी, 2002)

9. अमेरिकी अपराध दरें 1960-2006 : अमेरिकी अपराध सूचकांक दरें प्रति 1 लाख निवासियों पर सन् 1960 में जहाँ 1887.2 थी वहाँ 1991 में यह 5897.8 अंक पर पहुँच गई। 1960 की अपराध दर के मुकाबले 1991 में यह अपराध दर 313% हो गई। 1996 में अमेरिका में अपराध का शिकार होने की संभावना 5.079% थी और गंभीर हिंसक अपराध के शिकार होने की संभावना 0.634% थी जबकि ये दरें सन् 1960 में क्रमश: 1.89% और 0.161% ही थी। (स्रोत, यू एस :: यूनिफार्म क्राइम रिपोर्ट)

10. गरीबी : भारत जैसे अल्पविकसित देशों में अमेरिकी 1 डालर/प्रतिदिन/प्रतिव्यक्ति या 365 डालर/प्रतिवर्ष के विश्व बैंक की गरीबी की लाईन की परिभाषा के अनुसार संभवत: भारत की 75% से अधिक आबादी गरीबी की रेखा के नीचे है। (स्रोत, इंडियन वाच, 2006)

11. दुनिया में कुल मिलाकर धनवान 10% लोगों का 85% सम्पत्ति पर अधिकार है। (स्रोत, नेटवर्किंग ओर्ग.)

12. अधिकतम धनवान 2% लोगों के पास दुनिया के 50% से अधिक संसाधन हैं जबकि दुनिया के 50% लोगों के पास केवल 1% संसाधन हैं। (स्रोत, न्यूज सेन्टर, अक्टूबर 18, 2007)

13. यद्यपि उत्तरी अमेरिका में दुनिया की 6% वयस्क आबादी है जबकि यह दुनिया की 34% सम्पत्ति का उपभोग करती है। (स्रोत, न्यूज सेन्टर, अक्टूबर 18, 2007)

14. दुनिया की सम्पत्ति कुछ ही हाथों में इतनी सकेन्द्रित हो चुकी है कि अगर दुनिया के सभी लोगों में समान तौर पर वितरित की जाए, तो प्रत्येक व्यक्ति को 20500 डालर उपयोग के लिए हिस्से में आयेगी। (स्रोत, न्यूज सेन्टर, अक्टूबर 18, 2007)

15. दक्षिण अफ्रिका में कम से कम 50 लाख लोग बेरोजगार हैं। यहाँ सरकारी बेरोजगारी दर 30% है, परन्तु कुछ स्थानों पर बेरोजगारी 80% के निकट है। (स्रोत, फाइनेन्शियल टाइम्स, अप्रेल 28, 2006)

16. रोजगार सृजन की धीमी रफ्तार ऐसे देशों में भी कायम है जिनकी तुलनात्मक उच्च वृद्धि दर है। ऐसे देशों की कुल 170 करोड़ श्रम शक्ति में से 50 करोड़ बेरोजगार या अर्द्ध बेरोजगार हैं।

1980 के एडीबी के अध्ययन में गणना की गई है कि उस समय चीन में 3% वृद्धि दर देश में रोजगार के 1% अवसर पैदा करती थी, जबकि उसके बाद अगले दशकों में उतना

ही रोजगार पैदा करने के लिए 8% वृद्धि दर की दरकार होने लगी है। (स्रोत, फाइनेन्शियल टाइम्स, अप्रेल 28, 2006)

17. युद्धों और हत्याओं से ज्यादा आत्महत्या से मरने वालों की संख्या अधिक है। प्रति वर्ष 2 करोड़ से 6 करोड़ के बीच लोग आत्महत्या की कोशिश करते हैं और लगभग 10 लाख लोग ऐसा कर पाते हैं। पिछले 45 सालों में आत्महत्या की दर विश्व भर में 60% बढ़ गई है। (स्रोत, स्वीसीन्फो, 10.09.2006)

18. जनसंख्या : सन् 2050 में विश्व जनसंख्या 9.2 अरब पहुँच जायेगी, जबकि सन् 2006 में यह 6.7 अरब हुई है।

विश्व जनसंख्या पड़ाव बिन्दु : दुनिया की जनसंख्या 1804 में 1 अरब थी, वह 123 साल बाद (यानि 1927 में) 2 अरब हुई, इसके अगले 33 साल (यानि 1960 में) 3 अरब हो गई, अगले 14 साल (1974 में) यह 4 अरब पहुँची, जबकि अगले 13 साल (1987 में) यह 5 अरब हो गई। इसके बाद अगले 12 साल (1999 में) यह 6 अरब हुई। (स्रोत, यू एन जनसंख्या विभाग)

19. सन् 2007 में दुनिया भर में सेना पर खर्च 1100 अरब (बिलियन) डालर है। अमेरिका को छोड़कर बाकी सारी दुनिया का सेना पर खर्च सन् 2007 में उतना ही है जितना कि करीब सन् 1998 में खर्च हुआ, जो आधा ट्रीलियन (यानि 500 मिलियन) डालर है। अमेरिका का सेना पर खर्च करीब 280 बिलियन डालर (सन् 1998 में) से बढ़कर करीब 600 बिलियन डालर हो गया है। 'आतंकवाद के विरुद्ध विश्व युद्ध (जी डब्ल्यू ओ टी)' को लगातार जारी रखने के लिए 150 बिलियन डालर से अधिक खर्च हो रहा है। जबकि चीन का सैनिक खर्च 65 बिलियन डालर है। जबकि रूस का सैनिक खर्च 50 बिलियन डालर है और भारत का सैनिक खर्च 19 बिलियन डालर है। पाकिस्तान का सैनिक खर्च 4.3 बिलियन डालर है।

20. जल समस्या : पश्चिमी एशिया में सन् 1980 से शुद्ध जल की उपलब्धता प्रति वर्ष प्रति व्यक्ति 1700 क्यूबिक मीटर से घटकर 907 क्यूबिक मीटर रह गई है। जिसका बड़ा कारण प्रदूषण और माँग का बढ़ना है। इस शताब्दी के मध्य तक यह मात्रा 420 क्यूबिक मीटर/प्रति वर्ष/प्रति व्यक्ति रह जायेगी। बीसवीं शताब्दी में जबकि जनसंख्या तीन गुनी बढ़ी है और पानी के उपयोग में 6 गुना वृद्धि हुई है। अगले 50 वर्षों में विश्व की जनसंख्या 40 से 50% के बीच बढ़ जायेगी। औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के साथ-साथ जनसंख्या में वृद्धि से जल की माँग में बढ़ोतरी हो जायेगी, जिसका पर्यावरण पर गंभीर असर पड़ेगा। (स्रोत, यूनेस्को ओर्ग/जल संसाधन)

21. सिंचाई की माँग की वजह से दुनिया की बड़ी नदियों का 10 प्रतिशत जल प्रति वर्ष समुद्र में गिरने से वंचित रह जाता है। (स्रोत, यू एन ई पी, अक्टूबर, 2007)

22. यह आकलन किया गया है कि स्वच्छ एवं सुरक्षित पीने के पानी के अभाव में प्रतिदिन 4500 बच्चे मर जाते हैं।

दुनिया की आबादी का एक तिहाई हिस्सा जल संकट वाले देशों में रहता है और यह संख्या अगले दो दशकों में नाटकीय ढंग से बढ़ने की आशा है। विकासशील देशों खासकर सब सहारा अफ्रिका एवं दक्षिण एशिया में इस संकट की बहुत खराब स्थिति है। (स्रोत, युनेस्को. ओर्ग/जल संसाधन)

23. विश्व स्वास्थ्य रिपोर्ट 2007 : यह रिपोर्ट दर्शाती है कि दुनिया में बिमारी तथा महामारी फैलने, औद्योगिक दुर्घटनाएं, प्राकृतिक विपदाएं तथा अन्य स्वास्थ्य सम्बन्धी आपातकालीन स्थिति पैदा होने का जोखिम बढ़ता जा रहा है जो तेजी से वैश्विक लोक स्वास्थ्य सुरक्षा को खतरा पैदा कर सकता है।

24. विश्व में एच आई वी/एडस से ग्रसित लोगों की संख्या सन् 2005 में 4 करोड़ 2 लाख 74 हजार रही है। (स्रोत, यू एन एडस, एडस एपिडेमिक अपडेट, दिसम्बर 2005)

25. वर्ल्ड वाच रिपोर्ट का कहना है कि आतंकवाद के विरुद्ध युद्ध, गरीबी, बिमारी और पर्यावरण की समस्याओं से लोगों का ध्यान हटाने का साधन है।

26. जैव विविधता : मानव इतिहास के इस समय में जैव विविधता में परिवर्तन सबसे तीव्र गति से हो रहे हैं। जीवाष्म रिकार्ड में दर्शायी गई वृद्धि दर से सौ गुना अधिक तेजी से प्रजातियां विलुप्त हो रही हैं। उभयचर जीवों का 30 प्रतिशत से अधिक, स्तनधारियों के 23 प्रतिशत तथा पक्षियों के 12 प्रतिशत भाग के विलुप्त होने का खतरा पैदा हो गया है। छठी महाप्रलय होने जा रही है, इस बार, इसका कारण मानव प्रजाति की गतिविधियां हैं। भोजन की हमारी बढ़ती माँग की पूर्ति का मतलब है या तो कृषि उत्पादन की तीव्रता में बढ़ोतरी की जाए (रसायन, ऊर्जा और पानी के अधिक उपयोग से तथा फसलों एवं बीजों की नस्लों में अधिक कुशलता लाकर) या और अधिक जमीन में जोताई की जाए, दोनों ही सूरत में जैव विविधता को नुकसान पहुँचता है। आक्रमणकारी शत्रु प्रजातियों का प्रवेश एक बढ़ती हुई समस्या है। सन् 1982 में अमेरिकी जलपातों द्वारा दुर्घटनावश कॉम्ब जेलीफिश के काले समुद्र में प्रवेश ने इस सागर की तमाम सामुद्रिक पारिस्थितिकी को अपने घेरे में ले लिया, जिससे 1992 तक इस सागर की 26 तरह की वाणिज्यिक मछलियों को नष्ट कर दिया।

मछली : 1961 की तुलना में सन् 2001 में मछलियों की खपत तिगुनी हो गई। 1980 से मछलियों के पकड़ने का क्षेत्र या तो स्थिर हो गया या धीरे-धीरे घटने लग गया। सब्सीडी ने जरूरत से ज्यादा मछली पकड़ने की क्षमता बढ़ा दी, समुद्रों में मछली के वहनीय उत्पादन की आवश्यकता से यह क्षमता आकलन के अनुसार 250 प्रतिशत अधिक है। (स्रोत, यू एन ई पी, अक्टूबर 2007)

27. पर्यावरण : वैश्विक उष्माकरण या मौसम परिवर्तन ऐसे जोखिम की ओर बढ़ रहा है जहाँ पर्यावरणीय क्षति वापिस न लौटने के अनजाने बिन्दु को भी पार कर सकती है। संयुक्त राष्ट्र महासचिव के अनुसार ''यह हमारे युग की जीने या मरने की समस्या है''। (स्रोत, यू एन एफ सी सी सी रिपोर्ट)

पानी के तापीय फैलाव तथा ग्लेशियर के पिघलने एवं बर्फ की चट्टानों के कारण आने वाले निकट भविष्य में समुद्र का स्तर बढ़ेगा, जिसके अत्यधिक घातक परिणाम निकलेंगे : दुनिया भर में समुद्री किनारों से 100 किलोमीटर की सीमा में रहने वाली आबादी का 60 प्रतिशत भाग इससे प्रभावित होगा।

समुद्र में अम्लीकरण और तापमान में वृद्धि से विश्व खाद्य सुरक्षा पर भी दुष्प्रभाव पड़ने की संभावना है। पेचिश और मलेरिया की बिमारियों का और अधिक विस्तार हो जायेगा। मैक्सिको, भारत और चीन जैसे देशों में अम्लीय वर्षा अब और अधिक चुनौतीपूर्ण हो गई है। (स्रोत, यू एन ई पी, अक्टूबर 2007)

* * * * *

कामगारों के आन्दोलन को दरपेश चुनौतियां और आगे का रास्ता

1. कार्यबल और कामगार लोगों की धारणा

कार्यबल शब्द किसी देश में (विश्व में भी) कामगार लोगों की उस संख्या को अभिव्यक्त करता है जो अपनी जीविका कमाने के योग्य है तथा उनकी आय पर सम्बन्धित परिवार निर्भर है। भारत में कुल कार्यबल 40 करोड़ है। जिन पर 70 करोड़ लोग निर्भर हैं। इस कार्यबल में 3 करोड़ संगठित मजदूर हैं। बचे हुए 37 करोड़ असंगठित मजदूरों में 24 करोड़ कृषि समुदाय के हैं (जिसकी बहुसंख्या स्वतन्त्र किसान की है और कुछ हिस्सा कृषि मजदूरों का है) तथा 13 करोड़ कामगार असंगठित क्षेत्र में लगे हुए हैं।

2. ट्रेड युनियन की अवधारणा

ट्रेड यूनियन शब्द का आम तौर पर अर्थ एक ट्रेड के सदस्यों की संस्था है जो उनके अधिकारों की रक्षा करती है।

3. ट्रेड युनियन आन्दोलन की उत्पत्ति

ट्रेड युनियन आन्दोलन का उद्गम अभी हाल ही का है। इसकी उत्पत्ति अचानक नहीं हुई है। बल्कि पश्चिमी यूरोप में, खासतौर पर इंग्लैण्ड में, 19वीं शताब्दी के प्रथम चतुर्थांश में औद्योगिक मजदूरों में उस समय उभरा जब मजदूरों ने बेहतर जिन्दगी व बेहतर काम की स्थिति के लिए संघर्ष किया तो उस परिस्थिति ने मजदूरों का कोई संगठन बनाने की सामाजिक आवश्यकता को जन्म दिया।

मजदूर वर्ग स्वयं औद्योगिक तकनीकी, उसकी कार्य संस्कृति तथा सांगठनिक उसूलों के उत्थान की उपज है। यह नया औद्योगिक तन्त्र (उस समय का भाप आधारित मशीनी तकनीकी वाला तन्त्र, उसका एक ही स्थान पर बहुआयामी कार्य स्वरूप तथा संगठन जो कार्य प्रक्रिया में अन्तरसंबंधित कार्य को करने वाले मजदूरों से गठित था) माँग करने लगा था कि नये श्रम संबंधों (या औद्योगिक संबंधों) को मजदूरों और उद्योगपतियों के मध्य निर्धारित किया जाए। क्योंकि पुराने किस्म के जमींदार और अर्द्धदास के अधिनस्थता वाले कृषि श्रम संबंध (जो पशु-चालित हल तकनीक पर आधारित था, विशाल एवं भिन्न भागों की जमीन पर खेती कार्य फैला हुआ था तथा एक व्यक्ति का संगठन जमीन से जुड़ा हुआ था) नई औद्योगिक तकनीक की जरूरतों को पूरा नहीं करते थे। नतीजतन, पुराने श्रम संबंधों (जहाँ अर्द्ध कृषि-दास जमीन से बंधा हुआ था तथा अन्ततः जमीदार से बंधा हुआ था) की जगह नये श्रम संबंधों ने ले ली। ये नये श्रम संबंध फैक्ट्री मालिक और मजदूर के बीच मजदूरी से जुड़े संबंध पर आधारित थे जहाँ मजदूर कहीं भी जाने और स्वीकृत मजदूरी पर काम करने के लिए स्वतंत्र हो गया।

4. ट्रेड यूनियन आन्दोलन का ऐतिहासिक विकास

ट्रेड यूनियन आन्दोलन के आरम्भ में ही खासतौर पर मजदूरों और आमतौर पर मेहनतकश लोगों की जिन्दगी में उसने सकारात्मक भूमिका निभाई है। इसने विभिन्न नस्ल, धार्मिक समुदायों, संस्कृति और क्षेत्रीय समूहों आदि के मजदूरों को एक यूनियन में

एकताबद्ध कर उनके मानवीय नजरिये को विस्तार देने में योगदान दिया है। इसने मेहनतकश लोगों को, विशेषतौर पर मजदूरों और कर्मचारियों तथा असंगठित मजदूरों के बहुत से अधिकारों को प्राप्त करने में भारी मदद की है। इन अधिकारों में शामिल हैं, एक यूनियन में मजदूरों को एकताबद्ध होने का अधिकार, हड़ताल करने और सामूहिक सौदेबाजी का अधिकार, मजदूरी और वेतन में बढ़ोतरी, काम के घण्टों में कमी, बाल श्रमिकों तथा नाबालिगों के श्रम पर पाबन्दी, मेहनतकश महिलाओं के लिए मातृत्व अवकाश, मकान की सुविधा, बीमारी सुविधा, शिशु देखभाल केन्द्र, फैक्ट्री केण्टीन, शुद्ध हवा की व्यवस्था, सुरक्षा प्रबन्ध, बीमा लाभ, मनोरंजन केन्द्र, स्वास्थ्य केन्द्र, श्रम कल्याण योजनाएँ आदि मामलों में मेहनतकश लोगों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान की है।

150 वर्ष पहले ट्रेड यूनियनों को वैधानिक संस्थाओं के रूप में मान्यता नहीं मिली थी क्योंकि फैक्ट्री मालिक ट्रेड यूनियनों के गठन का विरोध करते थे। शुरूआत में मजदूरों को ट्रेड यूनियन अधिकारों को प्राप्त करने के लिए एक लम्बा संघर्ष करना पड़ा तथा उसमें भारी कुर्बानी देनी पड़ी और आज ट्रेड यूनियनें न केवल कानूनी मान्यता लिए हुए हैं बल्कि विकास प्रक्रिया में एक प्रबल शक्ति के रूप में मान्यता प्राप्त है। इसी बीच ट्रेड यूनियनवाद सभी ट्रेड और धन्धों–जिसमें फैक्ट्री तथा ऑफिस जाने वाले लोग, किसान, मध्यम वर्ग, व्यापारी इत्यादि शामिल है–की आम कार्य प्रणाली और संगठित करने वाली इकाई बन चुकी है। इस प्रकार समाज में ट्रेड यूनियन का स्थान और भूमिका और अधिक बढ़ गई है।

बहुत-सी उपलब्धियों के बावजूद ट्रेड यूनियन आन्दोलन भी कुछ कमजोरियों से ग्रसित हैं, जो निम्न हैं–

ट्रेड यूनियनें मुख्यतया गैर-श्रमिक संगठनकर्ताओं (जो आमतौर पर राजनीतिक पार्टियों से आते हैं) के नेतृत्व और नियन्त्रण में है जो उनकी यूनियन के लिए काम करते हुए अपनी पार्टी द्वारा चलाए जा रहे ट्रेड यूनियन केन्द्र से सम्बद्ध कर देते हैं। ये विभिन्न केन्द्र मजदूरों को भिन्न-भिन्न राजनीतिक खण्डों में विभाजित रखते हैं और उनको अपना वोट बैंक समझते हैं।

5. कामगार आन्दोलन की वर्तमान दशा और उसके समक्ष चुनौतियाँ

श्रम के सम्पूर्ण इतिहास में मेहनतकश शायद ही इतना निराश रहा हो जितनी हताशा में आज वह है। आई एल ओ की हालिया रिपोर्ट के अनुसार इन दिनों दुनिया के मजदूर एक बात में संगठित है ''तनाव का रिकार्ड स्तर।'' दुनियां के पांच अगुवा विकसित देशों यानि, अमेरिका, इंग्लैण्ड, जर्मनी, पौलेण्ड, फिनलैण्ड के कार्यस्थलों पर तनाव से संबंधित एक सर्वे में अन्तराष्ट्रीय श्रम संगठन आई एल ओ ने पाया कि मजदूरों में चिन्ता, क्रोध और अवसाद का स्तर नियन्त्रण से बाहर है। मंदी, छटनी, छोट उद्योगों का बड़े में एकीकरण, छोटी अवधि के ठेके और उच्च उत्पादकता की मांग ने पिछले 10 वर्षों में उनकी बर्दाश्त सीमा को समाप्त कर दिया है, कई मजदूरों को चिड़चिड़ा बना दिया है और कई मानसिक संतुलन खोने की सीमा पर है।

मनोदशा बिगड़ने के दो तरफा कारण रिपोर्ट में हैं, लोग नई तकनीक को अपनाने में कठिनाई महसूस करते हैं तथा वे लगातार कार्य व्यवहार में बदलाव से तालमेल नहीं कर पाते।

मानसिक स्वास्थ्य के विश्व फेडरेशन ने अक्टूबर, 2000 में चेतावनी दी कि 2020

तक तनाव और मानसिक असंतुलन, सड़क दुर्घटनाओं, एड्स और हिंसा के मामलों से आगे निकल जायेंगे तथा कार्य समय के नुकसान का प्राथमिक कारण बन जायेंगे।

6. कामगारों की बढ़ती परेशानी तथा मानसिक शांतिभंग का मुख्य कारण

यह स्पष्ट है कि आई एल ओ की रिपोर्ट प्रथमतया विकसित देशों के संगठित क्षेत्र के श्रमिकों के हालात के सम्बन्ध में है और विकासशील देशों के संगठित क्षेत्र के बदहाल श्रमिकों (जिनकी संख्या पहले वालों से तीन गुना से अधिक है) के हालात को छोड़ देता है। द्वितीयत: यह रिपोर्ट विश्व के असंगठित क्षेत्र के बदहाल श्रमिकों की जिन्दगी के बारे में कुछ नहीं कहती।

तथापि, उपर्युक्त जरूरी सूचना की कमी के बावजूद आई एल ओ की रिपोर्ट विकसित देशों के श्रमिकों की विपत्तिदायक हालात और उसके कारणों को जाहिर करती है लेकिन हम इसके पहले भाग से सहमति रखते हुए इसके दूसरे भाग यानि कि विपत्तिदायक स्थिति के कारण पर इससे सहमत नहीं हैं।

हमारा तर्क यह है कि मानव निराशा के गुणात्मक और मात्रात्मक पहलू मानवीय सोच से जुड़े होते हैं। अगर कोई सोचता है कि मामलात एक या दूसरे उपलब्ध तरीकों से ठीक हो सकते हैं तो उसकी परेशानी चिन्ताप्रद हद तक नहीं जाती। लेकिन जब किसी को अपने दुख से मुक्त होने का रास्ता नजर नहीं आता है तो उसकी परेशानी के क्षण ऐसा भूत बन जाते हैं जो हर वक्त उसे तंग करते हैं।

हर कोई जानता है कि इतिहास में श्रमिकों को कई जटिल और पेचीदा हालात से दो-चार होना पड़ा है लेकिन उन्होंने कभी अपने भविष्य की उम्मीद का दामन नहीं छोड़ा है। मानवीय सामाजिक जिन्दगी के दौरान उनको लगातार नई तकनीकों और उससे सम्बन्धित कुशलताओं को एक के बाद दूसरी को अपनाना पड़ा है। भोजन इकट्ठा करने की तकनीक और उसके अमल (व्यवहार) से शुरू करके और शिकारबाजी तथा पशुपालन और कृषिकारी तकनीकों से गुजरते हुए, उन्होंने हमेशा अपने आपको हर आजमाइश की घड़ी में योग्य साबित किया है।

कामगारों का अपने भविष्य के प्रति आत्मविश्वास में कमी होने का कारण इस तथ्य में निहित है कि पूँजीवादी व्यवस्था ने अपने शुरूआत से ही कामगारों या आम लोगों को कोई भी सामाजिक सुरक्षा प्रदान नहीं की। जबकि पिछली सभी सामाजिक व्यवस्थाओं–गण, कबीला, सामन्ती–में लोगों को अपने भविष्य के बारे में विश्वास की सामाजिक सुरक्षा संयुक्त परिवार व्यवस्था के रूप में हमेशा विद्यमान और प्रचलित रही।

7. कामगार आन्दोलन को दरपेश चुनौतियों का मुख्य कारण

कामगार आन्दोलन को दरपेश चुनौतियों का मुख्य कारण कामगारों और ट्रेड युनियनों का भ्रष्ट और अपराधी राजनीतिक दलों और राजनीतिज्ञों के प्रति वफादारी एवं ताबेदारी में निहित है जो कारपोरेट व्यापार, कारपोरेट राजनीति एवम् कारपोरेट व्यवस्था के हितों की पक्के तौर पर सेवा करते हैं। इस प्रकार चोरी-चोरी हर समय और हर स्थान पर कामगार आन्दोलन की जड़ें खोदते हैं और उसे छिन्न-भिन्न करते हैं। मजदूरों में एकता नहीं होना, अनुशासन की कमी होना, इत्यादि अन्य सभी कारणों की अहमियत दोयम दर्जे की है।

8. समस्याओं से निकलने का रास्ता

मजदूरों को लगातार दरपेश तनाव, भूखमरी तथा वंचितपन से निकलने का रास्ता ट्रेड यूनियन पर प्रकृति-मानव केन्द्रित आम अवधारणा अपनाने में निहित है।

9. मूलभूत अवधारणा

प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण मानता है कि पूंजी में दो तरफा घटनाक्रम शामिल है, यानि एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन और दूसरी तरफ मानवीय संसाधन। ऐसा इसलिए है क्योंकि पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों से ही मानव समुदाय का जीवन बनता है और उनके बिना मानव समाज के लिए किसी भी चीज का कोई मूल्य नहीं।

यह पूंजी की दो धारणाओं, यानि पूंजी का उदारवादी (कॉरपोरेट) सिद्धान्त तथा पूंजी के मार्क्सवादी सिद्धान्त को पूर्णतया अस्वीकार करती है। उदारवादी (कॉरपोरेट) सिद्धान्त मानता है कि पूंजी चार कारकों, यानि, तकनीकी, श्रम, कच्चा माल और पूंजी की उपज है जबकि मार्क्सवादी सिद्धान्त मानता है कि मजदूरों का अतिरिक्त मूल्य (मजदूरों के वास्तविक श्रम के मूल्य से कम दी गई मजदूरी जिसे पूंजीपति हड़प लेता है) ही पूंजी है। वास्तव में, दोनों सिद्धान्त व्यवहार में, धन या सम्पदा अथवा इसकी वृद्धि को पूंजी बताते हैं।

ऐसा इसलिए है क्योंकि उदारवादी और मार्क्सवादी दोनों सिद्धान्त विकास, प्रगति और समृद्धि (चाहे व्यक्तिगत हो या सामूहिक) का प्रतिनिधित्व पूंजी द्वारा ही करने में एकमत है।

इसलिए सम्पूर्ण विश्व में सभी सरकारी बजटों, व्यापारिक लेखों-जोखों और व्यक्तिगत आय को विकास, प्रगति और समृद्धि का सूचकांक स्वीकार किया जाता है।

ट्रेड यूनियनों को जाति, सम्प्रदाय तथा संकीर्ण लाइनों पर संगठित करने का दक्षिणपंथी व्यवहार ट्रेड यूनियनों को मेनेजमेन्ट का पिछलग्गू बनाती है।

10. कामगार लोगों के आन्दोलन का मुख्य कारण

1. ट्रेड यूनियनों को 3 तरफा जुड़ी हुई गतिविधियां करने की जरूरत है (क) राजनीतिक, आर्थिक, कानूनी और सांस्कृतिक स्तर को ऊंचा उठाते हुए मजदूरों की सामाजिक चेतना को गहरा करना (ख) ट्रेड यूनियनों की जनतांत्रिक कार्यप्रणाली हेतु प्रयास करना (ग) मजदूरों की तात्कालिक और दीर्घ-परास की मांगों के आधार पर एवं एक धंधे में एक यूनियन के नियम से मेल बैठाते हुए, मजदूरों को संगठित करना।

2. मजदूरों की सामाजिक चेतना ऊंचा उठाने के लिए यह जरूरी है कि मजदूरों में ग्लोबल सामाजिक वास्तविकता एवं इसकी मांगों की पर्याप्त समझ पैदा की जाए।

3. ट्रेड यूनियनों के जनतांत्रिक कार्यकलाप के लिए यह जरूरी है कि हर वक्त और हर स्तर पर जनतांत्रिक सिद्धान्तों का पालन किया जावे। मजदूरों की प्रत्येक मांग के लिए यह कानूनी और शान्तिपूर्ण साधन अपनाने के लिए प्रेरित करता है। इसमें वार्ता, समझौता, मध्यस्थता और अन्त में हड़ताल शामिल है।

11. कामगार लोगों के आन्दोलन की मांगों का आम घोषणा-पत्र

1. कर्मचारियों को चुनाव लड़ने सहित राजनीतिक अधिकार।

2. श्रम को मानवीय पूंजी माना जावे न कि माल।

3. कार्यशक्ति का प्रबन्ध के मातहत की स्थिति को समाप्त करना, मजदूरों सहित लोगों को प्रबन्ध/प्रशासन में भागीदारी का संवैधानिक अधिकार प्रदान करना।

4. एक उचित सरकारी श्रमनीति का निर्माण करना जिसका उद्देश्य कामगारों एवं प्रबन्धकों को समान दर्जा देकर श्रम-पूंजी (कार्यशक्ति-प्रबन्ध) के बीच सौहार्द्धपूर्ण सम्बन्ध बनाना हो।

5. मजदूरों की क्षमता एवं योग्यताओं में वृद्धि करना।

6. श्रम विरोधी कानूनों के जरिए भारत को प्रतियोगी बनाने की भारत सरकार की नीति को वापिस लेने की मांग करना।

7. सबसे नीचे और सर्वोच्च के बीच मजदूरी/वेतन का फर्क 1 : 5 रखने की मांग करना।

12. कामगार लोगों के आन्दोलन का विशिष्ट घोषणा-पत्र

यह प्रत्येक यूनियन के मुताबिक अलग-अलग होगा।

13. कामगार लोगों के आन्दोलन की कार्यशैली

(क) विचार एवं आचरण में नेतृत्व हमेशा मजदूरों के साथ-साथ ट्रेड यूनियन आन्दोलन के प्रति जवाबदेह हो।

(ख) मजदूर एवं प्रबन्ध लोगों के प्रति जवाबदेह हो।

(ग) मांगों का घोषणा-पत्र तर्क संगत होना चाहिये तथा मजदूरों की सलाह से तैयार हो एवं मजदूरों में पूरी तरह लोकप्रिय हो।

(घ) ट्रेड यूनियन कार्य मजदूरों से प्रतिदिन घनिष्ट सम्पर्क के जरिए किया जाए एवं ट्रेड यूनियन काम करते समय मजदूरों की सामाजिक चेतना बढ़े।

(ङ) ट्रेड-यूनियन गतिविधियों में जनतांत्रिक कायदों का कड़ाई से पालन किया जाए।

(च) प्रत्येक मजदूर को धैर्यपूर्वक सुना जाए तथा उसकी व्यक्तिगत, पारिवारिक और कार्यालय सम्बन्धी समस्याओं को जानने का प्रयास किया जाए।

(छ) ट्रेड यूनियनों के आम सदस्यों की नियमित बैठकें की जाए।

(ज) महिलाओं को ट्रेड यूनियन नेतृत्व में उचित प्रतिनिधित्व दिया जाए।

(झ) मजदूरों द्वारा हर कहीं पर्यावरण संरक्षण, समता, उत्पादकता, जनवाद एवं पारदर्शिता के मानदण्डों का पालन किया जाए।

14. कामगार लोगों के आन्दोलन का संगठनात्मक कार्य

एक संगठनात्मक रूप जो एक कार्यस्थल में एक यूनियन के सिद्धान्त पर अमल द्वारा मजदूरों के बीच अधिकतम सम्भव एकता की जरूरत पर जोर देता है। जहां एक यूनियन बनाना व्यवहारिक नहीं हो वहां तुरन्त एक न्यूनतम् साझा कार्यक्रम के आधार पर विद्यमान सभी यूनियनों को एक संयुक्त फ्रण्ट में संगठित करने का प्रयास होना चाहिये।

15. प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल दो सर्वोच्च प्राथमिकताओं, यानि पर्यावरण एवं मानव का पक्षपोषण करता है तथा पांच सिद्धान्तों, यानि पर्यावरणीय संवर्द्धन, उचित

समता (यानि, प्रत्येक वंचित एवं जरूरतमन्द को सामाजिक सुरक्षा, अतर्कसंगत वेतन असमानता को 1 : 5 के अनुपात में तर्कसंगत बनाना) जनता के नेतृत्ववाला लोकतंत्र (कॉरपोरेट पूंजीवादी समर्थक राजनीतिक पार्टियों एवं व्यवसायियों की जगह लोगों का सशक्तिकरण) तथा चौतरफा पारदर्शिता। ये पांच आयामी मूलभूत सिद्धान्त मानव की जैव-सामाजिक प्रकृति से मेल खाते हैं, यानि यह मनुष्य के निजी हित और उसके सामाजिक हित में समन्वय बैठाते हैं।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल परम्परागत राष्ट्रीय विकास मॉडलों यानि कॉरपोरेट नेतृत्व और सरकार निर्देशित की तुलना में विकास की समयानुकूल धारणा को पेश करता है। कॉरपोरेट नेतृत्ववाला विकास मॉडल केवल लाभ या उत्पादकता (जो केवल धनस्वामियों के हितों को सुनिश्चित करता है) को अपना एकमात्र उद्देश्य बनाता है जबकि सरकार निर्देशित विकास मॉडल उत्पादन के साधनों का केवल समाजीकरण (अथवा राष्ट्रीयकरण) को ही अपना लक्ष्य चुनता है (जो शासक राजनीतिज्ञों एवं अफसरों के हितों की सेवा करता है), ये दोनों परम्परावादी राष्ट्रीय मॉडल मानवता के जैव-सामाजिक चरित्र या निजी-हित एवं सामाजिक हित दोनों के विपरीत केवल निजी-हित की सेवा करते हैं। फिर वे पर्यावरण को कोई प्राथमिकता नहीं देते तथा आर्थिकता अथवा वृद्धि प्रक्रिया में लोकतांत्रिक और पारदर्शी मानदण्डों को कोई भी स्थान नहीं देते। आगे कॉरपोरेट मॉडल समता (अथवा सामाजिक न्याय) के सिद्धान्त को पूर्णतया रद्द करता है जबकि सरकार निर्देशित मॉडल राजनीतिक समानता या लोकतंत्र की पूर्णतया अनदेखी करता है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल कॉरपोरेट नेतृत्त्व और राज्य आधारित दोनों विकास मॉडलों से उनके उद्देश्यों, प्रबन्ध और शैली में भिन्नता रखता है।

कॉरपोरेट मॉडल पूंजी एवं पूंजी के मालिकों का विकास करता है और राज्य मॉडल इसके शासक राजनीतिज्ञों और अफसरों के साथ मजदूर कूलीनता के हितों को आगे बढ़ाता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल आमतौर पर लोगों और पर्यावरण के हितों की तथा खासतौर पर गरीबों और वंचित तबकों की सेवा पर आधारित है।

प्रबन्ध में, कॉरपोरेट सेक्टर एकाधिकारवादी कॉरपोरेट प्रबन्ध एवं नियंत्रण का पक्षपोषण करता है और राजकीय क्षेत्र एकाधिकारवादी अफरशाही प्रबन्ध एवं नियंत्रण का समर्थन करता है, जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल में पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर लोकतांत्रिक प्रबन्ध एवं नियंत्रण की मान्यता है।

शैली में, अधिनायकवादी और गोपनीय कॉरपोरेट एवं राजकीय शैली के उलट प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल लोकतांत्रिक, पारदर्शिता और जवाबदेही की शैली पर आधारित है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल मानता है कि दोनों कॉरपोरेट और सरकार निर्देशित विकास मॉडलों का निम्नलिखित कदम उठाकर विकेन्द्रीकरण किया जाना चाहिये।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के सभी शेयरों को साधारण शेयर बनाया जावे। किसी को भी इन शेयरों का 0.5% शेयर से ज्यादा रखने की इजाजत नहीं हो। बहरहाल

विशेष मामलों में राज्य को 1/5 भाग शेयर रखने की इजाजत हो। प्रोमोटर शेयर्स के नियम (जो अभी कॉरपोरेट सेक्टर में चालू है) को पूर्णतया रद्द किया जावे। प्रत्येक साधारण शेयर धारक का एक वोट होगा चाहे उसके साधारण शेयर की संख्या कितनी भी हो।

पब्लिक लिमिटेड कंपनियों के प्रबंध को पूर्णतया जनतांत्रिक बनाया जावे। इस मामले में, साधारण शेयर धारकों को प्रबन्ध मण्डल में 2/3 प्रतिनिधित्व दिया जावे। प्रतिनिधित्व का 1/3 भाग सम्बन्धित कम्पनी के श्रमिकों के लिए आरक्षित हो। श्रमिकों का प्रतिनिधित्व शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के कामगारों में से हो जिन्हें साधारण शेयर धारकों जैसे ही अधिकार हो।

ऐसे अधिकरण जिनमें सरकार का 1/5 भाग साधारण शेयर हो उनके प्रबन्ध मण्डल में साधारण शेयर धारकों को 60% श्रमिकों का 30% तथा सरकार का 10% प्रतिनिधित्व हो। प्रबन्ध मण्डल 3 वर्षों के लिए चुना जावे।

प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल का उपर्युक्त डेमोक्रेटिक सेक्टर दोनों एकाधिकारवादी कॉरपोरेट और राज्य चलित सेक्टरों से अधिक उत्पादक (सम्भवत: दोगुना) होगा। इसके (यानि डेमोक्रेटिक सेक्टर के) उच्च वृद्धि दर (या सम्पदा उत्पादन की दर) का कारण इसके (यानि प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल के) वेतन में 1 : 5 के समतावादी फर्क के सुनिश्चित करने तथा प्रत्येक को जीवन के हर क्षेत्र में सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने, इसके लोगों और पर्यावरण को मूलभूत सिद्धान्त बनाने, इसके विश्व-शान्ति एवं सुरक्षा के पालन करने, इसके गांव से संयुक्त राष्ट्र स्तर एवं अन्य आर्थिक, वित्तीय एवं ग्लोबल व्यापारिक संस्थाओं तक में लोगों के सशक्तिकरण करने की राजनीति (खासकर महिलाओं, मजदूरों, और वैज्ञानिकों-तकनीकीविदों की), इसकी वास्तविक एवं तर्कसंगत आर्थिकता तथा इसकी मानवीय एवं पर्यावरणवादी संस्कृति के कारण मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के अपार विकास में निहित है।

सरकार निर्देशित सेक्टर की अव्यवहार्यता को भूतपूर्व सोवियत यूनियन के ढहने में और विश्व के समाजवादी देशों में इस मॉडल की अवहेलना में देखा जा सकता है। कॉरपोरेट सेक्टर की अदक्षता विश्वभर में कॉरपोरेट मॉडल में लगातार बढ़ रही असमानता, गरीबी, भूख, बेरोजगारी, बेघरबारता के बढ़ते ग्राफ और सबसे ऊपर लगातार गैर टिकाऊ संकट (अब यहाँ और कल वहाँ) में देखी जा सकती है।

पर्यावरणीय एवं मानवीय मामलों पर सामुहिक नियंत्रण की बढ़ती हुई लोगों की मांग, मानव समाज जिधर बढ़ रहा है उसकी दिशा बताती है।

कॉरपोरेट सेक्टर द्वारा सामाजिक जवाबदेही एवं मूल्यवादी व्यवहार के नये अपनाये जाने वाले दर्शन की मुद्रा भी कॉरपोरेट सेक्टर के अहस्तक्षेप के मूलभूत सिद्धान्त के कार्यशील नहीं होने को प्रदर्शित करता है, इसका मूलभूत सिद्धान्त जो आर्थिक विकास प्रक्रिया में प्रत्येक सामाजिक मान्यता की उपेक्षा करता है और जिसका एकमात्र उद्देश्य अधिकतम लाभ कमाना है।

* * * * *

राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक तौर पर विभाजित विश्व मानव की झूठी एकता बनाकर बाली रोडमेप ने खतरनाक भविष्य का रास्ता तैयार किया

आज हमें एक अविभाजित मजबूत मानव एकता की आवश्यकता है जो शुरू से ही सभी विद्यमान और पुरानी वैश्विक चुनौतियों की जनक विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था के बाजार चलित स्वार्थी (या व्यक्तिगत) दिशा के बुनियादी परिप्रेक्ष्य के कारण खण्डित है।

इसने पहले से ही काफी जीव-प्रजातियों को समाप्त कर दिया है और अब इस ग्रह पर मौजूद सम्पूर्ण जीव-जगत को पूर्ण खात्मे की ओर धकेल रही है।

.....

अभी भी ग्रह पृथ्वी और इसके जीव-जगत को बचाने की संभावना है बशर्ते मानव समुदाय तुरन्त ही एक वास्तविक और प्रासंगिक प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम अपनाए

.....

I

बाली रोडमेप से सम्बन्धित पहला मूलभूत तथ्य है कि ग्रीन-हाउस गैसों के उत्सर्जन की कटौती के सवाल पर सम्पूर्ण विश्व कॉरपोरेट पूँजीवादी धड़ा पूर्ण विभाजित है। यूरोपीयन यूनियन और विकासशील देशों का पूरा बड़ा खेमा अन्तर्राष्ट्रीय निर्धारित कटौती पर खड़ा रहा, जबकि अमेरिका, जापान, कनाडा और कुछ अन्य विकसित आर्थिकताओं ने राष्ट्रीय तौर पर तय कटौती को पसंद किया। संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य स्वीकारा। यहाँ सही स्थिति यह है कि वैश्विक उष्माकरण या मौसम परिवर्तन एक अन्तर्राष्ट्रीय घटनाक्रम है न कि राष्ट्रीय।

दूसरा मूलभूत तथ्य है कि महाशक्तिवाद और बड़ों का प्रभुत्व का समय समाप्त हो गया है। अमेरिका ने जब वह अन्यों से अलग अपने राष्ट्रीय दिशा पर खड़े रहने की कोशिश की तो राष्ट्र-राज्यों की पूर्ण बैठक में उसकी थू-थू हुई तथा अपमान का समाना करना पड़ा, अन्ततः उसे विश्व राष्ट्र-राज्यों के बहुमत में शामिल होना पड़ा।

बाली रोडमेप से सम्बन्धित तीसरा तथ्य है कि दुनिया राजनीतिक तौर पर विश्व महाशक्ति यानि अमेरिका, क्षेत्रीय महाशक्ति यानि चीन, जापान, भारत, फ्रांस, जर्मनी, रूस, इग्लैण्ड और साधारण राष्ट्र-राज्यों में बंटी थी।

दुनिया आर्थिक तौर पर भी, आर्थिक तौर पर सर्वोच्च विकसित देश यानि अमेरिका, आर्थिक तौर पर क्षेत्रीय विकसित देशों यानि चीन, जापान, भारत, फ्रांस, जर्मनी, रूस,

इंग्लैण्ड और विकासशील (यानि अल्पविकसित देश) अफ्रीका, लैटिन अमेरिका और एशिया के देशों की बहुसंख्या में विभाजित थी।

और दुनिया सांस्कृतिक तौर पर विभिन्न धार्मिक दिशा वाले रूढ़िवाद, यानि ईसाइयत रूढिवाद, मुस्लिम रूढिवाद, हिन्दू रूढिवाद, बुद्धिस्ट रूढिवाद आदि में विभक्त थी। ये सभी विभाजन मानवीय मजबूती या मानव समुदाय की एकता में दरार डालते हैं और मानव समुदाय को भिन्न-भिन्न प्रकार के गुपों में विभाजित करते हैं।

इस प्रकार का विभाजित मानव समुदाय वैश्विक-उष्माकरण या मौसम परिवर्तन का जवाब एकबद्धता से या एक इकाई के रूप में नहीं दे सकता।

मानव समुदाय में ये सभी विभेद विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था–जो बाजार के जरिए चलती है और अपने जन्म के साथ ही विद्यमान और पुरानी विश्व चुनौतियों की जननी के रूप में खड़ी है–की स्वार्थी (या व्यक्तिगत) दिशा की मूलभूत अवधारणा से उपजे हैं। पहले से ही इसका परिणाम बहुत सी जीव-प्रजातियों की विलुप्ति में निकला है। अब इस ग्रह पर मौजूद सम्पूर्ण जीव-जगत को पूर्ण खात्मे की ओर धकेल रही है।

चौथा तथ्य है कि अब विश्व के लोग किसी भी पुराने हो चुके कार्यक्रम (चाहे उसे किसी महाशक्ति ने या किसी सर्वशक्तिमान ताकत ने तैयार किया हो) को एक नए वास्तविक कार्यक्रम द्वारा बदलने के लिए पूरी तरह तैयार है। बिना एक सैकण्ड भी गंवाए इस क्षण पर प्रेरित लोगों के साथ लग जाना चाहिए।

पांचवां तथ्य मांग करता है कि मजबूत मानव एकता पैदा करने और दुनिया के अन्यायकारी राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विभाजन, जिसे बाजार चलित विश्व कॉरपोरेट व्यवस्था के अप्राकृतिक और मानव विरोधी स्वार्थी (या व्यक्तिगत) दिशा की मूलभूत अवधारणा ने पैदा किया है, को समाप्त करने के लिए दुनिया को एक नए वास्तविक और प्रासंगिक प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम को आगे लाने तथा अपनाने की जरूरत है।

II

यह प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम दो मूलभूत कारकों और 5 बुनियादी सिद्धान्तों से गठित है

दो मूलभूत कारक

1. प्रकृति (या पर्यावरण) और मानव समुदाय पृथ्वी पर जैव-जीवन की विद्यमान व्यवस्था के दो मूलभूत घटक हैं। मानव समुदाय मूलभूत कारक है क्योंकि इस ग्रह पर मात्र सिर्फ ये ही जैव-सामाजिक प्रजाति है। अन्य सभी जैव-प्रजातियां केवल जैविक है क्योंकि वे उनके स्वयं के हित से ही चारित्रित है और उनका कोई सामाजिक हित नहीं होता। इस प्रकार मानव जाति अकेली हमारे ग्रह पर विद्यमान सभी जैव-प्रजातियों के हितों की जिम्मेवारी ले सकती है। प्रकृति की धारणा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को बताती है जबकि पर्यावरणीय धारणा केवल हमारे ग्रह से सम्बन्धित है। मानव की धारणा उन सभी शक्तियों को, जो जैव-सामाजिक अवधारणा रखती है, अभिव्यक्त करती है, चाहे वे जैव-सामाजिक ताकतें अन्य ग्रहों, आकाशगंगाओं, ब्रह्माण्ड आदि में रहती हों। कॉरपोरेट विज्ञान कहती है कि उन्होंने ऐसी शक्तियों को जानने के लिए सेटेलाइट भेजे हैं, यदि वे मानव होंगी तो संकेत मित्रता के हो सकते हैं। बिना पर्यावरण और मानव समुदाय को विकसित किए हमारे ग्रह

पर विद्यमान जैव-जीवन न अस्तित्व में रह सकता है न ही विकसित या समृद्धित। अत: एक वास्तविक और प्रासंगिक एजेण्डे को इस मूलभूत सिद्धान्त को विकसित करने पर केन्द्रित और संकेन्द्रित करना चाहिए।

2. पर्यावरण और मानव समुदाय बिना किसी भेद के समान महत्व रखते हैं। इस प्रकार सभी मानव अधिकार उल्लंघनों और पर्यावरणीय नियमों के अतिक्रमणों को मानवता के विरुद्ध अपराध के तौर पर माना जाना चाहिए।

पाँच बुनियादी सिद्धान्त

1. लोगों के बीच भाईचारे की मजबूत एकता स्थापित करना।

2. कॉरपोरेट पूँजी के समर्थक राजनीतिक पार्टियों और औद्योगिक घरानों की जगह लोगों का सशक्तिकरण करना।

3. प्रत्येक वंचित एवं जरूरतमंद को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना।

4. अतर्कसंगत आय भिन्नता को 1:5 के तर्कसंगत अनुपात में लाना।

5. सत्ता के केन्द्र एवं संयुक्त राष्ट्र संघ और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों तथा राष्ट्र राज्यों की गतिविधियों में कदम-ब-कदम लोकतांत्रिक परिवर्तन लाना।

III
प्रकृति–मानव केन्द्रित तात्कालिक कार्यक्रम

प्रकृति-मानव केन्द्रित तात्कालिक कार्यक्रम की मान्यता है कि भयानक और विकराल पर्यावरणीय-मानवीय वैश्विक संकट से घिरे विश्व को ऐसे तात्कालिक कार्यक्रम की जरूरत है जो इसकी विद्यमान जमीनी वास्तविकताओं से मेल खाती हो। यहां संकट से निपटने के लिए कुछ बिन्दु तात्कालिक कार्य हेतु प्रस्तुत है–

1. रक्षा तथा विदेश मामलों की व्यवस्था एवं नीतियों को बदलना।

2. प्रत्येक देश में और विश्व पैमाने पर स्टॉक मार्केट के परिचालन को बंद करना जो बिना किसी निवेश के अरबपतियों और करोड़पतियों को पैदा करता है। विश्व के 1% लोग नीचे के 75% लोगों के बराबर धन पाते हैं और 2% कॉरपोरेट 50% विश्व की सम्पदा का नियन्त्रण करते हैं; ऊपर के 10% लोग 85% के स्वामी हैं; सबसे गरीब विश्व के आधे लोग मात्र 1% सम्पदा रखते हैं (2006 की यू एन डी पी रिपोर्ट) 50% गरीबी की रेखा से नीचे तथा 20% गरीबी की रेखा पर जीवन जीते हैं, 20% लोग अतिधनी और वंचितों के बीच मध्यम स्थिति अख्तियार करते हैं (जैसा कि कुछ गैर सरकारी अनुमानों ने उद्घाटित किया) इसने समाज को दो भागों में बांट दिया यानि 10% धनाढ्यों के विपरीत 20% बीच में तथा 70% गरीबी की रेखा पर या गरीबी की रेखा से नीचे।

3. मजदूरों और साधारण शेयर धारकों के सशक्तिकरण आधारित एक नया विकास मॉडल अपनाना।

4. सम्पूर्ण काले धन और छुपी हुई व्यापारिक गतिविधियों पर रोक लगाना।

5. एक नई सहकारी खेती का पालन करना।

6. गांव, जिला, क्षेत्र, राष्ट्र और विश्व स्तर पर प्रत्येक बाजार में अनुचित व्यापार को निरस्त करना।

7. सभी असंगठित व्यवसायिक गतिविधियों का सहकारीकरण करके असंगठित काम का एक नया मॉडल बनाना।

8. सभी विश्व बचत को स्वच्छ ऊर्जा उत्पादन में लगाना।

9. इस ऊर्जा को समुद्री पानी को पीने योग्य एवं सिंचाई उपयोगी बनाने, नए ग्लेशियर बनाने, पृथ्वी के विभिन्न पर्यावरणीय क्षेत्रों को बचाने में लगाकर तथा भूकम्प नियंत्रण के विज्ञान को जानकर हमारे ग्रह का पुनर्निर्माण करना।

10. एक नई जनसंख्या नीति प्रतिपादित करना जो आधी शताब्दी के भीतर जनसंख्या में कमी करे।

11. हमारी पृथ्वी पर सभी प्रकार के जैव-जीवन को बचाना।

12. अन्य सौरमण्डल और उनके ग्रहों, ब्लेक हॉल घटनाक्रम, हमारी आकाशगंगा और अन्य आकाशगंगाएं, हमारा ब्रह्माण्ड और फिर अन्य ब्रह्माण्डों को जानने के विज्ञान का अनुसंधान करना।

13. आय अन्तर को कम करके बुनियादी सुरक्षा 1: अधिकतम आय 5 गुणा के अनुपात में लाना।

IV
लोगों के सशक्तिकरण का कार्यक्रम

मानव-मजबूती लोगों के सशक्तिकरण की बुनियाद पर ही स्थापित की जा सकती है।

1. लोगों का आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक सशक्तिकरण

स्वच्छ हवा, शुद्ध पीने का पानी, पोष्टिक भोजन, मकान, वस्त्र तथा मुफ्त चिकित्सा सुविधा एवं शिक्षा आदि के सम्बन्ध में प्रत्येक को मूल अधिकार प्रदान करते हुए सामाजिक सुरक्षा को सुनिश्चित करके लोगों का आर्थिक सशक्तिकरण किया जाना चाहिए।

मुट्ठी भर अमीर श्रेणी तथा विशाल बहुमत वाली गरीब श्रेणी के बीच आये भयंकर विभाजन के बीच आर्थिक सामंजस्य लाने के लिए 1:5 आय अन्तर के आधार पर निष्पक्ष समानता सुनिश्चित की जानी चाहिए।

राजनीतिक प्रक्रिया पर लोगों का नेतृत्व होना चाहिए तथा समर्पित सामाजिक कार्यकर्ताओं या उनके मंचों द्वारा संचालित की जानी चाहिए। चुनाव सभी प्रकार से स्वतन्त्र हो जहाँ हर एक को चुनाव प्रक्रिया में खड़े होने व वोट देने का अधिकार हो।

चुनाव में प्रत्येक व्यक्तिगत उम्मीदवार के लिए राज्य की ओर से धन खर्च करने के नियम को लागू करके भ्रष्ट एवं धन व सत्ता लोभी राजनीतिक दलों के राज्य सत्ता के एकाधिकार को समाप्त करना चाहिए।

विकास के लिए दिये जाने वाला सारा धन चुनी हुई जन विकास समितियों (ग्राम सभा सहित और उसके ऊपर कोई नहीं) के द्वारा खर्च किया जाना चाहिए, प्रत्येक लोकसभा सदस्य को 2 करोड़ रुपये तथा प्रत्येक विधान सभा सदस्य को लाखों रुपये अपने-अपने क्षेत्र में विकास पर खर्च करने के मौजूदा नियम को रद्द करना चाहिए।

यदि 1/5 मतदाता विधान सभा या लोकसभा सदस्य को वापिस बुलाने की लिखित माँग करते हैं तो यह अधिकार देकर लोगों को सशक्तिकरण किया जाना चाहिए। चुनाव

लड़ने से पहले राजनीतिक दलों को लोगों द्वारा प्रायोजित उम्मीदवारों में से अपना उम्मीदवार बनाना होगा। लोगों द्वारा प्रायोजित उम्मीदवार वह माना जायेगा जो विधान सभा क्षेत्र में एक हजार मतदाताओं के हस्ताक्षरों तथा लोक सभा क्षेत्र में पाँच हजार मतदाताओं के हस्ताक्षर प्राप्त करेगा।

लोगों का सांस्कृतिक सशक्तिकरण : तर्कसंगत मानवतावाद और पर्यावरणीयवादी मान्यताओं के आधार पर विभिन्न विश्वासों एवं आस्थाओं के बीच एकता संवर्द्धित करना।

2. महिलाओं, कामगारों, असंठित मजदूरों तथा किसानों का सशक्तिकरण

संसद, विधान सभा तथा प्रशासन, इसके साथ-साथ संगठित बड़े उद्योगों की नौकरियों में महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण देकर महिला सशक्तिकरण किया जाए। धीरे-धीरे यह सिद्धान्त एक नियम बन जाना चाहिए जो सभी सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में लागू हो।

संगठित क्षेत्र में, सभी किस्म के बड़े उद्योगों, संस्थाओं, परियोजनाओं एवं फैक्ट्रियों के प्रबंध करने वाले बोर्ड में एक तिहाई प्रतिनिधित्व मजदूरों को दिया जाए। ये एक तिहाई प्रतिनिधि मजदूरों के संगठनों के एकल मजदूर फ्रंट द्वारा चुनकर भेजे जाए। छोटे और मध्यम उद्योगों में सम्बन्धित मजदूरों से चुने गये प्रतिनिधियों का मंच प्रत्येक सम्बन्धित प्रबन्धमण्डल में सलाहकार बोर्ड की हैसियत रखेगा।

असंगठित मजदूरों का सशक्तिकरण फुटकर क्षेत्र में, लघु स्तर के निजी व्यापार में लगे सभी मजदूरों को सभी जगह (यानि, शहर, कस्बे व ग्रामीण इलाकों में) युनियनों में संगठित किया जाना चाहिए और उन्हें कम ब्याज पर ऋण दिया जाए, मुक्त बाजार की सभी तरह की सुविधाएं मुहैया करवाई जाए, एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिए मुफ्त वाहन (ट्रालर) उपलब्ध करवाये जाएं या बड़े शहरों के बाजारों में किराया मुक्त छोटी दुकानें मुहैया करवाई जाएं।

किसानों का सशक्तिकरण ग्रामीण क्षेत्र में, समस्त किसानों–चाहे वे धनी किसान हों या भूमिहीन किसान हों–को राज्य की मूल नीति के रूप में सहकारी खेती के आधार पर संगठित करके किया जाए। ऐसी प्रत्येक सहकारी समिति को अपना बाजार तन्त्र विकसित करने के लिए आवश्यक सरकारी सहायता मुहैया करवाई जाए, जरूरी कृषि निवेश सामग्री सस्ती दरों पर उपलब्ध करवाई जाए तथा इसकी ऋण व्यवस्था सहकारी ऋण एजेंसियों से ऋण प्राप्त कर निर्मित की जाए।

जीवन के हर पहलू में न्याय, समानता और निष्पक्षता के मानवीय मूलभूत लक्ष्य को संवर्द्धित किया जाए।

3. औद्योगिक सेवाओं, वित्त प्रबंध तथा न्यायशास्त्र का लोकतांत्रिकरण

यह सभी औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों के जनवादीकरण की वकालत करता है जिसके अनुसार कॉरपोरेट और राजकीय मोनोपोली नियन्त्रण समाप्त करते हुए एवं उन्हें साधारण शेयरधारकों (दो तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) तथा मजदूरों (एक तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) के द्वारा प्रबंधित किया जाए।

वित्त प्रबंध : यह वित्त नियन्त्रण के लिए लोकतांत्रिक प्रबंध और नियन्त्रण को प्रस्तावित करता है। कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबंधन एवं नियन्त्रण का पक्षधर है तो राजकीय क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का

समर्थक है। जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियन्त्रण का हामी है। प्रोमोटर्स शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध की मिल्कियत को समाप्त किया जाए।

न्यायशास्त्र को पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों के हितों की सुरक्षा और संरक्षण करने के मूलभूत उसूल पर आधारित किया जाए। उपर्युक्त उसूल की अवहेलना करने पर अपराधी के साथ उसे सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल मानवीय क्रूरता और मृत्यु दण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधानों को निर्धारित किया जाए।

4. कानून के शासन का परिवर्तन तीन मूलभूत प्रकार के सशक्तिकरण की बुनियाद पर हो। वे सम्बन्धित लोगों के जनमत संग्रह द्वारा अनुमोदन से हो। यदि किसी वक्त विधानपालिका और न्यायपालिका के बीच राय से भिन्नता हो तो मामले को सम्बन्धित लोगों में जनमत संग्रह द्वारा हल करने के लिए ले जाया जायेगा।

V

पर्यावरणीय ह्रास और सामाजिक अवमानवीयकरण का बुनियादी कारण एडम स्मिथ के स्वहित या व्यक्तिगत दिशा वाले समाजशास्त्र की मूलभूत अवधारणा में निहित है।

समाजशास्त्रीय मूल कारण एडम स्मिथवादी तथा मार्क्सवादी विकास मॉडलों (ये दोनों ही मॉडल विश्व के विभिन्न भागों में चल रही राष्ट्रीय राज्य व्यवस्था, जो अब पीछे हट रही है, के दो प्रामाणिक विकास पद्धतियों के रूप में कार्यरत रही है) की एक तरफा दार्शनिक समझ में निहित है। यह एकतरफा समझ है कि अपने ग्रह पर और यहां तक कि ब्रह्माण्ड में प्रकृति की व्यवस्था में मनुष्य सर्वश्रेष्ठ घटनाक्रम है। स्पष्टत: यह लोगों को मानव समाज और इसकी प्रत्येक वस्तु का एकमात्र निर्माणकर्त्ता पेश करता है। यह इस सामाजिक सच्चाई को दरकिनार करता है कि मानव समाज में परिवर्तन और विकास दो तरफा अन्तरक्रिया-एक तरफ प्रकृति और मानव समाज के बीच और दूसरी तरफ मानव समाज के अन्दर-अन्तरक्रिया से होता है।

दूसरा मूल समाजशास्त्रीय कारण मानव स्वभाव या प्रकृति के संबंध में एडम स्मिथ और मार्क्सवादी विकास मॉडल की एकतरफा समझ में निहित है। एडम स्मिथ का आर्थिक मॉडल यह मानता है कि मानव समुदाय की प्रकृति निजी स्वार्थ की है। मार्क्सवादी आर्थिक सिद्धान्त मनुष्य की प्रकृति के प्रश्न पर दिग्भ्रमित धारणा रखती है। प्रथम, मनुष्य की प्रकृति सामाजिक है इस पर जोर देती है और अगले ही क्षण निरपेक्ष सामाजिक होने के गुण को औद्योगिक सर्वहारा (जो इस सिद्धान्त के अनुसार मानव समाज का मुक्तिदाता है) में तब्दील कर देता है और अन्तिम तौर पर सामाजिक चरित्रता के समस्त एकाधिकार को कम्युनिस्ट पार्टी में निहित कर देता है। इस दृष्टिकोण के तहत मानव समाज को सामाजिक तौर पर तब्दील करने की क्षमता अकेली कम्युनिस्ट पार्टी में ही समझता है।

यह समाजशास्त्र भ्रष्ट राजनीति, कुछ हाथों में धन का सकेन्द्रण और रूढिवादी धार्मिक संस्कृति पैदा करने का व्यवहार करता है।

वास्तव में, तथापि मानव समुदाय का दुतरफा चरित्र है, एक तरफ जैविक चरित्र और दूसरी तरफ सामाजिक चरित्र। जैविक चरित्र का पहलू मानव समुदाय के व्यक्गित अस्तितत्व को प्रतिबिम्बत करता है, जबकि सामाजिक चरित्र का पहलू उसके सामाजिक जीवन, कार्यशैली और संगठन को इंगित करता है।

VI

प्रकृति–मानव केन्द्रित अल्पकालीन कार्यक्रम

प्रकृति मानव केन्द्रित जन आंदोलन (एन एच सी पी एम) मानता है कि इस समय मानव समुदाय को एक बहुत खतरनाक पर्यावरणीय व मानवीय संकट का सामना करना पड़ रहा है। यह चुनौती इतनी गंभीर है कि यदि इसका उत्तर वास्तविक कार्यक्रम से नहीं दिया जाता है तो इसके नतीजे में मानवीय हितों को बहुत ही खतरनाक परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं। सर्वप्रथम ऐसी गंभीर परिस्थिति से निपटने के लिए यह आवश्यक है कि मानव जाति के विभिन्न समुदायों के बीच में पूर्ण एकता कायम हो और एकता के पहलु की यह मांग है कि मानव समुदाय के अन्दर सभी प्रकार की टकराहटों को समाप्त किया जाये। मानव समुदाय की एकता कायम करने का एकमात्र रास्ता इसमें निहित है कि दुनिया में मौजूद सभी प्रकार के अन्याय को समाप्त किया जाए।

एन एच सी पी एम का यह दृष्टिकोण है कि न्यायसंगत दुनिया सभी प्रकार के सामाजिक न्याय की बुनियाद पर स्थापित करना निश्चित तौर पर संभव है। इसके लिए वर्तमान अन्यायपूर्ण कॉरपोरेट व्यवस्था को पुनर्गठित करने की आवश्यकता है।

वर्तमान अन्यायपूर्ण कॉरपोरेट व्यवस्था को एक न्यायपूर्ण आधार पर पुनर्गठित करने के लिए एन एच सी पी एम 15 बिन्दु जनता को सूचित करने, संगठित होने और काम करने के लिए प्रस्तुत करता है। इन 15 बिन्दुओं को उचित समझने वाले लोगों से यह निवेदन करता है कि वे इन बिन्दुओं को मजबूती,तहेदिल और सुस्पष्टता से आम जनता के बीच प्रसारित करें।

जब कभी भी किसी इलाके अथवा देश में चुनाव हो रहे हों वहाँ एन एच सी पी एम मतदाताओं से अपील करता है कि वे इन 15 सिद्धांतों को उम्मीदवारों की सच्चाई जानने का मानदण्ड बनाए। मतदाता उम्मीदवारों से इन बिन्दुओं के समर्थन में हस्ताक्षर करने का अनुरोध करे। जो इन पर हस्ताक्षर करते हैं वे उम्मीदवार जनता के समर्थन के हकदार हैं और जो इन पर हस्ताक्षर करने से हिचकिचाते हैं वे न्यायिक और तर्कसंगत दृष्टिकोण से परे हैं।

1. मानव जाति को हर समय और हर जगह पर्यावरण (यानि हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) को टिकाऊरखने के मूलभूत कार्य को थामे रखना चाहिए।

2. जिन्दा रहने के मानवीय अधिकार को शुद्ध हवा, शुद्ध पीने का पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित की जाए।

3. आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में 5 गुना से अधिक अन्तर) पर आधारित उचित समानता का मानवीय अधिकार हो।

4. विश्व के तमाम झगड़ों का शांतिपूर्ण समाधान होना चाहिए, विशेष तौर पर जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका समस्याओं का। जम्मू-कश्मीर के न्यायपूर्वक समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा और विदेश महकमों को भारत-पाक के ज्वाइंट कन्ट्रोल में दिया जाना चाहिए जबकि बाकी सभी मामलों (रक्षा और विदेश मामलों के अलावा) में जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र होना चाहिए जबकि इसके 9 नस्ली क्षेत्रों को अधिक से अधिक स्वायत्तता होनी चाहिए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन एवं जॉर्डन के सम्बन्ध में भी कारगर होगा।

5. संयुक्त राष्ट्र संघ को पुनर्गठित करने के लिए सुरक्षा परिषद के पांच स्थायी सदस्यों की वीटो पॉवर समाप्त की जाए तथा किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए साधारण सभा के बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान की जाए।

6. विश्व-व्यापार संगठन, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाय प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है), को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति जिसमें मानव और पर्यावरणीय पहलू उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्व वाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के 5 उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाए।

7. सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित किया जाए।

8. खेती से सम्बन्धित सभी लोगों की जीविका की सुरक्षा सहकारी कृषि व्यवस्था से सुनिश्चित की जाए।

9. शारीरिक व मानसिक दोनों प्रकार के श्रमिकों का सशक्तिकरण हो, जिसके अन्तर्गत संस्थानों, परियोजनाओं और कारखानों के प्रबन्ध में उनका एक तिहाई प्रतिनिधित्व सुनिश्चित हो।

10. उद्योग और सेवा के सभी क्षेत्रों पर से उद्योगपतियों और सरकार का एकाधिकार नियंत्रण खत्म करके तथा आम शेयरधारकों को दो तिहाई और मजदूरों को प्रबंधन में एक तिहाई हिस्सा देकर उनका लोकतांत्रीकरण किया जाए।

11. वित्तीय प्रबन्ध : कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबन्धन एवं नियंत्रण का पक्षधर है तो सरकारी क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियंत्रण का समर्थक है, पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर इन स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई सदस्य आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियंत्रण स्थापित हो। प्रोमोटर्स (प्रोत्साहक) शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध को समाप्त किया जाए।

12. प्रकृति मानव केन्द्रित राजनीतिक प्रकिया लोगों द्वारा निर्देशित होनी चाहिये तथा उसका संचालन समर्पित प्रकृति-मानव केन्द्रित सामाजिक कार्यकर्ताओं (या उनके मोर्चे) द्वारा किया जाना चाहिए। चुनाव पूर्णतया स्वतंत्र हो जिसमें प्रत्येक को उम्मीदवार और मतदाता दोनों रूपों में भाग लेने का समान अधिकार है।

13. दलगत ढांचे को महत्व दिए बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करे) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्यसत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के एकाधिकार का खात्मा किया जाए। यदि मतदाता किसी भी विधानसभा या लोकसभा सदस्य को वापिस बुलाना चाहे तो 1/5 मतदाताओं द्वारा लिखित में मांग करने पर पुन: चुनाव करवाया जाय।

14. प्रत्येक सांसद को दो करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये आवंटित करने का मौजूदा नियम हटाकर विकास से सम्बन्धित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्राम सभा सहित और इसके ऊपर कोई नहीं हो) के जरिए खर्च हों।

15. न्यायशास्त्र को पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों के हितों की सुरक्षा और संरक्षण करने के मूलभूत उसूल पर आधारित किया जाए। उपर्युक्त उसूल की अवहेलना करने पर अपराधी के साथ उसे सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल मानवीय क्रूरता और मृत्यु दण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधानों को निर्धारित किया जाए।

VII

प्रकृति–मानव केन्द्रित दीर्घकालीन कार्यक्रम

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन का दृष्टिकोण है कि चल रहे घातक संकट का बुनियादी हल मौजूदा कारपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था के स्थान पर प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था लाने में निहित है, जिसका उद्देश्य, सिद्धान्त, तरीकाकार और संगठन दो उच्च प्राथमिकताएँ–यानि, पर्यावरण और मनुष्य–लिए हुए हैं और जो पाँच बुनियादी उसूलों–यानि, पर्यावरणीय संवर्द्धन, उचित समानता (यानि, प्रत्येक वंचित एवं जरूरतमंद व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा तथा अतर्कसंगत आय के अन्तर को 1:5 के आय का अन्तर स्थापित कर इसे तर्कसंगत बनाना), उत्पादकता (या वृद्धि दर), लोक नेतृत्व जनवाद (यानि, कारपोरेट पूँजीवादी समर्थित राजनीतिक पार्टियों एवं व्यापारिक घरानों की बनिस्पत लोगों का सशक्तिकरण करना) तथा चहुँमुखी पारदर्शिता–का पालन करता है। प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं–

1. मानव समाज के प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल का मानना है कि मानव समाज में पर्यावरण और मानव जाति दोनों बहुत ही मूल्यवान घटनाक्रम हैं। यह दोनों इसकी सामाजिक पूँजी (सर्वोच्च वस्तु) है, इन दोनों (यानि, पर्यावरणीय-मानवीय संसाधन) में वृद्धि से विकास, सम्पन्नता एवं प्रगति होती है तथा सोचने, कहने, करने और संगठित होने के लिए यह निर्देशक सिद्धान्त का कार्य करता है।

2. यह हर समय और सब जगह पर्यावरण (यानि, हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) संवर्धन के मूलभूत कार्य का मजबूती से समर्थन करता है।

3. यह प्रत्येक व्यक्ति के जैव-सामाजिक अस्तित्व के अधिकार को शुद्ध हवा, साफ पीने के पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित करने का समर्थक है।

4. यह आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में अधिकतम 5 गुणा अन्तर) पर आधारित उचित समानता के मूलभूत मानवीय अधिकार का समर्थक है।

5. यह विश्व शान्ति का मजबूती से पक्षपोषण करता है और विश्व के सभी विवादों खासकरके जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका इत्यादि के सीधे शांतिपूर्ण हल के मार्ग का समर्थक है। जम्मू-कश्मीर के न्यायपूर्ण समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा, विदेश महकमों एवं मुद्रा को भारत-पाक सहराज्य के संयुक्त नियन्त्रण में सौंपा जाना चाहिए जबकि बाकी सभी मामलों (रक्षा और विदेश मामलों के अलावा) में जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र होना चाहिये जबकि इसके नौ नश्ली क्षेत्रों में से प्रत्येक को अधिकतम संभव स्वायत्तता प्रदान की जाए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन और डॉयफोर के संबंध में भी कारगर होगा।

6. यह संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के 5 स्थायी सदस्यों के वीटों पावर को समाप्त करते हुए विश्व व्यवस्था के पुनर्गठन करने एवं किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए संयुक्त राष्ट्र की केन्द्रीय सभा में साधारण बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान करने की मांग करता है। कुछ समय दौरान, विश्व के विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों के लोगों के मतदान से निर्वाचित संविधान सभा द्वारा रचित संविधान के आधार पर संयुक्त राष्ट्र का पुनर्गठन किया जाए।

7. यह विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाए प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर पुनर्गठित करने तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है) को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति बनाने की हिमायत करता है जिसमें मानवीय और पर्यावरणीय पहलु उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्ववाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के पांच उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाता है।

8. यह हर स्तर पर सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50% प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित करता है तथा महिलाओं के उद्देश्य एवं मांगों का समर्थक है।

9. यह खेती को सहकारिता के आधार पर सुसंगठित करने को प्रोत्साहित करता है तथा खेती से संबंधित सभी लोगों की जीविका को सुनिश्चित करने का समर्थक है।

10. यह श्रमिकों (शारीरिक और मानसिक दोनों) के सशक्तिकरण के लिए जोरदार आवाज उठाता है, जिसके अनुसार सभी संस्थानों, परियोजनाओं एवं कारखानों के प्रबंध में उनके (श्रमिकों के) एक तिहाई चुने हुए प्रतिनिधियों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए।

11. यह सभी औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों के विकेंद्रीकरण की वकालत करता है जिसके अनुसार कॉरपोरेट और राजकीय मोनोपोली नियन्त्रण समाप्त करते हुए एवं उन्हें साधारण शेयरधारकों (दो तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) तथा मजदूरों (एक तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) के द्वारा प्रबंधित किया जाए।

12. यह वित्त नियन्त्रण के लिए लोकतांत्रिक प्रबंध और नियन्त्रण को प्रस्तावित करता है। कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबंधन एवं नियन्त्रण का पक्षधर है तो राजकीय क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का समर्थक है। जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से

चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियन्त्रण का हामी है। प्रोमोटर्स शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध की मिल्कियत को समाप्त किया जाए।

13. यह प्रत्येक सांसद को 2 करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये अपने चुनावी क्षेत्र के विकास खर्च के लिए आवंटित करने के मौजूदा नियम को हटाकर विकास से संबंधित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्रामसभा सहित और इसके ऊ पर कोई नहीं) के जरिए खर्च करने को प्रोत्साहित करती है।

14. यह प्रत्येक देश में प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण के आधार पर कॉरपोरेट पूँजीवादी निर्देशित संविधान तथा न्यायशास्त्र को पुनर्गठित करने का प्रस्ताव रखता है।

15. यह मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के हितों की रक्षा एवं संवर्धन के मूलभूत सिद्धान्त का मजबूती से पक्षधर है। उपर्युक्त उसूल की किसी तरह से अवहेलना करने पर अपराधी को सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल दण्ड दिया जाए। दण्ड में मानवीय क्रूरता और मृत्युदण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधान शामिल हो सकते हैं।

16. इसका पक्का विश्वास है कि मानव समाज की सभी संघटक प्रक्रियाओं–यानि, पर्यावरणीय, मानवीय और वैज्ञानिक तकनीकी–पर लोगों का नियंत्रण होना चाहिए और उन्हीं द्वारा संचालित होनी चाहिए।

17. यह गांव/वार्ड से राष्ट्रीय स्तर तक पाँच स्तरों पर सामाजिक जीवन के तीन पहलुओं–राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक–के प्रबन्ध की शक्ति लोगों को देकर उनके सशक्तिकरण (या जनता के नेतृत्व वाला शासन) को प्रस्तावित करता है।

18. लोगों के सशक्तिकरण की प्रक्रिया चुनाव के तरीके से तय की जाए जो पूर्णतया स्वतंत्र हो और जहाँ प्रत्येक को उम्मीदवार के तौर पर भागीदारी करने का अधिकार है तथा मतदाता के रूप में अपनी राय जाहिर करने का अधिकार है। यह दलगत ढांचे को महत्व दिये बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा चुनाव के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करें) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्य सत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के राजकीय एकाधिकार का खात्मा करने का पक्षधर है। सम्बन्धित मतदाताओं को वापिस बुलाने का अधिकार हो जिसके तहत किसी सभा सदस्य के मतदाताओं का 1/5 भाग अगर लिखित में पुन: चुनाव की मांग इस आधार पर करें कि उपर्युक्त सदस्य अपने मतदाताओं का विश्वास खो चुका है।

19. राजनीतिक पहलू माँग करता है कि पाँचों स्तर (यानि, राष्ट्रीय, राज्य या क्षेत्रीय, जिला, ब्लॉक और गाँव) पर राजनीतिक सभा का गठन किया जाए जो लोकतान्त्रिक व्यवस्था पर कायम रहे तथा पूर्णतया लोकतान्त्रिक उसूलों, गतिविधियों और ढाँचे पर आधारित हो। ऐसा मॉडल निर्णय लेने में भी अधिकतम सम्भव लोक सशक्तिकरण के सिद्धान्त को लागू करना आवश्यक बना देता है।

20. आर्थिक पहलू की आवश्यकता है कि एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता के लिए पाँचों स्तर पर विकास सभाएँ स्थापित की जाएं जिसकी धारणाएँ, कानून एवं

नियम पुर्वोक्त दो उच्चस्थ प्राथमिकताओं (यानि, मानवजाति और पर्यावरण) तथा पाँच सिद्धान्तों (यानि, पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जन-नेतृत्वकारी लोकतन्त्र तथा चहुंमुखी पारदर्शिता) की रोशनी में बनाए जाएं। मनुष्य की जैव-सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एडम स्मिथ का 'निजी हित' आधारित बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त तथा हर चीज का राज्य द्वारा राष्ट्रीयकरण करने के मार्क्सवादी बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त, ये दोनों एक तरफा है। परन्तु, विडम्बना यह है कि दोनों मनुष्य और पर्यावरण विकास के सन्दर्भ की बजाए विकास, सम्पन्नता तथा प्रगति को धन वृद्धि के रूप में नापते हैं।

21. सांस्कृतिक पहलू की आवश्यकता है कि पाँचों स्तर पर सांस्कृतिक सभाएं स्थापित की जाएं।यह ऐसे जीने के तरीके (या जीवन शैली) की माँग करता है जो बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों से भरपूर हों तथा लोगों के बीच में तर्कसंगत मानवतावाद एवं पर्यावरणवादी चिन्तन, व्यवहार एवं संगठन को विकसित करता हो।

22. पाँचों स्तरों पर राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक सभाओं द्वारा बनाये गये कार्यक्रमों और नीतियों को लागू करने के लिए अपने-अपने राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक क्षेत्र के विशेषज्ञों के आयोगों का चुनाव करना। राजनीतिक विशेषज्ञों का आयोग राजनीतिक मुद्दों, जैसे–कानून और व्यवस्था, अपराध रोकथाम, न्यायिक कार्यवाही से सम्बन्ध रखे; विकास विशेषज्ञों का आयोग आर्थिक, वित्तीय मसलों, जैसे–विकास योजना, कृषि उद्योग, सेवाएं, वित्त और बजट को देखे और सांस्कृतिक विशेषज्ञों का आयोग शिक्षा, स्वास्थ्य, नैतिक मूल्यों एवं अन्य सांस्कृतिक विषय, जैसे–भाषा, संगीत, नृत्य, सिनेमा उद्योग आदि पर ध्यान दें।

23. प्रत्येक चुनी हुई संस्था अपने प्रभाव क्षेत्र में चाहे वह निचले स्तर की हो या ऊपर के स्तर की हो सम्प्रभुसत्ता सम्पन्न होगी। किसी भी समय दो चुनी हुई संस्थाओं या सार्वजनिक संस्थाओं के मध्य मतभेद उत्पन्न हो तो सम्बन्धित इकाइयाँ अपने-अपने प्रतिनिधि समूहों को नियुक्त करेंगी जो बातचीत के जरिए सम्बन्धित प्रश्न का हल निकालेंगी। यदि मामला आपस में तय हो जाता है तो वह फैसला मान्य होगा। यदि दोनों पक्ष साझे निर्णय पर सहमत नहीं होते तो मसला सम्बन्धित लोगों द्वारा जनमतसंग्रह से हल किया जाएगा।

24. इसका मानना है कि किसी भौगोलिक इकाई की आन्तरिक सुरक्षा का प्रश्न सम्बन्धित लोगों द्वारा ही देखा जाए। विभिन्न भौगोलिक इकाइयों की सीमा-सुरक्षा का मुद्दा सुरक्षा एजेन्सी द्वारा देखा जाए तथा यह सुरक्षा एजेन्सी सम्बन्धित लोगों द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा स्वीकृत नियमों के अनुसार बनाई जाए।

25. समाज में प्रत्येक प्रदूषण फैलाने वाली तकनीक का संचालन यह नहीं होने देगी चाहे उस तकनीक में कितनी भी ज्यादा उत्पादक क्षमता हो।

VIII

तात्कालिक कार्य

मौसम परिवर्तन के घातक संकट की मूलभूत वास्तविकता, जिसने अब हमारी पृथ्वी को हिलाकर रख दिया है, यह लोगों में इस तथ्य की तुरन्त जागृति की माँग करता है कि मनुष्य जाति और अन्य जैव-घटनाक्रमों के सामने अब–जीवन या मृत्यु–की घातक चुनौती मुँह बाए खड़ी है।

आगे, इसकी जरूरत यह है कि लोगों को इस तथ्य के बारे में सचेत किया जाए कि 'जीवन और मृत्यु' की उक्त चुनौती का कारण मौजूदा अमानवीय कारपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था तथा इसके अमानवीय संचालकों जो केवल मात्र अपने स्वार्थी निजी हितों के अलावा और किसी हित से प्रेरित नहीं हैं–में निहित है।

तृतीयत:, यह लोगों को इस तथ्य के बारे में जागृत करना आवश्यक बनाता है कि इस खतरनाक चुनौती का वास्तविक हल अल्पकालिक तथा दीर्घकालिक प्रकृति-मानव निर्देशित कार्यक्रम में मौजूद है।

चतुर्थ, यह प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन के हिस्सेदार के तौर पर उन सभी को संगठित होने का आह्वान करता है जो उक्त वर्णित तीन बिन्दुओं से सहमत हैं।

पंचम, यह पर्यावरणवादी एवं मानवतावादी आन्दोलनों तथा भारत व दुनिया के अन्य देशों की जनता से जुड़े हुए सभी लोगों से भाईचारे के सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक समझता है।

IX

मौसम परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र अन्तरसरकारी पेनल (यू एन आई पी सी सी) ने उल्लेख किया

मौसम परिवर्तन ने 21वीं सदी के मानव विकास चुनौती को निश्चित कर दिया है। इस चुनौती के जवाब में असफलता का अर्थ मानव समुदाय और हमारे ग्रह पृथ्वी के सम्पूर्ण जैव-जीवन को खतरे में डालना होगा। सबसे गरीब देश और सर्वोच्च असुरक्षित नागरिक सर्वप्रथम कष्ट से पीड़ित होंगे और अत्यन्त विध्वंसकारी हादसों के शिकार बनेंगे। हालांकि उन्होंने समस्या में बहुत ही कम योगदान किया है। भविष्य को देखते हुए, कोई भी देश–सम्पन्न या शक्तिशाली–वैश्विक उष्माकरण के प्रभाव से बच नहीं सकेगा।

आई पी सी सी की सारांश रपट दर्शाती है कि मौसम परिवर्तन भविष्य का एकमात्र दृश्य नहीं है। सूखा, बाढ़ और तूफानों में बढ़ोतरी पहले से ही अवसर को खतम कर रही है तथा खतरे को मजबूती दे रही है। इस बीच अब बहुत सारे वैज्ञानिक सबूत है कि विश्व ऐसे बिन्दु की ओर बढ़ रहा है जहां से पारिस्थिकी विध्वंस से पीछे हटना असंभव बन जायेगा। जैसाकि सामान्यतया मौसम परिवर्तन के बिन्दु स्पष्ट दिशा में है, हमारे जीवन में मानव विकास अभूतपूर्व उलटाव में है, हमारे बच्चे और उनके बच्चे गम्भीर खतरे में है।

अभी भी मौसम परिवर्तन के प्रभाव को टालने का अवसर है, लेकिन यह अवसर समाप्त होने जा रहा है, दुनिया के पास मामले को बदलने के लिए एक दशक से कम समय है। आने वाले समय में कार्यवाही की जाती है–या नहीं, मानव विकास का भविष्य इस पर भारी निर्भर करेगा। इस पर काम करने के लिए विश्व के पास न तो वित्तीय कमी है न ही तकनीकी क्षमता की कमी। कमी है तो मानव मजबूती की और सामूहिक हित की संवेदना की।

जैसा कि आई पी सी सी की सारांश रिपोर्ट तर्क करती है मौसम परिवर्तन कई स्तर पर चुनौतियां प्रस्तुत करता है। बंटा हुआ लेकिन पारिस्थिकी रूप से अन्तरनिर्भर विश्व यह सभी लोगों को चुनौती देता है कि हम कैसे एक ऐसा वातावरण बनाए कि हम साझे रूप से पृथ्वी ग्रह को काम में ले सकते हैं। यह राजनीतिक नेताओं और अमीर देशों में लोगों को चुनौती देता है कि समस्या के प्रति अपनी ऐतिहासिक जिम्मेवारी समझे और ग्रीन हाउस

गैसों के उत्सर्जन में शीघ्र कटौती तथा प्रभावी पहल करे। इन सबसे ऊपर यह सम्पूर्ण मानव समुदाय को साझी मान्यताओं और साझे दृष्टिकोण पर आधारित पक्का और मजबूत सामूहिक कार्य के उत्तरदायित्व लेने की चुनौती देता है।

घातक चुनौती मात्र 250 वर्षों पहले से ही पैदा होनी शुरू हुई

मौसम परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र अन्तर सरकारी पेनल ने साफ बताया है कि 300 साल पहले ग्रह पृथ्वी प्रदूषण मुक्त था। सन् 1750 में प्रदूषण प्रकट होना शुरू हुआ। विशेषज्ञों की रिपोर्टें इंगित करती है कि ग्रीन हाउस गैसों (कार्बनडाई आक्साईड, मिथेन और नाइट्रो-ऑक्साईड) का संकेन्द्रण मुख्यत: जैवाष्म ईंधन के उपयोग से कार्बन डाई ऑक्साइड बढ़ी, मिथेन और नाइट्रो-आक्साइड कृषि के कारण बढ़ी थी। खास तौर पर कार्बन डाई आक्साईड का सकेन्द्रण 1750 में 280 पी पी एम (प्रति दस लाख) से 2005 में 379 पी पी एम की बढोतरी साढे छ: लाख वर्षों में (180 पी पी एम से 300 पी पी एम) की बढोतरी से बहुत ही ज्यादा है।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार आई पी सी सी द्वारा अनुमानित गैसों का सबसे कम स्तर पर स्थिर होने का दृश्य एक दीर्घकालीन नीति के तहत यह है कि अगले 10-15 वर्षों में उत्सर्जन अपने शिखर पर होगा जब ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में 50% की कटौती जो 2050 तक सन् 2000 के स्तर पर स्थिर कर देगी जो वातावरण में लगभग 450 पी पी एम कार्बनडाईआक्साईड के बराबर होगी तथा इससे सम्बन्धित तापक्रम में वृद्धि 2-2.4 डिग्री सेंटीग्रेड होगी। (16 फरवरी, 2008)

संकलित और सम्पादित **आर पी सराफ**
सम्पादक, नेचर-हुमन सेट्रिक व्यूपाइंट
email : saraf_rp@rediffmail.com

* * * * *

मौसम परिवर्तन और कृषि

लीवरपूल विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक भारत के मानसून पर होने वाले प्रतिगामी प्रभावों की खोज कर रहे हैं और यह प्रभाव भारत में पानी-चक्र को बदल देगा, जिससे देश के लोगों, खेतीबाड़ी तथा जंगली जानवर प्रभावित होंगे।

इन वैज्ञानिकों के अनुसार भारत के वार्षिक मानसून में परिवर्तन का परिणाम भारी सूखा और बाढ़ में निकलने की संभावना है। यदि पंजाब में बाढ़ आती है तो यह फसल बुवाई की ऋतु को बिगाड़ देगी और यदि सूखा पड़ता है तो यह पंजाब की फसलों की उत्पादकता में कमी ला देगी। वैज्ञानिकों ने पूर्वानुमान किया कि इस शताब्दी के अन्त तक देश को 3 से 5 डिग्री सेंटीग्रेड ताप बढ़ने का अनुभव होगा और गर्मी के मानसून की वर्षा में 20% की बढोतरी हो जायेगी।

आने वाले दशकों में जलवायु परिवर्तन और ग्लोबलाईजेशन के कारण भारत का कृषि क्षेत्र गंभीर रूप से प्रभावित होगा। मौसम परिवर्तन से समुद्र तल ऊँचा उठ जायेगा, जलवायु की अस्थिरता में बढोतरी होगी, सूखा तथा संक्रामक बीमारियां बढ़ेगी।

पानी चक्र में परिवर्तन से पानी जनित बीमारियां जैसे हैजा, पीलिया तथा मच्छरों से फैलने वाली बीमारियां जैसे मलेरिया आदि बढ़ेगी।

विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित एक अध्ययन ने कहा कि मौसम परिवर्तन के कारण दक्षिण अफ्रीका की मुख्य फसल मक्का, ज्वार 2030 तक 30% कम हो जायेगी। दक्षिण एशिया के बहुत से क्षेत्रों में बाजरा, मक्का की फसलों में 10% की हानि हो जायेगी।

2001 में आई पी सी सी की तीसरी रिपोर्ट में आकलन किया कि उच्च उष्ण कटिबंधी तथा अर्द्ध उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में पानी की कमी, नए तथा बदले रोगाणु, विषाणु के कारण गरीब देशों को सबसे अधिक आघात होगा। अफ्रीका और लैटिन अमेरिका में बरसाती फसलें गर्मी सहन करने की उच्चतम सीमा के करीब है, इसलिए मामूली मौसम परिवर्तन से ही उनकी उत्पादन क्षमता में तेजी से गिरावट आ जायेगी, 21वीं सदी में कृषि पैदावार में 30% तक की कमी हो जायेगी। कुछ इलाकों में समुद्री जैव-जीवन और मछली उद्योग भी गंभीर रूप से प्रभावित होंगे।

ग्रीन हाउस गैसों में वृद्धि से मौसम परिवर्तन का असर अलग-अलग क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न प्रकार का होगा। उदाहरण के लिए पाकिस्तान में फसल की उत्पादकता 50% कम हो जायेगी (यू के एम ओ के अनुसार) अनाज उत्पादकता अच्छी जल स्थिति में यूरोप में 25% तक बढ़ जायेगी।

अधिकतर कृषि विशेषज्ञ विश्वास करते हैं कि कृषि पैदावार का नुकसान मौसम परिवर्तन की दर और गंभीरता के अनुसार होगा। क्रमिक मौसम परिवर्तन ज्यादा नुकसान नहीं करेगा। यदि परिवर्तन क्रमिक होता है तो जीवीय समायोजन के लिए काफी समय होगा। मौसम परिवर्तन की तेज गति बहुत से देशों की कृषि को नुकसान पहुँचा सकती है, विशेषकर उन देशों में जिनमें पहले से ही कम उपजाऊ मिट्टी तथा कमजोर जलवायु हालात है। क्योंकि वहां प्राकृतिक चयन की परिस्थिति एवं अनुकूलन के लिए कम समय होता है।

1996 तथा 2003 के बीच अनाज 1800 मिलीयन टन के आसपास स्थिर हो गया है। 2000, 2001, 2002 तथा 2003 में अनाज भण्डार गिरता गया, परिणामत: 2003 में वैश्विक अनाज उत्पादन में खपत की तुलना 93 मिलीयन टन की कमी रही।

1970 के दशक से पहले पृथ्वी के औसत ताप में वृद्धि लगातार हो रही है। 1995 में 10 सबसे गर्म वर्षों में से 9 वर्षों को सबसे ज्यादा गर्म मापा गया।

2002 में भारत तथा अमेरिका रिकार्ड गर्मी तथा सूखे के कारण कृषि उत्पादन में कमी के शिकार रहे हैं। 2003 में यूरोप में बसंत तथा गर्मी के दौरान बहुत कम वर्षा रही। इंग्लैण्ड, फ्रांस, प. यूरोप से पूर्वी यूरोप के यूक्रेन तक रिकार्ड गर्मी से अधिकतर फसलों को नुकसान हुआ। इस क्षेत्र के कई देशों में महंगाई बढ़ी। (see w:fr:canicule 2003)

रिसर्च एट ओवरसीज डवलपमेंट इन्स्टीट्यूट (ओ डी आई) ने मौसम परिवर्तन के कृषि पर संभावित प्रभाव की खोज की है तथा कैसे वह विकासशील देशों में गरीबी उन्मूलन कोशिश को प्रभावित करेगी। उन्होंने कहा कि विकासशील देशों में सामान्य मौसम परिवर्तन का प्रभाव मिश्रित होगा। बहरहाल विकासशील देशों में गरीबों की असुरक्षा में उल्लेखनीय वृद्धि करेगा तथा विपरीत मौसमी घटनाओं की गंभीरता नकारात्मक होगी। वे कहते हैं कि कृषि नीति को परिभाषित करना चाहिए तथा उसका जायजा लेना चाहिए।

सन् 2100 तक समुद्र तल 1 मीटर ऊँचा हो जायेगा। यद्यपि यह प्रस्तावना विवादित है। समुद्र तल में वृद्धि खासकर दक्षिण पूर्व एशिया में कृषि भूमि को कम कर देगा। भूमि क्षरण, समुद्र तटों के डूबने, वाटर टेबल में परिवर्तन निचले स्तर की भूमि के जलमग्न होने से कृषि प्रभावित होगी।

संयुक्त राष्ट्र मौसम रिपोर्ट के अनुसार हिमालय के ग्लेशियर जो कि सूखे जलवायु में एशिया की सबसे बड़ी नदियों–गंगा, सिंधु, ब्रह्मपुत्र, यंगज, मेकोंग, साल्वीन तथा येलो–के पानी का मुख्य स्रोत है, तापक्रम में बढ़ोतरी के कारण 2035 तक गायब हो जायेगी। लगभग 240 करोड़ लोग हिमालय की नदियों के किनारे रहते हैं। आने वाले दशकों में भारत, चीन, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, म्यानमार भारी बाढ़ और फिर गंभीर सूखे का सामना कर सकते हैं। अकेले भारत में गंगा नदी 50 करोड़ लोगों को पीने का पानी तथा सिंचाई की सुविधा देती है।

हाल ही का अध्ययन संकेत करता है कि बढ़ती गर्मी, सूखे तथा बाढ़ की आवृति में बढ़ोतरी, फसलों तथा प्राणियों पर औसत मौसम परिवर्तन के प्रभाव से कहीं ज्यादा प्रभाव डालेंगे, ये प्रभाव आश्चर्यजनक तथा पूर्व में किये गये अनुमानों से ज्यादा व्यापक है। यह बात विशेषकर कम अक्षांश वाले क्षेत्र में है। मौसम में अस्थिरता एवं परिवर्तन अग्निकांड, महामारी, रोगविकृतियां की जोखिम भी बढ़ाती है। ये भोजन, रेशे तथा जंगलात पर भी नकारात्मक प्रभाव डालते हैं।

एक अमेरिकी अध्ययन ने महसूस किया है कि दक्षिण एशिया और दक्षिणी अफ्रीका मौसम परिवर्तन से कृषि पर प्रभाव के कारण भूखमरी के दो केन्द्र थे। अध्ययन के सह लेखक मार्शल बरके ने कहा कि ''हमें अचरज है कि यदि हम इन्हें अपनाते नहीं तो ये क्षेत्र किस हद तक और कितनी देर तक शिकार रहेंगे।''

दक्षिण एशिया में बाजरा, मक्का, ज्वार, चावल में 10% तथा अन्यों में इससे भी ज्यादा हानि की संभावना है। बरके कहते हैं ''गरीब तथा सीमान्त किसानों के लिए यह हानियां वास्तव में उन्हें कुचलने जैसी है।'' फसलों में यह कमी विश्व के सबसे गरीब लोगों के लिए भोजन की कमी तथा जीविका हानि में निकल सकता है। भोजन सुरक्षा एवं पर्यावरण पर स्टेन्डफोर्ड यूनिवर्सिटी का कार्यक्रम विश्व के 12 बड़े क्षेत्रों को कुपोषित जनसंख्या वाला मानता है। संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार ये क्षेत्र एशिया, सब सहारा अफ्रीका, केरेबियन तथा मध्य तथा दक्षिणी अमेरिकी है। यह रिपोर्ट विज्ञान पत्रिका के फरवरी अंक में प्रकाशित होगी।

***

23 से 25 फरवरी, 2008 को बरनाला के नजदीक गांव ठीकरीवाला (पंजाब) में कृषि सम्मेलन आयोजित किया गया। इसमें जम्मू-कश्मीर, पंजाब, राजस्थान, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, उत्तराखण्ड, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, झारखण्ड के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में नेपाल से भी 12 प्रतिनिधि आए।

* * * * *

(आर पी सराफ, सम्पादक नेचर-हुमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट द्वारा जारी वक्तव्य)

आज जम्मू-कश्मीर जिस समस्या से सामना कर रहा है उसका तात्कालिक और दीर्घकालीन समाधान

I. समस्या, जिसे जम्मू-कश्मीर आज सामना कर रहा है

पिछले दो महिनों से जम्मू-कश्मीर की सामाजिक-धार्मिक स्थिति दिन-ब-दिन अत्यन्त खराब होती जा रही है। प्रथमत: इसने कश्मीर घाटी को अपनी गिरफ्त में ले लिया है। अब जम्मू है जहाँ यह अपने विस्फोटक बिन्दु के नजदीक पहुँच रहा है जो न केवल जम्मू-कश्मीर के लोगों के लिए बल्कि भारत और पाकिस्तान के लोगों के लिए भी बहुत ही खतरनाक परिणाम पैदा कर सकता है और उसकी ओर बढ़ सकता है। इस प्रकार यह सम्पूर्ण दक्षिण एशिया को प्रभावित करेगा और अन्तत: विद्यमान खतरनाक विश्व शक्ति संतुलन पर भी असर डालेगा। यह मामला जिसने इस उपद्रवी स्थिति को पैदा किया वह यह था कि कुछ समय पहले जम्मू-कश्मीर की सरकार ने श्री अमरनाथ श्राईन बोर्ड (एस ए एस बी) की प्रार्थना पर 800 केनाल वन भूमि अमरनाथ तीर्थयात्रियों के लिए रास्ते में अस्थायी प्रबंध हेतु एस ए एस बी को आवंटित करने का आदेश जारी किया था।

उपर्युक्त आदेश का पहले विरोध कश्मीरी लोगों द्वारा किया गया जिनका नेतृत्व ज्वाइन्ट एक्शन कमेटी के संयोजक एडवोकेट अब्दुल कयाम, हुरियत कान्फ्रेन्स और अन्य स्वतंत्रता समर्थक ताकतों द्वारा किया गया। विरोध प्रदर्शन कर रहे कश्मीरी लोगों का दबाव इतना बड़ा था कि सरकार अपने फैसले को बदलने के लिए बाध्य हुई कि तीर्थयात्रियों का प्रबंध एस ए एस बी की बजाए सरकार द्वारा किया जायेगा। इस प्रकार, कश्मीर में आन्दोलन एक आनन्दित मनोदशा में समाप्त हो गया। एस ए एस बी को भूमि आवंटन रद्द करने के सरकार के फैसले के वक्त ही सम्पूर्ण जम्मू क्षेत्र में अचानक मजबूत विरोध प्रदर्शन भड़क उठा। तुरन्त ही भाजपा और इसकी समर्थक ताकतों के नेतृत्व में सरकार विरोधी विरोध आन्दोलन पूरे जम्मू में शुरू हो गया और यह पिछले 35 दिनों से लगातार जारी है। इस दौरान, सरकार और प्रदर्शकारियों के बीच कई भिड़न्तें हुई, परिणामत: कुल 7 अमूल्य मानवीय जाने नष्ट हुई और बड़ी संख्या में घायल हुए।

इस प्रकार, मामले की अति ज्वलनशील, विस्फोटक अवस्था जम्मू-कश्मीर में सभी समझदार और तर्कसंगत लोगों से मांग करती है कि वो आगे आएँ तथा समस्या का एक प्रासंगिक एवं न्यायिक हल निकाले जिसने इतनी गंभीर स्थिति पैदा की।

II. आज जम्मू-कश्मीर जिस समस्या से सामना कर रहा है उसका तात्कालिक समाधान

समस्या, जिसने अब जम्मू-कश्मीर को निगल लिया है, की गंभीरता का आकलन करते हुए हम जम्मू-कश्मीर के वर्तमान राज्यपाल से निम्नलिखित कदम उठाने की गंभीरतापूर्वक अपील करते हैं।

(अ) तुरन्त ही ज्वाइंट एक्शन कमेटी कश्मीर के नेता एडवोकेट अब्दुल कयाम और जम्मू संघर्ष समिति (एस ए आई एस एस) के नेता एडवोकेट लीलाकरन की एक संयुक्त बैठक बुलाने के लिए गंभीरतापूर्वक अपील करे।

(i) एस ए एस बी को 800 केनाल वन भूमि आवंटन के सवाल का समझौतावादी समाधान तलाशे।

(ii) एस ए एस बी कानून में एक ऐसा संशोधन करे कि एस ए एस बी के सभी सदस्य प्रान्तीय विषय हों। इसमें एक सदस्य मलिक परिवार का भी हो जिसने अमरनाथ गुफा की खोज की।

(iii) सरकार से लेकर प्रत्येक आम नागरिक हिंसा टालते हुए तथा कहने और कुछ भी करने में लोकतांत्रिक रास्तों और तरीकों को अपनाए।

(ब) यदि राज्यपाल उपर्युक्त 3 उद्देश्यों को प्राप्त करने में कामयाब नहीं होते हैं तो उनको भारत के प्रधानमंत्री को अपनी अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत करनी चाहिए और उनसे इन उद्देश्यों को सभी लोकतांत्रिक तरीकों से, यहां तक कि पाकिस्तान और सभी सार्क सदस्य देशों से नैतिक समर्थन द्वारा हासिल करने की प्रार्थना करनी चाहिए।

III. आज जम्मू-कश्मीर जिस समस्या से सामना कर रहा है उसका दीर्घकालीन समाधान

एक वास्तविक, व्यावहारिक और तर्कसंगत प्रस्ताव, जो भारत की तरफ वाले छह क्षेत्रीय इकाइयों और पाकिस्तानी साईड की क्षेत्रीय इकाइयों के स्वतंत्र राज्य की स्थापना द्वारा जम्मू-कश्मीर को एक स्वतंत्र संघीय राज्य बनाए, जो तीनों संबंधित पक्षों यानि भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों की आकांक्षाओं और इच्छाओं को संतुष्ट कर सके।

इस संघीय राज्य के तहत भारत और पाकिस्तान के अपने-अपने राष्ट्रीय हितों को जम्मू और कश्मीर के तीन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मामलों यानि, रक्षा, विदेशी मामले और मुद्रा को भारत-पाक सहराज्य के संवैधानिक प्रावधान में संयुक्त रूप से सौंप कर संतुलित किया जाना चाहिए।

जम्मू-कश्मीर के लोगों की क्षेत्रीय आकांक्षाएं एवं हितों को जम्मू-कश्मीर को एक स्वतंत्र संघीय राज्य बनाकर पूरा किया जायेगा। इस संघीय राज्य में सभी विषय होंगे सिवाय रक्षा, विदेशी मामले एवं मुद्रा के, जिसे भारत-पाक सहराज्य द्वारा संचालित किये जायेंगे।

संघीय राज्य की अपनी संघीय विधानसभा होगी, जिसे छह प्रान्तीय या क्षेत्रीय विधानसभाएं चुनेगी और वह पर्यावरणीय समस्याएं, मानवीय विषयों और संवैधानिक-कानूनी मामलों को हल करेगी। इसके स्वयं शासित प्रान्त या क्षेत्रीय इलाके होंगे (i) लद्दाख, (ii) कारगिल, (iii) कश्मीर घाटी, (iv) जम्मू क्षेत्र, (v) पूँछ-रजौरी और (vi) चिनाव घाटी।

पाकिस्तानी साईड वाले जम्मू-कश्मीर के लोगों की क्षेत्रीय आकांक्षाएं और हितों को पाकिस्तान प्रशासित क्षेत्र को एक स्वतंत्र संघीय राज्य बनाकर पूरा किया जायेगा जिसकी स्वयं की संघीय विधानसभा होगी और वह पर्यावरणीय समस्याओं, मानवीय विषयों और संवैधानिक कानूनी मामलों को देखेगी। इसके स्वयं शासित प्रान्त या क्षेत्रीय इलाके होंगे (क) पूंछ, भीम्बर, मीरपुर यानि पठवारी भाषी क्षेत्र (ख) बाल्टिस्तान एवं गिलगिट यानि उत्तरी क्षेत्र।

अन्त में, भारत और पाकिस्तान दोनों जम्मू-कश्मीर के विद्यमान दो विभाजित भागों को भारत-पाक संयुक्त सहराज्य के तहत 10 वर्षों के भीतर एक करने के लिए प्रतिबद्ध है।

- कश्मीरी पण्डित समुदाय को कश्मीर घाटी में बसाने तथा बसाने की सम्पूर्ण योजना पण्डित समुदाय के समक्ष उनके अनुमोदन के लिए रखना।
- 1947 के पश्चिमी पाकिस्तानी शरणार्थियों की 61 वर्ष पुरानी मांग को उन्हें क्षेत्र के स्थायी निवासी की मान्यता देकर हल करना।
- सीमा क्षेत्र के शरणार्थियों (जो भारत-पाक युद्धों और भारत-पाक सेनाओं की सीमा पर निरन्तर भिड़न्त के कारण विस्थापित) की पुरानी लम्बित मांग को उन्हें उचित मुआवजा देकर हल करना।

(टिप्पणी, यदि कोई हो तो, Email:saraf_rp@rediffmail.com पर की जा सकती है)

—: सम्पर्क :—

ए.एस. रॉथर (एस.ई. रिटायर्ड) 9858199989, सतपाल गुप्ता (एडवोकेट) 9419240348, हिम्मतसिंह 9419248419, सुखदेवसिंह 01652-274551, मघरसिंह कुलरिया 01679-238037, मनीराम एडवोकेट 9829358387, सज्जनकुमार 9001826467, विपिनचन्द्र 0151-2521869, गिरधारीराम 9414418123, घनश्याम डेमोक्रेट 9414864548, मन्नाराम एडवोकेट 9414927387, इन्द्रसिंह 0141-2396406, पी.डी. सोगरा 9983131991

* * * * *

हमारी दुनिया – हमारे ग्रह पृथ्वी के आज के हालात

मानव समुदाय को आज एक अभूतपूर्व चुनौती से सामना है
मानव समुदाय के निरन्तर कायम रहने से ज्यादा
इसके नष्ट होने की संभावना अधिक प्रबल है

I

एडम स्मिथ के विचार उनकी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'राष्ट्रों की सम्पत्ति' में केवल एकतरफा नजरिए पर ही जोर दिया गया है

झकझोर देने वाली उपर्युक्त प्रमुख पंक्तियां केवल तभी समझ में आ सकती हैं जब निम्न तथ्यों पर गंभीरता से नजर डाली जाए। हमारे नजरिए से यह अभूतपूर्व चुनौती 258 वर्षों से मौजूद कॉरपोरेट दृष्टिकोण, इसकी व्यवस्था एवं कार्यक्रम की उपज है जो पूंजी आधारित बाजार के नेतृत्व में तथा व्यक्तिवादी या निजी स्वार्थ पर टिकी है। और यह कारपोरेट दृष्टिकोण, इसकी व्यवस्था एवं कार्यक्रम स्वयं भी दुनिया के प्रसिद्ध दार्शनिक एडम स्मिथ के विचारों की मूल थिसिस जो उनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'राष्टों की सम्पत्ति' में दर्ज है जिसमें उन्होंने निम्न बुनियादी प्रस्तावनाएं रखी हैं; कि ''मनुष्य स्वभाव से स्वार्थी है'', ''समाज का आधार ही पूंजी है'' एवं बाजार पूंजी के उद्देश्य को सुनिश्चित करता है अथवा पूंजी को निर्धारित करने वाला कारक है।

फिर भी, निम्नलिखित तथ्य यह दर्शाते हैं कि उपर्युक्त वर्णित एडम स्मिथ का सम्पूर्ण नजरिया एकतरफा है।

प्रथम, इसका मानना यह है कि मनुष्य स्वभाव से स्वार्थी है, केवल मात्र एकतरफा नजरिया है। यद्यपि वास्तव में मनुष्य का दो तरफा चरित्र है: एक तरफ जैविक चरित्र है तथा दूसरी तरफ सामाजिक। जैविक पहलू उसके व्यक्तिगत भौतिक जीवन को प्रतिबिम्बित करता है जबकि सामाजिक पहलू उसके सामाजिक जीवन, क्रियाकलाप एवं संगठन को दर्शाता है जिसे दुनिया के विभिन्न प्रकार के संविधानों, संयुक्त राष्ट्र एवं इसकी वित्तीय संस्थाओं, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन आदि में मौजूद है।

दूसरा, इसका यह मानना कि मानव समाज का आधार पूंजी है या मानव समाज पूंजी पर आधारित है, यह धारणा मूल रूप में ही गलत है। वास्तव में पूंजी केवल धन या मुद्रा के रूप में है। मनुष्य समाज या मानव मात्र को स्वयं को जिन्दा रखने के लिए हमेशा और हर कहीं माकूल पर्यावरण तथा भरण-पोषण के उचित हालात की आवश्यकता है, वह कैसे कागज और धातु से बने धन या मुद्रा से अपने जीवन को कायम रख सकता है।

तीसरा, इसका यह मानना है कि बाजार पूंजी के उद्देश्य को सुनिश्चित करता है अथवा पूंजी को निर्धारित करने वाला बेरोमीटर या कारक है, स्पष्टतया यह धारणा एक पूंजीवादी औजार या तकनीक है जो पूंजी व पूंजी के मालिकों को बढ़ावा देती है तथा धन व सम्पत्ति के सन्दर्भ में लोगों के हितों को नुकसान पहुंचाती है। यह विशेष तौर पर बाजार संकट के समय ही होता है जिसे न्यूयार्क वॉल स्ट्रीट मार्केट (दुनिया का सबसे बड़ा स्टॉक मार्केट) के चल रहे संकट से समझा जा सकता है, यहां के सारे संकट इस बात को दर्शाते हैं कि विशाल धन अद्वितीय रूप से दिन दूनी रात चौगुनी रफ्तार से विकसित होने की तैयारी में है जबकि साधारण शेयर धारक बुरी तरह से दिवालियेपन की तरफ धकेला जा रहा है।

एडम स्मिथवादी (कारपोरेट पूंजीवादी) सिद्धान्त एवं इसकी व्यवस्था की कारगुजारी के पिछले 258 वर्ष के लम्बे काल पर नजर डालें तो यह साफ-साफ कहा जा सकता है कि जहां एक ओर सभी वैज्ञानिक व सामाजिक क्षेत्रों में इसका काफी योगदान है जो इसका सकारात्मक पक्ष बनता है, जबकि दूसरी ओर अत्यधिक खतरनाक चुनौतियां मुख्य तौर पर पर्यावरण एवं मनुष्य जाति के अस्तित्व को खतरा पैदा करना इसका नकारात्मक पक्ष बनता है।

हमारे नजरिए में यहां यह उचित और प्रासंगिक होगा कि तीन बुनियादी नियमों वाले एडम स्मिथवादी सिद्धान्त के सम्बन्ध में मार्क्सवादी सोच क्या है इस पर गंभीरता से और नजदीकी से नजर डालें। यद्यपि मार्क्सवादी (साम्यवादी) सिद्धान्त दुनिया में कारगर नहीं रहा है फिर भी सामाजिक अध्ययन के लिए इसका अनुभव उपयोगी हो सकता है। मनुष्य के स्वभाव के प्रश्न पर मार्क्सवादी सिद्धान्त एक भ्रमित सोच रखता है, पहला, यह इस बात पर जोर देता है कि मानव जाति का चरित्र सामाजिक है। अगले ही पल इसके सामाजिक होने के गुणों को यह औद्योगिक सर्वहारा (इसके अनुसार जो मानव जाति को स्वतंत्रता के गन्तव्य की ओर ले जाने वाला है) में निहित कर देता है तथा अन्तिम तौर पर इस सामाजिक चरित्र के समस्त सामाजिक एकाधिकार को कम्युनिस्ट पार्टी को सौंप देता है। इसकी मान्यता के अनुसार केवल मात्र कम्युनिस्ट पार्टी में ही वह क्षमता है जो मानव समाज में सामाजिक परिवर्तन ला सकती है और अन्ततोगत्वा यह एक व्यक्ति,

यानि कम्युनिस्ट पार्टी के महासचिव में सारी सत्ता केन्द्रित कर देता है और जो मृत्युपरान्त अपनी जिन्दगी में अधिनायक (डिक्टेटर) बना रहता है।

मार्क्स के अनुसार पूंजी श्रम का अतिरिक्त मूल्य है यानि काम के दौरान उनको मिलने वाली मजदूरी से अधिक पैदा किया गया अतिरिक्त मूल्य ही पूंजी है या दूसरे शब्दों में निर्धारित समय-काल के दौरान अपनी मजदूरी से जो अधिक मूल्य पैदा करता है और जिसे पूंजीपति हड़प कर लेता है वही पूंजी है। और इस प्रकार यह भी धन को ही पूंजी मानता है।

मार्क्स की मान्यता के अनुसार उत्पादन के साधनों का समाजीकरण या राष्ट्रीयकरण करना ही समाज का उद्देश्य है। मार्क्सवादी सिद्धान्त का यह मानना है कि एक ही पार्टी द्वारा संचालित राज्य नाम की एकमात्र संस्था ही सभी आर्थिक/बाजार की गतिविधियों– जिसमें उत्पादन, वितरण, कीमतों का निर्धारिण करना शामिल है– के बारे में लाभदायक और उचित निर्णय ले सकती है। यह साम्यवादी पार्टी के राजनीतिज्ञों एवं अफसरशाहों के हाथ में विकास की सम्पूर्ण सत्ता केन्द्रित करती है। जहां एक ओर यह आर्थिक समानता को थामे रखने का दावा करती है वहीं यह दूसरी ओर कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यकर्ताओं के साथ-साथ सरकारी नौकरशाही और मजदूर अभिजात वर्ग को विशेष अधिकार देती है।

मार्क्सवादी सिद्धान्त और इसकी व्यवस्था के 75 वर्ष से अधिक समय पर नजर डाली जाए तो यह कहा जा सकता है कि इसके सकारात्मक पक्ष के तौर पर बहुत सी उपयोगी और लाभदायक उपलब्धियां रही हैं जबकि नकारात्मक पक्ष के तौर पर बहुत सी गंभीर असफलताएं रही हैं जिन्होंने मानव विकास और कल्याण के दायरे में एडम स्मिथवादी (कारपोरेट पूंजीवादी) सिद्धान्त और उसकी व्यवस्था से प्रतियोगिता में इसे पिछड़ने की ओर धकेल दिया है।

II

कारपोरेट व्यवस्था के प्रमुख नेताओं द्वारा बुलाए गए विश्व सम्मेलनों के प्रस्तावों की पालना नगण्य साबित हुई है

मार्क्सवादी सिद्धान्त को दरकिनार रखते हुए तथा मौजूदा विश्व कारपोरेट के भ्रामक व्यवहार यानि, कहना कुछ और करना कुछ के व्यवहार को पुन: ध्यान में रखते हुए आओ हम हाल ही में कारपोरेट व्यवस्था के प्रमुख नेताओं द्वारा बुलाए गए विश्व सम्मेलनों की शृंखलाओं पर नजर डालें।

पिछले चार दशकों में सन्निकट पर्यावरणीय महाविपत्तियों से मुकाबला करने के लिए कार्यशील रणनीतियां बनाने हेतु टिकाऊ विकास पर कई उच्च स्तरीय सम्मेलन हुए परन्तु आज तक इन सम्मेलनों के प्रस्तावों के असर जीरो साबित हुए हैं। स्टाकहोम सम्मेलन 1972 के शुरूआती सम्मेलन के बाद हेलसिंकी (1989), लन्दन (1992), रियो सम्मेलन (1992), क्योटो सम्मेलन (1997), टिकाऊ विकास पर विश्व सम्मेलन, जोहान्सबर्ग (2002), सन् 2004 और 2005 में स्टाकहोम, मान्ट्रियल और बर्लिन में सभाएं/सम्मेलन तथा सन् 2007 में बाली सम्मेलन हुए हैं। इन सभी सम्मेलनों ने कोई फलदायक योगदान नहीं दिया है।

1960 के दशक के अन्तिम हिस्से में जनसंख्या वृद्धि की समस्या के बारे में दुनिया सचेत हुई तब से जनसंख्या पर तीन अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन–बुखारेस्ट 1974, मैक्सिको

1984 तथा केयरो 1994– हो चुके हैं। प्रथम सम्मेलन में जनसंख्या नियंत्रण के लिए विकास यानि महिला शिक्षा, स्वास्थ्य रक्षा की भूमिका पर ध्यान केन्द्रित किया गया तथा सामाजिक पहलू को द्वितीय स्थान पर धकेल दिया गया। दूसरे सम्मेलन में शांति, सुरक्षा और पर्यावरण के हित में आर्थिक पहलू तथा भूखमरी समाप्त करने के पहलू को केन्द्रीय बिन्दु बनाया गया, पुन: सामाजिक क्षेत्र पर कम जोर डाला गया।

केयरो सम्मेलन ने कुछ सामाजिक मुद्दों को अपनी रणनीति का आधार बनाने पर जोर दिया परन्तु सामाजिक एवं आर्थिक सुरक्षा के मुद्दे को छोड़ ही दिया। इस सम्मेलन में निम्न बिन्दुओं पर अधिक जोर दिया गया–

1. महिला सशक्तिकरण, लिंग समानता या समान पारिवारिक साझेदारी (टकराहट नहीं), प्रजनन अधिकार, जच्चा-बच्चा की मृत्यु दर कम करना, शादी की उम्र बढ़ाना, दो बच्चों के बीच जन्म अन्तराल बढ़ाना आदि उद्देश्यों की पूर्ति को ध्यान में रखते हुए महिला को जनसंख्या नीति में महत्वपूर्ण घटक माना जाए।

2. 20 वर्षों में सबको प्राथमिक शिक्षा, विशेष तौर पर लड़कियों को।

3. परिवार नियोजन, उसकी सूचना और सेवाएं सबको उपलब्ध करवाना।

4. प्रजनन क्षमता कम करने की धारणा, गरीबी की अवस्था में भी इसे कम करना।

5. भ्रूण हत्या के वाद-विवाद से उभरी परम्परागत धार्मिक मतान्धताओं की गैर उपयोगिता की समझ बढ़ाना।

6. उत्तर और दक्षिण के बीच विश्व संसाधनों के बंटवारे पर बातचीत की आवश्यकता पर जोर देना, जिनका अभी पश्चिमी विकास मॉडल और उसकी जीवन शैली द्वारा अति उपयोग और बर्बाद किया जा रहा है।

तथ्य दर्शाते हैं कि उक्त सम्मेलनों द्वारा प्रस्तावित बड़बोली क्रियाशील योजनाओं तथा दुनिया भर में विभिन्न सरकारों द्वारा उनकी क्रियान्विति के बावजूद जनसंख्या की समस्या के हालात बद से बदत्तर हुए हैं। दुनिया भर में एक भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जहां जनसंख्या वृद्धि रुकने या जनसंख्या वृद्धि रोकने की प्रक्रिया में कोई राहत का ईशारा मिलता हो।

विश्व में कृषि आम तौर पर बहुआयामी संकट से घिरी हुई है जिसे संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा प्रसारित मई, 2005 की रिपोर्ट में देखा जा सकता है। इस रिपोर्ट में बताया गया है कि भूखमरी को कम करने के लिए 1996 में विश्व खाद्य सम्मेलन द्वारा सन् 2015 को अन्तिम तिथि के तौर पर निर्धारित किया गया था। इस निर्धारित समयावधि के आधी बीत जाने तक संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य व कृषि संगठन ने तब तक की गई प्रगति को असंतोषजनक बताया है। विश्व खाद्य सम्मेलन द्वारा 1996 में उक्त लक्ष्य निर्धारित किया गया था तथा सहस्राब्दी विकास सम्मेलन (एमडीएस-2000) में इसकी पुष्टि की गई थी। ''यह हम निश्चित तौर पर कह सकते हैं कि यदि वर्तमान रुझान जारी रहता है तो सन् 2015 तक कुपोषित लोगों की संख्या आधी करने का लक्ष्य निरन्तर दूर होते जाने के कारण उसे हासिल करना लगभग असंभव होगा।''

नवम्बर 1996 में रोम में एफ ए ओ द्वारा बुलाये गये विश्व सम्मेलन में यह प्रतिबद्धता प्रकट की गई थी कि सभी लोगों को विश्व खाद्य सुरक्षा तथा सुरक्षित एवं पोषण योग्य भोजन उपलब्ध करवा दिया जायेगा। इसमें यह घोषणा की गई कि दुनिया भर में भूखमरी

को उखाड़ फेंका जायेगा तथा सन् 2015 तक भूखे लोगों की संख्या आधी कर दी जायेगी। फिर भी सन् 1996 में विश्व खाद्य सम्मेलन द्वारा जो उपर्युक्त लक्ष्य तय किया गया तथा जिसे पुन: 2001 के विश्व खाद्य सम्मेलन में दोहराया गया उसे प्राप्त नहीं किया जा सकता है, क्योंकि कारपोरेट शासकों और व्यापारिक घरानों के बीच इस लक्ष्य की उपयोगिता और लाभदायकता पर गंभीर मतभेदों के कारण इसे प्राप्त करना संभव नहीं है।

संयुक्त राष्ट्र मानव विकास रिपोर्ट (यू एन एच डी आर) 2003 के अनुसार अमीर और गरीब के बीच व उच्च एवं निम्न के बीच विषमता का रुझान बढ़ता जा रहा है या किसी भी आकार में कम होने के कोई चिह्न नजर नहीं आते हैं।

यूएनएचडीआर-2002 की रिपोर्ट बतलाती है कि दुनिया के 1% सबसे धनी लोगों की आय दुनिया के 75% गरीबों की आय के बराबर है।

यूएनएचडीआर-2001 में उल्लेख है कि दुनिया के विकासशील देशों के 4.6 अरब लोगों में से 85 करोड़ लोग अनपढ़ हैं, करीब 1 अरब लोगों को मल निकास की सुविधा उपलब्ध नहीं है।

यूएनएचडीआर-1999 की रिपोर्ट का कहना है कि 1990 के दशक के आखिर तक दुनिया में अधिकतम आय प्राप्त करने वाले देशों में रहने वाले लोगों का 1/5 हिस्सा दुनिया की जीडीपी (सकल घरेलू आय) का 86% प्राप्त करता है जबकि निम्नतम 1/5 हिस्सा मात्र 1% प्राप्त करता है तथा आज की बुनियादी संचार सुविधा (टेलीफोन लाइन) का 74% अमीरों को प्राप्त है और निम्नतम 1/5 हिस्से के लोगों को 1.5% संचार सुविधा उपलब्ध है।

यूएनएचडीआर-1996 रिपोर्ट बताती है कि दुनिया में निम्नतम विकसित 48 देशों की सकल घरेलू आय (जीडीपी) दुनिया के मात्र तीन सबसे अमीर लोगों की सम्पदा के बराबर है।

चल रहे मौजूदा संकट के मानवीय पहलू पर नजर डाली जाए तो आर्थिक वृद्धि से सम्बन्धित कारपोरेट ग्लोबल संस्थाओं के समर्थक, यानि, संयुक्त राष्ट्र, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन भी मौजूदा कारपोरेट विकास मॉडल के गैर टिकाऊ होने पर जोर दे रहे हैं, यह मॉडल खत्म न होने वाली मुश्किलों–जैसे, असमानता, गरीबी, बेरोजगारी, सामाजिक अन्याय आदि–से ग्रसित है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आई एल ओ)-2003 की रिपोर्ट दर्शाती है कि विश्व में बेरोजगारी सन् 2003 में निरन्तर अनवरत ऊंचाई की तरफ बढ़ती गई। सन् 2003 के दौरान पुरुष और महिलाओं में बेरोजगारी 18 करोड़ 50 लाख (यानि कुल श्रम शक्ति का 6.2%) के रिकार्ड स्तर तक पहुंच गई। यह आंकड़ा दर्ज रिकार्ड में सबसे अधिक रहा है जबकि 2003 के उत्तरार्ध की आर्थिकता में सुधार हो गया था। इस दौरान नौजवानों में यह बेरोजगारी तेजी से बढ़ी। दुनिया के बेरोजगार लोगों में 10 करोड़ 81 लाख पुरुष तथा 7 करोड़ 78 लाख महिलाएं बेरोजगार थी।

युवाओं में विश्व बेरोजगारी रुझान पर अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने नये विश्लेषण के साथ सन् 2004 की रिपोर्ट प्रस्तुत की है जिसे इसके बेरोजगारी रणनीतिक विभाग ने तैयार किया है। इस रिपोर्ट का कहना है कि 15 से 24 वर्ष की आयु के बीच आने वाले नौजवान दुनिया के कुल बेरोजगारों के आधे हैं। वास्तव में दुनिया भर में पिछले दशक

में युवाओं के बीच बेरोजगारी आसमान छूने लगी है जिनकी संख्या 8 करोड़ 80 लाख हो गई है।

मानव विकास रिपोर्ट 2007/2008

मौसम परिवर्तन से मुकाबला : विभाजित विश्व में मानवीय एकजुटता

21वीं सदी की मानव विकास चुनौती में मौसम परिवर्तन की चुनौती सबसे बड़ी चुनौती है। इस चुनौती को सही जवाब देने में असफलता अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर गरीबी कम करने के प्रयासों को न केवल रोक देगी बल्कि गरीबी बढ़ाने की तरफ ले जायेगी। मौसम परिवर्तन के कारण सबसे गरीब देशों तथा अत्यधिक कमजोर नागरिकों को यह सबसे अधिक पीड़ा पहुंचायेगी और उनके लिए अत्यधिक नुकसानदायक होगी। यद्यपि इस समस्या को पैदा करने में इनका (गरीबों का) नगण्य योगदान है। भविष्य पर नजर डाली जाए तो कोई भी देश चाहे वह अमीर है या ताकतवर, ग्लोबल वार्मिंग (वैश्विक गर्मी) के प्रभाव से अछूता नहीं रह पायेगा।

सन् 2007/2008 की मानव विकास रिपोर्ट दर्शाती है कि मौसम परिवर्तन की चुनौती कोई निकट भविष्य की चुनौती नहीं है (बल्कि मौजूदा समस्या है)। सूखा, बाढ़ और तूफानों में बढ़ोतरी पहले से ही लोगों के सुअवसरों को नष्ट कर रहे हैं तथा असमानता और मजबूत होती जा रही है। इसी दौरान, दुनिया ऐसे बिन्दु (दहलीज) की ओर बढ़ रही है जहां से पारिस्थितिकी की विनाश लीला से बचना और इसे वापिस मोड़ देना असंभव हो जायेगा, इस तथ्य के बहुत से वैज्ञानिक साक्ष्य अब मौजूद हैं। अगर ऐसा ही चलता रहा तो मौसम परिवर्तन एक साफ दिशा की ओर इंगित कर रहा है : हमारे ही जीवन काल में मानव विकास अद्वितीय स्तर से पिछड़ जायेगा तथा हमारे बेटों-पोतों के लिए गंभीरतम जोखिम पैदा हो जायेगा।

अत्यधिक नुकसानदायक मौसम परिवर्तन के प्रभावों से बचने के अवसर के लिए एक खिड़की है परन्तु वह खिड़की बन्द होने जा रही है : इस प्रवाह को बदलने के लिए दुनिया के पास एक दशक से भी कम समय है। कोई कार्यवाही करो या ना करो, आने वाले वर्षों में मानव विकास के भविष्य की राह में गहरी मुश्किलों का सामना करना होगा। कार्यवाही करने के लिए दुनिया में न तो वित्तीय संसाधनों की कमी है और ना ही तकनीकी क्षमताओं की कमी है। कमी है तो तात्कालिक कार्यवाही करने, मानवीय एकजुटता कायम करने तथा सामूहिक हितों को प्रधानता पर लाने की संवेदना की कमी है।

सन् 2007/2008 मानव विकास रिपोर्ट के विश्लेषण के अनुसार मौसम परिवर्तन बहुत सारे स्तरों पर चुनौती प्रस्तुत करता है। एक विभाजित परन्तु पारिस्थितिक तौर पर अन्तरनिर्भर दुनिया में मौसम परिवर्तन सभी लोगों को चुनौती देता है कि इसका सही प्रत्युत्तर कैसे दिया जाए और एक चीज जो हमारी सबकी साझी है वह है हमारा ग्रह–पृथ्वी, उसके पर्यावरण का सही प्रबंध हम कैसे करें? यह हमारे सामने चुनौती प्रस्तुत करता है कि देशों और पीढियों के बीच सामाजिक न्याय और मानव अधिकार के सम्बन्ध में हम सही उत्तर कैसे दें? यह अमीर देशों और उनके लोगों के सामने चुनौती प्रस्तुत करता है कि वे इस समस्या को हल करने की अपनी ऐतिहासिक जिम्मेवारी को महसूस करें तथा ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन में जल्दी से जल्दी तथा अधिक से अधिक कटौती करने की पहल करें। इस सबके अलावा यह सम्पूर्ण मानव समुदाय को चुनौती प्रस्तुत

करता है कि साझे मूल्यों और साझे दृष्टिकोण के तहत तुरन्त और मजबूत सामूहिक कदम उठाएं।

सन् 2007/2008 मानव विकास रिपोर्ट ऐसे समय में आई है जब लम्बे समय से अन्तर्राष्ट्रीय एजेण्डे पर चल रहे मौसम परिवर्तन के मुद्दे ने अत्यधिक ध्यान खींचने की शुरूआत की है जिसको इसकी जरूरत है। हाल ही में प्रस्तुत आई पी सी सी रिपोर्ट के निष्कर्षों में जोरशोर से यह उद्घोषणा की है और यह साफ-साफ पुष्ट किया है कि हमारा मौसम चक्र गर्म हो गया है तथा सीधे तौर पर यह मानव गतिविधियों का ही परिणाम है।

इन परिवर्तनों का प्रभाव पहले से ही बहुत गहरा है और अब तो यह ओर अधिक बढ़ता जा रहा है। इस साल की यह रिपोर्ट जो कुछ सारा दाव पर लगा है उसकी गंभीरता से याद दिलाती है : मौसम परिवर्तन एक जुड़वां विनाश के खतरे को पेश करता है, दुनिया के गरीबों के लिए मानव विकास में तुरन्त आघात पहुंचायेगा और इसके उत्तरोत्तर सारे मानव समुदाय के लिए दीर्घकालीन गंभीर खतरे को पैदा कर देगा। बार-बार होने वाली इन विनाश लीलाओं को हमने पहले से ही देखना शुरू कर दिया है। जैसे-जैसे समुद्र का जल स्तर बढ़ रहा है तथा उष्ण कटिबंधीय तूफानों में तीव्रता आती जा रही है, वैसे-वैसे लाखों लोगों को विस्थापन की स्थिति झेलनी पड़ रही है। हमारे ग्रह पृथ्वी पर कुछ अत्यधिक कमजोर शुष्क इलाके के निवासियों को अधिक जल्दी-जल्दी और लम्बे समय तक चलने वाले सूखे की पीड़ा से गुजरना पड़ रहा है। जैसे-जैसे ग्लेशियर पिघल रहे हैं जलापूर्ति की स्थिति जोखिम के कगार पर पहुंचती जा रही है। यह तेजी से बढ़ रही ग्लोबल वार्मिंग दुनिया के गरीबों पर अमीरों की तुलना में असमान रूप से असर डाल रही है तथा मिलेनियम विकास लक्ष्य को प्राप्त करने में बाधा खड़ी कर रही है। तथापि, दीर्घकालीन तौर पर अमीर या गरीब कोई भी मौसम परिवर्तन द्वारा पैदा किये जा रहे खतरे से बच नहीं पायेगा। मौसम परिवर्तन की जिस स्थिति ने आज हमें जिस हाल में ला दिया है, मैं इस बात से सहमत हूँ कि इस चुनौती के सम्बन्ध में जो कुछ भी हम आज करेंगे उससे यह तय होगा कि जिस युग में हम जी रहे हैं वह कौनसा रास्ता अख्तियार करेगा। मैं यह भी विश्वास करता हूँ कि मौसम परिवर्तन वैश्विक चुनौती की ही एक किस्म है, और संयुक्त राष्ट्र संघ ही इस चुनौती से निपटने के लिए सबसे उपयुक्त संस्था है। और इसलिए ही मैंने संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य देशों के साथ इसको मेरी व्यक्तिगत प्राथमिकता पर लिया है ताकि संयुक्त राष्ट्र संघ इस मामले में अपनी पूर्ण भूमिका निभाना सुनिश्चित कर सके। मौसम परिवर्तन की चुनौती से निपटने के लिए दो मोर्चों पर कार्य करने की आवश्यकता है। पहला, ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के वास्ते दुनिया को तुरन्त क्रियान्विति के कदम उठाने की आवश्यकता है। औद्योगिक देशों को इन गैसों के उत्सर्जन को भारी मात्रा में कम करने की आवश्यकता है। उनके लिए यह भी आवश्यक है कि वे विकासशील देशों के साथ और अधिक सहयोग करें, साथ ही साथ गैस उत्सर्जन को कम करने के लिए उन्हें प्रोत्साहित करें और इस पर भी ध्यान दें कि उनकी आर्थिक वृद्धि दर तथा गरीबी उन्मूलन के प्रयास भी सुरक्षित रहें। दूसरा, वैश्विक आवश्यकताओं के अनुसार ढल जाओ, बहुत से देश, विशेष तौर पर अत्यधिक कमजोर विकासशील देशों को आवश्यकता के अनुसार अपने ढलने की क्षमता को बढ़ाने के लिए सहायता की आवश्यकता है। मौसम परिवर्तन से निपटने के लिए नई तकनीक को पैदा करने और वर्तमान नवीनीकरण तकनीक को आर्थिक तौर पर सस्ता करने तथा उसे तेजी से विस्तारित करने हेतु बड़े स्तर पर

प्रोत्साहित करने की भी आवश्यकता है। मौसम परिवर्तन सम्पूर्ण मानव परिवार के लिए खतरा है, तथापि यह हमें एकजुट होने तथा वैश्विक समस्या को सामूहिक तौर पर प्रत्युत्तर देने का अवसर प्रदान करता है। मुझे यह आशा है कि इस चुनौती का सामना करने के लिए हम एकजुट हो जायेंगे, और आने वाली पीढियों के लिए एक बेहतर दुनिया छोड़ेंगे।

बान की मून
महासचिव, संयुक्त राष्ट्र संघ

मानव विकास रिपोर्ट, 2006

अभावरहित : ऊर्जा, गरीबी तथा वैश्विक जल संकट

सम्पूर्ण इतिहास में मानवता के समक्ष कुछ महानतम चुनौतियों में से जल समस्या एक चुनौती रही है। जल जीने के लिए एक संसाधन है और हमारे पर्यावरण को टिकाऊ बनाए रखने का एक प्राकृतिक संसाधन है तथा हमारे भरण-पोषण में मददगार है, परन्तु यह जोखिम और अतिसंवेदनशील संसाधन भी है। 21वीं शताब्दी के शुरू में मानव विकास की संभावनाएं गहराते वैश्विक जल संकट से खतरे में पड़ गई है। जल के अभाव के कारण जल संकट होने की झूठी धारणा का पर्दाफाश करते हुए यह रिपोर्ट तर्क देती है कि गरीबी, ऊर्जा और असमानता ही जल संकट की समस्या का मुख्य कारण है।

अनाप-सनाप दौलत वाली दुनिया में करीब-करीब बीस लाख बच्चे साफ पानी तथा पर्याप्त मल-मूत्र निकास की व्यवस्था के अभाव में प्रति वर्ष मर जाते हैं। लाखों स्त्रियां और नौजवान लड़कियां घंटों पानी इकट्ठा करने और उसे ढोने के लिए बाध्य है जिससे उनके अवसर और पसंदें क्रियान्वित होने से बाधित होती है। दुनिया के अत्यधिक गरीब देशों में से कुछ देशों में पानी से सम्बन्धित छूत की बिमारियों ने गरीबी कम करने और आर्थिक वृद्धि दर को आगे बढ़ने से रोक रखा है।

घरों के अलावा उत्पादन के संसाधन के तौर पर पानी प्राप्त करने की प्रतियोगिता भी तीव्रतर हो गई है। इस प्रतियोगिता के लक्षण के तौर पर जल आधारित पारिस्थितिकी व्यवस्था का नष्ट होना, नदियों के जल बहाव में कमी आना तथा भूमिगत जल का भारी मात्रा में कम हो जाना शामिल है। देशों के अन्दर जल संघर्ष तीव्र हो रहा है और पानी की पहुंच से गांव के गरीब लोग दूर धकेले जा रहे हैं। देशों के बीच में तनाव की संभावना भी बढ़ रही है, यद्यपि आपसी सहयोग के जरिए मानव विकास प्राप्ति की अन्त:शक्ति भारी मात्रा में मौजूद है।

मानव विकास रिपोर्ट मानवता के सामने कुछ चुनौतियां, जो अत्यधिक दबाव डाल रही हैं, के बारे में लगातार वाद-विवाद करने के बिन्दु सामने रख रही है। मानव विकास रिपोर्ट-2006

* 1 अरब 20 करोड़ लोगों को साफ पानी प्राप्त करने तथा 2 अरब 60 करोड़ लोगों को मल-मूत्र निकासी की सुविधा से वंचित करने वाले संकट के कारणों और प्रभावों की जांच करती है।

* सब लोगों तक पानी और मल-मूत्र निकासी की सुविधा पहुंचे इसके लिए राष्ट्रीय रणनीतियों एवं क्रियान्विति की वैश्विक योजनाओं के जरिए सम्मिलित मुहिम चलाए जाने की पैरवी करती है।

❊ पानी की कमी की ओर धकेलने तथा कृषि में गरीबों को हासिये पर पहुंचाने वाली सामाजिक एवं आर्थिक ताकतों की जांच-पड़ताल करती है।

❊ जल प्रबंध के लिए देशों में सीमा के आर-पार तनावों को हल करने हेतु अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के अवसरों को देखती है।

❊ इस क्षेत्र में गोर्डन ब्राउन तथा नगोजी ओकुन्जो इवेला, राष्ट्रपति लूला, राष्ट्रपति कार्टर तथा भूतपूर्व महासचिव (यू एन) कोफी अन्नान के विशेष योगदान शामिल करती है।

मानव विकास रिपोर्ट, 2005

अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग संकटपूर्ण स्थिति में : एक असमान दुनिया में सहायता, व्यापार एवं सुरक्षा

मानव विकास रिपोर्ट 2005 ने मानव विकास के बारे में लेखा-जोखा किया है जिसमें सहस्राब्दी विकास लक्ष्य की प्रगति पर किया गया लेखा-जोखा भी शामिल है। आंकड़ों के अलावा नजर डाली जाए : इस रिपोर्ट ने निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त न करने तथा प्राप्त करने के लिए किये गये वादों को भंग करने की वजह से जो मानवीय कीमत अदा करनी पड़ी है उसे उजागर किया है। मानव-विकास तथा सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों की तरफ तेजी से प्रगति कर रहे कदमों को ताकतवर रुकावट के तौर पर देशों में और देशों के बीच हद दर्जे की असमानता को मुख्य बाधा के रूप में चिह्नित किया है।

यह रिपोर्ट सुझाव देती है कि दुनिया की सरकारों के सामने विकल्प उपलब्ध हैं। वे वित्तीय संसाधनों, तकनीक तथा गरीबी समाप्त करने की क्षमता के जरिए विकास करने का दशक शुरू कर सकते हैं या हम मानव विकास में असफलता हासिल कर सकते हैं। 'जैसा चल रहा है' वह क्रियाकलाप हमें सन् 2000 में किये गए वायदों और प्रतिबद्धताओं को पूर्ण करने की इजाजत नहीं देंगे। इस असफलता की कीमत मानव की जिन्दगी, बढ़ती असमानता, मानवाधिकारों के उल्लंघन तथा शान्ति के खतरे के रूप में नापा जा सकता है।

गरीबी के विरुद्ध युद्ध में अन्तर्राष्ट्रीय सहायता सबसे अधिक प्रभावी हथियारों में से एक है, लेकिन इस सहायता को नये तरीके और नई शक्ल की आवश्यकता है। इसको निवेश के साथ-साथ नैतिक दायित्व के रूप में सोचा जाना चाहिए। इस सन्दर्भ में प्रभावी मदद के लिए तीन शर्तें हैं–पर्याप्त मात्रा में मदद, उत्तम गुणवत्ता (कम विनिमय लागत के साथ धन के आधार पर पूर्व अनुमानित मूल्य पर मुहैया करना) तथा उस पर देश का स्वामित्व।

इनमें से किसी भी क्षेत्र में असफलता भविष्य की प्रगति के आधार को कमजोर करेगा।

2005 रिपोर्ट प्रस्तुत करती है–

❊ अन्तर्राष्ट्रीय विकास सहायता का सम्पूर्णता में अवलोकन किया जाए तथा इसकी गुणवत्ता और मात्रा दोनों को देखा जाए।

❊ व्यापार वार्ता के लिए दोहा विकास दौर की प्रगति पर आलोचनात्मक अवलोकन किया जाए और इस बात को उजागर किया जाए कि अनुचित व्यापार नियम असमानता को और मजबूत करते हैं, तथा

❊ हिंसक संघर्षों में मानव विकास के लिए कितनी कीमत अदा करनी पड़ी है उसकी साक्ष्य इस रिपोर्ट में है तथा संघर्षों की रोकथाम की रणनीति का अवलोकन भी इस रिपोर्ट में है।

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यू एन ई पी) 2005 की वार्षिक रिपोर्ट में संगठनात्मक कार्य तथा वर्ष भर की उपलब्धियों पर नजर डाली गई है। पर्यावरण, जिससे भविष्य सुरक्षित रखा जा सके तथा 'प्राकृतिक पूंजी का बचाव' के शीर्षक के तहत इस रिपोर्ट ने एक वर्ष में टिकाऊ विकास के लिए यूएनईपी का योगदान पर अवलोकन किया है। इसमें दुनिया के नेताओं ने विकास के लिए पर्यावरण को केन्द्र बिन्दु होने की पुन: पुष्टि की है तथा सहस्राब्दी पारिस्थितिकी आकलन यह प्रकट करता है कि वैश्विक पर्यावरण का स्तर गिरा है।

यू एन ई पी की गतिविधियों का यह संक्षिप्त विवरण 2007 में एक वर्ष में मौसम परिवर्तन के विरुद्ध संघर्ष में संगठनों ने क्या योगदान दिया है इसका अवलोकन किया है। जिसमें पर्याप्त साक्ष्य से यह स्थापित है कि वैश्विक गर्मी हमारे इस युग की प्रथम चुनौती है। यू एन ई पी द्वारा की गई विस्तृत दायरे की अन्य गतिविधियों पर भी नजर डाली है। जिसके अनुसार आदेशात्मक रूप में कहा गया है कि पर्यावरणीय नेतृत्व तथा टिकाऊ विकास को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

विश्व स्वास्थ्य रिपोर्ट, 2007–एक सुरक्षित भविष्य

जन स्वास्थ्य के इतिहास में वैश्विक जन स्वास्थ्य सुरक्षा एक बदलाव के बिन्दु पर खड़ी है, तथा यह इंगित करती है कि आने वाली अर्द्ध शताब्दी में स्वास्थ्य सुरक्षा के मामले में अत्यधिक बढ़ावे के लिए कोई क्या कर सकता है? यह रिपोर्ट दर्शाती है कि किस प्रकार दुनिया बिमारी फैलने, महामारी, औद्योगिक दुर्घटनाएं, प्राकृतिक आपदायें तथा अन्य स्वास्थ्य संबंधित आपातकालीन खतरे बढ़ रहे हैं और यह स्थिति तेजी से विश्व जन स्वास्थ्य सुरक्षा को खतरा पैदा कर सकती है। यह रिपोर्ट वर्णन करती है कि किस प्रकार संशोधित अन्तर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य रेगुलेशन-2005, जो इस वर्ष ही प्रभावशील हुए हैं, देशों को जोखिम चिह्नित करने तथा इन्हें रोकने व नियंत्रित करने व साथ-साथ काम करने के लिए मदद करती है। इन रेगुलेशन्स की इसलिए जरूरत है, क्योंकि कोई भी एक देश, चाहे वह कितना भी क्षमतावान या धनाढ्य क्यों न हो, अन्य देशों की सहायता के बिना बिमारी फैलने तथा अन्य संकटों से स्वयं बचाव नहीं कर सकता। इस रिपोर्ट का कहना है कि सुरक्षित भविष्य की संभावना हमारी पहुंच के अन्दर है–तथा यह एक सामूहिक आकांक्षा एवं एक आपसी जिम्मेवारी दोनों ही है।

विश्व स्वास्थ्य रिपोर्ट, 2006

स्वास्थ्य के लिए साथ-साथ काम किया जाए

इस रिपोर्ट में विश्व स्वास्थ्य कार्य शक्ति में जो मौजूदा संकट है उसके बारे में विशेषज्ञों का आकलन दर्ज है तथा आगे के दस सालों में इस समस्या से निपटने के लिए महत्वाकांक्षी प्रस्ताव दर्ज हैं जिनके लिए तुरन्त कार्यवाही शुरू की जानी चाहिए। इस रिपोर्ट में यह आकलन किया गया है कि करीब 43 लाख डॉक्टरों, दाइयों, नर्सों एवं सहायक कर्मचारियों की दुनिया भर में कमी है। यह कमी गरीब देशों में अत्यधिक गंभीर है, विशेष तौर पर सब-सहारा अफ्रीका में, जहां स्वास्थ्य कर्मचारियों की बहुत अधिक

आवश्यकता है। स्वास्थ्य कर्मचारियों के भर्ती होने से लेकर, स्वास्थ्य प्रशिक्षण से सेवानिवृत्ति तक, पूरे सेवाकाल के सभी स्तरों पर इस रिपोर्ट में 10 वर्ष के लिए क्रियान्विति योजना निर्धारित की गई है, ताकि इस काल में देश अपने-अपने स्वास्थ्य कर्मचारियों का ढांचा वैश्विक साझेदारों के सहयोग से खड़ा कर सकें।

विश्व स्वास्थ्य रिपोर्ट, 2005

प्रत्येक माता और शिशु को ध्यान में रखा जाए

इस रिपोर्ट का कहना है कि इस वर्ष करीब 1 करोड़ 10 लाख 5 वर्ष से कम आयु के बच्चे मौत के मुंह में उन कारणों की वजह से चले जायेंगे जिनको बड़े स्तर पर रोका जा सकता है। इनमें से 40 लाख शिशु अपनी जिन्दगी का पहला महीना भी नहीं निकाल पायेंगे। इसी दौरान 5 लाख से अधिक महिलाएं गर्भावस्था के समय, बच्चा जनने के समय या बच्चे के जन्म के कुछ समय बाद मौत के मुंह में चली जायेंगी। इस रिपोर्ट में कहा गया है कि सहस्राब्दी विकास लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में इस मृत्यु की घटना को कम करना बड़े स्तर पर इस बात पर निर्भर करता है कि प्रत्येक माता को गर्भावस्था से बच्चा होने तक, बच्चा जनने के बाद एवं शिशु अवस्था तक स्वास्थ्य सेवाओं को प्राप्त करने का अधिकार हो।

रोम घोषणा–विश्व खाद्य सुरक्षा के सम्बन्ध में

❊ हमें ऐसी राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियों के लिए समर्थ होना सुनिश्चित करना पड़ेगा ताकि गरीबी को उखाड़ फेंकने तथा वहनीय शांति कायम करने के लिए सर्वोत्तम वातावरण निर्मित किया जा सके तथा जो स्त्री और पुरुष की पूर्ण व समान भागीदारी पर आधारित हो, यह सभी के लिए टिकाऊ खाद्य सुरक्षा प्राप्त करने में सबसे अधिक सहायक रहेगा।

❊ हम उन नीतियों को लागू करेंगे जिनका उद्देश्य गरीबी एवं असमानता हटाने तथा सभी को हर समय पर्याप्त समुचित पोषणीय तथा सुरक्षित आहार और उसकी प्रभावी उपयोगिता के सम्बन्ध में भौतिक व आर्थिक प्राप्ति में सुधार किया जा सके।

❊ उच्च और निम्न क्षमता वाले क्षेत्रों में आहार, खेती, मत्स्य, जंगलात तथा ग्रामीण विकास के सम्बन्ध में भागीदारी एवं टिकाऊनीतियों और कार्यवाहियों को जारी रखेंगे जो घरों, राष्ट्र, क्षेत्र एवं वैश्विक स्तर पर समुचित तथा भरोसेमंद खाद्य आपूर्ति एवं पीड़ादायक जीवाणुओं, सूखा व रेगिस्तानीकरण से बचाने के लिए आवश्यक है। इसमें ध्यान रखा जायेगा कि कृषि का चरित्र बहुआयामी है।

❊ निष्पक्ष और बाजार आधारित विश्व व्यापार व्यवस्था के जरिए आहार, कृषि व्यापार एवं सम्पूर्ण व्यापार नीतियों को सुनिश्चित तौर पर लागू करने का प्रयास करेंगे जो खाद्य सुरक्षा को प्रोत्साहित करने में सहायक होगा।

❊ हम प्राकृतिक आपदाओं एवं मानव निर्मित आपातकालीन स्थितियों को रोकने के लिए तथा अल्पकालीन व अपातकालीन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तैयार रहने का इस तरह से प्रयत्न करेंगे कि क्षतिपूर्ति, पुनर्वास, विकास एवं भविष्य की आवश्यकताओं को पूरी करने की क्षमता को प्रोत्साहन मिल सके।

❊ उच्च व निम्न क्षमता वाले क्षेत्रों में खाद्य, कृषि, मत्स्य एवं जंगलात व्यवस्था

तथा ग्राम विकास के टिकाऊपन एवं मानव संसाधन को प्रोत्साहित करने के लिए अधिक धन राशि तथा सार्वजनिक एवं निजी निवेश को उपयोग में लेने को बढ़ावा देंगे।

❊ हम इस कार्य योजना को सभी स्तरों पर अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के सहयोग से लागू करेंगे, संचालन करेंगे और इसे जारी रखेंगे।

हम विश्व खाद्य सम्मेलन की कार्य योजना को लागू करने के लिए समर्थन देने एवं क्रियान्विति करने की प्रतिज्ञा करते हैं।

रोम, 13 नवम्बर, 1996

विश्व खाद्य सम्मेलन की कार्य योजना

एक हमें ऐसी राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियों के लिए समर्थ होना सुनिश्चित करना पड़ेगा ताकि गरीबी को उखाड़ फेंकने तथा वहनीय शांति कायम करने के लिए सर्वोत्तम वातावरण निर्मित किया जा सके तथा जो स्त्री और पुरुष की पूर्ण व समान भागीदारी पर आधारित हो, यह सभी के लिए टिकाऊ खाद्य सुरक्षा प्राप्त करने में सबसे अधिक सहायक रहेगा।

दो हम उन नीतियों को लागू करेंगे जिनका उद्देश्य गरीबी एवं असमानता हटाने तथा सभी को हर समय पर्याप्त समुचित पोषणीय तथा सुरक्षित आहार और उसकी प्रभावी उपयोगिता के सम्बन्ध में भौतिक व आर्थिक प्राप्ति में सुधार किया जा सके।

तीन उच्च और निम्न क्षमता वाले क्षेत्रों में आहार, खेती, मत्स्य, जंगलात तथा ग्रामीण विकास के सम्बन्ध में भागीदारी एवं टिकाऊनीतियों और कार्यवाहियों को जारी रखेंगे जो घरों, राष्ट्र, क्षेत्र एवं वैश्विक स्तर पर समुचित तथा भरोसेमंद खाद्य आपूर्ति एवं पीड़ादायक जीवाणुओं, सूखा व रेगिस्तानीकरण से बचाने के लिए आवश्यक है। इसमें ध्यान रखा जायेगा कि कृषि का चरित्र बहुआयामी है।

चार निष्पक्ष और बाजार आधारित विश्व व्यापार व्यवस्था के जरिए आहार, कृषि व्यापार एवं सम्पूर्ण व्यापार नीतियों को सुनिश्चित तौर पर लागू करने का प्रयास करेंगे जो खाद्य सुरक्षा को प्रोत्साहित करने में सहायक होगा।

पाँच हम प्राकृतिक आपदाओं एवं मानव निर्मित आपातकालीन स्थितियों को रोकने के लिए तथा अल्पकालीन व अपातकालीन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तैयार रहने का इस तरह से प्रयत्न करेंगे कि क्षतिपूर्ति, पुनर्वास, विकास एवं भविष्य की आवश्यकताओं को पूरी करने की क्षमता को प्रोत्साहन मिल सके।

छह उच्च व निम्न क्षमता वाले क्षेत्रों में खाद्य, कृषि, मत्स्य एवं जंगलात व्यवस्था तथा ग्राम विकास के टिकाऊपन एवं मानव संसाधन को प्रोत्साहित करने के लिए अधिक धन राशि तथा सार्वजनिक एवं निजी निवेश को उपयोग में लेने को बढ़ावा देंगे।

सात हम इस कार्य योजना को सभी स्तरों पर अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के सहयोग से लागू करेंगे, संचालन करेंगे और इसे जारी रखेंगे।

उपर्युक्त वर्णित सम्मेलनों की वास्तविक स्थिति यह है–मानव समुदाय को वे कहां ले गये हैं यह संयुक्त राष्ट्र अन्तरसरकारी मौसम परिवर्तन पैनल (यूएनआईपीसीसी) की ताजा रिपोर्ट में देखा जा सकता है।

III

संयुक्त राष्ट्र अन्तरसरकारी पैनल की मौसम परिवर्तन पर रिपोर्ट

जैसा कि पर्यावरण के संदर्भ में, विश्व वैज्ञानिक समुदाय (यू एन आई पी सी सी) ने सम्पूर्ण मानव जात, इसके प्रशासक और शासक मण्डली को सर्वसम्मति से अभी सन् 2007 में चेतावनी दी है कि यदि अभी पैदा हो रही ग्रीन हाउस गैसों के स्तर को सन् 2050 तक 50% तक घटाया नहीं गया तो 21वीं शताब्दी के अन्त तक हमारे ग्रह पृथ्वी पर से सभी प्रकार के जैव-जीवन के समाप्ति की पूर्ण संभावना है।

यू एन आई पी सी सी की सारांश रिपोर्ट

मौसम परिवर्तन ने 21वीं सदी के मानव विकास चुनौती को निश्चित कर दिया है। इस चुनौती के जवाब में असफलता का अर्थ मानव समुदाय और हमारे ग्रह पृथ्वी के सम्पूर्ण जैव-जीवन को खतरे में डालना होगा। सबसे गरीब देश और सर्वोच्च असुरक्षित नागरिक सर्वप्रथम कष्ट से पीड़ित होंगे और अत्यन्त विध्वंसकारी हादसों के शिकार बनेंगे। हालांकि उन्होंने समस्या में बहुत ही कम योगदान किया है। भविष्य को देखते हुए, कोई भी देश–सम्पन्न या शक्तिशाली–वैश्विक उष्माकरण के प्रभाव से बच नहीं सकेगा।

आई पी सी सी की सारांश रिपोर्ट दर्शाती है कि मौसम परिवर्तन भविष्य का एकमात्र दृश्य नहीं है। सूखा, बाढ़ और तूफानों में बढ़ोतरी पहले से ही अवसर को खतम कर रही है तथा खतरे को मजबूती दे रही है। इस बीच अब बहुत सारे वैज्ञानिक सबूत है कि विश्व ऐसे बिन्दु की ओर बढ़ रहा है जहां से पारिस्थिकी विध्वंस से पीछे हटना असंभव बन जायेगा। जैसाकि सामान्यतया मौसम परिवर्तन के बिन्दु स्पष्ट दिशा में है, हमारे जीवन में मानव विकास अभूतपूर्व उलटाव में है, हमारे बच्चे और उनके बच्चे गम्भीर खतरे में है।

अभी भी मौसम परिवर्तन के प्रभाव को टालने का अवसर है, लेकिन यह अवसर समाप्त होने जा रहा है, दुनिया के पास मामले को बदलने के लिए एक दशक से कम समय है। आने वाले समय में कार्यवाही की जाती है–या नहीं, मानव विकास का भविष्य इस पर भारी निर्भर करेगा। इस पर काम करने के लिए विश्व के पास न तो वित्तीय कमी है न ही तकनीकी क्षमता की कमी। कमी है तो मानव मजबूती की और सामूहिक हित की संवेदना की।

जैसा कि आई पी सी सी की सारांश रिपोर्ट तर्क करती है कि मौसम परिवर्तन कई स्तर पर चुनौतियां प्रस्तुत करता है। बंटा हुआ लेकिन पारिस्थिकी रूप से अन्तरनिर्भर विश्व यह सभी लोगों को चुनौती देता है कि हम कैसे एक ऐसा वातावरण बनाए कि हम साझे रूप से पृथ्वी ग्रह को काम में ले सकते हैं। यह राजनीतिक नेताओं और अमीर देशों में लोगों को चुनौती देता है कि समस्या के प्रति अपनी ऐतिहासिक जिम्मेवारी समझे और ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में शीघ्र कटौती तथा प्रभावी पहल करे। इन सबसे ऊपर यह सम्पूर्ण मानव समुदाय को साझी मान्यताओं और साझे दृष्टिकोण पर आधारित पक्का और मजबूत सामूहिक कार्य के उत्तरदायित्व लेने की चुनौती देता है।

घातक चुनौती मात्र 250 वर्षों पहले से ही पैदा होनी शुरू हुई

मौसम परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र अन्तर सरकारी पेनल ने साफ बताया है कि 300 साल पहले ग्रह पृथ्वी प्रदूषण मुक्त था। सन् 1750 में प्रदूषण प्रकट होना शुरू हुआ। विशेषज्ञों की रिपोर्टें इंगित करती है कि ग्रीन हाउस गैसों (कार्बनडाई आक्साईड, मिथेन

और नाइट्रो-ऑक्साईड) का संकेन्द्रण मुख्यत: जैवाष्म ईंधन के उपयोग से कार्बन डाई ऑक्साइड बढ़ी, मिथेन और नाइट्रो-आक्साइड कृषि के कारण बढ़ी थी। खास तौर पर कार्बन डाई आक्साईड का सकेन्द्रण 1750 में 280 पी पी एम (प्रति दस लाख) से 2005 में 379 पी पी एम की बढोतरी साढे छ: लाख वर्षों में (180 पी पी एम से 300 पी पी एम) की बढोतरी से बहुत ही ज्यादा है।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार आई पी सी सी द्वारा अनुमानित गैसों का सबसे कम स्तर पर स्थिर होने का दृश्य एक दीर्घकालीन नीति के तहत यह है कि अगले 10-15 वर्षों में उत्सर्जन अपने शिखर पर होगा जब ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में 50% की कटौती जो 2050 तक सन् 2000 के स्तर पर स्थिर कर देगी जो वातावरण में लगभग 450 पी पी एम कार्बनडाईआक्साईड के बराबर होगी तथा इससे सम्बन्धित तापक्रम में वृद्धि 2-2.4 डिग्री सेंटीग्रेड होगी।

IV

प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टि

(1) प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टि–प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन की दृष्टि भविष्य या आने वाली घटनाओं को पहले से ही जान लेना या उसके लिए तैयार रहना है।

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन का मानना है कि मानव जाति का भविष्य भारी चुनौतीपूर्ण है। सन् 2050 पर निगाह डालें तो यह बताता है कि हमें 5 घातक चुनौतियों से समाना होगा।

(क) पहली चुनौती वैश्विक उष्माकरण (ग्लोबल वार्मिंग) की है, जो मानव समाज के लिए सबसे ज्यादा घातक है–इससे मानव समाज सहित सम्पूर्ण जैव-जगत हमेशा के लिए समाप्त हो जायेगा।

(ख) दूसरी चुनौती बढ़ती जनसंख्या की है जो 9.5 अरब से ज्यादा हो जायेगी जबकि हमारे ग्रह पृथ्वी की क्षमता 8 अरब जनसंख्या को वहन करने की है।

(ग) तीसरी चुनौती बदलते हुए पर्यावरण और मानवीय कारकों के कारण कृषि संकट की है। कृषि जुताई क्षेत्र का निरन्तर घटते जाना और कृषि के सभी घटकों में बिगाड़ होना।

(घ) चौथी चुनौती पीने के साफ पानी की उपलब्धता में कमी की है, इससे मानव स्वास्थ्य को संकट पैदा हो रहा है।

(ड़) पांचवीं चुनौती घातक और असाध्य बीमारियों के फैलाव की है।

(2) इन चुनौतियों का कारण क्या है? इसका कारण चल रही व्यवस्था है जो पूंजी आधारित, बाजार निर्देशित तथा व्यक्तिगत या निजी स्वार्थ की दिशा लिए हुए है और जिनके मुखिया अपार दौलतमंद बहुत ही भ्रष्ट राजनीतिज्ञ है।

(3) तब हमारा काम क्या है? हमारा काम चल रही व्यवस्था, इसके पूंजी के आधार, बाजार की प्राथमिकता और व्यक्तिगत या निजी स्वार्थ की दिशा के खिलाफ लोगों को संगठित करना है।

(4) इस व्यवस्था का हमारा विकल्प क्या है? इसका विकल्प प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था कायम करना है जो निम्नलिखित सामाजिक तौर पर न्यायिक सिद्धान्तों पर आधारित है।

V

प्रकृति–मानव केन्द्रित फौरी कार्यक्रम

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आंदोलन (एन एच सी पी एम) का मानना है कि चहुंमुखी खतरनाक पर्यावरणीय-मानवीय वैश्विक संकट के मद्देनजर दुनिया को एक ऐसे फौरी एजेंडा की जरूरत है, जो मौजूदा जमीनी हकीकतों के अनुरूप हो।

दुनिया की पहली जमीनी हकीकत धरती पर सभी जैव घटनाक्रमों के लिए आबोहवा संबंधी परिवर्तन, जिंदगी या मौत की चुनौती होना है।

इस मामले में स्वाभाविक तौर पर समस्या यह है कि आबोहवा को हुई क्षति को दुरुस्त करने का काम कौन करे। आबोहवा संबंधी परिवर्तन के संकट का जनक चूंकि कारपोरेट क्षेत्र है और सभी प्रमुख कारपोरेट ताकतें चूंकि अतीत में हुए पर्यावरण संबंधी परिवर्तनों के प्रति उचित रुख अपनाने में अभी तक नाकाम रही हैं इसलिए ज्यादा उचित यही रहेगा कि आबोहवा को दुरुस्त करने का काम संयुक्त राष्ट्र महासभा के हवाले किया जाए, सुरक्षा परिषद या जी-8 समूह या बड़े कारपोरेट कारोबारी हलकों के नहीं। तीनों पर कारपोरेट निहित स्वार्थों का कब्जा है, जो ग्लोबल वार्मिंग अथवा आबोहवा संबंधी परिवर्तनों के संकट के असली जनक हैं। महासभा में फैसले बहुमत के आधार पर लिए जाते हैं, इसलिए इसमें महाशक्तियों अथवा धनी देशों के प्रभुत्व की कम संभावना है। संयुक्त राष्ट्र महासभा की प्रत्येक बैठक अपने सदस्यों में से अपना सभापति चुनेगी और संयुक्त राष्ट्र महासचिव महासभा के प्रवक्ता के रूप में काम करेंगे।

दुनिया की दूसरी जमीनी हकीकत, दुनिया के विभिन्न देशों में तनाव के विभिन्न बिन्दुओं का मौजूद होना है। इस मामले में संयुक्त राष्ट्र महासभा को निम्न कदम उठाने चाहिए।

दुनिया के सभी देशों के बीच शांति एवं मित्रता की ऐसी संधि कराना जिसमें यह घोषणा हो कि वे अपने बीच छोटे या बड़े सभी झगड़ों का समाधान शांतिपूर्ण तरीकों से करेंगे।

दुनिया की तीसरी जमीनी हकीकत दुनिया को पेश आ रहे मुद्दों को लेकर दुनिया के विभिन्न देशों खासकर बड़ी ताकतों के बीच विभिन्न विभाजक और अलग-अलग रुखों और नजरियों का होना है।

इस मामले में काम, सभी विवादों का शांतिपूर्ण ढंग से समाधान करना है ताकि दुनिया में पुख्ता शांति स्थापित हो सके। वजह यह है कि विश्व शांति, आबोहवा संबंधी परिवर्तनों की चुनौती से निबटने के लिए मूल आवश्यकता है।

आगे, देशों को इस बात पर मनाने के लिए हर प्रयास किया जाना चाहिए कि वे शांति एवं मित्रता पर आधारित विदेश नीति पर चलें।

इस मामले में संयुक्त राष्ट्र महासभा को कुछ पग उठाकर दुनिया में पुख्ता शांति स्थापित करने की जिम्मेदारी लेनी चाहिए। ये हैं–दुनिया में सभी विवादों खासकर जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन, श्रीलंका, डायफोर, इत्यादि का शांतिपूर्ण समाधान। जम्मू-कश्मीर समस्या के न्यायपूर्ण समाधान की स्थिति में इस इलाके की रक्षा, विदेशी मामलों और मुद्रा संबंधी समस्याओं के काम की जिम्मेदारी एक संयुक्त भारत-पाक सह स्वामित्व को दी जाए। बाकी सभी मामलों में पाकिस्तान प्रशासन वाले जम्मू-कश्मीर समेत जम्मू-

कश्मीर के विभिन्न सांस्कृतिक तथा भाषाई क्षेत्रों का मुक्कमल स्वशासन होना चाहिए। फिलीस्तीन, डायफोर, श्रीलंका इत्यादि के मामले में भी इसी प्रकार की न्यायपूर्ण व्यवस्था की जाए।

दुनिया की चौथी जमीनी हकीकत परमाणु शक्तियों के पास परमाणु हथियारों का विशाल भंडार होना है।

इस मामले में संयुक्त राष्ट्र महासभा को मौजूदा परमाणु शक्तियों से यह तकाजा करने की जिम्मेदारी लेनी चाहिए कि ग्लोबल वार्मिंग की जिन्दगी या मौत की चुनौती को देखते हुए उन्हें सभी परमाणु हथियारों के भंडार और जनसंहार के अन्य खतरनाक हथियारों को तत्काल नष्ट कर देना चाहिए। और भविष्य में उन्हें जनसंहार का कोई भी हथियार न बनाने का वादा करना चाहिए।

दुनिया की पांचवीं जमीनी हकीकत, हर देश में ऐसी ताकतवर सेना की बड़े पैमाने पर मौजूदगी है जिसकी आज की दुनिया में कोई भूमिका नहीं है। इसलिए संयुक्त राष्ट्र महासभा को दुनिया में देशों के बीच सभी विवादों का समाधान छह महीने की अवधि के भीतर करने की जिम्मेदारी लेनी चाहिए। यह कार्य पूरा करने के बाद महासभा को सभी देशों से कहना चाहिए कि वे अपने सैन्य बजटों पर खर्च बन्द कर दें।

और सभी देशों को अपना पचास प्रतिशत रक्षा खर्च दो साल के भीतर और अगला 50 प्रतिशत पाँच वर्ष के भीतर बन्द कर देना चाहिए।

भंग सेना के सभी जवानों को उन्हीं वेतनमानों पर समान नौकरियां प्रदान की जानी चाहिए जो उन्हें रक्षा विभाग में पहले प्राप्त थी।

दुनिया की छठी जमीनी हकीकत, हर देश में राष्ट्रीय विकास का अपना मॉडल होना है। इस मामले में संयुक्त राष्ट्र महासभा को एक उच्चाधिकार प्राप्त संयुक्त राष्ट्र सतत विकास परिषद का गठन करना चाहिए तो एक तरफ राष्ट्रीय विकास के सभी मॉडलों का एकीकरण करके ग्लोबल वार्मिंग का मुकाबला करने और पर्यावरण सम्बन्धी संसाधनों को संरक्षित रखने तथा उन्हें प्रोत्साहित करने के लिए और दूसरी तरफ मानवीय संसाधनों के विकास के लिए वैश्विक अथॉर्टी के रूप मे काम करे। परिषद को पर्यावरण सम्बन्धी और मानवीय उन्नति के सम्बन्ध में मूलभूत अन्तरराष्ट्रीय सुधारों के नियम बनाने चाहिए। परिषद के लिए वित्त का प्रबन्ध विश्व व्यापार, तेल, कोयला, उपग्रह-संचार, विमानयात्रा, अंटार्टिका-खनन, समुद्र तल के खनन, सामुद्रिक परिवहन इत्यादि सरीखे वैश्विक कराधान से होगा। संयुक्त राष्ट्र महासभा अपने और सदस्य देशों के बीच उक्त वैश्विक राजस्व के वितरण के लिए ऐसी योजना बनायेगी जिसमें न्यूनतम विकसित देशों को विशेष रियायत दी जाएगी।

दुनिया की सातवीं जमीनी हकीकत, विकसित और अल्प विकसित देशों के बीच पक्षपाती व्यापार का मौजूद होना है। इस मामले में विश्व व्यापार संगठन को ऐसे केन्द्र के रूप में काम करना चाहिए जो यह देखे कि अमीर और गरीब देशों के बीच व्यापार न्यायपूर्ण आधार पर हो।

दुनिया की आठवीं जमीनी हकीकत, कम विकसित देशों की वित्तीय जरूरत से सम्बन्धित है। इस मामले में अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक को चौकस रहना चाहिए कि विभिन्न प्रकार के देशों के बीच वित्त का न्यायोचित वितरण हो।

दुनिया की नवीं जमीनी हकीकत, दुनिया के विभिन्न भागों में उत्पन्न हो रहा जल संकट है। इस मामले में संयुक्त राष्ट्र को एक नये विश्व जल आयोग का गठन करना चाहिए जो पानी की कमी वाले विभिन्न इलाकों में लोगों को जरूरी न्यूनतम पानी की आपूर्ति का प्रबंध करे।

दुनिया की दसवीं जमीनी हकीकत यह है कि घटते खाद्य उत्पादन की संभावना को देखते हुए संयुक्त राष्ट को एक ऐसी खाद्य नीति बनाने के लिए खाद्य एवं कृषि संगठन से अनुरोध करना चाहिए जिनके अन्तर्गत खाद्यान्न की कमी वाले इलाकों में खाद्य वस्तुएँ मुहैया करवाने के लिए व्यावहारिक कदम उठाए जाएं।

दुनिया की ग्यारहवीं जमीनी हकीकत, दुनिया के लोगों की खाद्य जरूरतें पूरी करने के लिए कृषि में सुधार और उसे आधुनिक बनाने की है। इस मामले में विभिन्न देशों में समस्त कृषक समुदाय को प्रेरित किया जाए कि वह कृषि को सहकारी आधार पर संगठित करे।

दुनिया की बारहवीं जमीनी हकीकत, विभिन्न देशों खासकर अल्प विकसित देशों में गरीबी में वृद्धि होना है। इस मामले में गरीबी की समस्या से निपटने के लिए प्राथमिकता के तौर पर व्यावहारिक कदम उठाने की जरूरत है।

दुनिया की तेरहवीं जमीनी हकीकत यह है कि सभी देशों को अपराध, भ्रष्टाचार जैसी बढ़ रही सामाजिक बुराइयों का उन्मूलन करने के अलावा साफ-सफाई, आवास, वृक्षों की सुरक्षा इत्यादि पर न्यायोचित ध्यान देना चाहिए।

दुनिया की चौदहवीं जमीनी हकीकत, दुनिया के लगभग सभी देशों में मानवाधिकार उल्लंघनों के मुद्दे पर गंभीरतापूर्वक ध्यान देने की है।

दुनिया की पन्द्रहवीं जमीनी हकीकत यह है कि शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य छात्रों में मानवीय मूल्यों के साथ-साथ पर्यावरण सम्बन्धी मूल्य विकसित करना होना चाहिए, न कि उनमें व्यक्तिपूजा की भावना का विकास करना, जैसा कि आज हो रहा है।

दुनिया की सोलहवीं जमीनी हकीकत, मानवीय स्वास्थ्य की बिगड़ती दशा है। इस मामले में उचित यह है कि सभी देश मानव स्वास्थ्य को मूल अधिकार के तौर पर मान्यता दें।

दुनिया की सतरहवीं जमीनी हकीकत धार्मिक कट्टरवाद अथवा आतंकवाद से खतरे का मौजूद होना है, जिसका मुकाबला हमारे विचार से सैन्य तरीकों से नहीं बल्कि मानवीय तथा पर्यावरण से जुड़े मूल्यों से किया जाना चाहिए।

दुनिया की अठारहवीं जमीनी हकीकत यह है कि बेरोजगारी की समस्या हर क्षेत्र–चाहे विकसित हो या अल्प विकसित–में बढ़ रही है। अपेक्षतया उच्च विकास दरों वाले देशों तक में रोजगार सृजन की धीमी गति से ऐसे इलाके में पच्चास करोड़ बेरोजगार या आंशिक बेरोजगार पैदा किए हैं जहाँ कुल मिलाकर 1.7 अरब श्रमिक हैं। एशियाई विकास बैंक के अध्ययन का आकलन है कि 1980 वाले दशक में चीन में 1% रोजगार उत्पन्न करने के लिए 3% विकास दर की जरूरत पड़ी जबकि अगले दशक में वैसा ही परिणाम पाने के लिए 8% विकास दर की जरूरत हुई। इसका मतलब यह है कि बिगड़ते पर्यावरण के विशाल क्षेत्र में रोजगार के नए तरीके तलाशे जाने चाहिए।

दुनिया की उन्नीसवीं जमीनी हकीकत बढ़ती विश्व जनसंख्या का लगातार बने रहना है, जो आबोहवा सम्बन्धी परिवर्तनों की चुनौती जितनी ही खतरनाक है। विशेषज्ञ रिपोर्टों के अनुसार जनसंख्या की मौजूदा विकास दर का परिणाम यह होगा कि सन् 2050 तक दुनिया के समस्त भू-भाग पर 9.2 अरब लोगों को रहना पड़ेगा। इसका समाधान एक ऐसा तर्कसंगत और न्यायोचित समाज स्थापित करने में निहित है जो सभी को सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करते हुए बुढ़ापे या किसी अन्य असुरक्षा की स्थिति में स्वजनों को गारंटी के तौर पर प्रेरणादायी तत्व न माने।

अंतिम लेकिन सर्वाधिक महत्वपूर्ण जमीनी हकीकत यह है कि हमारे ग्रह के लोग इस ग्रह में परिवर्तन लाने और इस धरती पर जैव प्रणाली को बचाने वाली एकमात्र शक्ति एवं एकमात्र स्रोत हैं। और लोग सकारात्मक भूमिका तभी निभा सकते हैं जब उन्हें एक स्पष्ट, उचित, न्यायपूर्ण और तर्कसंगत मॉडल के आधार पर समुचित तरीके से संगठित किया जाय। ऐसा वांछित मॉडल हमारे विचार में एन एच सी पी एम के एजेंडा में पाया जा सकता है, जो संक्षेप में निम्नलिखित है–

पहला, समाज में सबसे महत्त्वपूर्ण चीज लोग एवं प्राकृतिक संसाधन हैं, इसके अलावा कोई भी चीज सबसे महत्त्वपूर्ण नहीं है। जबकि कारपोरेट पूँजीवाद यह झूठी धारणा रखता है कि समाज में सबसे मूल्यवान वस्तु केवल पूँजी है। दूसरा, सबसे पहले यह आवश्यक है कि हर समय और हर जगह वहनीय पर्यावरण (यानि हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता आदि) के मूलभूत मानवीय लक्ष्य को दृढ़तापूर्वक थामा जाए। तीसरा, हमारा अगला सिद्धान्त यह है कि लोगों का चहुँमुखी संवैधानिक सशक्तिकरण किया जाए।

(1) आर्थिक सशक्तिकरण : स्वच्छ हवा, शुद्ध पीने का पानी, पोष्टिक भोजन, मकान, वस्त्र तथा मुफ्त चिकित्सा सुविधा एवं शिक्षा आदि के सम्बन्ध में प्रत्येक को मूल अधिकार प्रदान करते हुए सामाजिक सुरक्षा को सुनिश्चित करके लोगों का आर्थिक सशक्तिकरण किया जाए।

मुट्ठी भर अमीर श्रेणी तथा विशाल बहुमत वाली गरीब श्रेणी के बीच आये भयंकर विभाजन के बीच आर्थिक सामंजस्य लाने के लिए 1:5 आय अन्तर के आधार पर निष्पक्ष समानता सुनिश्चित की जानी चाहिए।

(2) राजनीतिक सशक्तिकरण : राजनीतिक प्रक्रिया पर लोगों का नेतृत्व होना चाहिए तथा समर्पित सामाजिक कार्यकर्ताओं या उनके मंचों द्वारा संचालित की जानी चाहिए। चुनाव सभी प्रकार से स्वतन्त्र हो जहाँ हर एक को चुनाव प्रक्रिया में खड़े होने व वोट देने का अधिकार हो।

चुनाव में प्रत्येक व्यक्तिगत उम्मीदवार के लिए राज्य की ओर से धन खर्च करने के नियम को लागू करके भ्रष्ट एवं धन व सत्ता लोभी राजनीतिक दलों के राज्य सत्ता के एकाधिकार को समाप्त करना चाहिए।

विकास के लिए दिये जाने वाला सारा धन चुनी हुई जन विकास समितियों (ग्राम सभा सहित और उसके ऊपर कोई नहीं) के द्वारा खर्च किया जाना चाहिए, प्रत्येक लोकसभा सदस्य को 2 करोड़ रुपये तथा प्रत्येक विधान सभा सदस्य को लाखों रुपये अपने-अपने क्षेत्र में विकास पर खर्च करने के मौजूदा नियम को रद्द किया जाए।

यदि 1/5 मतदाता विधान सभा या लोकसभा सदस्य को वापिस बुलाने की लिखित माँग करते हैं तो यह अधिकार देकर लोगों को सशक्तिकरण किया जाना चाहिए। चुनाव लड़ने से पहले राजनीतिक दलों को लोगों द्वारा प्रायोजित उम्मीदवारों में से अपना उम्मीदवार बनाना होगा। लोगों द्वारा प्रायोजित उम्मीदवार वह माना जायेगा जो विधान सभा क्षेत्र में एक हजार मतदाताओं के हस्ताक्षरों तथा लोक सभा क्षेत्र में पाँच हजार मतदाताओं के हस्ताक्षर प्राप्त करेगा।

(3) सांस्कृतिक सशक्तिकरण : जीवन जीने के तरीके (जीवन शैली) से सम्बन्धित है, जिसमें लोगों के बीच बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्य समाहित होते हैं तथा तर्कसंगत मानवीय एवं पर्यावरणीय सोच, व्यवहार एवं संगठन को संवर्द्धित किया जाता है।

(4) महिला सशक्तिकरण : संसद, विधान सभा तथा प्रशासन, इसके साथ-साथ संगठित बड़े उद्योगों की नौकरियों में महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण देकर महिला सशक्तिकरण किया जाए। धीरे-धीरे यह सिद्धान्त एक नियम बन जाना चाहिए जो सभी सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में लागू हो।

(5) मजदूर सशक्तिकरण : संगठित क्षेत्र में, सभी किस्म के बड़े उद्योगों, संस्थाओं, परियोजनाओं एवं फैक्ट्रियों के प्रबंध करने वाले बोर्ड में एक तिहाई प्रतिनिधित्व मजदूरों को दिया जाए। ये एक तिहाई प्रतिनिधि मजदूरों के संगठनों के एकल मजदूर फ्रंट द्वारा चुनकर भेजे जाए। छोटे और मध्यम उद्योगों में सम्बन्धित मजदूरों से चुने गये प्रतिनिधियों का मंच प्रत्येक सम्बन्धित प्रबन्धमण्डल में सलाहकार बोर्ड की हैसियत रखेगा।

(6) असंगठित मजदूरों का सशक्तिकरण : फुटकर क्षेत्र में, लघु स्तर के निजी व्यापार में लगे सभी मजदूरों को सभी जगह (यानि, शहर, कस्बे व ग्रामीण इलाकों में) युनियनों में संगठित किया जाना चाहिए और उन्हें कम ब्याज पर ऋण दिया जाए, मुक्त बाजार की सभी तरह की सुविधाएं मुहैया करवाई जाए, एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिए मुफ्त वाहन (ट्रालर) उपलब्ध करवाये जाएं या बड़े शहरों के बाजारों में किराया मुक्त छोटी दुकानें मुहैया करवाई जाएं।

(7) किसानों का सशक्तिकरण : ग्रामीण क्षेत्र में, समस्त किसानों–चाहे वे धनी किसान हों या भूमिहीन किसान हों–को राज्य की मूल नीति के रूप में सहकारी खेती के आधार पर संगठित किया जाए। ऐसी प्रत्येक सहकारी समिति को अपना बाजार तन्त्र विकसित करने के लिए आवश्यक सरकारी सहायता मुहैया करवाई जाए, जरूरी कृषि निवेश सामग्री सस्ती दरों पर उपलब्ध करवाई जाए तथा इसकी ऋण व्यवस्था सहकारी ऋण एजेंसियों से ऋण प्राप्त कर निर्मित की जाए।

(8) जीवन के हर पहलू में न्याय, समानता और निष्पक्षता के मानवीय मूलभूत लक्ष्य को संवर्द्धित किया जाए।

(9) यह सभी औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों के जनवादीकरण की वकालत करता है जिसके अनुसार कॉरपोरेट और राजकीय मोनोपोली नियन्त्रण समाप्त करते हुए एवं उन्हें साधारण शेयरधारकों (दो तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) तथा मजदूरों (एक तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) के द्वारा प्रबंधित किया जाए।

(10) वित्त प्रबंध : यह वित्त नियन्त्रण के लिए लोकतांत्रिक प्रबंध और नियन्त्रण को

प्रस्तावित करता है। कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबंधन एवं नियन्त्रण का पक्षधर है तो राजकीय क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का समर्थक है। जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियन्त्रण का हामी है। प्रोमोटर्स शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध की मिल्कियत को समाप्त किया जाए।

(11) न्यायशास्त्र को पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों के हितों की सुरक्षा और संरक्षण करने के मूलभूत उसूल पर आधारित किया जाए। उपर्युक्त उसूल की अवहेलना करने पर अपराधी के साथ उसे सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल मानवीय क्रूरता और मृत्यु दण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधानों को निर्धारित किया जाए।

VI

प्रकृति-मानव केन्द्रित अल्पकालीन कार्यक्रम

प्रकृति मानव केन्द्रित जन आंदोलन (एन एच सी पी एम) मानता है कि इस समय मानव समुदाय को एक बहुत खतरनाक पर्यावरणीय व मानवीय संकट का सामना करना पड़ रहा है। यह चुनौती इतनी गंभीर है कि यदि इसका उत्तर वास्तविक कार्यक्रम से नहीं दिया जाता है तो इसके नतीजे में मानवीय हितों को बहुत ही खतरनाक परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं। सर्वप्रथम ऐसी गंभीर परिस्थिति से निपटने के लिए यह आवश्यक है कि मानव जाति के विभिन्न समुदायों के बीच में पूर्ण एकता कायम हो और एकता के पहलु की यह मांग है कि मानव समुदाय के अन्दर सभी प्रकार की टकराहटों को समाप्त किया जाये। मानव समुदाय की एकता कायम करने का एकमात्र रास्ता इसमें निहित है कि दुनिया में मौजूद सभी प्रकार के अन्याय को समाप्त किया जाए।

एन एच सी पी एम का यह दृष्टिकोण है कि न्यायसंगत दुनिया सभी प्रकार के सामाजिक न्याय की बुनियाद पर स्थापित करना निश्चित तौर पर संभव है। इसके लिए वर्तमान अन्यायपूर्ण कॉरपोरेट व्यवस्था को पुनर्गठित करने की आवश्यकता है।

वर्तमान अन्यायपूर्ण कॉरपोरेट व्यवस्था को एक न्यायपूर्ण आधार पर पुनर्गठित करने के लिए एन एच सी पी एम 15 बिन्दु जनता को सूचित करने, संगठित होने और काम करने के लिए प्रस्तुत करता है। इन 15 बिन्दुओं को उचित समझने वाले लोगों से यह निवेदन करता है कि वे इन बिन्दुओं को मजबूती,तहेदिल और सुस्पष्टता से आम जनता के बीच प्रसारित करें।

जब कभी भी किसी इलाके अथवा देश में चुनाव हो रहे हों वहाँ एन एच सी पी एम मतदाताओं से अपील करता है कि वे इन 15 सिद्धांतों को उम्मीदवारों की सच्चाई जानने का मानदण्ड बनाए। मतदाता उम्मीदवारों से इन बिन्दुओं के समर्थन में हस्ताक्षर करने का अनुरोध करे। जो इन पर हस्ताक्षर करते हैं वे उम्मीदवार जनता के समर्थन के हकदार हैं और जो इन पर हस्ताक्षर करने से हिचकिचाते हैं वे न्यायिक और तर्कसंगत दृष्टिकोण से परे हैं।

1. मानव जाति को हर समय और हर जगह पर्यावरण (यानि हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) को टिकाऊ रखने के मूलभूत कार्य को थामे रखना चाहिए।

2. जिन्दा रहने के मानवीय अधिकार को शुद्ध हवा, शुद्ध पीने का पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित की जाए।

3. आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में 5 गुना से अधिक अन्तर) पर आधारित उचित समानता का मानवीय अधिकार हो।

4. विश्व के तमाम झगड़ों का शांतिपूर्ण समाधान होना चाहिए, विशेष तौर पर जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका समस्याओं का। जम्मू-कश्मीर के न्यायपूर्वक समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा और विदेश महकमों को भारत-पाक के ज्वाइंट कन्ट्रोल में दिया जाना चाहिए जबकि बाकी सभी मामलों (रक्षा और विदेश मामलों के अलावा) में जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र होना चाहिए जबकि इसके 9 नस्ली क्षेत्रों को अधिक से अधिक स्वायत्तता होनी चाहिए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन एवं जॉर्डन के सम्बन्ध में भी कारगर होगा।

5. संयुक्त राष्ट्र संघ को पुनर्गठित करने के लिए सुरक्षा परिषद के पांच स्थायी सदस्यों की वीटो पॉवर समाप्त की जाए तथा किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए साधारण सभा के बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान की जाए।

6. विश्व-व्यापार संगठन, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाय प्रकृति मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है), को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति जिसमें मानव और पर्यावरणीय पहलू उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्व वाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के 5 उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाए।

7. सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित किया जाए।

8. खेती से सम्बन्धित सभी लोगों की जीविका की सुरक्षा सहकारी कृषि व्यवस्था से सुनिश्चित की जाए।

9. शारीरिक व मानसिक दोनों प्रकार के श्रमिकों का सशक्तिकरण हो, जिसके अन्तर्गत संस्थानों, परियोजनाओं और कारखानों के प्रबन्ध में उनका एक तिहाई प्रतिनिधित्व सुनिश्चित हो।

10. उद्योग और सेवा के सभी क्षेत्रों पर से उद्योगपतियों और सरकार का एकाधिकार नियंत्रण खत्म करके तथा आम शेयरधारकों को दो तिहाई और मजदूरों को प्रबंधन में एक तिहाई हिस्सा देकर उनका लोकतांत्रीकरण किया जाए।

11. वित्तीय प्रबन्ध : कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबन्धन एवं नियंत्रण का पक्षधर है तो सरकारी क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियंत्रण का समर्थक है, पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर इन स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई सदस्य आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियंत्रण स्थापित हो।

प्रोमोटर्स (प्रोत्साहक) शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध को समाप्त किया जाए।

12. प्रकृति मानव केन्द्रित राजनीतिक प्रकिया लोगों द्वारा निर्देशित होनी चाहिये तथा उसका संचालन समर्पित प्रकृति-मानव केन्द्रित सामाजिक कार्यकर्ताओं (या उनके मोर्चे) द्वारा किया जाना चाहिए। चुनाव पूर्णतया स्वतंत्र हो जिसमें प्रत्येक को उम्मीदवार और मतदाता दोनों रूपों में भाग लेने का समान अधिकार है।

13. दलगत ढांचे को महत्व दिए बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करे) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्यसत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के एकाधिकार का खात्मा किया जाए। यदि मतदाता किसी भी विधानसभा या लोकसभा सदस्य को वापिस बुलाना चाहे तो 1/5 मतदाताओं द्वारा लिखित में मांग करने पर पुन: चुनाव करवाया जाय।

14. प्रत्येक सांसद को दो करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये आवंटित करने का मौजूदा नियम हटाकर विकास से सम्बन्धित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्राम सभा सहित और इसके ऊपर कोई नहीं हो) के जरिए खर्च हों।

15. न्यायशास्त्र को पर्यावरणीय एवं मानवीय संसाधनों के हितों की सुरक्षा और संरक्षण करने के मूलभूत उसूल पर आधारित किया जाए। उपर्युक्त उसूल की अवहेलना करने पर अपराधी के साथ उसे सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल मानवीय क्रूरता और मृत्यु दण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधानों को निर्धारित किया जाए।

VII

प्रकृति-मानव केन्द्रित दीर्घकालीन कार्यक्रम

प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन का दृष्टिकोण है कि चल रहे घातक संकट का बुनियादी हल मौजूदा कारपोरेट पूँजीवादी व्यवस्था के स्थान पर प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था लाने में निहित है, जिसका उद्देश्य, सिद्धान्त, तरीकाकार और संगठन दो उच्च प्राथमिकताएँ–यानि, पर्यावरण और मनुष्य–लिए हुए हैं और जो पाँच बुनियादी उसूलों–यानि, पर्यावरणीय संवर्द्धन, उचित समानता (यानि, प्रत्येक वंचित एवं जरूरतमंद व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा तथा अतर्कसंगत आय के अन्तर को 1:5 के आय का अन्तर स्थापित कर इसे तर्कसंगत बनाना), उत्पादकता (या वृद्धि दर), लोक नेतृत्व जनवाद (यानि, कारपोरेट पूँजीवादी समर्थित राजनीतिक पार्टियों एवं व्यापारिक घरानों की बनिस्पत लोगों का सशक्तिकरण करना) तथा चहुँमुखी पारदर्शिता–का पालन करता है। प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यवस्था के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं–

1. मानव समाज के प्रकृति-मानव केन्द्रित मॉडल का मानना है कि मानव समाज में पर्यावरण और मानव जाति दोनों बहुत ही मूल्यवान घटनाक्रम हैं। यह दोनों इसकी सामाजिक पूँजी (सर्वोच्च वस्तु) है, इन दोनों (यानि, पर्यावरणीय-मानवीय संसाधन) में वृद्धि से विकास, सम्पन्नता एवं प्रगति होती है तथा सोचने, कहने, करने और संगठित होने के लिए यह निर्देशक सिद्धान्त का कार्य करता है।

2. यह हर समय और सब जगह पर्यावरण (यानि, हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) संवर्धन के मूलभूत कार्य का मजबूती से समर्थन करता है।

3. यह प्रत्येक व्यक्ति के जैव-सामाजिक अस्तित्व के अधिकार को शुद्ध हवा, साफ पीने के पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित करने का समर्थक है।

4. यह आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में अधिकतम 5 गुणा अन्तर) पर आधारित उचित समानता के मूलभूत मानवीय अधिकार का समर्थक है।

5. यह विश्व शान्ति का मजबूती से पक्षपोषण करता है और विश्व के सभी विवादों खासकरके जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका इत्यादि के सीधे शांतिपूर्ण हल के मार्ग का समर्थक है। जम्मू-कश्मीर के न्यायपूर्ण समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा एवं विदेश महकमों को भारत-पाक सहराज्य के संयुक्त नियन्त्रण में सौंपा जाना चाहिए जबकि बाकी सभी मामलों (रक्षा और विदेश मामलों के अलावा) में जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र होना चाहिये जबकि इसके नौ नश्ली क्षेत्रों में से प्रत्येक को अधिकतम संभव स्वायत्तता प्रदान की जाए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन और जोर्डन के संबंध में भी कारगर होगा।

6. यह संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के 5 स्थायी सदस्यों के वीटों पावर को समाप्त करते हुए विश्व व्यवस्था के पुनर्गठन करने एवं किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए संयुक्त राष्ट्र की केन्द्रीय सभा में साधारण बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान करने की मांग करता है। कुछ समय दौरान, विश्व के विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों के लोगों के मतदान से निर्वाचित संविधान सभा द्वारा रचित संविधान के आधार पर संयुक्त राष्ट्र का पुनर्गठन किया जाए।

7. यह विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाए प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर पुनर्गठित करने तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है) को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति बनाने की हिमायत करता है जिसमें मानवीय और पर्यावरणीय पहलु उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्ववाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के पांच उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाता है।

8. यह सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50% प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित करने का समर्थक है।

9. यह खेती को सहकारिता के आधार पर सुसंगठित करने को प्रोत्साहित करता है तथा खेती से संबंधित सभी लोगों की जीविका को सुनिश्चित करने का समर्थक है।

10. यह श्रमिकों (शारीरिक और मानसिक दोनों) के सशक्तिकरण के लिए जोरदार आवाज उठाता है, जिसके अनुसार सभी संस्थानों, परियोजनाओं एवं कारखानों के प्रबंध में उनके (श्रमिकों के) एक तिहाई चुने हुए प्रतिनिधियों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए।

11. यह सभी औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों के विकेंद्रीकरण की वकालत करता है जिसके अनुसार कॉरपोरेट और राजकीय मोनोपोली नियन्त्रण समाप्त करते हुए एवं उन्हें

साधारण शेयरधारकों (दो तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) तथा मजदूरों (एक तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) के द्वारा प्रबंधित किया जाए।

12. यह वित्त नियन्त्रण के लिए लोकतांत्रिक प्रबंध और नियन्त्रण को प्रस्तावित करता है। कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबंधन एवं नियन्त्रण का पक्षधर है तो राजकीय क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का समर्थक है। जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियन्त्रण का हामी है। प्रोमोटर्स शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध की मिल्कियत को समाप्त किया जाए।

13. यह प्रत्येक सांसद को 2 करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये अपने चुनावी क्षेत्र के विकास खर्च के लिए आवंटित करने के मौजूदा नियम को हटाकर विकास से संबंधित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्रामसभा सहित और इसके ऊ पर कोई नहीं) के जरिए खर्च करने को प्रोत्साहित करती है।

14. यह प्रत्येक देश में प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण के आधार पर कॉरपोरेट पूँजीवादी निर्देशित संविधान तथा न्यायशास्त्र को पुनर्गठित करने का प्रस्ताव रखता है।

15. यह मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के हितों की रक्षा एवं संवर्धन के मूलभूत सिद्धान्त का मजबूती से पक्षधर है। उपर्युक्त उसूल की किसी तरह से अवहेलना करने पर अपराधी को सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल दण्ड दिया जाए। दण्ड में मानवीय क्रूरता और मृत्युदण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधान शामिल हो सकते हैं ।

16. इसका पक्का विश्वास है कि मानव समाज की सभी संघटक प्रक्रियाओं–यानि, पर्यावरणीय, मानवीय और वैज्ञानिक तकनीकी–पर लोगों का नियंत्रण होना चाहिए और उन्हीं द्वारा संचालित होनी चाहिए।

17. यह गांव/वार्ड से राष्ट्रीय स्तर तक पाँच स्तरों पर सामाजिक जीवन के तीन पहलुओं–राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक–के प्रबन्ध की शक्ति लोगों को देकर उनके सशक्तिकरण (या जनता के नेतृत्व वाला शासन) को प्रस्तावित करता है।

18. लोगों के सशक्तिकरण की प्रक्रिया चुनाव के तरीके से तय की जाए जो पूर्णतया स्वतंत्र हो और जहाँ प्रत्येक को उम्मीदवार के तौर पर भागीदारी करने का अधिकार है तथा मतदाता के रूप में अपनी राय जाहिर करने का अधिकार है। यह दलगत ढांचे को महत्व दिये बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा चुनाव के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करें) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्य सत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के राजकीय एकाधिकार का खात्मा करने का पक्षधर है। सम्बन्धित मतदाताओं को वापिस बुलाने का अधिकार हो जिसके तहत किसी सभा सदस्य के मतदाताओं का 1/5 भाग अगर लिखित में पुन: चुनाव की मांग इस आधार पर करें कि उपर्युक्त सदस्य अपने मतदाताओं का विश्वास खो चुका है।

19. राजनीतिक पहलू माँग करता है कि पाँचों स्तर (यानि, राष्ट्रीय, राज्य या क्षेत्रीय, जिला, ब्लॉक और गाँव) पर राजनीतिक सभा का गठन किया जाए जो लोकतान्त्रिक व्यवस्था पर कायम रहे तथा पूर्णतया लोकतान्त्रिक उसूलों, गतिविधियों और ढाँचे पर आधारित हो। ऐसा मॉडल निर्णय लेने में भी अधिकतम सम्भव लोक सशक्तिकरण के सिद्धान्त को लागू करना आवश्यक बना देता है।

20. आर्थिक पहलू की आवश्यकता है कि एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता के लिए पाँचों स्तर पर विकास सभाएँ स्थापित की जाएं जिसकी धारणाएँ, कानून एवं नियम पुर्वोक्त दो उच्चस्थ प्राथमिकताओं (यानि, मानवजाति और पर्यावरण) तथा पाँच सिद्धान्तों (यानि, पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जन-नेतृत्वकारी लोकतन्त्र तथा चहुंमुखी पारदर्शिता) की रोशनी में बनाए जाएं। मनुष्य की जैव-सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एडम स्मिथ का 'निजी हित' आधारित बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त तथा हर चीज का राज्य द्वारा राष्ट्रीयकरण करने के मार्क्सवादी बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त, ये दोनों एक तरफा है। परन्तु, विडम्बना यह है कि दोनों मनुष्य और पर्यावरण विकास के सन्दर्भ की बजाए विकास, सम्पन्नता तथा प्रगति को धन वृद्धि के रूप में नापते हैं।

21. सांस्कृतिक पहलू की आवश्यकता है कि पाँचों स्तर पर सांस्कृतिक सभाएं स्थापित की जाएं।यह ऐसे जीने के तरीके (या जीवन शैली) की माँग करता है जो बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों से भरपूर हों तथा लोगों के बीच में तर्कसंगत मानवतावाद एवं पर्यावरणवादी चिन्तन, व्यवहार एवं संगठन को विकसित करता हो।

22. पाँचों स्तरों पर राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक सभाओं द्वारा बनाये गये कार्यक्रमों और नीतियों को लागू करने के लिए अपने-अपने राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक क्षेत्र के विशेषज्ञों के आयोगों का चुनाव करना। राजनीतिक विशेषज्ञों का आयोग राजनीतिक मुद्दों, जैसे–कानून और व्यवस्था, अपराध रोकथाम, न्यायिक कार्यवाही से सम्बन्ध रखे; विकास विशेषज्ञों का आयोग आर्थिक, वित्तीय मसलों, जैसे–विकास योजना, कृषि उद्योग, सेवाएं, वित्त और बजट को देखे और सांस्कृतिक विशेषज्ञों का आयोग शिक्षा, स्वास्थ्य, नैतिक मूल्यों एवं अन्य सांस्कृतिक विषय, जैसे–भाषा, संगीत, नृत्य, सिनेमा उद्योग आदि पर ध्यान दें।

23. प्रत्येक चुनी हुई संस्था अपने प्रभाव क्षेत्र में चाहे वह निचले स्तर की हो या ऊपर के स्तर की हो सम्प्रभुसत्ता सम्पन्न होगी। किसी भी समय दो चुनी हुई संस्थाओं या सार्वजनिक संस्थाओं के मध्य मतभेद उत्पन्न हो तो सम्बन्धित इकाइयाँ अपने-अपने प्रतिनिधि समूहों को नियुक्त करेंगी जो बातचीत के जरिए सम्बन्धित प्रश्न का हल निकालेंगी। यदि मामला आपस में तय हो जाता है तो वह फैसला मान्य होगा। यदि दोनों पक्ष साझे निर्णय पर सहमत नहीं होते तो मसला सम्बन्धित लोगों द्वारा जनमतसंग्रह से हल किया जाएगा।

24. इसका मानना है कि किसी भौगोलिक इकाई की आन्तरिक सुरक्षा का प्रश्न सम्बन्धित लोगों द्वारा ही देखा जाए। विभिन्न भौगोलिक इकाइयों की सीमा-सुरक्षा का मुद्दा सुरक्षा एजेन्सी द्वारा देखा जाए तथा यह सुरक्षा एजेन्सी सम्बन्धित लोगों द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा स्वीकृत नियमों के अनुसार बनाई जाए।

25. समाज में प्रत्येक प्रदूषण फैलाने वाली तकनीक का संचालन यह नहीं होने देगी चाहे उस तकनीक में कितनी भी ज्यादा उत्पादक क्षमता हो।

VIII
सार रूप में

उपर्युक्त वर्णित प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम की गैर क्रियान्विति कहां ले जायेगी यह प्राकृतिक रहस्य के गर्भ में छुपी हुई है। (1.10.2008)

संकलित एवं सम्पादित
आर पी सराफ, सम्पादक, नेचर ह्यूमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट
E-mail : saraf_rp@reddifmail.com

* * * * *

राईजिंग कश्मीर समाचार पत्र के शब्बीर दार द्वारा आर पी सराफ के लिए जी–मेल प्रश्नावली

10 फरवरी, 2009

महोदय,

मैं राईजिंग कश्मीर समाचार पत्र से शब्बीर दार हूँ। महोदय, संविधान सभा के तीन जीवित सदस्यों में से एक आप स्वयं हैं। मैं और मेरा समाचार पत्र हमारे विशेष संस्करण में आपका साक्षात्कार देने में दलचस्पी रखते हैं। महोदय, आपको प्रश्नावली भेजते हुए मैं अपने आपको सौभाग्यशाली महसूस कर रहा हूँ। तथा मैं आशा करता हूँ कि आप इन प्रश्नों का लिखित में उत्तर देकर मुझ पर उपकार करेंगे। प्रश्नावली निम्न है–

1. संविधान सभा में आप किस दल से चुने गये थे?
2. उस समय राजनीतिक परिदृश्य क्या था?
3. संविधान कैसे विकसित हुआ? तथा संविधान निर्माण के समय समाजवादी क्रांति या पूंजीवादी क्रांति का क्या प्रभाव रहा?
4. आप जम्मू-कश्मीर में किस तरह का समाज और राजनीति निर्माण करना चाहते थे?
5. भारत में हमारा विलय हो चुका था और उस समय भारत का संविधान निर्माणाधीन था तो वह क्या आवश्यकता थी जिसके कारण जम्मू-कश्मीर का अलग से संविधान बनाना पड़ा।
6. इस तथ्य के बावजूद कि विधान सभा में आपके जैसे विशाल व्यक्तित्व मौजूद थे जबकि बहुत से सदस्य तो अनपढ़ और भोलेभाले थे तथा वे शेख मोहम्मद अब्दुल्ला और उनके गुट के मात्र अनुयायी थे। इससे क्या अर्थ निकाला जा सकता है?
7. संविधान सभा में आपका क्या योगदान रहा?
8. संविधान सभा की कार्यवाही के बारे में कोई विशेष घटना जो आपको याद हो?
9. क्या आप ऐसा महसूस करते हैं कि सन् 1957 में बना जम्मू-कश्मीर के संविधान की आज भी कोई भूमिका या ताकत है जबकि राज्य में अधिकांश मामले भारतीय संविधान तथा भारतीय विधायिका द्वारा प्रशासित होते हैं?
10. वह क्या कारण रहा कि संविधान सभा के अधिकांश सदस्य निर्विरोध चुने गये।

11. क्या जेके की संविधान सभा जेके राज्य और भारत संघ के बीच हुए समझौते में बदलाव कर सकती थी?

12. अलग पहचान पूरी तरह समाप्त कर दी गई है। क्या अब जेके के संविधान की कोई प्रासंगिकता रही है? क्यों नहीं इसको समाप्त कर दिया जाना चाहिए?

नोट : जेके समस्या के बारे में आपके कुछ और सुझाव जो आप उचित समझें।

श्री शब्बीर दार की जी–मेल प्रश्नावली का आर पी सराफ द्वारा दिया गया प्रत्युत्तर

प्रिय शब्बीर दार साहब,

जी-मेल प्रश्नावली भेजने का आपको धन्यवाद। आपकी प्रश्नावली का मेरे द्वारा निम्न प्रत्युत्तर दिया जा रहा है–

1. नेशनल कांफ्रेंस के प्रत्याशी के तौर पर जम्मू एवं कश्मीर संविधान सभा का सन् 1951 में मैं सदस्य चुना गया था।

2. सन् 1951 में जम्मू-कश्मीर से सम्बन्धित राजनीतिक परिदृश्य पांच स्तर पर, यानि, जम्मू, कश्मीर, भारत, पाकिस्तान तथा विश्व स्तर तक विभिन्न राजनीतिक ताकतों द्वारा चरित्रित था।

   जम्मू-कश्मीर स्तर पर काश्मीर घाटी पर मुख्यतया नेशनल कान्फ्रेंस का प्रभुत्व था, जम्मू के डोगरा क्षेत्र पर मुख्यतया प्रजा परिषद (उस समय का भाजपा का मूल नाम) के राजनीतिक विचारों से प्रभावित था। जम्मू प्रान्त के दो सरहदी क्षेत्र, यानि, पुंछ, राजौरी एवं चिनाब घाटी के क्षेत्र कश्मीर घाटी की तरफ देखते थे।

   जहाँ तक भारत का सम्बन्ध है, संवैधानिक तौर पह यह चाहता था कि जम्मू-कश्मीर राज्य भारत के मौजूद अन्य प्रान्तों की तरह एक प्रान्तीय राज्य बना दिया जाए।

   पाकिस्तान यह चाहता था कि हर कीमत पर जम्मू-कश्मीर उसके नियंत्रण में रहे।

   अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अमेरिकी नेतृत्व में पश्चिमी धड़ा स्वतंत्र जम्मू-कश्मीर राज्य स्थापित करने के पक्ष में था। सोवियत संघ ने तुरन्त अपनी कोई दृढ़ राय जाहिर नहीं की परन्तु अन्दरूनी तौर पर पश्चिमी सोच के विरुद्ध था। तब चीन में नव-स्थापित माओत्से तुंग का राज्य सोवियत दिशा का अनुसरण कर रहा था।

3. जेके संविधान का विकास एक जटिल प्रक्रिया थी। समाजवादी एवं पूंजीवादी दोनों विचारधाराओं में प्रत्येक का अपना-अपना प्रभाव था, जिसका आधार समाजवादी और पूंजीवादी समर्थकों की संविधान सभा में संख्या और उनकी क्षमता पर निर्भर था।

4. दल के तौर पर नेशनल कान्फ्रेन्स जम्मू-कश्मीर में अपने प्रोग्राम (नया कश्मीर) के आधार पर एक नया समाज और एक नई राजनीति निर्माण करना चाहती थी।

5. जम्मू-कश्मीर में अलग संविधान बनाने की आवश्यकता विलय के दस्तावेज से पैदा हुई जिस पर महाराज हरिसिंह ने हस्ताक्षर (यानि विलय के दस्तावेज पर) किए तथा उस समय (सन् 1947 में) भारत के गर्वनर जनरल लॉर्ड माउण्टबेटन द्वारा जब विलय का दस्तावेज अनुमोदित एवं स्वीकृत किया तब उन्होंने यह टिप्पणी लिखी कि जम्मू-कश्मीर में पुन: शांति स्थापित हो जाने के बाद जनमत संग्रह

   करवाया जायेगा ताकि जिससे यह निश्चित किया जा सके कि जम्मू-कश्मीर राज्य के लोगों की इच्छा क्या है?

6. जम्मू-कश्मीर में सन् 1951 की मौजूदा राजनीतिक परिस्थिति इस तथ्य से चरित्रित थी कि सम्पूर्ण जेके राज्य में भारी बहुमत शेख मोहम्मद अब्दुल्ला के पक्ष में था। कश्मीर घाटी में शेख का विरोधी धड़ा/मुस्लिम कान्फ्रेन्स पहले ही पाकिस्तान पलायन कर गया था, जब भारतीय फौज ने पाक स्थित कबीलाई हमलावरों को पाकिस्तान की तरफ खदेड़ दिया था। इसलिए स्वाभाविक तौर पर सभी संविधान सभा के सदस्य जो घाटी में शेख अब्दुल्ला के अनुयायी थे, वे चाहे अनपढ़ थे या भोले-भाले थे, कश्मीरी जनता (अवाम) को मान्य थे। जम्मू क्षेत्र में शेख मोहम्मद अब्दुल्ला ने प्रजा परिषद् (या जनसंघ) के आधार का बहुत बड़ा भाग सामन्त विरोधी भूमि सुधारों (जिसमें भूमि का केवल 1/4 हिस्सा बड़े मालिकों को रखने की इजाजत दी गई तथा 3/4 हिस्सा भूमिहीन, जैसे अनुसूचित जातियों, पिछड़ी जातियों और गरीबों व वंचितों में बांट दी गई) एवं पुराने साहूकारी ऋण व्यवस्था को समाप्त करने की नीति लागू करके अपने पक्ष में कर लिया था। इस तरह कश्मीर घाटी और जम्मू क्षेत्र दोनों में शेख मोहम्मद अब्दुल्ला अपने विरोधियों की बनिस्पत नेतृत्व में बने रहे।

7. कोई भी व्यक्ति अपनी स्वयं की कारगुजारी का वस्तुगत दृष्टा या परीक्षक नहीं हो सकता है। यदि कोई संविधान सभा में मेरे कार्य की जानकारी लेने में दिलचस्पी रखता है तो वह जम्मू-कश्मीर की संविधान सभा की तमाम छपी हुई और प्रकाशित कार्यवाहियों में देख सकता है और तब वह वस्तुगत मूल्यांकन कर सकता है।

8. आपके द्वारा चाहा गया है कि जम्मू-कश्मीर संविधान सभा में घटित अत्यधिक विशेष घटना जो मेरी याद में हो, उसका मैं उल्लेख करूं, तो वह घटना जम्मू-कश्मीर के प्रथम सदर-ए-रियासत (राष्ट्रपति) का चुनाव है। इससे सम्बन्धित तथ्य निम्न है–

   यह सर्वविदित है कि जम्मू-कश्मीर के प्रथम सदर-ए-रियासत (राज्य का राष्ट्रपति) के चुनाव के मामले में तत्कालीन भारत के प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू की सलाह पर शेख मोहम्मद अब्दुल्ला ने कार्य किया। शेख मोहम्मद अब्दुल्ला ने श्री करणसिंह (महाराजा हरिसिंह के पुत्र) के नाम को जम्मू-कश्मीर के प्रथम राष्ट्रपति के रूप में प्रस्तावित किया और सदन को यह अपील की कि उन्हें निर्विरोध चुन लिया जाए। शेख साहब के इस सामन्ती प्रस्ताव के मुकाबले में मैंने तमाम सदन को विनम्र अपील की और प्रस्तावित किया कि महाशय नाहरसिंह (जो विधान के दोहरे चुनाव क्षेत्र शाम्बा-बिस्नाह की अनुसूचित जाति के प्रत्याशी के तौर पर चुन कर आये थे और मैं इसी चुनाव क्षेत्र से सामान्य प्रत्याशी के तौर पर चुन कर आया था) को जम्मू-कश्मीर का सदर-ए-रियासत चुना जाए। मैंने सदन को यह भी अपील की कि महाशय नाहरसिंह की सफलता दबे-कुचले लोगों की जीत होगी। इस प्रस्ताव का समर्थन संविधान सभा के चार अन्य माननीय सदस्यों, यानि माननीय के डी सेट्ठी (नौशेरा चुनाव क्षेत्र), माननीय पंडित महंत राम (बसौली चुनाव क्षेत्र), माननीय ठाकुर रामशरण दास (नगरोटा चुनाव क्षेत्र) तथा माननीय महाशय नाहरसिंह (शाम्बा-बिस्नाह चुनाव क्षेत्र) द्वारा किया गया। शेख मोहम्मद

अब्दुल्ला ने हमारे इस प्रस्ताव का विरोध किया और भारी बहुमत से श्री करणसिंह चुन लिये गये। दिलचस्प बात यह है कि केवल कुछ समय बाद ही, एक रात शेख मोहम्मद अब्दुल्ला को राजद्रोह के आरोप में सदर-ए-रियासत (राष्ट्रपति) करणसिंह के आदेश से गिरफ्तार कर लिया गया। करीब 25 साल तक (सन् 1951 से सन् 1975 तक) शेख अब्दुल्ला अधिकांश वक्त कारागार में ही रहे और दो या तीन बार उन्हें शासक ग्रुप की राजनीतिक दावपेंच की जरूरतों को पूरा करने के लिए छोड़ा गया। जेल से शेख अब्दुला ने अपने अनुयायियों को यह निर्देश दिये कि वे जम्मू-कश्मीर की आजादी के लिए जनमत संग्रह मोर्चा बनाएं।

अगर महाशय नाहरसिंह को जम्मू-कश्मीर का राष्ट्रपति चुन लिया जाता तो सन् 1953 में शेख अब्दुल्ला गिरफ्तार नहीं होते और जम्मू-कश्मीर तथा उपमहाद्वीप का इतिहास एक भिन्न रास्ता अख्तियार करता।

9. मेरी राय में भारत और जम्मू-कश्मीर के दोनों संविधानों में अब कोई मूलभूत अन्तर नहीं रहा है। दोनों कॉरपोरेट या पूंजीवादी नजरिए वाले हैं जहाँ 70 प्रतिशत गरीबों और वंचितों के लिए कोई जगह नहीं है।
10. दोनों क्षेत्रों में नेशनल कान्फ्रेन्स के विरोधियों का आधार बहुत कमजोर था। चुनाव से पहले कश्मीर में मुस्लिम कान्फ्रेन्स के नेता (जो उस समय नेशनल कान्फ्रेंस के मुख्य विरोधी थे) पाकिस्तान पलायन कर चुके थे जबकि जम्मू में प्रजा परिषद् के आधार को–शेख की सरकार ने जमींदारों की जमीनों को वंचितों और गरीब किसानों को बांटकर तथा पुरानी साहूकारी व्यवस्था को समाप्त करके–छिन्न-भिन्न व कमजोर कर दिया था।
11. संवैधानिक तौर पर संविधान सभा राज्य के भविष्य की स्थिति के सम्बन्ध में स्वतंत्र रहने या भारत में मिलने या अन्य कोई रास्ता चयन करने के लिए सम्प्रभुसत्ता सम्पन्न थी।
12. चाहे जेके राज्य का संविधान रहे या ना रहे इससे यहाँ, वहाँ या कहीं के लोगों को कोई फर्क नहीं पड़ता है और ना ही पड़ेगा।
13. अन्त में, बिना नम्बर के नोट में मुझसे चाहा गया है कि जेके समस्या के बारे में कुछ और सुझाव भी दूँ। मैं इस समस्या के बारे में दो विशेष मामले रखना उचित समझता हूँ। एक (अ) श्रीनगर में हजरतबल पवित्र मकबरे से मूआई मुकदस (हजरत मोहम्मद साहब की दाढ़ी का बाल) की चोरी के आन्दोलन में शेख साहब की भूमिका तथा पाकिस्तान के तत्कालीन राष्ट्रपति अयूब खान के पास भारत के प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा भेजे गये विशेष दूत के रूप में शेख साहब की भूमिका एवं दूसरा (ब) जेके समस्या के सम्बन्ध में हमारा एक न्यायपूर्ण, वास्तविक, टिकाऊ एवं तर्कसंगत समाधान का प्रस्ताव।

(अ) मूआई मुकदस के आन्दोलन में शेख साहब की भूमिका तथा जवाहरलाल नेहरू (तत्कालीन भारत के प्रधानमंत्री) द्वारा अयूब खान (तत्कालीन पाकिस्तान के राष्ट्रपति) को भेजे गये विशेष दूत के रूप में उनकी भूमिका

1962 में श्रीनगर के हजरबल पवित्र मकबरे से हजरत मोहम्मद साहब के पवित्र दाढ़ी के बाल की चोरी के मामले में कश्मीरी अवाम द्वारा आन्दोलन छेड़े जाने व उसके पूरी

कश्मीर घाटी में फैल जाने के बाद शेख अब्दुल्ला को जेल से रिहा किया गया। तथापि शेख साहब की गंभीर और जन-हितैषी कोशिशें फलदायक साबित हुई और पैगम्बर साहब के दाढ़ी के बाल को वापिस प्राप्त किया जा सका। जिस व्यक्ति द्वारा निर्धारित पवित्र स्थान से वह बाल ले जाया गया था, वापिस उसी निर्धारित स्थान पर स्थापित कर दिया गया। कश्मीरी लोगों की संतुष्टि के साथ यह आन्दोलन समाप्त हुआ और इससे शेख साहब का जनता में सम्मान और श्रद्धा और अधिक बढ़ गई।

मूआई मुकदस के आन्दोलन के संतोषजनक अंत के बाद शेख अब्दुल्ला नई दिल्ली गये वहाँ वे भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू से मिले जो उस समय कुछ गंभीर बिमारी के कारण बिस्तर से उठ नहीं सकते थे। नेहरू ने मूआई मुकदस को वापिस प्राप्त करने में शेख साहब की भूमिका के लिए उनका गर्मजोशी से स्वागत किया और उन्हें जेके के लिए नेहरू ने नये प्रस्ताव को पाकिस्तान के तत्कालीन राष्ट्रपति अयूब खान को देने का नया कार्य सौंपा।

अयूब खान को नेहरू का प्रस्ताव

यह प्रस्ताव इस बात पर जोर देता है कि जम्मू और लद्दाख क्षेत्र में भारी मात्रा में हिन्दू और बौद्धमत के अनुयायियों का प्रभुत्व है जो हिन्दुस्तान को अपना घर समझते हैं तथापि कश्मीर घाटी में कश्मीरी लोग भारत व पाकिस्तान के सम्बन्ध में विभाजित राय रखते हैं, कुछ भारत के पक्ष में हैं जबकि दूसरे पाकिस्तान का अनुसरण करते हैं। इसलिए नेहरू ने अपने इस प्रस्ताव से यह जोर दिया कि घाटी का संयुक्त प्रबन्ध भारत और पाकिस्तान दोनों द्वारा किया जाना चाहिए।

इसी दौरान नेहरू का देहान्त हो गया और अयूब खान को नेहरू का प्रस्ताव आगे नहीं बढ़ सका। शेख अब्दुल्ला जवाहरलाल नेहरू के अन्तिम संस्कार में शामिल होने के लिए नई दिल्ली लौट आये।

(ब) जेके समस्या के सम्बन्ध में एक न्यायपूर्ण, वास्तविक, टिकाऊ एवं तर्कसंगत समाधान के लिए हमारा प्रस्ताव

भारत और पाकिस्तान के बीच में जम्मू-कश्मीर की समस्या अत्यधिक खतरनाक और परेशान करने वाली है, इसके कारण तीन युद्ध हो चुके हैं, दोनों देशों के हितों को नुकसान पहुँच रहा है, यहाँ तक कि पाकिस्तान के दो भाग हो चुके हैं और अब भी विश्व शांति और विश्व सौहार्द के लिए यह समस्या मुख्य खतरा बनी हुई है। पिछले 61 सालों से संयुक्त राष्ट्र संघ ओर उसकी सुरक्षा परिषद् में यह समस्या लटकी पड़ी है, परन्तु संयुक्त राष्ट्र संघ और उसकी सुरक्षा परिषद् भारत और पाकिस्तान को एक दूसरे के नजदीक लाने या विश्व की जनता के समाने इस समस्या का कोई व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत करने के लिए एक कदम भी आगे नहीं बढ़ाया। इस समय के दौरान विभिन्न बड़े, मध्यम या छोटे देशों के सोच में कई परिवर्तन हो चुके हैं, परन्तु संयुक्त राष्ट्र संघ और इसकी सुरक्षा परिषद् अभी भी साम्राज्यवादी या बड़ी शक्तियों की अपनी परम्परागत राजनीति के फेर में पड़ी है।

तथापि, हमारी राय में जम्मू-कश्मीर समस्या के लिए एक न्यायपूर्ण, वास्तविक, टिकाऊ और तर्कसंगत समाधान यह हो सकता है कि यह समस्या त्रिपक्षीय–जिसमें जेके की जनता, भारत और पाकिस्तान शामिल–हैं एवं मानी जानी चाहिए और इसी बिन्दु से

शुरूआत की जाए। इस समस्या के त्रिपक्षीय चरित्र से मेल खाते हुए, सुरक्षा, विदेशी मामले तथा मुद्रा भारत-पाक मैत्री संस्थान के संयुक्त हाथों में सौंपी जाए, जो अपने आपको किसी भी महाशक्ति से नहीं जोड़ें। जेके से सम्बन्धित अन्य सभी मामले जेके की जनता (या उनकी सरकार) में निहित रहेंगे। एक स्वतंत्र इकाई के रूप में जेके राज्य एक स्वतंत्र संघीय राज्य रहेगा।

जेके संघीय राज्य की अपनी संघीय विधान सभा होगी जो इसके 6 राज्यों या क्षेत्रीय विधान सभाओं से चुनाव करके गठित होगी तथा यह संघीय विधान सभा, पर्यावरणीय मामले, मानवीय मुद्दे और संवैधानिक-विधिक मसलों को देखेगी। इसके स्वशासित राज्य या क्षेत्रीय इलाके (1) लद्दाख, (2) कारगिल, (3) कश्मीर घाटी, (4) जम्मू क्षेत्र, (5) पुंछ-राजौरी, (6) चिनाब घाटी होंगे।

पाकिस्तान की तरफ वाले जम्मू-कश्मीर के लोगों की क्षेत्रीय आकांक्षाएं और हितों की पूर्ति पाकिस्तान प्रशासित क्षेत्र को स्वतंत्र संघीय राज्य बनाकर की जायेगी, जिसकी अपनी क्षेत्रीय विधान सभा होगी जो पर्यावरणीय समस्या, मानवीय मुद्दों और संवैधानिक-विधिक मामलों को देखेगी, उसके स्वशासित राज्य या क्षेत्रीय इलाके (अ) पुंछ, भिम्बर, मीरपुर यानि पठवारी बोलने वालों का क्षेत्र तथा (ब) बालिस्तान एवं गिलगिल यानि उत्तरी क्षेत्र होंगे।

अन्त में, भारत और पाकिस्तान दोनों तथा जेके के दोनों विभाजित भाग वर्तमान में जम्मू-कश्मीर के दोनों विभाजित भागों को एक जम्मू-कश्मीर में गठित करने के लिए प्रतिबद्ध है।

❊ कश्मीरी पंडित जातीय समुदाय को कश्मीर घाटी में पुन: बसाया जाए एवं बसाने की सम्पूर्ण योजना को पंडित समुदाय की सहमति के लिए उनके समक्ष रखा जाए।

❊ 1947 के पश्चिमी पाकिस्तान के विभिन्न प्रकार के शरणार्थियों की 61 साल पुरानी माँग की पूर्ति उन्हें जम्मू क्षेत्र के स्थायी निवासी होने की मान्यता देकर की जाए।

❊ सीमा क्षेत्र के विभिन्न किस्मों के शरणार्थियों (जो भारत-पाक युद्धों और भारत-पाक सेनाओं की सीमा पर निरन्तर भिड़न्त के कारण विस्थापित) की पुरानी लम्बित मांग को उन्हें उचित मुआवजा देकर हल करना।

शब्बीर दार, उनके सक्षम स्टाफ सदस्यों और उनके बुद्धिमान पाठकों को शुभकामनाओं सहित।

टिप्पणी, यदि कोई हो निम्न पते पर मेल की जा सकती है–

E-mail: saraf_rp@rediffmail.com

❊ ❊ ❊ ❊ ❊

नोट : 21-25 जून, 2009 को भारत के शहर श्रीगंगानगर (राजस्थान) में हुई पीपल्स सार्क कान्फ्रेंस की तैयारी के समय स्वास्थ्य की कमजोरी होते हुए भी पुनर्निरीक्षण के तौर पर श्रीमान आर पी सराफ ने कान्फ्रेंस के मूल दस्तावेज–'दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन के प्रत्येक सदस्य देश में प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन के विचार-विमर्श के लिए प्रोग्राम का मसौदा'–के सम्बन्ध में हस्तलिखित अतिरिक्त सुझाव वाला दस्तावेज उनके देहान्त के बाद उनके कागजों में मिला है, जिसे यहां हुबहू प्रस्तुत किया जा रहा है।

(a) दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन के प्रत्येक सदस्य देश में प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन का 5 दिवसीय सम्मेलन हम क्यों कर रहे हैं?

(b) इसकी आवश्यकता क्या है?

(c) सरकारी सार्क की मौजूदा मूलभूत वास्तविकता पर नजर डालने से इसे समझा जा सकता है। इसकी मूलभूत वास्तविकता यह है कि दुनिया में मौजूदा हालात के अनुसार दक्षिण एशिया सबसे खतरनाक क्षेत्र बन गया है। इस क्षेत्र में यदि भारत-पाक परमाणु युद्ध होता है तो सभी प्रकार के जीवन के नष्ट होने का खतरा दुनिया के सामने है जो किसी भी समय छिड़ सकता है क्योंकि भारत-पाक सीमा पर दोनों तरफ लगातार झड़पें होती रहती हैं।

❊ प्रकृति-मानव केन्द्रित नजरिया क्या है?

वह नजरिया जो इस पृथ्वी पर सभी प्रकार के विकास के मामलों में प्रकृति (या पर्यावरण) और लोगों को केन्द्र में रखता है।

❊ मौजूदा समय में दुनिया में सभी व्यापारिक ब्लॉकों की तरह दक्षिण एशिया के देश दो तरफा संकट, यानि एक तरफ पर्यावरणीय गिरावट तथा मानवीय समुदाय के अमानवीयकरण की चपेट में है, इसे निम्न तथ्यों से देखा जा सकता है।

वर्तमान समय में पृथ्वी पर मानव समुदाय को पर्यावरणीय गिरावट जो ग्लोबल वार्मिंग या मौसम परिवर्तन के रूप में अभिव्यक्त हो रही सबसे बड़ी चुनौती का सामना है। यह संकट इतना गंभीर है कि मानव समुदाय या तो तत्काल इससे उभर जाए या यह संकट मानव समुदाय को बर्बादी की ओर धकेल कर इसका हमेशा के लिए विनाश कर देगा। हमारे पास इस संकट से उभरने के लिए बहुत, बहुत कम समय रहा है। मौसम परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्तर सरकारी पैनल के तहत संगठित दुनिया भर के वैज्ञानिक समुदाय के अनुसार ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा या अनुपात सन् 1750 में 280 पी पी एम (पार्ट पर मिलियन) था जबकि सन् 2007 में यह 379 पी पी एम पहुंच चुका है। पिछले 650,000 सालों में प्राकृतिक तौर पर इसमें वृद्धि 180 पी पी एम से 300 पी पी एम तक ही हुई है जबकि यह वृद्धि 1750 से 2007 तक 280 पी पी एम से 379 पी पी एम तक पहुंची है जो पहले वाली वृद्धि दर से बहुत अधिक है। इस समय वैश्विक तापमान 0.76 सेन्टीग्रेड और अधिक बढ़ चुका है। इस धारा को बदलने के लिए 1 दशक से भी कम समय है। वैज्ञानिकों के अनुसार यदि मानव समुदाय सन् 2020 तक इस धारा को नहीं बदलता है तो मौसम परिवर्तन का संकट अपरिवर्तनीय हो जायेगा और इस प्रकार बहुत थोड़े समय बाद ही अन्य सभी जैव-जीवन के साथ मानव समुदाय भी इस पृथ्वी पर हमेशा के लिए विलुप्त हो जायेगा। यह जैव-जीवन के विलुप्त होने की छठी प्रलय होगी। लन्दन आधारित डोरचेस्टर सेन्टर फार इकोलोजी एण्ड हाइड्रोलोजी के अनुसार इस पृथ्वी ग्रह पर पहले भी पांच बार जैव-जीवन विलुप्त हो चुका है।

❊मौसम परिवर्तन कोई बाजार की समस्या नहीं है, यह अस्तित्व की समस्या है। बाजार के तरीकों से इस समस्या को नहीं सुलझाया जा सकता है। कॉरपोरेट दुनिया ने इसको बाजार की समस्या बना दिया है। मौसम परिवर्तन की समस्या यह माँग करती है कि पर्यावरण का ह्रास करने वाले तुरन्त ग्रीन हाउस गैसों का उत्पादन बन्द करें, केवल सम्पन्न देशों ने इस समस्या को पैदा किया है। शुरू में इस समस्या का दुष्फल गरीब भुगत रहे हैं, जल्दी ही अमीरों को भी भुगतना पड़ेगा।

(a) पर्यावरण क्या है?

संसार का वह प्राकृतिक आवरण जिसमें मनुष्य, पशु एवं वनस्पति जीवित रहते हैं।

(b) वायुमण्डल क्या है?

पृथ्वी या अन्य ग्रहों का गैसों का आवरण वायुमण्डल कहलाता है।

*क्योटो प्रोटोकाल (1997) की अवधि सन् 2012 में समाप्त हो रही है। अमेरिका और आस्ट्रेलिया इसके सदस्य नहीं है। अब एक नये फ्रेमवर्क (संधि) की जरूरत है। मौसम परिवर्तन से कोई भी देश अकेला लड़ाई लड़कर जीत नहीं सकता, साझी कार्यवाही विकल्प नहीं बल्कि अनिवार्यता बन चुकी है। सन् 1972 में पहली बार दुनिया को यह मालूम हुआ कि हमारे पर्यावरण में कुछ खराबी चल रही है परन्तु सन् 1972 से आज तक कारपोरेट दुनिया के राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक नेताओं के व्यवहार पर नजर डालनी चाहिए। टिकाऊ विकास पर स्टॉकहोम कान्फ्रेंस से शुरू करें और उसके बाद टिकाऊ विकास के एजेण्डे पर लम्बी शृंखलाओं पर नजर डालें तो हम कुल नतीजा पाते हैं कि पर्यावरणीय समस्या पर कुछ नहीं किया जा रहा है, अब पर्यावरणीय गिरावट की समस्या भयंकर अनुपात में बढ़ चुकी है, वर्तमान क्योटो प्रोटोकॉल की प्रतिबद्धता का समय सन् 2012 में समाप्त हो रहा है, क्योटो प्रोटोकॉल का उत्तराधिकारी समझौता एक नया रास्ता अख्तियार कर सकता है। भविष्य में कार्बन उत्सर्जन पर सख्त सीमाएं लगाई जा सकती हैं और अन्तर्राष्ट्रीय साझी कार्यवाही के लिए एक फ्रेमवर्क बनाया जा सकता है। अबकी बार अमेरिका और आस्ट्रेलिया भी इसमें शामिल हो सकते हैं। समझौता वार्ता को आगे बढ़ाया जाए ताकि 2010 तक पुनरऊर्जा उत्पादन, वन संरक्षण और चारागाहों की पुनर्स्थापना के मात्रात्मक लक्ष्यों को हासिल किया जा सके।

*मौसम परिवर्तन की समस्या से मुकाबला केवल मानवता को बचाने का मामला नहीं है बल्कि इस पृथ्वी पर तमाम किस्म के जैव-जीवन को बचाने का मामला है।

*मौसम परिवर्तन के विरुद्ध लड़ाई विद्यमान पूंजी नेतृत्वकारी व्यवस्था से नहीं लड़ी जा सकती है, जो व्यवस्था बाजार तन्त्र और निजी स्वार्थ के नेतृत्व पर आधारित है।

* अंटार्कटिका और ग्रीनलैंड में बर्फ की परत तेजी से ध्वस्त हो रही है।

* अमेरिका का कार्बन उत्सर्जन चीन से 5 गुना और भारत से 15 गुना से भी अधिक है।

*इथोपिया में कार्बन-डाई-ऑक्साइड का औसत प्रति व्यक्ति कार्बन उत्सर्जन 0.1 टन है जबकि कनाडा में यह 20 टन है।

*उत्सर्जन का रुझान बढ़ोतरी की तरफ है। क्यों नहीं सभी देशों द्वारा ग्रीन हाउस गैसों का उत्पादन करने वाली तकनीक को पूर्णतया बन्द कर देना चाहिए। विकसित और विकासशील दोनों तरह के सभी देशों को पुनर्भरण ऊर्जा तकनीक का अनिवार्य रूप से रास्ता अख्तियार करना चाहिए। मानवता के दृष्टिकोण से विकसित देशों को अविकसित देशों के लिए तर्कसंगत निर्धारित आर्थिक सहायता अनिवार्य रूप से दी जानी चाहिए। भारत, चीन और कुछ अन्य देशों के उनके वर्तमान स्तर को देखते हुए इनको कोई सहायता नहीं दी जानी चाहिए।

* दुनिया भर में सैनिक खर्च पूर्णतया समाप्त कियाजाए। देशों के बीच मतभेद शांतिपूर्वक ढंग से हल किए जाएं।

* आणविक हथियारों को दफन किया जाए या वैज्ञानिक तौर पर उनको नष्ट किया जाए।

* प्रदूषण पैदा करने वाली सभी किस्म की ऊर्जा को पूर्णतया बन्द किया जाए।

* धनी देश 80 प्रतिशत प्रदूषित उत्सर्जन कम करें।

* मौसम का विनाशकारी असर भारी तादाद में गरीब देशों में संकेन्द्रित है। वर्तमान समय में विकसित देश ऐसे किसी भी विनाश से मुक्त हैं।

* पाँच महत्वपूर्ण क्षेत्रों के जरिए मौसम परिवर्तन मानव विकास की गति रोक सकता है और उसके बाद विनाशक स्थिति में पहुंच सकता है।

पाँच महत्वपूर्ण क्षेत्र निम्न हैं–

(a) कृषि उत्पादन एवं खाद्य सुरक्षा, कृषि उत्पादन में नुकसान।

(b) जल आपूर्ति का तनाव एवं जल असुरक्षा।

(c) समुद्र का बढ़ता हुआ जल स्तर तथा तूफानों द्वारा बाढ़ के जरिए विनाश या समुद्री बाढ़ से विनाश।

(d) पारिस्थितिकी व्यवस्था एवं जैव-विविधता की क्षति। समुद्रों के गर्म होने के कारण दुनिया की आधी से ज्यादा कोराल-रीफ व्यवस्था को नुकसान पहुंच चुका है।

(e) मानव स्वास्थ्य सम्बन्धित बड़ी घातक बिमारियां–मलेरिया, डेंगू, एच आई वी/एडस, बर्ड फ्लू, सारस, स्वाइन फ्लू तथा अन्य छूत की बिमारियां और अधिक दायरे में फैल सकती हैं।

*जैव-जलवायु संकट–यानि, जलवायु एवं जीवन सम्बन्धी संकट, इसका अर्थ है एक तरफ जलवायु या पर्यावरण का संकट और दूसरी तरफ जैविक संसाधनों, प्राथमिक तौर पर मानव के सामने मौजूद संकट। ग्रीन हाउस गैसों, यानि कार्बन-डाई-ऑक्साइड, मिथेन और नाइट्रो-आक्साइड इत्यादि–के उत्सर्जन के कारण पैदा हुए पर्यावरणीय संकट ने मुख्य तौर पर मानव सहित सभी जैविक प्रजातियों के अस्तित्व के लिए आवश्यक पर्यावरण को गंभीर नुकसान पहुंचाया है। जैविक संकट जो सभी जैविक घटनाक्रम को प्रभावित कर रहा है, मानव प्रजाति इससे प्राथमिक तौर पर प्रभावित हुई है। मानव प्रजाति का अपने प्रारम्भ से होमोसेपियन्स के रूप में प्रादुर्भाव हुआ और बाद में यह अपने जैविक जीवन के अलावा एक पूर्ण रूप से सामाजिक तौर पर विकसित हुआ, जो आज अत्यधिक स्वार्थी बन गया, इसका सामाजिक पक्ष केवल मात्र औपचारिकता के स्तर तक घट चुका है।

* समाज में सर्वोच्च घटनाक्रम क्या है? पूंजी या पर्यावरण और मानव समुदाय?

* ग्लोबल वार्मिंग या जलवायु परिवर्तन की चुनौती एवं मानव समाज के अमानवीयकरण की चुनौती विश्व कारपोरेट व्यवस्था से पैदा हुई है। इस व्यवस्था के दोनों मॉडल–एडम स्मिथवादी और मार्क्सवादी–पूंजी को सर्वोच्च वस्तु समझते हैं जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विचारधारा इन दोनों से सर्वथा भिन्न राय रखती है। इस नई विचारधारा का मानना है कि प्रकृति (पर्यावरण) और मानव समुदाय समाज में सर्वोच्च घटनाक्रम है।

* पूंजीवादी समाज केवल निजी हित और प्रतियोगिता पर आधारित है। यहाँ एकता, एकरूपता और साझे हितों के पहलुओं की पूर्णतया अनदेखी की जाती है। इस

समाज का यह एक तरफा चरित्र है जिसने प्रत्येक व्यक्ति को मानसिक और भौतिक तौर पर अकेला और असुरक्षित बना दिया है। प्रत्येक को व्यक्तिगत अविश्वास और सन्देह में धकेल दिया है।

* प्रकृति-मानव केन्द्रित की अगुवा टीम का सचिव एक साल के लिए चुना जाए।

* लोगों के सशक्तिकरण का सिद्धान्त लोगों के बीच (दरम्यान) मतभेदों को हटायेगा। लोगों का जब सशक्तिकरण होगा तब लोग हिंसा के रास्ते से मुंह मोड़ लेंगे।

* विश्व वित्तीय संकट से ग्रस्त है।

* दक्षिण एशिया में अमेरिका महाशक्ति की रणनीति भारत-पाक का ऐसा साझा मोर्चा बनाना जो भारत व चीन के बीच पुरानी ब्रिटिश उपनिवेशिक सीमा लाइन से दिशा निर्देशन लेता हो।

* जम्मू-कश्मीर समस्या का हल त्रिपक्षीय प्रबंध में निहित है जिसमें भारत-पाक साझे तौर पर जम्मू-कश्मीर की सुरक्षा, विदेश मामलों और मुद्रा को प्रबन्धित करें जबकि राज्य को इसके सभी 9 भागों को स्वायत्तता देकर एक संघीय ढांचे के तौर पर गठित किया जाए।

* हमारे समय की मूलभूत वास्तविकता क्या है? हम कहते हैं कि यह एक तरफ पर्यावरणीय ह्रास (गिरावट) है और दूसरी तरफ मानव का अमानवीयकरण है। इस अमानवीयकरण का इजहार बहुत थोड़े करोड़पतियों एवं अत्यधिक संख्या में वंचित और गरीब लोगों के बीच अमानवीय विभाजन से होता है। सह मूलभूत वास्तविकता मानव जाति (और इस ग्रह पर सभी जैव जीवन के लिए भी) के सामने एक अत्यन्त गंभीर दो तरफा चुनौती पेश कर रही है। यह दो तरफा चुनौती मनुष्य के सामने, जीवन या विलुप्ति के दो विकल्प पेश कर रही है, यहां तीसरा कोई विकल्प नहीं है।

* वर्तमान में चल रही कारपोरेट व्यवस्था के प्रचारक दावा करते हैं कि अकेली पूंजी (यानि, पैसे की सभी किस्में) हमारी दुनिया में सर्वोच्च वस्तु हैं और इसीलिए हमारी पृथ्वी पर विद्यमान प्रत्येक चीज को पूंजी के विकास के लिए प्रयोग में लाया जाने चाहिए और अवश्य लाया जाए। कारपोरेट क्षेत्र की विद्यमान दो शाखाओं में से एक प्रचलित कारपोरेट व्यवस्था में विश्वास करती है कि पूंजी सिद्धान्त और व्यवहार का आधार एवं संचालन व्यक्तिगत आधारित ही हो, जबकि अब इसकी (कारपोरेट व्यवस्था की) खारिज शाखा (कम्युनिस्ट या समाजवादी) मानती है कि पूंजी का मालिकाना हक और प्रबंधन राज्य के पास होना चाहिए।

प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त की मान्यता है कि हमारे ग्रह पृथ्वी पर किसी भी तरह के जीवन के अस्तित्व के लिए इसका पर्यावरण ही पहली चीज है, अत: इसके प्राकृतिक पर्यावरण को मजबूती प्रदान करने के लिए सब-कुछ किया जाए। पर्यावरण के खिलाफ और उसके लिए नुकसानदायक किसी भी चीज को बिना किसी देरी के तुरन्त समाप्त किया जाए, चाहे वह किसी भी तरह के निहित स्वार्थों के लिए हानिकारक अथवा घातक क्यों न हो।

प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त द्वारा प्रतिपादित दूसरी चीज है हमारे ग्रह पृथ्वी पर विद्यमान सभी प्रजातियों में से मानव-प्रजाति (प्रारम्भिक होमोसेपियन) अत्यधिक विकसित और उन्नत प्रजाति के तौर पर उभरी है। हालांकि इसके प्रादुर्भाव के दौरान मानव

के बीच सभी किस्म के बंटवारे और श्रेणियों का अन्तर व भेद उभरा, उदाहरण के लिए धार्मिक, नस्ली, भाषाई, सांस्कृतिक, कलात्मक, भावनात्मक, साहित्यिक, आदर्श (विचारों से सम्बन्धित), विश्वासों, आचरणों, स्वाद संबंधी, आदत संबंधी, रीति-रिवाज, वर्णमाला (अक्षर संबंधी), कला और विज्ञान सम्बन्धी, इत्यादि में अन्तर पैदा हुआ—जो दूसरे व्यक्ति, महिला, परिवार, विवाह, धर्म, भिन्न विचारधारा वाले, राज्य या अन्य प्राकृतिक वस्तु के प्रति किसी व्यक्ति के नजरिये को प्रतिबिम्बित करता है। इस तरह की भिन्न-भिन्न किस्म की सभी मानवीय गतिविधियों को एक शब्द में परिभाषित किया जाता है, यानि, मानव संस्कृति। यह मानव के विकास में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह भूमिका सकारात्मक या नकारात्मक हो सकती है और होती है। इसकी सकारात्मक भूमिका मानव विकास को आगे ले जाती है, जबकि नकारात्मक भूमिका इसके विकास को बाधित करती है।

* * * * *

15 से 17 सितम्बर, 2005 को आयोजित

प्रथम लोक शिक्षण कांग्रेस द्वारा विज्ञान संचार के सम्बन्ध में तैयार किये गये नोट पर आर पी सराफ सम्पादक नेचर–ह्यूमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट द्वारा प्रस्तुत संक्षिप्त टिप्पणी

I. प्रथम कांग्रेस की प्रस्तावना पर

हमारे नजरिये में, प्रथम लोक शिक्षण कांग्रेस द्वारा प्रस्तावना में विज्ञान संचार को प्रमुख विषय वस्तु चिह्नित करना मानव समाज एवं उसके प्राकृतिक पर्यावरण के प्रभाव क्षेत्र में विद्यमान स्थिति में मात्र एक भटकाव है।

आज मानव समाज का मुख्य पहलू इस तथ्य में निहित है कि जहाँ एक तरफ मुट्ठी भर सम्पन्न लोगों के बीच विशाल जनसंख्या वंचित है और दूसरी तरफ अत्यधिक पर्यावरणीय ह्रास है जिसमें पर्यावरण के सभी घटक (हवा, पानी, जमीन, जंगल तथा जैव-विविधता) ग्रसित है।

स्वाभाविकतया, इस प्रकार की वास्तविकता यह मांग करती है कि इस कांग्रेस की मुख्य विषय वस्तु मौजूदा दो तरफा संकट के आयामों के विश्लेषण की होनी चाहिए, इस संकट के कारण खोजने एवं उचित प्रत्युत्तर देने के सुझावों पर होनी चाहिए।

II. प्रथम कांग्रेस के सन्दर्भ पर

हमारी मान्यता है कि लोकतांत्रिक, समाजवादी एवं धर्मनिरपेक्ष व्यवस्था कायम करने के भारतीय संविधान के नजरिये के बावजूद तथा संविधान की पालना में 1958 में विज्ञान नीति के प्रस्ताव में यह प्रतिज्ञा लेने पर भी, कि विज्ञान को शताब्दी पुरानी गरीबी, निरक्षरता, पिछड़ेपन को हटाने के काम में लिया जायेगा तथा काफी तादाद में अनुसंधान संस्थाएँ एवं संगठन स्थापित किये जायेंगे, देश भर में विज्ञान संचार एवं प्रचार के कार्यक्रम के लिए विभिन्न विशेषज्ञों के आयोग कायम किये जायेंगे—लेकिन इन सबके बावजूद भारत को गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, बिमारी, साम्प्रदायिक घृणा, अन्धविश्वास, अहिंसा, अपराध, भ्रष्टाचार आदि से मुक्ति दिलाने में इन सबकी कोई मदद नहीं मिल

सकती। यह आसानी से दृढ़तापूर्वक कहा जा सकता है कि इसके चलते न केवल पुरानी बुराइयां निरन्तर चल रही हैं बल्कि कई गुना बढ़ चुकी हैं। यह दावा भारत में प्रत्येक क्षेत्र–चाहे वह राजनीतिक, कानूनी, कूटनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक या उसके उप-भागों वाला क्षेत्र हो–की कारगुजारियों पर अवलोकन करने से सिद्ध हो जाता है।

उपर्युक्त स्थिति की पूर्णतया पुष्टि विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय कारपोरेट संस्थाओं की रिपोर्टों से भी होती है। हालिया प्रसारित यू एन-2005 की मानव विकास रिपोर्ट कहती है कि उच्च आय वाले देशों की बराबरी पर पहुँचने के लिए भारत को 100 वर्ष से अधिक (सन् 2106) समय लगेगा। इस रिपोर्ट का कहना है कि भारत सहित दुनिया में अमीर और गरीब के बीच असमानता का जो स्तर है वह आज रिकार्ड स्तर तक पहुँच चुका है। अन्तर्राष्ट्रीय मानव आयोग के अनुसार दक्षिण एशिया, जिसमें भारत सबसे आगे है, मानव अधिकारों का उल्लंघन उच्च स्तर पर पहुँचा हुआ है, हिंसा, अपराध, धोखाधड़ी भी दुनिया के कई अन्य हिस्सों के मुकाबले में काफी उच्च स्तर पर है।

III. इसकी (प्रथम कांग्रेस की) विज्ञान की अवधारणा पर

हम यह मानते हैं कि उपर्युक्त वर्णित अवधारणा जो विज्ञान को केवल वस्तुनिष्ठ ज्ञान के रूप में परिभाषित करती है, वह मात्र एक तरफा अवधारणा है। वास्तव में विज्ञान का चरित्र वस्तुगत और मनोगत दोनों हैं। इसका मनोगत पहलू इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि तमाम वस्तुगत आयामों को जानने में एकमात्र मनुष्य की ही भूमिका है। प्रारम्भ में मनुष्य द्वारा ही परिकल्पना (यानि, किसी भी चीज का अस्थायी विश्लेष्ण) की जाती है जिसके आधार पर प्रयोग किये जाते हैं और फिर विश्लेषण किया जाता है तथा निरीक्षण और प्रयोग के दौर में जो तथ्य और आंकड़े सामने आते हैं उनमें मनोगतता की प्राथमिक भूमिका होती है। पुन: किसी भी वस्तुगत वैज्ञानिक फार्मूले या उत्पाद का उपयोग सकारात्मक किया जाए या नकारात्मक–इसका निर्णय मनोगत पहलू द्वारा ही किया जाता है। वह क्षण जब कोई निरीक्षण (परिकल्पना के आधार पर) करना शुरू करता है और घटनाक्रम अपने चरित्र को मानवीय संवेदनीय इन्द्रियों के सम्मुख उजागर करता है उस समय वस्तुगत पहलू प्राथमिकता पर होता है।

तथ्य दर्शाते हैं कि किसी सिद्धान्त के आवश्यक पहलू वस्तुगतता से प्रतिबिम्बित होते हैं तथा अस्थायी व्याख्या, अन्तिम विश्लेषण तथा क्रमबद्धता एवं उस सिद्धान्त का अच्छा या बुरा उपयोग करना मनोगत पहलू द्वारा होता है।

IV. इसकी (प्रथम कांग्रेस की) संचार की अवधारणा पर

इस सम्बन्ध में हम यह देख रहे हैं कि इस कांग्रेस में यह तथ्य नजरअन्दाज किया जा रहा है कि लोक संचार के सभी वाहक–रेडियो, टीवी, ऑडियो-विडियो, सेटेलाइट, अखबार, पत्रिकाएँ, पुस्तकें, व्यक्तिगत विचारों का आदान-प्रदान, विडियो कांफ्रेंसिंग आदि कारपोरेट या कारपोरेट पक्षीय शक्तियों के नियंत्रण में हैं। सच्चे विज्ञान-समर्थक तत्व विज्ञान की वास्तविक स्थिति को लोगों तक संचारित करने में भारी बाधाओं से घिरे हुए हैं।

V. इसके विज्ञान संचार की अवधारणा

पुराने समय में विज्ञान का संचार राज्य एवं उसके साथ-साथ सामाजिक आन्दोलनों द्वारा किया जाता था। परन्तु आज इस संचारण के सभी निष्पादक कारपोरेट पूंजी से जुड़े

हुए हैं तथा यह कारपोरेट पूंजी सभी प्रकार के विज्ञान संचारण को नियंत्रित व संचालित करती है। वास्तव में वर्तमान कारपोरेट व्यवस्था एक तरफ वैज्ञानिक कारगुजारी को बढ़ा-चढ़ा कर पेश करने के लिए विज्ञान संचार को औजार के तौर पर काम में लेती है तथा दूसरी तरफ कारपोरेट व्यवस्था विज्ञान के दुरुपयोग व बर्बादी की अपनी कारगुजारी को छुपाने के तौर पर काम में लेती है।

VI. इसके सवालों की अवधारणा पर

उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, इस शीर्षक के तहत लगाए गए प्रतिबंधों के बावजूद यह सुझाव दिया जाता है कि इसके द्वारा निम्न बिन्दुओं पर प्राथमिक तौर पर ध्यान दिया जाए–मानव समुदाय और उसके प्राकृतिक संसाधनों के मूल हितों की सेवा करने के लिए विज्ञान को एक औजार के रूप में कैसे काम में लिया जाए? क्या यह लक्ष्य वर्तमान कारपोरेट व्यवस्था के ढांचे के तहत निष्पादित किया जा सकता है, जबकि यह व्यवस्था अपने तुच्छ लाभ के लिए अत्यधिक वांछनीय सम्पूर्ण निशस्त्रीकरण के सामाजिक उद्देश्य को प्राप्त करने में भी बाधा उत्पन्न करती है।

VII. इसकी विषय-वस्तु की अवधारणा पर

इस शीर्षक के तहत हमारा सुझाव है कि इसके 25 उप शीर्षक वाले विषयों पर विचार-विमर्श करते हुए आवश्यक है कि यह ठीक मूल्यांकन किया जाए कि उपर्युक्त विषय-वस्तु किस मात्रा में विशिष्ट अधिकार वाले छोटे से कारपोरेट समूह के हितों की सेवा करता है और यह किस तरीके से सभी देशों में बहुत बड़ी बहुसंख्यक मानवीय आबादी के अमानवीय वंचितपन की प्रक्रिया को सम्पन्न करवाता है।

VIII. इसके दृष्टिकोण की अवधारणा पर

यहाँ, हमारा एकमात्र प्रस्ताव है कि उसकी 6 श्रेणियों पर विचार-विमर्श करते हुए इसको प्रकृति-मानव निर्देशित नजरिये को अख्तियार करना चाहिए, जो एक तरफ प्राकृतिक घटनाक्रम के हितों और दूसरी तरफ मानव संसाधनों के हितों को पूरा करे। यह इसे विभिन्न प्राकृतिक और मानवीय मसलों को उनके वास्तविक रूप में देखने योग्य बनायेगा। (14-9-2005)

आर पी सराफ
सम्पादक, नेचर-ह्यूमन सेन्ट्रिक व्यूपाइंट

* * * * *